

॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ॥

श्रीकुलार्णवतन्त्र

पद्यानुवाद सहित

संस्कृत-हिन्दी अनुवाद, श्लोकानुवाद तथा शब्द-कोश सहित (विशिष्ट संस्करण)



<https://occultguide.com/scripture/kularnava-tantra/>



OccultGuide.com

OCCULTGUIDE PUBLICATIONS

॥ ॐ ॥

श्रीश्रीकुलार्णवतन्त्रम्

ऊर्ध्वान्नायतन्त्र — पञ्चम खण्ड

मूल श्लोक · हिन्दी अनुवाद · पदपाठ

OCCULTGUIDE.COM

OCCULTGUIDE.COM

विषय-सूची

	भूमिका	iii
१	जीवस्थितिकथनम्	१
२	कुलमाहात्म्यकथनम्	४३
३	श्रीप्रासादपरामन्त्रकथनम्	९३
४	महाषोढाकथनम्	१३७
५	पञ्चम उल्लास — कुलद्रव्यादिलक्षणम्	१८७
६	षष्ठ उल्लास — द्रव्यसंस्कारविधानम्	२२७
७	सप्तम उल्लास — वटुकशक्त्यादिपूजनम्	२६५
८	अष्टम उल्लास — तत्त्वत्रितयपानादिभेदकथनम्	३०३
९	नवम उल्लास — योगसंस्थापनकथनम्	३४८
१०	दशम उल्लास — विशेषदिवसार्चनम्	३९४
११	एकादश उल्लास — कुलाचारकथनम्	४४६
१२	द्वादश उल्लास — पादुकाकथनम्	४८६
१३	त्रयोदश उल्लास — गुरुशिष्यलक्षणम्	५३३
१४	चतुर्दश उल्लास — गुरुशिष्यपरीक्षाकथनम्	५८१
१५	पञ्चदश उल्लास — पुरश्चरणादिकथनम्	६२०
१६	षोडश उल्लास — काम्यकर्मविधानम्	६६१
१७	सप्तदश उल्लास — गुरु आदि कुल- पदार्थों का निर्वचन	७०९

॥ श्रीः ॥

भूमिका



ग्रन्थ

कुलार्णवतन्त्र कौल-सम्प्रदाय का शिरोमणि शास्त्र है। अन्य तन्त्रों की भाँति यह भी संवाद के रूप में है — कैलास-शिखर पर देवी शिव से पूछती हैं कि इस भयावह और सारहीन संसार में जन्मते-मरते असंख्य जीव किस उपाय से मुक्त हों; उसके उत्तर में शिव जो कहते हैं, वही ये सत्रह उल्लास हैं। *उल्लास* का अर्थ है प्रकाश, आनन्द का उद्रेक — किसी ग्रन्थ के अध्याय उसके क्रमिक प्रकाश हैं; और *कुलार्णव* का अर्थ है "कुल का समुद्र"।

इसके पुष्पिका-वाक्य इस ग्रन्थ को सवा लाख श्लोकों के एक महाग्रन्थ का पञ्चम खण्ड, ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र, कहते हैं। शेष खण्ड, यदि कभी थे भी, आज उपलब्ध नहीं हैं। जो हम तक पहुँचा है वह सत्रह उल्लासों में २,०५८ श्लोक हैं, और यही सम्पूर्ण पाठ इस पुस्तक में छपा है। मध्यकाल से लेकर आज तक के तान्त्रिक निबन्ध-ग्रन्थ इसे नाम लेकर उद्धृत करते आये हैं; गुरु, दीक्षा और कौलाचार के विषय में यह सर्वाधिक प्रमाण-रूप में गिने जाने वाले ग्रन्थों में है। इसके रचना-काल के विषय में हम यहाँ कोई अनुमान नहीं करते।

इसमें क्या है

प्रथम उल्लास मनुष्य की स्थिति पर एक सुदीर्घ चिन्तन है — मनुष्य-जन्म की दुर्लभता, बाधिन-सी घात लगाये बैठी वृद्धावस्था, फूटे घड़े के जल की तरह रिसता आयुष्य, और कर्मकाण्डियों, तपस्वियों तथा वादियों द्वारा किये जाने वाले मोक्ष के नकली अनुकरण — और इसका अन्त उस रहस्य पर होता है जिसे शेष ग्रन्थ खोलता है: कुलधर्म के बिना मुक्ति नहीं।

द्वितीय और तृतीय उल्लास कुलमार्ग का पक्ष रखते हैं। शिव मार्गों की आरोही सीढ़ी बताते हैं — वेद, फिर वैष्णव, शैव, दक्षिण, वाम और सिद्धान्त मत, और इन सबके ऊपर कौल — और इस सम्प्रदाय का विशिष्ट दावा स्पष्ट शब्दों में कहते हैं: अन्यत्र योगी भोगी नहीं और भोगी योगी नहीं, किन्तु कौलमार्ग भोग और योग दोनों को एक कर देता है। चतुर्थ उल्लास ऊर्ध्वाम्नाय के अधिष्ठाता प्रासाद-परा मन्त्र और महाषोढा न्यास देता है। पाँचवें से आठवें उल्लास तक विधि है: कुलद्रव्य और उनका संस्कार, वटुक और शक्ति का पूजन, भैरवी-चक्र। नवें से ग्यारहवें उल्लास तक कुलयोगी का स्वरूप, पूजा के विशेष दिन और आचार के नियम हैं। बारहवें से चौदहवें उल्लास — जो सम्भवतः समग्र तन्त्र-साहित्य के सबसे अधिक उद्धृत पृष्ठ हैं — गुरु-विषयक हैं: गुरु-पादुका की भक्ति, सद्गुरु और योग्य शिष्य के लक्षण, दोनों एक-दूसरे की परीक्षा कैसे करें, और दीक्षा के सात प्रकार। पन्द्रहवाँ और सोलहवाँ उल्लास जप और पुरश्चरण, मन्त्र-दोष और उनके संस्कार, तथा काम्य कर्मों का वर्णन करते हैं। सत्रहवाँ उल्लास ग्रन्थ के अपने पारिभाषिक शब्दों का एक-एक कर अर्थ बताते हुए ग्रन्थ का समापन करता है।

पाठक यह जान लें कि कुलार्णव स्वयं बार-बार और कठोरतम शब्दों में कहता है कि इसकी विधियाँ पुस्तक से सीखकर नहीं की जातीं। ग्रन्थ का स्पष्ट कथन है कि ज्ञान गुरु-मुख से ही मिलता है, कि विधि से बाहर लिये गये कुलद्रव्य स्मृतियों का महापातक है, और कि "यदि मद्यपान मात्र से सिद्धि मिलती तो हर मद्यप सिद्ध हो जाता।" हम यह पाठ जैसा है वैसा, सम्पूर्ण छाप रहे हैं, क्योंकि एक शास्त्र के साथ यही न्याय है; इसे हम साधना की पुस्तिका के रूप में प्रस्तुत नहीं करते।

यह संस्करण

संस्कृत पाठ अपने प्राप्त रूप में, परम्परागत श्लोक-क्रमांक के साथ, सम्पूर्ण छपा है — वही क्रमांक जो परवर्ती अनुवादों और OccultGuide.com पर दिये उद्धरणों में भी मिलते हैं। हमारा कार्य पाठ को आगे पहुँचाना है, उसे सुधारना नहीं: जहाँ किसी दूसरे पाठ की सम्भावना जान पड़ी, वहाँ भी हमने प्राप्त पाठ ही रखा है। पूरे ग्रन्थ में केवल एक

परिवर्तन किया गया है, और वह वर्ण-विन्यास का है — पुराने मुद्रणों में रेफ के बाद व्यञ्जन को दोहराने की रीति थी (सर्व, कर्म, धर्म); हमने इन्हें आधुनिक एक-व्यञ्जन रूप में (सर्व, कर्म, धर्म) लिखा है। संस्कृत में इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं बदला गया।

हिन्दी अनुवाद हमारा अपना है, इस संस्करण के लिये संस्कृत से नये सिरे से किया गया। जहाँ ग्रन्थ उद्घाट-शैली में बोलता है — मन्त्र को उच्चारित करने के बदले उसके अक्षरों का संकेत-वर्णन करता है — वहाँ हमने जो कहा गया है उसका ही अनुवाद किया है, मन्त्र को खोला नहीं; ग्रन्थ की मंशा भी यही है।

पृष्ठ कैसे पढ़ें

प्रत्येक श्लोक तीन स्तरों में रखा गया है।

देवनागरी में मूल श्लोक, हाशिये में उसके क्रमांक के साथ, प्राप्त पाठ है।

हिन्दी अनुवाद पहले विश्वसनीय और फिर सुपाठ्य होने का प्रयास करता है; जहाँ हिन्दी अनुमति देती है वहाँ श्लोक के अपने भाव-क्रम को बनाये रखा गया है। जो शब्द संस्कृत में ध्वनित हैं पर कहे नहीं गये, वे वहाँ जोड़े गये हैं जहाँ उनके बिना हिन्दी वाक्य अपूर्ण रह जाता; ऐसे जोड़ को कहीं-कहीं कोष्ठक में भी दिखाया गया है।

पदपाठ की पंक्ति श्लोक को पाठ-क्रम में उसके पदों में बाँटती है और हर पद के नीचे संक्षिप्त अर्थ देती है। यह संस्कृत समझने का साधन है, दूसरा अनुवाद नहीं: इसमें सन्धि खोली गयी है और समासों को अलग दिखाया गया है ताकि शब्द दिख सकें, और अर्थ जान-बूझकर संक्षिप्त रखे गये हैं। थोड़ी-सी संस्कृत जानने वाले पाठक को यह पृष्ठ की सबसे उपयोगी पंक्ति लगेगी; जो संस्कृत नहीं जानते, वे इसे छोड़ भी सकते हैं।

जहाँ-जहाँ संवाद में वक्ता बदलता है — श्रीदेव्युवाच, ईश्वर उवाच — वहाँ वक्ता का उल्लेख छपा है, और प्रत्येक उल्लास के अन्त में उसकी पुष्पिका है, जो प्राप्त पाठ का ही अंग है और अन्य अंशों की तरह अनूदित है।

निवेदन

यह पुस्तक OccultGuide.com द्वारा निःशुल्क भेंट है।
इसे बिना किसी परिवर्तन के प्रतिलिपि करके बाँटा जा सकता है।

अनुवाद और पदपाठ OccultGuide.com का कार्य है। संशोधन-सुझावों का स्वागत है; उन्हें आगामी संस्करणों में सम्मिलित किया जायेगा।

॥ श्रीः ॥

अथ प्रथमोल्लासः

जीवस्थितिकथनम्



कैलास के शिखर पर पार्वती वह प्रश्न रखती हैं जो पूरे तन्त्र की भूमिका है: नाना शरीरों में असंख्य जीव इस असार और घोर संसार में जन्मते-मरते रहते हैं, सब दुःखों से मलिन हैं, कोई कभी सुखी नहीं — किस उपाय से जीव मुक्त हो? शिव उत्तर देते हैं कि एक ही निष्कल शिव है, परब्रह्मस्वरूप, स्वयंप्रकाश, निर्विकार और अद्वितीय, और जीव उसी के अंश हैं — जैसे अग्नि में चिनगारियाँ — जो अनादि अविद्या से, गर्भ आदि उपाधियों से और अपने पुण्य-पाप से भिन्न-भिन्न हो गये हैं। वे चौरासी लाख योनियों — स्थावर, कृमि, जलचर, पक्षी, पशु, मनुष्य, धार्मिक, देवता — से होकर चढ़ते हैं, और हजारों जन्मों के बाद मिले मनुष्य-शरीर में ही तत्त्वज्ञान सम्भव है; जो उसे पाकर भी अपना उद्धार नहीं करता वह आत्मघाती है। इसलिए देह की, जो सब पुरुषार्थों का पात्र है, रक्षा करनी चाहिए — पर धर्म के लिए, धर्म ज्ञान के लिए, और ज्ञान ध्यान के लिए। फिर उपमाओं की लम्बी शृंखला तात्कालिकता को दृढ़ करती है: बुढ़ापा बाधिन की तरह घात में है, आयु फूटे घड़े के जल की तरह रिस रही है, संसार मोह की मदिरा पीकर डरता नहीं; सम्पत्ति स्वप्न है, यौवन फूल, आयु बिजली की चमक; मृत्यु बालक, युवा, वृद्ध और गर्भस्थ सबमें समान रूप से प्रवेश करती है, और ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी नाश की ओर दौड़ रहे हैं। संग को सब दोषों का मूल कहा गया है — स्त्री, धन और बन्धुओं का सम्बन्ध बिना रस्सी का बन्धन है, मिठास में मिला विष — और सत्संग तथा विवेक वे दो नेत्र हैं जिनके बिना मनुष्य अन्धा है। तब शिव मुक्ति के हर नकली रूप पर प्रहार करते हैं: यज्ञ-विस्तार में खोये कर्मकाण्डी, शरीर सुखाने वाले तपस्वी, नग्न घुमक्कड़, भस्म लगाने वाले, वनवासी, नदी में रहने वाले, पाठक और वादी — और प्रत्येक के विषय में पूछते हैं कि क्या तब गधे, हरिण, मेंढक, तोते और सूअर भी योगी हैं? शास्त्र मोह को वैसे ही दूर नहीं कर सकते जैसे दीपक की बात अन्धकार को; बुद्धिमान् उनका सार वैसे लेता है जैसे हंस जल से दूध, और फिर उन्हें छोड़ देता है, क्योंकि मुक्ति ज्ञान से ही होती है, और वह ज्ञान — द्वैत और अद्वैत दोनों से परे, "मेरा" और "मेरा नहीं" इन दो पदों पर टिका — केवल गुरु के मुख से मिलता है। जब तक काम, चंचलता, प्रयत्न और देहाभिमान हैं तब

तक तत्त्व की चर्चा नहीं हो सकती; तप, व्रत और तीर्थ तभी तक हैं जब तक तत्त्व नहीं मिलता। अध्याय उस रहस्य पर समाप्त होता है जिसे शेष ग्रन्थ खोलेगा: कुलधर्म के बिना मुक्ति नहीं है।

कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् ।

पप्रच्छेशं परानन्दं पार्वती परमेश्वरम् ॥ १ ॥

१

कैलास के शिखर पर विराजमान, देवों के देव, जगद्गुरु, परमानन्दस्वरूप परमेश्वर से पार्वती ने पूछा।

पदपाठ कैलासशिखरासीनं — कैलास के शिखर पर विराजमान · देवदेवं जगद्गुरुम् — देवों के देव, जगद्गुरु को · पप्रच्छेशं परानन्दं — परमानन्दस्वरूप ईश से पूछा · पार्वती परमेश्वरम् — पार्वती ने परमेश्वर से (पूछा)

— श्रीदेव्युवाच —

भगवन् देवदेवेश पञ्चक्रतुविधायक ।

सर्वज्ञ भक्तिसुलभ शरणागतवत्सल ॥ २ ॥

२

हे भगवन्! हे देवदेवेश! हे पञ्चकृत्य के विधाता! हे सर्वज्ञ! हे भक्ति से सुलभ! हे शरणागतवत्सल!

पदपाठ भगवन् देवदेवेश — हे भगवन्! हे देवदेवेश! · पञ्चक्रतुविधायक — पाँच कृत्यों के विधायक · सर्वज्ञ भक्तिसुलभ — सर्वज्ञ, भक्ति से सुलभ · शरणागतवत्सल — शरणागतों पर वत्सल

कुलेश परमेशान करुणामृतवारिधे ।

असारे घोरसंसारे सर्वदुःखमलीमसाः ॥ ३ ॥

३

हे कुलेश! हे परमेशान! हे करुणामृत के सागर! इस असार और घोर संसार में, सब प्रकार के दुःखों से मलिन,

पदपाठ कुलेश परमेशान — हे कुलेश! हे परमेशान! · करुणामृतवारिधे — करुणामृत के सागर · असारे घोरसंसारे — इस असार, घोर संसार में · सर्वदुःखमलीमसाः — सब दुःखों से मलिन

नानाविधशरीरस्था अनन्ता जीवराशयः ।

जायन्ते च म्रियन्ते च तेषां मोक्षो न विद्यते ॥ ४ ॥

४

नाना प्रकार के शरीरों में रहने वाले अनन्त जीवसमूह जन्म लेते हैं और मरते हैं —
उनका मोक्ष नहीं होता।

पदपाठ नानाविधशरीरस्था — नाना प्रकार के शरीरों में स्थित · अनन्ता जीवराशयः — अनन्त जीव-
समूह · जायन्ते च म्रियन्ते च — जन्मते हैं और मरते हैं · तेषां मोक्षो न विद्यते — उनकी मुक्ति नहीं होती

सदा दुःखातुरा देव न सुखी विद्यते क्वचित् ।

केनोपायेन देवेश मुच्यते वद मे प्रभो ॥ ५ ॥

५

हे देव! वे सदा दुःख से पीड़ित हैं, कहीं कोई सुखी नहीं है। हे देवेश! किस उपाय से
जीव मुक्त होता है? हे प्रभो! मुझे बताइये।

पदपाठ सदा दुःखातुरा देव — सदा दुःख से पीड़ित, हे देव! · न सुखी विद्यते क्वचित् — कोई कहीं सुखी
नहीं है · केनोपायेन देवेश — किस उपाय से, हे देवेश! · मुच्यते वद मे प्रभो — मुक्त होता है? मुझे
बताइए, हे प्रभो!

— श्रीईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण संसाराद् मुच्यते नरः ॥ ६ ॥

६

हे देवि! सुनो, जो तुम मुझसे पूछ रही हो वह मैं कहता हूँ। उसके सुनने मात्र से मनुष्य
संसार से मुक्त हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती
हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · संसाराद् मुच्यते नरः — मनुष्य संसार से मुक्त हो जाता
है

अस्ति देवि परब्रह्मस्वरूपो निष्कलः शिवः ।

सर्वज्ञः सर्वकर्ता च सर्वेशो निर्मलोऽद्वयः ॥ ७ ॥

७

हे देवि! परब्रह्मस्वरूप, निष्कल शिव हैं — सर्वज्ञ, सबके कर्ता, सबके ईश्वर, निर्मल और अद्वितीय;

पदपाठ अस्ति देवि — है, हे देवि · परब्रह्मस्वरूपो निष्कलः शिवः — परब्रह्मस्वरूप, निष्कल शिव · सर्वज्ञः सर्वकर्ता च — सर्वज्ञ और सबका कर्ता · सर्वेशो निर्मलोऽद्वयः — सबका ईश, निर्मल, अद्वय

स्वयं ज्योतिरनाद्यन्तो निर्विकारः परात् परः ।

निर्गुणः सच्चिदानन्दस्तदंशा जीवसंज्ञकाः ॥ ८ ॥

८

स्वयंप्रकाश, आदि-अन्त से रहित, निर्विकार, पर से भी पर, निर्गुण, सच्चिदानन्दस्वरूप। उन्हीं के अंश "जीव" कहलाते हैं।

पदपाठ स्वयं ज्योतिरनाद्यन्तो — स्वयं ज्योति, आदि-अन्त से रहित · निर्विकारः परात् परः — निर्विकार, पर से भी पर · निर्गुणः सच्चिदानन्दः — निर्गुण, सच्चिदानन्द · तदंशा जीवसंज्ञकाः — उसके अंश ही जीव कहलाते हैं

अनाद्यविद्योपहिता यथाग्नौ विस्फुलिङ्गकाः ।

गर्भाद्युपाधिसंभिन्नाः कर्मभिः करणादिभिः ॥ ९ ॥

९

अनादि अविद्या से उपहित — जैसे अग्नि में चिनगारियाँ — वे गर्भ आदि उपाधियों से, कर्मों से तथा इन्द्रियादि से भिन्न-भिन्न हो जाते हैं,

पदपाठ अनाद्यविद्योपहिता — अनादि अविद्या से युक्त · यथाग्नौ विस्फुलिङ्गकाः — जैसे अग्नि में चिनगारियाँ · गर्भाद्युपाधिसंभिन्नाः — गर्भ आदि उपाधियों से विभक्त · कर्मभिः करणादिभिः — कर्मों से, इन्द्रियों आदि से

सर्वदुःखप्रदैः स्वीयपुण्यपापैर्नियन्त्रिताः ।

तत्तज्जातियुतं देहम् आयुर्भोगञ्च कर्मजम् ॥ १० ॥

१०

सब दुःख देने वाले अपने-अपने पुण्य-पाप से नियन्त्रित। उस-उस जाति का शरीर, और कर्म से उत्पन्न आयु तथा भोग —

पदपाठ सर्वदुःखप्रदैः — जो सब दुःख देने वाले हैं · स्वीयपुण्यपापैर्नियन्त्रिताः — अपने पुण्य-पाप से नियन्त्रित · तत्तज्जातियुतं देहम् — उस-उस जाति का देह · आयुर्भोगञ्च कर्मजम् — और कर्मजनित आयु व भोग

प्रतिजन्म प्रपद्यन्ते मानुषा मूढचेतसः ।

सूक्ष्मलिङ्गशरीरन्तदामोक्षादक्षयं प्रिये ॥ ११ ॥

११

मूढ चित्त वाले मनुष्य जन्म-जन्म में इन्हें प्राप्त करते हैं। हे प्रिये! वह सूक्ष्म लिङ्गशरीर मोक्ष तक अक्षय रहता है।

पदपाठ प्रतिजन्म प्रपद्यन्ते — प्रत्येक जन्म में पाते हैं · मानुषा मूढचेतसः — मूढ चित्त वाले मनुष्य · सूक्ष्मलिङ्गशरीरन्तत् — वह सूक्ष्म लिङ्ग-शरीर · आमोक्षादक्षयं प्रिये — मोक्ष तक अक्षय है, हे प्रिये

स्थावराः क्रिमयश्चाब्जाः पक्षिणः पशवो नराः ।

धार्मिकास्त्रिदशास्तद्वन्मोक्षिणश्च यथाक्रमम् ॥ १२ ॥

१२

स्थावर, कृमि, जलचर, पक्षी, पशु, मनुष्य, धार्मिक, देवता और उसी प्रकार मुक्त जीव — यह क्रम है।

पदपाठ स्थावराः क्रिमयश्चाब्जाः — स्थावर, कीट, जलजन्तु · पक्षिणः पशवो नराः — पक्षी, पशु, मनुष्य · धार्मिकास्त्रिदशास्तद्वत् — धार्मिक, देवता, वैसे ही · मोक्षिणश्च यथाक्रमम् — और मुक्त — इस क्रम से

चतुर्विधशरीराणि धृत्वा धृत्वा सहस्रशः ।

सुकृतान्मानवो भूत्वा ज्ञानी चेन्मोक्षमाप्नुयात् ॥ १३ ॥

१३

चारों प्रकार के शरीरों को हजारों बार धारण करके, पुण्य से मनुष्य होकर, यदि वह ज्ञानी हो जाये तो मोक्ष पा लेता है।

पदपाठ चतुर्विधशरीराणि — चार प्रकार के शरीर · धृत्वा धृत्वा सहस्रशः — हजारों बार बार-बार धारण कर · सुकृतान्मानवो भूत्वा — सुकृत से मनुष्य होकर · ज्ञानी चेन्मोक्षमाप्नुयात् — यदि ज्ञानी हो तो मोक्ष पाता है

चतुरशीतिलक्षेषु शरीरेषु शरीरिणाम् ।

न मानुष्यं विनान्यत्र तत्त्वज्ञानन्तु लभ्यते ॥ १४ ॥

१४

देहधारियों के चौरासी लाख शरीरों में मनुष्यत्व के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं तत्त्वज्ञान प्राप्त नहीं होता।

पदपाठ चतुरशीतिलक्षेषु — चौरासी लाख · शरीरेषु शरीरिणाम् — शरीरधारियों के शरीरों में · न मानुष्यं विनान्यत्र — मनुष्य-योनि के बिना अन्यत्र नहीं · तत्त्वज्ञानन्तु लभ्यते — तत्त्वज्ञान प्राप्त होता है

अत्र जन्मसहस्रेषु सहस्रैरपि पार्वति ।

कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसञ्चयात् ॥ १५ ॥

१५

हे पार्वति! यहाँ हजारों-हजार जन्मों में कभी ही कोई जीव पुण्य के संचय से मनुष्यत्व पाता है।

पदपाठ अत्र जन्मसहस्रेषु — यहाँ हजारों जन्मों में · सहस्रैरपि पार्वति — हजारों-हजार में भी, हे पार्वति · कदाचिल्लभते जन्तुः — कभी ही जीव पाता है · मानुष्यं पुण्यसञ्चयात् — पुण्य-संचय से मनुष्य-योनि

सोपानभूतं मोक्षस्य मानुष्यं प्राप्य दुर्लभम् ।

१६

यस्तारयति नात्मानं तस्मात् पापतरोऽत्र कः ॥ १६ ॥

मोक्ष की सीढ़ी-रूप, दुर्लभ मनुष्यत्व पाकर भी जो अपना उद्धार नहीं करता, उससे बढ़कर पापी यहाँ कौन है?

पदपाठ सोपानभूतं मोक्षस्य — जो मोक्ष की सोपान (सीढ़ी) है · मानुष्यं प्राप्य दुर्लभम् — दुर्लभ मनुष्य-जन्म पाकर · यस्तारयति नात्मानं — जो अपना उद्धार नहीं करता · तस्मात् पापतरोऽत्र कः — उससे अधिक पापी यहाँ कौन?

ततश्चाप्युत्तमं जन्म लब्ध्वा चेन्द्रियसौष्ठवम् ।

१७

न वेत्यात्महितं यस्तु स भवेत् आत्मघातकः ॥ १७ ॥

और जो उत्तम जन्म तथा इन्द्रियों की सुदृढ़ता पाकर भी अपना हित नहीं जानता, वह आत्मघाती है।

पदपाठ ततश्चाप्युत्तमं जन्म लब्ध्वा — फिर उत्तम जन्म पाकर भी · चेन्द्रियसौष्ठवम् — और इन्द्रियों की पूर्णता · न वेत्यात्महितं यस्तु — जो अपना हित नहीं जानता · स भवेत् आत्मघातकः — वह आत्मघाती है

विना देहेन कस्यापि पुरुषार्थो न विद्यते ।

१८

तस्माद्देहधनं प्राप्य पुण्यकर्माणि साधयेत् ॥ १८ ॥

देह के बिना किसी का भी कोई पुरुषार्थ सिद्ध नहीं होता। इसलिए देह-रूपी धन पाकर पुण्य कर्म साधन करे।

पदपाठ विना देहेन कस्यापि — देह के बिना किसी का भी · पुरुषार्थो न विद्यते — कोई पुरुषार्थ नहीं होता · तस्माद्देहधनं प्राप्य — इसलिए देह-रूपी धन पाकर · पुण्यकर्माणि साधयेत् — पुण्य कर्म करे

रक्षेत् सर्वात्मनात्मानम् आत्मा सर्वस्य भाजनम् ।

रक्षणे यत्नमातिष्ठेत् यावत्तत्त्वं न पश्यति ॥ १९ ॥

१९

सब प्रकार से अपनी रक्षा करे, क्योंकि आत्मा (देह) ही सबका पात्र है। जब तक तत्त्व का दर्शन न हो, तब तक उसकी रक्षा में यत्न करे।

पदपाठ रक्षेत् सर्वात्मनात्मानम् — सब प्रकार से अपनी रक्षा करे · आत्मा सर्वस्य भाजनम् — आत्मा (देह) ही सबका आधार है · रक्षणे यत्नमातिष्ठेत् — रक्षा में यत्न करे · यावत्तत्त्वं न पश्यति — जब तक तत्त्व को न देख ले

पुनर्ग्रामाः पुनः क्षेत्रं पुनर्वित्तं पुनर्गृहम् ।

पुनः शुभाशुभं कर्म न शरीरं पुनः पुनः ॥ २० ॥

२०

गाँव फिर मिल जाते हैं, खेत फिर, धन फिर, घर फिर, शुभ-अशुभ कर्म फिर — पर यह शरीर बार-बार नहीं मिलता।

पदपाठ पुनर्ग्रामाः पुनः क्षेत्रं — फिर गाँव, फिर खेत · पुनर्वित्तं पुनर्गृहम् — फिर धन, फिर घर · पुनः शुभाशुभं कर्म — फिर शुभ-अशुभ कर्म · न शरीरं पुनः पुनः — पर शरीर बार-बार नहीं

शरीररक्षणायासः क्रियते सर्वदा जनैः ।

नहीच्छन्ति तनुत्यागमपि कुष्ठादिरोगतः ॥ २१ ॥

२१

लोग सदा शरीर की रक्षा का प्रयास करते हैं; कुष्ठ आदि रोगों से ग्रस्त होने पर भी वे शरीर छोड़ना नहीं चाहते।

पदपाठ शरीररक्षणायासः — शरीर की रक्षा का प्रयास · क्रियते सर्वदा जनैः — लोग सदा करते हैं · नहीच्छन्ति तनुत्यागम् — वे देह-त्याग नहीं चाहते · अपि कुष्ठादिरोगतः — कुष्ठ आदि रोगों में भी

तद्गोपितं स्याद् यत्नेन धर्मो ज्ञानार्थमेव च ।

ज्ञानञ्च ध्यानयोगार्थं सोऽचिरात् परिमुच्यते ॥ २२ ॥

२२

उसकी यत्नपूर्वक रक्षा करे — और धर्म का पालन केवल ज्ञान के लिए, तथा ज्ञान ध्यानयोग के लिए; तब वह शीघ्र ही पूर्णतः मुक्त हो जाता है।

पदपाठ तद्गोपितं स्याद् यत्नेन — उसे यत्न से सुरक्षित रखे · धर्मो ज्ञानार्थमेव च — और धर्म ज्ञान के लिए ही · ज्ञानञ्च ध्यानयोगार्थं — और ज्ञान ध्यानयोग के लिए · सोऽचिरात् परिमुच्यते — वह शीघ्र ही मुक्त हो जाता है

आत्मैव यदि नात्मानमहितेभ्यो निवारयेत् ।

कोऽन्यो हितकरस्तस्मादात्मानं तारयिष्यति ॥ २३ ॥

२३

यदि स्वयं ही अपने को अहित से न रोके, तो उससे बढ़कर हितकारी और कौन उसका उद्धार करेगा?

पदपाठ आत्मैव यदि नात्मानम् — यदि आत्मा स्वयं अपने को · अहितेभ्यो निवारयेत् — अहित से न रोके · कोऽन्यो हितकरस्तस्मात् — तो उससे बढ़कर हितकारी और कौन · आत्मानं तारयिष्यति — जो आत्मा का उद्धार करेगा?

इहैव नरकव्याधेश्चिकित्सां न करोति यः ।

गत्वा निरौषधं स्थानं व्याधिस्थः किं करिष्यति ॥ २४ ॥

२४

जो यहीं नरक-रूपी व्याधि की चिकित्सा नहीं करता, वह रोगी औषधहीन स्थान में जाकर क्या करेगा?

पदपाठ इहैव नरकव्याधेः — यहीं नरक-रूपी व्याधि की · चिकित्सां न करोति यः — जो चिकित्सा नहीं करता · गत्वा निरौषधं स्थानं — औषधिरहित स्थान में जाकर · व्याधिस्थः किं करिष्यति — रोगी क्या करेगा?

सनाद्धवने को वा कूपं खनति दुर्मतिः ।

यावत्तिष्ठति देहोऽयं तावत्तत्त्वं समभ्यसेत् ॥ २५॥

२५

घर ... [जल रहा हो] तब कौन मूर्ख कुआँ खोदता है? जब तक यह देह है, तब तक तत्त्व का अभ्यास करे।

पदपाठ सनाद्धवने को वा — कौन ऐसा ... घर में · कूपं खनति दुर्मतिः — कुआँ खोदता है — कौन दुर्बुद्धि? · यावत्तिष्ठति देहोऽयं — जब तक यह देह रहता है · तावत्तत्त्वं समभ्यसेत् — तब तक तत्त्व का अभ्यास करे

व्याघ्रीवास्ते जरा चायुर्याति भिन्नघटाम्बुवत् ।

निघ्नन्ति रिपुवद्रोगास्तस्माच्छ्रेयः समाचरेत् ॥ २६॥

२६

बाघिन की तरह बुढ़ापा घात लगाये बैठा है, फूटे घड़े के जल की तरह आयु बीत रही है, शत्रु की तरह रोग मारते हैं — इसलिए श्रेय का आचरण करे।

पदपाठ व्याघ्रीवास्ते जरा — जरा बाघिन की तरह घात में है · चायुर्याति भिन्नघटाम्बुवत् — और आयु फूटे घड़े के जल-सी बहती है · निघ्नन्ति रिपुवद्रोगाः — रोग शत्रुओं की तरह मारते हैं · तस्माच्छ्रेयः समाचरेत् — इसलिए कल्याण का आचरण करे

यावन्नाश्रयते दुःखं यावन्नायान्ति चापदः ।

यावन्नेन्द्रियवैकल्यं तावच्छ्रेयः समाचरेत् ॥ २७॥

२७

जब तक दुःख ने घेरा नहीं, जब तक आपत्तियाँ नहीं आयीं, जब तक इन्द्रियाँ विकल नहीं हुई — तब तक श्रेय का आचरण कर ले।

पदपाठ यावन्नाश्रयते दुःखं — जब तक दुःख नहीं घेरता · यावन्नायान्ति चापदः — जब तक आपदाएँ नहीं आती · यावन्नेन्द्रियवैकल्यं — जब तक इन्द्रियाँ विकल नहीं होती · तावच्छ्रेयः समाचरेत् — तब तक कल्याण का आचरण करे

कालो न ज्ञायते नानाकार्यैः संसारसम्भवैः ।

२८

सुखदुःखरतो जन्तुर्न वेत्ति हितमात्मनः ॥ २८ ॥

संसार से उत्पन्न नाना कार्यों में समय का पता ही नहीं चलता; सुख-दुःख में रमा हुआ जीव अपना हित नहीं जानता।

पदपाठ कालो न ज्ञायते — काल का पता नहीं चलता · नानाकार्यैः संसारसम्भवैः — संसार से उत्पन्न नाना कार्यों में · सुखदुःखरतो जन्तुः — सुख-दुःख में रत जीव · न वेत्ति हितमात्मनः — अपना हित नहीं जानता

जडानातान्मृतानापद्गतान् दृष्ट्वाऽतिदुःखितान् ।

२९

लोको मोहसुरां पीत्वा न विभेति कदाचन ॥ २९ ॥

जड़, पीड़ित, मृत और आपत्ति में पड़े अत्यन्त दुःखी लोगों को देखकर भी, मोह की मदिरा पीकर संसार कभी नहीं डरता।

पदपाठ जडानातान्मृतान् — जड़, पीड़ित, मृत · आपद्गतान् दृष्ट्वाऽतिदुःखितान् — आपद्ग्रस्त, अति दुःखी लोगों को देखकर भी · लोको मोहसुरां पीत्वा — संसार मोह की मदिरा पीकर · न विभेति कदाचन — कभी नहीं डरता

सम्पदः स्वप्नसङ्काशा यौवनं कुसुमोपमम् ।

३०

तडिच्यञ्चलमायुश्च कस्य स्याज्जानतो धृतिः ॥ ३० ॥

सम्पत्ति स्वप्न-सी है, यौवन फूल-सा, आयु बिजली-सी चंचल — यह जानने वाले को धैर्य (निश्चिन्तता) कैसे रह सकता है?

पदपाठ सम्पदः स्वप्नसङ्काशा — सम्पदाएँ स्वप्न-सी हैं · यौवनं कुसुमोपमम् — यौवन फूल-सा है · तडिच्यञ्चलमायुश्च — और आयु बिजली-सी चंचल · कस्य स्याज्जानतो धृतिः — यह जानकर किसे धैर्य रह सकता है?

शतं जीवितमत्यल्पं निद्रा स्यादर्द्धहारिणी ।

बाल्यरोगजरादुःखैर्द्ध तदपि निष्फलम् ॥ ३१ ॥

३१

सौ वर्ष का जीवन अत्यल्प है; उसका आधा नींद ले लेती है, और वह शेष आधा भी बचपन, रोग, बुढ़ापे और दुःख में निष्फल जाता है।

पदपाठ शतं जीवितमत्यल्पं — सौ वर्ष का जीवन अत्यल्प है · निद्रा स्यादर्द्धहारिणी — निद्रा उसका आधा हर लेती है · बाल्यरोगजरादुःखैः — बाल्य, रोग, जरा और दुःखों से · अर्द्ध तदपि निष्फलम् — शेष आधा भी निष्फल

प्रारब्धव्ये निरुद्वेगो जागर्तव्ये सुषुप्तकः ।

विश्वस्तव्यो भयस्थाने घातकैः किं न हन्यते ॥ ३२ ॥

३२

जो करना चाहिए उसमें उद्यमहीन, जहाँ जागना चाहिए वहाँ गहरी नींद में, भय के स्थान में विश्वस्त — ऐसा मनुष्य घातकों द्वारा क्यों न मारा जायेगा?

पदपाठ प्रारब्धव्ये निरुद्वेगो — जो आरम्भ करना चाहिए उसमें उदासीन · जागर्तव्ये सुषुप्तकः — जहाँ जागना चाहिए वहाँ सोया हुआ · विश्वस्तव्यो भयस्थाने — भय के स्थान में विश्वास करता हुआ · घातकैः किं न हन्यते — घातकों द्वारा क्यों न मारा जाए?

तोयफेनसमे देहे जीवे शकुनिवत् स्थिते ।

अनित्येऽप्रियसंसारे कथं तिष्ठन्ति निर्भयाः ॥ ३३ ॥

३३

देह जल के फेन-सी है, उसमें जीव पक्षी की तरह बैठा है — इस अनित्य और अप्रिय संसार में लोग निर्भय कैसे रहते हैं?

पदपाठ तोयफेनसमे देहे — जल के फेन-समान देह में · जीवे शकुनिवत् स्थिते — पक्षी की तरह बैठे जीव के होते · अनित्येऽप्रियसंसारे — इस अनित्य, अप्रिय संसार में · कथं तिष्ठन्ति निर्भयाः — कैसे निर्भय बने रहते हैं?

अहिते हितबुद्धिः स्यादध्रुवे ध्रुवचिन्तकः ।

३४

अनर्थे चार्थविज्ञानी स्वमृत्युं यो न वेत्ति च ॥ ३४ ॥

जो अहित को हित समझता है, अस्थिर को स्थिर मानता है, अनर्थ में अर्थ देखता है और अपनी मृत्यु को नहीं जानता —

पदपाठ अहिते हितबुद्धिः स्यात् — अहित में हित-बुद्धि रखता है · अध्रुवे ध्रुवचिन्तकः — अस्थिर को स्थिर मानता है · अनर्थे चार्थविज्ञानी — अनर्थ में अर्थ देखता है · स्वमृत्युं यो न वेत्ति च — और अपनी मृत्यु को नहीं जानता

पश्यन्नपि न पश्येत् स शृण्वन्नपि न बुध्यति ।

३५

पठन्नपि न जानाति तव मायाविमोहितः ॥ ३५ ॥

वह देखता हुआ भी नहीं देखता, सुनता हुआ भी नहीं समझता, पढ़ता हुआ भी नहीं जानता — तुम्हारी माया से विमोहित।

पदपाठ पश्यन्नपि न पश्येत् सः — देखता हुआ भी वह नहीं देखता · शृण्वन्नपि न बुध्यति — सुनता हुआ भी नहीं समझता · पठन्नपि न जानाति — पढ़ता हुआ भी नहीं जानता · तव मायाविमोहितः — तुम्हारी माया से विमोहित

सन्निमज्जज्जगदिदं गम्भीरे कालसागरे ।

३६

मृत्युरोगजराग्राहे न किञ्चिदपि बुध्यति ॥ ३६ ॥

यह जगत् काल के गहरे सागर में डूब रहा है, जिसमें मृत्यु, रोग और जरा-रूपी ग्राह हैं — और यह कुछ भी नहीं समझता।

पदपाठ सन्निमज्जज्जगदिदं — यह जगत् डूब रहा है · गम्भीरे कालसागरे — गहरे काल-सागर में · मृत्युरोगजराग्राहे — जिसमें मृत्यु, रोग, जरा ग्राह (मगर) हैं · न किञ्चिदपि बुध्यति — और कुछ भी नहीं समझता

प्रतिक्षणमयं कायो जीर्यमाणो न लक्ष्यते ।

३७

आमकुम्भ इवाम्भःस्थो विशीर्णो नैव भाव्यते ॥ ३७ ॥

यह शरीर प्रतिक्षण जीर्ण हो रहा है, पर दिखाई नहीं देता; जल में रखे कच्चे घड़े की तरह इसका गलना प्रतीत नहीं होता।

पदपाठ प्रतिक्षणमयं कायो — यह काया प्रतिक्षण · जीर्यमाणो न लक्ष्यते — जीर्ण हो रही है, पर दिखती नहीं · आमकुम्भ इवाम्भःस्थो — जल में रखे कच्चे घड़े की तरह · विशीर्णो नैव भाव्यते — इसका बिखरना भान नहीं होता

युज्यते वेष्टनं वायोराकाशस्य च खण्डनम् ।

३८

ग्रथनञ्च तरङ्गाणामास्था नायुषि युज्यते ॥ ३८ ॥

वायु को लपेटना, आकाश को खण्ड-खण्ड करना, लहरों को गूँथना — ये शायद सम्भव हों, पर आयु पर भरोसा सम्भव नहीं।

पदपाठ युज्यते वेष्टनं वायोः — वायु को लपेटना सम्भव हो · आकाशस्य च खण्डनम् — और आकाश का खण्डन · ग्रथनञ्च तरङ्गाणाम् — और तरंगों को गूँथना · आस्था नायुषि युज्यते — पर आयु पर भरोसा सम्भव नहीं

पृथिवी दह्यते येन मेरुश्चापि विशीर्यते ।

३९

शुष्यते सागरजलं शरीरे देवि का कथा ॥ ३९ ॥

जिस (काल) से पृथ्वी जल जाती है, मेरु भी चूर हो जाता है, समुद्र का जल सूख जाता है — हे देवि! उसके सामने शरीर की क्या बात?

पदपाठ पृथिवी दह्यते येन — जिससे पृथ्वी जल जाती है · मेरुश्चापि विशीर्यते — और मेरु भी बिखर जाता है · शुष्यते सागरजलं — सागर का जल सूख जाता है · शरीरे देवि का कथा — शरीर की, हे देवि, क्या बात?

अपत्यं मे कलत्रं मे धनं मे बान्धवश्च मे ।

लपन्तमिति मर्त्यं हि हन्ति कालवृको बलात् ॥ ४०॥

४०

"मेरी सन्तान, मेरी स्त्री, मेरा धन, मेरे बन्धु" — ऐसा बड़बड़ाते मनुष्य को काल-रूपी भेड़िया बलपूर्वक मार डालता है।

पदपाठ अपत्यं मे कलत्रं मे — मेरी सन्तान, मेरी पत्नी · धनं मे बान्धवश्च मे — मेरा धन, मेरे बन्धु · लपन्तमिति मर्त्यं हि — ऐसा बड़बड़ाते मनुष्य को · हन्ति कालवृको बलात् — काल-रूपी भेड़िया बलपूर्वक मार देता है

इदं कृतमिदं कार्यमिदमन्यत् कृताकृतम् ।

एवमीहासमायुक्तं मृत्युरत्ति जनं प्रिये ॥ ४१॥

४१

"यह कर लिया, यह करना है, यह अधूरा है" — इस प्रकार की चेष्टाओं में लगे मनुष्य को, हे प्रिये! मृत्यु खा जाती है।

पदपाठ इदं कृतमिदं कार्यम् — यह कर लिया, यह करना है · इदमन्यत् कृताकृतम् — यह दूसरा अधूरा है · एवमीहासमायुक्तं — इस प्रकार प्रयत्नों में उलझे मनुष्य को · मृत्युरत्ति जनं प्रिये — मृत्यु खा जाती है, हे प्रिये

श्वःकार्यमद्य कर्तव्यं पूर्वाह्णे चापराह्निकम् ।

न हि प्रतीक्षते मृत्युः कृतं वाऽस्य न वा कृतम् ॥ ४२॥

४२

कल का काम आज कर ले, और दोपहर का सुबह — क्योंकि मृत्यु यह नहीं देखती कि उसका काम हुआ या नहीं।

पदपाठ श्वःकार्यमद्य कर्तव्यं — कल का कार्य आज ही करे · पूर्वाह्णे चापराह्निकम् — और अपराह्न का पूर्वाह्न में · न हि प्रतीक्षते मृत्युः — क्योंकि मृत्यु प्रतीक्षा नहीं करती · कृतं वाऽस्य न वा कृतम् — कि इसका काम हुआ या नहीं

जरादर्शितपन्थानं प्रचण्डव्याधिसैनिकम् ।

मृत्युशत्रुमभिज्ञोऽसि आयान्तं किं न पश्यसि ॥ ४३॥

४३

जिसे बुढ़ापा रास्ता दिखाता है और प्रचण्ड रोग जिसके सैनिक हैं, उस मृत्यु-रूपी शत्रु को तुम जानते हो — फिर उसे आते हुए क्यों नहीं देखते?

पदपाठ जरादर्शितपन्थानं — जिसका मार्ग जरा दिखाती है · प्रचण्डव्याधिसैनिकम् — जिसके सैनिक प्रचण्ड रोग हैं · मृत्युशत्रुमभिज्ञोऽसि — मृत्यु-शत्रु को तू जानता है · आयान्तं किं न पश्यसि — आते हुए को क्यों नहीं देखता?

आशा सूचीविनिर्भिन्नं सिक्तं विषयसर्पिषा ।

रागद्वेषानले पक्वं मृत्युरश्नाति मानवम् ॥ ४४॥

४४

आशा की सूई से बिंधा, विषय-रूपी घी से सींचा, राग-द्वेष की आग में पका — मनुष्य को मृत्यु इसी तरह खाती है।

पदपाठ आशा सूचीविनिर्भिन्नं — आशा की सुई से बिंधा · सिक्तं विषयसर्पिषा — विषय-रूपी घी से सिंचित · रागद्वेषानले पक्वं — राग-द्वेष की अग्नि में पका · मृत्युरश्नाति मानवम् — मनुष्य को मृत्यु खा जाती है

बालांश्च यौवनस्थांश्च वृद्धान् गर्भगतानपि ।

सर्वान् संविशते मृत्युरेवम्भूतमिदं जगत् ॥ ४५॥

४५

बालक, युवा, वृद्ध, यहाँ तक कि गर्भस्थ भी — सबमें मृत्यु प्रवेश करती है। ऐसा ही यह जगत् है।

पदपाठ बालांश्च यौवनस्थांश्च — बालकों और युवाओं को · वृद्धान् गर्भगतानपि — वृद्धों को, गर्भस्थों को भी · सर्वान् संविशते मृत्युः — सबमें मृत्यु प्रवेश करती है · एवम्भूतमिदं जगत् — ऐसा है यह जगत्

ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवता भूतजातयः ।

४६

नाशमेवानुधावन्ति तस्माच्छ्रेयः समाचरेत् ॥ ४६ ॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवता और समस्त प्राणि-जातियाँ नाश की ओर ही दौड़ रही हैं — इसलिए श्रेय का आचरण करे।

पदपाठ ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवता — ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवता · भूतजातयः — (और सब) प्राणी-जातियाँ · नाशमेवानुधावन्ति — नाश की ओर ही दौड़ रही हैं · तस्माच्छ्रेयः समाचरेत् — इसलिए कल्याण का आचरण करे

स्वस्ववर्णाश्रमाचारलङ्घनाद् दुष्प्रतिग्रहात् ।

४७

परस्त्रीधनलोभाच्च नृणामायुःक्षयो भवेत् ॥ ४७ ॥

अपने-अपने वर्ण और आश्रम के आचार के उल्लंघन से, अनुचित दान लेने से, और पराई स्त्री तथा धन के लोभ से मनुष्यों की आयु क्षीण होती है।

पदपाठ स्वस्ववर्णाश्रमाचारलङ्घनात् — अपने वर्ण-आश्रम के आचार के उल्लंघन से · दुष्प्रतिग्रहात् — कुत्सित दान लेने से · परस्त्रीधनलोभाच्च — और परस्त्री-परधन के लोभ से · नृणामायुःक्षयो भवेत् — मनुष्यों की आयु क्षीण होती है

वेदशास्त्राद्यनभ्यासात्तथैव गुर्वनर्चनात् ।

४८

नृणामायुःक्षयो भूयादिन्द्रियाणामनिग्रहात् ॥ ४८ ॥

वेद-शास्त्र आदि के अनभ्यास से, वैसे ही गुरु की पूजा न करने से, और इन्द्रियों के अनिग्रह से मनुष्यों की आयु क्षीण होती है।

पदपाठ वेदशास्त्राद्यनभ्यासात् — वेद-शास्त्र आदि के अनभ्यास से · तथैव गुर्वनर्चनात् — वैसे ही गुरु की पूजा न करने से · नृणामायुःक्षयो भूयात् — मनुष्यों की आयु क्षीण होती है · इन्द्रियाणामनिग्रहात् — और इन्द्रियों के अनिग्रह से

व्याधिराधिर्विषं शस्त्रं ना सर्पः पशवो मृगाः ।

४९

मरणं येन निर्दिष्टं तेन गच्छन्ति जन्तवः ॥ ४९॥

व्याधि, मानसिक पीड़ा, विष, शस्त्र, मनुष्य, सर्प, पशु, हिंस्र जन्तु — जिसके द्वारा जिसकी मृत्यु निर्दिष्ट है, उसी से प्राणी चले जाते हैं।

पदपाठ व्याधिराधिर्विषं शस्त्रं — व्याधि, मानसिक पीड़ा, विष, शस्त्र · ना सर्पः पशवो मृगाः — मनुष्य, सर्प, पशु, हिंस्र जन्तु · मरणं येन निर्दिष्टं — जिससे मरण निर्दिष्ट है · तेन गच्छन्ति जन्तवः — उसी से प्राणी जाते हैं

जीवस्तृणजलौकेव देहादेहान्तरं व्रजेत् ।

५०

सम्प्राप्य परमंशेन देहं त्यजति पूर्वजम् ॥ ५०॥

तिनके पर की जोंक की तरह जीव एक देह से दूसरी देह में जाता है: एक अंश से अगली देह को पकड़कर वह पहली देह छोड़ देता है।

पदपाठ जीवस्तृणजलौकेव — जीव तिनके पर जोंक की तरह · देहादेहान्तरं व्रजेत् — एक देह से दूसरे देह में जाता है · सम्प्राप्य परमंशेन — अंश से अगले को पाकर · देहं त्यजति पूर्वजम् — पहले देह को छोड़ देता है

बाल्ययौवनवृद्धत्वं यथा देहान्तरादिकम् ।

५१

तथा देहान्तरप्राप्तिर्गृहाद्गृहमिवागतः ॥ ५१॥

जैसे बाल्य, यौवन और वृद्धावस्था मानो भिन्न-भिन्न देहें हैं, वैसे ही दूसरी देह की प्राप्ति है — जैसे कोई एक घर से दूसरे घर में चला जाये।

पदपाठ बाल्ययौवनवृद्धत्वं — बाल्य, यौवन, वृद्धत्वं · यथा देहान्तरादिकम् — जैसे (ये) देहान्तर आदि हैं · तथा देहान्तरप्राप्तिः — वैसे ही अन्य देह की प्राप्ति है · गृहाद्गृहमिवागतः — जैसे कोई एक घर से दूसरे घर जाए

जनाः कृत्वेह कर्माणि सुखदुःखानि भुञ्जते ।

५२

परत्राज्ञानिनो देवि यान्त्यायान्ति पुनः पुनः ॥ ५२ ॥

लोग यहाँ कर्म करके सुख-दुःख भोगते हैं; हे देवि! अज्ञानी परलोक में जाते और फिर-फिर लौट आते हैं।

पदपाठ जनाः कृत्वेह कर्माणि — लोग यहाँ कर्म करके · सुखदुःखानि भुञ्जते — सुख-दुःख भोगते हैं · परत्राज्ञानिनो देवि — परलोक में अज्ञानी, हे देवि · यान्त्यायान्ति पुनः पुनः — बार-बार जाते-आते हैं

इह यत् क्रियते कर्म तत् परत्रोपभुज्यते ।

५३

सिक्तमूलस्य वृक्षस्य फलं शाखासु दृश्यते ॥ ५३ ॥

यहाँ जो कर्म किया जाता है, वह परलोक में भोगा जाता है: जड़ में सींचे गये वृक्ष का फल शाखाओं पर दिखाई देता है।

पदपाठ इह यत् क्रियते कर्म — यहाँ जो कर्म किया जाता है · तत् परत्रोपभुज्यते — वह परलोक में भोगा जाता है · सिक्तमूलस्य वृक्षस्य — जड़ में सींचे वृक्ष का · फलं शाखासु दृश्यते — फल शाखाओं में दिखता है

दारिद्र्यदुःखरोगाश्च बन्धनव्यसनानि च ।

५४

आत्मापराधवृक्षस्य फलान्येतानि देहिनाम् ॥ ५४ ॥

दरिद्रता, दुःख, रोग, बन्धन और विपत्तियाँ — ये देहधारियों के लिए अपने ही अपराध-रूपी वृक्ष के फल हैं।

पदपाठ दारिद्र्यदुःखरोगाश्च — दरिद्रता, दुःख और रोग · बन्धनव्यसनानि च — बन्धन और विपत्तियाँ · आत्मापराधवृक्षस्य — अपने अपराध-रूपी वृक्ष के · फलान्येतानि देहिनाम् — ये फल हैं देहधारियों के लिए

निःसङ्ग एव मोक्षः स्यादोषाः सर्वे च सङ्गजाः ।

तस्मात् सङ्गं परित्यज्य तत्त्वनिष्ठः सुखी भवेत् ।

५५

सङ्गाच्च चलते ज्ञानी चावश्यं किमुताल्पवित् ॥ ५५॥

मोक्ष निःसंगता में ही है, और सब दोष संग से उत्पन्न होते हैं; इसलिए संग छोड़कर तत्त्वनिष्ठ होकर सुखी हो। संग से ज्ञानी भी अवश्य विचलित हो जाता है — फिर अल्पज्ञ की तो बात ही क्या!

पदपाठ निःसङ्ग एव मोक्षः स्यात् — निःसंग होने में ही मोक्ष है · दोषाः सर्वे च सङ्गजाः — और सब दोष संग से जन्मते हैं · तस्मात् सङ्गं परित्यज्य — इसलिए संग को छोड़कर · तत्त्वनिष्ठः सुखी भवेत् — तत्त्वनिष्ठ होकर सुखी हो · सङ्गाच्च चलते ज्ञानी — संग से ज्ञानी भी विचलित होता है · चावश्यं किमुताल्पवित् — अवश्य — अल्पज्ञ की तो बात ही क्या

सङ्गः सर्वात्मना त्याज्यः स चेत्त्यक्तुं न शक्यते ।

सद्भिः सह स कर्तव्यः सतां सङ्गो हि भेषजम् ॥ ५६॥

५६

संग को पूर्णतः त्याग देना चाहिए; यदि त्यागा न जा सके तो सज्जनों के साथ करे — क्योंकि सत्संग तो औषध है।

पदपाठ सङ्गः सर्वात्मना त्याज्यः — संग सर्वथा त्यागने योग्य है · स चेत्त्यक्तुं न शक्यते — यदि वह त्यागा न जा सके · सद्भिः सह स कर्तव्यः — तो सज्जनों के साथ करे · सतां सङ्गो हि भेषजम् — क्योंकि सत्संग औषध है

सत्सङ्गश्च विवेकश्च निर्मलं नयनद्वयम् ।

५७

यस्य नास्ति नरः सोऽन्धः कथं न स्यादमार्गगः ॥ ५७ ॥

सत्संग और विवेक — ये दो निर्मल नेत्र हैं; जिसके पास ये नहीं वह मनुष्य अन्धा है — वह कुमार्ग पर क्यों न जायेगा?

पदपाठ सत्सङ्गश्च विवेकश्च — सत्संग और विवेक · निर्मलं नयनद्वयम् — दो निर्मल नेत्र हैं · यस्य नास्ति नरः सोऽन्धः — जिसके पास ये नहीं, वह मनुष्य अन्धा है · कथं न स्यादमार्गगः — वह कुमार्ग पर क्यों न जाए?

यावतः कुरुते जन्तुः सम्बन्धान्मनसः प्रियान् ।

५८

तावन्तोऽस्य विशन्त्येते हृदये शोकशङ्कवः ॥ ५८ ॥

जीव अपने मन को प्रिय जितने सम्बन्ध बनाता है, उतने ही शोक के कीले उसके हृदय में घुस जाते हैं।

पदपाठ यावतः कुरुते जन्तुः — जीव जितने बनाता है · सम्बन्धान्मनसः प्रियान् — मन को प्रिय सम्बन्ध · तौवन्तोऽस्य विशन्त्येते — उतने ही घुस जाते हैं · हृदये शोकशङ्कवः — उसके हृदय में शोक की कीलें

स्वदेहमपि जीवोऽयं त्यक्त्वा याति कुलेश्वरि ।

५९

स्त्रीमातृपितृपुत्रादिसम्बन्धः केन हेतुना ॥ ५९ ॥

हे कुलेश्वरि! यह जीव अपनी देह तक को छोड़कर चला जाता है — फिर स्त्री, माता, पिता, पुत्र आदि का सम्बन्ध किस आधार पर?

पदपाठ स्वदेहमपि जीवोऽयं — अपना देह भी यह जीव · त्यक्त्वा याति कुलेश्वरि — छोड़कर चला जाता है, हे कुलेश्वरि · स्त्रीमातृपितृपुत्रादि — पत्नी, माता, पिता, पुत्र आदि · सम्बन्धः केन हेतुना — (उनसे) सम्बन्ध किस आधार पर?

दुःखमूलो हि संसारः स यस्यास्ति स दुःखितः।

तस्य त्यागः कृतो येन स सुखी नापरः प्रिये ॥ ६०॥

६०

संसार दुःख का मूल है: जिसका वह है, वह दुःखी है; जिसने उसका त्याग कर दिया, हे प्रिये! वही सुखी है, और कोई नहीं।

पदपाठ दुःखमूलो हि संसारः — संसार दुःख-मूल है · स यस्यास्ति स दुःखितः — जिसके पास वह है, वह दुःखी है · तस्य त्यागः कृतो येन — जिसने उसका त्याग किया · स सुखी नापरः प्रिये — वही सुखी है, और कोई नहीं, हे प्रिये

प्रभवं सर्वदुःखानामाश्रयं सकलापदाम् ।

आलयं सर्वपापानां संसारं वर्जयेत् प्रिये ॥ ६१॥

६१

सब दुःखों का उद्गम, सब आपत्तियों का आश्रय, सब पापों का घर — हे प्रिये! संसार को त्याग दे।

पदपाठ प्रभवं सर्वदुःखानाम् — सब दुःखों का उद्गम · आश्रयं सकलापदाम् — सब आपदाओं का आश्रय · आलयं सर्वपापानां — सब पापों का घर · संसारं वर्जयेत् प्रिये — संसार को छोड़े, हे प्रिये

अबन्धबन्धनं घोरं मिश्रीकृतमहाविषम् ।

अशस्त्रखण्डनं देवि संसारासक्तचेतसाम् ॥ ६२॥

६२

हे देवि! संसार में आसक्त चित्त वालों के लिए यह बिना रस्सी का घोर बन्धन है, (मिठास में) मिला हुआ महाविष है, बिना शस्त्र का छेदन है।

पदपाठ अबन्धबन्धनं घोरं — बिना रस्सी का घोर बन्धन · मिश्रीकृतमहाविषम् — (मधुरता में) मिला हुआ महाविष · अशस्त्रखण्डनं देवि — बिना शस्त्र का काटना, हे देवि · संसारासक्तचेतसाम् — संसार में आसक्त चित्त वालों के लिए

आदिमध्यावसानेषु सर्वं दुःखमिदं यतः ।

तस्मात् सन्त्यज्य संसारं तत्त्वनिष्ठः सुखी भवेत् ॥ ६३ ॥

६३

क्योंकि आदि, मध्य और अन्त में यह सब दुःख ही है — इसलिए संसार को त्यागकर तत्त्वनिष्ठ होकर सुखी हो।

पदपाठ आदिमध्यावसानेषु — आदि, मध्य और अन्त में · सर्वं दुःखमिदं यतः — क्योंकि यह सब दुःख ही है · तस्मात् सन्त्यज्य संसारं — इसलिए संसार को पूर्णतः छोड़कर · तत्त्वनिष्ठः सुखी भवेत् — तत्त्वनिष्ठ होकर सुखी हो

लौहदारुमयैः पाशैर्दृढबन्धोऽपि मुच्यते ।

स्त्रीधनादिषु संसक्तो मुच्यते न कदाचन ॥ ६४ ॥

६४

लोहे और लकड़ी के पाशों में कसकर बँधा हुआ भी छूट जाता है; पर स्त्री, धन आदि में आसक्त कभी नहीं छूटता।

पदपाठ लौहदारुमयैः पाशैः — लोहे और लकड़ी के पाशों से · दृढबन्धोऽपि मुच्यते — दृढ़ बँधा हुआ भी छूट जाता है · स्त्रीधनादिषु संसक्तः — स्त्री-धन आदि में आसक्त · मुच्यते न कदाचन — कभी नहीं छूटता

कुटुम्बचिन्तायुक्तस्य श्रुतशीलादयो गुणाः ।

अपक्वकुम्भजलवत् नश्यन्त्यङ्गेन केवलम् ॥ ६५ ॥

६५

कुटुम्ब की चिन्ता में डूबे हुए के श्रुत, शील आदि गुण कच्चे घड़े के जल की तरह नष्ट हो जाते हैं — और साथ ही शरीर भी।

पदपाठ कुटुम्बचिन्तायुक्तस्य — कुटुम्ब की चिन्ता में लगे हुए के · श्रुतशीलादयो गुणाः — श्रुत, शील आदि गुण · अपक्वकुम्भजलवत् — कच्चे घड़े के जल की तरह · नश्यन्त्यङ्गेन केवलम् — शरीर के साथ ही नष्ट हो जाते हैं

वञ्चिताशेषचित्तैस्तैर्नित्यं लोको विनाशितः ।

६६

हा हन्त विषयाहारैर्देहस्थेन्द्रियतत्स्करैः ॥ ६६ ॥

हा! हाय! देह में बसे इन्द्रिय-रूपी चोरों से, जो विषयों को खाते हैं और समूचे चित्त को ठग लेते हैं, संसार नित्य नष्ट किया जा रहा है।

पदपाठ वञ्चिताशेषचित्तैस्तैः — समस्त चित्त को ठगने वाले उनके द्वारा · नित्यं लोको विनाशितः — संसार नित्य नष्ट किया जाता है · हा हन्त विषयाहारैः — हाय-हाय! विषयों का आहार करने वाले · देहस्थेन्द्रियतत्स्करैः — देह में बसे इन्द्रिय-रूपी चोरों से

मांसलुब्धो यथा मत्स्यो लौहशङ्कुं न पश्यति ।

६७

सुखलुब्धस्तथा देही यमबाधां न पश्यति ॥ ६७ ॥

जैसे मांस का लोभी मछली लोहे के काँटे को नहीं देखती, वैसे ही सुख का लोभी देहधारी यम की पीड़ा को नहीं देखता।

पदपाठ मांसलुब्धो यथा मत्स्यो — जैसे मांस-लोभी मछली · लौहशङ्कुं न पश्यति — लोहे के काँटे को नहीं देखती · सुखलुब्धस्तथा देही — वैसे ही सुख-लोभी देही · यमबाधां न पश्यति — यम की पीड़ा को नहीं देखता

हिताहितं न जानन्तो नित्यमुन्मार्गगामिनः ।

६८

कुक्षिपूरणनिष्ठा ये तेऽबुधा नारकाः प्रिये ॥ ६८ ॥

हित-अहित को न जानने वाले, सदा कुमार्ग पर चलने वाले, जो केवल पेट भरने में लगे हैं — हे प्रिये! वे मूर्ख नारकी हैं।

पदपाठ हिताहितं न जानन्तः — हित-अहित न जानते हुए · नित्यमुन्मार्गगामिनः — सदा कुमार्ग पर चलते हुए · कुक्षिपूरणनिष्ठा ये — जो पेट भरने में ही लगे हैं · तेऽबुधा नारकाः प्रिये — वे मूर्ख नारकी हैं, हे प्रिये

निद्रादिमैथुनाहाराः सर्वेषां प्राणिनां समाः ।

६९

ज्ञानवान् मानवः प्रोक्तो ज्ञानहीनः पशुः प्रिये ॥ ६९॥

निद्रा, मैथुन, आहार आदि सब प्राणियों में समान हैं; ज्ञानवान् ही मनुष्य कहलाता है — हे प्रिये! ज्ञानहीन पशु है।

पदपाठ निद्रादिमैथुनाहाराः — निद्रा आदि, मैथुन, आहार · सर्वेषां प्राणिनां समाः — सब प्राणियों में समान हैं · ज्ञानवान् मानवः प्रोक्तः — ज्ञानवान् ही मनुष्य कहा गया है · ज्ञानहीनः पशुः प्रिये — ज्ञानहीन पशु है, हे प्रिये

प्रभाते मलमूत्राभ्यां क्षुत्तृड्भ्यां मध्यगे रवौ ।

७०

रात्रौ मदननिद्राभ्यां बाध्यन्ते मानवाः प्रिये ॥ ७०॥

हे प्रिये! प्रातःकाल मल-मूत्र से, मध्याह्न में भूख-प्यास से, रात में काम और निद्रा से मनुष्य पीड़ित रहते हैं।

पदपाठ प्रभाते मलमूत्राभ्यां — प्रभात में मल-मूत्र से · क्षुत्तृड्भ्यां मध्यगे रवौ — मध्याह्न में भूख-प्यास से · रात्रौ मदननिद्राभ्यां — रात में काम और निद्रा से · बाध्यन्ते मानवाः प्रिये — मनुष्य पीड़ित रहते हैं, हे प्रिये

स्वदेहधर्मदारादिनिरताः सर्वजन्तवः ।

७१

जायन्ते च म्रियन्ते च हा हन्ताज्ञानमोहिताः ॥ ७१॥

अपने शरीर, धर्म, स्त्री आदि में लगे हुए सब प्राणी जन्मते और मरते हैं — हा! हाय! अज्ञान से मोहित होकर।

पदपाठ स्वदेहधर्मदारादि — अपने देह, धर्म, स्त्री आदि में · निरताः सर्वजन्तवः — सब प्राणी रत हैं · जायन्ते च म्रियन्ते च — जन्मते हैं और मरते हैं · हा हन्ताज्ञानमोहिताः — हाय-हाय! अज्ञान से मोहित

स्वस्ववर्णाश्रमाचारनिरताः सर्वमानवाः ।

७२

न जानन्ति परं तत्त्वं मूढा नश्यन्ति पार्वति ॥ ७२ ॥

सब मनुष्य अपने-अपने वर्ण और आश्रम के आचार में लगे हैं, पर परम तत्त्व को नहीं जानते — हे पार्वति! वे मूढ़ नष्ट हो जाते हैं।

पदपाठ स्वस्ववर्णाश्रमाचार — अपने-अपने वर्ण-आश्रम के आचार में · निरताः सर्वमानवाः — सब मनुष्य रत हैं · न जानन्ति परं तत्त्वं — परम तत्त्व को नहीं जानते · मूढा नश्यन्ति पार्वति — मूढ़ नष्ट हो जाते हैं, हे पार्वति

क्रियायासपराः केचित् क्रतुचर्यादि संयुताः ।

७३

अज्ञानसंयुतात्मानः सञ्चरन्ति प्रतारकाः ॥ ७३ ॥

कुछ लोग क्रिया के परिश्रम में लगे, यज्ञ-चर्या आदि से युक्त, अज्ञान से जुड़े चित्त वाले, ठगों की तरह विचरते हैं।

पदपाठ क्रियायासपराः केचित् — कुछ क्रिया के श्रम में लगे हैं · क्रतुचर्यादि संयुताः — यज्ञ, चर्या आदि में युक्त · अज्ञानसंयुतात्मानः — अज्ञान से युक्त आत्मा वाले · सञ्चरन्ति प्रतारकाः — ठग बनकर विचरते हैं

नाममात्रेण सन्तुष्टाः कर्मकाण्डरता नराः ।

७४

मन्त्रोच्चारणहोमाद्यैर्भ्रामिताः क्रतुविस्तरैः ॥ ७४ ॥

नाममात्र से सन्तुष्ट, कर्मकाण्ड में रत मनुष्य मन्त्रोच्चारण, होम आदि तथा यज्ञ के विस्तारों से भ्रमित रहते हैं।

पदपाठ नाममात्रेण सन्तुष्टाः — नाम मात्र से सन्तुष्ट · कर्मकाण्डरता नराः — कर्मकाण्ड में रत मनुष्य · मन्त्रोच्चारणहोमाद्यैः — मन्त्रोच्चार, होम आदि से · भ्रामिताः क्रतुविस्तरैः — यज्ञ-विस्तारों से भ्रमित हैं

एकभक्तोपवासाद्यैर्नियमैः कायशोषणैः ।

७५

मूढाः परोक्षमिच्छन्ति तव मायाविमोहिताः ॥ ७५॥

एक बार भोजन, उपवास आदि नियमों से जो शरीर को सुखा देते हैं, तुम्हारी माया से मोहित मूढ़ लोग परोक्ष (फल) की कामना करते हैं।

पदपाठ एकभक्तोपवासाद्यैः — एकभक्त (एक समय भोजन), उपवास आदि से · नियमैः कायशोषणैः — काया को सुखाने वाले नियमों से · मूढाः परोक्षमिच्छन्ति — मूढ़ परोक्ष (फल) चाहते हैं · तव मायाविमोहिताः — तुम्हारी माया से विमोहित

देहदण्डनमात्रेण का मुक्तिरविवेकिनाम् ।

७६

वल्मीकताडनाद्देवि मृतः किन्तु महोरगः ॥ ७६॥

केवल देह को दण्ड देने से अविवेकियों की क्या मुक्ति? हे देवि! बाँबी पीटने से क्या महासर्प मर जाता है?

पदपाठ देहदण्डनमात्रेण — केवल देह-दण्डन से · का मुक्तिरविवेकिनाम् — अविवेकियों की क्या मुक्ति? · वल्मीकताडनाद्देवि — बाँबी पीटने से, हे देवि · मृतः किन्तु महोरगः — क्या महासर्प मर जाता है?

धनाहारार्जने युक्ता दाम्बिका वेषधारिणः ।

७७

भ्रमन्ति ज्ञानिवल्लोके भ्रामयन्ति जनानपि ॥ ७७॥

धन और भोजन कमाने में लगे, वेश धारण किये हुए दम्भी लोग ज्ञानियों की तरह संसार में घूमते हैं और लोगों को भी भ्रमित करते हैं।

पदपाठ धनाहारार्जने युक्ताः — धन और आहार के अर्जन में लगे · दाम्बिका वेषधारिणः — वेश धारण करने वाले दम्भी · भ्रमन्ति ज्ञानिवल्लोके — ज्ञानी की तरह लोक में घूमते हैं · भ्रामयन्ति जनानपि — और लोगों को भी भ्रमित करते हैं

सांसारिकसुखासक्तं ब्रह्मज्ञोऽस्मीति वादिनम् ।

७८

कर्मब्रह्मोभयभ्रष्टं तं त्यजेदन्त्यजं यथा ॥ ७८॥

जो सांसारिक सुखों में आसक्त होकर भी "मैं ब्रह्मज्ञ हूँ" कहता है, वह कर्म और ब्रह्म दोनों से भ्रष्ट है — उसे अन्त्यज की तरह त्याग दे।

पदपाठ सांसारिकसुखासक्तं — सांसारिक सुख में आसक्त · ब्रह्मज्ञोऽस्मीति वादिनम् — "मैं ब्रह्मज्ञ हूँ" कहने वाले को · कर्मब्रह्मोभयभ्रष्टं — कर्म और ब्रह्म — दोनों से भ्रष्ट को · तं त्यजेदन्त्यजं यथा — अन्त्यज की तरह त्याग दे

गृहारण्यसमा लोके गतव्रीडा दिगम्बराः ।

७९

चरन्ति गर्दभाद्याश्च योगिनस्ते भवन्ति किम् ॥ ७९॥

गधे आदि भी घर और जंगल को समान मानकर, निर्लज्ज और नग्न होकर विचरते हैं — क्या वे योगी हो जाते हैं?

पदपाठ गृहारण्यसमा लोके — लोक में घर और वन को समान (मानकर) · गतव्रीडा दिगम्बराः — निर्लज्ज, दिगम्बर · चरन्ति गर्दभाद्याश्च — गधे आदि भी ऐसे विचरते हैं · योगिनस्ते भवन्ति किम् — क्या वे योगी हो जाते हैं?

मृद्भस्मप्रक्षणाद् देवि मुक्ताः स्युर्यदि मानवाः ।

८०

मृद्भस्मवासिनो ग्राम्याः किं ते मुक्ता भवन्ति हि ॥ ८०॥

हे देवि! यदि मिट्टी और भस्म लगाने से मनुष्य मुक्त हो जाते, तो धूल और राख में रहने वाले गाँव के पशु क्या मुक्त नहीं हो जाते?

पदपाठ मृद्भस्मप्रक्षणाद् देवि — मिट्टी और भस्म लगाने से, हे देवि · मुक्ताः स्युर्यदि मानवाः — यदि मनुष्य मुक्त हो जाते · मृद्भस्मवासिनो ग्राम्याः — धूल-भस्म में रहने वाले ग्राम्य (पशु) · किं ते मुक्ता भवन्ति हि — क्या वे भी मुक्त नहीं होते?

तृणपर्णोदकाहाराः सततं वनवासिनः ।

हरिणादिमृगा देवि योगिनस्ते भवन्ति किम् ॥ ८१ ॥

८१

हे देवि! तृण, पत्ते और जल खाकर सदा वन में रहने वाले हरिण आदि पशु — क्या वे योगी हो जाते हैं?

पदपाठ तृणपर्णोदकाहाराः — तृण, पत्ते, जल का आहार करने वाले · सततं वनवासिनः — सदा वन में रहने वाले · हरिणादिमृगा देवि — हरिण आदि पशु, हे देवि · योगिनस्ते भवन्ति किम् — क्या वे योगी हो जाते हैं?

आजन्ममरणान्तञ्च गङ्गादितटिनीस्थिताः ।

मण्डूकमत्स्यप्रमुखा व्रतिनस्ते भवन्ति किम् ॥ ८२ ॥

८२

जन्म से मृत्यु तक गंगा आदि नदियों में रहने वाले मेंढक, मछली आदि — क्या वे व्रती हो जाते हैं?

पदपाठ आजन्ममरणान्तञ्च — जन्म से मृत्यु तक · गङ्गादितटिनीस्थिताः — गंगा आदि नदियों में रहने वाले · मण्डूकमत्स्यप्रमुखाः — मेंढक, मछली आदि · व्रतिनस्ते भवन्ति किम् — क्या वे व्रती हो जाते हैं?

वदन्ति हृदयानन्दं पठन्ति शुकसारिकाः ।

जनानां पुरतो देवि विबुधाः किं भवन्ति हि ॥ ८३ ॥

८३

हे देवि! तोते और मैना लोगों के सामने मनोहर बोलते और पाठ करते हैं — क्या वे विद्वान् हो जाते हैं?

पदपाठ वदन्ति हृदयानन्दं — हृदय को आनन्द देने वाली बातें बोलते हैं · पठन्ति शुकसारिकाः — तोते और मैना पढ़ते हैं · जनानां पुरतो देवि — लोगों के सामने, हे देवि · विबुधाः किं भवन्ति हि — क्या वे विद्वान् हो जाते हैं?

पारावताः शिलाहाराः परमेश्वरि चातकाः ।

न पिबन्ति महीतोयं योगिनस्ते भवन्ति किम् ॥ ८४ ॥

८४

हे परमेश्वरि! कबूतर कंकड़ खाते हैं और चातक पृथ्वी का जल नहीं पीते — क्या वे योगी हो जाते हैं?

पदपाठ पारावताः शिलाहाराः — कबूतर कंकड़ खाते हैं · परमेश्वरि चातकाः — हे परमेश्वरि! चातक · न पिबन्ति महीतोयं — पृथ्वी का जल नहीं पीते · योगिनस्ते भवन्ति किम् — क्या वे योगी हो जाते हैं?

शीतवातातपसहा भक्ष्याभक्ष्यसमाः प्रिये ।

तिष्ठन्ति शूकराद्याश्च योगिनस्ते भवन्ति किम् ॥ ८५ ॥

८५

हे प्रिये! सूअर आदि भी सर्दी, हवा और धूप सहते हैं और भक्ष्य-अभक्ष्य में समान रहते हैं — क्या वे योगी हो जाते हैं?

पदपाठ शीतवातातपसहाः — शीत, वायु, आतप सहने वाले · भक्ष्याभक्ष्यसमाः प्रिये — भक्ष्य-अभक्ष्य में समान, हे प्रिये · तिष्ठन्ति शूकराद्याश्च — सूअर आदि भी ऐसे रहते हैं · योगिनस्ते भवन्ति किम् — क्या वे योगी हो जाते हैं?

तस्मादित्यादिकं कर्म लोकवञ्चनकारकम् ।

मोक्षस्य कारणं साक्षात्तत्त्वज्ञानं कुलेश्वरि ॥ ८६ ॥

८६

इसलिए इस प्रकार के कर्म लोगों को ठगने वाले हैं; हे कुलेश्वरि! मोक्ष का साक्षात् कारण तत्त्वज्ञान है।

पदपाठ तस्मादित्यादिकं कर्म — इसलिए ऐसे कर्म · लोकवञ्चनकारकम् — लोक को ठगने वाले हैं · मोक्षस्य कारणं साक्षात् — मोक्ष का साक्षात् कारण · तत्त्वज्ञानं कुलेश्वरि — तत्त्वज्ञान है, हे कुलेश्वरि

षड्दर्शनमहाकूपे पतिताः पशवः प्रिये ।

परमार्थं न जानन्ति पशुपाशनियन्त्रिताः ॥ ८७ ॥

८७

हे प्रिये! छह दर्शनों के महाकूप में गिरे हुए पशु (जीव), पशु-पाश से बँधे हुए, परमार्थ को नहीं जानते।

पदपाठ षड्दर्शनमहाकूपे — छह दर्शनों के महाकूप में · पतिताः पशवः प्रिये — पशु गिरे हुए हैं, हे प्रिये · परमार्थं न जानन्ति — परमार्थ को नहीं जानते · पशुपाशनियन्त्रिताः — पशु-पाश से नियन्त्रित

वेदशास्त्राण्वि घोरे ताड्यमाना इतस्ततः ।

कालोर्मिग्राहग्रस्ताश्च तिष्ठन्ति हि कुतार्किकाः ॥ ८८ ॥

८८

वेद-शास्त्र के घोर सागर में इधर-उधर थपेड़े खाते, काल की लहरों के ग्राह से ग्रस्त — कुतार्किक वहीं पड़े रहते हैं।

पदपाठ वेदशास्त्राण्वि घोरे — वेद-शास्त्र के घोर समुद्र में · ताड्यमाना इतस्ततः — इधर-उधर थपेड़े खाते · कालोर्मिग्राहग्रस्ताश्च — और काल की तरंगों के ग्राह से ग्रस्त · तिष्ठन्ति हि कुतार्किकाः — कुतार्किक वहीं पड़े रहते हैं

वेदागमपुराणज्ञः परमार्थं न वेत्ति यः ।

विडम्बकस्य तस्यापि तत् सर्वं काकभाषितम् ॥ ८९ ॥

८९

जो वेद, आगम और पुराण जानता है पर परमार्थ को नहीं जानता — उस विडम्बक का वह सब ज्ञान कौओं की काँव-काँव है।

पदपाठ वेदागमपुराणज्ञः — वेद, आगम, पुराण का ज्ञाता · परमार्थं न वेत्ति यः — जो परमार्थ को नहीं जानता · विडम्बकस्य तस्यापि — उस नकलची का भी · तत् सर्वं काकभाषितम् — वह सब कौवे की काँव-काँव है

इदं ज्ञानमिदं ज्ञेयमिति चिन्तासमाकुलाः ।

९०

पठन्त्यहर्निशं देवि परतत्त्वपराङ्मुखाः ॥ ९० ॥

"यह ज्ञान है, यह जानने योग्य है" — इस चिन्ता में व्याकुल, हे देवि! वे दिन-रात पढ़ते हैं, परम तत्त्व से विमुख होकर।

पदपाठ इदं ज्ञानमिदं ज्ञेयम् — "यह ज्ञान है, यह ज्ञेय है" · इति चिन्तासमाकुलाः — इस चिन्ता से व्याकुल · पठन्त्यहर्निशं देवि — दिन-रात पढ़ते हैं, हे देवि · परतत्त्वपराङ्मुखाः — परम तत्त्व से विमुख

वाक्यच्छन्दोनिबन्धेन काव्यालङ्कारशोभिना ।

९१

चिन्तया दुःखिता मूढास्तिष्ठन्ति व्याकुलेन्द्रियाः ॥ ९१ ॥

वाक्य और छन्दों की रचनाओं में, काव्य के अलंकारों से सजे हुए, वे मूढ़ चिन्ता से दुःखी और व्याकुल इन्द्रियों वाले बने रहते हैं।

पदपाठ वाक्यच्छन्दोनिबन्धेन — वाक्य और छन्द की रचना से · काव्यालङ्कारशोभिना — काव्य-अलंकारों से सुशोभित · चिन्तया दुःखिता मूढाः — चिन्ता से दुःखी मूढ़ · तिष्ठन्ति व्याकुलेन्द्रियाः — व्याकुल इन्द्रियों वाले बने रहते हैं

अन्यथा परमं तत्त्वं जनाः क्लिश्यन्ति चान्यथा ।

९२

अन्यथा शास्त्रसद्भावो व्याख्यां कुर्वन्ति चान्यथा ॥ ९२ ॥

परम तत्त्व कुछ और है, और लोग कष्ट किसी और के लिए उठाते हैं; शास्त्र का सच्चा भाव कुछ और है, और वे व्याख्या किसी और की करते हैं।

पदपाठ अन्यथा परमं तत्त्वं — परम तत्त्व कुछ और है · जनाः क्लिश्यन्ति चान्यथा — और लोग कुछ और के लिए क्लेश पाते हैं · अन्यथा शास्त्रसद्भावो — शास्त्र का वास्तविक भाव कुछ और है · व्याख्यां कुर्वन्ति चान्यथा — और व्याख्या कुछ और करते हैं

कथयन्त्युन्मनीभावं स्वयं नानुभवन्ति हि ।

९३

अहङ्कारहताः केचिदुपदेशविवर्जिताः ॥ ९३ ॥

वे उन्मनी भाव की बातें करते हैं, पर स्वयं उसका अनुभव नहीं करते; कुछ अहंकार से मारे हुए, उपदेश से वंचित हैं।

पदपाठ कथयन्त्युन्मनीभावं — उन्मनी भाव की बात करते हैं · स्वयं नानुभवन्ति हि — पर स्वयं अनुभव नहीं करते · अहङ्कारहताः केचित् — कुछ अहंकार से मारे हुए · उपदेशविवर्जिताः — (सच्चे) उपदेश से रहित

पठन्ति वेदशास्त्राणि विवदन्ति परस्परम् ।

९४

न जानन्ति परं तत्त्वं दर्वी पाकरसं यथा ॥ ९४ ॥

वे वेद-शास्त्र पढ़ते हैं और आपस में विवाद करते हैं, पर परम तत्त्व को नहीं जानते — जैसे कलछी पकवान के स्वाद को नहीं जानती।

पदपाठ पठन्ति वेदशास्त्राणि — वेद-शास्त्र पढ़ते हैं · विवदन्ति परस्परम् — परस्पर विवाद करते हैं · न जानन्ति परं तत्त्वं — परम तत्त्व को नहीं जानते · दर्वी पाकरसं यथा — जैसे कलछी पके भोजन का रस (नहीं जानती)

शिरो वहति पुष्पाणि गन्धं जानाति नासिका ।

९५

पठन्ति वेदशास्त्राणि दुर्लभो भाववेदकः ॥ ९५ ॥

सिर फूलों को ढोता है, पर सुगन्ध नाक जानती है; वेद-शास्त्र बहुत लोग पढ़ते हैं, पर उनके भाव को जानने वाला दुर्लभ है।

पदपाठ शिरो वहति पुष्पाणि — सिर फूलों को धारण करता है · गन्धं जानाति नासिका — सुगन्ध तो नाक जानती है · पठन्ति वेदशास्त्राणि — (बहुत लोग) वेद-शास्त्र पढ़ते हैं · दुर्लभो भाववेदकः — भाव को जानने वाला दुर्लभ है

तत्त्वमात्मस्थमज्ञात्वा मूढः शास्त्रेषु मुह्यति ।

गोपः कक्षगतं छागं कूपे पश्यति दुर्मतिः ॥ ९६ ॥

९६

अपने भीतर स्थित तत्त्व को न जानकर मूढ़ शास्त्रों में भटकता है — जैसे मूर्ख ग्वाला काँख में बकरा दबाये उसे कुएँ में ढूँढ़ता है।

पदपाठ तत्त्वमात्मस्थमज्ञात्वा — अपने में स्थित तत्त्व को न जानकर · मूढः शास्त्रेषु मुह्यति — मूढ़ शास्त्रों में भटकता है · गोपः कक्षगतं छागं — गड़रिया, बगल में बकरी लिए · कूपे पश्यति दुर्मतिः — दुर्बुद्धि उसे कुएँ में खोजता है

संसारमोहनाशाय शाब्दबोधो न हि क्षमः ।

न निवर्तेत तिमिरं कदाचिद्दीपवार्तया ॥ ९७ ॥

९७

संसार के मोह का नाश करने में शब्द-ज्ञान समर्थ नहीं; दीपक की बात करने से अन्धकार कभी दूर नहीं होता।

पदपाठ संसारमोहनाशाय — संसार के मोह को नष्ट करने में · शाब्दबोधो न हि क्षमः — शब्दज्ञान समर्थ नहीं है · न निवर्तेत तिमिरं — अन्धकार नहीं हटता · कदाचिद्दीपवार्तया — कभी भी दीपक की चर्चा से

प्रज्ञाहीनस्य पठनम् अन्धस्यादर्शदर्शनम् ।

देवि प्रज्ञावतः शास्त्रं तत्त्वज्ञानस्य कारणम् ॥ ९८ ॥

९८

प्रज्ञाहीन का पढ़ना अन्धे का दर्पण देखना है; पर हे देवि! प्रज्ञावान् के लिए शास्त्र तत्त्वज्ञान का कारण है।

पदपाठ प्रज्ञाहीनस्य पठनम् — प्रज्ञाहीन का पढ़ना · अन्धस्यादर्शदर्शनम् — अन्धे का दर्पण देखना है · देवि प्रज्ञावतः शास्त्रं — हे देवि! प्रज्ञावान् के लिए शास्त्र · तत्त्वज्ञानस्य कारणम् — तत्त्वज्ञान का कारण है

अग्रतः पृष्ठतः केचित् पार्श्वयोरपि केचन ।
तत्त्वमीदृक् तादृगिति विवदन्ति परस्परम् ।
सद्विद्यादानशूराद्यैर्गुणैर्विख्यातमानवाः ॥ ९९ ॥

९९

कोई आगे, कोई पीछे, कोई दोनों ओर — "तत्त्व ऐसा है", "वैसा है" — इस प्रकार सद्विद्या, दान, शूरता आदि गुणों से प्रसिद्ध मनुष्य आपस में विवाद करते हैं।

पदपाठ अग्रतः पृष्ठतः केचित् — कुछ आगे, कुछ पीछे · पार्श्वयोरपि केचन — और कुछ दोनों बगल में · तत्त्वमीदृक् तादृगिति — "तत्त्व ऐसा है, वैसा है" · विवदन्ति परस्परम् — परस्पर विवाद करते हैं · सद्विद्यादानशूराद्यैः — सद्विद्या, दान, शौर्य आदि · गुणैर्विख्यातमानवाः — गुणों से विख्यात मनुष्य

प्रत्यक्षग्रहणं नास्ति वार्तया ग्रहणं कुतः ।
एवं ये शास्त्रसम्मूढास्ते दूरस्था न संशयः ॥ १०० ॥

१००

उन्हें प्रत्यक्ष ग्रहण नहीं है — तो सुनी-सुनाई बात से ग्रहण कैसे होगा? जो इस प्रकार शास्त्रों से मोहित हैं, वे निःसन्देह (तत्त्व से) दूर हैं।

पदपाठ प्रत्यक्षग्रहणं नास्ति — प्रत्यक्ष ग्रहण नहीं है · वार्तया ग्रहणं कुतः — सुनी-सुनाई से ग्रहण कैसे? · एवं ये शास्त्रसम्मूढाः — जो इस प्रकार शास्त्रों से मोहित हैं · ते दूरस्था न संशयः — वे (तत्त्व से) दूर हैं, इसमें सन्देह नहीं

इदं ज्ञानमिदं ज्ञेयं सर्वतः श्रोतुमिच्छति ।
देवि वर्षसहस्रायुः शास्त्रान्तं नैव गच्छति ॥ १०१ ॥

१०१

"यह ज्ञान है, यह ज्ञेय है" — सब ओर से सब कुछ सुनना चाहता है; पर हे देवि! हजार वर्ष की आयु में भी शास्त्रों का अन्त नहीं मिलता।

पदपाठ इदं ज्ञानमिदं ज्ञेयं — "यह ज्ञान है, यह ज्ञेय है" · सर्वतः श्रोतुमिच्छति — सब ओर से सब सुनना चाहता है · देवि वर्षसहस्रायुः — हे देवि! हजार वर्ष की आयु से भी · शास्त्रान्तं नैव गच्छति — शास्त्रों का अन्त नहीं पाता

वेदाद्यनेकशास्त्राणि स्वल्पायुर्विघ्नकोटयः ।

१०२

तस्मात् सारं विजानीयात् क्षीरं हंस इवाम्भसः ॥ १०२ ॥

वेद आदि अनेक शास्त्र हैं, आयु थोड़ी है और विघ्न करोड़ों; इसलिए सार को ग्रहण करे — जैसे हंस जल में से दूध ले लेता है।

पदपाठ वेदाद्यनेकशास्त्राणि — वेद आदि अनेक शास्त्र · स्वल्पायुर्विघ्नकोटयः — आयु अल्प, विघ्न करोड़ों · तस्मात् सारं विजानीयात् — इसलिए सार को जाने · क्षीरं हंस इवाम्भसः — जैसे हंस जल से दूध (ले लेता है)

अभ्यस्य सर्वशास्त्राणि तत्त्वं ज्ञात्वा हि बुद्धिमान् ।

१०३

पलालमिव धान्यार्थी सर्वशास्त्रं परित्यजेत् ॥ १०३ ॥

सब शास्त्रों का अभ्यास करके और तत्त्व को जानकर बुद्धिमान् सब शास्त्रों को त्याग दे — जैसे धान चाहने वाला पुआल को छोड़ देता है।

पदपाठ अभ्यस्य सर्वशास्त्राणि — सब शास्त्रों का अभ्यास कर · तत्त्वं ज्ञात्वा हि बुद्धिमान् — और तत्त्व को जानकर बुद्धिमान् · पलालमिव धान्यार्थी — जैसे धान्य चाहने वाला भूसे को (छोड़ देता है) · सर्वशास्त्रं परित्यजेत् — सब शास्त्रों को छोड़ दे

यथामृतेन तृप्तस्य नाहारेण प्रयोजनम् ।

१०४

तत्त्वज्ञस्य तथा देवि न शास्त्रेण प्रयोजनम् ॥ १०४ ॥

जैसे अमृत से तृप्त को भोजन की आवश्यकता नहीं, वैसे ही, हे देवि! तत्त्वज्ञ को शास्त्र की आवश्यकता नहीं।

पदपाठ यथामृतेन तृप्तस्य — जैसे अमृत से तृप्त को · नाहारेण प्रयोजनम् — आहार का प्रयोजन नहीं · तत्त्वज्ञस्य तथा देवि — वैसे तत्त्वज्ञ को, हे देवि · न शास्त्रेण प्रयोजनम् — शास्त्र का प्रयोजन नहीं

न वेदाध्ययनान्मुक्तिर्न शास्त्रपठनादपि ।

१०५

ज्ञानादेव हि मुक्तिः स्यान्नान्यथा वीरवन्दिते ॥ १०५ ॥

वेद के अध्ययन से मुक्ति नहीं, न शास्त्र-पाठ से; हे वीरवन्दिते! मुक्ति ज्ञान से ही होती है, अन्यथा नहीं।

पदपाठ न वेदाध्ययनान्मुक्तिः — वेदाध्ययन से मुक्ति नहीं · न शास्त्रपठनादपि — न शास्त्र-पठन से भी · ज्ञानादेव हि मुक्तिः स्यात् — ज्ञान से ही मुक्ति होती है · नान्यथा वीरवन्दिते — अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते

नाश्रमाः कारणं मुक्तेर्दर्शनानि न कारणम् ।

१०६

तथैव सर्वशास्त्राणि ज्ञानमेव हि कारणम् ॥ १०६ ॥

आश्रम मुक्ति के कारण नहीं, दर्शन कारण नहीं, वैसे ही सारे शास्त्र भी नहीं — ज्ञान ही कारण है।

पदपाठ नाश्रमाः कारणं मुक्तेः — आश्रम मुक्ति के कारण नहीं · दर्शनानि न कारणम् — दर्शन भी कारण नहीं · तथैव सर्वशास्त्राणि — वैसे ही सब शास्त्र भी नहीं · ज्ञानमेव हि कारणम् — ज्ञान ही कारण है

मुक्तिदा गुरुवागेका विद्याः सर्वा विडम्बकाः ।

१०७

काष्ठभारश्रमादस्मादेकं सञ्जीवनं परम् ॥ १०७ ॥

गुरु की वाणी ही एकमात्र मुक्तिदायिनी है; सब विद्याएँ विडम्बना हैं। लकड़ी का बोझ ढोने के इस श्रम में वही एक परम संजीवनी है।

पदपाठ मुक्तिदा गुरुवागेका — एक गुरुवाणी ही मुक्ति देती है · विद्याः सर्वा विडम्बकाः — अन्य सब विद्याएँ नकल हैं · काष्ठभारश्रमादस्मात् — लकड़ी का बोझ ढोने के इस श्रम से · एकं सञ्जीवनं परम् — एक ही परम संजीवनी है

अद्वैतन्तु शिवेनोक्तं क्रियायासविवर्जितम् ।

१०८

गुरुवक्त्रेण लभ्येत नान्यथागमकोटिभिः ॥ १०८ ॥

शिव ने क्रिया के परिश्रम से रहित अद्वैत का उपदेश किया है; वह गुरु के मुख से प्राप्त होता है, अन्यथा नहीं — करोड़ों आगमों से भी नहीं।

पदपाठ अद्वैतन्तु शिवेनोक्तं — शिव द्वारा कहा गया अद्वैत · क्रियायासविवर्जितम् — क्रिया के श्रम से रहित · गुरुवक्त्रेण लभ्येत — गुरु के मुख से प्राप्त होता है · नान्यथागमकोटिभिः — अन्यथा नहीं, करोड़ों आगमों से भी नहीं

आगमोत्थं विवेकोत्थं द्विधा ज्ञानं प्रचक्षते ।

१०९

शब्दब्रह्मागममयं परं ब्रह्म विवेकजम् ॥ १०९ ॥

ज्ञान दो प्रकार का कहा गया है: आगम से उत्पन्न और विवेक से उत्पन्न। आगममय ज्ञान शब्दब्रह्म है; विवेक से उत्पन्न ज्ञान परब्रह्म है।

पदपाठ आगमोत्थं विवेकोत्थं — आगम से उत्पन्न, विवेक से उत्पन्न · द्विधा ज्ञानं प्रचक्षते — ज्ञान दो प्रकार का कहा गया है · शब्दब्रह्मागममयं — आगममय ज्ञान शब्दब्रह्म है · परं ब्रह्म विवेकजम् — विवेकजन्य परब्रह्म है

अद्वैतं केचिदिच्छन्ति द्वैतमिच्छन्ति चापरे ।

११०

मम तत्त्वं न जानन्ति द्वैताद्वैतविवर्जितम् ॥ ११० ॥

कुछ अद्वैत चाहते हैं, कुछ द्वैत; वे मेरे तत्त्व को नहीं जानते, जो द्वैत और अद्वैत दोनों से रहित है।

पदपाठ अद्वैतं केचिदिच्छन्ति — कुछ अद्वैत चाहते हैं · द्वैतमिच्छन्ति चापरे — और दूसरे द्वैत चाहते हैं · मम तत्त्वं न जानन्ति — वे मेरे तत्त्व को नहीं जानते · द्वैताद्वैतविवर्जितम् — जो द्वैत और अद्वैत दोनों से रहित है

द्वे पदे बन्धमोक्षाय ममेति निर्ममेति च ।

१११

ममेति बाध्यते जन्तुर्न ममेति विमुच्यते ॥ १११ ॥

दो पद बन्धन और मोक्ष के लिए हैं: "मेरा" और "मेरा नहीं"। "मेरा" से जीव बँधता है; "मेरा नहीं" से मुक्त हो जाता है।

पदपाठ द्वे पदे बन्धमोक्षाय — दो पद बन्धन और मोक्ष के लिए हैं · ममेति निर्ममेति च — "मम" (मेरा) और "निर्मम" (मेरा नहीं) · ममेति बाध्यते जन्तुः — "मेरा" से जीव बँधता है · न ममेति विमुच्यते — "मेरा नहीं" से मुक्त होता है

तत् कर्म यन्न बन्धाय विद्या सा या विमुक्तये ।

११२

आयासायापरं कर्म विद्यान्या शिल्पनैपुणम् ॥ ११२ ॥

वही कर्म है जो बन्धन के लिए नहीं; वही विद्या है जो मुक्ति के लिए है। अन्य कर्म केवल परिश्रम है; अन्य विद्या केवल शिल्प की कुशलता।

पदपाठ तत् कर्म यन्न बन्धाय — वही कर्म है जो बन्धन के लिए न हो · विद्या सा या विमुक्तये — वही विद्या है जो मुक्ति के लिए हो · आयासायापरं कर्म — अन्य कर्म केवल श्रम है · विद्यान्या शिल्पनैपुणम् — अन्य विद्या केवल शिल्प-कौशल है

यावत् कामादि दीप्येत यावत् संसारवासना ।

११३

यावदिन्द्रियचापल्यं तावत्तत्त्वकथा कुतः ॥ ११३ ॥

जब तक काम आदि प्रज्वलित हैं, जब तक संसार की वासना है, जब तक इन्द्रियों की चंचलता है — तब तक तत्त्व की चर्चा कहाँ?

पदपाठ यावत् कामादि दीप्येत — जब तक काम आदि प्रदीप्त हैं · यावत् संसारवासना — जब तक संसार की वासना है · यावदिन्द्रियचापल्यं — जब तक इन्द्रियों की चंचलता है · तावत्तत्त्वकथा कुतः — तब तक तत्त्व की चर्चा कहाँ?

यावत् प्रयत्नवेगोऽस्ति यावत् सङ्कल्पकल्पना ।

११४

यावन्न मनसः स्थैर्यं तावत्तत्त्वकथा कुतः ॥ ११४ ॥

जब तक प्रयत्न का वेग है, जब तक संकल्पों की कल्पना है, जब तक मन में स्थिरता नहीं — तब तक तत्त्व की चर्चा कहाँ?

पदपाठ यावत् प्रयत्नवेगोऽस्ति — जब तक प्रयत्न का वेग है · यावत् सङ्कल्पकल्पना — जब तक संकल्प की कल्पना है · यावन्न मनसः स्थैर्यं — जब तक मन की स्थिरता नहीं · तावत्तत्त्वकथा कुतः — तब तक तत्त्व की चर्चा कहाँ?

यावद्देहाभिमानश्च ममता यावदस्ति हि ।

११५

यावन्न गुरुकारुण्यं तावत्तत्त्वकथा कुतः ॥ ११५ ॥

जब तक देह का अभिमान है, जब तक ममता है, जब तक गुरु की कृपा नहीं — तब तक तत्त्व की चर्चा कहाँ?

पदपाठ यावद्देहाभिमानश्च — जब तक देहाभिमान है · ममता यावदस्ति हि — जब तक ममता है · यावन्न गुरुकारुण्यं — जब तक गुरु की करुणा नहीं · तावत्तत्त्वकथा कुतः — तब तक तत्त्व की चर्चा कहाँ?

तावत्तपो व्रतं तीर्थं जपहोमार्चनादिकम् ।

११६

वेदशास्त्रागमकथा यावत्तत्त्वं न विन्दते ॥ ११६ ॥

तप, व्रत, तीर्थ, जप, होम, अर्चन आदि, और वेद-शास्त्र-आगम की चर्चा — ये तभी तक हैं जब तक तत्त्व नहीं मिलता।

पदपाठ तावत्तपो व्रतं तीर्थं — तब तक तप, व्रत, तीर्थ · जपहोमार्चनादिकम् — जप, होम, पूजा आदि · वेदशास्त्रागमकथा — और वेद, शास्त्र, आगम की चर्चा · यावत्तत्त्वं न विन्दते — जब तक तत्त्व नहीं पाया

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा ।
तत्त्वनिष्ठो भवेद्देवि यदीच्छेन्मोक्षमात्मनः ॥ ११७ ॥

११७

इसलिए, हे देवि! यदि अपनी मुक्ति चाहता हो तो सब प्रयत्न से, सब अवस्थाओं में, सदा तत्त्वनिष्ठ रहे।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · सर्वावस्थासु सर्वदा — सब अवस्थाओं में, सदा · तत्त्वनिष्ठो भवेद्देवि — तत्त्वनिष्ठ हो, हे देवि · यदीच्छेन्मोक्षमात्मनः — यदि अपना मोक्ष चाहे

धर्मज्ञानसुपुष्पस्य स्वर्गलोकफलस्य च ।
तापत्रयार्तिसन्तप्तश्छायां मोक्षतरोः श्रयेत् ॥ ११८ ॥

११८

तीनों तापों की पीड़ा से संतप्त मनुष्य मोक्ष-रूपी वृक्ष की छाया का आश्रय ले, जिसके सुन्दर फूल धर्म और ज्ञान हैं और जिसका फल स्वर्गलोक है।

पदपाठ धर्मज्ञानसुपुष्पस्य — जिसके सुन्दर पुष्प धर्म और ज्ञान हैं · स्वर्गलोकफलस्य च — और जिसका फल स्वर्गलोक है · तापत्रयार्तिसन्तप्तः — त्रिविध तापों की पीड़ा से सन्तप्त · छायां मोक्षतरोः श्रयेत् — मोक्ष-वृक्ष की छाया का आश्रय ले

बहुनात्र किमुक्तेन रहस्यं शृणु पार्वति ।
कुलधर्ममृते मुक्तिर्नास्ति सत्यं न संशयः ॥ ११९ ॥

११९

यहाँ अधिक कहने से क्या? हे पार्वति! रहस्य सुनो: कुलधर्म के बिना मुक्ति नहीं है। यह सत्य है, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या? · रहस्यं शृणु पार्वति — रहस्य सुनो, हे पार्वति · कुलधर्ममृते मुक्तिः — कुलधर्म के बिना मुक्ति · नास्ति सत्यं न संशयः — नहीं है — यह सत्य है, सन्देह नहीं

तस्माद्वदामि तत्त्वन्ते विज्ञाय श्रीगुरोर्मुखात् ।
सुखेन मुच्यते देवि घोरसंसारबन्धनात् ॥ १२० ॥

१२०

इसलिए मैं तुम्हें तत्त्व बताता हूँ: उसे श्रीगुरु के मुख से जानकर, हे देवि! मनुष्य घोर संसार के बन्धन से सुखपूर्वक मुक्त हो जाता है।

पदपाठ तस्माद्वदामि तत्त्वन्ते — इसलिए मैं तुम्हें तत्त्व कहता हूँ · विज्ञाय श्रीगुरोर्मुखात् — श्रीगुरु के मुख से जानकर · सुखेन मुच्यते देवि — सुखपूर्वक मुक्त होता है, हे देवि · घोरसंसारबन्धनात् — घोर संसार के बन्धन से

इति ते कथिता काचिज्जीवजातिस्थितिः प्रिये ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १२१ ॥

१२१

हे प्रिये! इस प्रकार जीवों की जातियों की स्थिति तुम्हें कुछ संक्षेप में बतायी गयी, हे कुलेशानि! अब और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथिता काचित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · जीवजातिस्थितिः प्रिये — जीव-जातियों की स्थिति, हे प्रिये · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे पञ्चमखण्डे
ऊर्ध्वाग्न्यायतन्त्रे जीवस्थितिकथनं नाम प्रथम उल्लासः ॥१॥

इस प्रकार महारहस्य, सब आगमों में उत्तमोत्तम, सवा लाख श्लोकों के ग्रन्थ
श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाग्न्यायतन्त्र में जीवस्थितिकथन नामक
प्रथम उल्लास पूर्ण हुआ ॥१॥

॥ श्रीः ॥

अथ द्वितीयोल्लासः

कुलमाहात्म्यकथनम्



पार्वती शिव से उस कुलधर्म को प्रकट करने और ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य बताने का अनुरोध करती हैं जिसका उन्होंने केवल संकेत किया था। शिव स्वीकार करते हैं, यद्यपि यह रहस्य ब्रह्मा, विष्णु और गुरु को भी कभी नहीं कहा गया — यह उनके अपने पाँच मुखों की परम्परा से आया है और केवल भक्त शिष्य को ही देने योग्य है। वे मार्गों की प्रसिद्ध आरोही सीढ़ी बताते हैं — वेद, फिर वैष्णव, शैव, दक्षिण, वाम और सिद्धान्त, और सबके ऊपर कौल, जिससे बढ़कर कुछ नहीं — और कहते हैं कि उन्होंने ज्ञान की मथानी से वेद-आगम के सागर को मथकर कुलधर्म निकाला है। उपमाओं की लम्बी शृंखला आती है: सब मत कुल में वैसे समाते हैं जैसे नदियाँ समुद्र में और सब पदचिह्न हाथी के पदचिह्न में; लोहा सोने की और जुगनू सूर्य की बराबरी नहीं कर सकता; अन्य मार्ग दीर्घ अभ्यास से मुक्ति देते हैं, कौल तत्काल। इसका विशिष्ट दावा स्पष्ट कहा गया है: योगी भोगी नहीं होता और भोगी योगी नहीं, पर कौल भोग और योग को जोड़ता है, जिससे उसमें भोग योग बन जाता है, पाप पुण्य और संसार मोक्ष। फिर शिव बताते हैं कि कुलज्ञान कैसे उदित होता है — पूर्वजन्म के अभ्यास से, चित्त को शुद्ध करने वाले मन्त्रों से, क्षीण हुए पापों से, शिव और शक्ति की प्रसन्नता से, गुरु, शास्त्र और कौल-समुदाय में दृढ़ भक्ति से — और आदेश देते हैं कि इसे अयोग्य को कभी न दिया जाये, अन्यथा देवताओं का शाप और योगिनियों का कोप। जो इसे छोड़ते हैं वे घर की खीर छोड़कर भीख माँगने वाले, हाथ का रत्न फेंककर दूर के काँच के लोभी, या तालाब छोड़कर मृगतृष्णा के पीछे दौड़ने वाले हैं; इसके विपरीत भक्त प्रतिज्ञा करता है कि बन्धु निन्दा करें, स्त्री-पुत्र छोड़ दें, राजा दण्ड दें, तब भी वह देवी की ही सेवा करेगा और लोभ, क्रोध, काम या भय से कुल को कभी नहीं छोड़ेगा। जो कुल के बाहर जीता है वह लुहार की धौंकनी की तरह केवल साँस लेता है; जो कौल पूजा नहीं करता वह कौए की तरह जीता है; पर कुल को जानने वाला श्वपच भी ब्राह्मण से बढ़कर है। शिव कहते हैं कि छहों दर्शन उनके ही अंग हैं और कुल उनका साझा शरीर, कि कुल का प्रमाण प्रत्यक्ष फल पर टिका है, और उन्होंने स्वयं इसकी निन्दा की — और दूसरे रूप में पशु-शास्त्र कहे — केवल

अयोग्यों से इसे बचाने के लिए। अध्याय उन नकली कौलों का सामना करके समाप्त होता है जो बिना परम्परा और अनुशासन के इस मार्ग को मद्य, मांस और स्त्री तक घटा देते हैं: यदि पीने मात्र से सिद्धि मिलती तो हर शराबी सिद्ध होता। कुलमार्ग तलवार की धार पर चलने से भी कठिन है; विधि के बाहर लिया मद्य स्मृतियों का महापातक है, उसके स्पर्श तक के प्रायश्चित्त बताये गये हैं, बिना विधि की हिंसा आठ प्रकार के घातकों और तीन प्रकार के वध में गिनी गयी है, जबकि विधि से गाय या ब्राह्मण का वध भी दोष नहीं लगाता। प्रमाण में वैदिक प्रतीक उद्धृत हैं, और शिव घोषणा करते हैं कि सब कुलशास्त्र उन्हीं के वचन हैं — प्रमाण और तर्क से परे।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि सर्वजीवदयानिधे ।

कुलधर्मस्त्वया देव सूचितो न प्रकाशितः ॥ १॥

१

हे कुलेश! हे सब जीवों पर दया के निधान! मैं सुनना चाहती हूँ — हे देव! कुलधर्म की ओर आपने संकेत तो किया, पर उसे प्रकट नहीं किया।

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · सर्वजीवदयानिधे — हे सब जीवों पर दया के निधान! · कुलधर्मस्त्वया देव — कुलधर्म आपने, हे देव · सूचितो न प्रकाशितः — सूचित किया, प्रकाशित नहीं किया

तस्य धर्मस्य माहात्म्यं सर्वधर्मोत्तमस्य च ।

ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यं तन्मतं वद मे प्रभो ।

२

वद मे परमेशान यदि तेऽस्ति कृपा मयि ॥ २॥

हे प्रभो! सब धर्मों में उत्तम उस धर्म का माहात्म्य, ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य और उसका मत मुझे बताइये — हे परमेशान! यदि मुझ पर आपकी कृपा है तो कहिये।

पदपाठ तस्य धर्मस्य माहात्म्यं — उस धर्म का माहात्म्य · सर्वधर्मोत्तमस्य च — और जो सब धर्मों में उत्तम है · ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यं — ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य · तन्मतं वद मे प्रभो — उसका मत मुझे बताइए, हे प्रभो · वद मे परमेशान — मुझे बताइए, हे परमेशान · यदि तेऽस्ति कृपा मयि — यदि आपकी कृपा मुझ पर कृपा है

— श्रीईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

३

तस्य श्रवणमात्रेण योगिनीनां प्रियो भवेत् ॥ ३॥

हे देवि! सुनो, जो तुम मुझसे पूछ रही हो वह मैं कहता हूँ। उसके सुनने मात्र से मनुष्य योगिनियों का प्रिय हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · योगिनीनां प्रियो भवेत् — योगिनियों का प्रिय हो जाता है

ब्रह्मविष्णुगुहादीनां न मया कथितं पुरा ।

कथयामि तव स्नेहात् शृणुष्वैकाग्रमानसा ॥ ४॥

४

ब्रह्मा, विष्णु, गुह (कार्तिकेय) आदि को भी मैंने यह पहले नहीं कहा; तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ — एकाग्र मन से सुनो।

पदपाठ ब्रह्मविष्णुगुहादीनां — ब्रह्मा, विष्णु, गुह (कार्तिकेय) आदि को · न मया कथितं पुरा — मैंने पहले कभी नहीं कहा · कथयामि तव स्नेहात् — तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ · शृणुष्वैकाग्रमानसा — एकाग्र मन से सुनो

पारम्पर्यक्रमायातं पञ्चवक्त्रेषु संस्थितम् ।

अकथ्यं परमार्थेन तथापि कथयामि ते ॥ ५॥

५

परम्परा के क्रम से आया हुआ, पाँच मुखों में स्थित, परमार्थतः अकथनीय — फिर भी मैं तुम्हें कहता हूँ।

पदपाठ पारम्पर्यक्रमायातं — परम्परा-क्रम से आया हुआ · पञ्चवक्त्रेषु संस्थितम् — पाँच मुखों में स्थित · अकथ्यं परमार्थेन — परमार्थ से अकथ्य · तथापि कथयामि ते — फिर भी तुम्हें कहता हूँ

त्वयापि गोपितव्यं हि न देयं यस्य कस्यचित् ।

देयं भक्ताय शिष्याय अन्यथा पतनं भवेत् ॥ ६॥

६

तुम्हें भी इसे गुप्त रखना है; यह किसी को भी नहीं देना चाहिए। भक्त शिष्य को देना चाहिए — अन्यथा पतन होता है।

पदपाठ त्वयापि गोपितव्यं हि — तुम्हें भी इसे गुप्त रखना है · न देयं यस्य कस्यचित् — जिस-किसी को नहीं देना · देयं भक्ताय शिष्याय — भक्त शिष्य को देना · अन्यथा पतनं भवेत् — अन्यथा पतन होता है

सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा वेदेभ्यो वैष्णवं परम् ।

वैष्णवादुत्तमं शैवं शैवादक्षिणमुत्तमम् ॥ ७ ॥

७

सबसे उत्तम वेद हैं; वेदों से वैष्णव मत श्रेष्ठ है; वैष्णव से शैव उत्तम; शैव से दक्षिण मार्ग उत्तम;

पदपाठ सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा — सबसे उत्तम वेद हैं · वेदेभ्यो वैष्णवं परम् — वेदों से परे

वैष्णव · वैष्णवादुत्तमं शैवं — वैष्णव से उत्तम शैव · शैवादक्षिणमुत्तमम् — शैव से उत्तम दक्षिण

दक्षिणादुत्तमं वामं वामात् सिद्धान्तमुत्तमम् ।

सिद्धान्तादुत्तमं कौलं कौलात् परतरं न हि ॥ ८ ॥

८

दक्षिण से वाम उत्तम; वाम से सिद्धान्त; सिद्धान्त से कौल उत्तम — और कौल से बढ़कर कुछ नहीं है।

पदपाठ दक्षिणादुत्तमं वामं — दक्षिण से उत्तम वाम · वामात् सिद्धान्तमुत्तमम् — वाम से उत्तम

सिद्धान्त · सिद्धान्तादुत्तमं कौलं — सिद्धान्त से उत्तम कौल · कौलात् परतरं न हि — और कौल से परे कुछ नहीं

गुह्याद् गुह्यतरं देवि सारात् सारं परात् परम् ।

साक्षात् शिवप्रदं देवि कर्णाकर्णिगतं कुलम् ॥ ९ ॥

९

हे देवि! गुह्य से भी गुह्यतर, सार का भी सार, पर से भी पर, साक्षात् शिवपद देने वाला — कान से कान तक चला आया यह कुल है।

पदपाठ गुह्याद् गुह्यतरं देवि — गुह्य से भी गुह्यतर, हे देवि · सारात् सारं परात् परम् — सार का सार, पर से

भी पर · साक्षात् शिवप्रदं देवि — साक्षात् शिवपद देने वाला, हे देवि · कर्णाकर्णिगतं कुलम् — कान से कान तक आया कुल

मथित्वा ज्ञानदण्डेन वेदागममहार्णवम् ।

सारज्ञेन मया देवि कुलधर्मः समुद्धृतः ॥ १० ॥

१०

हे देवि! ज्ञान-रूपी मथानी से वेद और आगम के महासागर को मथकर, सार को जानने वाले मैंने कुलधर्म को निकाला है।

पदपाठ मथित्वा ज्ञानदण्डेन — ज्ञान-दण्ड से मथकर · वेदागममहार्णवम् — वेद-आगम के महासागर को · सारज्ञेन मया देवि — सारज्ञ मैंने, हे देवि · कुलधर्मः समुद्धृतः — कुलधर्म को निकाला

एकतः सकला धर्मा यज्ञतीर्थव्रतादयः ।

एकतः कुलधर्मश्च तत्र कौलोऽधिकः प्रिये ॥ ११ ॥

११

एक ओर यज्ञ, तीर्थ, व्रत आदि सब धर्म; दूसरी ओर अकेला कुलधर्म — हे प्रिये! उसमें कौल ही भारी है।

पदपाठ एकतः सकला धर्मा — एक ओर सब धर्म · यज्ञतीर्थव्रतादयः — यज्ञ, तीर्थ, व्रत आदि · एकतः कुलधर्मश्च — और एक ओर कुलधर्म · तत्र कौलोऽधिकः प्रिये — उसमें कौल ही अधिक है, हे प्रिये

प्रविशन्ति यथा नद्यः समुद्रम् ऋजुवक्रगाः ।

तथैव समयाः सर्वे प्रविष्टाः कुलमेव हि ॥ १२ ॥

१२

जैसे सीधी या टेढ़ी बहने वाली सब नदियाँ समुद्र में प्रवेश करती हैं, वैसे ही सब समय (मत) कुल में ही समाये हुए हैं।

पदपाठ प्रविशन्ति यथा नद्यः — जैसे नदियाँ प्रवेश करती हैं · समुद्रम् ऋजुवक्रगाः — समुद्र में, सीधी या टेढ़ी चलती · तथैव समयाः सर्वे — वैसे ही सब समय (मत) · प्रविष्टाः कुलमेव हि — कुल में ही प्रविष्ट हैं

यथा हस्तिपदे लीनं सर्वप्राणिपदं भवेत् ।

दर्शनानि च सर्वाणि कुल एव तथा प्रिये ॥ १३ ॥

१३

जैसे हाथी के पदचिह्न में सब प्राणियों के पदचिह्न समा जाते हैं, वैसे ही, हे प्रिये! सब दर्शन कुल में ही समाये हैं।

पदपाठ यथा हस्तिपदे लीनं — जैसे हाथी के पद में लीन · सर्वप्राणिपदं भवेत् — सब प्राणियों का पद होता है · दर्शनानि च सर्वाणि — वैसे सब दर्शन · कुल एव तथा प्रिये — कुल में ही हैं, हे प्रिये

यदा जाम्बूनदानाञ्च सदृशं लौहमस्ति चेत् ।

तदा च कुलधर्मेण समयोऽन्यः समो भवेत् ॥ १४ ॥

१४

यदि कभी लोहा जाम्बूनद स्वर्ण के समान हो सके, तभी कोई दूसरा मत कुलधर्म के समान हो सकता है।

पदपाठ यदा जाम्बूनदानाञ्च — यदि कभी जाम्बूनद सोने के · सदृशं लौहमस्ति चेत् — समान लोहा हो सके · तदा च कुलधर्मेण — तो कुलधर्म के · समयोऽन्यः समो भवेत् — समान कोई और मत हो सकता है

यथामरतरङ्गिण्या न समाः सकलापगाः ।

तथैव समयाः सर्वे कुलधर्मेण नो समाः ॥ १५ ॥

१५

जैसे देवनदी गंगा के समान कोई नदी नहीं, वैसे ही कुलधर्म के समान कोई मत नहीं।

पदपाठ यथामरतरङ्गिण्या — जैसे देवनदी (गंगा) के · न समाः सकलापगाः — समान कोई नदियाँ नहीं · तथैव समयाः सर्वे — वैसे ही सब मत · कुलधर्मेण नो समाः — कुलधर्म के समान नहीं हैं

मेरुसर्षपयोर्यद्वत् सूर्यखद्योतयोर्यथा ।

१६

तथान्यसमयस्यापि कुलस्य महदन्तरम् ॥ १६ ॥

जैसे मेरु और सरसों में, जैसे सूर्य और जुगनू में — वैसा ही महान् अन्तर किसी भी अन्य मत और कुल में है।

पदपाठ मेरुसर्षपयोर्यद्वत् — जैसे मेरु और सरसों में · सूर्यखद्योतयोर्यथा — जैसे सूर्य और जुगनू में · तथान्यसमयस्यापि — वैसे ही किसी अन्य मत और · कुलस्य महदन्तरम् — कुल में महान् अन्तर है

अस्ति चेत्त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् ।

१७

कुलेन समधर्मस्तु तथापि न कदाचन ॥ १७ ॥

यदि तुम्हारे समान कोई स्त्री हो, यदि मेरे समान कोई पुरुष हो — तब भी कुल के समान धर्म कभी नहीं हो सकता।

पदपाठ अस्ति चेत्त्वत्समा नारी — यदि तुम्हारे समान कोई स्त्री हो · मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत् — यदि मेरे समान कोई पुरुष हो · कुलेन समधर्मस्तु — तो भी कुल के समान धर्म · तथापि न कदाचन — कभी नहीं हो सकता

कुलधर्मं हि नो वेत्ति योऽन्यधर्मेण दुर्मतिः ।

१८

बद्धः संसारपाशेन सोऽन्त्यजानां प्रियो भवेत् ॥ १८ ॥

जो दुर्बुद्धि कुलधर्म को नहीं जानता और दूसरे धर्म पर चलता है, वह संसार-पाश से बँधकर अन्त्यजों का प्रिय हो जाता है।

पदपाठ कुलधर्मं हि नो वेत्ति — जो कुलधर्म को नहीं जानता · योऽन्यधर्मेण दुर्मतिः — जो दुर्बुद्धि अन्य धर्म से (चलता है) · बद्धः संसारपाशेन — संसार-पाश से बँधा · सोऽन्त्यजानां प्रियो भवेत् — वह अन्त्यजों का प्रिय हो जाता है

यो वा कुलाधिकं धर्ममज्ञानाद्बदति प्रिये ।

१९

ब्रह्महत्याधिकं पापं स प्राप्नोति न संशयः ॥ १९ ॥

और जो अज्ञान से, हे प्रिये! किसी धर्म को कुल से बढ़कर कहता है, वह निःसन्देह ब्रह्महत्या से भी बड़ा पाप पाता है।

पदपाठ यो वा कुलाधिकं धर्मम् — अथवा जो कुल से अधिक धर्म · अज्ञानाद्बदति प्रिये — अज्ञान से कहता है, हे प्रिये · ब्रह्महत्याधिकं पापं — ब्रह्महत्या से अधिक पाप · स प्राप्नोति न संशयः — वह पाता है, सन्देह नहीं

कुलधर्मप्रवहणं समारुह्य नरोत्तमः ।

२०

स्वर्गाद्वीपान्तविभवं मोक्षरत्नं समश्नुते ॥ २० ॥

कुलधर्म-रूपी नौका पर चढ़कर श्रेष्ठ मनुष्य स्वर्ग और द्वीपान्त तक का वैभव पाता है, और मोक्ष-रूपी रत्न को प्राप्त करता है।

पदपाठ कुलधर्मप्रवहणं — कुलधर्म-रूपी नौका पर · समारुह्य नरोत्तमः — चढ़कर नरोत्तम · स्वर्गाद्वीपान्तविभवं — स्वर्ग से द्वीपान्त तक का वैभव · मोक्षरत्नं समश्नुते — और मोक्ष-रत्न पाता है

दर्शनेषु च सर्वेषु चिराभ्यासेन मानवाः ।

२१

मोक्षं लभन्ते कौले तु सद्य एव न संशयः ॥ २१ ॥

अन्य सब दर्शनों में मनुष्य दीर्घ अभ्यास से मोक्ष पाते हैं; पर कौल में तत्काल ही — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ दर्शनेषु च सर्वेषु — और सब दर्शनों में · चिराभ्यासेन मानवाः — मनुष्य दीर्घ अभ्यास से · मोक्षं लभन्ते कौले तु — मोक्ष पाते हैं — पर कौल में · सद्य एव न संशयः — तुरन्त ही, सन्देह नहीं

बहुनात्र किमुक्तेन शृणु मत्प्राणवल्लभे ।

न कौलसमधर्मोऽस्ति त्वां शपे कुलनायिके ॥ २२ ॥

२२

अधिक कहने से क्या? हे मेरे प्राणों की प्रिय! सुनो: कौल के समान कोई धर्म नहीं है — हे कुलनायिके! मैं तुम्हारी शपथ खाकर कहता हूँ।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या? · शृणु मत्प्राणवल्लभे — सुनो, हे मेरी प्राणवल्लभे · न कौलसमधर्मोऽस्ति — कौल के समान कोई धर्म नहीं · त्वां शपे कुलनायिके — तुम्हारी शपथ, हे कुलनायिके

योगी चेन्नैव भोगी स्याद्भोगी चेन्नैव योगवित् ।

भोगयोगात्मकं कौलं तस्मात् सर्वाधिकं प्रिये ॥ २३ ॥

२३

जो योगी है वह भोगी नहीं होता, जो भोगी है वह योग नहीं जानता; पर कौल भोग और योग दोनों स्वरूप वाला है — इसलिए, हे प्रिये! वह सबसे बढ़कर है।

पदपाठ योगी चेन्नैव भोगी स्यात् — यदि योगी है तो भोगी नहीं · भोगी चेन्नैव योगवित् — यदि भोगी है तो योग नहीं जानता · भोगयोगात्मकं कौलं — कौल भोग-योग दोनों स्वरूप है · तस्मात् सर्वाधिकं प्रिये — इसलिए सबसे अधिक है, हे प्रिये

भोगो योगायते साक्षात् पातकं सुकृतायते ।

मोक्षायते च संसारः कुलधर्मे कुलेश्वरि ॥ २४ ॥

२४

हे कुलेश्वरि! कुलधर्म में भोग साक्षात् योग बन जाता है, पाप पुण्य बन जाता है, और संसार मोक्ष बन जाता है।

पदपाठ भोगो योगायते साक्षात् — भोग साक्षात् योग बन जाता है · पातकं सुकृतायते — पाप सुकृत बन जाता है · मोक्षायते च संसारः — और संसार मोक्ष बन जाता है · कुलधर्मे कुलेश्वरि — कुलधर्म में, हे कुलेश्वरि

ब्रह्मेन्द्राच्युतरुद्रादिदेवतामुनिपुङ्गवाः ।

कुलधर्मपरा देवि मानुषेषु च का कथा ॥ २५॥

२५

ब्रह्मा, इन्द्र, अच्युत, रुद्र आदि देवता और श्रेष्ठ मुनि, हे देवि! कुलधर्म में तत्पर हैं —
फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या?

पदपाठ ब्रह्मेन्द्राच्युतरुद्रादि — ब्रह्मा, इन्द्र, अच्युत, रुद्र आदि · देवतामुनिपुङ्गवाः — देवता और श्रेष्ठ
मुनि · कुलधर्मपरा देवि — कुलधर्म-परायण हैं, हे देवि · मानुषेषु च का कथा — मनुष्यों की तो क्या बात?

विहाय सर्वधर्माश्च नानागुरुमतानि च ।

कुलमेव विजानीयाद्यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः ॥ २६॥

२६

सब धर्मों और नाना गुरुओं के मतों को छोड़कर, यदि अपनी सिद्धि चाहता हो तो
केवल कुल को ही जाने।

पदपाठ विहाय सर्वधर्माश्च — सब धर्मों को छोड़कर · नानागुरुमतानि च — और नाना गुरुओं के मतों
को · कुलमेव विजानीयात् — कुल को ही जाने · यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः — यदि अपनी सिद्धि चाहे

पूर्वजन्मकृताभ्यासात् कुलज्ञानं प्रकाशते ।

स्वप्नोत्थितप्रत्ययवदुपदेशादिकं विना ॥ २७॥

२७

पूर्वजन्म में किये अभ्यास से, बिना उपदेश आदि के, कुलज्ञान स्वयं प्रकाशित हो
जाता है — जैसे स्वप्न से जागे हुए को स्मृति हो आती है।

पदपाठ पूर्वजन्मकृताभ्यासात् — पूर्वजन्म के अभ्यास से · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता
है · स्वप्नोत्थितप्रत्ययवत् — स्वप्न से जागे की स्मृति की तरह · उपदेशादिकं विना — उपदेश आदि के बिना

जन्मान्तरसहस्रेषु या बुद्धिर्विहिता नृणाम् ।

२८

तामेव लभते जन्तुरुपदेशो निरर्थकः ॥ २८ ॥

हजारों पूर्वजन्मों में मनुष्य में जो बुद्धि बनी है, प्राणी उसी को पाता है; (उसके बिना) उपदेश निरर्थक है।

पदपाठ जन्मान्तरसहस्रेषु — हजारों अन्य जन्मों में · या बुद्धिर्विहिता नृणाम् — मनुष्यों में जो बुद्धि विहित है · तामेव लभते जन्तुः — जीव वही पाता है · उपदेशो निरर्थकः — (अन्यथा) उपदेश निरर्थक है

शैववैष्णवदौर्गाकगाणपत्येन्दुसम्भवैः ।

२९

मन्त्रैर्विशुद्धचित्तस्य कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ २९ ॥

शैव, वैष्णव, दुर्गा, सूर्य, गणपति और चन्द्र से उत्पन्न मन्त्रों से जिसका चित्त शुद्ध हो गया है, उसमें कुलज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ शैववैष्णवदौर्गाक — शैव, वैष्णव, दुर्गा, सूर्य · गाणपत्येन्दुसम्भवैः — गणपति और चन्द्र-सम्बन्धी · मन्त्रैर्विशुद्धचित्तस्य — मन्त्रों से विशुद्ध चित्त वाले को · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

सर्वधर्माश्च देवेशि पुनरावर्तकाः स्मृताः ।

३०

कुलधर्मस्थिता ये च ते सर्वेऽप्यनिवर्तकाः ॥ ३० ॥

हे देवेशि! सब धर्म पुनरावर्तक (फिर जन्म देने वाले) कहे गये हैं; पर जो कुलधर्म में स्थित हैं, वे सब अनिवर्तक हैं — लौटते नहीं।

पदपाठ सर्वधर्माश्च देवेशि — और सब धर्म, हे देवेशि · पुनरावर्तकाः स्मृताः — पुनरावर्तक (फिर लौटाने वाले) कहे गए हैं · कुलधर्मस्थिता ये च — और जो कुलधर्म में स्थित हैं · ते सर्वेऽप्यनिवर्तकाः — वे सब अनिवर्तक (फिर न लौटने वाले) हैं

पुराकृततपोदानयज्ञतीर्थजपव्रतैः ।

क्षीणांहसां नृणां देवि कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ ३१ ॥

३१

हे देवि! पहले किये तप, दान, यज्ञ, तीर्थ, जप और व्रतों से जिनके पाप क्षीण हो गये हैं, उन मनुष्यों में कुलज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ पुराकृततपोदान — पूर्वकृत तप, दान · यज्ञतीर्थजपव्रतैः — यज्ञ, तीर्थ, जप, व्रतों से · क्षीणांहसां नृणां देवि — जिनके पाप क्षीण हैं, उन मनुष्यों को, हे देवि · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

त्वमहं देवि कल्याणि यस्य तुष्टावुभावपि ।

देवतागुरुभक्त्या च कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ ३२ ॥

३२

हे कल्याणि देवि! जिस पर तुम और मैं दोनों प्रसन्न हों, तथा देवता और गुरु की भक्ति से, उसमें कुलज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ त्वमहं देवि कल्याणि — तुम और मैं, हे कल्याणि देवि · यस्य तुष्टावुभावपि — जिस पर दोनों प्रसन्न हैं · देवतागुरुभक्त्या च — और देवता-गुरु की भक्ति से · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

शुद्धचित्तस्य शान्तस्य कर्मिणो गुरुसेविनः ।

अतिभक्तस्य गुह्यस्य कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ ३३ ॥

३३

जो शुद्धचित्त, शान्त, कर्मपरायण, गुरुसेवी, अत्यन्त भक्त और गुप्त रहने वाला है, उसमें कुलज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ शुद्धचित्तस्य शान्तस्य — शुद्धचित्त, शान्त · कर्मिणो गुरुसेविनः — कर्मशील, गुरुसेवी · अतिभक्तस्य गुह्यस्य — अतिभक्त, गुप्तता रखने वाले को · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

श्रीगुरौ कुलशास्त्रेषु कौलिकेषु कुलाश्रये ।
यस्य भक्तिर्दृढा तस्य कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ ३४ ॥

३४

श्रीगुरु, कुलशास्त्रों, कौलिकों और कुल के आश्रय में जिसकी भक्ति दृढ़ है, उसमें कुलज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ श्रीगुरौ कुलशास्त्रेषु — श्रीगुरु में, कुलशास्त्रों में · कौलिकेषु कुलाश्रये — कौलिकों में, कुल के आश्रय में · यस्य भक्तिर्दृढा तस्य — जिसकी भक्ति दृढ़ है, उसे · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

श्रद्धा विनयहर्षाद्यैः सदाचारदृढव्रतैः ।
गुर्वाज्ञापालकैर्धर्मैः कुलज्ञानमवाप्यते ॥ ३५ ॥

३५

श्रद्धा, विनय, हर्ष आदि से, सदाचार और दृढ़ व्रतों से, गुरु की आज्ञा का पालन करने वाले धर्मों से कुलज्ञान प्राप्त होता है।

पदपाठ श्रद्धा विनयहर्षाद्यैः — श्रद्धा, विनय, हर्ष आदि से · सदाचारदृढव्रतैः — सदाचार और दृढ़ व्रतों से · गुर्वाज्ञापालकैर्धर्मैः — गुरु-आज्ञा पालने वाले धर्मों से · कुलज्ञानमवाप्यते — कुलज्ञान प्राप्त होता है

अनर्हे कुलविज्ञानं न तिष्ठति कदाचन ।
तस्मात् परीक्ष्य वक्तव्यं कुलज्ञानं मयोदितम् ॥ ३६ ॥

३६

अयोग्य में कुलविज्ञान कभी नहीं ठहरता; इसलिए मेरा कहा हुआ कुलज्ञान परीक्षा करके ही कहना चाहिए।

पदपाठ अनर्हे कुलविज्ञानं — अनधिकारी में कुलज्ञान · न तिष्ठति कदाचन — कभी नहीं ठहरता · तस्मात् परीक्ष्य वक्तव्यं — इसलिए परीक्षा करके कहना चाहिए · कुलज्ञानं मयोदितम् — मेरे द्वारा कहा गया कुलज्ञान

न ब्रूयात् कुलधर्मं तमयोग्ये कुलशासनम् ।

३७

आज्ञाभङ्गञ्च यः कुर्याद्विवताशापमाप्नुयात् ॥ ३७ ॥

उस कुलधर्म, कुल के शासन को अयोग्य से न कहे; जो इस आज्ञा को भंग करता है वह देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ न ब्रूयात् कुलधर्मं तम् — उस कुलधर्म को न कहे · अयोग्ये कुलशासनम् — अयोग्य को कुल-शासन · आज्ञाभङ्गञ्च यः कुर्यात् — और जो आज्ञा-भंग करे · देवताशापमाप्नुयात् — वह देवताओं का शाप पाता है

आराध्य समयाचारं कुलज्ञानं वदेद्यदि ।

३८

स गुरुश्चापि शिष्यश्च योगिनीनां भवेत् पशुः ॥ ३८ ॥

जो समयाचार का आराधन करते हुए कुलज्ञान कहता है, वह गुरु और वह शिष्य दोनों योगिनियों के पशु (भक्ष्य) हो जाते हैं।

पदपाठ आराध्य समयाचारं — समयाचार (वैदिक आचार) की आराधना कर · कुलज्ञानं वदेद्यदि — यदि कुलज्ञान कहे · स गुरुश्चापि शिष्यश्च — तो वह गुरु और शिष्य भी · योगिनीनां भवेत् पशुः — योगिनियों के पशु (शिकार) बन जाते हैं

बोधयित्वा गुरुः शिष्यं कुलज्ञानं प्रकाशयेत् ।

३९

लभेते तावुभौ साक्षाद्योगिनीवीरमेलनम् ॥ ३९ ॥

शिष्य को बोध कराकर गुरु कुलज्ञान प्रकट करे; तब वे दोनों साक्षात् योगिनी-वीर-मेलन को प्राप्त करते हैं।

पदपाठ बोधयित्वा गुरुः शिष्यं — शिष्य को बोध देकर गुरु · कुलज्ञानं प्रकाशयेत् — कुलज्ञान प्रकाशित करे · लभेते तावुभौ साक्षात् — वे दोनों साक्षात् पाते हैं · योगिनीवीरमेलनम् — योगिनी-वीर-मेलन

अनायासेन संसारसागरं यस्तितीर्षति ।

४०

कुलधर्ममिमं ज्ञात्वा मुच्यते नात्र संशयः ॥ ४० ॥

जो बिना कष्ट के संसार-सागर को पार करना चाहता है, वह इस कुलधर्म को जानकर मुक्त हो जाता है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ अनायासेन संसार — बिना प्रयास संसार- · सागरं यस्तितीर्षति — सागर को जो पार करना चाहे · कुलधर्ममिमं ज्ञात्वा — इस कुलधर्म को जानकर · मुच्यते नात्र संशयः — मुक्त होता है, इसमें सन्देह नहीं

कुलधर्ममहामार्गगन्ता मुक्तिपुरीं व्रजेत् ।

४१

अचिरान्नात्र सन्देहस्तस्मात् कौलं समाश्रयेत् ॥ ४१ ॥

कुलधर्म के महामार्ग पर चलने वाला शीघ्र ही मुक्तिपुरी पहुँचता है — इसमें सन्देह नहीं; इसलिए कौल का आश्रय ले।

पदपाठ कुलधर्ममहामार्ग — कुलधर्म के महामार्ग पर · गन्ता मुक्तिपुरीं व्रजेत् — चलने वाला मुक्तिपुरी पहुँचता है · अचिरान्नात्र सन्देहः — शीघ्र ही, इसमें सन्देह नहीं · तस्मात् कौलं समाश्रयेत् — इसलिए कौल का आश्रय ले

कुलशास्त्रमनादृत्य पशुशास्त्राणि योऽभ्यसेत् ।

४२

स्वगृहे पायसं त्यक्त्वा भिक्षामटति पार्वति ॥ ४२ ॥

जो कुलशास्त्र का अनादर करके पशु-शास्त्रों का अभ्यास करता है, हे पार्वति! वह अपने घर की खीर छोड़कर भीख माँगता फिरता है।

पदपाठ कुलशास्त्रमनादृत्य — कुलशास्त्र का अनादर कर · पशुशास्त्राणि योऽभ्यसेत् — जो पशु-शास्त्रों का अभ्यास करे · स्वगृहे पायसं त्यक्त्वा — अपने घर की खीर छोड़कर · भिक्षामटति पार्वति — भिक्षा माँगता फिरता है, हे पार्वति

विहाय कुलधर्मं यः परधर्मपरो भवेत् ।

४३

करस्थं रत्नमुत्सृज्य दूरस्थं काचमीहते ॥ ४३ ॥

जो कुलधर्म छोड़कर दूसरे धर्म में लगता है, वह हाथ का रत्न फेंककर दूर पड़े काँच की कामना करता है।

पदपाठ विहाय कुलधर्मं यः — जो कुलधर्म को छोड़कर · परधर्मपरो भवेत् — परधर्म में लगता है · करस्थं रत्नमुत्सृज्य — हाथ का रत्न फेंककर · दूरस्थं काचमीहते — दूर के काँच की इच्छा करता है

संत्यज्य कुलमन्त्राणि पशुमन्त्राणि यो जपेत् ।

४४

स धान्यराशिमुत्सृज्य पांसुराशिं जिघृक्षति ॥ ४४ ॥

जो कुलमन्त्रों को छोड़कर पशु-मन्त्रों का जप करता है, वह धान्य की राशि छोड़कर धूल की राशि लेना चाहता है।

पदपाठ संत्यज्य कुलमन्त्राणि — कुलमन्त्रों को छोड़कर · पशुमन्त्राणि यो जपेत् — जो पशुमन्त्र जपता है · स धान्यराशिमुत्सृज्य — वह धान्य की राशि छोड़कर · पांसुराशिं जिघृक्षति — धूल की राशि लेना चाहता है

कुलान्वयं समुत्सृज्य योऽन्यमन्वयमीक्षते ।

४५

तडागादिव तृष्णार्तो मृगतृष्णां प्रधावति ॥ ४५ ॥

जो कुल की परम्परा छोड़कर दूसरी परम्परा की ओर देखता है, वह प्यास से व्याकुल होकर तालाब छोड़ मृगतृष्णा की ओर दौड़ता है।

पदपाठ कुलान्वयं समुत्सृज्य — कुल-परम्परा को छोड़कर · योऽन्यमन्वयमीक्षते — जो अन्य परम्परा को देखता है · तडागादिव तृष्णार्तो — जैसे प्यासा तालाब से (मुख मोड़) · मृगतृष्णां प्रधावति — मृगतृष्णा की ओर दौड़ता है

यथेन्द्रजालजा मायाः क्षणमेव सुखावहाः ।

४६

श्रीकौलादन्यसमयास्तादृशाः कुलनायिके ॥ ४६ ॥

जैसे इन्द्रजाल से उत्पन्न माया क्षण भर ही सुख देती है, हे कुलनायिके! श्रीकौल से भिन्न अन्य मत भी वैसे ही हैं।

पदपाठ यथेन्द्रजालजा मायाः — जैसे इन्द्रजाल से उत्पन्न माया · क्षणमेव सुखावहाः — क्षण भर ही सुख देती है · श्रीकौलादन्यसमयाः — श्रीकौल से अन्य मत · तादृशाः कुलनायिके — वैसे ही हैं, हे कुलनायिके

कुलधर्ममजानन् यः संसारान्मोक्षमिच्छति ।

४७

पारावारमपारं स पाणिभ्यां तर्तुमिच्छति ॥ ४७ ॥

जो कुलधर्म को जाने बिना संसार से मोक्ष चाहता है, वह अपार समुद्र को दोनों हाथों से तैरकर पार करना चाहता है।

पदपाठ कुलधर्ममजानन् यः — जो कुलधर्म को न जानकर · संसारान्मोक्षमिच्छति — संसार से मोक्ष चाहता है · पारावारमपारं स — वह अपार समुद्र को · पाणिभ्यां तर्तुमिच्छति — दो हाथों से तैरना चाहता है

यो वान्यदर्शनेभ्यश्च भुक्तिं मुक्तिञ्च काङ्क्षति ।

४८

स्वप्नलब्धधनेनैव धनवान् स भवेत्तदा ॥ ४८ ॥

और जो अन्य दर्शनों से भोग और मोक्ष की आशा करता है, वह मानो स्वप्न में मिले धन से धनवान् होना चाहता है।

पदपाठ यो वान्यदर्शनेभ्यश्च — और जो अन्य दर्शनों से · भुक्तिं मुक्तिञ्च काङ्क्षति — भुक्ति और मुक्ति चाहता है · स्वप्नलब्धधनेनैव — स्वप्न में पाए धन से ही · धनवान् स भवेत्तदा — वह तब धनवान् हो जाए

शुक्तौ रजतविभ्रान्तिर्यथा जायेत पार्वति ।

तथान्यसमयेभ्यश्च भुक्तिर्मुक्तिः प्रकाशते ॥ ४९ ॥

४९

हे पार्वति! जैसे सीप में चाँदी का भ्रम होता है, वैसे ही अन्य मतों से भोग और मोक्ष केवल प्रतीत होते हैं।

पदपाठ शुक्तौ रजतविभ्रान्तिः — सीप में चाँदी का भ्रम · यथा जायेत पार्वति — जैसे होता है, हे पार्वति · तथान्यसमयेभ्यश्च — वैसे ही अन्य मतों से · भुक्तिर्मुक्तिः प्रकाशते — भुक्ति-मुक्ति (केवल) प्रतीत होती है

सर्वकर्मविहीनोऽपि वर्णाश्रमविवर्जितः ।

कुलनिष्ठः कुलेशानि भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् ॥ ५० ॥

५०

हे कुलेशानि! सब कर्मों से रहित, वर्ण और आश्रम से बाहर भी जो कुलनिष्ठ है, वह भोग और मोक्ष दोनों का पात्र है।

पदपाठ सर्वकर्मविहीनोऽपि — सब कर्मों से रहित भी · वर्णाश्रमविवर्जितः — वर्ण-आश्रम से बाहर · कुलनिष्ठः कुलेशानि — कुलनिष्ठ हो तो, हे कुलेशानि · भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् — वह भुक्ति-मुक्ति का पात्र है

कुलज्ञानविहीनोऽपि कुलभक्त्याश्रयो भवेत् ।

सोऽपि सद्गतिमाप्नोति किमुतास्य परायणः ॥ ५१ ॥

५१

कुलज्ञान से रहित भी जो कुल की भक्ति का आश्रय लेता है, वह भी सद्गति पाता है — फिर जो इसमें परायण है उसकी तो बात ही क्या!

पदपाठ कुलज्ञानविहीनोऽपि — कुलज्ञान से रहित भी · कुलभक्त्याश्रयो भवेत् — यदि कुलभक्ति का आश्रय ले · सोऽपि सद्गतिमाप्नोति — वह भी सद्गति पाता है · किमुतास्य परायणः — उसमें परायण की तो बात ही क्या!

कुलधर्मो हतो हन्ति रक्षितो रक्षति प्रिये ।

५२

पूजितः पूजयत्याशु तस्मात्तं न परित्यजेत् ॥ ५२ ॥

कुलधर्म पर आघात किया जाये तो वह आघात करता है, रक्षा की जाये तो रक्षा करता है, हे प्रिये! पूजा जाये तो शीघ्र पूजा देता है — इसलिए उसे कभी न छोड़े।

पदपाठ कुलधर्मो हतो हन्ति — कुलधर्म आघात पाने पर आघात करता है · रक्षितो रक्षति प्रिये — रक्षित होने पर रक्षा करता है, हे प्रिये · पूजितः पूजयत्याशु — पूजित होने पर शीघ्र पूजित करता है · तस्मात्तं न परित्यजेत् — इसलिए उसे कभी न छोड़े

निन्दन्तु बान्धवाः सर्वे त्यजन्तु स्त्रीसुतादयः ।

५३

जना हसन्तु मां दृष्ट्वा राजानो दण्डयन्तु वा ॥ ५३ ॥

"सब बन्धु मेरी निन्दा करें, स्त्री-पुत्र आदि मुझे छोड़ दें, लोग मुझे देखकर हँसें, या राजा मुझे दण्ड दें —

पदपाठ निन्दन्तु बान्धवाः सर्वे — सब बन्धु निन्दा करें · त्यजन्तु स्त्रीसुतादयः — स्त्री-पुत्र आदि छोड़ दें · जना हसन्तु मां दृष्ट्वा — लोग मुझे देखकर हँसें · राजानो दण्डयन्तु वा — या राजा दण्ड दें

सेवे सेवे पुनः सेवे त्वामेव परदेवते ।

५४

त्वद्धर्म नैव मुञ्चामि मनोवाक्कायकर्मभिः ॥ ५४ ॥

हे परदेवते! मैं तुम्हारी ही सेवा करता हूँ, सेवा करता हूँ, फिर-फिर सेवा करता हूँ; मन, वाणी, शरीर और कर्म से तुम्हारा धर्म कभी नहीं छोड़ूँगा।"

पदपाठ सेवे सेवे पुनः सेवे — मैं सेवा करता हूँ, करता हूँ, फिर करता हूँ · त्वामेव परदेवते — तुम्हारी ही, हे परदेवते · त्वद्धर्म नैव मुञ्चामि — तुम्हारा धर्म मैं कभी नहीं छोड़ता · मनोवाक्कायकर्मभिः — मन, वाणी, काया और कर्म से

एवमापद्गतस्यापि यस्य भक्तिः सुनिश्चला ।

स तु सम्पूज्यते देवैरमुत्र स शिवो भवेत् ॥ ५५॥

५५

आपत्ति में पड़े हुए भी जिसकी भक्ति इस प्रकार अविचल है, वह देवताओं द्वारा पूजित होता है और परलोक में शिव हो जाता है।

पदपाठ एवमापद्गतस्यापि — इस प्रकार आपद्ग्रस्त होने पर भी · यस्य भक्तिः सुनिश्चला — जिसकी भक्ति अविचल है · स तु सम्पूज्यते देवैः — वह देवों द्वारा पूजित होता है · अमुत्र स शिवो भवेत् — परलोक में वह शिव हो जाता है

रोगदारिद्र्यदुःखाद्यैः पीडितोऽप्यनिशं शिवे ।

यस्त्वामुपास्ते भक्त्या स नरः सद्गतिमाप्नुयात् ॥ ५६॥

५६

हे शिवे! रोग, दरिद्रता, दुःख आदि से रात-दिन पीड़ित होकर भी जो भक्ति से तुम्हारी उपासना करता है, वह मनुष्य सद्गति पाता है।

पदपाठ रोगदारिद्र्यदुःखाद्यैः — रोग, दरिद्रता, दुःख आदि से · पीडितोऽप्यनिशं शिवे — रात-दिन पीड़ित होकर भी, हे शिवे · यस्त्वामुपास्ते भक्त्या — जो भक्ति से तुम्हारी उपासना करता है · स नरः सद्गतिमाप्नुयात् — वह मनुष्य सद्गति पाता है

जनाः स्तुवन्तु निन्दन्तु लक्ष्मीर्गच्छतु तिष्ठतु ।

मृतिरद्य युगान्ते वा कुलं नैव परित्यजेत् ॥ ५७॥

५७

लोग स्तुति करें या निन्दा, लक्ष्मी जाये या रहे, मृत्यु आज आये या युग के अन्त में — कुल को कभी न छोड़े।

पदपाठ जनाः स्तुवन्तु निन्दन्तु — लोग स्तुति करें या निन्दा · लक्ष्मीर्गच्छतु तिष्ठतु — लक्ष्मी जाए या रहे · मृतिरद्य युगान्ते वा — मृत्यु आज हो या युगान्त में · कुलं नैव परित्यजेत् — कुल को कभी न छोड़े

नापि लोभान्न च क्रोधान्न द्वेषान्न च मत्सरात् ।

न कामान्न भयाद्वापि कुलधर्मं परित्यजेत् ॥ ५८ ॥

५८

न लोभ से, न क्रोध से, न द्वेष से, न मत्सर से, न काम से, न भय से — कुलधर्म को न छोड़े।

पदपाठ नापि लोभान्न च क्रोधात् — न लोभ से, न क्रोध से · न द्वेषान्न च मत्सरात् — न द्वेष से, न मात्सर्य से · न कामान्न भयाद्वापि — न काम से, न भय से भी · कुलधर्मं परित्यजेत् — कुलधर्म को छोड़े

यो जन्तुर्नार्चयेत्त्वान्तु कुलधर्मसमाश्रितः ।

क्लिश्यते जातमात्रेण भूतारिणात्मशत्रुणा ॥ ५९ ॥

५९

जो जीव कुलधर्म का आश्रय लेकर भी तुम्हारी अर्चना नहीं करता, वह जन्म लेते ही प्राणियों के शत्रु — अपने ही आत्मशत्रु — से क्लेश पाता है।

पदपाठ यो जन्तुर्नार्चयेत्त्वान्तु — जो जीव तुम्हारी पूजा नहीं करता · कुलधर्मसमाश्रितः — कुलधर्म का आश्रय लेकर भी · क्लिश्यते जातमात्रेण — वह जन्म से ही क्लेश पाता है · भूतारिणात्मशत्रुणा — प्राणियों के शत्रु, अपने ही आत्म-शत्रु से

पुलाका इव धान्येषु पतङ्गा इव जन्तुषु ।

बुद्बुदा इव तोयेषु ये कौलविमुखा हि ते ॥ ६० ॥

६०

धान्य में पुलाक (खाली भूसी) की तरह, प्राणियों में पतंगे की तरह, जल में बुलबुले की तरह — वैसे ही हैं जो कौल से विमुख हैं।

पदपाठ पुलाका इव धान्येषु — जैसे धान्य में खोखले दाने · पतङ्गा इव जन्तुषु — जैसे प्राणियों में पतंगे · बुद्बुदा इव तोयेषु — जैसे जल में बुलबुले · ये कौलविमुखा हि ते — वैसे ही हैं जो कौल से विमुख हैं

तरवोऽपि हि जीवन्ति जीवन्ति मृगपक्षिणः ।

स जीवति मनो यस्य कुलधर्मे व्यवस्थितम् ॥ ६१ ॥

६१

वृक्ष भी जीते हैं, पशु-पक्षी भी जीते हैं; पर सच में वही जीता है जिसका मन कुलधर्म में स्थित है।

पदपाठ तरवोऽपि हि जीवन्ति — वृक्ष भी जीते हैं · जीवन्ति मृगपक्षिणः — पशु-पक्षी भी जीते हैं · स जीवति मनो यस्य — वही जीता है जिसका मन · कुलधर्मे व्यवस्थितम् — कुलधर्म में स्थित है

कुलधर्मविहीनस्य दिनान्यायान्ति यान्ति च ।

स लोहकारभस्त्रेव श्वसन्नपि न जीवति ॥ ६२ ॥

६२

कुलधर्म से हीन के दिन आते-जाते रहते हैं; वह लुहार की धोंकनी की तरह साँस लेता है, पर जीता नहीं।

पदपाठ कुलधर्मविहीनस्य — कुलधर्म से रहित के · दिनान्यायान्ति यान्ति च — दिन आते हैं और जाते हैं · स लोहकारभस्त्रेव — वह लोहार की धोंकनी की तरह · श्वसन्नपि न जीवति — साँस लेता हुआ भी नहीं जीता

गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा ।

कुलेश्वरि कुलाज्ञस्य तत् पशोरिव जीवितम् ॥ ६३ ॥

६३

चलते या खड़े, जागते या सोते — हे कुलेश्वरि! कुल को न जानने वाले का जीवन पशु के जीवन जैसा है।

पदपाठ गच्छतस्तिष्ठतो वापि — चलते या खड़े रहते · जाग्रतः स्वपतोऽपि वा — जागते या सोते भी · कुलेश्वरि कुलाज्ञस्य — हे कुलेश्वरि! कुल से अनजान का · तत् पशोरिव जीवितम् — वह जीवन पशु के समान है

विद्वानपि च मूर्खोऽसौ धार्मिको वाप्यधार्मिकः ।

६४

व्रतस्थोऽप्यव्रतस्थो वा यः कौलविमुखो जनः ॥ ६४ ॥

जो मनुष्य कौल से विमुख है, वह विद्वान् होकर भी मूर्ख है, धार्मिक होकर भी अधार्मिक, व्रती होकर भी अव्रती।

पदपाठ विद्वानपि च मूर्खोऽसौ — विद्वान् होकर भी वह मूर्ख है · धार्मिको वाप्यधार्मिकः — धार्मिक होकर भी अधार्मिक · व्रतस्थोऽप्यव्रतस्थो वा — व्रती होकर भी अव्रती · यः कौलविमुखो जनः — जो मनुष्य कौल से विमुख है

जातास्त एव जगति जन्तवः साधु जीविनः ।

६५

कुलधर्मपरा देवि शेषाश्च द्वारगर्दभाः ॥ ६५ ॥

हे देवि! जगत् में उन्हीं जीवों का जन्म सार्थक है और वे ही अच्छा जीते हैं जो कुलधर्म में तत्पर हैं; शेष तो द्वार के गधे हैं।

पदपाठ जातास्त एव जगति — जगत् में वे ही सच में जन्मे हैं · जन्तवः साधु जीविनः — वे प्राणी जो सुन्दर जीवन जीते हैं · कुलधर्मपरा देवि — जो कुलधर्म-परायण हैं, हे देवि · शेषाश्च द्वारगर्दभाः — शेष द्वार के गधे हैं

स पुमानुच्यते सद्भिः कुलधर्मपरायणः ।

६६

अपरस्तु परं सत्यमस्थिकूटत्वचावृतः ॥ ६६ ॥

सज्जन उसी को पुरुष कहते हैं जो कुलधर्म में परायण है; दूसरा तो — यह परम सत्य है — चमड़े में लिपटा हड्डियों का ढेर है।

पदपाठ स पुमानुच्यते सद्भिः — उसे सज्जन पुरुष कहते हैं · कुलधर्मपरायणः — जो कुलधर्म-परायण है · अपरस्तु परं सत्यम् — दूसरा तो — यह परम सत्य है · अस्थिकूटत्वचावृतः — चर्म से ढका हड्डियों का ढेर है

चतुर्वेदी कुलाज्ञानी श्वपचादधमः प्रिये ।

६७

श्वपचोऽपि कुलज्ञानी ब्राह्मणादतिरिच्यते ॥ ६७ ॥

हे प्रिये! कुल को न जानने वाला चतुर्वेदी श्वपच से भी नीचा है; और कुल को जानने वाला श्वपच भी ब्राह्मण से बढ़कर है।

पदपाठ चतुर्वेदी कुलाज्ञानी — कुल से अनजान चतुर्वेदी · श्वपचादधमः प्रिये — श्वपच से भी अधम है, हे प्रिये · श्वपचोऽपि कुलज्ञानी — कुलज्ञानी श्वपच भी · ब्राह्मणादतिरिच्यते — ब्राह्मण से बढ़कर है

गुरुकारुण्ययुक्तस्तु दीक्षानिर्धूतपातकः ।

६८

कुलपूजारतो देवि सोऽयं कौलो न चेतः ॥ ६८ ॥

हे देवि! जिस पर गुरु की करुणा है, दीक्षा से जिसके पाप झड़ गये हैं, जो कुलपूजा में रत है — वही कौल है, दूसरा नहीं।

पदपाठ गुरुकारुण्ययुक्तस्तु — गुरु की करुणा से युक्त · दीक्षानिर्धूतपातकः — दीक्षा से जिसके पाप धुल गए · कुलपूजारतो देवि — कुलपूजा में रत, हे देवि · सोऽयं कौलो न चेतः — वही कौल है, दूसरा नहीं

यः कौलिकः कुलज्ञानं न पश्यति न विन्दति ।

६९

न पूजयति धिक् तस्य तत् काकस्येव जीवितम् ॥ ६९ ॥

जो कौलिक कुलज्ञान को न देखता है, न पाता है, न पूजा करता है — उसे धिक्कार है; उसका जीवन कौए के जीवन जैसा है।

पदपाठ यः कौलिकः कुलज्ञानं — जो कौलिक कुलज्ञान को · न पश्यति न विन्दति — न देखता है, न पाता है · न पूजयति धिक् तस्य — न पूजा करता है — उसे धिक्कार · तत् काकस्येव जीवितम् — उसका जीवन कौवे-सा है

ते धन्याः पुण्यकर्माणस्ते सन्तस्ते च योगिनः ।

७०

येषां भाग्यवशाद्देवि कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ ७०॥

वे धन्य हैं, वे पुण्यकर्मा हैं, वे ही सन्त हैं, वे ही योगी हैं — हे देवि! जिनमें भाग्यवश कुलज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ ते धन्याः पुण्यकर्माणः — वे धन्य हैं, पुण्यकर्मा हैं · ते सन्तस्ते च योगिनः — वे सन्त हैं, वे योगी हैं · येषां भाग्यवशाद्देवि — जिनमें भाग्यवश, हे देवि · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

ते वन्द्यास्ते महात्मानः कृतार्थास्ते नरोत्तमाः ।

७१

येषामुत्पद्यते चित्ते कुलज्ञानं मयोदितम् ॥ ७१॥

वे वन्दनीय हैं, वे महात्मा हैं, वे कृतार्थ हैं, वे नरश्रेष्ठ हैं — जिनके चित्त में मेरा कहा हुआ कुलज्ञान उत्पन्न होता है।

पदपाठ ते वन्द्यास्ते महात्मानः — वे वन्दनीय हैं, वे महात्मा हैं · कृतार्थास्ते नरोत्तमाः — वे कृतार्थ हैं, वे नरोत्तम हैं · येषामुत्पद्यते चित्ते — जिनके चित्त में उत्पन्न होता है · कुलज्ञानं मयोदितम् — मेरे द्वारा कहा गया कुलज्ञान

सर्वप्रकाशगमनं सर्वतीर्थावगाहनम् ।

७२

यत् सर्वयज्ञाचरणं कुलधर्मप्रवेशनम् ॥ ७२॥

सब पुण्यस्थानों में जाना, सब तीर्थों में स्नान, सब यज्ञों का अनुष्ठान — यह सब कुलधर्म में प्रवेश करने में समाया है।

पदपाठ सर्वप्रकाशगमनं — सब पुण्यस्थानों में जाना · सर्वतीर्थावगाहनम् — सब तीर्थों में स्नान · यत् सर्वयज्ञाचरणं — जो सब यज्ञों का आचरण · कुलधर्मप्रवेशनम् — (वह सब) कुलधर्म में प्रवेश है

प्रविशन्ति कुलं धर्मं ये वै सुकृतिनो नराः ।

७३

ते पुनर्जननीगर्भं न विशन्ति कदाचन ॥ ७३॥

जो पुण्यवान् मनुष्य कुलधर्म में प्रवेश करते हैं, वे फिर कभी माता के गर्भ में प्रवेश नहीं करते।

पदपाठ प्रविशन्ति कुलं धर्मं — जो कुलधर्म में प्रवेश करते हैं · ये वै सुकृतिनो नराः — वे सुकृती मनुष्य · ते पुनर्जननीगर्भं — वे फिर माता के गर्भ में · न विशन्ति कदाचन — कभी प्रवेश नहीं करते

प्रसङ्गेनापि यः कश्चित् कुलं कुलमितीरयेत् ।

७४

कुलं तत्पावनं देवि भवति त्वदनुग्रहात् ।

कुलज्ञानस्य कुलेशानि नान्यधर्मैः प्रयोजनम् ॥ ७४॥

जो कोई प्रसंगवश भी "कुल, कुल" कह देता है, हे देवि! तुम्हारे अनुग्रह से वह कुल उसे पवित्र करने वाला होता है। हे कुलेशानि! कुलज्ञान वाले को अन्य धर्मों की आवश्यकता नहीं।

पदपाठ प्रसङ्गेनापि यः कश्चित् — प्रसंगवश भी जो कोई · कुलं कुलमितीरयेत् — "कुल, कुल" कहे · कुलं तत्पावनं देवि — वह कुल पावन है, हे देवि · भवति त्वदनुग्रहात् — तुम्हारे अनुग्रह से होता है · कुलज्ञानस्य कुलेशानि — कुलज्ञानी को, हे कुलेशानि · नान्यधर्मैः प्रयोजनम् — अन्य धर्मों का प्रयोजन नहीं

कुलेशि कुलनिष्ठानां कौलिकानां महात्मनाम् ।

७५

ददामि परमं ज्ञानं चान्तकाले न संशयः ॥ ७५॥

हे कुलेशि! कुलनिष्ठ महात्मा कौलिकों को मैं अन्तकाल में परम ज्ञान देता हूँ — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ कुलेशि कुलनिष्ठानां — हे कुलेशि! कुलनिष्ठ · कौलिकानां महात्मनाम् — महात्मा कौलिकों को · ददामि परमं ज्ञानं — मैं परम ज्ञान देता हूँ · चान्तकाले न संशयः — अन्तकाल में, सन्देह नहीं

चिरायासाल्पफलदं काङ्क्षन्ते समयं जनाः ।
सुखेन सर्वफलदं कुलं कोऽपि त्यजत्यहो ॥ ७६॥

७६

लोग दीर्घ परिश्रम से थोड़ा फल देने वाले मत की कामना करते हैं, और सुखपूर्वक सब फल देने वाले कुल को — अहो! कोई छोड़ देता है!

पदपाठ चिरायासाल्पफलदं — दीर्घ श्रम से अल्प फल देने वाले · काङ्क्षन्ते समयं जनाः — मत की लोग इच्छा करते हैं · सुखेन सर्वफलदं — सुख से सब फल देने वाले · कुलं कोऽपि त्यजत्यहो — कुल को कोई छोड़ता है — अहो!

कुलज्ञो हि च सर्वज्ञो वेदशास्त्रोज्झितोऽपि वा ।
वेदशास्त्रागमज्ञोऽपि कुलाज्ञस्त्वज्ञ एव हि ॥ ७७॥

७७

कुल को जानने वाला सर्वज्ञ है, चाहे उसने वेद-शास्त्र छोड़ ही दिये हों; पर वेद, शास्त्र और आगम का ज्ञाता भी यदि कुल को नहीं जानता तो वह अज्ञानी ही है।

पदपाठ कुलज्ञो हि च सर्वज्ञो — कुलज्ञ ही सर्वज्ञ है · वेदशास्त्रोज्झितोऽपि वा — वेद-शास्त्र छोड़े हुए भी · वेदशास्त्रागमज्ञोऽपि — वेद, शास्त्र, आगम का ज्ञाता भी · कुलाज्ञस्त्वज्ञ एव हि — कुल से अनजान हो तो अज्ञ ही है

जानन्ति कुलमाहात्म्यं त्वद्भक्ता एव नापरे ।
चकोरा एव जानन्ति नान्ये चन्द्रगतां रुचिम् ॥ ७८॥

७८

कुल का माहात्म्य केवल तुम्हारे भक्त जानते हैं, दूसरे नहीं — जैसे चन्द्रमा की रुचि (अमृत-स्वाद) केवल चकोर ही जानते हैं, दूसरे नहीं।

पदपाठ जानन्ति कुलमाहात्म्यं — कुल का माहात्म्य जानते हैं · त्वद्भक्ता एव नापरे — तुम्हारे भक्त ही, दूसरे नहीं · चकोरा एव जानन्ति — चकोर ही जानते हैं · नान्ये चन्द्रगतां रुचिम् — चन्द्र की रुचि (माधुर्य), दूसरे नहीं

कुलज्ञा एव तुष्यन्ति श्रुत्वा कुलकथां प्रिये ।
स्वल्पा नद्यो विवर्द्धन्ते ज्योत्स्नया किं समुद्रवत् ॥ ७९ ॥

७९

हे प्रिये! कुल की कथा सुनकर कुल को जानने वाले ही प्रसन्न होते हैं — क्या छोटी नदियाँ चाँदनी से समुद्र की तरह उमड़ती हैं?

पदपाठ कुलज्ञा एव तुष्यन्ति — कुलज्ञ ही तुष्ट होते हैं · श्रुत्वा कुलकथां प्रिये — कुल-कथा सुनकर, हे प्रिये · स्वल्पा नद्यो विवर्द्धन्ते — क्या छोटी नदियाँ बढ़ती हैं · ज्योत्स्नया किं समुद्रवत् — चन्द्रिका से, समुद्र की तरह?

नान्यधर्ममवेक्षन्ते कौलिकाः सारवेदिनः ।
भृङ्गाः पुष्पान्तरं लुब्धा मन्दारामोदसेविनः ॥ ८० ॥

८०

सार को जानने वाले कौलिक दूसरे धर्मों की ओर नहीं देखते — मन्दार की सुगन्ध का सेवन करने वाले भ्रमर क्या दूसरे फूल का लोभ करते हैं?

पदपाठ नान्यधर्ममवेक्षन्ते — अन्य धर्मों को नहीं देखते · कौलिकाः सारवेदिनः — सार जानने वाले कौलिक · भृङ्गाः पुष्पान्तरं लुब्धाः — क्या भौरें दूसरे फूल के लोभी होते हैं · मन्दारामोदसेविनः — मन्दार की सुगन्ध पा लेने के बाद?

मानयन्ते हि सारज्ञाः कुलधर्मं न चेतरे ।
शिवः शिरसि धत्तेऽब्जं सैहिकेयो गिलत्यहो ॥ ८१ ॥

८१

सार को जानने वाले ही कुलधर्म का आदर करते हैं, दूसरे नहीं। शिव चन्द्रमा को सिर पर धारण करते हैं — और राहु उसे निगल जाता है, अहो!

पदपाठ मानयन्ते हि सारज्ञाः — सारज्ञ ही मान देते हैं · कुलधर्मं न चेतरे — कुलधर्म को, दूसरे नहीं · शिवः शिरसि धत्तेऽब्जं — शिव सिर पर चन्द्र धारण करते हैं · सैहिकेयो गिलत्यहो — राहु उसे निगलता है — अहो!

अभिज्ञा एव जानन्ति नाभिज्ञाः कुलदर्शनम् ।

जलमिश्रपयःपानं बकः किं वेत्ति हंसवत् ॥ ८२ ॥

८२

कुलदर्शन को अभिज्ञ ही जानते हैं, अनभिज्ञ नहीं — जल मिले दूध को पीना क्या बगुला हंस की तरह जानता है?

पदपाठ अभिज्ञा एव जानन्ति — अभिज्ञ ही जानते हैं · नाभिज्ञाः कुलदर्शनम् — अनभिज्ञ कुलदर्शन को नहीं जानते · जलमिश्रपयःपानं — जल मिले दूध को पीना · बकः किं वेत्ति हंसवत् — क्या बगुला हंस की तरह जानता है?

शिवशक्तिमयो लोको लोके कौलं प्रतिष्ठितम् ।

तस्मात् सर्वाधिकं कौलं सर्वसाधारणं कथम् ॥ ८३ ॥

८३

यह लोक शिव-शक्तिमय है, और लोक में कौल प्रतिष्ठित है; इसलिए कौल सबसे बढ़कर है — वह सर्वसाधारण कैसे हो सकता है?

पदपाठ शिवशक्तिमयो लोको — लोक शिव-शक्तिमय है · लोके कौलं प्रतिष्ठितम् — लोक में कौल प्रतिष्ठित है · तस्मात् सर्वाधिकं कौलं — इसलिए कौल सबसे अधिक है · सर्वसाधारणं कथम् — सर्वसाधारण कैसे हो सकता है?

षड्दर्शनानि मेऽङ्गानि पादौ कुक्षिः करौ शिरः ।

तेषु भेदन्तु यः कुर्यान्ममाङ्गं छेदयेत्तु सः ॥ ८४ ॥

८४

छहों दर्शन मेरे अंग हैं — पैर, पेट, हाथ, सिर; जो उनमें भेद करता है, वह मेरा ही अंग काटता है।

पदपाठ षड्दर्शनानि मेऽङ्गानि — छह दर्शन मेरे अंग हैं · पादौ कुक्षिः करौ शिरः — पैर, पेट, हाथ, सिर · तेषु भेदन्तु यः कुर्यात् — जो उनमें भेद करे · ममाङ्गं छेदयेत्तु सः — वह मेरा अंग काटता है

एतान्येव कुलस्यापि षडङ्गानि भवन्ति हि ।

तस्माद्वेदात्मकं शास्त्रं विद्धि कौलात्मकं प्रिये ॥ ८५ ॥

८५

ये ही कुल के भी छह अंग हैं; इसलिए, हे प्रिये! वेदात्मक शास्त्र को कौलात्मक ही जानो।

पदपाठ एतान्येव कुलस्यापि — ये ही कुल के भी · षडङ्गानि भवन्ति हि — छह अंग हैं · तस्माद्वेदात्मकं शास्त्रं — इसलिए वेदात्मक शास्त्र को · विद्धि कौलात्मकं प्रिये — कौलात्मक जानो, हे प्रिये

दर्शनिष्वखिलेष्वेव फलदं चैकदैवतम् ।

भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां कुलेऽस्मिन् दैवतं प्रिये ॥ ८६ ॥

८६

सभी दर्शनों में फल देने वाला एक ही देवता है, जो मनुष्यों को भोग और मोक्ष देता है — हे प्रिये! वह देवता इस कुल में है।

पदपाठ दर्शनिष्वखिलेष्वेव — समस्त दर्शनों में · फलदं चैकदैवतम् — फलदाता एक ही देवता है · भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां — मनुष्यों को भुक्ति-मुक्ति देने वाला · कुलेऽस्मिन् दैवतं प्रिये — वह देवता इस कुल में है, हे प्रिये

लोकधर्मविरुद्धञ्च सिद्धयोगीश्वरि प्रिये ।

कुलं प्रमाणतां याति प्रत्यक्षफलदं यतः ॥ ८७ ॥

८७

हे सिद्धयोगीश्वरि! हे प्रिये! लोकधर्म के विरुद्ध होते हुए भी कुल प्रमाण माना जाता है, क्योंकि वह प्रत्यक्ष फल देता है।

पदपाठ लोकधर्मविरुद्धञ्च — लोकधर्म के विरुद्ध होकर भी · सिद्धयोगीश्वरि प्रिये — हे सिद्ध-योगीश्वरि प्रिये · कुलं प्रमाणतां याति — कुल प्रमाणता पाता है · प्रत्यक्षफलदं यतः — क्योंकि प्रत्यक्ष फल देता है

प्रत्यक्षञ्च प्रमाणाय सर्वेषां प्राणिनां प्रिये ।

उपलब्धिबलात्तस्य हताः सर्वे कुतार्किकाः ॥ ८८ ॥

८८

हे प्रिये! सब प्राणियों के लिए प्रत्यक्ष ही प्रमाण है; उसकी उपलब्धि के बल से सब कुतार्किक परास्त हो जाते हैं।

पदपाठ प्रत्यक्षञ्च प्रमाणाय — और प्रत्यक्ष ही प्रमाण है · सर्वेषां प्राणिनां प्रिये — सब प्राणियों के लिए, हे प्रिये · उपलब्धिबलात्तस्य — उसकी उपलब्धि (अनुभव) के बल से · हताः सर्वे कुतार्किकाः — सब कुतार्किक परास्त हैं

परोक्षं को नु जानीते कस्य किं वा भविष्यति ।

यद्वा प्रत्यक्षफलदं तदेवोत्तमदर्शनम् ॥ ८९ ॥

८९

परोक्ष को कौन जानता है — किसका क्या होगा? जो प्रत्यक्ष फल देता है, वही उत्तम दर्शन है।

पदपाठ परोक्षं को नु जानीते — परोक्ष को कौन जानता है? · कस्य किं वा भविष्यति — किसका क्या होगा? · यद्वा प्रत्यक्षफलदं — अथवा जो प्रत्यक्ष फल देता है · तदेवोत्तमदर्शनम् — वही उत्तम दर्शन है

कुलधर्ममिमं ज्ञात्वा मुच्यन्ते सर्वमानवाः ।

इति मत्वा महेशानि मया कौलं विगर्हितम् ॥ ९० ॥

९०

"इस कुलधर्म को जानकर सब मनुष्य मुक्त हो जायेंगे" — यह सोचकर, हे महेशानि! मैंने ही कौल की निन्दा की है।

पदपाठ कुलधर्ममिमं ज्ञात्वा — इस कुलधर्म को जानकर · मुच्यन्ते सर्वमानवाः — सब मनुष्य मुक्त हो जाएँगे · इति मत्वा महेशानि — यह सोचकर, हे महेशानि · मया कौलं विगर्हितम् — मैंने कौल की निन्दा की

त्वत्कारुण्यविहीनानां कुलज्ञानविरोधिनाम् ।

९१

पशूनामनभिज्ञानां कुलधर्मो विगर्हितः ॥ ९१ ॥

जिन पर तुम्हारी करुणा नहीं, जो कुलज्ञान के विरोधी हैं — उन अनभिज्ञ पशुओं के लिए कुलधर्म की निन्दा की गयी है।

पदपाठ त्वत्कारुण्यविहीनानां — तुम्हारी करुणा से रहितों के लिए · कुलज्ञानविरोधिनाम् — कुलज्ञान के विरोधियों के लिए · पशूनामनभिज्ञानां — अनभिज्ञ पशुओं के लिए · कुलधर्मो विगर्हितः — कुलधर्म निन्दित किया गया

यस्य जन्मान्तरे पापकर्मबन्धोऽधिको भवेत् ।

९२

न तस्य गुरुकारुण्यं कुलज्ञानं न जायते ॥ ९२ ॥

जिसके पूर्वजन्म के पापकर्मों का बन्धन अधिक है, उस पर गुरु की करुणा नहीं होती और कुलज्ञान उत्पन्न नहीं होता।

पदपाठ यस्य जन्मान्तरे — जिसका पूर्वजन्म में · पापकर्मबन्धोऽधिको भवेत् — पापकर्म का बन्धन अधिक हो · न तस्य गुरुकारुण्यं — उसे गुरु की करुणा नहीं · कुलज्ञानं न जायते — और कुलज्ञान नहीं होता

यथान्धा नैव पश्यन्ति सूर्यं सर्वप्रकाशकम् ।

९३

तथा कुलं न जानन्ति तव मायाविमोहिताः ॥ ९३ ॥

जैसे अन्धे सबको प्रकाशित करने वाले सूर्य को नहीं देखते, वैसे ही तुम्हारी माया से मोहित लोग कुल को नहीं जानते।

पदपाठ यथान्धा नैव पश्यन्ति — जैसे अन्धे नहीं देखते · सूर्यं सर्वप्रकाशकम् — सबको प्रकाशित करने वाले सूर्य को · तथा कुलं न जानन्ति — वैसे कुल को नहीं जानते · तव मायाविमोहिताः — तुम्हारी माया से विमोहित

शैववैष्णवसौरादिदर्शनान्यपि भक्तितः ।

९४

भजन्ते मानवा नित्यं वृथायासफलानि च ॥ ९४ ॥

मनुष्य शैव, वैष्णव, सौर आदि दर्शनों को भक्तिपूर्वक नित्य भजते हैं, जिनका फल व्यर्थ परिश्रम है।

पदपाठ शैववैष्णवसौरादि — शैव, वैष्णव, सौर आदि · दर्शनान्यपि भक्तितः — दर्शनों को भक्ति से भी · भजन्ते मानवा नित्यं — मनुष्य नित्य भजते हैं · वृथायासफलानि च — जिनका फल व्यर्थ श्रम है

वेदशास्त्रागमैः प्रोक्तं भोगमोक्षैकसाधनम् ।

९५

मूढा निन्दन्ति हा हन्त मत्प्रियं तव दर्शनम् ॥ ९५ ॥

वेद, शास्त्र और आगमों ने जिसे भोग और मोक्ष का एकमात्र साधन कहा है, उस मेरे प्रिय तुम्हारे दर्शन की — हा! हाय! — मूढ़ निन्दा करते हैं।

पदपाठ वेदशास्त्रागमैः प्रोक्तं — वेद, शास्त्र, आगम द्वारा कहा गया · भोगमोक्षैकसाधनम् — भोग-मोक्ष का एकमात्र साधन · मूढा निन्दन्ति हा हन्त — मूढ़ निन्दा करते हैं — हाय-हाय · मत्प्रियं तव दर्शनम् — मुझे प्रिय, तुम्हारे दर्शन की

भ्रामिता हि मया देवि पशवः शास्त्रकोटिषु ।

९६

कुलधर्मं न जानन्ति वृथा ज्ञानाभिमानिनः ॥ ९६ ॥

हे देवि! मैंने ही पशुओं को करोड़ों शास्त्रों में भटकाया है; ज्ञान का व्यर्थ अभिमान करने वाले वे कुलधर्म को नहीं जानते।

पदपाठ भ्रामिता हि मया देवि — मैंने ही भ्रमित किया है, हे देवि · पशवः शास्त्रकोटिषु — पशुओं को करोड़ों शास्त्रों में · कुलधर्मं न जानन्ति — वे कुलधर्म को नहीं जानते · वृथा ज्ञानाभिमानिनः — व्यर्थ ज्ञान का अभिमान करते

पशुशास्त्राणि सर्वाणि मयैव कथितानि हि ।

९७

मूर्त्यन्तरन्तु गत्वैव मोहनाय दुरात्मनाम् ॥ ९७ ॥

पशु-शास्त्र सब मैंने ही कहे हैं — दूसरा रूप धारण करके, दुरात्माओं को मोहित करने के लिए।

पदपाठ पशुशास्त्राणि सर्वाणि — सब पशु-शास्त्र · मयैव कथितानि हि — मैंने ही कहे हैं · मूर्त्यन्तरन्तु गत्वैव — दूसरी मूर्ति धारण कर · मोहनाय दुरात्मनाम् — दुरात्माओं को मोहित करने के लिए

महापापवशानृणां तेषु वाञ्छाभिजायते ।

९८

तेषाञ्च सद्गतिर्नास्ति कल्पकोटिशतैरपि ॥ ९८ ॥

महापाप के वश से मनुष्यों में उन शास्त्रों की इच्छा उत्पन्न होती है; और उनकी सद्गति सैकड़ों करोड़ कल्पों में भी नहीं होती।

पदपाठ महापापवशानृणां — महापाप के वश मनुष्यों को · तेषु वाञ्छाभिजायते — उनमें इच्छा उत्पन्न होती है · तेषाञ्च सद्गतिर्नास्ति — और उनकी सद्गति नहीं होती · कल्पकोटिशतैरपि — सौ करोड़ कल्पों में भी

प्रेर्यमाणोऽपि पापात्मा कुले नैव प्रवर्तते ।

९९

वार्यमाणोऽपि पुण्यात्मा कुलमेवाभिलम्बते ॥ ९९ ॥

प्रेरित किये जाने पर भी पापात्मा कुल में प्रवृत्त नहीं होता; रोके जाने पर भी पुण्यात्मा कुल का ही अवलम्बन करता है।

पदपाठ प्रेर्यमाणोऽपि पापात्मा — प्रेरित किया जाने पर भी पापात्मा · कुले नैव प्रवर्तते — कुल में प्रवृत्त नहीं होता · वार्यमाणोऽपि पुण्यात्मा — रोका जाने पर भी पुण्यात्मा · कुलमेवाभिलम्बते — कुल का ही आश्रय लेता है

कुलधर्मेण देवत्वं देवाः सम्प्रतिपेदिरे ।

१००

मुनियोगीश्वराद्याश्च सुसिद्धिं परमां गताः ॥ १०० ॥

कुलधर्म से ही देवताओं ने देवत्व पाया, और मुनि, योगीश्वर आदि परम सिद्धि को प्राप्त हुए।

पदपाठ कुलधर्मेण देवत्वं — कुलधर्म से देवत्व · देवाः सम्प्रतिपेदिरे — देवों ने पाया · मुनियोगीश्वराद्याश्च — और मुनि, योगीश्वर आदि · सुसिद्धिं परमां गताः — परम सिद्धि को पहुँचे

पशुव्रतादिनिरताः सुलभा दाम्भिका भुवि ।

१०१

ये कौलमेव सेवन्ते ते महान्तोऽति दुर्लभाः ॥ १०१ ॥

पशु-व्रत आदि में रत दम्भी पृथ्वी पर सुलभ हैं; जो केवल कौल का सेवन करते हैं, वे महान् अत्यन्त दुर्लभ हैं।

पदपाठ पशुव्रतादिनिरताः — पशु-व्रत आदि में रत · सुलभा दाम्भिका भुवि — दम्भी पृथ्वी पर सुलभ हैं · ये कौलमेव सेवन्ते — जो कौल की ही सेवा करते हैं · ते महान्तोऽति दुर्लभाः — वे महान् अति दुर्लभ हैं

मानवा बहवः सन्ति मिथ्यातत्त्वार्थवेदिनः ।

१०२

दुर्लभोऽयं महेशानि कुलतत्त्वविशारदः ॥ १०२ ॥

मिथ्या तत्त्व को जानने वाले मनुष्य बहुत हैं; हे महेशानि! कुलतत्त्व में निपुण यह मनुष्य दुर्लभ है।

पदपाठ मानवा बहवः सन्ति — मनुष्य बहुत हैं · मिथ्यातत्त्वार्थवेदिनः — मिथ्या तत्त्व को जानने वाले · दुर्लभोऽयं महेशानि — दुर्लभ है यह, हे महेशानि · कुलतत्त्वविशारदः — कुलतत्त्व में निपुण

यथा रोगातुराः केचिन्मानवाः कुलनायिके ।

१०३

दिव्यौषधं न सेवन्ते महाव्याधिविनाशनम् ॥ १०३ ॥

हे कुलनायिके! जैसे कुछ रोगी मनुष्य महाव्याधि का नाश करने वाली दिव्य औषध का सेवन नहीं करते,

पदपाठ यथा रोगातुराः केचित् — जैसे कुछ रोगग्रस्त · मानवाः कुलनायिके — मनुष्य, हे कुलनायिके · दिव्यौषधं न सेवन्ते — दिव्य औषध नहीं लेते · महाव्याधिविनाशनम् — जो महाव्याधि का नाश करती है

तद्व्याधिवर्द्धनापथ्यं कुर्वन्ति हि कुभेषजम् ।

१०४

तथैव जन्ममरणकृतं सांसारिकीं क्रियाम् ॥ १०४ ॥

बल्कि उस व्याधि को बढ़ाने वाला अपथ्य, कुभेषज ही लेते हैं — वैसे ही जन्म-मरण देने वाली सांसारिक क्रिया

पदपाठ तद्व्याधिवर्द्धनापथ्यं — उस व्याधि को बढ़ाने वाला अपथ्य · कुर्वन्ति हि कुभेषजम् — कुत्सित औषध लेते हैं · तथैव जन्ममरणकृतं — वैसे ही जन्म-मरण कराने वाली · सांसारिकीं क्रियाम् — सांसारिक क्रिया

समाचरन्ति सततं त्वत्कारुण्यविवर्जिताः ।

१०५

न भजन्ते कुलं धर्मं भवबन्धविमोचनम् ॥ १०५ ॥

तुम्हारी करुणा से वंचित लोग निरन्तर करते हैं, और भव-बन्धन से छुड़ाने वाले कुलधर्म को नहीं भजते।

पदपाठ समाचरन्ति सततं — सतत करते रहते हैं · त्वत्कारुण्यविवर्जिताः — तुम्हारी करुणा से वंचित · न भजन्ते कुलं धर्मं — कुलधर्म को नहीं भजते · भवबन्धविमोचनम् — जो भव-बन्धन से छुड़ाता है

यथा चारण्यजातांस्तु मरीचादीन् वणिग्जनान् ।
मोहतो मानवाः प्रीत्या याचन्ते कुलनायिके ॥ १०६ ॥

१०६

हे कुलनायिके! जैसे मनुष्य मोह से जंगल में उगने वाली मिर्च आदि वस्तुएँ
व्यापारियों से बड़े चाव से माँगते हैं,

पदपाठ यथा चारण्यजातांस्तु — जैसे वन में उपजी · मरीचादीन् वणिग्जनान् — मिर्च आदि को वणिकों
से · मोहतो मानवाः प्रीत्या — मनुष्य मोह से, प्रीति से · याचन्ते कुलनायिके — माँगते हैं, हे कुलनायिके

अनर्घ्याणि च रत्नानि न याचन्ते हि केचन ।
तथैव पशुशास्त्राणि कर्मपाशफलानि च ॥ १०७ ॥

१०७

पर अमूल्य रत्न कोई नहीं माँगता — वैसे ही कर्म-पाश का फल देने वाले पशु-
शास्त्रों के विषय में

पदपाठ अनर्घ्याणि च रत्नानि — पर अमूल्य रत्न · न याचन्ते हि केचन — कोई नहीं माँगता · तथैव
पशुशास्त्राणि — वैसे ही पशु-शास्त्र · कर्मपाशफलानि च — जिनका फल कर्म-पाश है

इति पृच्छन्ति मूर्खास्ते तव मायाविमोहिताः ।
कुलधर्मं न पृच्छन्ति भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ १०८ ॥

१०८

तुम्हारी माया से मोहित वे मूर्ख पूछते हैं; भोग और मोक्ष का फल देने वाले कुलधर्म
के विषय में नहीं पूछते।

पदपाठ इति पृच्छन्ति मूर्खास्ते — उन्हें वे मूर्ख पूछते हैं · तव मायाविमोहिताः — तुम्हारी माया से
विमोहित · कुलधर्मं न पृच्छन्ति — कुलधर्म को नहीं पूछते · भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् — जो भुक्ति-मुक्ति
फल देता है

कस्तूरीं कर्दमधिया कपूरं लवणेच्छया ।

१०९

शार्करं शर्कराभ्रान्त्या मणिं काचमनीषया ॥ १०९ ॥

कस्तूरी को कीचड़ समझकर, कपूर को नमक की इच्छा से, मिश्री को कंकड़ के भ्रम से, मणि को काँच मानकर —

पदपाठ कस्तूरीं कर्दमधिया — कस्तूरी को कीचड़ समझकर · कपूरं लवणेच्छया — कपूर को नमक समझकर · शार्करं शर्कराभ्रान्त्या — मिश्री को कंकड़ के भ्रम से · मणिं काचमनीषया — मणि को काँच समझकर

यथादृष्टं न मन्यन्ते करस्थमपि पामराः ।

११०

तथा कौलं न जानन्ति त्वत्प्रसादविवर्जिताः ॥ ११० ॥

जैसे अधम लोग हाथ में रखी वस्तु को भी जैसी है वैसी नहीं मानते, वैसे ही तुम्हारे प्रसाद से वंचित लोग कौल को नहीं जानते।

पदपाठ यथादृष्टं न मन्यन्ते — जो देखते हैं उसे नहीं मानते · करस्थमपि पामराः — हाथ में होने पर भी, वे पामर · तथा कौलं न जानन्ति — वैसे कौल को नहीं जानते · त्वत्प्रसादविवर्जिताः — तुम्हारे प्रसाद से रहित

अहो मोहस्य माहात्म्यं त्वन्मायाजनितस्य च ।

१११

किमज्ञानपि देवेशि मोहयेदमरानपि ॥ १११ ॥

अहो! तुम्हारी माया से उत्पन्न मोह का माहात्म्य! हे देवेशि! अज्ञानियों की तो बात ही क्या, वह देवताओं को भी मोहित कर देता है।

पदपाठ अहो मोहस्य माहात्म्यं — अहो! मोह का माहात्म्य · त्वन्मायाजनितस्य च — और तुम्हारी माया से जन्मे का · किमज्ञानपि देवेशि — अज्ञानियों की क्या बात, हे देवेशि · मोहयेदमरानपि — अमरों को भी मोहित करता है

पेयं मद्यं पलं खाद्यं समालोक्य प्रियामुखम् ।

११२

इत्येवाचरणं जाप्यं परिप्राप्यं परम्पदम् ॥ ११२ ॥

"मद्य पीना, मांस खाना, प्रिया का मुख देखना — यही आचरण है, यही जप है, इसी से परम पद प्राप्त होगा" —

पदपाठ पेयं मद्यं पलं खाद्यं — मद्य पेय है, मांस खाद्य है · समालोक्य प्रियामुखम् — प्रिया का मुख देखते हुए · इत्येवाचरणं जाप्यं — "यही आचरण है, यही जप है" · परिप्राप्यं परम्पदम् — "परम पद प्राप्त करना है"

गुरुकारुण्यसंलभ्यमीदृशं कुलदर्शनम् ।

११३

त्वद्भक्ता एव जानन्ति नेतरे भुक्तिमुक्तिदम् ॥ ११३ ॥

गुरु की करुणा से प्राप्त होने वाला ऐसा कुलदर्शन, जो भोग और मोक्ष देता है, केवल तुम्हारे भक्त जानते हैं — दूसरे नहीं।

पदपाठ गुरुकारुण्यसंलभ्यम् — गुरु की करुणा से प्राप्य · ईदृशं कुलदर्शनम् — ऐसा कुलदर्शन है · त्वद्भक्ता एव जानन्ति — तुम्हारे भक्त ही जानते हैं · नेतरे भुक्तिमुक्तिदम् — दूसरे नहीं — भुक्ति-मुक्ति देने वाला

गुरुपदेशरहिता महान्त इति केचन ।

११४

मोहयन्ति जनान् सर्वान् स्वयं पूर्वविमोहिताः ॥ ११४ ॥

गुरु के उपदेश से रहित कुछ लोग "महान्" बनकर सब लोगों को मोहित करते हैं — जो स्वयं पहले से मोहित हैं।

पदपाठ गुरुपदेशरहिताः — गुरु-उपदेश से रहित · महान्त इति केचन — कुछ (अपने को) महान् (कहने वाले) · मोहयन्ति जनान् सर्वान् — सब लोगों को मोहित करते हैं · स्वयं पूर्वविमोहिताः — स्वयं पहले से मोहित

दुराचारपराः केचिद्वाचयन्ति च पामराः ।

११५

कथं भूतो भवेत् स्वामी सेवकाः स्युस्तथाविधाः ॥ ११५॥

दुराचार में रत कुछ अधम लोग शास्त्र बाँचते हैं; जैसा स्वामी होता है, वैसे ही सेवक भी होते हैं।

पदपाठ दुराचारपराः केचित् — कुछ दुराचार में लगे · वाचयन्ति च पामराः — पामर (ग्रन्थ) बाँचते हैं · कथं भूतो भवेत् स्वामी — जैसा स्वामी हो · सेवकाः स्युस्तथाविधाः — वैसे ही सेवक होते हैं

बहवः कौलिकं धर्म मिथ्याज्ञानविडम्बकाः ।

११६

स्वबुद्ध्या कल्पयन्तीत्थं पारम्पर्यविवर्जिताः ॥ ११६॥

मिथ्या ज्ञान के विडम्बक, परम्परा से रहित बहुत लोग अपनी बुद्धि से इस प्रकार कौलिक धर्म की कल्पना करते हैं:

पदपाठ बहवः कौलिकं धर्म — बहुत लोग कौलिक धर्म को · मिथ्याज्ञानविडम्बकाः — मिथ्या ज्ञान के नकलची · स्वबुद्ध्या कल्पयन्तीत्थं — अपनी बुद्धि से यों कल्पित करते हैं · पारम्पर्यविवर्जिताः — परम्परा से रहित

मद्यपानेन मनुजो यदि सिद्धिं लभेत वै ।

११७

मद्यपानरताः सर्वे सिद्धिं गच्छन्तु पामराः ॥ ११७॥

यदि मद्यपान से मनुष्य सिद्धि पा लेता, तो मद्यपान में रत सब अधम सिद्धि पा जाते।

पदपाठ मद्यपानेन मनुजो — यदि मद्यपान से मनुष्य · यदि सिद्धिं लभेत वै — सिद्धि पा लेता · मद्यपानरताः सर्वे — तो सब मद्यपान में रत · सिद्धिं गच्छन्तु पामराः — पामर सिद्धि पा जाएँ

मांसभक्षणमात्रेण यदि पुण्या गतिर्भवेत् ।
लोके मांसाशिनः सर्वे पुण्यभाजो भवन्ति हि ॥ ११८ ॥

११८

यदि केवल मांस खाने से पुण्य गति मिलती, तो संसार के सब मांसभक्षी पुण्य के भागी हो जाते।

पदपाठ मांसभक्षणमात्रेण — केवल मांस-भक्षण से · यदि पुण्या गतिर्भवेत् — यदि पुण्य गति होती · लोके मांसाशिनः सर्वे — तो लोक में सब मांसाहारी · पुण्यभाजो भवन्ति हि — पुण्य के भागी हो जाएँ

शक्तिसम्भोगमात्रेण यदि मोक्षो भवेत वै ।
सर्वेऽपि जन्तवो लोके मुक्ताः स्युः स्त्रीनिषेवनात् ॥ ११९ ॥

११९

यदि केवल शक्ति-संभोग से मोक्ष होता, तो संसार के सब प्राणी स्त्री-सेवन से ही मुक्त हो जाते।

पदपाठ शक्तिसम्भोगमात्रेण — केवल शक्ति-सम्भोग से · यदि मोक्षो भवेत वै — यदि मोक्ष हो जाता · सर्वेऽपि जन्तवो लोके — तो लोक में सब प्राणी · मुक्ताः स्युः स्त्रीनिषेवनात् — स्त्री-सेवन से मुक्त हो जाएँ

कुलमार्गो महादेवि न मया निन्दितः क्वचित् ।
आचाररहिता येऽत्र निन्दितास्ते न चेतरे ॥ १२० ॥

१२०

हे महादेवि! कुलमार्ग की मैंने कभी निन्दा नहीं की; जो इसमें आचार से रहित हैं, उनकी निन्दा की है — दूसरों की नहीं।

पदपाठ कुलमार्गो महादेवि — कुलमार्ग, हे महादेवि · न मया निन्दितः क्वचित् — मैंने कभी निन्दित नहीं किया · आचाररहिता येऽत्र — जो यहाँ आचार से रहित हैं · निन्दितास्ते न चेतरे — वे निन्दित हैं, दूसरे नहीं

अन्यथा कौलिके धर्मे आचारः कथितो मया ।

१२१

विचरन्त्यन्यथा देवि मूढाः पण्डितमानिनः ॥ १२१ ॥

कौलिक धर्म में आचार मैंने कुछ और कहा है, और हे देवि! अपने को पण्डित मानने वाले मूढ़ कुछ और ही आचरण करते हैं।

पदपाठ अन्यथा कौलिके धर्मे — कौलिक धर्म में आचार · आचारः कथितो मया — मैंने एक प्रकार से कहा · विचरन्त्यन्यथा देवि — और वे दूसरे प्रकार से चलते हैं, हे देवि · मूढाः पण्डितमानिनः — अपने को पण्डित मानने वाले मूढ़

कृपाणधारागमनात् व्याघ्रकण्ठावलम्बनात् ।

१२२

भुजङ्गधारणान्नूनमशक्यं कुलवर्तनम् ॥ १२२ ॥

तलवार की धार पर चलने से, बाघ के गले से लटकने से, साँप को पकड़ने से भी — निश्चय ही कुल का आचरण कठिन है।

पदपाठ कृपाणधारागमनात् — तलवार की धार पर चलने से · व्याघ्रकण्ठावलम्बनात् — बाघ के गले से लटकने से · भुजङ्गधारणान्नूनम् — साँप को धारण करने से भी, निश्चय · अशक्यं कुलवर्तनम् — कुल-मार्ग पर चलना कठिन है

वृथा पानन्तु देवेशि सुरापानं तदुच्यते ।

१२३

तन्महापातकं ज्ञेयं वेदादिषु निरूपितम् ॥ १२३ ॥

हे देवेशि! व्यर्थ (बिना विधि के) पीना ही "सुरापान" कहलाता है; वही महापातक जानना चाहिए, जैसा वेद आदि में बताया गया है।

पदपाठ वृथा पानन्तु देवेशि — व्यर्थ पान तो, हे देवेशि · सुरापानं तदुच्यते — वह "सुरापान" कहलाता है · तन्महापातकं ज्ञेयं — उसे महापातक जानना चाहिए · वेदादिषु निरूपितम् — वेद आदि में निरूपित

अनाग्नेयमनालोक्यमस्पृश्यज्वाप्यपेयकम् ।

१२४

मद्यं मांसं पशूनान्तु कौलिकानां महाफलम् ॥ १२४ ॥

न सूँधने योग्य, न देखने योग्य, न छूने योग्य, न पीने योग्य — पशुओं के लिए मद्य और मांस ऐसे हैं; कौलिकों के लिए वे महाफलदायक हैं।

पदपाठ अनाग्नेयमनालोक्यम् — न सूँधने योग्य, न देखने योग्य · अस्पृश्यज्वाप्यपेयकम् — न छूने योग्य, न पीने योग्य · मद्यं मांसं पशूनान्तु — मद्य और मांस पशुओं के लिए · कौलिकानां महाफलम् — कौलिकों के लिए महाफलदायी

अमेध्यानि द्विजातीनां मद्यान्येकादशैव तु ।

१२५

द्वादशन्तु महामद्यं सर्वेषामुत्तमोत्तमम् ॥ १२५ ॥

द्विजातियों के लिए ग्यारह प्रकार के मद्य अपवित्र हैं; पर बारहवाँ, महामद्य, सबके लिए उत्तमोत्तम है।

पदपाठ अमेध्यानि द्विजातीनां — द्विजातियों के लिए अपवित्र · मद्यान्येकादशैव तु — ग्यारह ही मद्य हैं · द्वादशन्तु महामद्यं — पर बारहवाँ महामद्य · सर्वेषामुत्तमोत्तमम् — सबके लिए उत्तमोत्तम है

सुरा वै मलमन्नानां पाप्मा तु मलमुच्यते ।

१२६

तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिबेत् ॥ १२६ ॥

"सुरा अन्नों का मल है, और पाप को मल कहा जाता है; इसलिए ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य सुरा न पियें।"

पदपाठ सुरा वै मलमन्नानां — सुरा अन्नों का मल है · पाप्मा तु मलमुच्यते — और पाप मल कहलाता है · तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ — इसलिए ब्राह्मण और क्षत्रिय · वैश्यश्च न सुरां पिबेत् — और वैश्य सुरा न पिएँ

सुरादर्शनमात्रेण कुर्यात् सूर्यावलोकनम् ।

१२७

तत्समाघ्राणमात्रेण प्राणायामत्रयं चरेत् ॥ १२७ ॥

सुरा के दर्शन मात्र से सूर्य का अवलोकन करे; उसे सूँघने मात्र से तीन प्राणायाम करे।

पदपाठ सुरादर्शनमात्रेण — सुरा के दर्शन मात्र से · कुर्यात् सूर्यावलोकनम् — सूर्य का अवलोकन करे · तत्समाघ्राणमात्रेण — उसे सूँघने मात्र से · प्राणायामत्रयं चरेत् — तीन प्राणायाम करे

आजानुभ्यां भवेन्मग्नो जले चोपवसेदहः ।

१२८

ऊर्ध्वं नाभेस्त्रिरात्रन्तु मद्यस्य स्पर्शनि विधिः ॥ १२८ ॥

घुटनों तक जल में खड़ा रहे और एक दिन उपवास करे; नाभि से ऊपर स्पर्श हो तो तीन रात — मद्य के स्पर्श की यह विधि है।

पदपाठ आजानुभ्यां भवेन्मग्नो — घुटनों तक डूबा रहे · जले चोपवसेदहः — जल में, और एक दिन उपवास करे · ऊर्ध्वं नाभेस्त्रिरात्रन्तु — नाभि से ऊपर (स्पर्श हो तो) तीन रात्रि · मद्यस्य स्पर्शनि विधिः — मद्य के स्पर्श में यह विधि है

सुरापाने कामकृते ज्वलन्तीं तां विनिक्षिपेत् ।

१२९

मुखे तया विनिर्दग्धे ततः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥ १२९ ॥

कामवश किये सुरापान के लिए जलती हुई सुरा मुख में डाले; उससे जल जाने पर वह शुद्धि पाता है।

पदपाठ सुरापाने कामकृते — कामवश किए सुरापान में · ज्वलन्तीं तां विनिक्षिपेत् — उसे जलती हुई डाले · मुखे तया विनिर्दग्धे — मुख में; उससे जल जाने पर · ततः शुद्धिमवाप्नुयात् — तब शुद्धि पाता है

मद्यस्पर्शादिदोषस्य प्रायश्चित्तविधिः स्मृतः ।

अविधानेन यो हन्यादात्मार्थं प्राणिनः प्रिये ॥ १३० ॥

१३०

मद्य-स्पर्श आदि दोष के प्रायश्चित्त की यह विधि कही गयी है। हे प्रिये! जो बिना विधि के अपने लिए प्राणियों को मारता है —

पदपाठ मद्यस्पर्शादिदोषस्य — मद्य-स्पर्श आदि दोष का · प्रायश्चित्तविधिः स्मृतः — प्रायश्चित्त-विधान कहा गया है · अविधानेन यो हन्यात् — जो बिना विधि के मारे · आत्मार्थं प्राणिनः प्रिये — अपने लिए प्राणियों को, हे प्रिये

निवसेन्नरके घोरे दिनानि पशुरोमभिः ।

स मृतोऽपि दुराचारस्तिर्यग्योनिषु जायते ॥ १३१ ॥

१३१

वह उस पशु के रोमों की संख्या जितने दिन घोर नरक में रहता है, और वह दुराचारी मरने पर तिर्यक् योनियों में जन्म लेता है।

पदपाठ निवसेन्नरके घोरे — वह घोर नरक में रहता है · दिनानि पशुरोमभिः — पशु के रोमों के बराबर दिन · स मृतोऽपि दुराचारः — मरने पर भी वह दुराचारी · तिर्यग्योनिषु जायते — तिर्यक् योनियों में जन्मता है

अनुमन्ता विश्वसिता निहन्ता क्रयविक्रयी ।

संस्कर्ता चोपहर्ता च खादिताऽष्टौ च घातकाः ॥ १३२ ॥

१३२

अनुमति देने वाला, विश्वास दिलाने वाला, मारने वाला, खरीदने और बेचने वाला, संस्कार (पकाने) करने वाला, परोसने वाला और खाने वाला — ये आठ घातक हैं।

पदपाठ अनुमन्ता विश्वसिता — अनुमति देने वाला, विश्वास दिलाने वाला · निहन्ता क्रयविक्रयी — मारने वाला, क्रय-विक्रय करने वाला · संस्कर्ता चोपहर्ता च — संस्कार (पकाने) वाला, परोसने वाला · खादिताऽष्टौ च घातकाः — और खाने वाला — ये आठ घातक हैं

धनैर्विक्रयिको हन्ति खादिता चोपभोगतः ।

१३३

घातको वधबन्धाभ्यां इत्येष त्रिविधो वधः ॥ १३३ ॥

बेचने वाला धन के लिए मारता है, खाने वाला भोग से, घातक वध और बन्धन से — इस प्रकार वध तीन प्रकार का है।

पदपाठ धनैर्विक्रयिको हन्ति — विक्रेता धन के लिए मारता है · खादिता चोपभोगतः — खाने वाला उपभोग से · घातको वधबन्धाभ्यां — घातक वध और बन्धन से · इत्येष त्रिविधो वधः — इस प्रकार वध तीन प्रकार का है

मांससन्दर्शनं कृत्वा सुरादर्शनवच्चरेत् ।

१३४

तस्मादविधिना मांसं मद्यं न सेवते क्वचित् ॥ १३४ ॥

मांस को देखकर सुरा-दर्शन के समान आचरण करे; इसलिए विधि के बिना मांस और मद्य का सेवन कभी न करे।

पदपाठ मांससन्दर्शनं कृत्वा — मांस को देखकर · सुरादर्शनवच्चरेत् — सुरा-दर्शन के समान आचरण करे · तस्मादविधिना मांसं — इसलिए बिना विधि के मांस · मद्यं न सेवते क्वचित् — और मद्य का कभी सेवन नहीं करते

विधिना सेव्यते देवि तरसा त्वं प्रसीदसि ।

१३५

नाशयत्यपरिज्ञानात् सत्यमेव वरानने ॥ १३५ ॥

हे देवि! विधि से सेवन किया जाये तो तुम शीघ्र प्रसन्न होती हो; बिना समझे लिया जाये तो वह नाश करता है — हे वरानने! यह सत्य ही है।

पदपाठ विधिना सेव्यते देवि — विधि से सेवन किया जाए तो, हे देवि · तरसा त्वं प्रसीदसि — तुम शीघ्र प्रसन्न होती हो · नाशयत्यपरिज्ञानात् — बिना ज्ञान के (लिया) वह नष्ट करता है · सत्यमेव वरानने — यह सत्य ही है, हे वरानने

तृणं वाप्यविधानेन छेदयेन्न कदाचन ।

विधिना गां द्विजं वापि हत्वा पापैर्न लिप्यते ॥ १३६॥

१३६

बिना विधि के एक तिनका भी कभी न काटे; विधि से गाय या ब्राह्मण को भी मारकर पाप से लिप्त नहीं होता।

पदपाठ तृणं वाप्यविधानेन — तिनका भी बिना विधि के · छेदयेन्न कदाचन — कभी न काटे · विधिना गां द्विजं वापि — विधि से गाय या ब्राह्मण को भी · हत्वा पापैर्न लिप्यते — मारकर पाप से लिप्त नहीं होता

बहुनात्र किमुक्तेन सारमेकं शृणु प्रिये ।

जीवन्मुक्तिसुखोपायं कुलशास्त्रेषु गोपितम् ॥ १३७॥

१३७

अधिक कहने से क्या? हे प्रिये! एक सार सुनो: जीवन्मुक्ति के सुख का उपाय कुलशास्त्रों में गुप्त रखा गया है।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या? · सारमेकं शृणु प्रिये — एक सार सुनो, हे प्रिये · जीवन्मुक्तिसुखोपायं — जीवन्मुक्ति-सुख का उपाय · कुलशास्त्रेषु गोपितम् — कुलशास्त्रों में गोपित

यन्मुमुक्षोः फलं देवि कनकस्येव सौरभम् ।

कुलज्ञेऽप्यूर्ध्वविख्याते ज्ञानं तत्तदनुत्तमम् ॥ १३८॥

१३८

हे देवि! मुमुक्षु के लिए वह फल सोने में सुगन्ध के समान है; ऊर्ध्व-विख्यात कुलज्ञ में भी वह ज्ञान अनुत्तम है।

पदपाठ यन्मुमुक्षोः फलं देवि — मुमुक्षु का जो फल है, हे देवि · कनकस्येव सौरभम् — वह सोने में सुगन्ध-सा है · कुलज्ञेऽप्यूर्ध्वविख्याते — ऊर्ध्व में विख्यात कुलज्ञ में भी · ज्ञानं तत्तदनुत्तमम् — वह ज्ञान अनुत्तम है

कुलशास्त्राणि सर्वाणि मयैवोक्तानि पार्वति ।
प्रमाणानि न सन्देहो न हन्तव्यानि हेतुभिः ॥ १३९॥

१३९

हे पार्वति! सब कुलशास्त्र मैंने ही कहे हैं; वे निःसन्देह प्रमाण हैं, और तर्कों से उनका खण्डन नहीं किया जा सकता।

पदपाठ कुलशास्त्राणि सर्वाणि — सब कुलशास्त्र · मयैवोक्तानि पार्वति — मैंने ही कहे हैं, हे पार्वति · प्रमाणानि न सन्देहो — वे प्रमाण हैं, सन्देह नहीं · न हन्तव्यानि हेतुभिः — तर्कों से खण्डित नहीं किए जा सकते

देवताभ्यः पितृभ्यश्च मधु वाता ऋतायते ।
स्वादिष्ठया मदिष्ठया क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥ १४०॥

१४०

"देवताओं और पितरों के लिए", "वायु ऋत के लिए मधु बहाती है", "अत्यन्त स्वादिष्ठ, अत्यन्त मदकारी से", "दूध, घी, मधु, जल" —

पदपाठ देवताभ्यः पितृभ्यश्च — "देवताओं और पितरों के लिए" · मधु वाता ऋतायते — "वायु ऋतवान् के लिए मधु बहाती है" · स्वादिष्ठया मदिष्ठया — "स्वादिष्ठ से, मदिष्ठ से" · क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् — "दूध, घी, मधु, जल"

हिरण्यपावाः खादिश्च अबध्नन् पुरुषं पशुम् ।
दीक्षामुपेयादित्याद्याः प्रमाणं श्रुतयः प्रिये ॥ १४१॥

१४१

"हिरण्यपावाः", "खादि-", "उन्होंने पुरुष को पशु बनाकर बाँधा", "दीक्षा ग्रहण करे" इत्यादि — हे प्रिये! ये श्रुतियाँ प्रमाण हैं।

पदपाठ हिरण्यपावाः खादिश्च — "हिरण्यपावा" और "खादि-" · अबध्नन् पुरुषं पशुम् — "उन्होंने पुरुष को पशु रूप में बाँधा" · दीक्षामुपेयादित्याद्याः — "दीक्षा ग्रहण करे" इत्यादि · प्रमाणं श्रुतयः प्रिये — ये श्रुतियाँ प्रमाण हैं, हे प्रिये

इत्येतत् कथितं किञ्चित् कुलमाहात्म्यमम्बिके ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १४२ ॥

१४२

हे अम्बिके! इस प्रकार कुल का माहात्म्य कुछ संक्षेप में कहा गया, हे कुलेशानि! अब और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इत्येतत् कथितं किञ्चित् — इस प्रकार यह कुछ कहा गया · कुलमाहात्म्यमम्बिके — कुल-माहात्म्य, हे अम्बिके · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे कुलमाहात्म्यकथनं नाम द्वितीय उल्लासः ॥२॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सब आगमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
कुलमाहात्म्यकथन नामक द्वितीय उल्लास पूर्ण हुआ ॥२॥

॥ श्रीः ॥

अथ तृतीयोल्लासः

श्रीप्रासादपरामन्त्रकथनम्



पार्वती सब धर्मों में उत्तमोत्तम ऊर्ध्वाम्नाय और उसके मन्त्र के विषय में सुनना चाहती हैं। शिव गोपनीयता के स्तर बताते हैं — वेद, शास्त्र और पुराण प्रकाश्य हैं, शैव-शाक्त आगम रहस्य, कुलशास्त्र रहस्य से भी अति रहस्य, और यह उपदेश उनका भी रहस्य — और कहते हैं कि उनके पाँच मुखों से पाँच आम्नाय निकले: पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर और ऊर्ध्व। चारों मोक्ष के मार्ग हैं और एक को भी जानने वाला मुक्त है, पर ऊर्ध्व उनसे ऊपर है — साक्षात् शिवस्वरूप, नीचे स्थित को ऊपर ले जाने वाला, केवल ऊर्ध्व लोकों द्वारा सेवित, सबसे अधिक फल देने वाला। उपमाओं की शृंखला इसे देवताओं में विष्णु, ज्योतिषों में सूर्य, तीर्थों में काशी, पर्वतों में मेरु, धातुओं में सोना, अंगों में सिर, सुगन्धों में कस्तूरी के स्थान पर रखती है। यह वेद, पुराण, यज्ञ, तप या करोड़ों व्रतों से नहीं, केवल गुरु के मुख से मिलता है, जिसे साधक को खोजना है; जो इसे जानता है वही सद्गुरु, दैवज्ञ, योगी, शिव है — उसकी माता धन्य, पितर मुक्त, और उसकी उपस्थिति मात्र से दस योजन तक समृद्धि और वर्षा होती है। फिर शिव चारों निचले आम्नायों को सृष्टि, स्थिति, संहार और अनुग्रह से तथा मन्त्र, भक्ति, कर्म और ज्ञान के योगों से जोड़ते हैं, उनके संकेत गिनाते हैं (24, 25, 32, 36), और कहते हैं कि ऊर्ध्वाम्नाय में ये नहीं हैं क्योंकि वह कर्म से परे है। उत्तरार्ध उस पर अधिष्ठित प्रासादपरा मन्त्र की ओर मुड़ता है, जो शिव और शक्ति का सम्मिलित परम आकार है। यह शिव से कृमि तक हर प्राणी में श्वास के रूप में चलता है; सारा चराचर इससे गुँथा है और इससे उतना ही अभिन्न है जितनी पंखे से हवा — जैसे बीज में अंकुर, तिल में तेल, अग्नि में उष्णता, दूध में घी, बरगद के बीज में वृक्ष, वैसे ही ब्रह्माण्ड इस मन्त्र में है, और इसके बिना अन्य मन्त्र नमक-रहित भोजन हैं। इसका ज्ञाता श्वपच होकर भी देवता की स्थापना कर सकता है; उसका हर कर्म तप और जप बन जाता है; चौदह भुवन उसकी देह में रहते हैं; देव और असुर उसे प्रणाम करते हैं; चलते, खड़े, जागते, सोते — मन्त्र कभी निष्फल नहीं। संसार का हर द्वन्द्व — शची-इन्द्र, अग्नि-सोम, बिन्दु-नाद, प्रकृति-पुरुष, शब्द-अर्थ, विधि-निषेध — शिव और शक्ति ही है, इसलिए मन्त्र सर्वात्मक है, निर्गुण होकर सगुण, निष्कर्म

होकर सकर्म। एक स्तुति इसे परम ज्ञान, तप, ध्यान, दीक्षा, जप, व्रत, यज्ञ, गति और गुह्य कहती है, और 108, 200, 300, 400 और 500 बार जप के क्रमिक फल बताये गये हैं — पाँच महापापों से मुक्ति, असंख्य जन्मों के पापों से मुक्ति, सब यज्ञों और तीर्थों का पुण्य, द्वार पर आठ सिद्धियाँ, चतुर्विध मुक्ति, और उससे आगे वह फल जिसे शिव अवर्णनीय कहते हैं। अध्याय इन सूत्रों पर समाप्त होता है कि गुरु, शिव, वेद, कौलदर्शन, कुलज्ञान और मोक्ष से बढ़कर कुछ नहीं, और यह सब मन्त्र के सच्चे माहात्म्य के पर्वत के सामने सरसों का दाना है।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि सर्वधर्मोत्तमोत्तमम् ।

ऊर्ध्वाम्नायज्य तन्मन्त्रं माहात्म्यं वद मे प्रभो ॥ १॥

१

"हे कुलेश! सब धर्मों में उत्तमोत्तम — ऊर्ध्वाम्नाय और उसके मन्त्र — का माहात्म्य मैं सुनना चाहती हूँ; हे प्रभो! मुझे बताइये।"

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · सर्वधर्मोत्तमोत्तमम् — सब धर्मों में उत्तमोत्तम · ऊर्ध्वाम्नायज्य तन्मन्त्रं — ऊर्ध्वाम्नाय और उसका मन्त्र · माहात्म्यं वद मे प्रभो — उनका माहात्म्य मुझे बताइए, हे प्रभो

— श्रीईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण देवता सुप्रसीदति ॥ २॥

२

"हे देवि! सुनो, जो तुम मुझसे पूछ रही हो वह मैं कहता हूँ। उसके सुनने मात्र से देवता अत्यन्त प्रसन्न होती हैं।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · देवता सुप्रसीदति — देवता अति प्रसन्न होते हैं

न कदाचिन्मया प्रोक्तमितः पूर्वं कुलेश्वरि ।

कथयामि तव स्नेहादूर्ध्वान्मायं शृणु प्रिये ॥ ३॥

३

हे कुलेश्वरि! इससे पहले मैंने इसे कभी नहीं कहा; तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ — हे प्रिये! ऊर्ध्वान्माय को सुनो।

पदपाठ न कदाचिन्मया प्रोक्तम् — मैंने कभी नहीं कहा · इतः पूर्वं कुलेश्वरि — इससे पहले, हे कुलेश्वरि · कथयामि तव स्नेहात् — तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ · ऊर्ध्वान्मायं शृणु प्रिये — ऊर्ध्वान्माय सुनो, हे प्रिये

वेदशास्त्रपुराणानि प्रकाश्यानि कुलेश्वरि ।

शैवशाक्तागमाः सर्वे रहस्याः परिकीर्तिताः ॥ ४॥

४

हे कुलेश्वरि! वेद, शास्त्र और पुराण प्रकाश्य हैं; सब शैव और शाक्त आगम रहस्य कहे गये हैं।

पदपाठ वेदशास्त्रपुराणानि — वेद, शास्त्र, पुराण · प्रकाश्यानि कुलेश्वरि — प्रकाश्य (सार्वजनिक) हैं, हे कुलेश्वरि · शैवशाक्तागमाः सर्वे — सब शैव-शाक्त आगम · रहस्याः परिकीर्तिताः — रहस्य कहे गए हैं

रहस्यातिरहस्यानि कुलशास्त्राणि पार्वति ।

रहस्यातिरहस्यानां रहस्यमिदमम्बिके ॥ ५॥

५

हे पार्वति! कुलशास्त्र रहस्य से भी अति रहस्य हैं; और उन अति रहस्यों का भी रहस्य यह है, हे अम्बिके!

पदपाठ रहस्यातिरहस्यानि — रहस्य से भी अति रहस्य · कुलशास्त्राणि पार्वति — कुलशास्त्र हैं, हे पार्वति · रहस्यातिरहस्यानां — और अति रहस्यों का भी · रहस्यमिदमम्बिके — यह रहस्य है, हे अम्बिके

ऊर्ध्वाम्नायस्य तत्त्वं हि पूर्णब्रह्मात्मकं परम् ।

सुगोपितं मया यत्नादिदानीन्तु प्रकाश्यते ॥ ६॥

६

ऊर्ध्वाम्नाय का तत्त्व परम है, पूर्णब्रह्मस्वरूप; मैंने इसे यत्नपूर्वक गुप्त रखा था, अब इसे प्रकट करता हूँ।

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायस्य तत्त्वं हि — ऊर्ध्वाम्नाय का तत्त्व · पूर्णब्रह्मात्मकं परम् — पूर्णब्रह्मात्मक, परम है · सुगोपितं मया यत्नात् — मैंने यत्न से सुगोपित रखा · इदानीन्तु प्रकाश्यते — अब प्रकाशित किया जाता है

मम पञ्चमुखेभ्यश्च पञ्चाम्नायाः समुद्रताः ।

पूर्वश्च पश्चिमश्चैव दक्षिणश्चोत्तरस्तथा ।

७

ऊर्ध्वाम्नायश्च पञ्चैते मोक्षमार्गाः प्रकीर्तिताः ॥ ७॥

मेरे पाँच मुखों से पाँच आम्नाय निकले — पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर और ऊर्ध्व। ये पाँचों मोक्ष के मार्ग कहे गये हैं।

पदपाठ मम पञ्चमुखेभ्यश्च — मेरे पाँच मुखों से · पञ्चाम्नायाः समुद्रताः — पाँच आम्नाय निकले · पूर्वश्च पश्चिमश्चैव — पूर्व और पश्चिम · दक्षिणश्चोत्तरस्तथा — दक्षिण और उत्तर · ऊर्ध्वाम्नायश्च पञ्चैते — और ऊर्ध्वाम्नाय — ये पाँच · मोक्षमार्गाः प्रकीर्तिताः — मोक्ष के मार्ग कहे गए हैं

आम्नाया बहवः सन्ति नोर्ध्वाम्नायेन ते समाः ।

सत्यमेतद्वरारोहे नात्र कार्या विचारणा ॥ ८॥

८

आम्नाय बहुत हैं, पर वे ऊर्ध्वाम्नाय के समान नहीं। हे वरारोहे! यह सत्य है; इसमें विचार की आवश्यकता नहीं।

पदपाठ आम्नाया बहवः सन्ति — आम्नाय बहुत हैं · नोर्ध्वाम्नायेन ते समाः — वे ऊर्ध्वाम्नाय के समान नहीं · सत्यमेतद्वरारोहे — यह सत्य है, हे वरारोहे · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं

आम्नाया बहवो गुप्ताश्चतुराम्नायभेदजाः ।

अस्मिंस्तन्त्रे समाख्याताः पूर्वं ते कुलनायिके ॥ ९॥

९

चारों आम्नायों के भेद से उत्पन्न अनेक गुप्त आम्नाय इस तन्त्र में पहले कहे जा चुके हैं, हे कुलनायिके!

पदपाठ आम्नाया बहवो गुप्ताः — बहुत आम्नाय गुप्त हैं · चतुराम्नायभेदजाः — चार आम्नायों के भेद से उत्पन्न · अस्मिंस्तन्त्रे समाख्याताः — इस तन्त्र में कहे गए हैं · पूर्वं ते कुलनायिके — पहले, हे कुलनायिके

चतुराम्नायवेत्तारो बहवः सन्ति कामिनि ।

ऊर्ध्वाम्नायस्य तत्त्वज्ञा विरला वीरवन्दिते ॥ १०॥

१०

हे कामिनि! चारों आम्नायों के ज्ञाता बहुत हैं; हे वीरवन्दिते! ऊर्ध्वाम्नाय के तत्त्व को जानने वाले विरले हैं।

पदपाठ चतुराम्नायवेत्तारो — चार आम्नायों के ज्ञाता · बहवः सन्ति कामिनि — बहुत हैं, हे कामिनि · ऊर्ध्वाम्नायस्य तत्त्वज्ञा — ऊर्ध्वाम्नाय के तत्त्वज्ञ · विरला वीरवन्दिते — विरले हैं, हे वीरवन्दिते

यावन्तः पांसवो भूमेस्तावन्तः समुदीरिताः ।

एकैकाम्नायजा मन्त्रा भुक्तिमुक्तिफलप्रदाः ॥ ११॥

११

पृथ्वी पर जितने धूलकण हैं, उतने ही प्रत्येक आम्नाय से उत्पन्न मन्त्र कहे गये हैं, जो भोग और मोक्ष का फल देते हैं।

पदपाठ यावन्तः पांसवो भूमेः — जितने पृथ्वी के धूलकण · तावन्तः समुदीरिताः — उतने कहे गए हैं · एकैकाम्नायजा मन्त्रा — एक-एक आम्नाय से उत्पन्न मन्त्र · भुक्तिमुक्तिफलप्रदाः — भुक्ति-मुक्ति फल देने वाले

उपमन्त्राश्च तावन्तः सारदाः समुदीरिताः ।

१२

मयैव कथितास्ते तु लोकानुग्रहकाङ्क्षया ॥ १२ ॥

और उतने ही सारदायक उपमन्त्र कहे गये हैं; वे सब मैंने ही लोक पर अनुग्रह की इच्छा से कहे हैं।

पदपाठ उपमन्त्राश्च तावन्तः — और उतने ही उपमन्त्र · सारदाः समुदीरिताः — सार देने वाले कहे गए हैं · मयैव कथितास्ते तु — वे मैंने ही कहे हैं · लोकानुग्रहकाङ्क्षया — लोक पर अनुग्रह की इच्छा से

सर्वेषामपि मन्त्राणां देवतास्तत्फलप्रदाः ।

१३

आवयोरंशसम्भूताः समुद्दिष्टाः शुचिस्मिते ॥ १३ ॥

सब मन्त्रों के फल देने वाले देवता हम दोनों के अंश से उत्पन्न हैं — ऐसा कहा गया है, हे शुचिस्मिते!

पदपाठ सर्वेषामपि मन्त्राणां — सब मन्त्रों के · देवतास्तत्फलप्रदाः — देवता उनका फल देते हैं · आवयोरंशसम्भूताः — हम दोनों के अंश से उत्पन्न · समुद्दिष्टाः शुचिस्मिते — कहे गए हैं, हे शुचिस्मिते

सर्वमन्त्रानहं वेद्मि नान्यो जानाति कश्चन ।

१४

मत्प्रसादेन यः कश्चिद्वेत्ति मानवकोटिषु ॥ १४ ॥

सब मन्त्रों को मैं जानता हूँ; और कोई नहीं जानता। मेरे प्रसाद से करोड़ों मनुष्यों में कोई एक जान पाता है।

पदपाठ सर्वमन्त्रानहं वेद्मि — मैं सब मन्त्रों को जानता हूँ · नान्यो जानाति कश्चन — और कोई नहीं जानता · मत्प्रसादेन यः कश्चित् — मेरी कृपा से जो कोई · वेत्ति मानवकोटिषु — करोड़ों मनुष्यों में जानता है

एकाम्नायज्व यो वेत्ति स मुक्तो नात्र संशयः ।

किं पुनश्चतुराम्नायवेत्ता साक्षाच्छिवो भवेत् ॥ १५॥

१५

जो एक आम्नाय को भी जानता है वह निःसन्देह मुक्त है; फिर चारों आम्नायों का ज्ञाता तो साक्षात् शिव हो जाता है।

पदपाठ एकाम्नायज्व यो वेत्ति — और जो एक आम्नाय जानता है · स मुक्तो नात्र संशयः — वह मुक्त है, सन्देह नहीं · किं पुनश्चतुराम्नायवेत्ता — फिर चार आम्नायों के ज्ञाता की तो बात ही क्या · साक्षाच्छिवो भवेत् — वह साक्षात् शिव हो जाता है

चतुराम्नायविज्ञानादूर्ध्वाम्नायः परः प्रिये ।

तस्मात्तदेव जानीयाद् यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः ॥ १६॥

१६

हे प्रिये! चारों आम्नायों के विज्ञान से ऊर्ध्वाम्नाय श्रेष्ठ है; इसलिए यदि अपनी सिद्धि चाहता हो तो उसी को जाने।

पदपाठ चतुराम्नायविज्ञानात् — चार आम्नायों के ज्ञान से · ऊर्ध्वाम्नायः परः प्रिये — ऊर्ध्वाम्नाय पर (श्रेष्ठ) है, हे प्रिये · तस्मात्तदेव जानीयात् — इसलिए उसे ही जाने · यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः — यदि अपनी सिद्धि चाहे

ऊर्ध्वत्वात् सर्वधर्माणामूर्ध्वाम्नायः प्रशस्यते ।

ऊर्ध्वं नयत्यधःस्थज्व ऊर्ध्वाम्नाय इतीरितः ॥ १७॥

१७

सब धर्मों से ऊपर होने के कारण ऊर्ध्वाम्नाय प्रशंसित है; नीचे स्थित को ऊपर ले जाता है, इसलिए यह ऊर्ध्वाम्नाय कहलाता है।

पदपाठ ऊर्ध्वत्वात् सर्वधर्माणाम् — सब धर्मों से ऊर्ध्व होने से · ऊर्ध्वाम्नायः प्रशस्यते — ऊर्ध्वाम्नाय प्रशंसित है · ऊर्ध्वं नयत्यधःस्थज्व — नीचे स्थित को ऊपर ले जाता है · ऊर्ध्वाम्नाय इतीरितः — इसलिए ऊर्ध्वाम्नाय कहा गया

ऊर्ध्वतत्त्वात् कुलेशानि ध्वस्तसंसारसागरात् ।

ऊर्ध्वलोकैकसेव्यत्वादूर्ध्वाम्नाय इति स्मृतः ॥ १८ ॥

१८

हे कुलेशानि! ऊर्ध्व तत्त्व होने से, संसार-सागर को ध्वस्त करने से, और केवल ऊर्ध्व लोकों द्वारा सेवित होने से यह ऊर्ध्वाम्नाय कहा गया है।

पदपाठ ऊर्ध्वतत्त्वात् कुलेशानि — ऊर्ध्व तत्त्व होने से, हे कुलेशानि · ध्वस्तसंसारसागरात् — संसार-सागर को ध्वस्त करने से · ऊर्ध्वलोकैकसेव्यत्वात् — ऊर्ध्व लोकों द्वारा ही सेवित होने से · ऊर्ध्वाम्नाय इति स्मृतः — ऊर्ध्वाम्नाय कहा गया है

तस्माद्देवेशि जानीहि साक्षान्मोक्षैकसाधनम् ।

सर्वाम्नायाधिकफलमूर्ध्वाम्नायं परात् परम् ॥ १९ ॥

१९

इसलिए, हे देवेशि! साक्षात् मोक्ष के एकमात्र साधन, सब आम्नायों से अधिक फल देने वाले, पर से भी पर ऊर्ध्वाम्नाय को जानो।

पदपाठ तस्माद्देवेशि जानीहि — इसलिए, हे देवेशि, जानो · साक्षान्मोक्षैकसाधनम् — साक्षात् मोक्ष का एकमात्र साधन · सर्वाम्नायाधिकफलम् — सब आम्नायों से अधिक फल देने वाला · ऊर्ध्वाम्नायं परात् परम् — ऊर्ध्वाम्नाय, पर से भी पर

सर्वलोकेषु सर्वेभ्यो ह्यहं पूज्यो यथा प्रिये ।

आम्नायेषु च सर्वेषु ऊर्ध्वाम्नायस्तथा शिवे ॥ २० ॥

२०

हे प्रिये! जैसे सब लोकों में सबसे बड़कर मैं पूज्य हूँ, वैसे ही हे शिवे! सब आम्नायों में ऊर्ध्वाम्नाय है।

पदपाठ सर्वलोकेषु सर्वेभ्यो — सब लोकों में, सबसे ऊपर · ह्यहं पूज्यो यथा प्रिये — जैसे मैं पूज्य हूँ, हे प्रिये · आम्नायेषु च सर्वेषु — वैसे सब आम्नायों में · ऊर्ध्वाम्नायस्तथा शिवे — ऊर्ध्वाम्नाय है, हे शिवे

देवतानां यथा विष्णुज्योतिषां भास्करो यथा ।
तीर्थनान्तु यथा काशी स्वर्नदी सरितां यथा ॥ २१ ॥

२१

जैसे देवताओं में विष्णु, ज्योतियों में सूर्य, तीर्थों में काशी, नदियों में स्वर्गंगा,

पदपाठ देवतानां यथा विष्णुः — जैसे देवताओं में विष्णु · ज्योतिषां भास्करो यथा — जैसे ज्योतियों में सूर्य · तीर्थनान्तु यथा काशी — जैसे तीर्थों में काशी · स्वर्नदी सरितां यथा — जैसे नदियों में देवनादी (गंगा)

पर्वतानां यथा मेरुस्तरूणां चन्दनं यथा ।
अश्वमेधः क्रतूनाञ्च पाषाणानां यथा मणिः ॥ २२ ॥

२२

जैसे पर्वतों में मेरु, वृक्षों में चन्दन, यज्ञों में अश्वमेध, पत्थरों में मणि,

पदपाठ पर्वतानां यथा मेरुः — जैसे पर्वतों में मेरु · तरूणां चन्दनं यथा — जैसे वृक्षों में चन्दन · अश्वमेधः क्रतूनाञ्च — यज्ञों में अश्वमेध · पाषाणानां यथा मणिः — जैसे पाषाणों में मणि

यथा रसानां माधुर्यं धातूनां काञ्चनं यथा ।
चतुष्पदां यथा धेनुर्यथा हंसस्तु पक्षिणाम् ॥ २३ ॥

२३

जैसे रसों में माधुर्य, धातुओं में सोना, चौपायों में गाय, पक्षियों में हंस,

पदपाठ यथा रसानां माधुर्यं — जैसे रसों में माधुर्य · धातूनां काञ्चनं यथा — जैसे धातुओं में स्वर्ण · चतुष्पदां यथा धेनुः — जैसे चौपायों में गौ · यथा हंसस्तु पक्षिणाम् — जैसे पक्षियों में हंस

आश्रमाणां यथा भिक्षुवर्णानां ब्राह्मणो यथा ।
मनुष्याणां यथा राजाऽवयवानां यथा शिरः ॥ २४ ॥

२४

जैसे आश्रमों में भिक्षु, वर्णों में ब्राह्मण, मनुष्यों में राजा, अंगों में सिर,

पदपाठ आश्रमाणां यथा भिक्षुः — जैसे आश्रमों में भिक्षु (संन्यासी) · वर्णानां ब्राह्मणो यथा — जैसे वर्णों में ब्राह्मण · मनुष्याणां यथा राजा — जैसे मनुष्यों में राजा · अवयवानां यथा शिरः — जैसे अंगों में सिर

आमोदानाञ्च कस्तूरी यथा काञ्चीपुरी पुराम् ।

तथैव सर्वधर्माणामूर्ध्वाम्नायोऽधिकः प्रिये ॥ २५॥

२५

जैसे सुगन्धों में कस्तूरी, नगरों में काञ्चीपुरी — वैसे ही, हे प्रिये! सब धर्मों में ऊर्ध्वाम्नाय श्रेष्ठ है।

पदपाठ आमोदानाञ्च कस्तूरी — और सुगन्धों में कस्तूरी · यथा काञ्चीपुरी पुराम् — जैसे नगरों में काञ्चीपुरी · तथैव सर्वधर्माणाम् — वैसे ही सब धर्मों में · ऊर्ध्वाम्नायोऽधिकः प्रिये — ऊर्ध्वाम्नाय अधिक है, हे प्रिये

नानाजन्मार्जितापारपुण्यकर्मफलोदयात् ।

ऊर्ध्वाम्नायं विजानीयान्नान्यथा वीरवन्दिते ॥ २६॥

२६

अनेक जन्मों में अर्जित अपार पुण्यकर्मों के फल के उदय से ही ऊर्ध्वाम्नाय को जाना जाता है — अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते!

पदपाठ नानाजन्मार्जितापार — नाना जन्मों में अर्जित अपार · पुण्यकर्मफलोदयात् — पुण्यकर्म के फल के उदय से · ऊर्ध्वाम्नायं विजानीयात् — ऊर्ध्वाम्नाय को जानता है · नान्यथा वीरवन्दिते — अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते

धन्यो मनुष्यलक्षेषु जानाति कुलदर्शनम् ।

तेषां लक्षेषु यः कश्चिदूर्ध्वाम्नायं प्रवेत्ति च ॥ २७॥

२७

लाखों मनुष्यों में जो कुलदर्शन को जानता है वह धन्य है; और उन लाखों में जो कोई ऊर्ध्वाम्नाय को जानता है (वह और भी)।

पदपाठ धन्यो मनुष्यलक्षेषु — धन्य है जो लाखों मनुष्यों में · जानाति कुलदर्शनम् — कुलदर्शन को जानता है · तेषां लक्षेषु यः कश्चित् — और उन लाखों में जो कोई · ऊर्ध्वाम्नायं प्रवेत्ति च — ऊर्ध्वाम्नाय को सच में जानता है

न वेदैर्नागमैः शास्त्रैर्न पुराणैः सुविस्तरैः ।

२८

न यज्ञैर्न तपोभिर्वा न तीर्थव्रतकोटिभिः ॥ २८ ॥

न वेदों से, न आगमों से, न शास्त्रों से, न विस्तृत पुराणों से; न यज्ञों से, न तपों से, न करोड़ों तीर्थों और व्रतों से;

पदपाठ न वेदैर्नागमैः शास्त्रैः — न वेदों से, न आगमों से, न शास्त्रों से · न पुराणैः सुविस्तरैः — न विस्तृत पुराणों से · न यज्ञैर्न तपोभिर्वा — न यज्ञों से, न तपों से · न तीर्थव्रतकोटिभिः — न करोड़ों तीर्थ-व्रतों से

नान्यैरुपायैर्देवेशि मन्त्रौषधिपुरःसरैः ।

२९

आम्नायो ज्ञायते चोर्ध्वः श्रीमद्गुरुमुखं विना ॥ २९ ॥

न अन्य उपायों से, हे देवेशि! — मन्त्र, औषधि आदि से — ऊर्ध्वाम्नाय जाना जाता है, श्रीगुरु के मुख के बिना।

पदपाठ नान्यैरुपायैर्देवेशि — न अन्य उपायों से, हे देवेशि · मन्त्रौषधिपुरःसरैः — मन्त्र, औषधि आदि से · आम्नायो ज्ञायते चोर्ध्वः — ऊर्ध्व आम्नाय जाना जाता है · श्रीमद्गुरुमुखं विना — श्रीगुरु के मुख के बिना

तमेवान्वेषयेत्तत्र सर्वज्ञं करुणानिधिम् ।

सर्वलक्षणसम्पन्नम् ऊर्ध्वाम्नायार्थकोविदम् ।

३०

तस्माद्देवेशि जानीयादूर्ध्वाम्नायं कुलेश्वरि ॥ ३० ॥

उसी को खोजे — सर्वज्ञ, करुणा के निधान, सब लक्षणों से युक्त, ऊर्ध्वाम्नाय के अर्थ में निपुण गुरु को; हे देवेशि! हे कुलेश्वरि! उसी से ऊर्ध्वाम्नाय को जाने।

पदपाठ तमेवान्वेषयेत्तत्र — वहाँ उसे ही खोजे · सर्वज्ञं करुणानिधिम् — सर्वज्ञ, करुणानिधि · सर्वलक्षणसम्पन्नम् — सब लक्षणों से सम्पन्न · ऊर्ध्वाम्नायार्थकोविदम् — ऊर्ध्वाम्नाय के अर्थ में निपुण · तस्माद्देवेशि जानीयात् — उससे, हे देवेशि, जाने · ऊर्ध्वाम्नायं कुलेश्वरि — ऊर्ध्वाम्नाय को, हे कुलेश्वरि

आम्नायं यो नरो देवि विजानाति च तत्त्वतः ।

लभते काङ्क्षितां सिद्धिं सत्यं सत्यं वरानने ॥ ३१ ॥

३१

हे देवि! जो मनुष्य आम्नाय को तत्त्वतः जानता है, वह मनचाही सिद्धि पाता है — हे वरानने! यह सत्य है, सत्य है।

पदपाठ आम्नायं यो नरो देवि — जो मनुष्य, हे देवि, आम्नाय को · विजानाति च तत्त्वतः — तत्त्वतः जानता है · लभते काङ्क्षितां सिद्धिं — इच्छित सिद्धि पाता है · सत्यं सत्यं वरानने — सत्य, सत्य, हे वरानने

ऊर्ध्वाम्नायं विजानाति यः सम्यक् श्रीगुरोर्मुखात् ।

शास्त्रमार्गेण स नरो जीवन्मुक्तो न संशयः ॥ ३२ ॥

३२

जो श्रीगुरु के मुख से और शास्त्र के मार्ग से ऊर्ध्वाम्नाय को सम्यक् जानता है, वह मनुष्य निःसन्देह जीवन्मुक्त है।

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायं विजानाति — जो ऊर्ध्वाम्नाय को जानता है · यः सम्यक् श्रीगुरोर्मुखात् — सम्यक् रूप से श्रीगुरु के मुख से · शास्त्रमार्गेण स नरो — शास्त्र-मार्ग से, वह मनुष्य · जीवन्मुक्तो न संशयः — जीवन्मुक्त है, सन्देह नहीं

आम्नायमीदृशं देवि विजानाति च तत्त्वतः ।

स वन्द्यः सद्गुरुः सोऽर्च्यः स दैवज्ञः स मान्त्रिकः ।

३३

स सेव्यः स च संस्तुत्यः स द्रष्टव्यः स सात्त्विकः ॥ ३३ ॥

हे देवि! जो ऐसे आम्नाय को तत्त्वतः जानता है — वही वन्दनीय है, वही सद्गुरु है, वही पूज्य है, वही दैवज्ञ है, वही मान्त्रिक है; वही सेव्य है, वही स्तुत्य है, वही दर्शनीय है, वही सात्त्विक है।

पदपाठ आम्नायमीदृशं देवि — ऐसे आम्नाय को, हे देवि · विजानाति च तत्त्वतः — जो तत्त्वतः जानता है · स वन्द्यः सद्गुरुः सोऽर्च्यः — वह वन्द्य है, वह सद्गुरु है, वह पूज्य है · स दैवज्ञः स मान्त्रिकः — वह दैवज्ञ है, वह मान्त्रिक है · स सेव्यः स च संस्तुत्यः — वह सेव्य है, वह स्तुत्य है · स द्रष्टव्यः स सात्त्विकः — वह दर्शनीय है, वह सात्त्विक है

स व्रती स तपस्वी च सोऽनुष्ठाता स पूजकः ।

स वेदागमशास्त्रादिसर्वविद्याविशारदः ॥ ३४ ॥

३४

वही व्रती है, वही तपस्वी, वही अनुष्ठाता, वही पूजक; वही वेद, आगम, शास्त्र आदि सब विद्याओं में निपुण है।

पदपाठ स व्रती स तपस्वी च — वह व्रती है, वह तपस्वी है · सोऽनुष्ठाता स पूजकः — वह अनुष्ठाता है, वह पूजक है · स वेदागमशास्त्रादि — वह वेद, आगम, शास्त्र आदि · सर्वविद्याविशारदः — सब विद्याओं में निपुण है

स आचार्यः स मतिमान् स यतिः स च कौलिकः ।

३५

स यज्वा स च पूतात्मा स जापी स च साधकः ॥ ३५॥

वही आचार्य है, वही बुद्धिमान्, वही यति, वही कौलिक; वही यज्ञकर्ता, वही पवित्रात्मा, वही जापी, वही साधक।

पदपाठ स आचार्यः स मतिमान् — वह आचार्य है, वह मतिमान् है · स यतिः स च कौलिकः — वह यति है, वह कौलिक है · स यज्वा स च पूतात्मा — वह यज्वा है, वह पूतात्मा है · स जापी स च साधकः — वह जापी है, वह साधक है

स योगी स कृतार्थस्तु स वीरः स च उत्तमः ।

३६

स पुण्यात्मा स सर्वज्ञः स मुक्तः स शिवः प्रिये ॥ ३६॥

वही योगी है, वही कृतार्थ, वही वीर, वही उत्तम; वही पुण्यात्मा, वही सर्वज्ञ, वही मुक्त — हे प्रिये! वही शिव है।

पदपाठ स योगी स कृतार्थस्तु — वह योगी है, वह कृतार्थ है · स वीरः स च उत्तमः — वह वीर है, वह उत्तम है · स पुण्यात्मा स सर्वज्ञः — वह पुण्यात्मा है, वह सर्वज्ञ है · स मुक्तः स शिवः प्रिये — वह मुक्त है, वह शिव है, हे प्रिये

तत्कुलं पावनं देवि धन्या तज्जननी स्मृता ।

तत्पिता च कृतार्थः स्यान्मुक्तास्तत्पितरः प्रिये ।

३७

पुण्यास्तद्वंशजाः सर्वे पूतास्तन्मित्रबान्धवाः ॥ ३७ ॥

हे देवि! उसका कुल पवित्र है, उसकी माता धन्य मानी जाती है, उसका पिता कृतार्थ है, हे प्रिये! उसके पितर मुक्त हैं, उसके वंश में जन्मे सब पुण्यवान् हैं, उसके मित्र और बन्धु पवित्र हैं।

पदपाठ तत्कुलं पावनं देवि — उसका कुल पावन है, हे देवि · धन्या तज्जननी स्मृता — उसकी माता धन्य कही गई है · तत्पिता च कृतार्थः स्यात् — उसका पिता कृतार्थ है · मुक्तास्तत्पितरः प्रिये — उसके पितर मुक्त हैं, हे प्रिये · पुण्यास्तद्वंशजाः सर्वे — उसके वंश में जन्मे सब पुण्यवान् हैं · पूतास्तन्मित्रबान्धवाः — उसके मित्र-बान्धव पवित्र हैं

बहुनेह किमुक्तेन चोर्ध्वाम्नायपरस्य च ।

स्मरणं कीर्तनं वापि दर्शनं वन्दनं तथा ।

३८

सम्भाषणञ्च कुरुते राजसूयाधिकं फलम् ॥ ३८ ॥

अधिक कहने से क्या? ऊर्ध्वाम्नाय में तत्पर पुरुष का स्मरण, कीर्तन, दर्शन, वन्दन और उससे सम्भाषण राजसूय यज्ञ से भी अधिक फल देता है।

पदपाठ बहुनेह किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या? · चोर्ध्वाम्नायपरस्य च — ऊर्ध्वाम्नाय-परायण का · स्मरणं कीर्तनं वापि — स्मरण, कीर्तन भी · दर्शनं वन्दनं तथा — दर्शन, वन्दन तथा · सम्भाषणञ्च कुरुते — और सम्भाषण करने से · राजसूयाधिकं फलम् — राजसूय से अधिक फल मिलता है

स यत्र वसते देवि तत्र श्रीर्विजयो भवेत् ।

अनामयं सुभिक्षञ्च सुवृष्टिर्निरुपद्रवम् ॥ ३९ ॥

३९

हे देवि! जहाँ वह रहता है, वहाँ श्री और विजय, आरोग्य और सुभिक्ष, अच्छी वर्षा और उपद्रव का अभाव होता है।

पदपाठ स यत्र वसते देवि — वह जहाँ रहता है, हे देवि · तत्र श्रीर्विजयो भवेत् — वहाँ श्री और विजय होती है · अनामयं सुभिक्षञ्च — आरोग्य और सुभिक्ष · सुवृष्टिर्निरुपद्रवम् — सुवृष्टि और उपद्रव का अभाव

तस्माद् गुरुप्रसादेन ऊर्ध्वाग्नायं नरोत्तमः ।

यो वेत्ति तत्त्वतो देवि स मे प्रियतमो भवेत् ॥ ४० ॥

४०

इसलिए, हे देवि! जो नरश्रेष्ठ गुरु के प्रसाद से ऊर्ध्वाग्नाय को तत्त्वतः जानता है, वह मुझे सबसे प्रिय है।

पदपाठ तस्माद् गुरुप्रसादेन — इसलिए गुरु-प्रसाद से · ऊर्ध्वाग्नायं नरोत्तमः — ऊर्ध्वाग्नाय को, नरोत्तम · यो वेत्ति तत्त्वतो देवि — जो तत्त्वतः जानता है, हे देवि · स मे प्रियतमो भवेत् — वह मुझे प्रियतम है

पूर्वाग्नायः सृष्टिरूपः स्थितिरूपश्च दक्षिणः ।

संहारः पश्चिमो देवि उत्तरोऽनुग्रहो भवेत् ॥ ४१ ॥

४१

पूर्वाग्नाय सृष्टिरूप है, दक्षिण स्थितिरूप; हे देवि! पश्चिम संहार है, और उत्तर अनुग्रह।

पदपाठ पूर्वाग्नायः सृष्टिरूपः — पूर्वाग्नाय सृष्टिरूप है · स्थितिरूपश्च दक्षिणः — और दक्षिण स्थितिरूप · संहारः पश्चिमो देवि — पश्चिम संहार है, हे देवि · उत्तरोऽनुग्रहो भवेत् — उत्तर अनुग्रह है

मन्त्रयोगं विदुः पूर्व भक्तियोगञ्च दक्षिणम् ।

पश्चिमं कर्मयोगञ्च ज्ञानयोगं तथोत्तरम् ॥ ४२ ॥

४२

पूर्व को मन्त्रयोग, दक्षिण को भक्तियोग, पश्चिम को कर्मयोग और उत्तर को ज्ञानयोग जानते हैं।

पदपाठ मन्त्रयोगं विदुः पूर्व — पूर्व को मन्त्रयोग जानते हैं · भक्तियोगञ्च दक्षिणम् — और दक्षिण को भक्तियोग · पश्चिमं कर्मयोगञ्च — पश्चिम को कर्मयोग · ज्ञानयोगं तथोत्तरम् — और उत्तर को ज्ञानयोग

पूर्वाम्नायस्य सङ्केताश्चतुर्विंशतिरीरिताः ।

दक्षिणाम्नायसङ्केताः पञ्चविंशतिरीरिताः ॥ ४३ ॥

४३

पूर्वाम्नाय के संकेत चौबीस कहे गये हैं; दक्षिणाम्नाय के संकेत पच्चीस;

पदपाठ पूर्वाम्नायस्य सङ्केताः — पूर्वाम्नाय के संकेत · चतुर्विंशतिरीरिताः — चौबीस कहे गए हैं · दक्षिणाम्नायसङ्केताः — दक्षिणाम्नाय के संकेत · पञ्चविंशतिरीरिताः — पच्चीस कहे गए हैं

पश्चिमांम्नायसङ्केता द्वात्रिंशत् समुदाहृताः ।

विदुः षट्त्रिंशदाम्नाये सङ्केताः श्रीमदुत्तरे ॥ ४४ ॥

४४

पश्चिमांम्नाय के संकेत बत्तीस कहे गये हैं; और श्रीमान् उत्तराम्नाय में छत्तीस संकेत जानते हैं।

पदपाठ पश्चिमांम्नायसङ्केता — पश्चिमांम्नाय के संकेत · द्वात्रिंशत् समुदाहृताः — बत्तीस कहे गए हैं · विदुः षट्त्रिंशदाम्नाये — छत्तीस जानते हैं आम्नाय में · सङ्केताः श्रीमदुत्तरे — संकेत, श्रीमद् उत्तर में

ऊर्ध्वाम्नायस्य चैतानि न सन्ति कुलनायिके ।

४५

साक्षाच्छिवस्वरूपत्वान्न किञ्चित् कर्म विद्यते ॥ ४५॥

पर हे कुलनायिके! ऊर्ध्वाम्नाय के लिए ये नहीं हैं; साक्षात् शिवस्वरूप होने से उसमें कोई कर्म नहीं है।

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायस्य चैतानि — पर ऊर्ध्वाम्नाय के ये · न सन्ति कुलनायिके — नहीं हैं, हे कुलनायिके · साक्षाच्छिवस्वरूपत्वात् — साक्षात् शिवस्वरूप होने से · न किञ्चित् कर्म विद्यते — कोई कर्म नहीं है

ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यमहं वेद्मि न चापरः ।

४६

मत्स्नेहात्त्वज्य जानासि सत्यमेतद्वरानने ॥ ४६॥

ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य मैं जानता हूँ, और कोई नहीं; तुम भी मेरे स्नेह से जानती हो। हे वरानने! यह सत्य है।

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यम् — ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य · अहं वेद्मि न चापरः — मैं जानता हूँ, और कोई नहीं · मत्स्नेहात्त्वज्य जानासि — और मेरे स्नेह से तुम जानती हो · सत्यमेतद्वरानने — यह सत्य है, हे वरानने

ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यमिति ते कथितं मया ।

४७

समासेन कुलेशानि मन्त्रमाहात्म्यमुच्यते ॥ ४७॥

हे कुलेशानि! इस प्रकार ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य मैंने तुम्हें संक्षेप में कहा; अब मन्त्र का माहात्म्य कहा जाता है।

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यम् — ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य · इति ते कथितं मया — इस प्रकार मैंने तुम्हें कहा · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · मन्त्रमाहात्म्यमुच्यते — (अब) मन्त्र-माहात्म्य कहा जाता है

इतः पूर्वं मया नोक्तं यस्य कस्यापि पार्वति ।

तद्वदामि तव स्नेहाच्छृणु मत्प्राणवल्लभे ॥ ४८ ॥

४८

हे पार्वति! इससे पहले मैंने यह किसी को नहीं कहा; तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ — हे मेरे प्राणों की प्रिय! सुनो।

पदपाठ इतः पूर्वं मया नोक्तं — इससे पहले मैंने नहीं कहा · यस्य कस्यापि पार्वति — जिस-किसी को भी, हे पार्वति · तद्वदामि तव स्नेहात् — वह तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ · शृणु मत्प्राणवल्लभे — सुनो, हे मेरी प्राणवल्लभे

श्रीप्रासादपरामन्त्रमूर्ध्वाम्नायमधिष्ठितम् ।

आवयोः परमाकारं यो वेत्ति स स्वयं शिवः ॥ ४९ ॥

४९

ऊर्ध्वाम्नाय पर अधिष्ठित श्रीप्रासादपरामन्त्र हम दोनों का परम आकार है; जो उसे जानता है वह स्वयं शिव है।

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्रम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · ऊर्ध्वाम्नायमधिष्ठितम् — ऊर्ध्वाम्नाय में अधिष्ठित · आवयोः परमाकारं — हम दोनों का परम आकार · यो वेत्ति स स्वयं शिवः — जो जानता है वह स्वयं शिव है

शिवादिक्रिमिपर्यन्तं प्राणिनां प्राणवर्त्मना ।

निश्वासोच्छ्वासरूपेण मन्त्रोऽयं वर्तते प्रिये ॥ ५० ॥

५०

शिव से लेकर कृमि तक सब प्राणियों में प्राण के मार्ग से, निःश्वास और उच्छ्वास के रूप में, हे प्रिये! यह मन्त्र विद्यमान है।

पदपाठ शिवादिक्रिमिपर्यन्तं — शिव से कीट तक · प्राणिनां प्राणवर्त्मना — प्राणियों में प्राण के मार्ग से · निश्वासोच्छ्वासरूपेण — निःश्वास-उच्छ्वास रूप में · मन्त्रोऽयं वर्तते प्रिये — यह मन्त्र विद्यमान है, हे प्रिये

अनिलेन विना मेघो यथाकाशे न वेष्टते ।

५१

पराप्रसादमन्त्रेण विना लोकस्तथा प्रिये ॥ ५१ ॥

जैसे वायु के बिना बादल आकाश में नहीं चलता, वैसे ही, हे प्रिये! पराप्रसाद मन्त्र के बिना संसार (नहीं चलता)।

पदपाठ अनिलेन विना मेघो — बिना वायु के मेघ · यथाकाशे न वेष्टते — जैसे आकाश में नहीं चलता · पराप्रसादमन्त्रेण — पराप्रसाद मन्त्र के · विना लोकस्तथा प्रिये — बिना लोक वैसे ही (नहीं चलता), हे प्रिये

पराप्रासादमन्त्रेण स्यूतमेतच्चराचरम् ।

५२

अभिन्नं तत्त्वतो देवि तालवृन्ते यथानिलः ॥ ५२ ॥

यह चराचर जगत् पराप्रसाद मन्त्र से गुँथा हुआ है और तत्त्वतः उससे अभिन्न है, हे देवि! — जैसे ताड़ के पंखे से वायु।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रेण — पराप्रसाद मन्त्र से · स्यूतमेतच्चराचरम् — यह चराचर सिला (गुँथा) हुआ है · अभिन्नं तत्त्वतो देवि — तत्त्वतः उससे अभिन्न, हे देवि · तालवृन्ते यथानिलः — जैसे ताड़ के पंखे में वायु

बीजेऽङ्कुरस्तिले तैलमगनावुष्णं रवौ प्रभा ।

५३

चन्द्रे ज्योत्स्नाऽनलः काष्ठे पुष्पे गन्धो जले द्रवः ॥ ५३ ॥

जैसे बीज में अंकुर, तिल में तेल, अग्नि में उष्णता, सूर्य में प्रभा, चन्द्र में चाँदनी, काठ में आग, फूल में गन्ध, जल में द्रवता,

पदपाठ बीजेऽङ्कुरस्तिले तैलम् — बीज में अंकुर, तिल में तेल · अगनावुष्णं रवौ प्रभा — अग्नि में उष्णता, सूर्य में प्रभा · चन्द्रे ज्योत्स्नाऽनलः काष्ठे — चन्द्र में चन्द्रिका, काष्ठ में अग्नि · पुष्पे गन्धो जले द्रवः — पुष्प में गन्ध, जल में द्रवता

शब्दे चार्थः शिवे शक्तिः क्षीरे सर्पिः फले रुचिः ।

५४

शर्करायाञ्च माधुर्यं घनसारे च शीतलम् ॥ ५४ ॥

शब्द में अर्थ, शिव में शक्ति, दूध में घी, फल में स्वाद, शक्कर में मिठास, कपूर में शीतलता,

पदपाठ शब्दे चार्थः शिवे शक्तिः — शब्द में अर्थ, शिव में शक्ति · क्षीरे सर्पिः फले रुचिः — दूध में घी, फल में रुचि (स्वाद) · शर्करायाञ्च माधुर्यं — और शर्करा में माधुर्य · घनसारे च शीतलम् — और कपूर में शीतलता

निग्रहानुग्रहो मन्त्रे प्रतिमायाञ्च देवता ।

दर्पणे प्रतिबिम्बञ्च समीरे चलनं यथा ।

५५

पराप्रसादमन्त्रेऽपि प्रपञ्चोऽयं तथा स्थितः ॥ ५५ ॥

मन्त्र में निग्रह और अनुग्रह, प्रतिमा में देवता, दर्पण में प्रतिबिम्ब, वायु में गति — वैसे ही यह सारा प्रपंच पराप्रसाद मन्त्र में स्थित है।

पदपाठ निग्रहानुग्रहो मन्त्रे — मन्त्र में निग्रह-अनुग्रह · प्रतिमायाञ्च देवता — और प्रतिमा में देवता · दर्पणे प्रतिबिम्बञ्च — और दर्पण में प्रतिबिम्ब · समीरे चलनं यथा — जैसे वायु में चलन · पराप्रसादमन्त्रेऽपि — पराप्रसाद मन्त्र में भी · प्रपञ्चोऽयं तथा स्थितः — यह प्रपंच वैसे ही स्थित है

वटबीजे यथा वृक्षः सूक्ष्मरूपेण तिष्ठति ।

५६

पराप्रासादमन्त्रेऽस्मिन् ब्रह्माण्डोऽपि तथा स्थितः ॥ ५६ ॥

जैसे बरगद के बीज में वृक्ष सूक्ष्म रूप से रहता है, वैसे ही इस पराप्रसाद मन्त्र में ब्रह्माण्ड भी स्थित है।

पदपाठ वटबीजे यथा वृक्षः — जैसे वट-बीज में वृक्ष · सूक्ष्मरूपेण तिष्ठति — सूक्ष्म रूप से स्थित है · पराप्रासादमन्त्रेऽस्मिन् — इस पराप्रासाद मन्त्र में · ब्रह्माण्डोऽपि तथा स्थितः — ब्रह्माण्ड भी वैसे ही स्थित है

सुपक्वेषु पदार्थेषु सुरसेषु कुलेश्वरि ।

५७

लवणेन विना स्वादु यथा भोक्तुर्न जायते ॥ ५७ ॥

हे कुलेश्वरि! जैसे अच्छी तरह पके, रसीले पदार्थों में भी नमक के बिना खाने वाले को स्वाद नहीं आता,

पदपाठ सुपक्वेषु पदार्थेषु — भली प्रकार पके पदार्थों में · सुरसेषु कुलेश्वरि — सुरस, हे कुलेश्वरि · लवणेन विना स्वादु — नमक के बिना स्वाद · यथा भोक्तुर्न जायते — जैसे भोक्ता को नहीं आता

पराप्रासादमन्त्रेण ये वा मन्त्रा न सङ्गताः ।

५८

ते फलं न प्रयच्छन्ति मन्त्रशक्तिविवर्जिताः ॥ ५८ ॥

वैसे ही जो मन्त्र पराप्रासाद मन्त्र से संगत नहीं हैं, वे मन्त्रशक्ति से रहित होकर फल नहीं देते।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रेण — पराप्रासाद मन्त्र से · ये वा मन्त्रा न सङ्गताः — जो मन्त्र संगत (युक्त) नहीं · ते फलं न प्रयच्छन्ति — वे फल नहीं देते · मन्त्रशक्तिविवर्जिताः — मन्त्र-शक्ति से रहित

श्रीप्रासादपरामन्त्रो गोपनीयः प्रयत्नतः ॥ ५९ ॥

५९

श्रीप्रासादपरामन्त्र को यत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए।

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्रो — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · गोपनीयः प्रयत्नतः — यत्नपूर्वक गोपनीय है

विचार्याहं पुराणार्थान् दर्शनाम्नायभेदजान् ।
समग्रान् वेद्म्यहं मन्त्रान् शास्त्राणि विविधानि च ॥ ६० ॥

६०

दर्शनों और आम्नायों के भेद से उत्पन्न पुराणों के अर्थों का विचार करके मैं सब मन्त्रों और विविध शास्त्रों को जानता हूँ।

पदपाठ विचार्याहं पुराणार्थान् — पुराणों के अर्थों का विचार कर · दर्शनाम्नायभेदजान् — दर्शन और आम्नाय के भेद से उत्पन्न · समग्रान् वेद्म्यहं मन्त्रान् — मैं समग्र मन्त्रों को जानता हूँ · शास्त्राणि विविधानि च — और विविध शास्त्रों को

सहस्राक्षादयो देवाः शास्त्रेषु विविधेषु च ।
भ्रमन्ति तेषु मूढास्ते तव मायाविमोहिताः ॥ ६१ ॥

६१

सहस्राक्ष (इन्द्र) आदि देवता भी विविध शास्त्रों में तुम्हारी माया से मोहित होकर भटकते रहते हैं।

पदपाठ सहस्राक्षादयो देवाः — सहस्राक्ष (इन्द्र) आदि देवता · शास्त्रेषु विविधेषु च — और विविध शास्त्रों में · भ्रमन्ति तेषु मूढास्ते — उनमें वे मूढ़ भटकते हैं · तव मायाविमोहिताः — तुम्हारी माया से विमोहित

जायन्ते च म्रियन्ते च संसारक्लेशभागिनः ।
श्रीप्रासादपरामन्त्रं न गायन्तः कुलेश्वरि ।
न लभन्ते हि मोक्षं ते तव मायाविमोहिताः ॥ ६२ ॥

६२

वे जन्मते और मरते हैं, संसार के क्लेश के भागी होकर; हे कुलेश्वरि! श्रीप्रासादपरामन्त्र का गान न करते हुए, तुम्हारी माया से मोहित वे मोक्ष नहीं पाते।

पदपाठ जायन्ते च म्रियन्ते च — जन्मते हैं और मरते हैं · संसारक्लेशभागिनः — संसार-क्लेश के भागी · श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · न गायन्तः कुलेश्वरि — न जपने वाले, हे कुलेश्वरि · न लभन्ते हि मोक्षं ते — वे मोक्ष नहीं पाते · तव मायाविमोहिताः — तुम्हारी माया से विमोहित

मद्रूपे श्रीगुरौ यस्य दृढा भक्तिः प्रजायते ।

६३

श्रीप्रासादपरामन्त्रं स ज्ञात्वा परिमुच्यते ॥ ६३॥

मेरे स्वरूप श्रीगुरु में जिसकी दृढ़ भक्ति उत्पन्न होती है, वह श्रीप्रासादपरामन्त्र को जानकर पूर्णतः मुक्त हो जाता है।

पदपाठ मद्रूपे श्रीगुरौ यस्य — मेरे रूप श्रीगुरु में जिसकी · दृढा भक्तिः प्रजायते — दृढ़ भक्ति उत्पन्न होती है · श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · स ज्ञात्वा परिमुच्यते — वह जानकर पूर्ण मुक्त होता है

पूर्वजन्मसहस्रेषु शैवादिसमयोद्यतान् ।

६४

चतुराम्नायजान् मन्त्रान् गुर्वाज्ञां यो भजिष्यति ॥ ६४॥

जो हजारों पूर्वजन्मों में शैव आदि मतों से उत्पन्न, चारों आम्नायों से जन्मे मन्त्रों और गुरु की आज्ञा का सेवन करता आया है —

पदपाठ पूर्वजन्मसहस्रेषु — हजारों पूर्वजन्मों में · शैवादिसमयोद्यतान् — शैव आदि मतों में उदित · चतुराम्नायजान् मन्त्रान् — चार आम्नायों से उत्पन्न मन्त्रों को · गुर्वाज्ञां यो भजिष्यति — (और) गुरु-आज्ञा को जो भजेगा

स पापकञ्चुकान्मुक्तः शुद्धात्मा गुरुवत्सलः ।

६५

श्रीप्रासादपरामन्त्रं विजानाति न चान्यथा ॥ ६५॥

वही पाप के आवरण से मुक्त, शुद्धात्मा, गुरुभक्त श्रीप्रासादपरामन्त्र को जानता है — अन्यथा नहीं।

पदपाठ स पापकञ्चुकान्मुक्तः — वह पाप-कंचुक से मुक्त · शुद्धात्मा गुरुवत्सलः — शुद्धात्मा, गुरुवत्सल · श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · विजानाति न चान्यथा — जानता है — अन्यथा नहीं

सब्रह्मविष्णुरुद्राश्च शक्रादिसुरपुङ्गवाः ।

६६

वसुरुद्रार्कदिक्पाला मनुचन्द्रादयः प्रिये ॥ ६६ ॥

ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र, इन्द्र आदि श्रेष्ठ देवता, वसु, रुद्र, आदित्य और दिक्पाल, मनु, चन्द्र आदि, हे प्रिये!

पदपाठ सब्रह्मविष्णुरुद्राश्च — ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र · शक्रादिसुरपुङ्गवाः — इन्द्र आदि श्रेष्ठ देवता · वसुरुद्रार्कदिक्पाला — वसु, रुद्र, आदित्य, दिक्पाल · मनुचन्द्रादयः प्रिये — मनु, चन्द्र आदि, हे प्रिये

मार्कण्डेयादिमुनयो वशिष्ठादिमुनीश्वराः ।

६७

सनकाद्याश्च योगीशा जीवन्मुक्ताः शुकादयः ॥ ६७ ॥

मार्कण्डेय आदि मुनि, वशिष्ठ आदि मुनीश्वर, सनक आदि योगीश्वर, शुक आदि जीवन्मुक्त,

पदपाठ मार्कण्डेयादिमुनयो — मार्कण्डेय आदि मुनि · वशिष्ठादिमुनीश्वराः — वशिष्ठ आदि मुनीश्वर · सनकाद्याश्च योगीशा — सनक आदि योगीश · जीवन्मुक्ताः शुकादयः — शुक आदि जीवन्मुक्त

यक्षकिन्नरगन्धर्वाः सिद्धविद्याधरादयः ।

६८

श्रीप्रासादपरामन्त्रप्रभवज्चामितं फलम् ।

प्राप्य मन्त्रमिमं पुण्यं जपन्त्यद्यापि पार्वति ॥ ६८ ॥

यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर आदि — श्रीप्रासादपरामन्त्र से उत्पन्न अपार फल और इस पवित्र मन्त्र को पाकर, हे पार्वति! आज भी इसका जप करते हैं।

पदपाठ यक्षकिन्नरगन्धर्वाः — यक्ष, किन्नर, गन्धर्व · सिद्धविद्याधरादयः — सिद्ध, विद्याधर आदि · श्रीप्रासादपरामन्त्र — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र से · प्रभवज्चामितं फलम् — उत्पन्न अमित फल · प्राप्य मन्त्रमिमं पुण्यं — इस पुण्य मन्त्र को पाकर · जपन्त्यद्यापि पार्वति — आज भी जपते हैं, हे पार्वति

सामर्थ्यं पूज्यता विद्या तेजः सौख्यमरोगिता ।

राज्यं स्वर्गञ्च मोक्षञ्च पराप्रासादजापिनः ॥ ६९ ॥

६९

सामर्थ्य, पूज्यता, विद्या, तेज, सुख, आरोग्य, राज्य, स्वर्ग और मोक्ष — ये पराप्रासाद के जापक के हैं।

पदपाठ सामर्थ्यं पूज्यता विद्या — सामर्थ्य, पूज्यता, विद्या · तेजः सौख्यमरोगिता — तेज, सुख, आरोग्य · राज्यं स्वर्गञ्च मोक्षञ्च — राज्य, स्वर्ग और मोक्ष · पराप्रासादजापिनः — पराप्रासाद के जापी को (मिलते हैं)

ब्रह्मेन्द्ररुद्रविष्णूनामपि दूरायते पदम् ।

सर्वकर्मविहीनोऽपि पराप्रासादमन्त्रवित् ।

७०

सुखेन यां गतिं याति न तां सर्वेऽपि धार्मिकाः ॥ ७० ॥

ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र और विष्णु का पद भी उससे पीछे रह जाता है; सब कर्मों से रहित भी पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता सुखपूर्वक जिस गति को पाता है, उसे सब धार्मिक मिलकर भी नहीं पाते।

पदपाठ ब्रह्मेन्द्ररुद्रविष्णूनाम् — ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, विष्णु का · अपि दूरायते पदम् — पद भी दूर (पीछे) रह जाता है · सर्वकर्मविहीनोऽपि — सब कर्मों से रहित भी · पराप्रासादमन्त्रवित् — पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता · सुखेन यां गतिं याति — सुख से जिस गति को पाता है · न तां सर्वेऽपि धार्मिकाः — उसे सब धार्मिक भी नहीं (पाते)

तस्य चिन्तामणिः कामधेनुः कल्पतरुगृहि ।

७१

कुबेरः किङ्करः साक्षात् पराप्रासादजापिनः ॥ ७१ ॥

पराप्रासाद के जापक के घर में चिन्तामणि, कामधेनु और कल्पवृक्ष हैं, और कुबेर साक्षात् उसका किंकर है।

पदपाठ तस्य चिन्तामणिः कामधेनुः — उसके लिए चिन्तामणि, कामधेनु · कल्पतरुगृहि — कल्पवृक्ष घर में हैं · कुबेरः किङ्करः साक्षात् — कुबेर साक्षात् उसका सेवक है · पराप्रासादजापिनः — पराप्रासाद के जापी का

यथा दिव्यमणिस्पर्शाल्लौहो भवति काञ्चनम् ।

७२

पराप्रासादजापाच्च पशुः पशुपतिर्भवेत् ॥ ७२ ॥

जैसे दिव्य मणि के स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है, वैसे ही पराप्रासाद के जप से पशु पशुपति हो जाता है।

पदपाठ यथा दिव्यमणिस्पर्शात् — जैसे दिव्य मणि के स्पर्श से · लौहो भवति काञ्चनम् — लोहा सोना हो जाता है · पराप्रासादजापाच्च — पराप्रासाद के जप से · पशुः पशुपतिर्भवेत् — पशु पशुपति हो जाता है

श्रीप्रासादपरामन्त्रं यो विजानाति तत्त्वतः ।

७३

स मां त्वाञ्च विजानाति चावयोरप्यतिप्रियः ॥ ७३ ॥

जो श्रीप्रासादपरामन्त्र को तत्त्वतः जानता है, वह मुझे और तुम्हें जानता है, और हम दोनों का अत्यन्त प्रिय है।

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · यो विजानाति तत्त्वतः — जो तत्त्वतः जानता है · स मां त्वाञ्च विजानाति — वह मुझे और तुम्हें जानता है · चावयोरप्यतिप्रियः — और हम दोनों का अति प्रिय है

पराप्रासादमन्त्रज्ञः श्वपचोऽपि हि पार्वति ।

७४

देवतास्थापने शक्तः प्रतिमादौ न संशयः ॥ ७४॥

हे पार्वति! पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता श्वपच भी प्रतिमा आदि में देवता की स्थापना करने में समर्थ है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रज्ञः — पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता · श्वपचोऽपि हि पार्वति — श्वपच भी हो तो, हे पार्वति · देवतास्थापने शक्तः — देवता की स्थापना में समर्थ है · प्रतिमादौ न संशयः — प्रतिमा आदि में, सन्देह नहीं

मन्त्रमात्रन्तु यो वेत्ति पराप्रासादसंज्ञकम् ।

७५

श्वपचोऽपि हि मुच्येत किं पुनस्तद्विधानवित् ॥ ७५॥

जो पराप्रासाद नामक मन्त्र मात्र को जानता है, वह श्वपच भी मुक्त हो जाये — फिर उसके विधान को जानने वाले की तो बात ही क्या।

पदपाठ मन्त्रमात्रन्तु यो वेत्ति — जो केवल मन्त्र को जानता है · पराप्रासादसंज्ञकम् — पराप्रासाद नामक · श्वपचोऽपि हि मुच्येत — श्वपच भी मुक्त हो जाता है · किं पुनस्तद्विधानवित् — उसके विधान को जानने वाले की तो बात ही क्या

पराप्रासादमन्त्रज्ञो यत् करोति यदिच्छति ।

७६

यद्ब्रूते तन्महेशानि तपो ध्यानं जपो भवेत् ॥ ७६॥

हे महेशानि! पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता जो करता है, जो चाहता है, जो कहता है — वही तप, ध्यान और जप हो जाता है।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रज्ञो — पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता · यत् करोति यदिच्छति — जो करता है, जो चाहता है · यद्ब्रूते तन्महेशानि — जो बोलता है, वह हे महेशानि · तपो ध्यानं जपो भवेत् — तप, ध्यान, जप हो जाता है

दीक्षापूर्व महेशानि पारम्पर्यसमन्वितम् ।

७७

पराप्रासादमन्त्रं यो वेत्ति सोऽहं न संशयः ॥ ७७॥

हे महेशानि! जो दीक्षापूर्वक और परम्परा के साथ पराप्रासाद मन्त्र को जानता है — वह मैं ही हूँ, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ दीक्षापूर्व महेशानि — दीक्षापूर्वक, हे महेशानि · पारम्पर्यसमन्वितम् — और परम्परा से युक्त · पराप्रासादमन्त्रं यो — जो पराप्रासाद मन्त्र को · वेत्ति सोऽहं न संशयः — जानता है — वह मैं ही हूँ, सन्देह नहीं

चराचरसमेतानि भुवनानि चतुर्दश ।

७८

पराप्रासादमन्त्रज्ञदेहे तिष्ठन्ति नित्यशः ॥ ७८॥

चराचर सहित चौदह भुवन पराप्रासाद मन्त्र के ज्ञाता की देह में नित्य स्थित रहते हैं।

पदपाठ चराचरसमेतानि — चराचर सहित · भुवनानि चतुर्दश — चौदह भुवन · पराप्रासादमन्त्रज्ञ — पराप्रासाद मन्त्रज्ञ के · देहे तिष्ठन्ति नित्यशः — देह में नित्य स्थित रहते हैं

पराप्रासादमन्त्रज्ञो यत्र तिष्ठति भामिनि ।

७९

दिव्यक्षेत्रं समुद्दिष्टं समन्तादशयोजनम् ॥ ७९॥

हे भामिनि! पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता जहाँ रहता है, वहाँ चारों ओर दस योजन तक दिव्य क्षेत्र कहा गया है।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रज्ञो — पराप्रासाद मन्त्रज्ञ · यत्र तिष्ठति भामिनि — जहाँ रहता है, हे भामिनि · दिव्यक्षेत्रं समुद्दिष्टं — वह दिव्य क्षेत्र कहा गया है · समन्तादशयोजनम् — चारों ओर दस योजन तक

पराप्रासादमन्त्रार्थतत्त्वज्ञं कुलनायिके ।

सुरासुराश्च वन्दन्ते किं पुनर्मानवादयः ॥ ८० ॥

८०

हे कुलनायिके! पराप्रासाद मन्त्र के अर्थ-तत्त्व को जानने वाले को देवता और असुर भी प्रणाम करते हैं — फिर मनुष्य आदि की तो बात ही क्या।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रार्थ — पराप्रासाद मन्त्र के अर्थ के · तत्त्वज्ञं कुलनायिके — तत्त्वज्ञ को, हे कुलनायिके · सुरासुराश्च वन्दन्ते — सुर-असुर वन्दन करते हैं · किं पुनर्मानवादयः — मनुष्य आदि की तो बात ही क्या

पराप्रासादमन्त्रज्ञो यत्र तिष्ठति पार्वति ।

सिद्धक्षेत्रं मदीयं वा मुनिदेवगणैः सह ॥ ८१ ॥

८१

हे पार्वति! पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता जहाँ रहता है, वह मुनियों और देवगणों सहित सिद्धक्षेत्र या मेरा ही क्षेत्र है।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रज्ञो — पराप्रासाद मन्त्रज्ञ · यत्र तिष्ठति पार्वति — जहाँ रहता है, हे पार्वति · सिद्धक्षेत्रं मदीयं वा — वह सिद्धक्षेत्र है, या मेरा ही (क्षेत्र) · मुनिदेवगणैः सह — मुनि-देवगणों सहित

शैववैष्णवदौर्गाकगणपत्येन्दुसम्भवान् ।

सर्वमन्त्रान् स जानाति पराप्रासादमन्त्रवित् ॥ ८२ ॥

८२

पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता शैव, वैष्णव, दुर्गा, सूर्य, गणपति और चन्द्र से उत्पन्न सब मन्त्रों को जानता है।

पदपाठ शैववैष्णवदौर्गाक — शैव, वैष्णव, दुर्गा, सूर्य · गणपत्येन्दुसम्भवान् — गणपति और चन्द्र-सम्बन्धी · सर्वमन्त्रान् स जानाति — सब मन्त्रों को वह जानता है · पराप्रासादमन्त्रवित् — पराप्रासाद मन्त्र का ज्ञाता

श्रीप्रासादपरामन्त्रो जिह्वाग्रे यस्य वर्तते ।

तस्य दर्शनमात्रेण श्वपचोऽपि विमुच्यते ॥ ८३ ॥

८३

जिसकी जिह्वा के अग्रभाग पर श्रीप्रासादपरामन्त्र रहता है, उसके दर्शन मात्र से श्वपच भी मुक्त हो जाता है।

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्रो — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · जिह्वाग्रे यस्य वर्तते — जिसकी जिह्वा के अग्र पर रहता है · तस्य दर्शनमात्रेण — उसके दर्शन मात्र से · श्वपचोऽपि विमुच्यते — श्वपच भी मुक्त हो जाता है

ब्राह्मणो वाऽन्यजो वापि शुचिर्वाप्यशुचिः प्रिये ।

पराप्रासादजापी यः स मुक्तो नात्र संशयः ॥ ८४ ॥

८४

हे प्रिये! ब्राह्मण हो या अन्यज, शुचि हो या अशुचि — जो पराप्रासाद का जप करता है वह मुक्त है; इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ ब्राह्मणो वाऽन्यजो वापि — ब्राह्मण हो या अन्यज · शुचिर्वाप्यशुचिः प्रिये — शुचि हो या अशुचि, हे प्रिये · पराप्रासादजापी यः — जो पराप्रासाद का जापी है · स मुक्तो नात्र संशयः — वह मुक्त है — इसमें सन्देह नहीं

गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा ।

पराप्रासादमन्त्रोऽयं देवेशि न च निष्फलः ॥ ८५ ॥

८५

चलते या खड़े, जागते या सोते — हे देवेशि! यह पराप्रासाद मन्त्र कभी निष्फल नहीं होता।

पदपाठ गच्छतस्तिष्ठतो वापि — चलते या खड़े रहते · जाग्रतः स्वपतोऽपि वा — जागते या सोते भी · पराप्रासादमन्त्रोऽयं — यह पराप्रासाद मन्त्र · देवेशि न च निष्फलः — हे देवेशि, कभी निष्फल नहीं

चिरेणैकैकफलदा मन्त्राः सन्ति सहस्रशः ।

कुलेशि मन्त्रराजोऽयं शीघ्रं सर्वफलप्रदः ॥ ८६ ॥

८६

देर से एक-एक फल देने वाले मन्त्र हजारों हैं; हे कुलेशि! पर यह मन्त्रराज शीघ्र ही सब फल देता है।

पदपाठ चिरेणैकैकफलदा — देर से एक-एक फल देने वाले · मन्त्राः सन्ति सहस्रशः — मन्त्र हजारों हैं · कुलेशि मन्त्रराजोऽयं — हे कुलेशि! यह मन्त्रराज · शीघ्रं सर्वफलप्रदः — शीघ्र सब फल देता है

पराप्रासादमन्त्रोऽयं सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि भजतां कामदो मनुः ॥ ८७ ॥

८७

यह पराप्रासाद मन्त्र सब मन्त्रों में उत्तमोत्तम है; जानकर या अनजाने में भजने वालों को यह मन्त्र कामनाएँ देता है।

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रोऽयं — यह पराप्रासाद मन्त्र · सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः — सब मन्त्रों में उत्तमोत्तम है · ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि — जानते हुए या अनजाने भी · भजतां कामदो मनुः — भजने वालों को यह मनु (मन्त्र) कामप्रद है

शचीन्द्रौ रोहिणीचन्द्रौ स्वाहाग्नी च प्रभारवी ।

लक्ष्मीनारायणौ वाणीधातारौ रात्रिवासरौ ॥ ८८ ॥

८८

शची और इन्द्र, रोहिणी और चन्द्र, स्वाहा और अग्नि, प्रभा और सूर्य, लक्ष्मी और नारायण, वाणी और ब्रह्मा, रात्रि और दिन,

पदपाठ शचीन्द्रौ रोहिणीचन्द्रौ — शची-इन्द्र, रोहिणी-चन्द्र · स्वाहाग्नी च प्रभारवी — स्वाहा-अग्नि, प्रभा-सूर्य · लक्ष्मीनारायणौ — लक्ष्मी-नारायण · वाणीधातारौ रात्रिवासरौ — वाणी-ब्रह्मा, रात्रि-दिवस

अग्नीषोमौ बिन्दुनादौ देवि प्रकृतिपूरुषौ ।

आधाराधेयनामानौ भोगमोक्षौ कुलेश्वरि ॥ ८९ ॥

८९

अग्नि और सोम, बिन्दु और नाद, हे देवि! प्रकृति और पुरुष, आधार और आधेय नाम वाले, भोग और मोक्ष, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ अग्नीषोमौ बिन्दुनादौ — अग्नि-सोम, बिन्दु-नाद · देवि प्रकृतिपूरुषौ — हे देवि! प्रकृति-पुरुष · आधाराधेयनामानौ — आधार-आधेय नाम वाले · भोगमोक्षौ कुलेश्वरि — भोग-मोक्ष, हे कुलेश्वरि

प्राणापानौ च वागर्थौ प्रिये विधिनिषेधकौ ।

सुखदुःखादि यद् द्वन्द्वं दृश्यते श्रूयते मया ।

९०

सर्वलोकेषु तत् सर्वमावामेव न संशयः ॥ ९० ॥

प्राण और अपान, शब्द और अर्थ, हे प्रिये! विधि और निषेध — सुख-दुःख आदि जो भी द्वन्द्व मैं सब लोकों में देखता या सुनता हूँ — वह सब हम दोनों ही हैं, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ प्राणापानौ च वागर्थौ — प्राण-अपान और वाक्-अर्थ · प्रिये विधिनिषेधकौ — हे प्रिये! विधि-निषेध · सुखदुःखादि यद् द्वन्द्वं — सुख-दुःख आदि जो द्वन्द्व · दृश्यते श्रूयते मया — मेरे द्वारा देखा या सुना जाता है · सर्वलोकेषु तत् सर्वम् — सब लोकों में, वह सब · आवामेव न संशयः — हम दोनों ही हैं, सन्देह नहीं

पुंस्त्रीरूपाणि सर्वाणि चावयोरंशकानि हि ।

पराप्रासादमन्त्रोऽयं तस्मात् सर्वात्मको भवेत् ॥ ९१ ॥

९१

सब पुरुष और स्त्री रूप हम दोनों के अंश हैं; इसलिए यह पराप्रासाद मन्त्र सर्वात्मक है।

पदपाठ पुंस्त्रीरूपाणि सर्वाणि — सब पुरुष-स्त्री रूप · चावयोरंशकानि हि — हम दोनों के ही अंश हैं · पराप्रासादमन्त्रोऽयं — यह पराप्रासाद मन्त्र · तस्मात् सर्वात्मको भवेत् — इसलिए सर्वात्मक है

अरूपं भावनागम्यं परं ब्रह्म कुलेश्वरि ।

निष्कलं निर्मलं नित्यं निर्गुणं व्योमसन्निभम् ॥ ९२ ॥

९२

हे कुलेश्वरि! रूपरहित, भावना से गम्य, परब्रह्म — निष्कल, निर्मल, नित्य, निर्गुण, आकाश के समान,

पदपाठ अरूपं भावनागम्यं — अरूप, भावना से गम्य · परं ब्रह्म कुलेश्वरि — परब्रह्म, हे कुलेश्वरि · निष्कलं निर्मलं नित्यं — निष्कल, निर्मल, नित्य · निर्गुणं व्योमसन्निभम् — निर्गुण, आकाश के समान

अनन्तमव्ययं तत्त्वं मनोवाचामगोचरम् ।

पराप्रासादमन्त्रार्थसन्धानात् सम्प्रकाशते ॥ ९३ ॥

९३

अनन्त, अव्यय तत्त्व, मन और वाणी से परे — पराप्रासाद मन्त्र के अर्थ के अनुसन्धान से प्रकाशित होता है।

पदपाठ अनन्तमव्ययं तत्त्वं — अनन्त, अव्यय तत्त्व · मनोवाचामगोचरम् — मन-वाणी से अगोचर · पराप्रासादमन्त्रार्थ — पराप्रासाद मन्त्र के अर्थ के · सन्धानात् सम्प्रकाशते — सन्धान (अनुसन्धान) से प्रकाशित होता है

तस्मान्मन्त्रमिदं देवि पराप्रासादसंज्ञकम् ।

परतत्त्वस्वरूपत्वात् सच्चिदानन्दलक्षणात् ॥ ९४ ॥

९४

इसलिए, हे देवि! पराप्रासाद नामक यह मन्त्र — परतत्त्वस्वरूप होने से, सच्चिदानन्द लक्षण वाला होने से,

पदपाठ तस्मान्मन्त्रमिदं देवि — इसलिए यह मन्त्र, हे देवि · पराप्रासादसंज्ञकम् — पराप्रासाद नामक · परतत्त्वस्वरूपत्वात् — परतत्त्वस्वरूप होने से · सच्चिदानन्दलक्षणात् — सच्चिदानन्द-लक्षण होने से

शिवशक्तिमयत्वाच्च भुक्तिमुक्तिप्रदानतः ।

सकर्मापि च निष्कर्म सगुणञ्चापि निर्गुणम् ॥ ९५॥

९५

शिव-शक्तिमय होने से, भोग और मोक्ष देने से — सकर्म होकर भी निष्कर्म है, सगुण होकर भी निर्गुण है।

पदपाठ शिवशक्तिमयत्वाच्च — और शिव-शक्तिमय होने से · भुक्तिमुक्तिप्रदानतः — भुक्ति-मुक्ति देने से · सकर्मापि च निष्कर्म — सकर्म होकर भी निष्कर्म है · सगुणञ्चापि निर्गुणम् — सगुण होकर भी निर्गुण है

श्रीप्रासादपरामन्त्रं सर्वमन्त्रशिरोमणि ।

जपन् भुक्तिञ्च मुक्तिञ्च लभते नात्र संशयः ॥ ९६॥

९६

सब मन्त्रों के शिरोमणि श्रीप्रासादपरामन्त्र का जप करता हुआ मनुष्य भोग और मोक्ष दोनों पाता है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · सर्वमन्त्रशिरोमणि — सब मन्त्रों का शिरोमणि · जपन् भुक्तिञ्च मुक्तिञ्च — जपते हुए भुक्ति और मुक्ति · लभते नात्र संशयः — पाता है — इसमें सन्देह नहीं

बहुनात्र किमुक्तेन सर्वसारं शृणु प्रिये ।

श्रीप्रासादपरामन्त्रसमं मन्त्रं न विद्यते ॥ ९७॥

९७

अधिक कहने से क्या? हे प्रिये! सबका सार सुनो: श्रीप्रासादपरामन्त्र के समान कोई मन्त्र नहीं है।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या? · सर्वसारं शृणु प्रिये — सबका सार सुनो, हे प्रिये · श्रीप्रासादपरामन्त्र — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र के · समं मन्त्रं न विद्यते — समान कोई मन्त्र नहीं

इदमेव परं ज्ञानमिदमेव परं तपः ।

इदमेव परं ध्यानमिदमेव परार्चनम् ॥ ९८ ॥

९८

यही परम ज्ञान है, यही परम तप, यही परम ध्यान, यही परम अर्चन;

पदपाठ इदमेव परं ज्ञानम् — यही परम ज्ञान है · इदमेव परं तपः — यही परम तप है · इदमेव परं ध्यानम्
— यही परम ध्यान है · इदमेव परार्चनम् — यही परम अर्चन है

इदमेव परा दीक्षा इदमेव परो जपः ।

इदमेव परं तत्त्वमिदमेव परं व्रतम् ॥ ९९ ॥

९९

यही परम दीक्षा है, यही परम जप, यही परम तत्त्व, यही परम व्रत;

पदपाठ इदमेव परा दीक्षा — यही परा दीक्षा है · इदमेव परो जपः — यही परम जप है · इदमेव परं तत्त्वम्
— यही परम तत्त्व है · इदमेव परं व्रतम् — यही परम व्रत है

इदमेव परो यज्ञ इदमेव परात् परम् ।

इदमेव परं श्रेय इदमेव परं फलम् ॥ १०० ॥

१००

यही परम यज्ञ है, यही पर से भी पर, यही परम श्रेय, यही परम फल;

पदपाठ इदमेव परो यज्ञ — यही परम यज्ञ है · इदमेव परात् परम् — यही पर से भी पर है · इदमेव परं श्रेय
— यही परम श्रेय है · इदमेव परं फलम् — यही परम फल है

इदमेव परं ब्रह्म इदमेव परा गतिः ।

इदमेव परं गुह्यं सत्यं सत्यं न संशयः ।

१०१

इति मत्वा मनुवरं तन्निष्ठः स्यात् सदा प्रिये ॥ १०१ ॥

यही परम ब्रह्म है, यही परम गति, यही परम गुह्य — सत्य है, सत्य है, इसमें सन्देह नहीं। हे प्रिये! यह जानकर इस मन्त्रश्रेष्ठ में सदा निष्ठावान् रहे।

पदपाठ इदमेव परं ब्रह्म — यही परब्रह्म है · इदमेव परा गतिः — यही परा गति है · इदमेव परं गुह्यं — यही परम गुह्य है · सत्यं सत्यं न संशयः — सत्य, सत्य, सन्देह नहीं · इति मत्वा मनुवरं — यह मानकर, मन्त्रश्रेष्ठ में · तन्निष्ठः स्यात् सदा प्रिये — सदा तन्निष्ठ रहे, हे प्रिये

आगमोक्तेन विधिना क्रमपूजापुरःसरम् ।

श्रीप्रासादपरामन्त्रं शतमष्टोत्तरं जपेत् ।

१०२

मुच्यते ब्रह्महत्यादिमहापापैश्च पञ्चभिः ॥ १०२ ॥

आगम में कही विधि से, क्रमपूजा-पूर्वक, श्रीप्रासादपरामन्त्र का एक सौ आठ बार जप करे; उससे ब्रह्महत्या आदि पाँच महापापों से मुक्त हो जाता है।

पदपाठ आगमोक्तेन विधिना — आगम में कही विधि से · क्रमपूजापुरःसरम् — क्रमपूजा-पूर्वक · श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · शतमष्टोत्तरं जपेत् — एक सौ आठ बार जपे · मुच्यते ब्रह्महत्यादि — ब्रह्महत्या आदि से मुक्त होता है · महापापैश्च पञ्चभिः — पाँच महापापों से

द्विशतं यो जपेद्देवि श्रीप्रासादपरामनुम् ।

१०३

चतुरशीतिलक्षांशधारणाचरितैरपि ॥ १०३ ॥

हे देवि! जो श्रीप्रासादपरामन्त्र का दो सौ बार जप करता है — चौरासी लाख योनियों के शरीर धारण करते हुए किये गये,

पदपाठ द्विशतं यो जपेद्देवि — जो दो सौ बार जपे, हे देवि · श्रीप्रासादपरामनुम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · चतुरशीतिलक्षांश — चौरासी लाख (योनियों) में · धारणाचरितैरपि — (उन देहों को) धारण करते किए (पापों) से भी

स्वयोनिजाङ्गचरितैरसंख्यजननार्जितैः ।

१०४

वार्द्धके यौवने बाल्ये जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु ॥ १०४ ॥

अपने जन्म से प्राप्त अंगों से किये गये, असंख्य जन्मों में अर्जित, बुढ़ापे, यौवन और बचपन में, जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति में,

पदपाठ स्वयोनिजाङ्गचरितैः — अपनी योनि से जन्मे अंगों से किए · असंख्यजननार्जितैः — असंख्य जन्मों में अर्जित · वार्द्धके यौवने बाल्ये — वृद्धावस्था, यौवन, बाल्य में · जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु — जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति में

कर्मणा मनसा वाचा ज्ञानाज्ञानकृतैरपि ।

महापातकसङ्घैश्च ह्युपपातककोटिभिः ।

१०५

मुच्यते नात्र सन्देहः सत्यमेतद्वरानने ॥ १०५॥

कर्म, मन और वाणी से, जानकर या अनजाने में किये गये — महापातकों के समूहों से और करोड़ों उपपातकों से मुक्त हो जाता है; इसमें सन्देह नहीं। हे वरानने! यह सत्य है।

पदपाठ कर्मणा मनसा वाचा — कर्म से, मन से, वाणी से · ज्ञानाज्ञानकृतैरपि — जानते-अनजाने किए भी · महापातकसङ्घैश्च — महापातकों के समूहों से · ह्युपपातककोटिभिः — और करोड़ों उपपातकों से · मुच्यते नात्र सन्देहः — मुक्त होता है — इसमें सन्देह नहीं · सत्यमेतद्वरानने — यह सत्य है, हे वरानने

त्रिशतं यो जपेद्देवि श्रीप्रासादपरामनुम् ।

१०६

सर्वक्रतुषु यत् पुण्यं सर्वदानेषु यत् फलम् ॥ १०६॥

हे देवि! जो श्रीप्रासादपरामन्त्र का तीन सौ बार जप करता है — सब यज्ञों में जो पुण्य है, सब दानों में जो फल है,

पदपाठ त्रिशतं यो जपेद्देवि — जो तीन सौ बार जपे, हे देवि · श्रीप्रासादपरामनुम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · सर्वक्रतुषु यत् पुण्यं — सब यज्ञों में जो पुण्य है · सर्वदानेषु यत् फलम् — सब दानों में जो फल है

सर्वव्रतेषु यत् पुण्यं सर्वतीर्थेषु यत् फलम् ।

१०७

तत् फलं लभते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १०७॥

सब व्रतों में जो पुण्य है, सब तीर्थों में जो फल है — वह फल वह पाता है, हे देवि! इसमें विचार की आवश्यकता नहीं।

पदपाठ सर्वव्रतेषु यत् पुण्यं — सब व्रतों में जो पुण्य है · सर्वतीर्थेषु यत् फलम् — सब तीर्थों में जो फल है · तत् फलं लभते देवि — वह फल पाता है, हे देवि · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं

चतुःशतं जपेद् यस्तु श्रीप्रासादपरामनुम् ।

सदा तस्य गृहद्वारे ह्यणिमाद्यष्टसिद्धयः ।

१०८

सेवन्ते नात्र सन्देहः सर्वसिद्धिसमन्विताः ॥ १०८ ॥

जो श्रीप्रासादपरामन्त्र का चार सौ बार जप करता है — अणिमा आदि आठों सिद्धियाँ सब सिद्धियों सहित सदा उसके घर के द्वार पर सेवा करती हैं; इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ चतुःशतं जपेद् यस्तु — जो चार सौ बार जपे · श्रीप्रासादपरामनुम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · सदा तस्य गृहद्वारे — सदा उसके घर के द्वार पर · ह्यणिमाद्यष्टसिद्धयः — अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ · सेवन्ते नात्र सन्देहः — सेवा करती हैं — इसमें सन्देह नहीं · सर्वसिद्धिसमन्विताः — सब सिद्धियों से युक्त

यद् यन्मनोऽभिलषितं तत्तत् प्राप्नोत्यसंशयः ।

धर्मार्थकाममोक्षाश्च साक्षात्तस्य करे स्थिताः ॥ १०९ ॥

१०९

मन जो-जो चाहता है वह-वह वह निःसन्देह पाता है; धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष साक्षात् उसके हाथ में रहते हैं।

पदपाठ यद् यन्मनोऽभिलषितं — जो-जो मन में इच्छित हो · तत्तत् प्राप्नोत्यसंशयः — वह-वह पाता है, निःसन्देह · धर्मार्थकाममोक्षाश्च — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष · साक्षात्तस्य करे स्थिताः — साक्षात् उसके हाथ में स्थित हैं

सालोक्यप्रमुखां देवि लभेन्मुक्तिं चतुर्विधाम् ।

११०

सत्यमेतन्न सन्देहः साधकः कुलनायिके ॥ ११० ॥

हे देवि! हे कुलनायिके! साधक सालोक्य आदि चार प्रकार की मुक्ति पाता है — यह सत्य है, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ सालोक्यप्रमुखां देवि — सालोक्य आदि, हे देवि · लभेन्मुक्तिं चतुर्विधाम् — चार प्रकार की मुक्ति पाता है · सत्यमेतन्न सन्देहः — यह सत्य है, सन्देह नहीं · साधकः कुलनायिके — साधक, हे कुलनायिके

जपेत् पञ्चशतं यस्तु श्रीप्रासादपरामनुम् ।

१११

तत्फलं नैव शक्नोमि कथितुं कुलनायिके ॥ १११ ॥

जो श्रीप्रासादपरामन्त्र का पाँच सौ बार जप करता है — हे कुलनायिके! उसका फल मैं कह ही नहीं सकता।

पदपाठ जपेत् पञ्चशतं यस्तु — जो पाँच सौ बार जपे · श्रीप्रासादपरामनुम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · तत्फलं नैव शक्नोमि — उसका फल मैं नहीं कह सकता · कथितुं कुलनायिके — बताने में (असमर्थ हूँ), हे कुलनायिके

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा ।

११२

श्रीप्रासादपरामन्त्रं जपेद् भुक्तिविमुक्तये ॥ ११२ ॥

इसलिए सब प्रयत्न से, सब अवस्थाओं में, सदा, भोग और मुक्ति के लिए श्रीप्रासादपरामन्त्र का जप करे।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · सर्वावस्थासु सर्वदा — सब अवस्थाओं में, सदा · श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र को · जपेद् भुक्तिविमुक्तये — भुक्ति और मुक्ति के लिए जपे

नास्ति गुर्वधिकं तत्त्वं न शिवाधिकदैवतम् ।

११३

न हि वेदाधिका विद्या न कौलसमदर्शनम् ॥ ११३ ॥

गुरु से बढ़कर कोई तत्त्व नहीं, शिव से बढ़कर कोई देवता नहीं, वेद से बढ़कर कोई विद्या नहीं, कौल के समान कोई दर्शन नहीं;

पदपाठ नास्ति गुर्वधिकं तत्त्वं — गुरु से अधिक कोई तत्त्व नहीं · न शिवाधिकदैवतम् — शिव से अधिक कोई देवता नहीं · न हि वेदाधिका विद्या — वेद से अधिक कोई विद्या नहीं · न कौलसमदर्शनम् — कौल के समान कोई दर्शन नहीं

न कुलादधिकं ज्ञानं न ज्ञानादधिकं सुखम् ।

११४

नाष्टाङ्गाधिका पूजा न हि मोक्षाधिकं फलम् ।

इदं सत्यमिदं सत्यं सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ११४ ॥

कुल से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं, ज्ञान से बढ़कर कोई सुख नहीं, अष्टांग से बढ़कर कोई पूजा नहीं, मोक्ष से बढ़कर कोई फल नहीं। यह सत्य है, यह सत्य है — सत्य है, सत्य है, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ न कुलादधिकं ज्ञानं — कुल से अधिक कोई ज्ञान नहीं · न ज्ञानादधिकं सुखम् — ज्ञान से अधिक कोई सुख नहीं · नाष्टाङ्गाधिका पूजा — अष्टांग से अधिक कोई पूजा नहीं · न हि मोक्षाधिकं फलम् — मोक्ष से अधिक कोई फल नहीं · इदं सत्यमिदं सत्यं — यह सत्य है, यह सत्य है · सत्यं सत्यं न संशयः — सत्य, सत्य, सन्देह नहीं

श्रीप्रासादपरामन्त्रमाहात्म्यमिह वर्णितुम् ।

११५

न शक्नोमि वरारोहे कल्पकोटिशतैरपि ॥ ११५॥

हे वरारोहे! श्रीप्रासादपरामन्त्र का माहात्म्य यहाँ वर्णन करने में मैं सैकड़ों करोड़ कल्पों में भी समर्थ नहीं हूँ।

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्र — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र का · माहात्म्यमिह वर्णितुम् — माहात्म्य यहाँ वर्णन करने में · न शक्नोमि वरारोहे — मैं समर्थ नहीं, हे वरारोहे · कल्पकोटिशतैरपि — सौ करोड़ कल्पों में भी

गिरौ सर्षपमात्रन्तु सागरे बालुका यथा ।

११६

तथा च मन्त्रमाहात्म्यं किञ्चित्ते कथितं मया ॥ ११६॥

पर्वत के सामने सरसों का दाना, सागर के सामने बालू का कण — उतना ही, थोड़ा-सा, मन्त्र का माहात्म्य मैंने तुम्हें कहा है।

पदपाठ गिरौ सर्षपमात्रन्तु — पर्वत के सामने सरसों मात्र · सागरे बालुका यथा — जैसे सागर में बालू का कण · तथा च मन्त्रमाहात्म्यं — वैसे ही मन्त्र का माहात्म्य · किञ्चित्ते कथितं मया — मैंने तुम्हें कुछ कहा

ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यं श्रीप्रासादपरामनोः ।

११७

इति ते कथितं देवि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ११७॥

हे देवि! इस प्रकार ऊर्ध्वाम्नाय और श्रीप्रासादपरामन्त्र का माहात्म्य तुम्हें कहा गया। अब और क्या सुनना चाहती हो?"

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यं — ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य · श्रीप्रासादपरामनोः — और श्रीप्रासाद-परा मन्त्र का · इति ते कथितं देवि — इस प्रकार तुम्हें कहा गया, हे देवि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे श्रीप्रासादपरामन्त्रकथनं नाम तृतीय उल्लासः ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सब आगमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
श्रीप्रासादपरामन्त्रकथन नामक तृतीय उल्लास पूर्ण हुआ ॥

॥ श्रीः ॥

अथ चतुर्थोल्लासः

महाषोढाकथनम्



पार्वती स्वयं प्रासादपरा मन्त्र, उसके न्यास और ध्यान को पूछती हैं। शिव मन्त्र केवल सांकेतिक उद्धार-शैली में देते हैं — "अनन्त, चन्द्र, भुवन, इन्दु-बिन्दु सहित" — और फिर निरुक्ति से उसके दो नाम समझाते हैं: वह प्रासाद है क्योंकि प्रकाश-आनन्दरूप है, प्रत्यक्ष फल देता है, चित्त को वश में करता है, पुराने पापों को शान्त करता है, शरणागतों की पीड़ा हरता है और शीघ्र प्रासाद करता है; वह परा है क्योंकि परतत्त्व है, परमात्मा को प्रकाशित करता है, परमानन्द और परम ऐश्वर्य देता है और सब मन्त्रों से पर है। फिर दैनिक क्रमः प्रातः उठना, गुरु-देवता का चिन्तन, प्रातःकालीन शुद्धि, सन्ध्या, द्वारपूजा, आसन, गुरु, गणपति-क्षेत्रपाल, सूर्य, प्राणायाम, दिग्बन्धन और मातृका तथा भूतलिपि न्यास; फिर मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति, कीलक, षडंग और ब्रह्ममन्त्र-न्यास। अध्याय का मुख्य भाग महाषोढा है, "महान् छहगुना न्यास" जो पहले कभी प्रकट नहीं हुआ: (1) प्रपंच-न्यास — स्वर्गों पर सोलह लक्ष्मियों सहित प्रपंच के सोलह भेद, स्पर्श वर्णों पर देवी के पच्चीस रूपों सहित काल के पच्चीस भेद, और शेष वर्णों पर दस सरस्वतियों सहित भूत, इन्द्रिय और वायु, प्रत्येक इकाई से पहले त्रितार ऐं ह्रीं श्रीं और मूलमन्त्र; (2) भुवन-न्यास — अतल से सत्यलोक तक चौदह भुवन, अपनी रक्षक योगिनियों सहित, पैरों से ब्रह्मरन्ध्र तक; (3) मूर्ति-न्यास — सोलह विष्णु, बारह रुद्र और दस ब्रह्मा अपनी शक्तियों सहित सिर, मुख, अंगों और पाँच मुखों पर; (4) मन्त्र-न्यास — सोलह वर्गों में वर्णमाला, एक लाख से सोलह लाख मन्त्रों तक गिनी हुई, प्रत्येक अपनी अधिदेवता सहित, मूलाधार से बिन्दु, नाद, उन्मनी तक के स्थानों पर; (5) देवता-न्यास — वर्णों के जोड़े प्राणियों के वर्गों को — योगिनी, तपस्वी, देव, राक्षस, सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, नाग, पितृ, भैरव — उनकी शक्तियों सहित, अंगूठों से सिर तक; और (6) मातृका-न्यास — आठ मातृकाएँ आठ भैरवों और आकाश, भूमि, पाताल, दिशा, पर्वत, वन और जल की आठ चरी-देवियों सहित, मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक के चक्रों पर। फिर ध्यानः अमृत-सागर में मणिद्वीप पर, कल्पवृक्षों के वन में रत्नमय मण्डप में, नवरत्न सिंहासन पर कमल में त्रिकोण के भीतर आसीन शिव, दस हजार सूर्यों की

प्रभा वाले, सोलह वर्ष के, त्रिनेत्र, चन्द्रशेखर, अर्धांग में अम्बिका, हाथों में पानपात्र, चिन्मुद्रा, त्रिशूल और पुस्तक — या केवल पुरुष या स्त्री रूप, या निष्कल सच्चिदानन्द। दस मुद्राएँ दिखायी जाती हैं, मन्त्र जपा जाता है, एक दीर्घ छन्द के श्लोक में मस्तक पर गुरु का स्मरण होता है। अध्याय फलों पर समाप्त होता है: मन्त्री स्वयं शिव हो जाता है, देवता उसे प्रणाम करते हैं, जहाँ वह खड़ा हो वहाँ दस योजन तक पुण्यभूमि, भूत-प्रेत उसकी ओर देख नहीं सकते, जिसे वह प्रणाम करे वह छह महीने में मर जाता है — और चेतावनी कि यह "वज्रपंजर" केवल पुत्र या शिष्य को दिया जाये।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि श्रीप्रासादपरामनुम् ।

मन्त्रराजं वदेशान न्यासध्यानादिभिः सह ॥ १॥

१

"हे कुलेश! मैं श्रीप्रासादपरामन्त्र सुनना चाहती हूँ। हे ईशान! न्यास, ध्यान आदि के साथ वह मन्त्रराज मुझे बताइये।"

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · श्रीप्रासादपरामनुम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · मन्त्रराजं वदेशान — मन्त्रराज बताइए, हे ईशान · न्यासध्यानादिभिः सह — न्यास, ध्यान आदि के साथ

— श्रीईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण शिवाकारः प्रजायते ॥ २॥

२

"हे देवि! सुनो, जो तुम मुझसे पूछ रही हो वह मैं कहता हूँ। उसके सुनने मात्र से मनुष्य शिवाकार हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · शिवाकारः प्रजायते — शिवाकार हो जाता है

इतः पूर्वं मया नोक्तो मन्त्रोऽयं यस्य कस्यचित् ।

तव स्नेहाद्वदाम्यद्य शृणु मत्प्राणवल्लभे ॥ ३॥

३

इससे पहले मैंने यह मन्त्र किसी को नहीं कहा; तुम्हारे स्नेह से आज कहता हूँ — हे मेरे प्राणों की प्रिय! सुनो।

पदपाठ इतः पूर्वं मया नोक्तो — इससे पहले मैंने नहीं कहा · मन्त्रोऽयं यस्य कस्यचित् — यह मन्त्र जिस-किसी को भी · तव स्नेहाद्वदाम्यद्य — तुम्हारे स्नेह से आज कहता हूँ · शृणु मत्प्राणवल्लभे — सुनो, हे मेरी प्राणवल्लभे

अनन्तचन्द्रभुवनमिन्दुबिन्दुयुगान्वितः ।

श्रीप्रासादपरामन्त्रो भुक्तिमुक्तिफलप्रदः ॥ ४॥

४

"अनन्त", "चन्द्र", "भुवन", इन्दु और बिन्दु के युग्म से युक्त — यह श्रीप्रासादपरामन्त्र भोग और मोक्ष का फल देता है।

पदपाठ अनन्तचन्द्रभुवनम् — अनन्त, चन्द्र, भुवन · इन्दुबिन्दुयुगान्वितः — इन्दु-बिन्दु के युग्म से युक्त · श्रीप्रासादपरामन्त्रो — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · भुक्तिमुक्तिफलप्रदः — भुक्ति-मुक्ति फल देने वाला

पराप्रासादमन्त्रस्तु सादिरुक्तः कुलेश्वरि ।

प्रकाशानन्दरूपत्वात् प्रत्यक्षफलदानतः ॥ ५॥

५

हे कुलेश्वरि! पराप्रासाद मन्त्र अपने आदि अक्षरों से यों कहा गया है: प्रकाश और आनन्द रूप होने से, प्रत्यक्ष फल देने से,

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रस्तु — पराप्रासाद मन्त्र · सादिरुक्तः कुलेश्वरि — आदि (प्र-आदि) सहित कहा गया है, हे कुलेश्वरि · प्रकाशानन्दरूपत्वात् — प्रकाश-आनन्दरूप होने से · प्रत्यक्षफलदानतः — प्रत्यक्ष फल देने से

प्रसन्नचित्तवश्यत्वात् प्रसिद्धार्थनिरूपणात् ।

प्राक्तनाघप्रशमनात् प्रपन्नार्तिविनाशनात् ।

६

प्रसादकरणाच्छीघ्रं प्रासादमनुरीरितः ॥ ६ ॥

प्रसन्न चित्त को वश में करने से, प्रसिद्ध अर्थ का निरूपण करने से, पूर्वजन्म के पापों को शान्त करने से, शरणागतों की पीड़ा का नाश करने से, और शीघ्र प्रसाद (कृपा) करने से — यह प्रासाद मन्त्र कहलाता है।

पदपाठ प्रसन्नचित्तवश्यत्वात् — चित्त को प्रसन्न करके वश में करने से · प्रसिद्धार्थनिरूपणात् — प्रसिद्ध अर्थ का निरूपण करने से · प्राक्तनाघप्रशमनात् — पूर्वजन्मों के पापों को शमन करने से · प्रपन्नार्तिविनाशनात् — प्रपन्नो (शरणागतों) की पीड़ा नष्ट करने से · प्रसादकरणाच्छीघ्रं — शीघ्र प्रसाद (कृपा) करने से · प्रासादमनुरीरितः — प्रासाद मन्त्र कहा गया है

परतत्त्वस्वरूपत्वात् परमात्मप्रकाशनात् ।

७

परमानन्दजननात् परधर्मनिदर्शनात् ॥ ७ ॥

परतत्त्वस्वरूप होने से, परमात्मा को प्रकाशित करने से, परमानन्द उत्पन्न करने से, परम धर्म को दिखाने से,

पदपाठ परतत्त्वस्वरूपत्वात् — परतत्त्वस्वरूप होने से · परमात्मप्रकाशनात् — परमात्मा को प्रकाशित करने से · परमानन्दजननात् — परमानन्द उत्पन्न करने से · परधर्मनिदर्शनात् — परधर्म दिखाने से

परोक्षफलदानाच्च परमैश्वर्यकारणात् ।

८

परत्वात् सर्वमन्त्राणां परामन्त्र इतीरितः ॥ ८ ॥

परोक्ष फल देने से, परम ऐश्वर्य का कारण होने से, और सब मन्त्रों से पर होने से — यह परा मन्त्र कहलाता है।

पदपाठ परोक्षफलदानाच्च — और परोक्ष फल देने से · परमैश्वर्यकारणात् — परम ऐश्वर्य का कारण होने से · परत्वात् सर्वमन्त्राणां — सब मन्त्रों से पर होने से · परामन्त्र इतीरितः — परा मन्त्र कहा गया है

कुलमन्त्रमिदं देवि न्यासं शृणु वदामि ते ।

आदौ प्रातः समुत्थाय गुरुदेवानुचिन्तनम् ॥ ९ ॥

९

हे देवि! इस कुलमन्त्र का न्यास सुनो, मैं तुम्हें कहता हूँ। पहले प्रातः उठकर गुरु और देवता का चिन्तन;

पदपाठ कुलमन्त्रमिदं देवि — यह कुलमन्त्र, हे देवि · न्यासं शृणु वदामि ते — इसका न्यास सुनो, तुम्हें कहता हूँ · आदौ प्रातः समुत्थाय — पहले प्रातः उठकर · गुरुदेवानुचिन्तनम् — गुरु और देवता का चिन्तन

कन्दमूले मनः कृत्वा कुर्याद्विण्मूत्रमोचनम् ।

शौचास्यशोधनं स्नानं सन्ध्यातर्पणमाचरेत् ॥ १० ॥

१०

कन्द (मूलाधार) के मूल में मन रखकर मल-मूत्र का त्याग करे; फिर शौच, मुखशुद्धि, स्नान, सन्ध्या और तर्पण करे;

पदपाठ कन्दमूले मनः कृत्वा — कन्दमूल में मन लगाकर · कुर्याद्विण्मूत्रमोचनम् — मल-मूत्र विसर्जन करे · शौचास्यशोधनं स्नानं — शौच, मुखशुद्धि, स्नान · सन्ध्यातर्पणमाचरेत् — सन्ध्या और तर्पण करे

एकान्ते द्वारयजनं विघ्नत्रयनिवारणम् ।

पूजास्थानप्रवेशश्च तथासनोपवेशनम् ॥ ११ ॥

११

एकान्त में द्वारपूजा, तीन प्रकार के विघ्नों का निवारण, पूजास्थान में प्रवेश, और आसन पर बैठना;

पदपाठ एकान्ते द्वारयजनं — एकान्त में द्वारपूजन · विघ्नत्रयनिवारणम् — तीन विघ्नों का निवारण · पूजास्थानप्रवेशश्च — पूजास्थान में प्रवेश · तथासनोपवेशनम् — और आसन पर बैठना

देवीपूजागृहध्यानं शिवादिगुरुवन्दनम् ।

१२

आसनं गणपक्षेत्रपालवन्दनमीश्वरि ॥ १२ ॥

देवी के पूजागृह का ध्यान, शिव आदि गुरुओं की वन्दना, आसन, और गणपति तथा क्षेत्रपाल की वन्दना, हे ईश्वरि!

पदपाठ देवीपूजागृहध्यानं — देवी के पूजागृह का ध्यान · शिवादिगुरुवन्दनम् — शिव आदि गुरुओं का वन्दन · आसनं गणपक्षेत्रपाल — आसन; गणपति और क्षेत्रपाल · वन्दनमीश्वरि — वन्दन, हे ईश्वरि

पादुकास्मरणञ्चैव दिननाथार्चनं प्रिये ।

१३

कराङ्गशोधनं प्राणायामः स्वब्रह्मरन्ध्रके ॥ १३ ॥

पादुका का स्मरण, हे प्रिये! सूर्य का अर्चन, कर और अंगों का शोधन, और अपने ब्रह्मरन्ध्र में प्राणायाम;

पदपाठ पादुकास्मरणञ्चैव — और पादुका का स्मरण · दिननाथार्चनं प्रिये — सूर्य का अर्चन, हे प्रिये · कराङ्गशोधनं — हाथ और अंगों की शुद्धि · प्राणायामः स्वब्रह्मरन्ध्रके — अपने ब्रह्मरन्ध्र में प्राणायाम

दिग्बन्धनञ्चाङ्गयुग्मं विधियुक्ताञ्च मातृकाम् ।

१४

दशप्रकारभूताख्यां लिपिं कमठसंज्ञकाम् ॥ १४ ॥

दिग्बन्धन, अंगन्यास का युग्म, विधिपूर्वक मातृका-न्यास, दस प्रकार की भूतलिपि, और कमठ नामक लिपि।

पदपाठ दिग्बन्धनञ्चाङ्गयुग्मं — दिग्बन्धन, दो अंगन्यास · विधियुक्ताञ्च मातृकाम् — और विधि-सहित मातृका · दशप्रकारभूताख्यां — दस प्रकार की भूत(-लिपि) नामक · लिपिं कमठसंज्ञकाम् — और कमठ नामक लिपि

ऋषिरस्य परः शम्भुश्छन्दश्चाव्यक्तपूर्विका ।

१५

गायत्री देवता चात्र सर्वमन्त्रेश्वरी परा ॥ १५॥

इसके ऋषि परम शम्भु हैं; छन्द अव्यक्त-गायत्री; और यहाँ देवता हैं सब मन्त्रों की ईश्वरी परा।

पदपाठ ऋषिरस्य परः शम्भुः — इसका ऋषि परम शम्भु है · छन्दश्चाव्यक्तपूर्विका — छन्द "अव्यक्त" पूर्वक · गायत्री देवता चात्र — (अव्यक्त-)गायत्री; और देवता यहाँ · सर्वमन्त्रेश्वरी परा — सब मन्त्रों की ईश्वरी परा है

दीर्घत्रययुतं मूलं बीजं शक्तिश्च कीलकम् ।

१६

षड्दीर्घयुक्तमूलेन षडङ्गानि च पार्वति ॥ १६॥

तीन दीर्घ स्वरों से युक्त मूल ही बीज, शक्ति और कीलक है; छह दीर्घ स्वरों से युक्त मूल से षडंग होते हैं, हे पार्वति!

पदपाठ दीर्घत्रययुतं मूलं — तीन दीर्घ (स्वरों) से युक्त मूल · बीजं शक्तिश्च कीलकम् — बीज, शक्ति और कीलक है · षड्दीर्घयुक्तमूलेन — छह दीर्घ (स्वरों) से युक्त मूल से · षडङ्गानि च पार्वति — छह अंग (बनते हैं), हे पार्वति

ईशतत्पुरुषाघोरसद्योजातात्मनस्तथा ।

१७

पञ्चाङ्गुलिषु विन्यस्य मूर्तिं वक्त्रेषु विन्यसेत् ॥ १७॥

ईशान, तत्पुरुष, अघोर, सद्योजात आदि को पाँच अंगुलियों में न्यास करके, उसी मूर्ति को (पाँच) मुखों में न्यास करे।

पदपाठ ईशतत्पुरुषाघोर — ईशान, तत्पुरुष, अघोर · सद्योजातात्मनस्तथा — सद्योजात और (वामदेव) आत्मा · पञ्चाङ्गुलिषु विन्यस्य — पाँच अंगुलियों में न्यास कर · मूर्तिं वक्त्रेषु विन्यसेत् — मूर्ति को मुखों में न्यास करे

पञ्चसु ब्रह्मणि तथैवाङ्गविन्यासमाचरेत् ।

आधारशक्तिमारभ्य पीठमन्त्रान्तमम्बिके ॥ १८ ॥

१८

वैसे ही पाँच ब्रह्म(मन्त्रों) में अंगन्यास करे, और हे अम्बिके! आधारशक्ति से आरम्भ करके पीठमन्त्रों के अन्त तक (पीठन्यास करे)।

पदपाठ पञ्चसु ब्रह्मणि तथैव — पाँच ब्रह्म(-मन्त्रों) में वैसे ही · अङ्गविन्यासमाचरेत् — अंगन्यास करे · आधारशक्तिमारभ्य — आधारशक्ति से आरम्भ कर · पीठमन्त्रान्तमम्बिके — पीठ-मन्त्रों के अन्त तक, हे अम्बिके

अल्पषोढां कुलेशानि कुर्यात् पूर्वोक्तवर्त्मना ।

महाषोढाह्वयं न्यासं ततः कुर्यात् समाहितः ।

१९

वक्ष्यमाणेन विधिना देवताभावसिद्धये ॥ १९ ॥

हे कुलेशानि! अल्पषोढा को पहले कहे मार्ग से करे; फिर समाहित होकर, देवताभाव की सिद्धि के लिए, आगे कही जाने वाली विधि से महाषोढा नामक न्यास करे।

पदपाठ अल्पषोढां कुलेशानि — अल्प षोढा, हे कुलेशानि · कुर्यात् पूर्वोक्तवर्त्मना — पूर्वोक्त मार्ग से करे · महाषोढाह्वयं न्यासं — महाषोढा नामक न्यास · ततः कुर्यात् समाहितः — फिर समाहित होकर करे · वक्ष्यमाणेन विधिना — आगे कही जाने वाली विधि से · देवताभावसिद्धये — देवता-भाव की सिद्धि के लिए

यस्य कस्यापि नैवोक्तं तव स्नेहाद्वदाम्यहम् ।

प्रपञ्चो भुवनं मूर्तिर्मन्त्रदेवतमातरः ।

२०

महाषोढाह्वयो न्यासः सर्वन्यासोत्तमोत्तमः ॥ २० ॥

जो किसी को नहीं कहा गया, वह तुम्हारे स्नेह से कहता हूँ। प्रपंच, भुवन, मूर्ति, मन्त्र, देवता और मातृका — इन छह से बना महाषोढा नामक न्यास सब न्यासों में उत्तमोत्तम है।

पदपाठ यस्य कस्यापि नैवोक्तं — जिस-किसी को कभी नहीं कहा · तव स्नेहाद्वदाम्यहम् — तुम्हारे स्नेह से मैं कहता हूँ · प्रपञ्चो भुवनं मूर्तिः — प्रपंच, भुवन, मूर्ति · मन्त्रदेवतमातरः — मन्त्र, देवता, मातृ · महाषोढाह्वयो न्यासः — (ये छह) महाषोढा नामक न्यास हैं · सर्वन्यासोत्तमोत्तमः — सब न्यासों में उत्तमोत्तम

तत्रादौ परमेशानि प्रपञ्चन्यास उच्यते ।

२१

प्रपञ्चद्वीपजलधिगिरिपत्तनपीठकाः ॥ २१ ॥

इनमें पहले, हे परमेशानि! प्रपंच-न्यास कहा जाता है। प्रपंच, द्वीप, समुद्र, पर्वत, नगर, पीठ,

पदपाठ तत्रादौ परमेशानि — उनमें पहले, हे परमेशानि · प्रपञ्चन्यास उच्यते — प्रपंच-न्यास कहा जाता है · प्रपञ्चद्वीपजलधि — प्रपंच, द्वीप, समुद्र · गिरिपत्तनपीठकाः — पर्वत, नगर, पीठ

क्षेत्रं वनाश्रमगुहानदीचत्वरकोद्भिदः ।

२२

स्वेदाण्डजजरायुजा इत्युक्तास्ते हि षोडश ॥ २२ ॥

क्षेत्र, वन, आश्रम, गुफा, नदी, चौराहे, उद्भिज, और स्वेदज, अण्डज, जरायुज — ये सोलह कहे गये हैं।

पदपाठ क्षेत्रं वनाश्रमगुहा — क्षेत्र, वन, आश्रम, गुहा · नदीचत्वरकोद्भिदः — नदी, चौराहे, उद्भिज (वनस्पति) · स्वेदाण्डजजरायुजा — स्वेदज, अण्डज, जरायुज · इत्युक्तास्ते हि षोडश — ये सोलह कहे गए हैं

श्रीर्माया कमला विष्णुवल्लभा पद्मधारिणी ।

२३

समुद्रतनया लोकमाता कमलवासिनी ॥ २३ ॥

श्री, माया, कमला, विष्णुवल्लभा, पद्मधारिणी, समुद्रतनया, लोकमाता, कमलवासिनी,

पदपाठ श्रीर्माया कमला — श्री, माया, कमला · विष्णुवल्लभा पद्मधारिणी — विष्णुवल्लभा, पद्मधारिणी · समुद्रतनया लोकमाता — समुद्रतनया, लोकमाता · कमलवासिनी — कमलवासिनी

इन्दिरा मा रमा पद्मा तथा नारायणप्रिया ।

२४

सिद्धलक्ष्मी राजलक्ष्मीर्महालक्ष्मीरितीरिताः ।

शक्तयस्तु प्रपञ्चानां स्वराणामधिदेवताः ॥ २४ ॥

इन्दिरा, मा, रमा, पद्मा, नारायणप्रिया, सिद्धलक्ष्मी, राजलक्ष्मी, महालक्ष्मी — ये नाम कहे गये हैं: सोलह प्रपञ्चों की शक्तियाँ, स्वर्गों की अधिदेवताएँ।

पदपाठ इन्दिरा मा रमा पद्मा — इन्दिरा, मा, रमा, पद्मा · तथा नारायणप्रिया — और नारायणप्रिया · सिद्धलक्ष्मी राजलक्ष्मीः — सिद्धलक्ष्मी, राजलक्ष्मी · महालक्ष्मीरितीरिताः — महालक्ष्मी — ये नाम कहे गए हैं · शक्तयस्तु प्रपञ्चानां — ये (सोलह) प्रपञ्चों की शक्तियाँ हैं · स्वराणामधिदेवताः — स्वर्गों की अधिदेवता

लवस्त्रुटिः कला काष्ठा निमेषः श्वास एव हि ।

२५

घटिका च मुहूर्तश्च प्रहरो दिवसस्तथा ॥ २५॥

लव, त्रुटि, कला, काष्ठा, निमेष, श्वास, घटिका, मुहूर्त, प्रहर, दिवस,

पदपाठ लवस्त्रुटिः कला काष्ठा — लव, त्रुटि, कला, काष्ठा · निमेषः श्वास एव हि — निमेष और श्वास · घटिका च मुहूर्तश्च — घटिका और मुहूर्त · प्रहरो दिवसस्तथा — प्रहर और दिवस

सन्ध्या रात्रिस्तिथिश्चैव वारो नक्षत्रमेव च ।

२६

योगश्च करणं पक्षौ मासो राशिर्ऋतुस्तथा ॥ २६॥

सन्ध्या, रात्रि, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, दोनों पक्ष, मास, राशि, ऋतु,

पदपाठ सन्ध्या रात्रिस्तिथिश्चैव — सन्ध्या, रात्रि और तिथि · वारो नक्षत्रमेव च — वार और नक्षत्र · योगश्च करणं पक्षौ — योग, करण, दो पक्ष · मासो राशिर्ऋतुस्तथा — मास, राशि, ऋतु

अयनं वत्सरयुगप्रलयाः पञ्चविंशतिः ।

२७

एतेषां स्थाननियमो हृदयान्तः समीरितः ॥ २७॥

अयन, वत्सर, युग और प्रलय — ये पच्चीस (काल के भेद) हैं। इनके स्थान का नियम हृदय के भीतर कहा गया है।

पदपाठ अयनं वत्सरयुग — अयन, वर्ष, युग · प्रलयाः पञ्चविंशतिः — और प्रलय — पच्चीस · एतेषां स्थाननियमो — इनके स्थान का नियम · हृदयान्तः समीरितः — हृदय के भीतर कहा गया है

आर्योमा चण्डिका दुर्गा शिवाऽपर्णाऽम्बिका सती ।

ईश्वरी शाम्भवीशानी पार्वती सर्वमङ्गला ॥ २८ ॥

२८

आर्या, उमा, चण्डिका, दुर्गा, शिवा, अपर्णा, अम्बिका, सती, ईश्वरी, शाम्भवी, ईशानी, पार्वती, सर्वमङ्गला,

पदपाठ आर्योमा चण्डिका दुर्गा — आर्या, उमा, चण्डिका, दुर्गा · शिवाऽपर्णाऽम्बिका सती — शिवा, अपर्णा, अम्बिका, सती · ईश्वरी शाम्भवीशानी — ईश्वरी, शाम्भवी, ईशानी · पार्वती सर्वमङ्गला — पार्वती, सर्वमङ्गला

दाक्षायणी हैमवती महामाया महेश्वरी ।

मृडानी चैव रुद्राणी सर्वाणी परमेश्वरी ॥ २९ ॥

२९

दाक्षायणी, हैमवती, महामाया, महेश्वरी, मृडानी, रुद्राणी, शर्वाणी, परमेश्वरी,

पदपाठ दाक्षायणी हैमवती — दाक्षायणी, हैमवती · महामाया महेश्वरी — महामाया, महेश्वरी · मृडानी चैव रुद्राणी — मृडानी और रुद्राणी · सर्वाणी परमेश्वरी — शर्वाणी, परमेश्वरी

काली कात्यायनी गौरी भवानीति समीरिता ।

शक्तयः स्युर्लवादीनां स्पर्शानामधिदेवताः ।

३०

एतासां स्थाननियमो हृदयान्तः समीरितः ॥ ३० ॥

काली, कात्यायनी, गौरी, भवानी — ये नाम कहे गये हैं: लव आदि की शक्तियाँ, स्पर्श वर्णों (क से म) की अधिदेवताएँ। इनके स्थान का नियम भी हृदय के भीतर कहा गया है।

पदपाठ काली कात्यायनी गौरी — काली, कात्यायनी, गौरी · भवानीति समीरिता — भवानी — ये नाम कहे गए हैं · शक्तयः स्युर्लवादीनां — ये लव आदि की शक्तियाँ हैं · स्पर्शानामधिदेवताः — स्पर्श वर्णों (क से म) की अधिदेवता · एतासां स्थाननियमो — इनके स्थान का नियम · हृदयान्तः समीरितः — हृदय के भीतर कहा गया है

पञ्चभूतानि तन्मात्रं ज्ञानकर्मेन्द्रियाणि च ।

३१

गुणान्तःकरणावस्था ध्यायेद्दोषान् दशानिलान् ॥ ३१ ॥

पाँच भूत, तन्मात्राएँ, ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ, गुण, अन्तःकरण, अवस्थाएँ, दोष और दस वायु — इनका ध्यान करे —

पदपाठ पञ्चभूतानि तन्मात्रं — पाँच भूत, तन्मात्राएँ · ज्ञानकर्मेन्द्रियाणि च — ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ · गुणान्तःकरणावस्था — गुण, अन्तःकरण, अवस्थाएँ · ध्यायेद्दोषान् दशानिलान् — दोषों (वात-पित्त-कफ) और दस वायुओं का ध्यान करे

ब्राह्मी वागीश्वरी वाणी सावित्री च सरस्वती ।

गायत्री वाक्प्रदा पश्चात् सारदा भारती प्रिये ।

३२

विद्यात्मिका पञ्चभूतव्यापकानामधीश्वराः ॥ ३२ ॥

ब्राह्मी, वागीश्वरी, वाणी, सावित्री, सरस्वती, गायत्री, वाक्प्रदा, फिर सारदा, भारती, हे प्रिये! और विद्यात्मिका — ये पाँच भूत आदि व्यापकों की अधीश्वरियाँ हैं।

पदपाठ ब्राह्मी वागीश्वरी वाणी — ब्राह्मी, वागीश्वरी, वाणी · सावित्री च सरस्वती — सावित्री और सरस्वती · गायत्री वाक्प्रदा पश्चात् — गायत्री, वाक्प्रदा, फिर · सारदा भारती प्रिये — सारदा, भारती, हे प्रिये · विद्यात्मिका पञ्चभूत — विद्यात्मिका — पाँच भूत · व्यापकानामधीश्वराः — आदि व्यापकों की ये अधीश्वरी हैं

वाग्भवं भुवनेशीञ्च लक्ष्मीबीजं त्रितारकम् ।

त्रितारमूलविद्यान्ते मातृकाक्षरतः परम् ॥ ३३ ॥

३३

वाग्भव, भुवनेशी और लक्ष्मी बीज — ये "त्रितार" हैं; त्रितार और मूलविद्या के बाद मातृका का अक्षर,

पदपाठ वाग्भवं भुवनेशीञ्च — वाग्भव, भुवनेशी (बीज) · लक्ष्मीबीजं त्रितारकम् — और लक्ष्मी-बीज — "त्रितार" · त्रितारमूलविद्यान्ते — त्रितार और मूलविद्या के अन्त में · मातृकाक्षरतः परम् — फिर मातृका का अक्षर

वदेत् प्रपञ्चरूपायै श्रियै नम इति क्रमात् ।

प्रपञ्चादिभिरायोज्य वर्णान् शक्तीर्नियोजयेत् ।

३४

मातृकान्याससम्प्रोक्तस्थानेष्वेवं न्यसेत् प्रिये ॥ ३४ ॥

और क्रम से "प्रपञ्चरूपायै श्रियै नमः" कहे। प्रपञ्च आदि के साथ जोड़कर वर्णों और शक्तियों को नियोजित करे, और हे प्रिये! मातृका-न्यास में कहे स्थानों पर इस प्रकार न्यास करे।

पदपाठ वदेत् प्रपञ्चरूपायै — "प्रपञ्चरूपायै" कहे · श्रियै नम इति क्रमात् — "श्रियै नमः" — इस क्रम से · प्रपञ्चादिभिरायोज्य — प्रपञ्च आदि से जोड़कर · वर्णान् शक्तीर्नियोजयेत् — वर्णों और शक्तियों को नियोजित करे · मातृकान्याससम्प्रोक्त — मातृकान्यास के कहे गए · स्थानेष्वेवं न्यसेत् प्रिये — स्थानों में इस प्रकार न्यास करे, हे प्रिये

त्रितारमूलसकलप्रपञ्चादिस्वरूपतः ।

आर्ये पराम्बादेव्यै नम उक्त्वा व्यापकं न्यसेत् ॥ ३५॥

३५

फिर त्रितार, मूल, "सकल प्रपञ्चादि स्वरूप, आर्ये पराम्बादेव्यै नमः" कहकर व्यापक न्यास करे।

पदपाठ त्रितारमूलसकल — त्रितार, मूल, सकल · प्रपञ्चादिस्वरूपतः — "प्रपञ्च आदि स्वरूप से" · आर्ये पराम्बादेव्यै — "आर्ये पराम्बादेव्यै" · नम उक्त्वा व्यापकं न्यसेत् — "नमः" कहकर व्यापक न्यास करे

प्रपञ्चन्यास एव स्याद् भुवनन्यास उच्यते ।

त्रितारमूलमन्त्रान्ते अं आं इं अतलं वदेत् ॥ ३६॥

३६

इतना प्रपञ्च-न्यास है; अब भुवन-न्यास कहा जाता है। त्रितार और मूलमन्त्र के बाद "अं आं इं अतल" कहे,

पदपाठ प्रपञ्चन्यास एव स्यात् — इतना ही प्रपञ्च-न्यास है · भुवनन्यास उच्यते — (अब) भुवन-न्यास कहा जाता है · त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · अं आं इं अतलं वदेत् — "अं आं इं अतल" कहे

लोकञ्च निलयञ्चैव शतकोटिपदं ततः ।

गुह्याद्या योगिनी मूलदेवतान्तं वदेत् प्रिये ॥ ३७॥

३७

"लोक" और "निलय", फिर "शतकोटि" पद, फिर गुह्या नामक योगिनी, इस प्रकार "मूलदेवता" तक कहे, हे प्रिये!

पदपाठ लोकञ्च निलयञ्चैव — "लोक" और "निलय" · शतकोटिपदं ततः — फिर "शतकोटि" पद · गुह्याद्या योगिनी — गुह्या नामक योगिनी · मूलदेवतान्तं वदेत् प्रिये — "मूलदेवता" तक कहे, हे प्रिये

वदेदाधारशक्त्यम्बादेव्यै च पादयोर्न्यसेत् ।

ई उं ऊं वितलं गुह्यतरं चानन्तसंज्ञकम् ।

३८

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य गुल्फयोर्देवि विन्यसेत् ॥ ३८ ॥

"आधारशक्त्यम्बादेव्यै" कहकर पैरों में न्यास करे। "ई उं ऊं वितल, गुह्यतर, अनन्त नामक" — शेष पहले की तरह कहकर, हे देवि! गुल्फों में न्यास करे।

पदपाठ वदेदाधारशक्त्यम्बा — "आधारशक्ति-अम्बा" कहे · देव्यै च पादयोर्न्यसेत् — "देव्यै", और पैरों में न्यास करे · ई उं ऊं वितलं — "ई उं ऊं वितल" · गुह्यतरं चानन्तसंज्ञकम् — "गुह्यतर" और अनन्त नामक · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · गुल्फयोर्देवि विन्यसेत् — गुल्फों (टखनों) में न्यास करे, हे देवि

ॠं ॠं लं सुतलज्यातिगुह्यं चाचिन्त्यसंज्ञकम् ।

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य जङ्घयोर्विन्यसेत् प्रिये ॥ ३९ ॥

३९

"ॠं ॠं लं सुतल, अतिगुह्य, अचिन्त्य नामक" — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! जंघाओं में न्यास करे।

पदपाठ ॠं ॠं लं सुतलज्च — "ॠं ॠं लं सुतल" · अतिगुह्यं चाचिन्त्यसंज्ञकम् — "अतिगुह्य" और अचिन्त्य नामक · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · जङ्घयोर्विन्यसेत् प्रिये — जंघाओं (पिंडलियों) में न्यास करे, हे प्रिये

लृं एं ऐं महातलज्च महागुह्यं पदं ततः ।

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य देवि जान्वोः प्रविन्यसेत् ॥ ४० ॥

४०

"लृं एं ऐं महातल, महागुह्य" पद — शेष पहले की तरह कहकर, हे देवि! घुटनों में न्यास करे।

पदपाठ लृं एं ऐं महातलज्च — "लृं एं ऐं महातल" · महागुह्यं पदं ततः — फिर "महागुह्य" पद · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · देवि जान्वोः प्रविन्यसेत् — हे देवि, घुटनों में न्यास करे

ओं औं तलातलं देवि परं गुह्याभिधानकम् ।

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य ऊर्वोर्देवेशि विन्यसेत् ॥ ४१ ॥

४१

"ओं औं तलातल, परम, गुह्य नामक" — शेष पहले की तरह कहकर, हे देवेशि! जाँघों में न्यास करे।

पदपाठ ओं औं तलातलं देवि — "ओं औं तलातल", हे देवि · परं गुह्याभिधानकम् — "परम", गुह्य नामक · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · ऊर्वोर्देवेशि विन्यसेत् — ऊरुओं में न्यास करे, हे देवेशि

अं अः रसातलञ्चैव रहस्यं ज्ञानसंज्ञकम् ।

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य गुह्यदेशे प्रविन्यसेत् ॥ ४२ ॥

४२

"अं अः रसातल, रहस्य, ज्ञान नामक" — शेष पहले की तरह कहकर, गुह्यदेश में न्यास करे।

पदपाठ अं अः रसातलञ्चैव — "अं अः रसातल" · रहस्यं ज्ञानसंज्ञकम् — "रहस्य", ज्ञान नामक · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · गुह्यदेशे प्रविन्यसेत् — गुह्यस्थान में न्यास करे

कवर्गेणापि पातालं लोकेति निलयेति च ।

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य मूलाधारे तु विन्यसेत् ॥ ४३ ॥

४३

कवर्ग के साथ "पाताल", "लोक", "निलय" — शेष पहले की तरह कहकर, मूलाधार में न्यास करे।

पदपाठ कवर्गेणापि पातालं — कवर्ग से "पाताल" · लोकेति निलयेति च — "लोक" और "निलय" · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · मूलाधारे तु विन्यसेत् — मूलाधार में न्यास करे

चवर्गं भूतलज्चेति रहस्यं डाकिनीमपि ।

४४

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य स्वाधिष्ठाने न्यसेत् प्रिये ॥ ४४ ॥

चवर्ग, "भूतल", "रहस्य", और डाकिनी — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! स्वाधिष्ठान में न्यास करे।

पदपाठ चवर्गं भूतलज्चेति — चवर्ग, "भूतल" · रहस्यं डाकिनीमपि — "रहस्य", डाकिनी भी · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · स्वाधिष्ठाने न्यसेत् प्रिये — स्वाधिष्ठान में न्यास करे, हे प्रिये

टवर्गेण भुवो लोकं रहस्यं राकिणीमपि ।

४५

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य नाभौ च विन्यसेत् प्रिये ॥ ४५ ॥

टवर्ग के साथ "भुवर्लोक", "रहस्य", और राकिणी — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! नाभि में न्यास करे।

पदपाठ टवर्गेण भुवो लोकं — टवर्ग से "भुवर्लोक" · रहस्यं राकिणीमपि — "रहस्य", राकिणी भी · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · नाभौ च विन्यसेत् प्रिये — नाभि में न्यास करे, हे प्रिये

तवर्गं स्वश्च परमरहस्यं लाकिनीमपि ।

४६

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य हृदये विन्यसेत् प्रिये ॥ ४६ ॥

तवर्ग, "स्वर्", "परम रहस्य", और लाकिनी — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! हृदय में न्यास करे।

पदपाठ तवर्गं स्वश्च — तवर्ग, "स्वः" · परमरहस्यं लाकिनीमपि — "परम रहस्य", लाकिनी भी · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · हृदये विन्यसेत् प्रिये — हृदय में न्यास करे, हे प्रिये

पवर्गञ्च महर्लोकं रहस्यं काकिनीमपि ।

४७

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य तालुमूले न्यसेत् प्रिये ॥ ४७ ॥

पवर्ग, "महर्लोक", "रहस्य", और काकिनी — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! तालुमूल में न्यास करे।

पदपाठ पवर्गञ्च महर्लोकं — पवर्ग, "महर्लोक" · रहस्यं काकिनीमपि — "रहस्य", काकिनी भी · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · तालुमूले न्यसेत् प्रिये — तालुमूल में न्यास करे, हे प्रिये

यवर्गञ्च जनो गुप्ततरञ्च शाकिनीमपि ।

४८

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य आज्ञायाञ्च न्यसेत् प्रिये ॥ ४८ ॥

यवर्ग, "जनलोक", "गुप्ततर", और शाकिनी — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! आज्ञा में न्यास करे।

पदपाठ यवर्गञ्च जनो — यवर्ग, "जन(लोक)" · गुप्ततरञ्च शाकिनीमपि — "गुप्ततर", शाकिनी भी · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · आज्ञायाञ्च न्यसेत् प्रिये — आज्ञा में न्यास करे, हे प्रिये

शवर्गञ्च तपश्चातिगुह्यञ्च हाकिनीमपि ।

४९

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य ललाटे विन्यसेत् प्रिये ॥ ४९ ॥

शवर्ग, "तपोलोक", "अतिगुह्य", और हाकिनी — शेष पहले की तरह कहकर, हे प्रिये! ललाट में न्यास करे।

पदपाठ शवर्गञ्च तपश्च — शवर्ग, "तपः" · अतिगुह्यञ्च हाकिनीमपि — "अतिगुह्य", हाकिनी भी · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · ललाटे विन्यसेत् प्रिये — ललाट में न्यास करे, हे प्रिये

लं क्षं सत्यं महागुह्यं यक्षिणीमपि च प्रिये ।

शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य ब्रह्मरन्ध्रे च विन्यसेत् ॥ ५० ॥

५०

"लं क्षं सत्यलोक, महागुह्य" और यक्षिणी, हे प्रिये! — शेष पहले की तरह कहकर, ब्रह्मरन्ध्रे में न्यास करे।

पदपाठ लं क्षं सत्यं महागुह्यं — "लं क्षं सत्य, महागुह्य" · यक्षिणीमपि च प्रिये — और यक्षिणी, हे प्रिये · शेषञ्च पूर्ववत् प्रोच्य — शेष पूर्ववत् कहकर · ब्रह्मरन्ध्रे च विन्यसेत् — ब्रह्मरन्ध्रे में न्यास करे

त्रितारमूलमन्त्रान्ते चतुर्दशभुवं वदेत् ।

नाधिपायै श्रीपरायै देव्यै च व्यापकं न्यसेत् ॥ ५१ ॥

५१

त्रितार और मूलमन्त्र के बाद "चतुर्दश भुवनों की अधिपा श्रीपरा देव्यै" कहकर व्यापक न्यास करे।

पदपाठ त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · चतुर्दशभुवं वदेत् — "चतुर्दश भुवन" कहे · नाधिपायै श्रीपरायै — "(उनकी) अधिपा श्रीपरा" · देव्यै च व्यापकं न्यसेत् — "देव्यै" — और व्यापक न्यास करे

कृत्वैवं भुवनन्यासं मूर्तिन्यासमथाचरेत् ।

केशवनारायणमाधवगोविन्दविष्णवः ॥ ५२ ॥

५२

इस प्रकार भुवन-न्यास करके फिर मूर्ति-न्यास करे। केशव, नारायण, माधव, गोविन्द, विष्णु,

पदपाठ कृत्वैवं भुवनन्यासं — इस प्रकार भुवन-न्यास कर · मूर्तिन्यासमथाचरेत् — फिर मूर्ति-न्यास करे · केशवनारायणमाधव — केशव, नारायण, माधव · गोविन्दविष्णवः — गोविन्द, विष्णु

मधुसूदनसंज्ञश्च स्यात्त्रिविक्रमवामनौ ।

श्रीधरश्च हृषीकेशः पद्मनाभो दामोदरः ।

५३

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नश्चानिरुद्धकः ॥ ५३ ॥

मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध (स्वरों की सोलह मूर्तियाँ हैं)।

पदपाठ मधुसूदनसंज्ञश्च — मधुसूदन नामक · स्यात्त्रिविक्रमवामनौ — त्रिविक्रम और वामन · श्रीधरश्च हृषीकेशः — श्रीधर और हृषीकेश · पद्मनाभो दामोदरः — पद्मनाभ, दामोदर · वासुदेवः सङ्कर्षणः — वासुदेव, संकर्षण · प्रद्युम्नश्चानिरुद्धकः — प्रद्युम्न और अनिरुद्ध

अक्षोल्केन्द्राणी चेशानी चोग्रोर्ध्वनयना तथा ।

५४

ऋद्धिश्च रूपिणी लूका नूनदोषैकनायिका ॥ ५४ ॥

अक्षोल्का, इन्द्राणी, ईशानी, उग्रा, ऊर्ध्वनयना, ऋद्धि, रूपिणी, लूका, नूनदोषैकनायिका,

पदपाठ अक्षोल्केन्द्राणी चेशानी — अक्षोल्का, इन्द्राणी, ईशानी · चोग्रोर्ध्वनयना तथा — उग्रा, ऊर्ध्वनयना · ऋद्धिश्च रूपिणी लूका — ऋद्धि, रूपिणी, लूका · नूनदोषैकनायिका — नूनदोषैकनायिका

ऐङ्कारिणी चौघवती सर्वकामाञ्जनप्रभा ।

५५

अस्थिमालाधरा चेति सम्प्रोक्ताः स्वरदेवताः ॥ ५५ ॥

ऐंकारिणी, ओघवती, सर्वकामा, अंजनप्रभा, अस्थिमालाधरा — इस प्रकार स्वरों की देवताएँ कही गयी हैं।

पदपाठ ऐङ्कारिणी चौघवती — ऐंकारिणी, ओघवती · सर्वकामाञ्जनप्रभा — सर्वकामा, अंजनप्रभा · अस्थिमालाधरा चेति — अस्थिमालाधरा — इस प्रकार · सम्प्रोक्ताः स्वरदेवताः — स्वरों की देवता कही गई हैं

भवः शर्वोऽथ रुद्रश्च पशुपतिश्चोग्र एव च ।

महादेवस्तथा भीम ईशस्तत्पुरुषाह्वयः ।

५६

अघोरसद्योजातौ च वामदेव इतीरिताः ॥ ५६ ॥

भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम, ईश, तत्पुरुष, अघोर, सद्योजात और वामदेव — ये नाम कहे गये हैं (क से ड तक की बारह मूर्तियाँ)।

पदपाठ भवः शर्वोऽथ रुद्रश्च — भव, शर्व, रुद्र · पशुपतिश्चोग्र एव च — पशुपति और उग्र · महादेवस्तथा भीम — महादेव, भीम · ईशस्तत्पुरुषाह्वयः — ईश, तत्पुरुष नामक · अघोरसद्योजातौ च — अघोर और सद्योजात · वामदेव इतीरिताः — और वामदेव — ये नाम कहे गए

करभद्रा खगचला गरिमादिफलप्रदा ।

घण्टाधरोग्रनयना चन्द्रधर्त्री ततः परम् ।

५७

छन्दोमयी जगत्स्थाना ज्वलत्तारा ततः परम् ॥ ५७ ॥

करभद्रा, खगचला, गरिमादिफलप्रदा, घण्टाधरा, उग्रनयना, फिर चन्द्रधर्त्री, छन्दोमयी, जगत्स्थाना, फिर ज्वलत्तारा,

पदपाठ करभद्रा खगचला — करभद्रा, खगचला · गरिमादिफलप्रदा — गरिमादिफलप्रदा · घण्टाधरोग्रनयना — घण्टाधरा, उग्रनयना · चन्द्रधर्त्री ततः परम् — फिर चन्द्रधर्त्री · छन्दोमयी जगत्स्थाना — छन्दोमयी, जगत्स्थाना · ज्वलत्तारा ततः परम् — फिर ज्वलत्तारा

ज्ञानदा च टङ्कधरा धृतिर्द्वादश ईरिताः ।

५८

कभादीनां ठडान्तानां वर्णानां देवतास्त्विमाः ॥ ५८ ॥

ज्ञानदा, टंकधरा और धृति — बारह कही गयी हैं: ये क-ख से लेकर ठ-ड तक के वर्णों की देवताएँ हैं।

पदपाठ ज्ञानदा च टङ्कधरा — ज्ञानदा और टंकधरा · धृतिर्द्वादश ईरिताः — धृति — बारह कही गई हैं · कभादीनां ठडान्तानां — क, ख आदि से ठ, ड तक के · वर्णानां देवतास्त्विमाः — वर्णों की ये देवता हैं

ब्रह्मा प्रजापतिर्वेधाः परमेष्ठी पितामहः ।

विधाता च विरिञ्चिश्च स्रष्टा च चतुराननः ।

५९

हिरण्यगर्भ इत्युक्ताः क्रमाद् ब्रह्मादयो दश ॥ ५९ ॥

ब्रह्मा, प्रजापति, वेधा, परमेष्ठी, पितामह, विधाता, विरिंचि, स्रष्टा, चतुरानन और हिरण्यगर्भ — इस क्रम से ब्रह्मा आदि दस कहे गये हैं (दश से म तक की मूर्तियाँ)।

पदपाठ ब्रह्मा प्रजापतिर्वेधाः — ब्रह्मा, प्रजापति, वेधा · परमेष्ठी पितामहः — परमेष्ठी, पितामह · विधाता च विरिञ्चिश्च — विधाता और विरिंचि · स्रष्टा च चतुराननः — स्रष्टा और चतुरानन · हिरण्यगर्भ इत्युक्ताः — हिरण्यगर्भ — ये कहे गए · क्रमाद् ब्रह्मादयो दश — क्रम से ब्रह्मा आदि दस

यक्षिणी रञ्जिनी लक्ष्मीर्वज्रिणी शशिधारिणी ।

षडाधारलया सर्वनायिका हसितानना ।

६०

ललिता च क्षमा चेति प्रोक्ता याद्यण्देवताः ॥ ६० ॥

यक्षिणी, रंजिनी, लक्ष्मी, वज्रिणी, शशिधारिणी, षडाधारलया, सर्वनायिका, हसितानना, ललिता और क्षमा — इस प्रकार य आदि वर्णों की देवताएँ कही गयी हैं।

पदपाठ यक्षिणी रञ्जिनी — यक्षिणी, रंजिनी · लक्ष्मीर्वज्रिणी शशिधारिणी — लक्ष्मी, वज्रिणी, शशिधारिणी · षडाधारलया सर्वनायिका — षडाधारलया, सर्वनायिका · हसितानना — हसितानना · ललिता च क्षमा चेति — ललिता और क्षमा — इस प्रकार · प्रोक्ता याद्यण्देवताः — य आदि वर्णों की देवता कही गई

त्रितारमूलमन्त्रान्ते स्वरान् विष्णून् सशक्तिकान् ।
चतुर्थ्या नमसा युक्तान् मस्तके चानने न्यसेत् ॥ ६१॥

६१

त्रितार और मूलमन्त्र के बाद स्वरों को — शक्तिसहित विष्णु-मूर्तियों के रूप में,
चतुर्थी और "नमः" के साथ — मस्तक और मुख में न्यास करे,

पदपाठ त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · स्वरान् विष्णून् सशक्तिकान् — स्वरों को,
शक्ति-सहित विष्णुओं (के रूप में) · चतुर्थ्या नमसा युक्तान् — चतुर्थी और "नमः" से युक्त · मस्तके
चानने न्यसेत् — मस्तक और मुख में न्यास करे

सस्कन्धपार्श्वकट्यूरुजानुजङ्घापदेषु च ।
दक्षादिवामपर्यन्तं विन्यसेत् परमेश्वरि ॥ ६२॥

६२

और कन्धों, पार्श्वों, कटि, ऊरु, जानु, जंघा और पैरों में, दाहिनी ओर से बायीं ओर
तक, हे परमेश्वरि! न्यास करे।

पदपाठ सस्कन्धपार्श्वकट्यूरु — कन्धे, पार्श्व, कटि, ऊरु सहित · जानुजङ्घापदेषु च — घुटने, जंघा और पैरों
में · दक्षादिवामपर्यन्तं — दक्षिण से वाम तक · विन्यसेत् परमेश्वरि — न्यास करे, हे परमेश्वरि

कभाघर्णयुतान् मन्त्री भवादीन् शक्तिसंयुतान् ।

पादपार्श्वबाहुकण्ठपञ्चवक्त्रेषु विन्यसेत् ।

६३

दशाधारेषु ब्रह्मादीन् यादिशक्तियुतान्यसेत् ॥ ६३ ॥

मन्त्री क-भ आदि वर्णों और शक्तियों सहित भव आदि को पैरों, पार्श्वों, भुजाओं, कण्ठ और पाँच मुखों में न्यास करे; और य आदि शक्तियों सहित ब्रह्मा आदि को दस आधारों में न्यास करे।

पदपाठ कभाघर्णयुतान् मन्त्री — क, भ आदि वर्णों से युक्त, मन्त्री · भवादीन् शक्तिसंयुतान् — भव आदि को शक्ति-सहित · पादपार्श्वबाहुकण्ठ — पैर, पार्श्व, बाहु, कण्ठ · पञ्चवक्त्रेषु विन्यसेत् — और पाँच मुखों में न्यास करे · दशाधारेषु ब्रह्मादीन् — दस आधारों में ब्रह्मा आदि को · यादिशक्तियुतान्यसेत् — य आदि शक्तियों से युक्त न्यास करे

त्रितारमूलमन्त्रान्ते श्रीत्रिमूर्त्यम्बिकां वदेत् ।

आर्ये पराम्बादेव्यै च नमसा व्यापकं न्यसेत् ।

६४

मूर्तिन्यासं विधायेत्थं मन्त्रन्यासं समाचरेत् ॥ ६४ ॥

त्रितार और मूलमन्त्र के बाद "श्रीत्रिमूर्त्यम्बिका, आर्ये पराम्बादेव्यै नमः" कहकर व्यापक न्यास करे। इस प्रकार मूर्ति-न्यास करके मन्त्र-न्यास करे।

पदपाठ त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · श्रीत्रिमूर्त्यम्बिकां वदेत् — "श्रीत्रिमूर्ति-अम्बिका" कहे · आर्ये पराम्बादेव्यै च — "आर्ये पराम्बादेव्यै" · नमसा व्यापकं न्यसेत् — "नमः" से व्यापक न्यास करे · मूर्तिन्यासं विधायेत्थं — इस प्रकार मूर्ति-न्यास करके · मन्त्रन्यासं समाचरेत् — मन्त्र-न्यास करे

त्रितारमूलं अं आं इं एकलक्षज्य कोटि च ।

६५

भेदश्च प्रणवाद्येकाक्षरात्माखिलमन्त्रतः ॥ ६५॥

त्रितार, मूल, "अं आं इं", "एक लाख और करोड़", "भेद", "प्रणव आदि एकाक्षर सब मन्त्रों के आत्मस्वरूप",

पदपाठ त्रितारमूलं अं आं इं — त्रितार, मूल, "अं आं इं" · एकलक्षज्य कोटि च — "एकलक्ष" और "कोटि" · भेदश्च प्रणवाद्येकाक्षर — "भेद", "प्रणव आदि एकाक्षर" · आत्माखिलमन्त्रतः — "अखिल मन्त्रात्मा"

ततोऽधिदेवतायै स्यात् सकलज्य फलप्रदाम् ।

६६

आर्ये तथैककूटेश्वर्यम्बादेव्यै नमो वदेत् ॥ ६६॥

फिर "अधिदेवता, सकल फलप्रदा, आर्ये, एककूटेश्वरी, अम्बादेव्यै नमः" — ऐसा कहे।

पदपाठ ततोऽधिदेवतायै स्यात् — फिर "अधिदेवतायै" · सकलज्य फलप्रदाम् — "सकल फलप्रदा" · आर्ये तथैककूटेश्वरी — "आर्ये", फिर "एककूटेश्वरी" · अम्बादेव्यै नमो वदेत् — "अम्बादेव्यै नमः" कहे

ई उं ऊं आदि हंसादि द्विकूटं पूर्ववत् परम् ।

६७

ॠं ॠं लं आदि वह्न्यादि त्रिकूटं पूर्ववत् परम् ॥ ६७॥

"ई उं ऊं", "हंस आदि", "द्विकूट" — शेष पहले की तरह; "ॠं ॠं लं", "वह्नि आदि", "त्रिकूट" — शेष पहले की तरह;

पदपाठ ई उं ऊं आदि हंसादि — "ई उं ऊं" आदि, "हंस" आदि · द्विकूटं पूर्ववत् परम् — "द्विकूट", शेष पूर्ववत् · ॠं ॠं लं आदि वह्न्यादि — "ॠं ॠं लं" आदि, "वह्नि" आदि · त्रिकूटं पूर्ववत् परम् — "त्रिकूट", शेष पूर्ववत्

लृं एं ऐं चतुर्लक्षं चन्द्रादि पूर्ववत् परम् ।

ओं औं अं अः पञ्चलक्षं सूर्यादि पूर्ववत् परम् ॥ ६८ ॥

६८

"लृं एं ऐं", "चार लाख", "चन्द्र आदि" — शेष पहले की तरह; "ओं औं अं अः",
"पाँच लाख", "सूर्य आदि" — शेष पहले की तरह;

पदपाठ लृं एं ऐं चतुर्लक्षं — "लृं एं ऐं चतुर्लक्षं" · चन्द्रादि पूर्ववत् परम् — "चन्द्र आदि", शेष पूर्ववत् · ओं
ओं औं अं अः पञ्चलक्षं — "ओं औं अं अः पञ्चलक्षं" · सूर्यादि पूर्ववत् परम् — "सूर्य आदि", शेष पूर्ववत्

कं खं गं चैव षड्लक्षं स्कन्दादि पूर्ववत् परम् ।

घं ङं चं सप्तलक्षं गणेशादि पूर्ववत् परम् ॥ ६९ ॥

६९

"कं खं गं", "छह लाख", "स्कन्द आदि" — शेष पहले की तरह; "घं ङं चं",
"सात लाख", "गणेश आदि" — शेष पहले की तरह;

पदपाठ कं खं गं चैव षड्लक्षं — "कं खं गं षड्लक्षं" · स्कन्दादि पूर्ववत् परम् — "स्कन्द आदि", शेष
पूर्ववत् · घं ङं चं सप्तलक्षं — "घं ङं चं सप्तलक्षं" · गणेशादि पूर्ववत् परम् — "गणेश आदि", शेष पूर्ववत्

छं जं झं अष्टलक्षं वटुकादि पूर्ववत् परम् ।

जं टं ठं नवलक्षञ्च ब्रह्मादि पूर्ववत् परम् ॥ ७० ॥

७०

"छं जं झं", "आठ लाख", "वटुक आदि" — शेष पहले की तरह; "जं टं ठं", "नौ
लाख", "ब्रह्मा आदि" — शेष पहले की तरह;

पदपाठ छं जं झं अष्टलक्षं — "छं जं झं अष्टलक्षं" · वटुकादि पूर्ववत् परम् — "वटुक आदि", शेष
पूर्ववत् · जं टं ठं नवलक्षञ्च — "जं टं ठं नवलक्षं" · ब्रह्मादि पूर्ववत् परम् — "ब्रह्मा आदि", शेष पूर्ववत्

डं ढं णं दशलक्षञ्च विष्णवादि पूर्ववत् परम् ।

७१

तं थं दं एकादशलक्षं रुद्रादि पूर्ववत् परम् ॥ ७१ ॥

"डं ढं णं", "दस लाख", "विष्णु आदि" — शेष पहले की तरह; "तं थं दं",
"ग्यारह लाख", "रुद्र आदि" — शेष पहले की तरह;

पदपाठ डं ढं णं दशलक्षञ्च — "डं ढं णं दशलक्ष" · विष्णवादि पूर्ववत् परम् — "विष्णु आदि", शेष
पूर्ववत् · तं थं दं एकादशलक्षं — "तं थं दं एकादशलक्ष" · रुद्रादि पूर्ववत् परम् — "रुद्र आदि", शेष
पूर्ववत्

धं नं पं द्वादशलक्षं वाण्यादि पूर्ववत् परम् ।

७२

फं बं भं त्रयोदशलक्षं लक्ष्म्यादि पूर्ववत् परम् ॥ ७२ ॥

"धं नं पं", "बारह लाख", "वाणी आदि" — शेष पहले की तरह; "फं बं भं",
"तेरह लाख", "लक्ष्मी आदि" — शेष पहले की तरह;

पदपाठ धं नं पं द्वादशलक्षं — "धं नं पं द्वादशलक्ष" · वाण्यादि पूर्ववत् परम् — "वाणी आदि", शेष
पूर्ववत् · फं बं भं त्रयोदशलक्षं — "फं बं भं त्रयोदशलक्ष" · लक्ष्म्यादि पूर्ववत् परम् — "लक्ष्मी आदि",
शेष पूर्ववत्

मं यं रं चतुर्दशलक्षं गौर्यादि पूर्ववत् परम् ।

लं वं शं पञ्चदशलक्षं दुर्गादि पूर्ववत् परम् ।

७३

षं सं हं लं क्षं षोडशलक्षं त्रिपुरादि च षोडश ॥ ७३॥

"मं यं रं", "चौदह लाख", "गौरी आदि" — शेष पहले की तरह; "लं वं शं", "पन्द्रह लाख", "दुर्गा आदि" — शेष पहले की तरह; "षं सं हं लं क्षं", "सोलह लाख", "त्रिपुरा आदि" — कुल सोलह।

पदपाठ मं यं रं चतुर्दशलक्षं — "मं यं रं चतुर्दशलक्षं" · गौर्यादि पूर्ववत् परम् — "गौरी आदि", शेष पूर्ववत् · लं वं शं पञ्चदशलक्षं — "लं वं शं पंचदशलक्षं" · दुर्गादि पूर्ववत् परम् — "दुर्गा आदि", शेष पूर्ववत् · षं सं हं लं क्षं षोडशलक्षं — "षं सं हं लं क्षं षोडशलक्षं" · त्रिपुरादि च षोडश — "त्रिपुरा आदि" — सोलह

अक्षरात्माखिलमन्त्राधिदेवतायै सकलं ततः ।

७४

तथा फलप्रदायै च षोडश कूटेश्वरी पुनः ॥ ७४॥

"अक्षरात्मक सब मन्त्रों की अधिदेवता", फिर "सकल", "फलप्रदा", फिर "षोडश कूटेश्वरी",

पदपाठ अक्षरात्माखिलमन्त्र — "अक्षरात्मा, अखिल मन्त्र" · अधिदेवतायै सकलं ततः — "अधिदेवतायै", फिर "सकल" · तथा फलप्रदायै च — "तथा फलप्रदायै" · षोडश कूटेश्वरी पुनः — "षोडश", फिर "कूटेश्वरी"

अम्बादेव्यै नमः प्रोक्तो मन्त्रन्यासो महेश्वरि ।

आधारलिङ्गयोर्नाभिहृत्कण्ठे नेत्रयोरपि ॥ ७५॥

७५

"अम्बादेव्यै नमः" — हे महेश्वरि! इस प्रकार मन्त्र-न्यास कहा गया। (इसके स्थान हैं) आधार, लिंग, नाभि, हृदय, कण्ठ, दोनों नेत्र,

पदपाठ अम्बादेव्यै नमः प्रोक्तो — "अम्बादेव्यै नमः" — इस प्रकार कहा गया · मन्त्रन्यासो महेश्वरि — मन्त्र-न्यास, हे महेश्वरि · आधारलिङ्गयोर्नाभि — मूलाधार, लिङ्ग, नाभि · हृत्कण्ठे नेत्रयोरपि — हृदय, कण्ठ, दोनों नेत्रों में भी

निबोधिकायामर्द्धेन्दौ बिन्दौ चैव कलापदे ।

उन्मन्यां विष्णुवक्त्रे च नादे नादान्त एव च ।

ध्रुवमण्डलदेशे च विन्यसेत् कुलनायिके ॥ ७६॥

७६

निबोधिका, अर्धेन्दु, बिन्दु, कलापद, उन्मनी, विष्णुवक्त्र, नाद, नादान्त और ध्रुवमण्डल के स्थान में — हे कुलनायिके! वहाँ न्यास करे।

पदपाठ निबोधिकायामर्द्धेन्दौ — निबोधिका में, अर्धचन्द्र में · बिन्दौ चैव कलापदे — बिन्दु में और कला-पद में · उन्मन्यां विष्णुवक्त्रे च — उन्मनी में, विष्णुवक्त्र में · नादे नादान्त एव च — नाद और नादान्त में · ध्रुवमण्डलदेशे च — और ध्रुवमण्डल प्रदेश में · विन्यसेत् कुलनायिके — न्यास करे, हे कुलनायिके

त्रितारमूलमन्त्रान्ते सर्वमन्त्रात्मिकापदम् ।

आर्ये पराम्बादेव्यै च हृदये व्यापकं न्यसेत् ॥ ७७॥

७७

त्रितार और मूलमन्त्र के बाद "सर्वमन्त्रात्मिका, आर्ये पराम्बादेव्यै" (कहकर) हृदय में व्यापक न्यास करे।

पदपाठ त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · सर्वमन्त्रात्मिकापदम् — "सर्वमन्त्रात्मिका" पद · आर्ये पराम्बादेव्यै च — "आर्ये पराम्बादेव्यै" · हृदये व्यापकं न्यसेत् — हृदय में व्यापक न्यास करे

मन्त्रन्यासं विधायेत्थं दैवतन्यासमाचरेत् ।

७८

त्रितारमूलमन्त्रान्ते अं आं सहस्रकोटि च ॥ ७८ ॥

इस प्रकार मन्त्र-न्यास करके देवता-न्यास करे। त्रितार और मूलमन्त्र के बाद "अं आं", "सहस्र कोटि",

पदपाठ मन्त्रन्यासं विधायेत्थं — इस प्रकार मन्त्र-न्यास करके · दैवतन्यासमाचरेत् — देवता-न्यास करे · त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · अं आं सहस्रकोटि च — "अं आं", "सहस्रकोटि"

योगिनीकुलशब्दान्ते सेवितायै पदं वदेत् ।

७९

निवृत्यम्बापदं देव्यै नम इत्युच्यरेत् प्रिये ॥ ७९ ॥

"योगिनीकुल" शब्द के बाद "सेवितायै" पद कहे, फिर "निवृत्यम्बा देव्यै नमः" — ऐसा उच्चारण करे, हे प्रिये!

पदपाठ योगिनीकुलशब्दान्ते — "योगिनीकुल" शब्द के अन्त में · सेवितायै पदं वदेत् — "सेवितायै" पद कहे · निवृत्यम्बापदं — "निवृत्ति-अम्बा" पद · देव्यै नम इत्युच्यरेत् प्रिये — "देव्यै नमः" उच्चारण करे, हे प्रिये

इं ई योगिनीप्रतिष्ठां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ।

८०

उं ऊं तपस्विविद्याञ्च शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ॥ ८० ॥

"इं ई", योगिनी प्रतिष्ठा — शेष पहले की तरह; "उं ऊं", तपस्वी और विद्या — शेष पहले की तरह;

पदपाठ इं ई योगिनीप्रतिष्ठां — "इं ई", योगिनी प्रतिष्ठा · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · उं ऊं तपस्विविद्याञ्च — "उं ऊं", तपस्वी और विद्या · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

ऋं ऋं शान्तं तथा शान्तिं शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ।

लं लं मुनिं शान्त्यतीतां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ॥ ८१ ॥

८१

"ऋं ऋं", शान्त और शान्ति — शेष पहले की तरह; "लं लं", मुनि और शान्त्यतीता — शेष पहले की तरह;

पदपाठ ऋं ऋं शान्तं तथा शान्तिं — "ऋं ऋं", शान्त और शान्ति · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · लं लं मुनिं शान्त्यतीतां — "लं लं", मुनि और शान्त्यतीता · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

एं ऐं देवज्ज हल्लेखां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ।

ओं औं राक्षसशब्दान्ते गगनां पूर्ववत् परम् ।

८२

अं अः विद्याधरं रक्तां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ॥ ८२ ॥

"एं ऐं", देव और हल्लेखा — शेष पहले की तरह; "ओं औं", "राक्षस" शब्द के बाद गगना — शेष पहले की तरह; "अं अः", विद्याधर और रक्ता — शेष पहले की तरह;

पदपाठ एं ऐं देवज्ज हल्लेखां — "एं ऐं", देव और हल्लेखा · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · ओं औं राक्षसशब्दान्ते गगनां — "ओं औं", "राक्षस" शब्द के अन्त में गगना · पूर्ववत् परम् — शेष पूर्ववत् · अं अः विद्याधरं रक्तां — "अं अः", विद्याधर और रक्ता · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

कं खं सिद्धिमहोच्छुष्मां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ।

८३

गं घं साध्यकरालाज्यं शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ॥ ८३ ॥

"कं खं", सिद्धि और महोच्छुष्मा — शेष पहले की तरह; "गं घं", साध्य और कराला — शेष पहले की तरह;

पदपाठ कं खं सिद्धिमहोच्छुष्मां — "कं खं", सिद्धि और महोच्छुष्मा · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · गं घं साध्यकरालाज्यं — "गं घं", साध्य और कराला · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

ङं चं साप्सरसं जयां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ।

८४

छं जं गन्धर्वविजयां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ॥ ८४ ॥

"ङं चं", अप्सरा और जया — शेष पहले की तरह; "छं जं", गन्धर्व और विजया — शेष पहले की तरह;

पदपाठ ङं चं साप्सरसं जयां — "ङं चं", अप्सरा और जया · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · छं जं गन्धर्वविजयां — "छं जं", गन्धर्व और विजया · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

झं जं गुह्यकशब्दान्ते अजितां शेषं पूर्ववत् परम् ।

८५

टं ठं यक्षापराजितां शेषं पूर्ववदुच्यरेत् ॥ ८५ ॥

"झं जं", "गुह्यक" शब्द के बाद अजिता — शेष पहले की तरह; "टं ठं", यक्ष और अपराजिता — शेष पहले की तरह;

पदपाठ झं जं गुह्यकशब्दान्ते — "झं जं", "गुह्यक" शब्द के अन्त में · अजितां शेषं पूर्ववत् परम् — अजिता — शेष पूर्ववत् · टं ठं यक्षापराजितां — "टं ठं", यक्ष और अपराजिता · शेषं पूर्ववदुच्यरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

डं ढं किन्नरवामाञ्च शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ।

णं तं पन्नगज्येष्ठाञ्च शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ॥ ८६ ॥

८६

"डं ढं", किन्नर और वामा — शेष पहले की तरह; "णं तं", पन्नग और ज्येष्ठा — शेष पहले की तरह;

पदपाठ डं ढं किन्नरवामाञ्च — "डं ढं", किन्नर और वामा · शेषं पूर्ववदुच्चरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · णं तं पन्नगज्येष्ठाञ्च — "णं तं", पन्नग और ज्येष्ठा · शेषं पूर्ववदुच्चरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

थं दं च पितृरौद्राम्बां शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ।

धं नं गणेशमायाञ्च शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ॥ ८७ ॥

८७

"थं दं", पितृ और रौद्राम्बा — शेष पहले की तरह; "धं नं", गणेश और माया — शेष पहले की तरह;

पदपाठ थं दं च पितृरौद्राम्बां — "थं दं", पितृ और रौद्राम्बा · शेषं पूर्ववदुच्चरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · धं नं गणेशमायाञ्च — "धं नं", गणेश और माया · शेषं पूर्ववदुच्चरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

पं फं भैरवशब्दान्ते कुण्डलीं पूर्ववत् परम् ।

बं भं वटुककालीञ्च शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ॥ ८८ ॥

८८

"पं फं", "भैरव" शब्द के बाद कुण्डली — शेष पहले की तरह; "बं भं", वटुक और काली — शेष पहले की तरह;

पदपाठ पं फं भैरवशब्दान्ते — "पं फं", "भैरव" शब्द के अन्त में · कुण्डलीं पूर्ववत् परम् — कुण्डली — शेष पूर्ववत् · बं भं वटुककालीञ्च — "बं भं", वटुक और काली · शेषं पूर्ववदुच्चरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

मं यं क्षेत्रेशशब्दान्ते कालरात्रिज्य पूर्ववत् ।

८९

रं लं प्रमथभगवतीं शेषं पूर्ववदुच्येत् ॥ ८९ ॥

"मं यं", "क्षेत्रेश" शब्द के बाद कालरात्रि — पहले की तरह; "रं लं", प्रमथ और भगवती — शेष पहले की तरह;

पदपाठ मं यं क्षेत्रेशशब्दान्ते — "मं यं", "क्षेत्रेश" शब्द के अन्त में · कालरात्रिज्य पूर्ववत् — कालरात्रि — पूर्ववत् · रं लं प्रमथभगवतीं — "रं लं", प्रमथ और भगवती · शेषं पूर्ववदुच्येत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

वं शं ब्रह्मसर्वेश्वरीं शेषं पूर्ववदुच्येत् ।

९०

षं सं विष्णुज्य सर्वज्ञां शेषं पूर्ववदुच्येत् ॥ ९० ॥

"वं शं", ब्रह्मा और सर्वेश्वरी — शेष पहले की तरह; "षं सं", विष्णु और सर्वज्ञा — शेष पहले की तरह;

पदपाठ वं शं ब्रह्मसर्वेश्वरीं — "वं शं", ब्रह्मा और सर्वेश्वरी · शेषं पूर्ववदुच्येत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · षं सं विष्णुज्य सर्वज्ञां — "षं सं", विष्णु और सर्वज्ञा · शेषं पूर्ववदुच्येत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

हं लं रुद्रसर्वकर्त्रीं शेषं पूर्ववदुच्येत् ।

९१

क्षं चराचरशक्तिज्य शेषं पूर्ववदुच्येत् ॥ ९१ ॥

"हं लं", रुद्र और सर्वकर्त्री — शेष पहले की तरह; "क्षं", चराचर और शक्ति — शेष पहले की तरह।

पदपाठ हं लं रुद्रसर्वकर्त्रीं — "हं लं", रुद्र और सर्वकर्त्री · शेषं पूर्ववदुच्येत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · क्षं चराचरशक्तिज्य — "क्षं", चराचर और शक्ति · शेषं पूर्ववदुच्येत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे

अङ्गुष्ठगुल्फजङ्घासु जानूरुकटिपार्श्वके ।

स्तनकक्षकरस्कन्धकर्णमूर्द्धस्वपि क्रमात् ॥ ९२ ॥

९२

अंगूठों, गुल्फों, जंघाओं, घुटनों, ऊरु, कटि, पार्श्वों, स्तनों, कक्षों, हाथों, कन्धों, कानों और सिर में, क्रम से,

पदपाठ अङ्गुष्ठगुल्फजङ्घासु — अंगूठों, गुल्फों, जंघाओं में · जानूरुकटिपार्श्वके — घुटने, ऊरु, कटि, पार्श्व में · स्तनकक्षकरस्कन्ध — स्तन, कक्ष, हाथ, कन्धे · कर्णमूर्द्धस्वपि क्रमात् — कान और सिर में भी क्रम से

दक्षभागादिवामान्तं विन्यसेत् कुलनायिके ।

त्रितारमूलमन्त्रान्ते सर्वदेवात्मिकां पदम् ॥ ९३ ॥

९३

दाहिनी ओर से बायीं ओर तक, हे कुलनायिके! न्यास करे। त्रितार और मूलमन्त्र के बाद "सर्वदेवात्मिका,

पदपाठ दक्षभागादिवामान्तं — दक्षिण भाग से वाम तक · विन्यसेत् कुलनायिके — न्यास करे, हे कुलनायिके · त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · सर्वदेवात्मिकां पदम् — "सर्वदेवात्मिका" पद

आर्ये पराम्बादेव्यै च हृदये व्यापकं न्यसेत् ।

देवन्यासं विधायेत्थं मातृकान्यासमाचरेत् ॥ ९४ ॥

९४

आर्ये पराम्बादेव्यै" (कहकर) हृदय में व्यापक न्यास करे। इस प्रकार देव-न्यास करके मातृका-न्यास करे।

पदपाठ आर्ये पराम्बादेव्यै च — "आर्ये पराम्बादेव्यै" · हृदये व्यापकं न्यसेत् — हृदय में व्यापक न्यास करे · देवन्यासं विधायेत्थं — इस प्रकार देव-न्यास करके · मातृकान्यासमाचरेत् — मातृका-न्यास करे

त्रितारमूलमन्त्रान्ते कवर्गानन्तकोटिभू ।

चरीकुलसेवितायै आं क्षां हि मङ्गलापदम् ॥ ९५॥

९५

त्रितार और मूलमन्त्र के बाद: कवर्ग, "अनन्त कोटि भूचरी-कुल से सेविता", "आं क्षां", "मंगला" पद,

पदपाठ त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · कवर्गानन्तकोटिभू — कवर्ग,
"अनन्तकोटि भू-" · चरीकुलसेवितायै — "-चरी कुल से सेविता को" · आं क्षां हि मङ्गलापदम् — "आं
क्षां", "मंगला" पद

अम्बादेव्यै नमो ब्रूयादां क्षां ब्रह्माण्यतः परम् ।

अम्बादेव्यै ततोऽनन्तकोटिभूतं कुलं वदेत् ॥ ९६॥

९६

"अम्बादेव्यै नमः" कहे; फिर "आं क्षां ब्रह्माणी, अम्बादेव्यै"; फिर "अनन्त कोटि भूतों का कुल" कहे,

पदपाठ अम्बादेव्यै नमो ब्रूयात् — "अम्बादेव्यै नमः" कहे · आं क्षां ब्रह्माण्यतः परम् — फिर "आं क्षां
ब्रह्माणी" · अम्बादेव्यै ततोऽनन्त — "अम्बादेव्यै", फिर "अनन्त" · कोटिभूतं कुलं वदेत् — "कोटि भूतों
के कुल" कहे

सहिताय ततो मङ्गलनाथाय अं क्षं वदेत् ।

अं क्षं असिताङ्गभैरवनाथाय नम उच्चरेत् ॥ ९७॥

९७

"सहित", फिर "मंगलनाथाय", "अं क्षं"; फिर "अं क्षं असिताङ्गभैरवनाथाय नमः"
— ऐसा उच्चारण करे।

पदपाठ सहिताय ततो मङ्गलनाथाय — "सहित", फिर "मंगलनाथाय" · अं क्षं वदेत् — "अं क्षं" कहे · अं
क्षं असिताङ्गभैरवनाथाय — "अं क्षं असिताङ्ग-भैरवनाथाय" · नम उच्चरेत् — "नमः" उच्चारण करे

चवर्ग खेचरीं ई लां चर्चिकाञ्च महेश्वरीम् ।

वेतालं इं लं चर्चिकं रुं शेषञ्च पूर्ववत् ॥ ९८ ॥

९८

चवर्ग, खेचरी, "ई लां", चर्चिका और माहेश्वरी; वेताल, "इं लं", चर्चिक, रुं — और शेष पहले की तरह।

पदपाठ चवर्ग खेचरीं ई लां — चवर्ग, खेचरी, "ई लां" · चर्चिकाञ्च महेश्वरीम् — चर्चिका और माहेश्वरी · वेतालं इं लं चर्चिकं रुं — वेताल, "इं लं", चर्चिक, रुं · शेषञ्च पूर्ववत् — और शेष पूर्ववत्

टवर्ग पातालचरीं ऊं हां योगेश्वरीं वदेत् ।

कौमारीञ्च पिशाचञ्च उं हं योगेशचण्डकौ ॥ ९९ ॥

९९

टवर्ग, पातालचरी, "ऊं हां", योगेश्वरी, कौमारी; और पिशाच, "उं हं", योगेश और चण्ड।

पदपाठ टवर्ग पातालचरीं — टवर्ग, पातालचरी · ऊं हां योगेश्वरीं वदेत् — "ऊं हां", योगेश्वरी कहे · कौमारीञ्च पिशाचञ्च — कौमारी, और पिशाच · उं हं योगेशचण्डकौ — "उं हं", योगेश और चण्ड

तवर्ग दिक्चरीं ऋं सां हरसिद्धाञ्च वैष्णवीम् ।

अपस्मारं ऋं सं हरसिद्धक्रोधादिपूर्ववत् ॥ १०० ॥

१००

तवर्ग, दिक्चरी, "ऋं सां", हरसिद्धा और वैष्णवी; अपस्मार, "ऋं सं", हरसिद्ध, क्रोध — और शेष पहले की तरह।

पदपाठ तवर्ग दिक्चरीं ऋं सां — तवर्ग, दिक्चरी, "ऋं सां" · हरसिद्धाञ्च वैष्णवीम् — हरसिद्धा और वैष्णवी · अपस्मारं ऋं सं — अपस्मार, "ऋं सं" · हरसिद्धक्रोधादिपूर्ववत् — हरसिद्ध, क्रोध आदि पूर्ववत्

पवर्ग सहचरीं लृ षां भट्टिकां वाह्यतः परम् ।

१०१

ब्रह्मराक्षसकं लृ षं भट्टोन्मत्तादि पूर्ववत् ॥ १०१ ॥

पवर्ग, सहचरी, "लृ षां", भट्टिका, फिर वाराही; ब्रह्मराक्षस, "लृ षं", भट्ट, उन्मत्त — और शेष पहले की तरह।

पदपाठ पवर्ग सहचरीं लृ षां — पवर्ग, सहचरी, "लृ षां" · भट्टिकां वाह्यतः परम् — भट्टिका, फिर "वाह्या" (वाराही) · ब्रह्मराक्षसकं लृ षं — ब्रह्मराक्षस, "लृ षं" · भट्टोन्मत्तादि पूर्ववत् — भट्ट, उन्मत्त आदि पूर्ववत्

यवर्ग स्याद्विरचरीं ऐं शां किलकिलेति च ।

१०२

इन्द्राणीं चेटकं एं शं किलिः कापालिकस्तथा ॥ १०२ ॥

यवर्ग गिरिचरी है, "ऐं शां", किलकिला, इन्द्राणी; चेटक, "एं शं", किलि और कापालिक।

पदपाठ यवर्ग स्याद्विरचरीं — यवर्ग गिरिचरी है · ऐं शां किलकिलेति च — "ऐं शां", और किलकिला · इन्द्राणीं चेटकं एं शं — इन्द्राणी; चेटक, "एं शं" · किलिः कापालिकस्तथा — किलि और कापालिक

शवर्ग स्यात् वनचरीं औं वां कालादिरात्रि च ।

१०३

चामुण्डां प्रेतं औं वं च कालरात्रिश्च भीषणः ॥ १०३ ॥

शवर्ग वनचरी है, "औं वां", कालरात्रि, चामुण्डा; प्रेत, "औं वं", कालरात्रि और भीषण।

पदपाठ शवर्ग स्यात् वनचरीं — शवर्ग वनचरी है · औं वां कालादिरात्रि च — "औं वां", और कालरात्रि · चामुण्डां प्रेतं औं वं च — चामुण्डा; प्रेत, "औं वं" · कालरात्रिश्च भीषणः — कालरात्रि और भीषण

लं क्षं जलचरीं अः लां वदेत् पश्चाच्च भीषणाम् ।

१०४

महालक्ष्मीं शाकिनीश्च अं लं पश्चाच्च भीषणम् ॥ १०४ ॥

"लं क्षं", जलचरी, "अः लां", फिर भीषणा, महालक्ष्मी और शाकिनी; "अं लं", फिर भीषण,

पदपाठ लं क्षं जलचरीं अः लां — "लं क्षं", जलचरी, "अः लां" · वदेत् पश्चाच्च भीषणाम् — कहे, और फिर भीषणा · महालक्ष्मीं शाकिनीश्च — महालक्ष्मी और शाकिनी · अं लं पश्चाच्च भीषणम् — "अं लं", और फिर भीषण

संहारभैरवञ्चैव शेषं पूर्ववदुच्चरेत् ।

१०५

मूलाधारलिङ्गनाभिष्वनाहतविशुद्धयोः ॥ १०५ ॥

और संहारभैरव — शेष पहले की तरह। मूलाधार, लिंग, नाभि, अनाहत, विशुद्ध,

पदपाठ संहारभैरवञ्चैव — और संहार-भैरव · शेषं पूर्ववदुच्चरेत् — शेष पूर्ववत् उच्चारण करे · मूलाधारलिङ्गनाभिषु — मूलाधार, लिङ्ग, नाभि में · अनाहतविशुद्धयोः — अनाहत और विशुद्ध में

आज्ञाभालतलब्रह्मरन्ध्रेष्वेवं प्रविन्यसेत् ।

१०६

त्रितारमूलमन्त्रान्ते मातृभैरवशब्दतः ॥ १०६ ॥

आज्ञा, भाल और ब्रह्मरन्ध्र में — इस प्रकार न्यास करे। त्रितार और मूलमन्त्र के बाद, "मातृ" और "भैरव" शब्दों के बाद,

पदपाठ आज्ञाभालतलब्रह्मरन्ध्रेषु — आज्ञा, ललाट और ब्रह्मरन्ध्र में · एवं प्रविन्यसेत् — इस प्रकार न्यास करे · त्रितारमूलमन्त्रान्ते — त्रितार और मूलमन्त्र के अन्त में · मातृभैरवशब्दतः — "मातृ" और "भैरव" शब्द के बाद

अधिपायै पराम्बादेव्यै नमो व्यापकं न्यसेत् ।
मातृन्यासं महेशानि कुयदिवं समाहितः ॥ १०७ ॥

१०७

"अधिपा पराम्बादेव्यै नमः" — व्यापक न्यास करे। हे महेशानि! इस प्रकार समाहित होकर मातृ-न्यास करे।

पदपाठ अधिपायै पराम्बादेव्यै — "(उनकी) अधिपा पराम्बादेव्यै" · नमो व्यापकं न्यसेत् — "नमः" — व्यापक न्यास करे · मातृन्यासं महेशानि — मातृ-न्यास, हे महेशानि · कुयदिवं समाहितः — इस प्रकार समाहित होकर करे

एवं न्यस्ततनुर्देवि ध्यायेद्देवमनन्यधीः ।
अमृतार्णवमध्योद्यन्मणिद्वीपे सुशोभिते ॥ १०८ ॥

१०८

इस प्रकार न्यास किये शरीर वाला, हे देवि! अनन्य मन से देव का ध्यान करे — अमृत-सागर के मध्य उदित सुशोभित मणिद्वीप में,

पदपाठ एवं न्यस्ततनुर्देवि — इस प्रकार न्यास किए देह वाला, हे देवि · ध्यायेद्देवमनन्यधीः — अनन्य बुद्धि से देव का ध्यान करे · अमृतार्णवमध्योद्यन् — अमृत-सागर के मध्य में उदित · मणिद्वीपे सुशोभिते — सुशोभित मणिद्वीप में

कल्पवृक्षवनान्तःस्थमणिमाणिक्यमण्डपे ।
नवरत्नमयश्रीमत्सिंहासनगतेऽम्बुजे ॥ १०९ ॥

१०९

कल्पवृक्षों के वन के भीतर, मणि-माणिक्य के मण्डप में, नवरत्नमय श्रीमान् सिंहासन पर स्थित कमल पर,

पदपाठ कल्पवृक्षवनान्तःस्थ — कल्पवृक्ष-वन के भीतर स्थित · मणिमाणिक्यमण्डपे — मणि-माणिक्य के मण्डप में · नवरत्नमयश्रीमत् — नवरत्नमय, श्रीमान् · सिंहासनगतेऽम्बुजे — सिंहासन पर स्थित कमल में

त्रिकोणान्तःसमासीनं चन्द्रसूर्यायुतप्रभम् ।

११०

अर्द्धाम्बिकासमायुक्तं प्रविभक्तविभूषणम् ॥ ११० ॥

त्रिकोण के भीतर आसीन, दस हजार सूर्य-चन्द्रों की प्रभा वाले, अर्धांग में अम्बिका से युक्त, दोनों भागों में विभक्त आभूषणों वाले,

पदपाठ त्रिकोणान्तःसमासीनं — त्रिकोण के भीतर आसीन · चन्द्रसूर्यायुतप्रभम् — दस हजार चन्द्र-सूर्य की प्रभा वाले · अर्द्धाम्बिकासमायुक्तं — अर्धांग में अम्बिका से युक्त · प्रविभक्तविभूषणम् — (दोनों अर्धांगों में) विभक्त आभूषण वाले

कोटिकन्दर्पलावण्यं सदा षोडशवार्षिकम् ।

१११

मन्दस्मितमुखाम्भोजं त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम् ॥ १११ ॥

करोड़ कामदेवों के लावण्य वाले, सदा सोलह वर्ष के, मन्द मुस्कान वाले मुखकमल से युक्त, त्रिनेत्र, चन्द्रशेखर,

पदपाठ कोटिकन्दर्पलावण्यं — करोड़ कामदेवों के लावण्य वाले · सदा षोडशवार्षिकम् — सदा सोलह वर्ष के · मन्दस्मितमुखाम्भोजं — मन्द मुस्कान वाले मुखकमल · त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम् — त्रिनेत्र, चन्द्रशेखर

दिव्याम्बरस्रगालेपं दिव्याभरणभूषितम् ।

११२

पानपात्रञ्च चिन्मुद्रां त्रिशूलं पुस्तकं करैः ॥ ११२ ॥

दिव्य वस्त्र, माला और लेप वाले, दिव्य आभूषणों से भूषित, हाथों में पानपात्र, चिन्मुद्रा, त्रिशूल और पुस्तक धारण किये,

पदपाठ दिव्याम्बरस्रगालेपं — दिव्य वस्त्र, माला, अनुलेप · दिव्याभरणभूषितम् — दिव्य आभूषणों से भूषित · पानपात्रञ्च चिन्मुद्रां — पानपात्र और चिन्मुद्रा · त्रिशूलं पुस्तकं करैः — त्रिशूल, पुस्तक — हाथों में

विद्यासंसिद्धिं बिभ्राणां सदानन्दमुखेक्षणम् ।

११३

महाषोढोदिताशेषदेवतागणसेवितम् ॥ ११३ ॥

विद्या की संसिद्धि धारण किये, सदानन्दमय मुख और दृष्टि वाले, महाषोढा में कहे समस्त देवतागणों से सेवित।

पदपाठ विद्यासंसिद्धिं बिभ्राणां — विद्या की संसिद्धि धारण करते · सदानन्दमुखेक्षणम् — सदानन्द मुख और दृष्टि वाले · महाषोढोदिताशेष — महाषोढा में कहे गए समस्त · देवतागणसेवितम् — देवतागणों से सेवित

एवं चित्ताम्बुजे ध्यायेदर्द्धनारीश्वरं शिवम् ।

११४

पुंरूपं वा स्मरेद्देवि स्त्रीरूपं वा विचिन्तयेत् ॥ ११४ ॥

इस प्रकार चित्तकमल में अर्धनारीश्वर शिव का ध्यान करे; अथवा हे देवि! केवल पुरुषरूप का स्मरण करे, या केवल स्त्रीरूप का चिन्तन करे।

पदपाठ एवं चित्ताम्बुजे ध्यायेत् — इस प्रकार चित्त-कमल में ध्यान करे · अर्द्धनारीश्वरं शिवम् — अर्धनारीश्वर शिव का · पुंरूपं वा स्मरेद्देवि — या पुरुष रूप का स्मरण करे, हे देवि · स्त्रीरूपं वा विचिन्तयेत् — या स्त्री रूप का चिन्तन करे

अथवा निष्कलं ध्यायेत् सच्चिदानन्दलक्षणम् ।

११५

सर्वतेजोमयं देवि सचराचरविग्रहम् ॥ ११५ ॥

अथवा निष्कल का ध्यान करे — सच्चिदानन्द लक्षण वाले, सर्वतेजोमय, हे देवि! चराचर सहित जिसका विग्रह है।

पदपाठ अथवा निष्कलं ध्यायेत् — अथवा निष्कल का ध्यान करे · सच्चिदानन्दलक्षणम् — सच्चिदानन्द-लक्षण · सर्वतेजोमयं देवि — सर्वतेजोमय, हे देवि · सचराचरविग्रहम् — चराचर-विग्रह

ततः सन्दर्शयेन्मुद्रादशकं परमेश्वरि ।

योनिं लिङ्गञ्च सुरभिं हेतिमुद्राचतुष्टयम् ॥ ११६ ॥

११६

फिर, हे परमेश्वरि! दस मुद्राएँ दिखाये: योनि, लिंग, सुरभि, चार हेति-मुद्राएँ,

पदपाठ ततः सन्दर्शयेत् — फिर दिखाए · मुद्रादशकं परमेश्वरि — दस मुद्राएँ, हे परमेश्वरि · योनिं लिङ्गञ्च सुरभिं — योनि, लिङ्ग, सुरभि · हेतिमुद्राचतुष्टयम् — चार हेति (शस्त्र) मुद्राएँ

वनमालां महामुद्रां नभोमुद्रामिति क्रमात् ।

यथाशक्ति मन्त्रमूलं जपेत् श्रीपादुकामपि ।

११७

मूर्ध्नि सज्जिन्तयेद्देवि श्रीगुरुं शिवरूपिणम् ॥ ११७ ॥

वनमाला, महामुद्रा और नभोमुद्रा — इस क्रम से। यथाशक्ति मूलमन्त्र और श्रीपादुका का भी जप करे, और हे देवि! मस्तक पर शिवरूपी श्रीगुरु का चिन्तन करे

पदपाठ वनमालां महामुद्रां — वनमाला, महामुद्रा · नभोमुद्रामिति क्रमात् — और नभोमुद्रा — इस क्रम से · यथाशक्ति मन्त्रमूलं — यथाशक्ति मूलमन्त्र · जपेत् श्रीपादुकामपि — जपे, श्रीपादुका भी · मूर्ध्नि सज्जिन्तयेद्देवि — मूर्धा में चिन्तन करे, हे देवि · श्रीगुरुं शिवरूपिणम् — शिवरूपी श्रीगुरु का

सहस्रदलपङ्कजे सकलशीतरश्मिप्रभम्
वराभयकराम्बुजं विमलगन्धपुष्पाम्बरम् ।

११८

प्रसन्नवदनेक्षणं सकलदेवतारूपिणम्
स्मरेत् शिरसि हंसगं तदभिधानपूर्वं गुरुम् ॥ ११८ ॥

सहस्रदल कमल में, पूर्ण चन्द्र की प्रभा वाले, वर और अभय देते हस्तकमल वाले, निर्मल गन्ध, पुष्प और वस्त्र वाले, प्रसन्न मुख और दृष्टि वाले, सब देवताओं के रूप वाले — हंस पर स्थित गुरु का सिर पर स्मरण करे, पहले उनका नाम लेकर।

पदपाठ सहस्रदलपङ्कजे — सहस्रदल कमल में · सकलशीतरश्मिप्रभम् — पूर्ण चन्द्र-सी प्रभा वाले · वराभयकराम्बुजं — वर-अभय देते करकमल वाले · विमलगन्धपुष्पाम्बरम् — विमल गन्ध, पुष्प, वस्त्र वाले · प्रसन्नवदनेक्षणं — प्रसन्न मुख और दृष्टि वाले · सकलदेवतारूपिणम् — सकल देवताओं के रूप वाले · स्मरेत् शिरसि हंसगं — सिर में स्मरण करे, हंस पर स्थित · तदभिधानपूर्वं गुरुम् — उनके नाम-पूर्वक गुरु का

एवं न्यासे कृते देवि साक्षात् परशिवो भवेत् ।

११९

मन्त्री नैवात्र सन्देहो निग्रहानुग्रहक्षमः ॥ ११९ ॥

इस प्रकार न्यास किये जाने पर, हे देवि! मन्त्री साक्षात् परशिव हो जाता है, निग्रह और अनुग्रह में समर्थ — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ एवं न्यासे कृते देवि — इस प्रकार न्यास करने पर, हे देवि · साक्षात् परशिवो भवेत् — साक्षात् परशिव हो जाता है · मन्त्री नैवात्र सन्देहो — मन्त्री — इसमें सन्देह नहीं · निग्रहानुग्रहक्षमः — निग्रह और अनुग्रह में समर्थ

महाषोढाह्वयं न्यासं यः करोति दिने दिने ।

१२०

देवाः सर्वे नमस्यन्ति तं नमामि न संशयः ॥ १२० ॥

जो प्रतिदिन महाषोढा नामक न्यास करता है — सब देवता उसे नमस्कार करते हैं, और मैं भी उसे नमस्कार करता हूँ; इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ महाषोढाह्वयं न्यासं — महाषोढा नामक न्यास · यः करोति दिने दिने — जो प्रतिदिन करता है · देवाः सर्वे नमस्यन्ति — सब देवता उसे नमस्कार करते हैं · तं नमामि न संशयः — मैं भी उसे नमन करता हूँ, सन्देह नहीं

महाषोढाह्वयं न्यासं करोति यत्र पार्वति ।

१२१

दिव्यक्षेत्रं समुद्दिष्टं समन्ताद्दशयोजनम् ॥ १२१ ॥

हे पार्वति! जहाँ महाषोढा नामक न्यास किया जाता है, वहाँ चारों ओर दस योजन तक दिव्य क्षेत्र कहा गया है।

पदपाठ महाषोढाह्वयं न्यासं — महाषोढा नामक न्यास · करोति यत्र पार्वति — जहाँ करता है, हे पार्वति · दिव्यक्षेत्रं समुद्दिष्टं — वह दिव्य क्षेत्र कहा गया है · समन्ताद्दशयोजनम् — चारों ओर दस योजन तक

कृत्वा न्यासमिमं देवि यत्र गच्छति मानवः ।

१२२

तत्र स्याद्विजयो लाभः सम्मानः पौरुषं प्रिये ॥ १२२ ॥

हे देवि! यह न्यास करके मनुष्य जहाँ जाता है, वहाँ विजय, लाभ, सम्मान और पौरुष होता है, हे प्रिये!

पदपाठ कृत्वा न्यासमिमं देवि — यह न्यास करके, हे देवि · यत्र गच्छति मानवः — मनुष्य जहाँ जाता है · तत्र स्याद्विजयो लाभः — वहाँ विजय, लाभ होता है · सम्मानः पौरुषं प्रिये — सम्मान, पौरुष, हे प्रिये

महाषोढाकृतन्यासस्तेन यो वन्द्यते शिवे ।

१२३

षण्मासान्मृत्युमाप्नोति यदि त्राता शिवः स्वयम् ॥ १२३ ॥

हे शिवे! महाषोढा न्यास किये हुए पुरुष के द्वारा जिसे प्रणाम किया जाये, वह छह महीनों में मृत्यु को प्राप्त होता है — चाहे स्वयं शिव उसके रक्षक हों।

पदपाठ महाषोढाकृतन्यासः — महाषोढा न्यास किया हुआ · तेन यो वन्द्यते शिवे — जिसे वह वन्दन करे, हे शिवे · षण्मासान्मृत्युमाप्नोति — वह छह मास में मृत्यु पाता है · यदि त्राता शिवः स्वयम् — यदि शिव स्वयं भी रक्षक हों

वज्रपञ्जरनामानमेतं न्यासं करोति यः ।

१२४

दिव्यन्तरीक्षभूशैलजलारण्यनिवासिनः ॥ १२४ ॥

"वज्रपंजर" नामक इस न्यास को जो करता है — स्वर्ग, अन्तरिक्ष, भूमि, पर्वत, जल और वन में रहने वाले,

पदपाठ वज्रपञ्जरनामानम् — "वज्रपंजर" नामक · एतं न्यासं करोति यः — यह न्यास जो करता है · दिव्यन्तरीक्षभूशैल — स्वर्ग, अन्तरिक्ष, भूमि, पर्वत · जलारण्यनिवासिनः — जल और वन में रहने वाले

प्रचण्डभूतवेतालदेवरक्षोग्रहादयः ।

१२५

भयग्रस्तेन मनसा नेक्षन्ते तं कुलेश्वरि ॥ १२५ ॥

प्रचण्ड भूत, वेताल, देव, राक्षस, ग्रह आदि — हे कुलेश्वरि! भय से ग्रस्त मन से उसकी ओर देखते तक नहीं।

पदपाठ प्रचण्डभूतवेताल — प्रचण्ड भूत, वेताल · देवरक्षोग्रहादयः — देव, राक्षस, ग्रह आदि · भयग्रस्तेन मनसा — भय से ग्रस्त मन से · नेक्षन्ते तं कुलेश्वरि — उसे नहीं देखते, हे कुलेश्वरि

महाषोढाकृतन्यासं ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।

देवाः सर्वे नमस्यन्ति ऋषयोऽपि मुनीश्वराः ॥ १२६ ॥

१२६

महाषोढा न्यास किये हुए पुरुष को ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि सब देवता नमस्कार करते हैं, और ऋषि तथा मुनीश्वर भी।

पदपाठ महाषोढाकृतन्यासं — महाषोढा न्यास किए हुए को · ब्रह्मविष्णुशिवादयः — ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि · देवाः सर्वे नमस्यन्ति — सब देवता नमस्कार करते हैं · ऋषयोऽपि मुनीश्वराः — ऋषि और मुनीश्वर भी

बहुनोक्तेन किं देवि न्यासमेतं मम प्रियम् ।

नापुत्राय वदेद्देवि नाशिष्याय प्रकाशयेत् ॥ १२७ ॥

१२७

अधिक कहने से क्या, हे देवि? यह न्यास मुझे प्रिय है। इसे अपुत्र को न कहे, हे देवि! अशिष्य को प्रकट न करे।

पदपाठ बहुनोक्तेन किं देवि — अधिक कहने से क्या, हे देवि · न्यासमेतं मम प्रियम् — यह न्यास मुझे प्रिय है · नापुत्राय वदेद्देवि — अपुत्र को न कहे, हे देवि · नाशिष्याय प्रकाशयेत् — अशिष्य को प्रकाशित न करे

आज्ञासिद्धिमवाप्नोति तस्मान्न्यासं समाचरेत् ।

अस्मात् परतरा रक्षा देवताभावसिद्धिदा ।

१२८

लोके नास्ति न सन्देहः सत्यं सत्यं वरानने ॥ १२८ ॥

इससे आज्ञासिद्धि प्राप्त होती है; इसलिए यह न्यास करे। देवताभाव की सिद्धि देने वाली इससे बढ़कर रक्षा संसार में नहीं है — इसमें सन्देह नहीं; हे वरानने! यह सत्य है, सत्य है।

पदपाठ आज्ञासिद्धिमवाप्नोति — आज्ञासिद्धि पाता है · तस्मान्न्यासं समाचरेत् — इसलिए न्यास करे · अस्मात् परतरा रक्षा — इससे बढ़कर रक्षा · देवताभावसिद्धिदा — देवता-भाव की सिद्धि देने वाली · लोके नास्ति न सन्देहः — लोक में नहीं है, सन्देह नहीं · सत्यं सत्यं वरानने — सत्य, सत्य, हे वरानने

ऊर्ध्वाम्नायप्रवेशश्च पराप्रासादचिन्तनम् ।

१२९

महाषोढापरिज्ञानं नाल्पस्य तपसः फलम् ॥ १२९ ॥

ऊर्ध्वाम्नाय में प्रवेश, पराप्रासाद का चिन्तन, और महाषोढा का परिज्ञान — ये थोड़े तप का फल नहीं हैं।

पदपाठ ऊर्ध्वाम्नायप्रवेशश्च — ऊर्ध्वाम्नाय में प्रवेश · पराप्रासादचिन्तनम् — पराप्रासाद का चिन्तन · महाषोढापरिज्ञानं — महाषोढा का परिज्ञान · नाल्पस्य तपसः फलम् — अल्प तप का फल नहीं है

इति ते कथितं देवि मन्त्रोद्धारदिकं प्रिये ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १३० ॥

१३०

हे देवि! इस प्रकार मन्त्रोद्धार आदि तुम्हें संक्षेप में कहा गया, हे प्रिये! हे कुलेशानि! अब और क्या सुनना चाहती हो?"

पदपाठ इति ते कथितं देवि — इस प्रकार तुम्हें कहा गया, हे देवि · मन्त्रोद्धारदिकं प्रिये — मन्त्रोद्धार आदि, हे प्रिये · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे महाषोढाकथनं नाम चतुर्थ उल्लासः ॥४॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सब आगमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
महाषोढाकथन नामक चतुर्थ उल्लास पूर्ण हुआ ॥४॥

॥ श्रीः ॥

अथ पञ्चमोल्लासः

पञ्चम उल्लास — कुलद्रव्यादिलक्षणम्



ईश्वर कुल-पात्रों, मदिराओं, मांसों और अन्य कुलद्रव्यों का वर्णन, उनके प्रयोग के नियम व निषेध, और अन्त में पञ्चमुद्राओं का योगपरक गूढ़ अर्थ बताते हैं।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेशाधारपात्राणां पिशितानाञ्च लक्षणम् ।

१

कुलद्रव्यस्य निर्माणं भेदं माहात्म्यमेव च ॥ १॥

"हे कुलेश! आधार और पात्रों तथा मांसों के लक्षण, कुलद्रव्य का निर्माण, उसके भेद और माहात्म्य,

पदपाठ कुलेशाधारपात्राणां — हे कुलेश! आधार और पात्रों के · पिशितानाञ्च लक्षणम् — और मांसों के लक्षण · कुलद्रव्यस्य निर्माणं — कुलद्रव्य का निर्माण · भेदं माहात्म्यमेव च — उसके भेद और माहात्म्य भी

अविधानेन यत् पापं सविधानेन यत् फलम् ।

२

तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि वद मे करुणानिधे ॥ २॥

बिना विधि के जो पाप और विधि सहित जो फल — यह सब मैं सुनना चाहती हूँ। हे करुणानिधे! मुझे बताइये।"

पदपाठ अविधानेन यत् पापं — बिना विधि के जो पाप · सविधानेन यत् फलम् — विधि सहित जो फल · तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि — वह सब मैं सुनना चाहती हूँ · वद मे करुणानिधे — मुझे बताइए, हे करुणानिधे

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण त्रिदशैः समतां व्रजेत् ॥ ३॥

३

"हे देवि! सुनो, जो तुम मुझसे पूछ रही हो वह मैं कहता हूँ। उसके सुनने मात्र से मनुष्य देवताओं की समता पा लेता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · त्रिदशैः समतां व्रजेत् — देवों की समता पाता है

आधारेण विना भ्रंशो न च तृप्यन्ति मातरः ।

तस्माद्विधिवदाधारं कल्पयेत् कुलनायिके ॥ ४॥

४

आधार के बिना भ्रंश होता है, और मातृकाएँ तृप्त नहीं होतीं; इसलिए, हे कुलनायिके! विधिपूर्वक आधार बनाये।

पदपाठ आधारेण विना भ्रंशो — आधार के बिना भ्रंश (पतन) होता है · न च तृप्यन्ति मातरः — और मातृकाएँ तृप्त नहीं होतीं · तस्माद्विधिवदाधारं — इसलिए विधिपूर्वक आधार · कल्पयेत् कुलनायिके — बनाए, हे कुलनायिके

आधारं त्रिपदं प्राहुः षट्पदं वा चतुष्पदम् ।

अथवा वर्तुलाकारं कुयद्विवि मनोहरम् ॥ ५॥

५

आधार को तिपाया, छह पाये वाला या चौपाया कहते हैं, अथवा गोलाकार; हे देवि! उसे सुन्दर बनाये।

पदपाठ आधारं त्रिपदं प्राहुः — आधार को त्रिपद कहते हैं · षट्पदं वा चतुष्पदम् — या षट्पद या चतुष्पद · अथवा वर्तुलाकारं — अथवा गोलाकार · कुयद्विवि मनोहरम् — सुन्दर बनाए, हे देवि

स्वर्णरौप्यशिलाकूर्मकपालालाबुमृण्मयम् ।

नारिकेलशङ्खताम्रमुक्ताशुक्तिसमुद्भवम् ॥ ६॥

६

सोना, चाँदी, पत्थर, कछुए की खोपड़ी, कपाल, तुम्बी या मिट्टी का; नारियल, शंख, तौबा या मोती की सीप का,

पदपाठ स्वर्णरौप्यशिलाकूर्म — स्वर्ण, रजत, शिला, कूर्म (कछुए की खोल) · कपालालाबुमृण्मयम् — कपाल, तुम्बी, मिट्टी · नारिकेलशङ्खताम्र — नारियल, शंख, ताम्र · मुक्ताशुक्तिसमुद्भवम् — मुक्ता-शुक्ति (सीप) से बना

पुण्यवृक्षसमुद्भूतं पात्रं कुर्याद्विचक्षणः ।

अतिसूक्ष्ममतिस्थूलं छिन्नं भिन्नञ्च वर्जयेत् ॥ ७॥

७

या पुण्य वृक्ष की लकड़ी का — बुद्धिमान् पात्र बनाये; अति छोटा, अति बड़ा, छिन्न या भिन्न पात्र त्याग दे।

पदपाठ पुण्यवृक्षसमुद्भूतं — पुण्यवृक्ष से बना · पात्रं कुर्याद्विचक्षणः — पात्र विचक्षण बनाए · अतिसूक्ष्ममतिस्थूलं — अति सूक्ष्म, अति स्थूल · छिन्नं भिन्नञ्च वर्जयेत् — टूटा या फटा — त्याग दे

सुवर्णरौप्यताम्राणि सर्वसिद्धकराणि च ।

शान्तिके च शिलापात्रं स्तम्भने चैव मृण्मयम् ॥ ८॥

८

सोने, चाँदी और तौबे के पात्र सब सिद्धियाँ देते हैं; शान्तिकर्म में पत्थर का पात्र, स्तम्भन में मिट्टी का;

पदपाठ सुवर्णरौप्यताम्राणि — स्वर्ण, रजत और ताम्र के · सर्वसिद्धकराणि च — सब सिद्धियाँ देने वाले हैं · शान्तिके च शिलापात्रं — शान्ति में शिलापात्र · स्तम्भने चैव मृण्मयम् — स्तम्भन में मिट्टी का

नारिकेलज्व वश्ये स्यादभिचारे च कूर्मजम् ।

शङ्खं ज्ञानप्रदं शुक्तिर्देवीप्रीतिप्रदायिनी ॥ ९॥

९

नारियल वशीकरण में और कछुए की खोपड़ी अभिचार में; शंख ज्ञान देता है, और सीप देवी की प्रीति देने वाली है।

पदपाठ नारिकेलज्व वश्ये स्यात् — वश्य में नारियल का हो · अभिचारे च कूर्मजम् — और अभिचार में कूर्म का · शङ्खं ज्ञानप्रदं — शंख ज्ञान देता है · शुक्तिर्देवीप्रीतिप्रदायिनी — शुक्ति देवी की प्रीति देती है

कपालालाबुपात्राणि योगसिद्धिकराणि च ।

पुण्यवृक्षजपात्राणि सर्वपापहराणि च ।

१०

उक्तेष्वेतेषु देवेशि पात्रमेकं प्रकल्पयेत् ॥ १०॥

कपाल और तुम्बी के पात्र योगसिद्धि देते हैं; पुण्य वृक्ष के पात्र सब पापों को हरते हैं। हे देवेशि! इन कहे हुए पात्रों में से एक पात्र चुने।

पदपाठ कपालालाबुपात्राणि — कपाल और तुम्बी के पात्र · योगसिद्धिकराणि च — योगसिद्धि देने वाले हैं · पुण्यवृक्षजपात्राणि — पुण्यवृक्ष के पात्र · सर्वपापहराणि च — सब पाप हरने वाले हैं · उक्तेष्वेतेषु देवेशि — इन कहे गए में, हे देवेशि · पात्रमेकं प्रकल्पयेत् — एक पात्र चुने

कुलद्रव्यं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि समाहिता ।

अम्भसां द्वादशप्रस्थं प्रस्थाद्धं तक्रमेव च ॥ ११॥

११

अब कुलद्रव्य कहता हूँ; हे देवि! ध्यान से सुनो। बारह प्रस्थ जल, आधा प्रस्थ मट्ठा,

पदपाठ कुलद्रव्यं प्रवक्ष्यामि — कुलद्रव्य कहता हूँ · शृणु देवि समाहिता — सुनो देवि, समाहित होकर · अम्भसां द्वादशप्रस्थं — बारह प्रस्थ जल · प्रस्थाद्धं तक्रमेव च — और आधा प्रस्थ मट्ठा

तण्डुलानां चतुःप्रस्थं द्विप्रस्थञ्च तथान्धसाम् ।
मुष्टिमात्राङ्कुरैः सार्द्धम् एकस्मिन् योजयेद् घटे ॥ १२ ॥

१२

चार प्रस्थ चावल और दो प्रस्थ पका हुआ भात, एक मुट्ठी अंकुरों के साथ — इन्हें एक घड़े में मिलाये,

पदपाठ तण्डुलानां चतुःप्रस्थं — चार प्रस्थ चावल · द्विप्रस्थञ्च तथान्धसाम् — और दो प्रस्थ पका अन्न · मुष्टिमात्राङ्कुरैः सार्द्धम् — मुट्ठी भर अंकुरों सहित · एकस्मिन् योजयेद् घटे — एक घड़े में मिलाए

शीतादिरहिते स्थाने स्थापयेद्विसद्वयम् ।
तस्मादग्निं समारोप्य जम्बालसदृशं पचेत् ॥ १३ ॥

१३

शीत आदि से रहित स्थान में दो दिन रखे, फिर आग पर चढ़ाकर कीचड़ के समान पका ले।

पदपाठ शीतादिरहिते स्थाने — शीत आदि से रहित स्थान में · स्थापयेद्विसद्वयम् — दो दिन रखे · तस्मादग्निं समारोप्य — फिर अग्नि पर चढ़ाकर · जम्बालसदृशं पचेत् — कीचड़-सा पकाए

अवरोप्य पुनः शीतामवस्थां प्रापयेत्ततः ।
पादोनप्रस्थकैः पिष्ट्वा हस्ताभ्यां मेलयेत् सुधीः ॥ १४ ॥

१४

उतारकर फिर उसे ठण्डा होने दे; फिर पौन प्रस्थ (खमीर) पीसकर बुद्धिमान् उसे हाथों से मिलाये।

पदपाठ अवरोप्य पुनः शीताम् — उतारकर फिर शीतल · अवस्थां प्रापयेत्ततः — अवस्था में लाए · पादोनप्रस्थकैः पिष्ट्वा — पौन प्रस्थ से पीसकर · हस्ताभ्यां मेलयेत् सुधीः — सुधी दोनों हाथों से मिलाए

प्रस्थाद्धान् तण्डुलान् वाप्यपरेद्युस्तत् समुद्धरेत् ।

सम्यक् संमर्द्य तत्रेण पाकमालोड्य मेलयेत् ।

१५

एषा पैष्टीति विख्याता पूजिता देवदानवैः ॥ १५॥

अथवा आधा प्रस्थ चावल (मिलाये); अगले दिन उसे निकाले, मट्टे से अच्छी तरह मसलकर पके हुए पदार्थ में मिलाये। यह "पैष्टी" नाम से विख्यात है, देवों और दानवों द्वारा पूजित।

पदपाठ प्रस्थाद्धान् तण्डुलान् वापि — या आधा प्रस्थ चावल · अपरेद्युस्तत् समुद्धरेत् — अगले दिन उसे निकाले · सम्यक् संमर्द्य तत्रेण — मट्टे से अच्छी तरह मलकर · पाकमालोड्य मेलयेत् — पाक को घोलकर मिलाए · एषा पैष्टीति विख्याता — यह "पैष्टी" नाम से विख्यात है · पूजिता देवदानवैः — देव-दानवों से पूजित

गौडी च श्वेतबर्बुरजम्बुत्वक्साधिताम्भसाम् ।

दशप्रस्थं कुलेशानि धातकीकुसुमं शुभम् ॥ १६॥

१६

गौडी: श्वेत बबूल और जामुन की छाल से तैयार दस प्रस्थ जल में, हे कुलेशानि! उत्तम धातकी (धाय) के फूल,

पदपाठ गौडी च श्वेतबर्बुर — गौडी: श्वेत बबूल · जम्बुत्वक्साधिताम्भसाम् — और जामुन की छाल से साधित जल के · दशप्रस्थं कुलेशानि — दस प्रस्थ, हे कुलेशानि · धातकीकुसुमं शुभम् — शुभ धातकी (धाय) पुष्प

नारिकेलप्रसूनं वा चैकप्रस्थं विनिक्षिपेत् ।

हरीतकी चाक्षफलं वसुनिष्कप्रमाणतः ॥ १७॥

१७

या नारियल का फूल, एक प्रस्थ, डाले; हरड़ और बहेड़ा आठ निष्क की मात्रा में;

पदपाठ नारिकेलप्रसूनं वा — या नारियल का पुष्प · चैकप्रस्थं विनिक्षिपेत् — एक प्रस्थ डाले · हरीतकी चाक्षफलं — हरीतकी और बहेड़ा · वसुनिष्कप्रमाणतः — आठ निष्क की मात्रा में

वह्निं त्रिकटुकञ्चापि निष्कमात्रं क्षिपेत् पृथक् ।

अशीतिगुडसम्मिश्रमेकस्मिन् योजयेद् घटे ॥ १८ ॥

१८

चित्रक और त्रिकटु, प्रत्येक एक निष्क, अलग-अलग डाले; अस्सी (पल) गुड़ मिलाकर एक घड़े में मिला दे।

पदपाठ वह्निं त्रिकटुकञ्चापि — चित्रक और त्रिकटु भी · निष्कमात्रं क्षिपेत् पृथक् — निष्क मात्र अलग-अलग डाले · अशीतिगुडसम्मिश्रम् — अस्सी (पल) गुड़ मिलाकर · एकस्मिन् योजयेद् घटे — एक घड़े में मिलाए

करेण भ्रामयेत् सम्यगनुलोमविलोमतः ।

अष्टोत्तरशतावृत्त्या त्रिसन्ध्यं प्रतिवासरम् ॥ १९ ॥

१९

हाथ से अच्छी तरह घुमाये, सीधे और उलटे, एक सौ आठ बार, तीनों सन्ध्याओं में, प्रतिदिन।

पदपाठ करेण भ्रामयेत् सम्यक् — हाथ से अच्छी तरह घुमाए · अनुलोमविलोमतः — अनुलोम और विलोम · अष्टोत्तरशतावृत्त्या — एक सौ आठ आवृत्ति · त्रिसन्ध्यं प्रतिवासरम् — तीनों सन्ध्याओं में, प्रतिदिन

द्वादशाहेन पाकः स्यात् पालयेत्तत्रयोदशे ।

एषा गौडीति कथिता शिवसायुज्यहेतुकी ॥ २० ॥

२०

बारह दिन में यह पक जाती है, तेरहवें दिन इसकी देखभाल करे। यह "गौड़ी" कहलाती है, शिव-सायुज्य का कारण।

पदपाठ द्वादशाहेन पाकः स्यात् — बारह दिन में पक होता है · पालयेत्तत्रयोदशे — तेरहवें दिन उसका पालन करे · एषा गौडीति कथिता — यह "गौड़ी" कही गई है · शिवसायुज्यहेतुकी — शिव-सायुज्य की कारण

द्विगुणं मकरन्दस्य वारि संयोजयेद् घटे ।

द्वादशाहेन पाकः स्याच्छेषमन्यत् पुरोक्तवत् ।

२१

एषा माध्वी समुद्दिष्टा देवताप्रीतिकारिणी ॥ २१ ॥

घड़े में शहद से दुगुना जल मिलाये; बारह दिन में पक जाती है, शेष सब पहले कहे अनुसार। यह "माध्वी" कही गयी है, देवताओं को प्रसन्न करने वाली।

पदपाठ द्विगुणं मकरन्दस्य — मकरन्द (मधु) का दुगुना · वारि संयोजयेद् घटे — जल घड़े में मिलाए · द्वादशाहेन पाकः स्यात् — बारह दिन में पाक होता है · शेषमन्यत् पुरोक्तवत् — शेष सब पूर्वोक्त के समान · एषा माध्वी समुद्दिष्टा — यह "माध्वी" कही गई है · देवताप्रीतिकारिणी — देवताओं को प्रीति देने वाली

एका शुण्ठी द्विवह्निश्च मरीचत्रितयं तथा ।

धातकी च चतुष्कं स्यात् पञ्च पुष्पाणि षण्मधु ॥ २२ ॥

२२

एक भाग सोंठ, दो चित्रक, तीन काली मिर्च, चार धातकी, पाँच फूल, छह शहद,

पदपाठ एका शुण्ठी द्विवह्निश्च — एक (भाग) सोंठ, दो चित्रक · मरीचत्रितयं तथा — तीन काली मिर्च · धातकी च चतुष्कं स्यात् — चार धातकी हो · पञ्च पुष्पाणि षण्मधु — पाँच पुष्प, छह मधु

अशीतिगुडसम्मिश्रं शेषमन्यत् पुरोक्तवत् ।

इदं मनोहरं द्रव्यं योगिनीपानमुत्तमम् ॥ २३ ॥

२३

अस्सी गुड़ मिलाकर, शेष पहले कहे अनुसार — यह मनोहर द्रव्य योगिनियों का उत्तम पान है।

पदपाठ अशीतिगुडसम्मिश्रं — अस्सी गुड़ मिलाकर · शेषमन्यत् पुरोक्तवत् — शेष सब पूर्वोक्त के समान · इदं मनोहरं द्रव्यं — यह मनोहर द्रव्य · योगिनीपानमुत्तमम् — योगिनियों का उत्तम पान है

सार्द्धेन्दुपलकं दध्नो माहिषं प्रस्थमात्रकम् ।

२४

मोचापक्वशतज्वापि योगोऽयं मदिरा शुभा ॥ २४ ॥

डेढ़ पल दही, एक प्रस्थ भैंस का (दूध), और सौ पके केले — यह योग उत्तम मदिरा है।

पदपाठ सार्द्धेन्दुपलकं दध्नो — डेढ़ पल दही · माहिषं प्रस्थमात्रकम् — भैंस का, एक प्रस्थ मात्रा · मोचापक्वशतज्वापि — और सौ पके केले · योगोऽयं मदिरा शुभा — यह योग शुभ मदिरा है

तं मेलयित्वा संयोज्य सान्द्रे वंशपुटे पचेत् ।

२५

चत्वारिंशद्दिनान्यष्टौ पङ्के पङ्कजसम्भवे ॥ २५ ॥

उसे मिलाकर सघन बाँस की टोकरी में अड़तालीस दिन तक कमल उगने वाले कीचड़ में पकने दे;

पदपाठ तं मेलयित्वा संयोज्य — उसे मिलाकर, संयोजित कर · सान्द्रे वंशपुटे पचेत् — सघन बाँस के पुट में पकाए · चत्वारिंशद्दिनान्यष्टौ — अड़तालीस दिन · पङ्के पङ्कजसम्भवे — कमल उत्पन्न होने वाले पंक में

निधायोद्धृत्य किरणैः सौरैः सम्यग् विशोषयेत् ।

२६

यदा च कठिनीभावस्तदा संगृह्य मानवः ॥ २६ ॥

गाड़कर और निकालकर उसे सूर्य की किरणों में अच्छी तरह सुखाये; और जब वह कठोर हो जाये, तब मनुष्य उसे इकट्ठा कर ले।

पदपाठ निधायोद्धृत्य किरणैः — रखकर, निकालकर, किरणों से · सौरैः सम्यग् विशोषयेत् — सूर्य की, अच्छी तरह सुखाए · यदा च कठिनीभावः — और जब कठोर हो जाए · तदा संगृह्य मानवः — तब मनुष्य उसे संग्रह करे

गुज्जाफलप्रमाणन्तु जलैः सम्मिलितं शुभम् ।

२७

आत्मेच्छं पूरयेत् पात्रं परमानन्दं परम् ॥ २७ ॥

एक गुंजा के बराबर मात्रा जल में मिली हुई उत्तम है; अपनी इच्छानुसार पात्र भरे — यह परम आनन्द देने वाली है।

पदपाठ गुज्जाफलप्रमाणन्तु — गुंजा फल (घुँघची) की मात्रा · जलैः सम्मिलितं शुभम् — जल में मिली हुई शुभ है · आत्मेच्छं पूरयेत् पात्रं — इच्छानुसार पात्र भरे · परमानन्दं परम् — परमानन्द देने वाला, परम

एतदप्युत्तमं द्रव्यं सर्वदेवप्रियं प्रिये ।

२८

एतानि मदहेतूनि मद्यान्यन्यानि कारयेत् ॥ २८ ॥

यह भी उत्तम द्रव्य है, सब देवताओं को प्रिय, हे प्रिये! ये मादक द्रव्य और अन्य मद्य भी बनवाये:

पदपाठ एतदप्युत्तमं द्रव्यं — यह भी उत्तम द्रव्य है · सर्वदेवप्रियं प्रिये — सब देवों को प्रिय, हे प्रिये · एतानि मदहेतूनि — ये मद के कारण · मद्यान्यन्यानि कारयेत् — और अन्य मद्य बनवाए

पानसं द्राक्षमाधूकं खार्जूरं तालमैक्षवम् ।

२९

मधूत्थं शीधु माध्वीकं मैरेयं नारिकेलजम् ॥ २९ ॥

कटहल, अंगूर, महुआ, खजूर, ताड़, ईख, शहद, शीधु, माध्वीक, मैरेय, और नारियल का —

पदपाठ पानसं द्राक्षमाधूकं — पानस (कटहल), द्राक्षा, महुआ का · खार्जूरं तालमैक्षवम् — खजूर, ताड़, ईख का · मधूत्थं शीधु माध्वीकं — मधु से बना, शीधु, माध्वीक · मैरेयं नारिकेलजम् — मैरेय, और नारियल से बना

मद्यान्येकादशैतानि भुक्तिमुक्तिकराणि च ।

३०

द्वादशन्तु सुरा मद्यं सर्वेषामुत्तमं प्रिये ॥ ३० ॥

ये ग्यारह मद्य भोग और मोक्ष देते हैं; पर बारहवाँ मद्य, सुरा, सबमें उत्तम है, हे प्रिये!

पदपाठ मद्यान्येकादशैतानि — ये ग्यारह मद्य · भुक्तिमुक्तिकराणि च — भुक्ति-मुक्ति देने वाले हैं · द्वादशन्तु सुरा मद्यं — बारहवाँ सुरा मद्य · सर्वेषामुत्तमं प्रिये — सबमें उत्तम है, हे प्रिये

पैष्टी गौडी च माध्वी च विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।

३१

सर्वसिद्धिकरी पैष्टी गौडी भोगप्रदायिनी ॥ ३१ ॥

सुरा तीन प्रकार की जाननी चाहिए: पैष्टी, गौड़ी और माध्वी। पैष्टी सर्वसिद्धि देती है, गौड़ी भोग देती है,

पदपाठ पैष्टी गौडी च माध्वी च — पैष्टी, गौड़ी और माध्वी · विज्ञेया त्रिविधा सुरा — सुरा तीन प्रकार की जाननी चाहिए · सर्वसिद्धिकरी पैष्टी — पैष्टी सब सिद्धि देने वाली · गौडी भोगप्रदायिनी — गौडी भोग देने वाली

माध्वी मुक्तिकरी ज्ञेया सुरा स्याद्देवताप्रिया ।

३२

विद्याप्रदैक्षवी ज्ञेया द्राक्षी राज्यप्रदा भवेत् ॥ ३२ ॥

और माध्वी मुक्ति देने वाली जाननी जाती है; सुरा देवताओं को प्रिय है। ईख का मद्य विद्या देता है, अंगूर का राज्य देता है;

पदपाठ माध्वी मुक्तिकरी ज्ञेया — माध्वी मुक्ति देने वाली जाननी चाहिए · सुरा स्याद्देवताप्रिया — सुरा देवताओं को प्रिय है · विद्याप्रदैक्षवी ज्ञेया — ईख की विद्या देने वाली जाननी चाहिए · द्राक्षी राज्यप्रदा भवेत् — द्राक्षा की राज्य देने वाली है

तालजा स्तम्भने शस्ता खार्जूरी रिपुनाशिनी ।

नारिकेलभवा श्रीदा पानसी च शुभप्रदा ॥ ३३ ॥

३३

ताड़ का मद्य स्तम्भन में प्रशस्त है, खजूर का शत्रुनाशक, नारियल का श्रीदायक, और कटहल का शुभ देने वाला;

पदपाठ तालजा स्तम्भने शस्ता — ताड़ की स्तम्भन में प्रशस्त · खार्जूरी रिपुनाशिनी — खजूर की शत्रुनाशिनी · नारिकेलभवा श्रीदा — नारियल की श्री देने वाली · पानसी च शुभप्रदा — और पानस की शुभ देने वाली

मधूकजा ज्ञानकरी माध्वीकी रोगनाशिनी ।

मैरेयाख्या कुलेशानि सर्वदा पापहारिणी ॥ ३४ ॥

३४

महुए का ज्ञान देता है, माध्वीक रोग नष्ट करता है, और मैरेय नामक, हे कुलेशानि! सदा पाप हरता है।

पदपाठ मधूकजा ज्ञानकरी — महुए की ज्ञान देने वाली · माध्वीकी रोगनाशिनी — माध्वीकी रोगनाशिनी · मैरेयाख्या कुलेशानि — मैरेय नामक, हे कुलेशानि · सर्वदा पापहारिणी — सदा पाप हरने वाली

क्षीरवृक्षसमुद्भूतं मद्यं वल्कलसम्भवम् ।

मधुपुष्पसमुद्भूतम् आसवं तण्डुलोद्भवम् ॥ ३५ ॥

३५

क्षीरवृक्ष से बना मद्य, छाल से बना, मधु-पुष्पों से बना, और चावल से बना आसव

पदपाठ क्षीरवृक्षसमुद्भूतं — क्षीरवृक्ष से बना · मद्यं वल्कलसम्भवम् — वल्कल (छाल) से बना मद्य · मधुपुष्पसमुद्भूतम् — मधुपुष्प से बना · आसवं तण्डुलोद्भवम् — और चावल से बना आसव

यस्यानन्दो निर्विकार आमोदश्च मनोहरः ।

३६

मद्यं तदुत्तमं देवि देवानां प्रीतिदायकम् ॥ ३६ ॥

जिसका आनन्द निर्विकार हो और सुगन्ध मनोहर — वह मद्य उत्तम है, हे देवि! देवताओं को प्रीति देने वाला।

पदपाठ यस्यानन्दो निर्विकार — जिसका आनन्द निर्विकार है · आमोदश्च मनोहरः — और सुगन्ध मनोहर · मद्यं तदुत्तमं देवि — वह मद्य उत्तम है, हे देवि · देवानां प्रीतिदायकम् — देवों को प्रीति देने वाला

आत्मेच्छं पूरयेत् पात्रं परमानन्दवर्द्धनम् ।

३७

एतदामोदकं द्रव्यं सर्वदेवप्रियं प्रिये ॥ ३७ ॥

अपनी इच्छानुसार पात्र भरे; यह परमानन्द को बढ़ाता है। यह सुगन्धित द्रव्य सब देवताओं को प्रिय है, हे प्रिये!

पदपाठ आत्मेच्छं पूरयेत् पात्रं — इच्छानुसार पात्र भरे · परमानन्दवर्द्धनम् — परमानन्द बढ़ाने वाला · एतदामोदकं द्रव्यं — यह सुगन्धित द्रव्य · सर्वदेवप्रियं प्रिये — सब देवों को प्रिय है, हे प्रिये

सुरादर्शनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ।

३८

तद्गन्धाघ्राणमात्रेण शतक्रतुफलं लभेत् ॥ ३८ ॥

सुरा के दर्शन मात्र से सब पापों से मुक्त हो जाता है; उसकी गन्ध सूँघने मात्र से सौ यज्ञों का फल पाता है;

पदपाठ सुरादर्शनमात्रेण — सुरा के दर्शन मात्र से · सर्वपापैः प्रमुच्यते — सब पापों से मुक्त होता है · तद्गन्धाघ्राणमात्रेण — उसकी गन्ध सूँघने मात्र से · शतक्रतुफलं लभेत् — सौ यज्ञों का फल पाता है

मद्यस्पर्शनमात्रेण तीर्थकोटिफलं लभेत् ।

देवि तत्पानतः साक्षाल्लभेन्मुक्तिं चतुर्विधाम् ॥ ३९ ॥

३९

मद्य के स्पर्श मात्र से करोड़ तीर्थों का फल पाता है; और हे देवि! उसके पान से साक्षात् चतुर्विध मुक्ति पाता है।

पदपाठ मद्यस्पर्शनमात्रेण — मद्य के स्पर्श मात्र से · तीर्थकोटिफलं लभेत् — करोड़ तीर्थों का फल पाता है · देवि तत्पानतः साक्षात् — हे देवि! उसके पान से साक्षात् · लभेन्मुक्तिं चतुर्विधाम् — चार प्रकार की मुक्ति पाता है

इच्छाशक्तिः सुरामोदे ज्ञानशक्तिश्च तद्रसे ।

तत्स्वादे च क्रियाशक्तिस्तदुल्लासे परा स्थिता ॥ ४० ॥

४०

सुरा की सुगन्ध में इच्छाशक्ति है, उसके रस में ज्ञानशक्ति, उसके स्वाद में क्रियाशक्ति — और उसके उल्लास में परा शक्ति स्थित है।

पदपाठ इच्छाशक्तिः सुरामोदे — इच्छाशक्ति सुरा की सुगन्ध में · ज्ञानशक्तिश्च तद्रसे — और ज्ञानशक्ति उसके रस में · तत्स्वादे च क्रियाशक्तिः — उसके स्वाद में क्रियाशक्ति · तदुल्लासे परा स्थिता — और उसके उल्लास में परा स्थित है

मदिरा ब्रह्मगाः प्रोक्ताः चित्तशोधनसाधनाः ।

तासामेकां समाहृत्य पूजाकर्म समाचरेत् ॥ ४१ ॥

४१

मदिराएँ ब्रह्म तक ले जाने वाली कही गयी हैं, चित्तशोधन का साधन; उनमें से एक लेकर पूजाकर्म करे।

पदपाठ मदिरा ब्रह्मगाः प्रोक्ताः — मदिराएँ ब्रह्म तक पहुँचाने वाली कही गई हैं · चित्तशोधनसाधनाः — चित्तशोधन के साधन · तासामेकां समाहृत्य — उनमें से एक लेकर · पूजाकर्म समाचरेत् — पूजाकर्म करे

मत्स्यमांसादिविजयां चाष्टगन्धैः सुमिश्रिताम् ।

संमर्द्य वटिकां कृत्वा संगृह्याथ विचक्षणः ।

४२

मद्याभावे तु वटिकां जले संयुज्य तर्पयेत् ॥ ४२ ॥

मछली, मांस आदि और विजया (भाँग) को अष्टगन्ध के साथ अच्छी तरह मिलाकर, पीसकर बुद्धिमान् गोली बनाकर रख ले; मद्य के अभाव में उस गोली को जल में मिलाकर तर्पण करे।

पदपाठ मत्स्यमांसादिविजयां — मत्स्य, मांस आदि, विजया (भाँग) · चाष्टगन्धैः सुमिश्रिताम् — अष्टगन्ध से भली प्रकार मिश्रित · संमर्द्य वटिकां कृत्वा — पीसकर गोली बनाकर · संगृह्याथ विचक्षणः — संग्रह कर, फिर विचक्षण · मद्याभावे तु वटिकां — मद्य के अभाव में गोली · जले संयुज्य तर्पयेत् — जल में मिलाकर तर्पण करे

गुडमिश्रेण तत्रेण तर्पयेत् मधुभाजिना ।

सौवीरेणाथवा कुयदितत् कर्म न लोपयेत् ।

४३

प्रमादाद् यदि लुप्येत देवताशापमाप्नुयात् ॥ ४३ ॥

गुड़ मिले मट्टे से, या शहद से, या काँजी से तर्पण करे — पर यह कर्म छोड़े नहीं; यदि प्रमाद से छूट जाये तो देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ गुडमिश्रेण तत्रेण — गुड़ मिले मट्टे से · तर्पयेत् मधुभाजिना — तर्पण करे, या मधु से · सौवीरेणाथवा कुर्यात् — अथवा सौवीर (काँजी) से करे · एतत् कर्म न लोपयेत् — यह कर्म न छोड़े · प्रमादाद् यदि लुप्येत — यदि प्रमाद से छूट जाए · देवताशापमाप्नुयात् — तो देवताओं का शाप पाता है

मांसन्तु त्रिविधं प्रोक्तं खभूजलचरं प्रिये ।

यथासम्भवमप्येकं तर्पणार्थं प्रकल्पयेत् ।

४४

मांसदर्शनमात्रेण सुरादर्शनवत् फलम् ॥ ४४॥

हे प्रिये! मांस तीन प्रकार का कहा गया है — आकाशचर, भूचर और जलचर प्राणियों का; जो भी सुलभ हो उसे तर्पण के लिए तैयार करे। मांस के दर्शन मात्र से सुरा-दर्शन के समान फल होता है।

पदपाठ मांसन्तु त्रिविधं प्रोक्तं — मांस तीन प्रकार का कहा गया है · खभूजलचरं प्रिये — आकाश, भूमि, जल में चलने वालों का, हे प्रिये · यथासम्भवमप्येकं — जो उपलब्ध हो, उनमें एक भी · तर्पणार्थं प्रकल्पयेत् — तर्पण के लिए तैयार करे · मांसदर्शनमात्रेण — मांस के दर्शन मात्र से · सुरादर्शनवत् फलम् — सुरा-दर्शन के समान फल

पितृदैवतयज्ञेषु वैधर्हिंसा विधीयते ।

आत्मार्थं प्राणिनां हिंसा कदाचिन्नोदिता प्रिये ॥ ४५॥

४५

पितृयज्ञ और देवयज्ञ में विधि-सम्मत हिंसा का विधान है; अपने लिए प्राणियों की हिंसा कभी नहीं कही गयी, हे प्रिये!

पदपाठ पितृदैवतयज्ञेषु — पितृ और देव यज्ञों में · वैधर्हिंसा विधीयते — वैध हिंसा विधान की गई है · आत्मार्थं प्राणिनां हिंसा — अपने लिए प्राणियों की हिंसा · कदाचिन्नोदिता प्रिये — कभी नहीं कही गई, हे प्रिये

अनिमित्तं तृणं वापि छेदयेन्न कदाचन ।

देवतार्थं द्विजार्थं वा हत्वा पापैर्न लिप्यते ॥ ४६ ॥

४६

बिना कारण एक तिनका भी कभी न काटे; पर देवता या द्विज के लिए मारकर पाप से लिप्त नहीं होता।

पदपाठ अनिमित्तं तृणं वापि — बिना कारण तिनका भी · छेदयेन्न कदाचन — कभी न काटे · देवतार्थं द्विजार्थं वा — देवता के लिए या ब्राह्मण के लिए · हत्वा पापैर्न लिप्यते — मारकर पाप से लिप्त नहीं होता

मामनादृत्य यत् पुण्यं पापं स्यात् प्रतिभाषतः ।

मन्निमित्तं चरेत् पापं पुण्यं भवति शाम्भवि ॥ ४७ ॥

४७

मेरा अनादर करके किया गया पुण्य पाप हो जाता है — यह स्पष्ट कहा गया है; और मेरे निमित्त किया गया पाप पुण्य हो जाता है, हे शाम्भवि!

पदपाठ मामनादृत्य यत् पुण्यं — मेरा अनादर कर जो पुण्य · पापं स्यात् प्रतिभाषतः — वह पाप है — स्पष्ट कहा गया · मन्निमित्तं चरेत् पापं — मेरे निमित्त जो पाप करे · पुण्यं भवति शाम्भवि — वह पुण्य हो जाता है, हे शाम्भवि

यैरेव पतनं द्रव्यैः सिद्धिस्तैरेव चोदिता ।

श्रीकौलदर्शने चापि भैरवेण महात्मना ॥ ४८ ॥

४८

जिन द्रव्यों से पतन होता है, उन्हीं से सिद्धि कही गयी है — श्रीकौलदर्शन में भी, महात्मा भैरव द्वारा।

पदपाठ यैरेव पतनं द्रव्यैः — जिन द्रव्यों से पतन होता है · सिद्धिस्तैरेव चोदिता — उन्हीं से सिद्धि कही गई है · श्रीकौलदर्शने चापि — श्रीकौलदर्शन में भी · भैरवेण महात्मना — महात्मा भैरव द्वारा

मत्कर्म कुर्वतां पुंसः कर्मलोपो भवेन्नहि ।

४९

तत्कर्म ते प्रकुर्वन्ति सप्तकोटिमुनीश्वराः ॥ ४९ ॥

मेरा कर्म करने वाले पुरुष का कर्म लुप्त नहीं होता; वही कर्म सात करोड़ मुनीश्वर करते हैं।

पदपाठ मत्कर्म कुर्वतां पुंसः — मेरा कर्म करने वाले पुरुष का · कर्मलोपो भवेन्नहि — कर्मलोप नहीं होता · तत्कर्म ते प्रकुर्वन्ति — वह कर्म वे करते हैं · सप्तकोटिमुनीश्वराः — सात करोड़ मुनीश्वर

हन्यान्मन्त्रेण चानेन त्वभिमन्त्र्य पशुं प्रिये ।

५०

गन्धपुष्पाक्षतैः पूज्य चान्यथा नरकं व्रजेत् ॥ ५० ॥

हे प्रिये! पशु को इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके, गन्ध, पुष्प और अक्षत से पूजकर मारे; अन्यथा नरक में जाता है।

पदपाठ हन्यान्मन्त्रेण चानेन — इस मन्त्र से मारे · त्वभिमन्त्र्य पशुं प्रिये — पशु को अभिमन्त्रित कर, हे प्रिये · गन्धपुष्पाक्षतैः पूज्य — गन्ध, पुष्प, अक्षत से पूजकर · चान्यथा नरकं व्रजेत् — अन्यथा नरक में जाता है

शिवोत्कृत्तमिदं पिण्डमतस्त्वं शिवतां गतः ।

५१

तद्बुध्यस्व पशो त्वं हि मा शिवस्त्वं शिवोऽसि हि ॥ ५१ ॥

"यह पिण्ड शिव द्वारा काटा गया है; इसलिए तुम शिवत्व को प्राप्त हुए। हे पशु! यह जानो: डरो मत — तुम शिव हो, तुम शिव ही हो।"

पदपाठ शिवोत्कृत्तमिदं पिण्डम् — "यह पिण्ड शिव ने काटा है" · अतस्त्वं शिवतां गतः — "इसलिए तू शिवत्व को प्राप्त हुआ" · तद्बुध्यस्व पशो त्वं हि — "यह जान, हे पशु — तू ही" · मा शिवस्त्वं शिवोऽसि हि — "(भय) मत कर, तू शिव है, तू शिव है"

ब्रह्मा स्यात् पलले विष्णुर्गन्धे रुद्रश्च तद्रसे ।

परमात्मा तदानन्दे तस्मात् सेव्यमिदं प्रिये ॥ ५२ ॥

५२

मांस में ब्रह्मा हैं, उसकी गन्ध में विष्णु, उसके रस में रुद्र, और उसके आनन्द में परमात्मा; इसलिए, हे प्रिये! इसका सेवन करना चाहिए।

पदपाठ ब्रह्मा स्यात् पलले — ब्रह्मा मांस में हैं · विष्णुर्गन्धे रुद्रश्च तद्रसे — विष्णु गन्ध में, रुद्र उसके रस में · परमात्मा तदानन्दे — परमात्मा उसके आनन्द में · तस्मात् सेव्यमिदं प्रिये — इसलिए यह सेव्य है, हे प्रिये

मांसाभावे तु लशुनं सार्द्रकं नागरन्तु वा ।

आदाय पूजयेद्देवि चान्यथा निष्फलं भवेत् ॥ ५३ ॥

५३

मांस के अभाव में लहसुन, अदरक या सोंठ लेकर पूजा करे, हे देवि! अन्यथा निष्फल होती है।

पदपाठ मांसाभावे तु लशुनं — मांस के अभाव में लहसुन · सार्द्रकं नागरन्तु वा — अदरक, या सोंठ · आदाय पूजयेद्देवि — लेकर पूजा करे, हे देवि · चान्यथा निष्फलं भवेत् — अन्यथा निष्फल होता है

मत्स्यमांसविहीनेन मद्येनापि न तर्पयेत् ।

न कुर्यान्मत्स्यमांसाभ्यां विना द्रव्येण पूजनम् ॥ ५४ ॥

५४

मछली और मांस के बिना मद्य से भी तर्पण न करे; मछली और मांस के बिना द्रव्य से पूजन न करे।

पदपाठ मत्स्यमांसविहीनेन — मत्स्य-मांस से रहित · मद्येनापि न तर्पयेत् — मद्य से भी तर्पण न करे · न कुर्यान्मत्स्यमांसाभ्यां — मत्स्य-मांस के बिना · विना द्रव्येण पूजनम् — द्रव्य से पूजन न करे

पिशितं तिलमात्रन्तु तिलाद्धमपि बिन्दुना ।
सकृत्तर्पणमात्रेण कोटियज्ञफलं लभेत् ॥ ५५॥

५५

तिल भर मांस, या आधा तिल भी, एक बूँद के साथ — एक बार के तर्पण मात्र से करोड़ यज्ञों का फल पाता है।

पदपाठ पिशितं तिलमात्रन्तु — तिल मात्र मांस · तिलाद्धमपि बिन्दुना — आधा तिल भी, एक बिन्दु से · सकृत्तर्पणमात्रेण — एक बार तर्पण मात्र से · कोटियज्ञफलं लभेत् — करोड़ यज्ञों का फल पाता है

कुलपूजासमं नास्ति पुण्यमन्यज्जगत्त्रये ।
तस्माद् यः पूजयेद्भक्त्या भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् ॥ ५६॥

५६

तीनों लोकों में कुलपूजा के समान कोई दूसरा पुण्य नहीं है; इसलिए जो भक्ति से पूजा करता है वह भोग और मोक्ष दोनों का पात्र है।

पदपाठ कुलपूजासमं नास्ति — कुलपूजा के समान नहीं है · पुण्यमन्यज्जगत्त्रये — कोई अन्य पुण्य तीनों लोकों में · तस्माद् यः पूजयेद्भक्त्या — इसलिए जो भक्ति से पूजा करे · भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् — वह भुक्ति-मुक्ति का पात्र है

अनधीतोऽप्यशास्त्रज्ञो गुरुभक्तो दृढव्रतः ।
कुलपूजारतो यस्तु स मे प्रियतमो भवेत् ॥ ५७॥

५७

अनपढ़ और शास्त्र न जानने वाला भी जो गुरुभक्त, दृढ़व्रती और कुलपूजा में रत है — वह मुझे सबसे प्रिय है।

पदपाठ अनधीतोऽप्यशास्त्रज्ञो — अनपढ़ और शास्त्र से अनजान भी · गुरुभक्तो दृढव्रतः — गुरुभक्त, दृढ़व्रती · कुलपूजारतो यस्तु — जो कुलपूजा में रत है · स मे प्रियतमो भवेत् — वह मुझे प्रियतम है

चतुर्णामपि वर्णानामाश्रमाणामपीश्वरि ।

५८

पुंस्त्रीनपुंसकानान्तु पूजितेष्टफलप्रदा ॥ ५८ ॥

चारों वर्णों और आश्रमों के लिए, हे ईश्वरि! पुरुष, स्त्री और नपुंसक सबके लिए — पूजित होने पर तुम इष्ट फल देती हो।

पदपाठ चतुर्णामपि वर्णानाम् — चारों वर्णों के भी · आश्रमाणामपीश्वरि — और आश्रमों के भी, हे ईश्वरि · पुंस्त्रीनपुंसकानान्तु — पुरुष, स्त्री, नपुंसकों के · पूजितेष्टफलप्रदा — पूजित होने पर इष्ट फल देने वाली

इहामुत्र फलं दद्याः पूजिता सुवधूरिव ।

५९

अपूजिता त्वं देवेशि दुःखदा कुवधूरिव ॥ ५९ ॥

पूजित होने पर तुम यहाँ और परलोक में फल देती हो, अच्छी वधू की तरह; अपूजित रहने पर, हे देवेशि! दुःख देती हो, बुरी वधू की तरह।

पदपाठ इहामुत्र फलं दद्याः — इस लोक और परलोक में फल दो · पूजिता सुवधूरिव — पूजित होने पर सुवधू (अच्छी पत्नी) की तरह · अपूजिता त्वं देवेशि — अपूजित तुम, हे देवेशि · दुःखदा कुवधूरिव — कुवधू की तरह दुःख देती हो

कुलपूजां विना यस्तु करोत्येवं सुदुर्मतिः ।

६०

स याति नरकं घोरमेकविंशतिभिः कुलैः ॥ ६० ॥

जो महामूर्ख कुलपूजा के बिना ऐसा (सेवन) करता है, वह इक्कीस पीढ़ियों सहित घोर नरक में जाता है।

पदपाठ कुलपूजां विना यस्तु — जो कुलपूजा के बिना · करोत्येवं सुदुर्मतिः — ऐसा करता है, वह अति दुर्बुद्धि · स याति नरकं घोरम् — घोर नरक में जाता है · एकविंशतिभिः कुलैः — इक्कीस कुलों (पीढ़ियों) सहित

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन कुलपूजारतो भवेत् ।
लभते सर्वसिद्धींश्च नात्र कार्या विचारणा ॥ ६१॥

६१

इसलिए सब प्रयत्न से कुलपूजा में रत रहे; सब सिद्धियाँ पाता है — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · कुलपूजारतो भवेत् — कुलपूजा में रत रहे · लभते सर्वसिद्धींश्च — और सब सिद्धियाँ पाता है · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं

आराधनासमर्थश्चेद्दद्यादर्चनसाधनम् ।
यो दातुं नैव शक्नोति कुर्यादर्चनदर्शनम् ॥ ६२॥

६२

यदि स्वयं आराधना में असमर्थ हो तो पूजा की सामग्री दे; जो देने में भी असमर्थ हो वह पूजा का दर्शन करे।

पदपाठ आराधनासमर्थश्चेत् — यदि आराधना में असमर्थ हो · दद्यादर्चनसाधनम् — तो पूजन की सामग्री दे · यो दातुं नैव शक्नोति — जो देने में भी असमर्थ हो · कुर्यादर्चनदर्शनम् — वह पूजन का दर्शन करे

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा यत् फलं समवाप्नुयात् ।
तत् फलं समवाप्नोति सकृत् कृत्वा क्रमार्चनम् ॥ ६३॥

६३

सौ यज्ञ विधिपूर्वक करके जो फल मिलता है — वह फल एक बार क्रमार्चन करने से मिलता है।

पदपाठ सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा — सौ यज्ञ सम्यक् करके · यत् फलं समवाप्नुयात् — जो फल पाता है · तत् फलं समवाप्नोति — वह फल पाता है · सकृत् कृत्वा क्रमार्चनम् — एक बार क्रमार्चन करके

महाषोडशदानानि कृत्वा यच्च फलं लभेत् ।
तत् फलं समवाप्नोति कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ॥ ६४॥

६४

सोलह महादान करके जो फल मिलता है — वह फल श्रीचक्र का दर्शन करने से मिलता है।

पदपाठ महाषोडशदानानि — महाषोडश दान · कृत्वा च यच्च फलं लभेत् — करके जो फल पाता है · तत् फलं समवाप्नोति — वह फल पाता है · कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् — श्रीचक्र का दर्शन करके

सार्द्धत्रिकोटितीर्थेषु स्नात्वा यत् फलमाप्नुयात् ।
तत् फलं लभते देवि सकृत् कृत्वा क्रमार्चनम् ॥ ६५॥

६५

साढ़े तीन करोड़ तीर्थों में स्नान करके जो फल मिलता है — वह फल, हे देवि! एक बार क्रमार्चन करने से मिलता है।

पदपाठ सार्द्धत्रिकोटितीर्थेषु — साढ़े तीन करोड़ तीर्थों में · स्नात्वा यत् फलमाप्नुयात् — स्नान करके जो फल पाता है · तत् फलं लभते देवि — वह फल पाता है, हे देवि · सकृत् कृत्वा क्रमार्चनम् — एक बार क्रमार्चन करके

बहुनोक्तेन किं देवि यथाभक्त्या ददाति यः ।
कुलाचार्याय पूजार्थं कुलद्रव्यं स धर्मवित् ॥ ६६॥

६६

अधिक कहने से क्या, हे देवि? जो यथाभक्ति कुलाचार्य को पूजा के लिए कुलद्रव्य देता है — वही धर्म को जानता है।

पदपाठ बहुनोक्तेन किं देवि — अधिक कहने से क्या, हे देवि · यथाभक्त्या ददाति यः — जो यथाभक्ति देता है · कुलाचार्याय पूजार्थं — कुलाचार्य को पूजा के लिए · कुलद्रव्यं स धर्मवित् — कुलद्रव्य — वह धर्मज्ञ है

शैवे वा वैष्णवे शाक्ते सौरै सुगतदर्शने ।

६७

बौद्धे पाशुपते सांख्ये व्रते कुलमुखे तथा ॥ ६७ ॥

शैव, वैष्णव, शाक्त, सौर या सुगत दर्शन में, बौद्ध, पाशुपत या सांख्य में, व्रत-मार्ग में और कुलमुख में,

पदपाठ शैवे वा वैष्णवे शाक्ते — शैव, वैष्णव, शाक्त में · सौरै सुगतदर्शने — सौर, सुगत दर्शन में · बौद्धे पाशुपते सांख्ये — बौद्ध, पाशुपत, सांख्य में · व्रते कुलमुखे तथा — व्रत में, कुलमुख में भी

सदक्षवामसिद्धान्ते वैदिकादिषु पार्वति ।

६८

विनाऽलिपिशिताभ्यान्तु पूजनं निष्फलं भवेत् ॥ ६८ ॥

दक्षिण, वाम और सिद्धान्त में, वैदिक आदि में, हे पार्वति! — मद्य और मांस के बिना पूजन निष्फल होता है।

पदपाठ सदक्षवामसिद्धान्ते — दक्षिण, वाम, सिद्धान्त में · वैदिकादिषु पार्वति — वैदिक आदि में, हे पार्वति · विनाऽलिपिशिताभ्यान्तु — मद्य और मांस के बिना · पूजनं निष्फलं भवेत् — पूजन निष्फल होता है

कुलद्रव्यैर्विना कुर्याज्जपयज्ञतपोव्रतम् ।

६९

निष्फलं तद्भवेद्देवि भस्मनीव यथा हुतम् ॥ ६९ ॥

यदि कुलद्रव्यों के बिना जप, यज्ञ, तप या व्रत करे, तो वह निष्फल होता है, हे देवि! — जैसे राख में की हुई आहुति।

पदपाठ कुलद्रव्यैर्विना कुर्यात् — कुलद्रव्यों के बिना यदि करे · जपयज्ञतपोव्रतम् — जप, यज्ञ, तप, व्रत · निष्फलं तद्भवेद्देवि — वह निष्फल होता है, हे देवि · भस्मनीव यथा हुतम् — जैसे भस्म में डाली आहुति

यथैवान्तश्चरा राज्ञः प्रियाः स्युर्न बहिश्चराः ।

७०

तथान्तर्यागनिष्ठा ये ते प्रिया देवि नापरे ॥ ७० ॥

जैसे राजा के अन्तःपुर के सेवक उसके प्रिय होते हैं, बाहर के नहीं, वैसे ही जो अन्तर्याग में निष्ठ हैं वे ही प्रिय हैं, हे देवि! दूसरे नहीं।

पदपाठ यथैवान्तश्चरा राज्ञः — जैसे राजा के अन्तःपुर के सेवक · प्रियाः स्युर्न बहिश्चराः — प्रिय होते हैं, बाहर वाले नहीं · तथान्तर्यागनिष्ठा ये — वैसे अन्तर्याग में निष्ठ जो हैं · ते प्रिया देवि नापरे — वे प्रिय हैं, हे देवि, दूसरे नहीं

समर्पयन्ति ये भक्त्या आवाभ्यां पिशितासवम् ।

७१

उत्पादयन्ति चानन्दं मत्प्रियाः कौलिकाश्च ते ॥ ७१ ॥

जो भक्ति से हम दोनों को मांस और आसव समर्पित करते हैं और आनन्द उत्पन्न करते हैं — वे मेरे प्रिय हैं, और वे ही कौलिक हैं।

पदपाठ समर्पयन्ति ये भक्त्या — जो भक्ति से समर्पित करते हैं · आवाभ्यां पिशितासवम् — हम दोनों को मांस और आसव · उत्पादयन्ति चानन्दं — और आनन्द उत्पन्न करते हैं · मत्प्रियाः कौलिकाश्च ते — वे मेरे प्रिय हैं, और वे कौलिक हैं

आवयोः परमाकारं सच्चिदानन्दलक्षणम् ।

७२

कुलद्रव्योपभोगेन परिस्फुरति नान्यथा ॥ ७२ ॥

हम दोनों का परम आकार, सच्चिदानन्द लक्षण वाला, कुलद्रव्यों के उपभोग से प्रकाशित होता है — अन्यथा नहीं।

पदपाठ आवयोः परमाकारं — हम दोनों का परम आकार · सच्चिदानन्दलक्षणम् — सच्चिदानन्द-लक्षण · कुलद्रव्योपभोगेन — कुलद्रव्य के उपभोग से · परिस्फुरति नान्यथा — स्फुरित होता है, अन्यथा नहीं

अन्तःस्थानुभवोल्लासो मनोवाचामगोचरः ।
कुलद्रव्योपभोगेन जायते नान्यथा प्रिये ॥ ७३ ॥

७३

मन और वाणी से परे भीतर का अनुभव-उल्लास कुलद्रव्यों के उपभोग से उत्पन्न होता है — अन्यथा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ अन्तःस्थानुभवोल्लासो — अन्तःस्थ अनुभव का उल्लास · मनोवाचामगोचरः — मन-वाणी से अगोचर · कुलद्रव्योपभोगेन — कुलद्रव्य के उपभोग से · जायते नान्यथा प्रिये — उत्पन्न होता है, अन्यथा नहीं, हे प्रिये

सेविते च कुलद्रव्ये कुलतत्त्वार्थदर्शनः ।
जायते भैरवावेशः सर्वत्र समदर्शनः ॥ ७४ ॥

७४

कुलद्रव्य के सेवन से कुलतत्त्व के अर्थ को देखने वाला भैरव से आविष्ट हो जाता है और सर्वत्र समदर्शी होता है।

पदपाठ सेविते च कुलद्रव्ये — कुलद्रव्य के सेवन पर · कुलतत्त्वार्थदर्शनः — कुलतत्त्व के अर्थ को देखने वाला · जायते भैरवावेशः — भैरव-आवेश होता है · सर्वत्र समदर्शनः — सर्वत्र समदर्शी

तमःपरिवृतं वेश्म यथा दीपेन दृश्यते ।
तथा मायावृतो ह्यात्मा द्रव्यपानेन दृश्यते ॥ ७५ ॥

७५

जैसे अन्धकार से घिरा घर दीपक से दिखाई देता है, वैसे ही माया से ढका आत्मा द्रव्य के पान से दिखाई देता है।

पदपाठ तमःपरिवृतं वेश्म — अन्धकार से घिरा घर · यथा दीपेन दृश्यते — जैसे दीपक से दिखता है · तथा मायावृतो ह्यात्मा — वैसे माया से आवृत आत्मा · द्रव्यपानेन दृश्यते — द्रव्यपान से दिखता है

मन्त्रपूतं कुलद्रव्यं गुरुदेवार्पितं प्रिये ।

ये पिबन्ति जनास्तेषां स्तन्यपानं न विद्यते ॥ ७६॥

७६

मन्त्र से पवित्र, गुरु और देवता को अर्पित कुलद्रव्य को जो लोग पीते हैं, हे प्रिये! उनके लिए फिर माता का स्तनपान नहीं होता (पुनर्जन्म नहीं होता)।

पदपाठ मन्त्रपूतं कुलद्रव्यं — मन्त्र से पवित्र कुलद्रव्य · गुरुदेवार्पितं प्रिये — गुरु-देव को अर्पित, हे प्रिये · ये पिबन्ति जनास्तेषां — जो लोग पीते हैं, उनका · स्तन्यपानं न विद्यते — फिर स्तनपान नहीं होता (पुनर्जन्म नहीं)

मद्यन्तु भैरवो देवो मद्यं शक्तिः समीरिता ।

अहो भोक्ता च मद्यस्य मोहयेदमरानपि ॥ ७७॥

७७

मद्य भैरव देव है, मद्य ही शक्ति कही गयी है; अहो! मद्य का भोक्ता देवताओं को भी मोहित कर दे।

पदपाठ मद्यन्तु भैरवो देवो — मद्य भैरव देव है · मद्यं शक्तिः समीरिता — मद्य शक्ति कहा गया है · अहो भोक्ता च मद्यस्य — अहो! मद्य का भोक्ता · मोहयेदमरानपि — अमरों को भी मोहित करे

तन्मैरेयं नरः पीत्वा यो न विकुरुते प्रिये ।

मद्भ्यानैकपरो भूत्वा स मुक्तः स च कौलिकः ॥ ७८॥

७८

हे प्रिये! जो पुरुष उस मैरेय को पीकर विकृत नहीं होता, बल्कि मेरे ध्यान में एकाग्र हो जाता है — वह मुक्त है, और वही कौलिक है।

पदपाठ तन्मैरेयं नरः पीत्वा — उस मैरेय को पीकर मनुष्य · यो न विकुरुते प्रिये — जो विकृत नहीं होता, हे प्रिये · मद्भ्यानैकपरो भूत्वा — मेरे ध्यान में एकनिष्ठ होकर · स मुक्तः स च कौलिकः — वह मुक्त है, और वह कौलिक है

सुरा शक्तिः शिवो मांसं तद्भोक्ता भैरवः स्वयम् ।

७९

तयोरैक्यसमुत्पन्न आनन्दो मोक्ष उच्यते ॥ ७९ ॥

सुरा शक्ति है, मांस शिव है, और उनका भोक्ता स्वयं भैरव है; उन दोनों के ऐक्य से उत्पन्न आनन्द मोक्ष कहलाता है।

पदपाठ सुरा शक्तिः शिवो मांसं — सुरा शक्ति है, शिव मांस है · तद्भोक्ता भैरवः स्वयम् — उनका भोक्ता स्वयं भैरव है · तयोरैक्यसमुत्पन्न — उन दोनों के ऐक्य से उत्पन्न · आनन्दो मोक्ष उच्यते — आनन्द मोक्ष कहलाता है

आनन्दं ब्रह्मणो रूपं तच्च देहे व्यवस्थितम् ।

८०

तस्याभिव्यञ्जकं मद्यं योगिभिस्तेन पीयते ॥ ८० ॥

आनन्द ब्रह्म का रूप है, और वह देह में स्थित है; मद्य उसे प्रकट करने वाला है — इसलिए योगी उसे पीते हैं।

पदपाठ आनन्दं ब्रह्मणो रूपं — आनन्द ब्रह्म का रूप है · तच्च देहे व्यवस्थितम् — और वह देह में स्थित है · तस्याभिव्यञ्जकं मद्यं — उसका अभिव्यञ्जक मद्य है · योगिभिस्तेन पीयते — इसलिए योगी उसे पीते हैं

कुण्डी कम्बुकपालानि मधुपूर्णानि बिभ्रतः ।

८१

किं न पश्यति लोकोऽयं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ॥ ८१ ॥

क्या यह लोक ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर को मधु से भरे कमण्डलु, शङ्ख और कपाल धारण किये हुए नहीं देखता?

पदपाठ कुण्डी कम्बुकपालानि — कुण्डी, शंख और कपाल · मधुपूर्णानि बिभ्रतः — मधु से भरे धारण करते · किं न पश्यति लोकोऽयं — क्या यह लोक नहीं देखता · ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् — ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर को

निःशङ्को निर्भयो वीरो निर्लज्जो निष्कुतूहलः ।
निर्णीतवेदशास्त्रार्थो वरदां वारुणीं पिबेत् ॥ ८२ ॥

८२

निःशङ्क, निर्भय, निर्लज्ज, कुतूहल-रहित, वेद और शास्त्र के अर्थ का निर्णय कर चुका वीर — वरदायिनी वारुणी का पान करे।

पदपाठ निःशङ्को निर्भयो वीरो — निःशंक, निर्भय वीर · निर्लज्जो निष्कुतूहलः — निर्लज्ज, निष्कुतूहल · निर्णीतवेदशास्त्रार्थो — वेद-शास्त्र का अर्थ निर्णीत कर · वरदां वारुणीं पिबेत् — वरदायिनी वारुणी पिए

मन्त्रसंस्कारसंशुद्धामृतपानेन पार्वति ।
जायते देवताभावो भवबन्धविमोचकः ॥ ८३ ॥

८३

मन्त्र-संस्कार से शुद्ध अमृत के पान से, हे पार्वति! देवताभाव उत्पन्न होता है, जो संसार-बन्धन से छुड़ाने वाला है।

पदपाठ मन्त्रसंस्कारसंशुद्ध — मन्त्र-संस्कार से संशुद्ध · अमृतपानेन पार्वति — अमृतपान से, हे पार्वति · जायते देवताभावो — देवताभाव उत्पन्न होता है · भवबन्धविमोचकः — भव-बन्धन से मुक्त करने वाला

ब्राह्मणस्य सदा पेयं क्षत्रियस्य रणागमे ।
गोलम्बने तु वैश्यस्य शूद्रस्यान्त्येष्टिकर्मणि ॥ ८४ ॥

८४

ब्राह्मण के लिए सदा पेय है; क्षत्रिय के लिए रण के आरम्भ में; वैश्य के लिए गो-लाभ के समय; शूद्र के लिए अन्त्येष्टि कर्म में।

पदपाठ ब्राह्मणस्य सदा पेयं — ब्राह्मण को सदा पेय है · क्षत्रियस्य रणागमे — क्षत्रिय को रण के आरम्भ में · गोलम्बने तु वैश्यस्य — वैश्य को गो-प्राप्ति में · शूद्रस्यान्त्येष्टिकर्मणि — शूद्र को अन्त्येष्टि कर्म में

देवान् पितृन् समभ्यर्च्य देवि शास्त्रोक्तवर्त्मना ।

गुरुं स्मरन् पिबन्मद्यं खादन् मांसं न दोषभाक् ॥ ८५ ॥

८५

हे देवि! शास्त्रोक्त मार्ग से देवताओं और पितरों की पूजा करके, गुरु का स्मरण करते हुए मद्य पीने और मांस खाने वाला दोष का भागी नहीं होता।

पदपाठ देवान् पितृन् समभ्यर्च्य — देवों और पितरों की पूजा कर · देवि शास्त्रोक्तवर्त्मना — हे देवि, शास्त्रोक्त मार्ग से · गुरुं स्मरन् पिबन्मद्यं — गुरु का स्मरण करते हुए मद्य पीता · खादन् मांसं न दोषभाक् — मांस खाता, दोष का भागी नहीं

तृप्त्यर्थं पितृदेवानां ब्रह्मध्यानस्थिराय च ।

सेवेत मधुमांसानि तृष्णया चेत् स पातकी ॥ ८६ ॥

८६

पितरों और देवताओं की तृप्ति के लिए और ब्रह्मध्यान की स्थिरता के लिए मधु और मांस का सेवन करे; यदि तृष्णा से करे तो वह पातकी है।

पदपाठ तृप्त्यर्थं पितृदेवानां — पितरों और देवों की तृप्ति के लिए · ब्रह्मध्यानस्थिराय च — और ब्रह्मध्यान की स्थिरता के लिए · सेवेत मधुमांसानि — मधु-मांस का सेवन करे · तृष्णया चेत् स पातकी — यदि तृष्णा से, तो वह पातकी है

मन्त्रार्थस्फुरणार्थाय मनसः स्थैर्यहितवे ।

भवपाशनिवृत्त्यर्थं मधुपानं समाचरेत् ॥ ८७ ॥

८७

मन्त्र के अर्थ के स्फुरण के लिए, मन की स्थिरता के लिए और भवपाश से छूटने के लिए मधुपान करे।

पदपाठ मन्त्रार्थस्फुरणार्थाय — मन्त्रार्थ के स्फुरण के लिए · मनसः स्थैर्यहितवे — मन की स्थिरता के लिए · भवपाशनिवृत्त्यर्थं — भवपाश की निवृत्ति के लिए · मधुपानं समाचरेत् — मधुपान करे

सेवेत स्वसुखार्थं यो मद्यादीनि स पातकी ।

प्राशयेद्देवताप्रीत्यै स्वाभिलाषविवर्जितः ॥ ८८ ॥

८८

जो अपने सुख के लिए मद्य आदि का सेवन करता है वह पातकी है; देवता की प्रसन्नता के लिए, अपनी अभिलाषा से रहित होकर सेवन करे।

पदपाठ सेवेत स्वसुखार्थं यो — जो अपने सुख के लिए सेवन करे · मद्यादीनि स पातकी — मद्य आदि का — वह पातकी है · प्राशयेद्देवताप्रीत्यै — देवता की प्रीति के लिए ग्रहण करे · स्वाभिलाषविवर्जितः — अपनी अभिलाषा से रहित

मत्स्यमांससुरादीनां मादकानां निषेवणम् ।

यागकालं विनान्यत्र दूषणं कथितं प्रिये ॥ ८९ ॥

८९

मछली, मांस, सुरा आदि मादक पदार्थों का सेवन याग-काल के अतिरिक्त अन्यत्र दोष कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ मत्स्यमांससुरादीनां — मत्स्य, मांस, सुरा आदि · मादकानां निषेवणम् — मादक पदार्थों का सेवन · यागकालं विनान्यत्र — याग-काल के अतिरिक्त · दूषणं कथितं प्रिये — दोष कहा गया है, हे प्रिये

यथा क्रतुषु विप्राणां सोमपानं विधीयते ।

मद्यपानं तथा कार्यं समये भोगमोक्षदम् ॥ ९० ॥

९०

जैसे यज्ञों में ब्राह्मणों के लिए सोमपान का विधान है, वैसे ही समय पर मद्यपान करना चाहिए — वह भोग और मोक्ष देने वाला है।

पदपाठ यथा क्रतुषु विप्राणां — जैसे यज्ञों में ब्राह्मणों को · सोमपानं विधीयते — सोमपान विधान किया गया है · मद्यपानं तथा कार्यं — वैसे मद्यपान करना चाहिए · समये भोगमोक्षदम् — समय पर, भोग-मोक्ष देने वाला

श्रीगुरुः कुलशास्त्रेभ्यः सम्यग्विज्ञाय वासनाम् ।

पञ्चमुद्रा निषेवेत चान्यथा पतितो भवेत् ॥ ९१ ॥

९१

श्रीगुरु और कुलशास्त्रों से उनकी वासना (गूढ़ अर्थ) को भली-भाँति जानकर पञ्चमुद्राओं का सेवन करे; अन्यथा पतित हो जाता है।

पदपाठ श्रीगुरुः कुलशास्त्रेभ्यः — श्रीगुरु और कुलशास्त्रों से · सम्यग्विज्ञाय वासनाम् — वासना (गूढ़ अर्थ) को सम्यक् जानकर · पञ्चमुद्रा निषेवेत — पाँच मुद्राओं का सेवन करे · चान्यथा पतितो भवेत् — अन्यथा पतित हो जाता है

आवृत्तिं गुरुपङ्क्तिञ्च वटुकादीन्न पूज्य यः ।

वीरोऽप्यत्र वृथा पानी देवताशापमाप्नुयात् ॥ ९२ ॥

९२

जो आवृत्ति, गुरुपङ्क्ति और वटुक आदि की पूजा किये बिना पीता है — वीर होने पर भी उसका पान व्यर्थ है और वह देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ आवृत्तिं गुरुपङ्क्तिञ्च — आवृत्ति और गुरुपङ्क्ति · वटुकादीन्न पूज्य यः — वटुक आदि को जो न पूजकर · वीरोऽप्यत्र वृथा पानी — वीर भी यहाँ व्यर्थ पान करता · देवताशापमाप्नुयात् — देवताओं का शाप पाता है

अयष्ट्वा भैरवं देवमकृत्वा मन्त्रतर्पणम् ।

पशुपानविधौ पीत्वा वीरोऽपि नरकं व्रजेत् ॥ ९३ ॥

९३

भैरव देव की पूजा किये बिना, मन्त्र-तर्पण किये बिना, पशु की तरह पीकर वीर भी नरक में जाता है।

पदपाठ अयष्ट्वा भैरवं देवम् — भैरव देव को न पूजकर · अकृत्वा मन्त्रतर्पणम् — मन्त्र-तर्पण न करके · पशुपानविधौ पीत्वा — पशु के पान-विधान से पीकर · वीरोऽपि नरकं व्रजेत् — वीर भी नरक में जाता है

अज्ञात्वा कौलिकाचारमयष्ट्वा गुरुपादुकाम् ।
योऽस्मिन् शास्त्रे प्रवर्तेत तं त्वं पीडयसि ध्रुवम् ॥ ९४ ॥

९४

जो कौलिक आचार को जाने बिना और गुरुपादुका की पूजा किये बिना इस शास्त्र में प्रवृत्त होता है — उसे तुम निश्चय ही पीड़ित करती हो।

पदपाठ अज्ञात्वा कौलिकाचारम् — कौलिक आचार को न जानकर · अयष्ट्वा गुरुपादुकाम् — गुरुपादुका को न पूजकर · योऽस्मिन् शास्त्रे प्रवर्तेत — जो इस शास्त्र में प्रवृत्त हो · तं त्वं पीडयसि ध्रुवम् — उसे तुम निश्चय पीड़ित करती हो

कौलज्ञाने ह्यसिद्धो यस्तद्द्रव्यं भोक्तुमिच्छति ।
स महापातकी ज्ञेयः सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥ ९५ ॥

९५

जो कौलज्ञान में असिद्ध होकर उस द्रव्य का भोग करना चाहता है, उसे महापातकी और सब धर्मों से बहिष्कृत जानना चाहिए।

पदपाठ कौलज्ञाने ह्यसिद्धो यः — जो कौलज्ञान में असिद्ध है · तद्द्रव्यं भोक्तुमिच्छति — वह द्रव्य भोगना चाहता है · स महापातकी ज्ञेयः — उसे महापातकी जानना चाहिए · सर्वधर्मबहिष्कृतः — सब धर्मों से बहिष्कृत

समयाचारहीनस्य स्वैरवृत्तेर्दुरात्मनः ।
न सिद्धयः कुलभ्रंशस्तत्संसर्गं न कारयेत् ॥ ९६ ॥

९६

समयाचार से हीन, स्वेच्छाचारी, दुरात्मा को सिद्धियाँ नहीं मिलतीं, कुल से भ्रंश होता है; उसका संसर्ग न करे।

पदपाठ समयाचारहीनस्य — समयाचार से हीन · स्वैरवृत्तेर्दुरात्मनः — स्वैराचारी, दुरात्मा का · न सिद्धयः कुलभ्रंशः — सिद्धि नहीं, कुल से भ्रंश होता है · तत्संसर्गं न कारयेत् — उसका संसर्ग न करे

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।

९७

स सिद्धिमिह नाप्नोति परत्र न परां गतिम् ॥ ९७ ॥

जो शास्त्र-विधि छोड़कर मनमाने ढंग से आचरण करता है, वह न यहाँ सिद्धि पाता है न परलोक में परम गति।

पदपाठ यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य — जो शास्त्र-विधि छोड़कर · वर्तते कामकारतः — मनमाने ढंग से चलता है · स सिद्धिमिह नाप्नोति — वह यहाँ सिद्धि नहीं पाता · परत्र न परां गतिम् — न परलोक में परा गति

स्वेच्छया रममाणो यो दीक्षासंस्कारवर्जितः ।

९८

न तस्य सद्गतिः क्वापि तपस्तीर्थव्रतादिभिः ॥ ९८ ॥

जो दीक्षा-संस्कार से रहित होकर स्वेच्छा से रमण करता है, उसकी कहीं भी सद्गति नहीं — तप, तीर्थ, व्रत आदि से भी नहीं।

पदपाठ स्वेच्छया रममाणो यो — जो स्वेच्छा से रमण करता है · दीक्षासंस्कारवर्जितः — दीक्षा-संस्कार से रहित · न तस्य सद्गतिः क्वापि — उसकी कहीं सद्गति नहीं · तपस्तीर्थव्रतादिभिः — तप, तीर्थ, व्रत आदि से भी

असंस्कृतं पिबेद्द्रव्यं बलात्कारेण मैथुनम् ।

९९

स्वप्रियेण हतं मांसं रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ९९ ॥

जो असंस्कृत द्रव्य पीता है, बलपूर्वक मैथुन करता है, या अपने सुख के लिए मारा गया मांस खाता है, वह रौरव नरक में जाता है।

पदपाठ असंस्कृतं पिबेद्द्रव्यं — असंस्कृत द्रव्य पिए · बलात्कारेण मैथुनम् — बलात्कार से मैथुन · स्वप्रियेण हतं मांसं — अपनी रुचि से मारा मांस · रौरवं नरकं व्रजेत् — रौरव नरक में जाता है

कौलाः पशुव्रतस्थाश्चेत् पक्षद्वयविडम्बकाः ।

१००

केशसंख्या स्मृता यावत्तावत्तिष्ठन्ति रौरवे ॥ १००॥

यदि कौल पशु-व्रत में स्थित हों, तो वे दोनों पक्षों का उपहास करते हैं; जितने केश गिने जाते हैं उतने (वर्ष) तक वे रौरव में रहते हैं।

पदपाठ कौलाः पशुव्रतस्थाश्चेत् — यदि कौल पशु-व्रत में स्थित हों · पक्षद्वयविडम्बकाः — दोनों पक्षों की नकल करने वाले · केशसंख्या स्मृता यावत् — जितनी केशों की संख्या कही गई · तावत्तिष्ठन्ति रौरवे — उतने (काल) रौरव में रहते हैं

कुलद्रव्याणि सेवेत योऽन्यदर्शनमाश्रितः ।

१०१

तदङ्गरोमसंख्यातं भूतयोनिषु जायते ॥ १०१॥

जो अन्य दर्शन का आश्रय लेकर कुलद्रव्यों का सेवन करता है, वह अपने अंग के रोमों की संख्या जितनी बार भूतयोनियों में जन्म लेता है।

पदपाठ कुलद्रव्याणि सेवेत — कुलद्रव्यों का सेवन करता है · योऽन्यदर्शनमाश्रितः — जो अन्य दर्शन के आश्रित है · तदङ्गरोमसंख्यातं — उसके अंगों के रोमों की संख्या के बराबर · भूतयोनिषु जायते — भूत-योनियों में जन्मता है

मदप्रच्छादितात्मा च न किञ्चिदपि वेत्ति च ।

१०२

न ध्यानं न तपो नार्चा न धर्मो न च सत्क्रिया ॥ १०२॥

जिसका आत्मा मद से ढका है वह कुछ भी नहीं जानता — न ध्यान, न तप, न अर्चा, न धर्म, न सत्क्रिया,

पदपाठ मदप्रच्छादितात्मा च — मद से आच्छादित आत्मा वाला · न किञ्चिदपि वेत्ति च — और कुछ भी नहीं जानता · न ध्यानं न तपो नार्चा — न ध्यान, न तप, न अर्चा · न धर्मो न च सत्क्रिया — न धर्म, न सत्क्रिया

न दैवं न गुरुर्नात्मविचारो न स कौलिकः ।

१०३

केवलं विषयासक्तः पतत्येव न संशयः ॥ १०३ ॥

न देवता, न गुरु, न आत्मविचार — वह कौलिक नहीं है; केवल विषयों में आसक्त होकर वह अवश्य गिरता है, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ न दैवं न गुरुर्न — न दैव, न गुरु, न · आत्मविचारो न स कौलिकः — आत्मविचार — वह कौलिक नहीं · केवलं विषयासक्तः — केवल विषयासक्त · पतत्येव न संशयः — गिरता ही है, सन्देह नहीं

मद्यासक्तो न पूजार्थी मांसाशी स्त्रीनिषेवकः ।

१०४

कौलोपदेशहीनो यः सोऽक्षयं नरकं व्रजेत् ॥ १०४ ॥

मद्य में आसक्त, पूजा का अनिच्छुक, मांसभोजी, स्त्रीसेवी, कौल उपदेश से हीन — वह अक्षय नरक में जाता है।

पदपाठ मद्यासक्तो न पूजार्थी — मद्यासक्त, पूजा न चाहने वाला · मांसाशी स्त्रीनिषेवकः — मांसाहारी, स्त्री-सेवी · कौलोपदेशहीनो यः — जो कौल-उपदेश से हीन है · सोऽक्षयं नरकं व्रजेत् — वह अक्षय नरक में जाता है

असंस्कारी तु यो नौ स्यात् पञ्च मुद्रा निषेवते ।

१०५

कुलेशि ब्रह्मनिष्ठोऽपि निन्द्यतामधिगच्छति ॥ १०५ ॥

जो हम दोनों के प्रति संस्कार-रहित होकर पञ्चमुद्राओं का सेवन करता है, हे कुलेशि! वह ब्रह्मनिष्ठ होने पर भी निन्दा को प्राप्त होता है।

पदपाठ असंस्कारी तु यो नौ स्यात् — जो हम दोनों के प्रति असंस्कारी है · पञ्च मुद्रा निषेवते — और पाँच मुद्राओं का सेवन करता है · कुलेशि ब्रह्मनिष्ठोऽपि — हे कुलेशि! ब्रह्मनिष्ठ भी · निन्द्यतामधिगच्छति — निन्दा का पात्र होता है

लिङ्गत्रयविशेषज्ञः षडाधारविभेदकः ।

१०६

पीठस्थानानि चागत्य महापद्मवनं व्रजेत् ॥ १०६ ॥

तीन लिङ्गों के भेद को जानने वाला, छह आधारों का भेदन करने वाला, पीठस्थानों में पहुँचकर महापद्मवन में जाता है।

पदपाठ लिङ्गत्रयविशेषज्ञः — तीन लिङ्गों का विशेषज्ञ · षडाधारविभेदकः — छह आधारों का भेदन करने वाला · पीठस्थानानि चागत्य — पीठस्थानों में पहुँचकर · महापद्मवनं व्रजेत् — महापद्म-वन में जाता है

आमूलाधारमाब्रह्मरन्ध्रं गत्वा पुनः पुनः ।

१०७

चिच्चन्द्रकुण्डलीशक्तिसामरस्यसुखोदयः ॥ १०७ ॥

मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक बार-बार जाकर, चित्-चन्द्र और कुण्डली शक्ति के सामरस्य से उत्पन्न सुख का उदय —

पदपाठ आमूलाधारमाब्रह्मरन्ध्रं — मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक · गत्वा पुनः पुनः — बार-बार जाकर · चिच्चन्द्रकुण्डलीशक्ति- — चिच्चन्द्र और कुण्डली शक्ति के · सामरस्यसुखोदयः — सामरस्य-सुख का उदय

व्योमपङ्कजनिस्स्यन्दसुधापानरतो नरः ।

१०८

सुधापानमिदं प्रोक्तमितरे मद्यपायिनः ॥ १०८ ॥

व्योम-पङ्कज से झरने वाली सुधा के पान में रत पुरुष — यही सुधापान कहा गया है; दूसरे केवल मद्यपायी हैं।

पदपाठ व्योमपङ्कजनिस्स्यन्द- — व्योम-कमल से झरने वाली · सुधापानरतो नरः — सुधा के पान में रत मनुष्य · सुधापानमिदं प्रोक्तम् — यह सुधापान कहा गया है · इतरे मद्यपायिनः — अन्य केवल मद्यपायी हैं

पुण्यापुण्यपशुं हत्वा ज्ञानखड्गेन योगवित् ।

१०९

परे लयं नयेच्चित्तं पलाशी स निगद्यते ॥ १०९ ॥

जो योगवेत्ता ज्ञान की तलवार से पुण्य-पाप रूपी पशु को मारकर चित्त को पर में लीन करता है — वही पलाशी (मांसभोजी) कहा जाता है।

पदपाठ पुण्यापुण्यपशुं हत्वा — पुण्य-अपुण्य के पशु को मारकर · ज्ञानखड्गेन योगवित् — ज्ञान-खड्ग से योगवेत्ता · परे लयं नयेच्चित्तं — चित्त को पर में लय करे · पलाशी स निगद्यते — वह "पलाशी" (मांसभोजी) कहलाता है

मनसा चेन्द्रियगणं संयम्यात्मनि योजयेत् ।

११०

मत्स्याशी स भवेद्देवि शेषाः स्युः प्राणिर्हिंसकाः ॥ ११० ॥

जो मन सहित इन्द्रिय-समूह को संयत करके आत्मा में जोड़ता है — वही मत्स्याशी है, हे देवि! शेष तो प्राणियों के हिंसक मात्र हैं।

पदपाठ मनसा चेन्द्रियगणं — मन सहित इन्द्रियगण को · संयम्यात्मनि योजयेत् — संयम कर आत्मा में जोड़े · मत्स्याशी स भवेद्देवि — वह मत्स्याशी है, हे देवि · शेषाः स्युः प्राणिर्हिंसकाः — शेष प्राणियों के हिंसक हैं

अप्रबुद्धा पशोः शक्तिः प्रबुद्धा कौलिकस्य च ।

१११

शक्तिं तां सेवयेत् यस्तु स भवेत् शक्तिसेवकः ॥ १११ ॥

पशु की शक्ति अप्रबुद्ध है, और कौलिक की प्रबुद्ध; जो उस (प्रबुद्ध) शक्ति का सेवन करता है — वही शक्तिसेवक है।

पदपाठ अप्रबुद्धा पशोः शक्तिः — पशु की शक्ति अप्रबुद्ध है · प्रबुद्धा कौलिकस्य च — और कौलिक की प्रबुद्ध · शक्तिं तां सेवयेत् यस्तु — जो उस शक्ति की सेवा करता है · स भवेत् शक्तिसेवकः — वह शक्तिसेवक है

पराशक्त्यात्ममिथुनसंयोगानन्दनिर्भरः ।

११२

य आस्ते मैथुनं तत् स्यादपरे स्त्रीनिषेवकाः ॥ ११२ ॥

जो पराशक्ति और आत्मा रूपी मिथुन के संयोग के आनन्द से परिपूर्ण रहता है — वही मैथुन है; दूसरे केवल स्त्रीसेवी हैं।

पदपाठ पराशक्त्यात्ममिथुन- — पराशक्ति और आत्मा के मिथुन के · संयोगानन्दनिर्भरः — संयोग के आनन्द से पूर्ण · य आस्ते मैथुनं तत् स्यात् — जो रहता है — वह मैथुन है · अपरे स्त्रीनिषेवकाः — अन्य केवल स्त्री-सेवक हैं

इत्यादि पञ्चमुद्राणां वासनां कुलनायिके ।

११३

ज्ञात्वा गुरुमुखादेवि यः सेवेत स मुच्यते ॥ ११३ ॥

हे कुलनायिके! पञ्चमुद्राओं की इस प्रकार की वासना को गुरु के मुख से जानकर, हे देवि! जो सेवन करता है वह मुक्त हो जाता है।

पदपाठ इत्यादि पञ्चमुद्राणां — इत्यादि पाँच मुद्राओं की · वासनां कुलनायिके — वासना (गूढ़ अर्थ), हे कुलनायिके · ज्ञात्वा गुरुमुखादेवि — गुरुमुख से जानकर, हे देवि · यः सेवेत स मुच्यते — जो सेवन करे, वह मुक्त होता है

इति ते कथितं देवि कुलद्रव्यादिलक्षणम् ।

११४

समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ११४ ॥

इस प्रकार, हे देवि! मैंने तुम्हें कुलद्रव्य आदि के लक्षण संक्षेप में कहे, हे कुलेशानि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं देवि — इस प्रकार तुम्हें कहा गया, हे देवि · कुलद्रव्यादिलक्षणम् — कुलद्रव्य आदि के लक्षण · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे कुलमाहात्म्यकथनं नाम पञ्चम उल्लासः ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
कुलमाहात्म्यकथन नामक पञ्चम उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ षष्ठोल्लासः

षष्ठ उल्लास — द्रव्यसंस्कारविधानम्



ईश्वर योग्य पूजक, पञ्चशुद्धि, मण्डल और पात्र, मद्य को संस्कृत करने वाली कलाओं और मन्त्रों, गुरुपंक्तियों, देवी के आवाहन, यन्त्र और तर्पण के नियमों का वर्णन करते हैं।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि पूजकस्य च लक्षणम् ।

१

कुलद्रव्यादिसंस्कारमर्चनं वद मे प्रभो ॥ १॥

हे कुलेश! मैं पूजक के लक्षण, कुलद्रव्य आदि का संस्कार और अर्चन सुनना चाहती हूँ; हे प्रभो! मुझे बताइए।

पदपाठ कुलेश — हे कुलेश · श्रोतुमिच्छामि — मैं सुनना चाहती हूँ · पूजकस्य च लक्षणम् — और पूजक के लक्षण · कुलद्रव्यादिसंस्कारम् — कुलद्रव्य आदि का संस्कार · अर्चनं वद मे प्रभो — और अर्चन मुझे बताइए, हे प्रभो

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

२

तस्य श्रवणमात्रेण स्तूयते देवदानवैः ॥ २॥

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से देव और दानव स्तुति करते हैं।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · स्तूयते देवदानवैः — देव-दानवों द्वारा स्तुत होता है

निरस्तपातका यत्र मानवाः पुण्यकर्मिणः ।

कुलज्ञानसुसम्पन्ना भजन्ते ये दृढव्रताः ॥ ३ ॥

३

जहाँ पाप-रहित, पुण्यकर्मी, कुलज्ञान से सम्पन्न, दृढव्रती मनुष्य भजन करते हैं।

पदपाठ निरस्तपातका यत्र — जहाँ पातक दूर करके · मानवाः पुण्यकर्मिणः — पुण्यकर्मी

मनुष्य · कुलज्ञानसुसम्पन्ना — कुलज्ञान से सुसम्पन्न · भजन्ते ये दृढव्रताः — जो दृढव्रती भजन करते हैं

पूर्णाभिषेकसहितो वेदशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।

देवतागुरुभक्तस्तु नियतात्मार्ययेत् प्रिये ॥ ४ ॥

४

जो पूर्णाभिषेक प्राप्त है, वेद और शास्त्र के अर्थ-तत्त्व को जानता है, देवता और गुरु का भक्त है, संयतात्मा है — वह पूजा करे, हे प्रिये!

पदपाठ पूर्णाभिषेकसहितो — पूर्णाभिषेक सहित · वेदशास्त्रार्थतत्त्ववित् — वेद-शास्त्र के अर्थ का

तत्त्ववेत्ता · देवतागुरुभक्तस्तु — देवता और गुरु का भक्त · नियतात्मार्ययेत् प्रिये — नियतात्मा पूजा करे, हे प्रिये

कुलागमरहस्यज्ञो देवताराधनोत्सुकः ।

गुरुपदेशसंयुक्तः पूजयेत् कुलनायिके ॥ ५ ॥

५

कुलागम के रहस्य को जानने वाला, देवता की आराधना में उत्सुक, गुरु के उपदेश से युक्त — वह पूजा करे, हे कुलनायिके!

पदपाठ कुलागमरहस्यज्ञो — कुलागमों के रहस्य का ज्ञाता · देवताराधनोत्सुकः — देवता की आराधना में

उत्सुक · गुरुपदेशसंयुक्तः — गुरु-उपदेश से युक्त · पूजयेत् कुलनायिके — पूजा करे, हे कुलनायिके

शुद्धात्मा चातिसंहृष्टः क्रोधलौल्यविवर्जितः ।

पशुव्रतादिविमुखः सुमुखस्तु यजेत् प्रिये ॥ ६॥

६

शुद्धात्मा, अति प्रसन्न, क्रोध और लोभ से रहित, पशुव्रत आदि से विमुख, प्रसन्नमुख — वह यजन करे, हे प्रिये!

पदपाठ शुद्धात्मा चातिसंहृष्टः — शुद्धात्मा और अति प्रसन्न · क्रोधलौल्यविवर्जितः — क्रोध और लोभ से रहित · पशुव्रतादिविमुखः — पशु-व्रत आदि से विमुख · सुमुखस्तु यजेत् प्रिये — सुमुख होकर यजन करे, हे प्रिये

यदा पुंसः कृतार्थस्य कालेन बहुना प्रिये ।

मत्प्रसादेन भूयाच्च दृढभक्तिसमागमः ॥ ७॥

७

हे प्रिये! जब बहुत समय के बाद, मेरी कृपा से, कृतार्थ पुरुष को दृढ़ भक्ति की प्राप्ति होती है —

पदपाठ यदा पुंसः कृतार्थस्य — जब कृतार्थ पुरुष को · कालेन बहुना प्रिये — बहुत काल के बाद, हे प्रिये · मत्प्रसादेन भूयाच्च — मेरी कृपा से हो जाए · दृढभक्तिसमागमः — दृढ़ भक्ति की प्राप्ति

तदर्थं तर्पणं कुर्याद् द्रव्यैः श्रीभैरवोदितैः ।

गुरुपदेशविधिना चान्यथा पतनं भवेत् ॥ ८॥

८

उसके लिए श्रीभैरव द्वारा कहे गये द्रव्यों से, गुरु के उपदेश की विधि से तर्पण करे; अन्यथा पतन होता है।

पदपाठ तदर्थं तर्पणं कुर्याद् — उसके लिए तर्पण करे · द्रव्यैः श्रीभैरवोदितैः — श्रीभैरव द्वारा कहे द्रव्यों से · गुरुपदेशविधिना — गुरु-उपदेश की विधि से · चान्यथा पतनं भवेत् — अन्यथा पतन होता है

मन्त्रयोगेन देवेशि कुर्यात् श्रीचक्रपूजनम् ।
तदहन्तु त्वया सार्धं गृह्णामि स्वयमादरात् ॥ ९॥

९

हे देवेशि! मन्त्रयोग से श्रीचक्र का पूजन करे; उसे मैं स्वयं तुम्हारे साथ आदरपूर्वक ग्रहण करता हूँ।

पदपाठ मन्त्रयोगेन देवेशि — मन्त्रयोग से, हे देवेशि · कुर्यात् श्रीचक्रपूजनम् — श्रीचक्र का पूजन करे · तदहन्तु त्वया सार्धं — उस दिन मैं तुम्हारे साथ · गृह्णामि स्वयमादरात् — स्वयं आदर से ग्रहण करता हूँ

भैरवोऽहमिति ज्ञानात् सर्वज्ञादिगुणान्वितः ।
इति संचिन्त्य योगीन्द्रः कुलपूजारतो भवेत् ॥ १०॥

१०

"मैं भैरव हूँ" इस ज्ञान से सर्वज्ञता आदि गुणों से युक्त हूँ — ऐसा विचार कर योगीन्द्र कुलपूजा में रत रहे।

पदपाठ भैरवोऽहमिति ज्ञानात् — "मैं भैरव हूँ" इस ज्ञान से · सर्वज्ञादिगुणान्वितः — सर्वज्ञता आदि गुणों से युक्त · इति संचिन्त्य योगीन्द्रः — ऐसा चिन्तन कर योगीन्द्र · कुलपूजारतो भवेत् — कुलपूजा में रत रहे

इत्यादिलक्षणोपेतः कौलिको नियतव्रतः ।
यस्त्वां समर्चयेद्देवि भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् ॥ ११॥

११

इत्यादि लक्षणों से युक्त, नियतव्रत कौलिक जो तुम्हारी सम्यक् पूजा करता है, हे देवि! वह भोग और मोक्ष का पात्र है।

पदपाठ इत्यादिलक्षणोपेतः — इत्यादि लक्षणों से युक्त · कौलिको नियतव्रतः — नियतव्रती कौलिक · यस्त्वां समर्चयेद्देवि — जो तुम्हारी सम्यक् पूजा करे, हे देवि · भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् — वह भुक्ति-मुक्ति का पात्र है

एकान्ते विजनेऽरण्ये देशे बाधाविवर्जिते ।
सुखासने समासीनः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः ॥ १२ ॥

१२

एकान्त, निर्जन वन में, बाधा-रहित स्थान में, सुखासन में बैठकर, पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके,

पदपाठ एकान्ते विजनेऽरण्ये — एकान्त, निर्जन वन में · देशे बाधाविवर्जिते — बाधा-रहित स्थान में · सुखासने समासीनः — सुखासन में बैठा · प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः — पूर्व या उत्तर की ओर मुख किए

अमृताब्धौ मणिद्वीपे कल्पवृक्षतरोस्तले ।
रत्नप्राकारसन्दीप्तं स्मरेन्माणिक्यमण्डपम् ॥ १३ ॥

१३

अमृत-सागर में मणिद्वीप पर कल्पवृक्ष के नीचे, रत्नों के प्राकार से देदीप्यमान माणिक्य-मण्डप का स्मरण करे,

पदपाठ अमृताब्धौ मणिद्वीपे — अमृत-सागर में, मणिद्वीप में · कल्पवृक्षतरोस्तले — कल्पवृक्ष के तले · रत्नप्राकारसन्दीप्तं — रत्नों के प्राकार से दीप्त · स्मरेन्माणिक्यमण्डपम् — माणिक्य-मण्डप का स्मरण करे

पुष्पमालावितानाढ्यं प्रच्छन्नपटसंवृतम् ।
कर्पूरदीपभास्वन्तं धूपामोदसुगन्धिकम् ॥ १४ ॥

१४

जो पुष्पमालाओं के वितान से समृद्ध, आवरक पटों से घिरा, कर्पूर के दीपों से प्रकाशित और धूप की सुगन्ध से सुवासित है।

पदपाठ पुष्पमालावितानाढ्यं — पुष्पमालाओं के वितान से समृद्ध · प्रच्छन्नपटसंवृतम् — छिपाने वाले पटों से आवृत · कर्पूरदीपभास्वन्तं — कर्पूर के दीपों से प्रकाशित · धूपामोदसुगन्धिकम् — धूप की सुगन्ध से सुगन्धित

तन्मण्डपस्थमात्मानं ध्यात्वाऽनाकुलचेतसा ।

१५

श्रीगुरोराज्ञया देवि कुलपूजां समाचरेत् ॥ १५॥

उस मण्डप में स्थित अपने को अनाकुल चित्त से ध्यान करके, श्रीगुरु की आज्ञा से, हे देवि! कुलपूजा करे।

पदपाठ तन्मण्डपस्थमात्मानं — उस मण्डप में स्थित अपने को · ध्यात्वाऽनाकुलचेतसा — अनाकुल चित्त से ध्यान कर · श्रीगुरोराज्ञया देवि — श्रीगुरु की आज्ञा से, हे देवि · कुलपूजां समाचरेत् — कुलपूजा करे

आत्मस्थानमनुद्रव्यदेवशुद्धिस्तु पञ्चमी ।

१६

यावन्न कुरुते मन्त्री तावद्देवार्चनं कुतः ॥ १६॥

आत्मशुद्धि, स्थानशुद्धि, मन्त्रशुद्धि, द्रव्यशुद्धि और पाँचवीं देवशुद्धि — जब तक मन्त्री इन्हें नहीं करता, तब तक देवार्चन कैसे हो?

पदपाठ आत्मस्थानमनुद्रव्य- — आत्मा, स्थान, मन्त्र, द्रव्य · देवशुद्धिस्तु पञ्चमी — और देवशुद्धि पाँचवीं · यावन्न कुरुते मन्त्री — जब तक मन्त्री नहीं करता · तावद्देवार्चनं कुतः — तब तक देवार्चन कहाँ?

सुस्नानभूतसंशुद्धिप्राणायामादिभिः प्रिये ।

१७

षडङ्गाद्यखिलन्यासैरात्मशुद्धिः समीरिता ॥ १७॥

सम्यक् स्नान, भूतशुद्धि, प्राणायाम आदि से, हे प्रिये! और षडङ्ग आदि समस्त न्यासों से आत्मशुद्धि कही गयी है।

पदपाठ सुस्नानभूतसंशुद्धि- — सुस्नान, भूतशुद्धि · प्राणायामादिभिः प्रिये — प्राणायाम आदि से, हे प्रिये · षडङ्गाद्यखिलन्यासैः — षडंग आदि समस्त न्यासों से · आत्मशुद्धिः समीरिता — आत्मशुद्धि कही गई है

सम्मार्जनानुलेपाद्यैर्दर्पणोदरवत्कृतम् ।

वितानधूपदीपादिपुष्पमालोपशोभितम् ।

१८

पञ्चवर्णरजश्चित्रं स्थानशुद्धिरितीरिता ॥ १८ ॥

झाड़ने, लीपने आदि से दर्पण के तल जैसा किया हुआ, वितान, धूप, दीप आदि और पुष्पमालाओं से सुशोभित, पाँच रंगों के चूर्ण से चित्रित — यह स्थानशुद्धि कही गयी है।

पदपाठ सम्मार्जनानुलेपाद्यैः — झाड़ना, लीपना आदि से · दर्पणोदरवत्कृतम् — दर्पण के तल-सा बनाया · वितानधूपदीपादि- — वितान, धूप, दीप आदि · पुष्पमालोपशोभितम् — पुष्पमालाओं से सुशोभित · पञ्चवर्णरजश्चित्रं — पाँच रंगों की रज (चूर्ण) से चित्रित · स्थानशुद्धिरितीरिता — यह स्थानशुद्धि कही गई है

ग्रथित्वा मातृकावर्णैर्मूलमन्त्राक्षराणि च ।

क्रमोत्क्रमाद् द्विरावृत्त्या मन्त्रशुद्धिरितीरिता ॥ १९ ॥

१९

मूलमन्त्र के अक्षरों को मातृका-वर्णों के साथ गूँथकर, क्रम और उत्क्रम से दो बार आवृत्ति करना — यह मन्त्रशुद्धि कही गयी है।

पदपाठ ग्रथित्वा मातृकावर्णैः — मातृका वर्णों से गूँथकर · मूलमन्त्राक्षराणि च — और मूलमन्त्र के अक्षरों को · क्रमोत्क्रमाद् द्विरावृत्त्या — क्रम और उत्क्रम से, दो आवृत्ति · मन्त्रशुद्धिरितीरिता — यह मन्त्रशुद्धि कही गई है

पूजाद्रव्याणि संप्रोक्ष्य मूलास्त्राद्धिर्विधानवित् ।

दर्शयेद्वेनुमुद्राञ्च द्रव्यशुद्धिरितीरिता ॥ २० ॥

२०

विधि का ज्ञाता पूजा-द्रव्यों को मूल और अस्त्र मन्त्र के जल से प्रोक्षित करके धेनुमुद्रा दिखाये — यह द्रव्यशुद्धि कही गयी है।

पदपाठ पूजाद्रव्याणि संप्रोक्ष्य — पूजा-द्रव्यों पर प्रोक्षण कर · मूलास्त्राद्धिर्विधानवित् — मूल और अस्त्र (मन्त्रों) के जल से, विधानज्ञ · दर्शयेद्वेनुमुद्राञ्च — और धेनुमुद्रा दिखाए · द्रव्यशुद्धिरितीरिता — यह द्रव्यशुद्धि कही गई है

पीठे देवं प्रतिष्ठाप्य सकलीकृत्य मन्त्रवित् ।

मूलमन्त्रेण दीप्तात्मा न्यासद्रव्योदकेन च ।

२१

त्रिवारं प्रोक्षयेद्विद्वान् देवशुद्धिरितीरिता ॥ २१ ॥

पीठ पर देवता को प्रतिष्ठित कर, सकलीकरण करके, दीप्तात्मा मन्त्रवेत्ता मूलमन्त्र से और न्यास-द्रव्य के जल से तीन बार प्रोक्षण करे — यह देवशुद्धि कही गयी है।

पदपाठ पीठे देवं प्रतिष्ठाप्य — पीठ पर देव को प्रतिष्ठित कर · सकलीकृत्य मन्त्रवित् — सकलीकरण कर, मन्त्रज्ञ · मूलमन्त्रेण दीप्तात्मा — मूलमन्त्र से, दीप्त आत्मा वाला · न्यासद्रव्योदकेन च — और न्यास-द्रव्य के जल से · त्रिवारं प्रोक्षयेद्विद्वान् — तीन बार प्रोक्षण करे, विद्वान् · देवशुद्धिरितीरिता — यह देवशुद्धि कही गई है

पञ्चशुद्धिं विधायेत्यं पश्चाद् यजनमाचरेत् ।

सा पूजा सफला प्रोक्ता चान्यथा निष्फला भवेत् ॥ २२ ॥

२२

इस प्रकार पञ्चशुद्धि करके फिर यजन करे; वह पूजा सफल कही गयी है, अन्यथा निष्फल होती है।

पदपाठ पञ्चशुद्धिं विधायेत्यं — इस प्रकार पञ्चशुद्धि करके · पश्चाद् यजनमाचरेत् — बाद में यजन करे · सा पूजा सफला प्रोक्ता — वह पूजा सफल कही गई है · चान्यथा निष्फला भवेत् — अन्यथा निष्फल होती है

मण्डलेन विना पूजा निष्फला कथिता प्रिये ।
तस्मान्मण्डलमालिख्य विधिवत्तत्र पूजयेत् ॥ २३॥

२३

मण्डल के बिना पूजा निष्फल कही गयी है, हे प्रिये! इसलिए मण्डल बनाकर उस पर विधिपूर्वक पूजा करे।

पदपाठ मण्डलेन विना पूजा — मण्डल के बिना पूजा · निष्फला कथिता प्रिये — निष्फल कही गई है, हे प्रिये · तस्मान्मण्डलमालिख्य — इसलिए मण्डल बनाकर · विधिवत्तत्र पूजयेत् — वहाँ विधिवत् पूजा करे

अखण्डमण्डलाकारं विश्वं व्याप्य व्यवस्थितम् ।
त्रैलोक्यं मण्डितं येन मण्डलं तत् सदा शिवम् ॥ २४॥

२४

अखण्ड मण्डल के आकार में विश्व को व्याप्त कर स्थित, जिससे त्रैलोक्य मण्डित है — वह मण्डल सदा शिव है।

पदपाठ अखण्डमण्डलाकारं — अखण्ड मण्डल के आकार का · विश्वं व्याप्य व्यवस्थितम् — विश्व को व्याप्त कर स्थित · त्रैलोक्यं मण्डितं येन — जिससे त्रैलोक्य मण्डित है · मण्डलं तत् सदा शिवम् — वह मण्डल सदा शिव है

उड्डीयानां चतुरस्रं कामरूपञ्च वर्तुलम् ।
जालन्धरञ्च चन्द्रार्धं त्र्यस्रः पूर्णगिरिर्भवेत् ॥ २५॥

२५

उड्डीयान चौकोर है, कामरूप गोल, जालन्धर अर्धचन्द्र, और पूर्णगिरि त्रिकोण होता है।

पदपाठ उड्डीयानं चतुरस्रं — उड्डीयान चतुरस्र (चौकोर) · कामरूपञ्च वर्तुलम् — और कामरूप गोल · जालन्धरञ्च चन्द्रार्धं — जालन्धर अर्धचन्द्र · त्र्यस्रः पूर्णगिरिर्भवेत् — पूर्णगिरि त्रिकोण हो

अभ्यर्च्य मण्डलं पश्चादाधारान् स्थापयेत् क्रमात् ।

२६

सामान्यश्रीगुरुभोगबलिपात्राणि पञ्चधा ॥ २६॥

मण्डल की पूजा करके फिर क्रम से आधार स्थापित करे, और पात्र पाँच प्रकार के — सामान्य, श्रीगुरु, भोग और बलि पात्र।

पदपाठ अभ्यर्च्य मण्डलं पश्चाद् — मण्डल की पूजा कर, फिर · आधारान् स्थापयेत् क्रमात् — आधारों को क्रम से स्थापित करे · सामान्यश्रीगुरुभोग- — सामान्य, श्रीगुरु, भोग · बलिपात्राणि पञ्चधा — और बलि पात्र — पाँच प्रकार के

द्विपात्रं वा त्रिपात्रं वा एकपात्रं न कारयेत् ।

२७

स्वदक्षिणादिवामान्तं स्थाप्याभ्यर्च्यासवेन तु ॥ २७॥

दो पात्र या तीन पात्र — एक पात्र न करे; अपने दाहिने से बायें तक स्थापित करके और पूजित करके, आसव से

पदपाठ द्विपात्रं वा त्रिपात्रं वा — दो पात्र या तीन पात्र · एकपात्रं न कारयेत् — एक पात्र न करे · स्वदक्षिणादिवामान्तं — अपने दक्षिण से वाम तक · स्थाप्याभ्यर्च्यासवेन तु — स्थापित कर, पूजकर, आसव से

संपूर्य मूलमन्त्रेण कुलेश्वरि विनिधानवित् ।

२८

तत्र माषप्रमाणन्तु मत्स्यं मांसं विनिक्षिपेत् ॥ २८॥

विधि का ज्ञाता मूलमन्त्र से उन्हें भरकर, हे कुलेश्वरि! उनमें उड़द के दाने के बराबर मछली और मांस डाले।

पदपाठ संपूर्य मूलमन्त्रेण — मूलमन्त्र से भरकर · कुलेश्वरि विनिधानवित् — हे कुलेश्वरि! विनिधानं · तत्र माषप्रमाणन्तु — उसमें उड़द के दाने के बराबर · मत्स्यं मांसं विनिक्षिपेत् — मत्स्य और मांस डाले

नष्टैः पर्युषितोच्छिष्टैर्दुर्गन्धैर्गन्धवर्जितैः ।

२९

हेतुभिः परपात्रस्थैस्तर्पितं निष्फलं भवेत् ॥ २९ ॥

नष्ट, बासी, उच्छिष्ट, दुर्गन्धयुक्त या गन्धहीन, अथवा दूसरे के पात्र में रखे हेतु (मद्य) से किया गया तर्पण निष्फल होता है।

पदपाठ नष्टैः पर्युषितोच्छिष्टैः — नष्ट, बासी, उच्छिष्ट · दुर्गन्धैर्गन्धवर्जितैः — दुर्गन्धित या गन्ध-रहित · हेतुभिः परपात्रस्थैः — दूसरे के पात्र में रखे हेतुओं (मद्य) से · तर्पितं निष्फलं भवेत् — तर्पण निष्फल होता है

न पूरयेत्तु पात्राणि अप्रियैस्तैः कुलेश्वरि ।

३०

स्वादिष्ठैश्च मदिष्ठैश्च द्रव्यैरमृतसन्निभैः ।

मनोहरैर्महेशानि तर्पणं सफलं भवेत् ॥ ३० ॥

उन अप्रिय द्रव्यों से पात्र न भरे, हे कुलेश्वरि! अति स्वादिष्ठ, अति मादक, अमृत-तुल्य, मनोहर द्रव्यों से, हे महेशानि! तर्पण सफल होता है।

पदपाठ न पूरयेत्तु पात्राणि — पात्र न भरे · अप्रियैस्तैः कुलेश्वरि — उन अप्रिय (द्रव्यों) से, हे कुलेश्वरि · स्वादिष्ठैश्च मदिष्ठैश्च — स्वादिष्ठ और मदिष्ठ · द्रव्यैरमृतसन्निभैः — अमृत-समान द्रव्यों से · मनोहरैर्महेशानि — मनोहर (द्रव्यों) से, हे महेशानि · तर्पणं सफलं भवेत् — तर्पण सफल होता है

असंस्कृता सुरा पापकलहव्याधिदुःखदा ।

३१

आयुःश्रीकीर्तिसौभाग्यधनधान्यविनाशिनी ॥ ३१ ॥

असंस्कृत सुरा पाप, कलह, व्याधि और दुःख देती है; आयु, श्री, कीर्ति, सौभाग्य, धन और धान्य का नाश करती है।

पदपाठ असंस्कृता सुरा — असंस्कृत सुरा · पापकलहव्याधिदुःखदा — पाप, कलह, व्याधि, दुःख देने वाली · आयुःश्रीकीर्तिसौभाग्य- — आयु, श्री, कीर्ति, सौभाग्य · धनधान्यविनाशिनी — धन-धान्य की विनाशिनी

तस्मात् संस्कृत्य विधिवत् कुलद्रव्यं ततोऽर्चयेत् ।

३२

अन्यथा नरकं याति दाता भोक्ता न संशयः ॥ ३२ ॥

इसलिए विधिपूर्वक कुलद्रव्य का संस्कार करके फिर पूजा करे; अन्यथा दाता और भोक्ता दोनों नरक में जाते हैं, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ तस्मात् संस्कृत्य विधिवत् — इसलिए विधिवत् संस्कार कर · कुलद्रव्यं ततोऽर्चयेत् — कुलद्रव्य से फिर पूजा करे · अन्यथा नरकं याति — अन्यथा नरक में जाता है · दाता भोक्ता न संशयः — दाता और भोक्ता, सन्देह नहीं

विना द्रव्यादिवासेन न जपेन्न स्मरेत् प्रिये ।

३३

ये स्मरन्ति नरा मूढास्तेषां दुःखं पदे पदे ॥ ३३ ॥

द्रव्य आदि की वासना के बिना न जप करे न स्मरण, हे प्रिये! जो मूढ़ मनुष्य (ऐसे) स्मरण करते हैं, उन्हें पद-पद पर दुःख होता है।

पदपाठ विना द्रव्यादिवासेन — द्रव्य आदि की वासना (सुवास) के बिना · न जपेन्न स्मरेत् प्रिये — न जपे, न स्मरण करे, हे प्रिये · ये स्मरन्ति नरा मूढाः — जो मूढ़ मनुष्य (बिना उसके) स्मरण करते हैं · तेषां दुःखं पदे पदे — उन्हें पद-पद पर दुःख

नासवेन विना मन्त्रो न मन्त्रेण विनासवः ।

३४

परस्परविरोधित्वात् कथं पूजा विधीयते ॥ ३४ ॥

आसव के बिना मन्त्र नहीं, मन्त्र के बिना आसव नहीं; परस्पर विरोध होने से पूजा कैसे की जाये?

पदपाठ नासवेन विना मन्त्रो — आसव के बिना मन्त्र नहीं · न मन्त्रेण विनासवः — मन्त्र के बिना आसव नहीं · परस्परविरोधित्वात् — परस्पर विरोधी होने से · कथं पूजा विधीयते — पूजा कैसे की जाए?

तत्संशयनिवृत्तिञ्च ज्ञात्वा गुरुमुखात् प्रिये ।

वीक्षणं प्रोक्षणं ध्यानं मन्त्रमुद्राविशोधनम् ।

३५

द्रव्यं तर्पणयोग्यं स्याद्देवताप्रीतिकारकम् ॥ ३५॥

उस संशय की निवृत्ति गुरु के मुख से जानकर, हे प्रिये! — वीक्षण, प्रोक्षण, ध्यान और मन्त्र-मुद्रा से शोधन करने पर द्रव्य तर्पण के योग्य और देवता को प्रिय हो जाता है।

पदपाठ तत्संशयनिवृत्तिञ्च — उस सन्देह की निवृत्ति · ज्ञात्वा गुरुमुखात् प्रिये — गुरुमुख से जानकर, हे प्रिये · वीक्षणं प्रोक्षणं ध्यानं — वीक्षण, प्रोक्षण, ध्यान · मन्त्रमुद्राविशोधनम् — मन्त्र और मुद्रा से विशोधन · द्रव्यं तर्पणयोग्यं स्यात् — द्रव्य तर्पण के योग्य होता है · देवताप्रीतिकारकम् — देवता को प्रीति देने वाला

अग्निसूर्येन्दुब्रह्मेन्द्रविष्णुरुद्रसदाशिवैः ।

चतुर्विंशतिमन्त्रैः स्यान्मद्यञ्चैव परामृतम् ॥ ३६॥

३६

अग्नि, सूर्य, चन्द्र, ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु, रुद्र और सदाशिव के चौबीस मन्त्रों से मद्य परम अमृत हो जाता है।

पदपाठ अग्निसूर्येन्दुब्रह्मेन्द्र- — अग्नि, सूर्य, इन्दु, ब्रह्मा, इन्द्र · विष्णुरुद्रसदाशिवैः — विष्णु, रुद्र और सदाशिव · चतुर्विंशतिमन्त्रैः स्यात् — चौबीस मन्त्रों से होता है · मद्यञ्चैव परामृतम् — मद्य परामृत

अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टीरतिर्धृतिः ।

शशिनी चन्द्रिका कान्तिज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरङ्गदा ॥ ३७ ॥

३७

अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अङ्गदा,

पदपाठ अमृता मानदा पूषा — अमृता, मानदा, पूषा · तुष्टिः पुष्टीरतिर्धृतिः — तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति · शशिनी चन्द्रिका कान्तिः — शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति · ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरङ्गदा — ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अङ्गदा

पूर्णा पूर्णामृता चेति कथिताः कुलनायिके ।

सौम्याः कामप्रदायिन्यः षोडश स्वरजाः कलाः ॥ ३८ ॥

३८

पूर्णा और पूर्णामृता — ये, हे कुलनायिके! स्वरों से उत्पन्न, कामनाएँ देने वाली सोलह सौम्य (चन्द्र) कलाएँ कही गयी हैं।

पदपाठ पूर्णा पूर्णामृता चेति — पूर्णा और पूर्णामृता — इस प्रकार · कथिताः कुलनायिके — कही गई हैं, हे कुलनायिके · सौम्याः कामप्रदायिन्यः — सौम्य (चन्द्र-सम्बन्धी), काम देने वाली · षोडश स्वरजाः कलाः — स्वरों से उत्पन्न सोलह कलाएँ

तपनी तापिनी धूम्रा मरीचिज्वालिनी रुचिः ।

सुषुम्ना भोगदा विश्वा रोधिनी धारिणी क्षमा ।

३९

कभाद्या वसुदाः सौराष्ट्रडान्ता द्वादशेरिताः ॥ ३९ ॥

तपनी, तापिनी, धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, रोधिनी, धारिणी, क्षमा — क से भ तक और ठ-ड पर्यन्त वर्णों वाली, धन देने वाली बारह सौर कलाएँ कही गयी हैं।

पदपाठ तपनी तापिनी धूम्रा — तपनी, तापिनी, धूम्रा · मरीचिज्वालिनी रुचिः — मरीचि, ज्वालिनी, रुचि · सुषुम्ना भोगदा विश्वा — सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा · रोधिनी धारिणी क्षमा — रोधिनी, धारिणी, क्षमा · कभाद्या वसुदाः — क, भ आदि, धन देने वाली · सौराष्ट्रडान्ता द्वादशेरिताः — सौर, ठ-ड तक बारह कही गई हैं

धूम्रार्चिरूष्मा ज्वलिनी ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिनी ।

सुश्रीः सुरूपा कपिला हव्यकव्यवहे अपि ।

४०

आग्नेया यादिवर्णाद्या दश धर्मप्रदाः कलाः ॥ ४० ॥

धूम्रार्चि, ऊष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुलिङ्गिनी, सुश्री, सुरूपा, कपिला, हव्यवहा और कव्यवहा — य आदि वर्णों वाली, धर्म देने वाली दस आग्नेय कलाएँ।

पदपाठ धूम्रार्चिरूष्मा ज्वलिनी — धूम्रार्चि, ऊष्मा, ज्वलिनी · ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिनी — ज्वालिनी, विस्फुलिङ्गिनी · सुश्रीः सुरूपा कपिला — सुश्री, सुरूपा, कपिला · हव्यकव्यवहे अपि — हव्यवहा और कव्यवहा भी · आग्नेया यादिवर्णाद्या — आग्नेय, य आदि वर्णों से · दश धर्मप्रदाः कलाः — दस कलाएँ, धर्म देने वाली

सृष्टिर्मेधा स्मृतिर्ऋद्धिः कान्तिर्लक्ष्मीर्द्युतिः स्थिरा ।

स्थितिः सिद्धिरिति प्रोक्ताः कचवर्गकला दश ।

४१

अकारप्रभवा ब्रह्मजाताः स्युः सृष्टये कलाः ॥ ४१ ॥

सृष्टि, मेधा, स्मृति, ऋद्धि, कान्ति, लक्ष्मी, द्युति, स्थिरा, स्थिति, सिद्धि — ये क-वर्ग और च-वर्ग की दस कलाएँ कही गयी हैं; अकार से उत्पन्न, ब्रह्मा से जात, ये सृष्टि की कलाएँ हैं।

पदपाठ सृष्टिर्मेधा स्मृतिर्ऋद्धिः — सृष्टि, मेधा, स्मृति, ऋद्धि · कान्तिर्लक्ष्मीर्द्युतिः स्थिरा — कान्ति, लक्ष्मी, द्युति, स्थिरा · स्थितिः सिद्धिरिति प्रोक्ताः — स्थिति, सिद्धि — इस प्रकार कही गई हैं · कचवर्गकला दश — क और च वर्ग की दस कलाएँ · अकारप्रभवा ब्रह्मजाताः — अकार से उत्पन्न, ब्रह्मा से जन्मी · स्युः सृष्टये कलाः — सृष्टि के लिए कलाएँ हैं

जरा च पालिनी शान्तिरीश्वरी रतिकामिके ।

वरदाह्लादिनीप्रीतिदीर्घाः स्युष्टतवर्गजाः ।

४२

उकारप्रभवा विष्णुजाताः स्युः स्थितये कलाः ॥ ४२ ॥

जरा, पालिनी, शान्ति, ईश्वरी, रति, कामिका, वरदा, आह्लादिनी, प्रीति, दीर्घा — ट-वर्ग और त-वर्ग से उत्पन्न; उकार से उत्पन्न, विष्णु से जात, ये स्थिति की कलाएँ हैं।

पदपाठ जरा च पालिनी शान्तिः — जरा और पालिनी, शान्ति · ईश्वरी रतिकामिके — ईश्वरी, रति, कामिका · वरदाह्लादिनीप्रीति- — वरदा, आह्लादिनी, प्रीति · दीर्घाः स्युष्टतवर्गजाः — दीर्घा — ट और त वर्ग से उत्पन्न · उकारप्रभवा विष्णुजाताः — उकार से उत्पन्न, विष्णु से जन्मी · स्युः स्थितये कलाः — स्थिति के लिए कलाएँ हैं

तीक्ष्णा रौद्री भया निद्रा तन्द्रा क्षुत् क्रोधिनी क्रिया ।

उत्कारी मृत्युरित्युक्ता पयवर्गकला दश ।

४३

मकारप्रभवा रुद्रजाताः संहृतये कलाः ॥ ४३ ॥

तीक्ष्णा, रौद्री, भया, निद्रा, तन्द्रा, क्षुत्, क्रोधिनी, क्रिया, उत्कारी, मृत्यु — ये प-वर्ग और य-वर्ग की दस कलाएँ कही गयी हैं; मकार से उत्पन्न, रुद्र से जात, ये संहार की कलाएँ हैं।

पदपाठ तीक्ष्णा रौद्री भया निद्रा — तीक्ष्णा, रौद्री, भया, निद्रा · तन्द्रा क्षुत् क्रोधिनी क्रिया — तन्द्रा, क्षुत्, क्रोधिनी, क्रिया · उत्कारी मृत्युरित्युक्ता — उत्कारी, मृत्यु — ये नाम कहे गए · पयवर्गकला दश — प और य वर्ग की दस कलाएँ · मकारप्रभवा रुद्रजाताः — मकार से उत्पन्न, रुद्र से जन्मी · संहृतये कलाः — संहार के लिए कलाएँ

षवर्गगाश्चतस्रः स्युः पीता श्वेतारुणासिताः ।

कलाश्वेश्वरसज्जातास्तिरोधानाय बिन्दुजाः ॥ ४४ ॥

४४

श-वर्ग की चार हैं — पीता, श्वेता, अरुणा, असिता — ईश्वर से उत्पन्न, बिन्दु से जात, तिरोधान के लिए कलाएँ।

पदपाठ षवर्गगाश्चतस्रः स्युः — श वर्ग की चार हैं · पीता श्वेतारुणासिताः — पीता, श्वेता, अरुणा, असिता · कलाश्वेश्वरसज्जाताः — ईश्वर से उत्पन्न कलाएँ · तिरोधानाय बिन्दुजाः — बिन्दु से जन्मी, तिरोधान के लिए

निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिस्तथैव च ।

इन्धिका दीपिका चापि रेचिका मोचिका परा ॥ ४५ ॥

४५

निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या और शान्ति, इन्धिका, दीपिका, रेचिका, मोचिका, परा,

पदपाठ निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च — निवृत्ति और प्रतिष्ठा · विद्या शान्तिस्तथैव च — विद्या और शान्ति वैसे ही · इन्धिका दीपिका चापि — इन्धिका और दीपिका भी · रेचिका मोचिका परा — रेचिका, मोचिका, परा

सूक्ष्मा सूक्ष्मामृता ज्ञानाऽमृता चाप्यायिनी तथा ।

व्यापिनी व्योमरूपा च षोडश स्वरजाः कलाः ।

४६

सदाशिवभवा नादादनुग्रहकलाः क्रमात् ॥ ४६ ॥

सूक्ष्मा, सूक्ष्मामृता, ज्ञानामृता, आप्यायिनी, व्यापिनी और व्योमरूपा — स्वरों से उत्पन्न सोलह कलाएँ, नाद से सदाशिव से जात, क्रम से अनुग्रह की कलाएँ।

पदपाठ सूक्ष्मा सूक्ष्मामृता — सूक्ष्मा, सूक्ष्मामृता · ज्ञानाऽमृता चाप्यायिनी तथा — ज्ञानामृता और आप्यायिनी वैसे ही · व्यापिनी व्योमरूपा च — व्यापिनी और व्योमरूपा · षोडश स्वरजाः कलाः — स्वरों से उत्पन्न सोलह कलाएँ · सदाशिवभवा नादाद् — सदाशिव से उत्पन्न, नाद से · अनुग्रहकलाः क्रमात् — अनुग्रह की कलाएँ क्रम से

प्रथमं प्रकृतेर्हंसःप्रतद्विष्णुरनन्तरम् ।

४७

त्र्यम्बकन्तु तृतीयं स्याच्चतुर्थस्तत्पदादिकः ॥ ४७ ॥

पहला "प्रकृतेर्हंसः", उसके बाद "प्रतद्विष्णुः"; तीसरा त्र्यम्बक (मन्त्र) है, और चौथा "तत्" पद से आरम्भ होता है।

पदपाठ प्रथमं प्रकृतेर्हंसः — पहला: "प्रकृतेर्हंसः" · प्रतद्विष्णुरनन्तरम् — उसके बाद "प्रतद्विष्णुः" · त्र्यम्बकन्तु तृतीयं स्यात् — तीसरा त्र्यम्बक है · चतुर्थस्तत्पदादिकः — चौथा "तत्" पद से आरम्भ

विष्णुर्योनिं कल्पयतु पञ्चमः कल्पनामनुः ।

४८

चतुर्नवतिमन्त्रात्मदेवताभावसिद्धिदाः ॥ ४८ ॥

"विष्णुर्योनिं कल्पयतु" पाँचवाँ कल्पना-मन्त्र है; ये चौरानवे मन्त्र-स्वरूप, देवताभाव की सिद्धि देने वाले हैं।

पदपाठ विष्णुर्योनिं कल्पयतु — "विष्णुर्योनिं कल्पयतु" · पञ्चमः कल्पनामनुः — पाँचवाँ कल्पना-मन्त्र · चतुर्नवतिमन्त्रात्म- — चौरानवे मन्त्रों से बने · देवताभावसिद्धिदाः — देवता-भाव की सिद्धि देने वाले

मन्त्रजापश्च संप्रोक्त आत्मस्तवश्च पञ्चभिः ।

४९

अत्र ये पञ्च संप्रोक्ता मन्त्रास्ते कुलनायिके ॥ ४९ ॥

मन्त्र-जप कहा गया है, और पाँचों से आत्म-स्तव; यहाँ जो पाँच मन्त्र कहे गये हैं वे ये हैं, हे कुलनायिके —

पदपाठ मन्त्रजापश्च संप्रोक्त — और मन्त्रों का जप कहा गया है · आत्मस्तवश्च पञ्चभिः — और आत्मस्तव, पाँच से · अत्र ये पञ्च संप्रोक्ता — यहाँ जो पाँच कहे गए · मन्त्रास्ते कुलनायिके — वे मन्त्र, हे कुलनायिके

अखण्डैकरसानन्दाकरे परसुधात्मनि ।

५०

स्वच्छन्दस्फुरणामत्र निधेह्यकुलरूपिणि ॥ ५० ॥

"हे अखण्ड एकरस आनन्द की खान! हे परम सुधा-स्वरूप! यहाँ स्वच्छन्द स्फुरण स्थापित करो, हे अकुल-रूपिणि!"

पदपाठ अखण्डैकरसानन्दाकरे — हे अखण्ड एकरस आनन्द की खान · परसुधात्मनि — हे परसुधा-स्वरूपिणि · स्वच्छन्दस्फुरणामत्र — स्वच्छन्द स्फुरण यहाँ · निधेह्यकुलरूपिणि — प्रदान करो, हे अकुलरूपिणि

अकुलस्थामृताकारे सिद्धिज्ञानकरे परे ।

५१

अमृतत्वं विधेह्यस्मिन् वस्तुनि क्लिन्नरूपिणि ॥ ५१ ॥

"हे अकुल में स्थित अमृत-स्वरूपे! हे सिद्धि और ज्ञान देने वाली परे! इस वस्तु में अमृतत्व स्थापित करो, हे क्लिन्न-रूपिणि!"

पदपाठ अकुलस्थामृताकारे — हे अकुल में स्थित अमृताकारे · सिद्धिज्ञानकरे परे — हे सिद्धि और ज्ञान देने वाली परे · अमृतत्वं विधेह्यस्मिन् — इसमें अमृतत्व प्रदान करो · वस्तुनि क्लिन्नरूपिणि — इस वस्तु में, हे क्लिन्नरूपिणि (आर्द्रस्वरूपे)

तद्रूपेणैकरस्यञ्च कृत्वार्घ्यं तत्स्वरूपिणि ।
भूत्वा परामृताकारं मयि चित्सफुरणं कुरु ॥ ५२ ॥

५२

"उस रूप से अर्घ्य को एकरस करके, हे तत्स्वरूपिणि! परम अमृत का आकार होकर मुझमें चित्-स्फुरण करो!"

पदपाठ तद्रूपेणैकरस्यञ्च — और उस रूप से एकरसता · कृत्वार्घ्यं तत्स्वरूपिणि — अर्घ्य बनाकर, हे तत्स्वरूपिणि · भूत्वा परामृताकारं — परामृत का आकार होकर · मयि चित्सफुरणं कुरु — मुझमें चित् का स्फुरण करो

वाग्भवं पार्श्वगं भूमिः पुष्टिरिन्दुसमन्विता ।
स्थितिश्च पावकानुग्रहार्थेन्दुसमलङ्कृता ॥ ५३ ॥

५३

पार्श्व-वर्ण सहित वाग्भव, भूमि, चन्द्र से युक्त पुष्टि, स्थिति, पावक और अर्धचन्द्र से अलंकृत अनुग्रह,

पदपाठ वाग्भवं पार्श्वगं भूमिः — वाग्भव, पार्श्व-सहित, भूमि · पुष्टिरिन्दुसमन्विता — पुष्टि इन्दु-सहित · स्थितिश्च पावकानुग्रह- — स्थिति और पावक, अनुग्रह · अर्थेन्दुसमलङ्कृता — अर्धचन्द्र से अलंकृत

स्थिरेन्धिकेन्दुसंयुक्ता श्वेता बिन्दुयुगान्विता ।
तथामृते पदं ब्रूयात्तत्पश्चादमृतोद्भवे ॥ ५४ ॥

५४

चन्द्र से युक्त स्थिरा और इन्धिका, बिन्दु-युगल से युक्त श्वेता; फिर "अमृते" पद कहे, उसके बाद "अमृतोद्भवे",

पदपाठ स्थिरेन्धिकेन्दुसंयुक्ता — स्थिरा, इन्धिका इन्दु-सहित · श्वेता बिन्दुयुगान्विता — श्वेता दो बिन्दुओं सहित · तथामृते पदं ब्रूयात् — फिर "अमृते" पद कहे · तत्पश्चादमृतोद्भवे — उसके बाद "अमृतोद्भवे"

तथामृतेश्वरीत्युक्त्वा पश्चादमृतवर्षिणि ।

अमृतं सावयद् द्वन्द्वं द्विठान्तो द्रव्यशुद्धिकृत् ।

५५

अमृतेशीमनुः प्रोक्तः पञ्चत्रिंशद्विरक्षरैः ॥ ५५॥

फिर "अमृतेश्वरि" कहकर, उसके बाद "अमृतवर्षिणि", "अमृतं सावय" दो बार, और अन्त में द्विठ (स्वाहा) — यह द्रव्य को शुद्ध करने वाला पैंतीस अक्षरों का अमृतेशी मन्त्र कहा गया है।

पदपाठ तथामृतेश्वरीत्युक्त्वा — फिर "अमृतेश्वरि" कहकर · पश्चादमृतवर्षिणि — बाद में "अमृतवर्षिणि" · अमृतं सावयद् द्वन्द्वं — "अमृतं सावय" दो बार · द्विठान्तो द्रव्यशुद्धिकृत् — दो ठ (स्वाहा) पर समाप्त — द्रव्यशुद्धि करने वाला · अमृतेशीमनुः प्रोक्तः — अमृतेशी मन्त्र कहा गया है · पञ्चत्रिंशद्विरक्षरैः — पैंतीस अक्षरों वाला

वाग्भवं वदयुग्मञ्च वाग्वादिनीति वाग्भवम् ।

कामराजं ततः क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदयेति च ॥ ५६॥

५६

वाग्भव, "वद वद", "वाग्वादिनि", फिर वाग्भव; कामराज, फिर "क्लिन्ने क्लेदिनि क्लेदय",

पदपाठ वाग्भवं वदयुग्मञ्च — वाग्भव, और "वद" दो बार · वाग्वादिनीति वाग्भवम् — "वाग्वादिनि", फिर वाग्भव · कामराजं ततः क्लिन्ने — कामराज, फिर "क्लिन्ने" · क्लेदिनि क्लेदयेति च — "क्लेदिनि", और "क्लेदय"

महामोक्षं कुरुयुगं कामराजमतः परम् ।

५७

तार्तीयं मोक्षशब्दान्ते कुरुयुगं वदेत्ततः ॥ ५७ ॥

"महामोक्षं कुरु कुरु", उसके बाद कामराज; तृतीय बीज, और "मोक्ष" शब्द के बाद "कुरु कुरु" कहे;

पदपाठ महामोक्षं कुरुयुगं — "महामोक्षं कुरु कुरु" · कामराजमतः परम् — उसके बाद कामराज · तार्तीयं मोक्षशब्दान्ते — तृतीय बीज, और "मोक्ष" शब्द के बाद · कुरुयुगं वदेत्ततः — फिर "कुरु कुरु" कहे

स्यात् प्रासादपरा चान्तेसप्तत्रिंशद्विरक्षरैः ।

५८

दीपनीमनुरित्युक्तः सर्वसिद्धिकरः प्रिये ॥ ५८ ॥

और अन्त में प्रासाद-परा — सैंतीस अक्षरों का यह दीपनी मन्त्र कहा गया है, सब सिद्धियाँ देने वाला, हे प्रिये!

पदपाठ स्यात् प्रासादपरा चान्ते — और अन्त में प्रासाद-परा · सप्तत्रिंशद्विरक्षरैः — सैंतीस अक्षरों वाला · दीपनीमनुरित्युक्तः — यह दीपनी मन्त्र कहा गया है · सर्वसिद्धिकरः प्रिये — सब सिद्धियाँ देने वाला, हे प्रिये

एताः कला मातृकाज्याप्यख[ण्डेन्द्रा]ण्डैकादिकान् मनून् ।

५९

अमृतेशीं दीपनीज्य मूलमन्त्रमपि क्रमात् ॥ ५९ ॥

ये कलाएँ और मातृका, अखण्ड[-इन्दु] और एकाक्षर आदि मन्त्र, अमृतेशी, दीपनी और मूलमन्त्र — क्रम से,

पदपाठ एताः कला मातृकाज्य — ये कलाएँ और मातृका · अप्यख[ण्डेन्द्रा]ण्डैकादिकान् मनून् — और अखण्ड, एकार आदि मन्त्र · अमृतेशीं दीपनीज्य — अमृतेशी और दीपनी · मूलमन्त्रमपि क्रमात् — और मूलमन्त्र भी क्रम से

एकद्वित्रिचतुःपञ्च द्विचतुर्वारमम्बिके ।

संस्मृत्याभ्यर्च्य पात्रन्तु पूजयेद्धेनुमुद्रया ॥ ६० ॥

६०

एक, दो, तीन, चार, पाँच, दो और चार बार, हे अम्बिके! इनका स्मरण करके पात्र की पूजा कर, धेनुमुद्रा से पूजन करे।

पदपाठ एकद्वित्रिचतुःपञ्च — एक, दो, तीन, चार, पाँच · द्विचतुर्वारमम्बिके — दो और चार बार, हे अम्बिके · संस्मृत्याभ्यर्च्य पात्रन्तु — स्मरण कर, पात्र की पूजा कर · पूजयेद्धेनुमुद्रया — धेनुमुद्रा से पूजा करे

ब्रह्माण्डखण्डसम्भूतमशेषरससम्भूतम् ।

आपूरितं महापात्रं पीयूषरसमावह ॥ ६१ ॥

६१

"ब्रह्माण्ड के खण्ड से उत्पन्न, समस्त रसों से भरे, परिपूर्ण महापात्र — पीयूष-रस को ले आओ!"

पदपाठ ब्रह्माण्डखण्डसम्भूतम् — ब्रह्माण्ड के खण्ड से उत्पन्न · अशेषरससम्भूतम् — समस्त रसों से भरा · आपूरितं महापात्रं — परिपूर्ण महापात्र · पीयूषरसमावह — पीयूष-रस लाओ

शुद्धद्रव्येण तेनापि गन्धपुष्पाक्षतैरपि ।

न्यासोक्तसर्वमन्त्रैश्चाप्यात्मानं पूजयेत् प्रिये ॥ ६२ ॥

६२

उस शुद्ध द्रव्य से भी, गन्ध, पुष्प और अक्षत से, और न्यास में कहे गये सब मन्त्रों से अपनी पूजा करे, हे प्रिये!

पदपाठ शुद्धद्रव्येण तेनापि — उस शुद्ध द्रव्य से भी · गन्धपुष्पाक्षतैरपि — और गन्ध, पुष्प, अक्षत से भी · न्यासोक्तसर्वमन्त्रैश्च — और न्यास में कहे सब मन्त्रों से · अप्यात्मानं पूजयेत् प्रिये — अपनी भी पूजा करे, हे प्रिये

मूर्ध्नि श्रीगुरुपङ्क्तीश्च मूलाधारे च पादुकाम् ।
दिव्यौघे चादिनाथश्च तच्छक्तिश्च सदाशिवः ॥ ६३॥

६३

मूर्धा में श्रीगुरु-पंक्तियाँ, और मूलाधार में पादुका; दिव्यौघ में — आदिनाथ और उनकी शक्ति, सदाशिव

पदपाठ मूर्ध्नि श्रीगुरुपङ्क्तीश्च — मूर्धा में श्रीगुरु-पंक्तियों की · मूलाधारे च पादुकाम् — और मूलाधार में पादुका की · दिव्यौघे चादिनाथश्च — दिव्यौघ में आदिनाथ · तच्छक्तिश्च सदाशिवः — उनकी शक्ति, और सदाशिव

तत्पत्नी चेश्वरस्तस्य भार्या रुद्रश्च तद्वधूः ।
विष्णुश्च तत्प्रिया ब्रह्मा तत्कान्ता द्वादशेरिताः ॥ ६४॥

६४

और उनकी पत्नी, ईश्वर और उनकी भार्या, रुद्र और उनकी वधू, विष्णु और उनकी प्रिया, ब्रह्मा और उनकी कान्ता — बारह कहे गये हैं।

पदपाठ तत्पत्नी चेश्वरस्तस्य — उनकी पत्नी, ईश्वर और उनकी · भार्या रुद्रश्च तद्वधूः — भार्या, रुद्र और उनकी वधू · विष्णुश्च तत्प्रिया ब्रह्मा — विष्णु और उनकी प्रिया, ब्रह्मा · तत्कान्ता द्वादशेरिताः — और उनकी कान्ता — बारह कहे गए

सिद्धौघे सनकश्चैव सनन्दश्च सनातनः ।
सनत्कुमारश्च सनत्सुजातश्च ऋभुक्षजः ॥ ६५॥

६५

सिद्धौघ में — सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार, सनत्सुजात, ऋभुक्षज,

पदपाठ सिद्धौघे सनकश्चैव — सिद्धौघ में: सनक · सनन्दश्च सनातनः — सनन्द और सनातन · सनत्कुमारश्च — सनत्कुमार · सनत्सुजातश्च ऋभुक्षजः — सनत्सुजात और ऋभुक्षज

दत्तात्रेयो रैवतको वामदेवस्ततः परम् ।

ततो व्यासः शुकश्चैव एकादश समीरिताः ॥ ६६॥

६६

दत्तात्रेय, रैवतक, फिर वामदेव, फिर व्यास और शुक — ग्यारह कहे गये हैं।

पदपाठ दत्तात्रेयो रैवतको — दत्तात्रेय, रैवतक · वामदेवस्ततः परम् — फिर वामदेव · ततो व्यासः शुकश्चैव — फिर व्यास और शुक · एकादश समीरिताः — ग्यारह कहे गए

मानवौघे नृसिंहश्च महेशो भास्करस्तथा ।

महेन्द्रो माधवो विष्णुः षडेते च प्रकीर्तिताः ॥ ६७॥

६७

मानवौघ में — नृसिंह, महेश, भास्कर, महेन्द्र, माधव और विष्णु — ये छह कहे गये हैं।

पदपाठ मानवौघे नृसिंहश्च — मानवौघ में: नृसिंह · महेशो भास्करस्तथा — महेश और भास्कर · महेन्द्रो माधवो विष्णुः — महेन्द्र, माधव, विष्णु · षडेते च प्रकीर्तिताः — ये छह कहे गए

नमोऽन्ते योजयेद्देवि दिव्यौघे परमं शिवम् ।

महाशिवञ्च सिद्धौघे मानवौघे सदाशिवम् ॥ ६८॥

६८

अन्त में "नमः" जोड़े, हे देवि! — दिव्यौघ में परमशिव, सिद्धौघ में महाशिव, और मानवौघ में सदाशिव के साथ।

पदपाठ नमोऽन्ते योजयेद्देवि — अन्त में "नमः" जोड़े, हे देवि · दिव्यौघे परमं शिवम् — दिव्यौघ में परम शिव · महाशिवञ्च सिद्धौघे — सिद्धौघ में महाशिव · मानवौघे सदाशिवम् — मानवौघ में सदाशिव

ततः पीठं समभ्यर्च्य देवीमावाहयेत् प्रिये ।

महापद्मवनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे ।

६९

सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥ ६९ ॥

फिर पीठ की पूजा करके देवी का आवाहन करे, हे प्रिये: "हे महापद्मवन के भीतर स्थित! हे कारण-आनन्द की मूर्ति! हे सर्वभूतहितकारिणी माता! आओ, आओ, हे परमेश्वरि!"

पदपाठ ततः पीठं समभ्यर्च्य — फिर पीठ की पूजा कर · देवीमावाहयेत् प्रिये — देवी का आवाहन करे, हे प्रिये · महापद्मवनान्तःस्थे — हे महापद्म-वन के भीतर रहने वाली · कारणानन्दविग्रहे — हे कारण-आनन्द की विग्रहरूपा · सर्वभूतहिते मातः — हे सब प्राणियों की हितकारिणी माता · एह्येहि परमेश्वरि — आओ, आओ, हे परमेश्वरि

देवेशि भक्तिसुलभे सर्वावरणसंयुते ।

७०

यावत्त्वां पूजयामीह तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥ ७० ॥

"हे देवेशि! हे भक्ति से सुलभ! हे सर्व आवरण से युक्त! जब तक मैं यहाँ तुम्हारी पूजा करूँ, तब तक तुम सुस्थिर रहो!"

पदपाठ देवेशि भक्तिसुलभे — हे देवेशि, भक्ति से सुलभ · सर्वावरणसंयुते — सब आवरण (परिवार) से युक्त · यावत्त्वां पूजयामीह — जब तक मैं यहाँ तुम्हारी पूजा करूँ · तावत्त्वं सुस्थिरा भव — तब तक तुम सुस्थिर रहो

मन्त्रेणानेन चावाह्य यजेद्देवीमनन्यधीः ।

ध्यात्वा मुद्रां प्रदर्शयित्वा गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ७१ ॥

७१

इस मन्त्र से आवाहन करके अनन्य चित्त से देवी का यजन करे; ध्यान करके, मुद्रा दिखाकर, गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से पूजा करे।

पदपाठ मन्त्रेणानेन चावाह्य — इस मन्त्र से आवाहन कर · यजेद्देवीमनन्यधीः — अनन्य बुद्धि से देवी का यजन करे · ध्यात्वा मुद्रां प्रदर्शयित्वा — ध्यान कर, मुद्रा दिखाकर पूजा करे · गन्धपुष्पाक्षतादिभिः — गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से

चिन्मयस्याप्रमेयस्य निर्गुणस्याशरीरिणः ।

साधकानां हितार्थाय ब्रह्मणो रूपकल्पना ॥ ७२ ॥

७२

चिन्मय, अप्रमेय, निर्गुण, अशरीरी ब्रह्म के रूप की कल्पना साधकों के हित के लिए है।

पदपाठ चिन्मयस्याप्रमेयस्य — चिन्मय, अप्रमेय · निर्गुणस्याशरीरिणः — निर्गुण, अशरीरी · साधकानां हितार्थाय — साधकों के हित के लिए · ब्रह्मणो रूपकल्पना — ब्रह्म के रूप की कल्पना

लिङ्गस्थण्डिलवहन्यम्बुसूर्पकुड्यपटेषु च ।

मण्डले फलके मूर्ध्नि हृदि वा दश कीर्तिताः ॥ ७३ ॥

७३

लिङ्ग, स्थण्डिल, अग्नि, जल, सूप, भित्ति, पट, मण्डल, फलक, मूर्धा या हृदय — ये दस (पूजा-स्थान) कहे गये हैं।

पदपाठ लिङ्गस्थण्डिलवहन्यम्बु- — लिङ्ग, स्थण्डिल (वेदी), अग्नि, जल · सूर्पकुड्यपटेषु च — सूर्प (छाज), दीवार और पट में · मण्डले फलके मूर्ध्नि — मण्डल, फलक, मूर्धा · हृदि वा दश कीर्तिताः — या हृदय — दस कहे गए

एषु स्थानेषु देवेशि यजन्ति परमां शिवाम् ।

७४

अरूपां रूपिणीं कृत्वा कर्मकाण्डरता नराः ॥ ७४ ॥

इन स्थानों में, हे देवेशि! कर्मकाण्ड में रत मनुष्य अरूपा को रूपवती बनाकर परमा शिवा की पूजा करते हैं।

पदपाठ एषु स्थानेषु देवेशि — इन स्थानों में, हे देवेशि · यजन्ति परमां शिवाम् — परमा शिवा की पूजा करते हैं · अरूपां रूपिणीं कृत्वा — अरूपा को रूपिणी बनाकर · कर्मकाण्डरता नराः — कर्मकाण्ड में रत मनुष्य

गवां सर्वाङ्गजं क्षीरं स्रवेत् स्तनमुखाद् यथा ।

७५

तथा सर्वगतो देवः प्रतिमादिषु राजते ॥ ७५ ॥

जैसे गाय के सब अंगों से उत्पन्न दूध स्तन के मुख से ही बहता है, वैसे ही सर्वव्यापी देव प्रतिमा आदि में प्रकाशित होते हैं।

पदपाठ गवां सर्वाङ्गजं क्षीरं — गौ के सब अंगों से उत्पन्न दूध · स्रवेत् स्तनमुखाद् यथा — जैसे स्तन-मुख से बहता है · तथा सर्वगतो देवः — वैसे सर्वगत देव · प्रतिमादिषु राजते — प्रतिमा आदि में प्रकाशित होते हैं

आभिरूप्याच्च बिम्बस्य पूजायाश्च विशेषतः ।

७६

साधकस्य च विश्वासात् सन्निधौ देवता भवेत् ॥ ७६ ॥

प्रतिमा की सुन्दरता से, विशेषतः पूजा से, और साधक के विश्वास से देवता सन्निहित होते हैं।

पदपाठ आभिरूप्याच्च बिम्बस्य — बिम्ब की सुन्दरता से · पूजायाश्च विशेषतः — और विशेषतः पूजा से · साधकस्य च विश्वासात् — और साधक के विश्वास से · सन्निधौ देवता भवेत् — देवता सन्निहित होते हैं

गवां सर्पिः शरीरस्थं न करोत्यङ्गपोषणम् ।
स्वकर्मरचितं दत्तं पुनस्तामेव पोषयेत् ॥ ७७ ॥

७७

गायों के शरीर में स्थित घी उनके अंगों का पोषण नहीं करता; पर अपने कर्म से बनाकर दिया हुआ वह उसी गाय को पुष्ट करता है।

पदपाठ गवां सर्पिः शरीरस्थं — गौ के शरीर में स्थित घी · न करोत्यङ्गपोषणम् — उसके अंगों का पोषण नहीं करता · स्वकर्मरचितं दत्तं — पर अपने कर्म से बनाकर दिया गया · पुनस्तामेव पोषयेत् — फिर उसी का पोषण करता है

एवं सर्वशरीरस्था सर्पिर्वत् परमेश्वरी ।
विना चोपासनां देवि न ददाति फलं नृणाम् ॥ ७८ ॥

७८

इसी प्रकार घी की तरह सब शरीरों में स्थित परमेश्वरी उपासना के बिना, हे देवि! मनुष्यों को फल नहीं देती।

पदपाठ एवं सर्वशरीरस्था — इसी प्रकार सब शरीरों में स्थित · सर्पिर्वत् परमेश्वरी — घी की तरह परमेश्वरी · विना चोपासनां देवि — उपासना के बिना, हे देवि · न ददाति फलं नृणाम् — मनुष्यों को फल नहीं देती

सकलीकृत्य तत्प्राणान् समुद्दीप्येन्द्रियाणि च ।
प्रतिष्ठाप्यार्चयेद्देवि चान्यथा निष्फलं भवेत् ॥ ७९ ॥

७९

उसका सकलीकरण करके, प्राण-प्रतिष्ठा और इन्द्रियों को उद्दीप्त करके, प्रतिष्ठित करके पूजा करे, हे देवि! अन्यथा निष्फल होती है।

पदपाठ सकलीकृत्य तत्प्राणान् — सकलीकरण कर, उसके प्राण · समुद्दीप्येन्द्रियाणि च — और इन्द्रियों को प्रदीप्त कर · प्रतिष्ठाप्यार्चयेद्देवि — प्रतिष्ठा कर पूजा करे, हे देवि · चान्यथा निष्फलं भवेत् — अन्यथा निष्फल होती है

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनञ्च यद् भवेत् ।

क्षमया साधयेत् सर्वं हीनमङ्गं पदं तथा ॥ ८० ॥

८०

जो मन्त्रहीन, क्रियाहीन और विधिहीन हो — वह सब, तथा छूटा हुआ अंग और पद, क्षमा (प्रार्थना) से पूरा करे।

पदपाठ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं — मन्त्रहीन, क्रियाहीन · विधिहीनञ्च यद् भवेत् — और जो विधिहीन हो · क्षमया साधयेत् सर्वं — क्षमा (प्रार्थना) से सब सिद्ध करे · हीनमङ्गं पदं तथा — हीन अंग और हीन पद वैसे ही

नियमादतिरेकेण यद् यत् कर्म करोति यः ।

न किञ्चिदप्यस्य फलं सिध्यति क्रमदोषतः ॥ ८१ ॥

८१

जो कोई नियम से अधिक जो-जो कर्म करता है, क्रम-दोष के कारण उसका कुछ भी फल सिद्ध नहीं होता।

पदपाठ नियमादतिरेकेण — नियम से अधिक · यद् यत् कर्म करोति यः — जो-जो कर्म जो करता है · न किञ्चिदप्यस्य फलं — उसका कुछ भी फल · सिध्यति क्रमदोषतः — क्रम-दोष से सिद्ध नहीं होता

न्यूनातिरिक्तकर्माणि न फलन्ति कदाचन ।

यथाविधि कृतानीह सत्कर्माणि फलन्ति हि ॥ ८२ ॥

८२

न्यून या अधिक कर्म कभी फल नहीं देते; यथाविधि किये गये सत्कर्म ही फल देते हैं।

पदपाठ न्यूनातिरिक्तकर्माणि — न्यून या अधिक कर्म · न फलन्ति कदाचन — कभी फल नहीं देते · यथाविधि कृतानीह — यहाँ यथाविधि किए · सत्कर्माणि फलन्ति हि — सत्कर्म ही फल देते हैं

तद्विधानकृतं कर्म जपहोमार्चनादिषु ।

देवताप्रीतिदं भूयाद् भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ८३ ॥

८३

जप, होम, अर्चन आदि में विधिपूर्वक किया गया कर्म देवता को प्रिय होता है और भोग-मोक्ष का फल देता है।

पदपाठ तद्विधानकृतं कर्म — उस विधान से किया कर्म · जपहोमार्चनादिषु — जप, होम, अर्चन आदि में · देवताप्रीतिदं भूयाद् — देवता को प्रीति देने वाला हो · भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् — और भुक्ति-मुक्ति फल देने वाला

देवस्य मन्त्ररूपस्य मन्त्रव्याप्तिमजानताम् ।

कृतार्चनादिकां सर्वं व्यर्थं भवति शाम्भवि ॥ ८४ ॥

८४

मन्त्ररूप देव की मन्त्र-व्याप्ति को न जानने वालों का किया हुआ सब अर्चन आदि व्यर्थ हो जाता है, हे शाम्भवि!

पदपाठ देवस्य मन्त्ररूपस्य — मन्त्ररूप देव की · मन्त्रव्याप्तिमजानताम् — मन्त्र-व्याप्ति को न जानने वालों की · कृतार्चनादिकां सर्वं — की गई अर्चना आदि सब · व्यर्थं भवति शाम्भवि — व्यर्थ होती है, हे शाम्भवि

यन्त्रं मन्त्रमयं प्रोक्तं देवता मन्त्ररूपिणी ।

यन्त्रे सा पूजिता देवि सहसैव प्रसीदति ॥ ८५ ॥

८५

यन्त्र मन्त्रमय कहा गया है, देवता मन्त्ररूपिणी है; यन्त्र में पूजित होने पर, हे देवि! वह तुरन्त प्रसन्न होती है।

पदपाठ यन्त्रं मन्त्रमयं प्रोक्तं — यन्त्र मन्त्रमय कहा गया है · देवता मन्त्ररूपिणी — देवता मन्त्ररूपिणी है · यन्त्रे सा पूजिता देवि — यन्त्र में वह पूजित, हे देवि · सहसैव प्रसीदति — सहसा ही प्रसन्न होती है

कामक्रोधादिदोषोत्थसर्वदुःखनियन्त्रणात् ।

यन्त्रमित्याहुरेतस्मिन् देवः प्रीणाति पूजितः ॥ ८६ ॥

८६

काम, क्रोध आदि दोषों से उत्पन्न सब दुःखों का नियन्त्रण करने से इसे यन्त्र कहते हैं; इसमें पूजित देव प्रसन्न होते हैं।

पदपाठ कामक्रोधादिदोषोत्थ- — काम, क्रोध आदि दोषों से उत्पन्न · सर्वदुःखनियन्त्रणात् — सब दुःखों के नियन्त्रण से · यन्त्रमित्याहुरेतस्मिन् — "यन्त्र" कहते हैं; इसमें · देवः प्रीणाति पूजितः — देव पूजित होकर प्रसन्न होते हैं

शरीरमिव जीवस्य दीपस्य स्नेहवत् प्रिये ।

सर्वेषामपि देवानां तथा यन्त्रं प्रतिष्ठितम् ॥ ८७ ॥

८७

जैसे जीव के लिए शरीर, दीपक के लिए तेल, हे प्रिये! वैसे ही सब देवताओं के लिए यन्त्र प्रतिष्ठित है।

पदपाठ शरीरमिव जीवस्य — जैसे जीव को शरीर · दीपस्य स्नेहवत् प्रिये — जैसे दीपक को तेल, हे प्रिये · सर्वेषामपि देवानां — सब देवताओं का भी · तथा यन्त्रं प्रतिष्ठितम् — वैसे ही यन्त्र प्रतिष्ठित है

तस्माद् यन्त्रं लिखित्वा वा ध्यात्वा सावृतिकं शिवम् ।

ज्ञात्वा गुरुमुखात् सर्वं पूजयेद्विधिना प्रिये ॥ ८८ ॥

८८

इसलिए यन्त्र लिखकर, या आवरण सहित शिव का ध्यान करके, गुरु के मुख से सब जानकर, विधिपूर्वक पूजा करे, हे प्रिये!

पदपाठ तस्माद् यन्त्रं लिखित्वा वा — इसलिए यन्त्र लिखकर या · ध्यात्वा सावृतिकं शिवम् — आवरण-सहित शिव का ध्यान कर · ज्ञात्वा गुरुमुखात् सर्वं — गुरुमुख से सब जानकर · पूजयेद्विधिना प्रिये — विधि से पूजा करे, हे प्रिये

एकपीठे पृथक्पूजां विना यन्त्रं करोति यः ।

अङ्गाङ्गित्वं परित्यज्य देवताशापमाप्नुयात् ॥ ८९ ॥

८९

जो एक पीठ पर यन्त्र के बिना पृथक् पूजा करता है, वह अङ्ग-अङ्गी भाव छोड़कर देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ एकपीठे पृथक्पूजां — एक पीठ पर पृथक् पूजा · विना यन्त्रं करोति यः — जो यन्त्र के बिना करता है · अङ्गाङ्गित्वं परित्यज्य — अंग-अङ्गी भाव छोड़कर · देवताशापमाप्नुयात् — देवताओं का शाप पाता है

एकपीठे कुलेशानि स्वे स्वे यन्त्रे पृथक्पृथक् ।

यजेदावरणोपेता देवतास्तद्विधानतः ॥ ९० ॥

९०

एक पीठ पर, हे कुलेशानि! अपने-अपने यन्त्र में पृथक्-पृथक्, आवरण सहित देवताओं का उनकी विधि से यजन करे।

पदपाठ एकपीठे कुलेशानि — एक पीठ पर, हे कुलेशानि · स्वे स्वे यन्त्रे पृथक्पृथक् — अपने-अपने यन्त्र में पृथक्-पृथक् · यजेदावरणोपेता — आवरण-सहित पूजा करे · देवतास्तद्विधानतः — देवताओं की, उनके विधान से

आवाह्य देवतामेकां पूजयेदन्यदेवताम् ।

उभाभ्यां लभते पापं मन्त्री चञ्चलमानसः ॥ ९१ ॥

९१

एक देवता का आवाहन करके यदि चंचल मन वाला मन्त्री दूसरे देवता की पूजा करे, तो दोनों से पाप पाता है।

पदपाठ आवाह्य देवतामेकां — एक देवता का आवाहन कर · पूजयेदन्यदेवताम् — यदि अन्य देवता की पूजा करे · उभाभ्यां लभते पापं — तो दोनों से पाप पाता है · मन्त्री चञ्चलमानसः — चंचल मन वाला मन्त्री

इत्यादिलक्षणं ज्ञात्वा गुरुतः शास्त्रतः प्रिये ।
विधिनाभ्यर्चयेत् सम्यग्देवता सुप्रसीदति ॥ ९२ ॥

९२

इत्यादि लक्षण गुरु से और शास्त्र से जानकर, हे प्रिये! विधिपूर्वक सम्यक् पूजा करे;
देवता अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

पदपाठ इत्यादिलक्षणं ज्ञात्वा — इत्यादि लक्षण जानकर · गुरुतः शास्त्रतः प्रिये — गुरु से, शास्त्र से, हे प्रिये · विधिनाभ्यर्चयेत् सम्यग् — विधि से सम्यक् पूजा करे · देवता सुप्रसीदति — देवता अति प्रसन्न होते हैं

षोडशैरुपचारैस्तु साङ्गं सावरणं शिवम् ।
पूजयेन्मूलमन्त्रेण गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ९३ ॥

९३

सोलह उपचारों से अंगों और आवरण सहित शिव की मूलमन्त्र से, गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से पूजा करे।

पदपाठ षोडशैरुपचारैस्तु — सोलह उपचारों से · साङ्गं सावरणं शिवम् — अंग और आवरण सहित शिव की · पूजयेन्मूलमन्त्रेण — मूलमन्त्र से पूजा करे · गन्धपुष्पाक्षतादिभिः — गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से

महाषोढोदिताशेषपरिवारांश्च शाम्भवि ।
प्रणवादिनमोऽन्तेन तत्तन्नाम्ना समर्चयेत् ॥ ९४ ॥

९४

महाषोढा में कहे गये समस्त परिवार-देवताओं की, हे शाम्भवि! आदि में प्रणव और अन्त में नमः लगाकर, उन-उनके नाम से पूजा करे।

पदपाठ महाषोढोदिताशेष- — महाषोढा में कहे समस्त · परिवारांश्च शाम्भवि — परिवारों की, हे शाम्भवि · प्रणवादिनमोऽन्तेन — प्रणव आदि में और नमः अन्त में · तत्तन्नाम्ना समर्चयेत् — उस-उस नाम से पूजा करे

आगमोक्तेन मार्गेण तर्पयेदलिबिन्दुभिः ।

अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च नखे निःसृतमूर्ध्वतः ।

९५

स्वपात्रस्पन्दनिस्यन्दं विधिवत् कुलनायिके ॥ ९५॥

आगम में कहे मार्ग से मद्य की बूँदों से तर्पण करे, अँगूठे और अनामिका से, नख से ऊपर की ओर निकालकर — अपने पात्र के स्पन्दन से निकली धार से, विधिपूर्वक, हे कुलनायिके!

पदपाठ आगमोक्तेन मार्गेण — आगम में कहे मार्ग से · तर्पयेदलिबिन्दुभिः — मद्य-बिन्दुओं से तर्पण करे · अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च — अँगूठे और अनामिका से · नखे निःसृतमूर्ध्वतः — नख से ऊपर की ओर निकला · स्वपात्रस्पन्दनिस्यन्दं — अपने पात्र के स्पन्दन से झारा · विधिवत् कुलनायिके — विधिवत्, हे कुलनायिके

सकृत्तर्पणमुत्सृज्य जप्त्वा मूलञ्च पादुकाम् ।

अन्तःशक्तिं समुत्थाप्य तर्पयेद्देहदेवताः ॥ ९६॥

९६

एक बार तर्पण छोड़कर, मूलमन्त्र और पादुका का जप करके, अन्तःशक्ति को उठाकर देह के देवताओं का तर्पण करे।

पदपाठ सकृत्तर्पणमुत्सृज्य — एक बार तर्पण छोड़कर · जप्त्वा मूलञ्च पादुकाम् — मूल और पादुका जपकर · अन्तःशक्तिं समुत्थाप्य — अन्तःशक्ति को उठाकर · तर्पयेद्देहदेवताः — देह-देवताओं का तर्पण करे

अङ्गुष्ठो भैरवो देवो मध्यमा चण्डिका प्रिये ।

९७

मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन तर्पयेत् कुलसन्ततिम् ॥ ९७ ॥

अँगूठा भैरव देव है और मध्यमा चण्डिका, हे प्रिये! मध्यमा और अँगूठे के योग से कुल-सन्तति का तर्पण करे।

पदपाठ अङ्गुष्ठो भैरवो देवो — अँगूठा भैरव देव है · मध्यमा चण्डिका प्रिये — मध्यमा चण्डिका है, हे प्रिये · मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन — मध्यमा और अँगूठे के योग से · तर्पयेत् कुलसन्ततिम् — कुल-सन्तति का तर्पण करे

अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च वश्यकर्मणि तर्पयेत् ।

९८

तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन तर्पयेदभिचारके ।

कनिष्ठाङ्गुष्ठयोगेन स्तम्भने तर्पयेत् प्रिये ॥ ९८ ॥

अँगूठे और अनामिका से वशीकरण में तर्पण करे; तर्जनी और अँगूठे के योग से अभिचार में; कनिष्ठा और अँगूठे के योग से स्तम्भन में तर्पण करे, हे प्रिये!

पदपाठ अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च — अँगूठे और अनामिका से · वश्यकर्मणि तर्पयेत् — वश्य-कर्म में तर्पण करे · तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन — तर्जनी और अँगूठे के योग से · तर्पयेदभिचारके — अभिचार में तर्पण करे · कनिष्ठाङ्गुष्ठयोगेन — कनिष्ठा और अँगूठे के योग से · स्तम्भने तर्पयेत् प्रिये — स्तम्भन में तर्पण करे, हे प्रिये

एवं सन्तर्प्य देवेशि कुलद्रव्यैर्यथाविधि ।

देवतापुरतो देवि गुरुपङ्क्तींश्च पूजयेत् ।

९९

पङ्क्तित्रयक्रमेणाथ ज्ञात्वा सम्यगनन्यधीः ॥ ९९ ॥

इस प्रकार विधिपूर्वक कुलद्रव्यों से तर्पण करके, हे देवेशि! देवता के सामने गुरु-पङ्क्तियों की पूजा करे, हे देवि! तीन पङ्क्तियों के क्रम से, भली-भाँति जानकर, अनन्य चित्त से।

पदपाठ एवं सन्तर्प्य देवेशि — इस प्रकार तर्पण कर, हे देवेशि · कुलद्रव्यैर्यथाविधि — कुलद्रव्यों से यथाविधि · देवतापुरतो देवि — देवता के सामने, हे देवि · गुरुपङ्क्तींश्च पूजयेत् — गुरु-पङ्क्तियों की पूजा करे · पङ्क्तित्रयक्रमेणाथ — फिर तीन पङ्क्तियों के क्रम से · ज्ञात्वा सम्यगनन्यधीः — सम्यक् जानकर, अनन्य बुद्धि से

कराभ्यां चिन्मुद्रां समधुनृकपालञ्च दधतीं

द्रुतस्वर्णप्रख्यामरुणकुसुमालेपवसनाम् ।

१००

कृपापूर्णापाङ्गीमरुणनयनामम्बरजटा-

मुपेतां सिद्धौघैर्यजतु गुरुपङ्क्तिं क्रमगतिम् ॥ १०० ॥

दोनों हाथों में चिन्मुद्रा और मधु से भरा नर-कपाल धारण किये, पिघले सोने-सी कान्ति वाली, लाल पुष्प, लेप और वस्त्र वाली, कृपा से भरे कटाक्ष वाली, अरुण नयनों वाली, आकाश तक फैली जटाओं से युक्त — सिद्धौघों के साथ गुरुपङ्क्ति की क्रमपूर्वक पूजा करे।

पदपाठ कराभ्यां चिन्मुद्रां — दोनों हाथों में चिन्मुद्रा · समधुनृकपालञ्च दधतीं — और मधु से भरा नरकपाल धारण करती · द्रुतस्वर्णप्रख्याम् — गले हुए सोने-सी दीप्त · अरुणकुसुमालेपवसनाम् — अरुण पुष्प, अनुलेप और वस्त्र वाली · कृपापूर्णापाङ्गीम् — कृपा से पूर्ण कटाक्ष वाली · अरुणनयनाम् — अरुण नेत्रों वाली · अम्बरजटामुपेतां — आकाश तक पहुँचती जटा वाली · सिद्धौघैर्यजतु — सिद्धौघों सहित पूजा करे · गुरुपङ्क्तिं क्रमगतिम् — गुरु-पङ्क्ति की, क्रम से

एवं संपूज्य धूपञ्च दीपं नैवेद्यमेव च ।

आसवं पिशितोपेतं भक्ष्याणि विविधानि च ।

१०१

कदल्यादिफलान्येव ताम्बूलञ्च समर्पयेत् ॥ १०१ ॥

इस प्रकार पूजा करके धूप, दीप और नैवेद्य, मांस सहित आसव, विविध भक्ष्य, केले आदि फल और ताम्बूल समर्पित करे।

पदपाठ एवं संपूज्य धूपञ्च — इस प्रकार पूजा कर, धूप · दीपं नैवेद्यमेव च — दीप और नैवेद्य · आसवं पिशितोपेतं — मांस-सहित आसव · भक्ष्याणि विविधानि च — और विविध भक्ष्य · कदल्यादिफलान्येव — केला आदि फल · ताम्बूलञ्च समर्पयेत् — और ताम्बूल समर्पित करे

इति ते कथितं देवि कुलाचारस्य लक्षणम् ।

द्रव्यसंस्कारशुद्ध्यादि किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥ १०२ ॥

१०२

इस प्रकार, हे देवि! मैंने तुम्हें कुलाचार के लक्षण, द्रव्य का संस्कार और शुद्धि आदि कहे; और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं देवि — इस प्रकार तुम्हें कहा गया, हे देवि · कुलाचारस्य लक्षणम् — कुलाचार के लक्षण · द्रव्यसंस्कारशुद्ध्यादि — द्रव्य-संस्कार, शुद्धि आदि · किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णवि निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे द्रव्यसंस्कारविधानकथनं नाम षष्ठ उल्लासः ॥ ६ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
द्रव्यसंस्कारविधानकथन नामक षष्ठ उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ सप्तमोल्लासः

सप्तम उल्लास — वटुकशक्त्यादिपूजनम्



ईश्वर वटुक, योगिनी, भूत, क्षेत्रपाल और राजराजेश्वर के बलि-मन्त्र, कुलदीप, योग्य-अयोग्य शक्ति के लक्षण, समर्पण-मन्त्र, उच्छिष्ट-मातङ्गी शेषिका-विधि, गुरु द्वारा तत्त्वत्रय-दान, और पान के नियम व भेद बताते हैं।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश वटुकादीनां बलिञ्च शक्तिलक्षणम् ।

१

तद्द्रव्यस्यैव स्वीकारं वद मे करुणानिधे ॥ १॥

हे कुलेश! वटुक आदि का बलि, शक्ति के लक्षण, और उस द्रव्य का स्वीकार (पान) — मुझे बताइए, हे करुणानिधे!

पदपाठ कुलेश वटुकादीनां — हे कुलेश! वटुक आदि का · बलिञ्च शक्तिलक्षणम् — बलि, और शक्ति के लक्षण · तद्द्रव्यस्यैव स्वीकारं — और उस द्रव्य का स्वीकार · वद मे करुणानिधे — मुझे बताइए, हे करुणानिधे

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

२

तस्य श्रवणमात्रेण तत्त्वज्ञानं प्रकाशते ॥ २॥

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से तत्त्वज्ञान प्रकाशित होता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · तत्त्वज्ञानं प्रकाशते — तत्त्वज्ञान प्रकाशित होता है

यावन्नो वटुके दद्यात्तावन्नैव कुलेश्वरि ।

तृप्यन्ति देवताः सर्वाः स्मरणाद् यजनादपि ॥ ३॥

३

जब तक वटुक को (बलि) नहीं देता, तब तक, हे कुलेश्वरि! सब देवता स्मरण से या यजन से भी तृप्त नहीं होते।

पदपाठ यावन्नो वटुके दद्यात् — जब तक वटुक को नहीं देता · तावन्नैव कुलेश्वरि — तब तक, हे कुलेश्वरि, नहीं · तृप्यन्ति देवताः सर्वाः — तृप्त होते सब देवता · स्मरणाद् यजनादपि — स्मरण से या यजन से भी

वटुकादीन् यजेत्तस्माद् गन्धपुष्पासवामिषैः ।

तत्तन्मन्त्रविधानेन देवता प्रीतिमाप्नुयात् ॥ ४॥

४

इसलिए वटुक आदि की गन्ध, पुष्प, आसव और मांस से, उन-उनके मन्त्र की विधि से पूजा करे; देवता प्रसन्न होते हैं।

पदपाठ वटुकादीन् यजेत्तस्माद् — इसलिए वटुक आदि की पूजा करे · गन्धपुष्पासवामिषैः — गन्ध, पुष्प, आसव और मांस से · तत्तन्मन्त्रविधानेन — उन-उनके मन्त्र की विधि से · देवता प्रीतिमाप्नुयात् — देवता प्रसन्नता पाते हैं

यत्किञ्चिद्द्रव्यसंघातं पूजार्थं भोगहेतुना ।

आनीतं दीयते भक्त्या क्षेत्रपेभ्यः कुलेश्वरि ॥ ५॥

५

जो भी द्रव्य-समूह पूजा के लिए और भोग के हेतु लाया गया हो, वह भक्ति से क्षेत्रपालों को दिया जाता है, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ यत्किञ्चिद्द्रव्यसंघातं — जो कुछ द्रव्य-समूह · पूजार्थं भोगहेतुना — पूजा के लिए, भोग के निमित्त · आनीतं दीयते भक्त्या — लाया गया, भक्ति से दिया जाता है · क्षेत्रपेभ्यः कुलेश्वरि — क्षेत्रपालों को, हे कुलेश्वरि

वटुकमन्त्रान् वक्ष्यामि शृणुष्व कुलनायिके ।

यैः समर्चितमात्रेण सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥ ६॥

६

मैं वटुक के मन्त्र कहता हूँ, सुनो, हे कुलनायिके! जिनसे पूजा मात्र से सब उपद्रव नष्ट हो जाते हैं।

पदपाठ वटुकमन्त्रान् वक्ष्यामि — वटुक-मन्त्र कहता हूँ · शृणुष्व कुलनायिके — सुनो, हे कुलनायिके · यैः समर्चितमात्रेण — जिनसे पूजन मात्र से · सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः — सब उपद्रव नष्ट होते हैं

तारत्रयं ततो देवीपुत्रेति वटुकेति च ।

नाथेति कपिलजटाभारभास्वरपिङ्गल ॥ ७॥

७

तीन तार (ॐ ह्रीं श्रीं आदि), फिर "देवीपुत्र", "वटुक", "नाथ", "कपिलजटाभारभास्वरपिङ्गल",

पदपाठ तारत्रयं ततो — तारत्रय, फिर · देवीपुत्रेति वटुकेति च — "देवीपुत्र", और "वटुक" · नाथेति — "नाथ" · कपिलजटाभारभास्वरपिङ्गल — "कपिलजटाभारभास्वरपिङ्गल"

त्रिनेत्रेति पदं पश्चाज्ज्वालामुखपदं ततः ।

इमां पूजां बलिं गृह्णद्वयं पावकवल्लभा ।

८

उक्तो वटुकमन्त्रोऽयं चतुश्चत्वारिंशदक्षरैः ॥ ८॥

फिर "त्रिनेत्र" पद, फिर "ज्वालामुख", "इमां पूजां बलिं गृह्ण गृह्ण", और "पावकवल्लभ" — यह चौवालीस अक्षरों का वटुक मन्त्र कहा गया है।

पदपाठ त्रिनेत्रेति पदं पश्चात् — फिर "त्रिनेत्र" पद · ज्वालामुखपदं ततः — फिर "ज्वालामुख" पद · इमां पूजां बलिं गृह्णद्वयं — "इमां पूजां बलिं गृह्ण गृह्ण" · पावकवल्लभा — और "पावकवल्लभ" · उक्तो वटुकमन्त्रोऽयं — यह वटुक-मन्त्र कहा गया · चतुश्चत्वारिंशदक्षरैः — चौवालीस अक्षरों वाला

बलिदानेन सन्तुष्टो वटुकः सर्वसिद्धिदः ।

शान्तिं करोतु मे नित्यं भूतवेतालसेवितः ॥ ९ ॥

९

"बलिदान से सन्तुष्ट, सर्वसिद्धि देने वाला, भूत-वेतालों से सेवित वटुक मुझे सदा शान्ति प्रदान करे।"

पदपाठ बलिदानेन सन्तुष्टो — बलिदान से सन्तुष्ट · वटुकः सर्वसिद्धिदः — वटुक, सब सिद्धियाँ देने वाला · शान्तिं करोतु मे नित्यं — मुझे नित्य शान्ति दे · भूतवेतालसेवितः — भूत-वेतालों से सेवित

तारत्रयं ततः सर्वयोगिनीभ्यः पदं वदेत् ।

तत्पश्चात् सर्वभूतेभ्यः सर्वभूताधिवर्ति च ॥ १० ॥

१०

तीन तार, फिर "सर्वयोगिनीभ्यः" पद कहे, उसके बाद "सर्वभूतेभ्यः" और "सर्वभूताधिवर्ति",

पदपाठ तारत्रयं ततः — तारत्रय, फिर · सर्वयोगिनीभ्यः पदं वदेत् — "सर्वयोगिनीभ्यः" पद कहे · तत्पश्चात् सर्वभूतेभ्यः — उसके बाद "सर्वभूतेभ्यः" · सर्वभूताधिवर्ति च — और "सर्वभूताधिवर्ति"

पदं ताभ्यो डाकिनीभ्यः शाकिनीभ्यः पदं वदेत् ।

त्रैलोक्येति पदं चैव वासिनीभ्य इमां वदेत् ॥ ११ ॥

११

"ताभ्यः" पद, "डाकिनीभ्यः शाकिनीभ्यः", और "त्रैलोक्यवासिनीभ्यः इमां" कहे,

पदपाठ पदं ताभ्यो — "ताभ्यः" पद · डाकिनीभ्यः शाकिनीभ्यः पदं वदेत् — "डाकिनीभ्यः शाकिनीभ्यः" कहे · त्रैलोक्येति पदं चैव — और "त्रैलोक्य" पद · वासिनीभ्य इमां वदेत् — "वासिनीभ्यः इमां" कहे

पूजां बलिं गृह्युगं स्वाहान्तो योगिनीमनुः ।
कथितोऽयं महेशानि मन्त्रः पञ्चाशदक्षरः ॥ १२ ॥

१२

"पूजां बलिं गृह्ण गृह्ण", अन्त में स्वाहा — यह योगिनी मन्त्र कहा गया है, हे महेशानि! पचास अक्षरों का मन्त्र।

पदपाठ पूजां बलिं गृह्युगं — "पूजां बलिं गृह्ण गृह्ण" · स्वाहान्तो योगिनीमनुः — स्वाहा पर समाप्त — योगिनी-मन्त्र · कथितोऽयं महेशानि — यह कहा गया, हे महेशानि · मन्त्रः पञ्चाशदक्षरः — पचास अक्षरों का मन्त्र

या काचिद् योगिनी रौद्रा सौम्या घोरतरा परा ।
खेचरी भूचरी व्योमचरी प्रीतास्तु मे सदा ॥ १३ ॥

१३

"जो कोई योगिनी हो — रौद्रा, सौम्या, घोरतरा या परा, खेचरी, भूचरी, व्योमचरी — वे सदा मुझ पर प्रसन्न हों।"

पदपाठ या काचिद् योगिनी — जो कोई योगिनी हो · रौद्रा सौम्या घोरतरा परा — रौद्रा, सौम्या, घोरतरा या परा · खेचरी भूचरी व्योमचरी — खेचरी, भूचरी, व्योमचरी · प्रीतास्तु मे सदा — वे मुझ पर सदा प्रसन्न हों

तारत्रयं वदेत् सर्वभूतेभ्यः सर्व एव हि ।
पश्चाद् भूतपतिभ्यो हृद्युक्तः सप्तदशाक्षरः ॥ १४ ॥

१४

तीन तार कहे, "सर्वभूतेभ्यः" — सब ही — फिर "भूतपतिभ्यः", हृदय (नमः) से युक्त — सत्रह अक्षर।

पदपाठ तारत्रयं वदेत् — तारत्रय कहे · सर्वभूतेभ्यः सर्व एव हि — "सर्वभूतेभ्यः", सब ही · पश्चाद् भूतपतिभ्यो — फिर "भूतपतिभ्यः" · हृद्युक्तः सप्तदशाक्षरः — हृद् (नमः) सहित — सत्रह अक्षर

भूता ये विविधाकारा दिव्या भौमान्तरिक्षगाः ।

पातालसंस्था ये केचिच्छिवयोगेन भाविताः ॥ १५॥

१५

"विविध आकार वाले भूत — दिव्य, भौम, अन्तरिक्षचारी, और जो कोई पाताल में रहते हैं — शिवयोग से भावित,

पदपाठ भूता ये विविधाकारा — विविध आकार वाले भूत · दिव्या भौमान्तरिक्षगाः — दिव्य, भौम और अन्तरिक्ष के · पातालसंस्था ये केचित् — और जो कोई पाताल में स्थित · शिवयोगेन भाविताः — शिवयोग से भावित

ध्रुवाद्याः सत्यसन्धाश्च इन्द्राद्याः स्वर्व्यवस्थिताः ।

तृप्यन्तु प्रीतमनसः प्रतिगृह्णन्त्विमं बलिम् ॥ १६॥

१६

ध्रुव आदि सत्यसन्ध, इन्द्र आदि स्वर्ग में स्थित — वे प्रसन्न मन से तृप्त हों और इस बलि को ग्रहण करें।"

पदपाठ ध्रुवाद्याः सत्यसन्धाश्च — ध्रुव आदि, सत्यसन्ध · इन्द्राद्याः स्वर्व्यवस्थिताः — इन्द्र आदि, स्वर्ग में स्थित · तृप्यन्तु प्रीतमनसः — प्रसन्न मन से तृप्त हों · प्रतिगृह्णन्त्विमं बलिम् — इस बलि को ग्रहण करें

तारत्रयं वदेद्देहियुग्मं देवीपदं वदेत् ।

पुत्राय वटुकनाथाय पश्चादुच्छिष्टहारिणे ।

१७

सर्वविघ्नान् पदं पश्चात् नाशयद्वितयं तथा ॥ १७॥

तीन तार कहे, "देहि देहि", "देवी" पद, "पुत्राय वटुकनाथाय", फिर "उच्छिष्टहारिणे", फिर "सर्वविघ्नान्" और "नाशय नाशय",

पदपाठ तारत्रयं वदेद् — तारत्रय कहे · देहियुग्मं देवीपदं वदेत् — "देहि देहि", फिर "देवी" पद · पुत्राय वटुकनाथाय — "पुत्राय वटुकनाथाय" · पश्चादुच्छिष्टहारिणे — फिर "उच्छिष्टहारिणे" · सर्वविघ्नान् पदं पश्चात् — फिर "सर्वविघ्नान्" पद · नाशयद्वितयं तथा — और "नाशय नाशय"

गृह्युगमं रुरुपदं क्षेत्रपालपदं ततः ।

सर्वोपचारसहितामिमां पूजां बलिं वदेत् ।

१८

गृह्ण गृह्ण द्विठान्तोऽयं क्षेत्रपालमनुः प्रिये ॥ १८ ॥

"गृह्ण गृह्ण", "रुरु" पद, फिर "क्षेत्रपाल", "सर्वोपचारसहिताम् इमां पूजां बलिं",
"गृह्ण गृह्ण", अन्त में द्विठ (स्वाहा) — यह क्षेत्रपाल मन्त्र है, हे प्रिये!

पदपाठ गृह्युगमं रुरुपदं — "गृह्ण गृह्ण", "रुरु" पद · क्षेत्रपालपदं ततः — फिर "क्षेत्रपाल"
पद · सर्वोपचारसहिताम् — "सर्वोपचारसहिताम्" · इमां पूजां बलिं वदेत् — "इमां पूजां बलिं" कहे · गृह्ण
गृह्ण द्विठान्तोऽयं — "गृह्ण गृह्ण", दो ठ (स्वाहा) पर समाप्त · क्षेत्रपालमनुः प्रिये — यह क्षेत्रपाल-मन्त्र है, हे
प्रिये

चतुःषष्ट्यक्षरैः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः ।

योऽस्मिन् क्षेत्रे निवासी च क्षेत्रपालस्य किङ्करः ।

१९

प्रीतोऽयं बलिदानेन सर्वरक्षां करोतु मे ॥ १९ ॥

चौंसठ अक्षरों का कहा गया, सर्वसिद्धि देने वाला। "जो इस क्षेत्र में निवासी क्षेत्रपाल
का किङ्कर है — इस बलिदान से प्रसन्न होकर वह मेरी सर्व रक्षा करे।"

पदपाठ चतुःषष्ट्यक्षरैः प्रोक्तः — चौंसठ अक्षरों वाला कहा गया · सर्वसिद्धिप्रदायकः — सब सिद्धियाँ देने
वाला · योऽस्मिन् क्षेत्रे निवासी च — जो इस क्षेत्र में निवासी है · क्षेत्रपालस्य किङ्करः — क्षेत्रपाल का
किङ्कर · प्रीतोऽयं बलिदानेन — इस बलिदान से प्रसन्न · सर्वरक्षां करोतु मे — मेरी सब रक्षा करे

तारत्रयं वदेत्तारं श्रीप्रासादपरामनुः ।

हां हीं हूञ्च युगञ्चादौ भैरवाधिष्ठिताय च ॥ २०॥

२०

तीन तार कहे, तार, श्रीप्रासाद-परा मन्त्र, आरम्भ में "हां हीं हूं" दो बार, और "भैरवाधिष्ठिताय",

पदपाठ तारत्रयं वदेत्तारं — तारत्रय कहे, तार · श्रीप्रासादपरामनुः — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · हां हीं हूञ्च युगञ्चादौ — "हां हीं हूं" आरम्भ में दो बार · भैरवाधिष्ठिताय च — और "भैरवाधिष्ठिताय"

अक्षोभ्यानन्दतः पश्चाद्दृढयाभीष्टदः परम् ।

सिद्धार्थपदमाभाष्य पश्चादवतरद्वयम् ॥ २१॥

२१

फिर "अक्षोभ्यानन्द", फिर "हृदयाभीष्टद"; "सिद्धार्थ" पद कहकर, फिर "अवतर अवतर",

पदपाठ अक्षोभ्यानन्दतः पश्चात् — फिर "अक्षोभ्यानन्द" · हृदयाभीष्टदः परम् — फिर "हृदयाभीष्टद" · सिद्धार्थपदमाभाष्य — "सिद्धार्थ" पद कहकर · पश्चादवतरद्वयम् — फिर "अवतर अवतर"

क्षेत्रपालपदं पश्चात् महाशान्त पदं ततः ।

मातृपुत्रपदं पश्चात् कुलपुत्रपदं तथा ॥ २२॥

२२

फिर "क्षेत्रपाल" पद, फिर "महाशान्त", फिर "मातृपुत्र" और "कुलपुत्र",

पदपाठ क्षेत्रपालपदं पश्चात् — फिर "क्षेत्रपाल" पद · महाशान्त पदं ततः — फिर "महाशान्त" पद · मातृपुत्रपदं पश्चात् — फिर "मातृपुत्र" पद · कुलपुत्रपदं तथा — और "कुलपुत्र" पद

सिद्धिपुत्रपदं चास्मिन् स्थानाधिपपदं ततः ।

ग्रामाधिपतयेऽस्मिन् स्याद्देशाधिपतये ततः ॥ २३ ॥

२३

और "सिद्धिपुत्र", फिर "स्थानाधिप", फिर "ग्रामाधिपतये अस्मिन्", फिर "देशाधिपतये",

पदपाठ सिद्धिपुत्रपदं चास्मिन् — और यहाँ "सिद्धिपुत्र" पद · स्थानाधिपपदं ततः — फिर "स्थानाधिप" पद · ग्रामाधिपतयेऽस्मिन् स्यात् — फिर "ग्रामाधिपतये अस्मिन्" · देशाधिपतये ततः — फिर "देशाधिपतये"

वदेद् वटुकनाथेति देवीपुत्रपदं ततः ।

मेघनादपदं पश्चात् प्रचण्डोग्रपदं वदेत् ॥ २४ ॥

२४

"वटुकनाथ" कहे, फिर "देवीपुत्र", फिर "मेघनाद", फिर "प्रचण्डोग्र",

पदपाठ वदेद् वटुकनाथेति — "वटुकनाथ" कहे · देवीपुत्रपदं ततः — फिर "देवीपुत्र" पद · मेघनादपदं पश्चात् — फिर "मेघनाद" पद · प्रचण्डोग्रपदं वदेत् — "प्रचण्डोग्र" कहे

कपालीति पदं पश्चाद्भीषणेति पदं वदेत् ।

स्यात् सर्वविघ्नाधिपतये इमां पूजां बलिं वदेत् ॥ २५ ॥

२५

फिर "कपाली", फिर "भीषण", फिर "सर्वविघ्नाधिपतये इमां पूजां बलिं",

पदपाठ कपालीति पदं पश्चाद् — फिर "कपाली" पद · भीषणेति पदं वदेत् — "भीषण" पद कहे · स्यात् सर्वविघ्नाधिपतये — फिर "सर्वविघ्नाधिपतये" · इमां पूजां बलिं वदेत् — "इमां पूजां बलिं" कहे

गृह्ण गृह्ण कुरुद्वन्द्वं मम दूरययुग्मकम् ।

२६

ज्वलयुकप्रज्वलयुगं सर्वविघ्नानीतीरयेत् ॥ २६ ॥

"गृह्ण गृह्ण कुरु कुरु", "मम दूरय दूरय", "ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल", फिर "सर्वविघ्नान्" कहे,

पदपाठ गृह्ण गृह्ण कुरुद्वन्द्वं — "गृह्ण गृह्ण कुरु कुरु" · मम दूरययुग्मकम् — "मम दूरय दूरय" · ज्वलयुकप्रज्वलयुगं — "ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल" · सर्वविघ्नानीतीरयेत् — "सर्वविघ्नान्" कहे

नाशयद्वितयं क्षां क्षं पश्चाद् बुद्धिमितीरयेत् ।

२७

क्षेत्रपालाय वौषट् हूं षष्ठ्युत्तरशताक्षरः ॥ २७ ॥

"नाशय नाशय क्षां क्षं", फिर "बुद्धिम्", "क्षेत्रपालाय वौषट् हूं" — एक सौ साठ अक्षर।

पदपाठ नाशयद्वितयं क्षां क्षं — "नाशय नाशय क्षां क्षं" · पश्चाद् बुद्धिमितीरयेत् — फिर "बुद्धिम्" कहे · क्षेत्रपालाय वौषट् हूं — "क्षेत्रपालाय वौषट् हूं" · षष्ठ्युत्तरशताक्षरः — एक सौ साठ अक्षर

तारत्रयं वदेत् पश्चादमुक क्षेत्रपाल च ।

राजराजेश्वर इमां पूजां बलिमतः परम् ।

२८

गृह्ययुगं द्विठान्तोऽयमष्टाविंशाक्षरो मनुः ॥ २८ ॥

तीन तार कहे, फिर अमुक (नाम), "क्षेत्रपाल", "राजराजेश्वर", फिर "इमां पूजां बलिं गृह्ण गृह्ण", अन्त में स्वाहा — अट्ठाईस अक्षरों का मन्त्र।

पदपाठ तारत्रयं वदेत् पश्चात् — तारत्रय कहे, फिर · अमुक क्षेत्रपाल च — "अमुक" (नाम) और "क्षेत्रपाल" · राजराजेश्वर — "राजराजेश्वर" · इमां पूजां बलिमतः परम् — फिर "इमां पूजां बलिं" · गृह्ययुगं द्विठान्तोऽयम् — "गृह्ण गृह्ण", दो ठ (स्वाहा) पर समाप्त · अष्टाविंशाक्षरो मनुः — अट्ठाईस अक्षरों का मन्त्र

अनेन बलिदानेन वटुवंशसमन्वितः ।

राजराजेश्वरो देवो मे प्रसीदतु सर्वदा ॥ २९ ॥

२९

"इस बलिदान से वटु-वंश सहित राजराजेश्वर देव मुझ पर सदा प्रसन्न हों।"

पदपाठ अनेन बलिदानेन — इस बलिदान से · वटुवंशसमन्वितः — वटु-वंश सहित · राजराजेश्वरो देवो — राजराजेश्वर देव · मे प्रसीदतु सर्वदा — मुझ पर सदा प्रसन्न हों

पश्चिमे वटुकं देवमुत्तरे योगिनीबलिम् ।

पूर्वे भूतबलिं दद्यात् क्षेत्रपालज्य दक्षिणे ।

३०

राजराजेश्वरं मध्ये पूजयेत् कुलनायिके ॥ ३० ॥

पश्चिम में वटुक देव को, उत्तर में योगिनी-बलि, पूर्व में भूत-बलि दे, और दक्षिण में क्षेत्रपाल को; मध्य में राजराजेश्वर की पूजा करे, हे कुलनायिके!

पदपाठ पश्चिमे वटुकं देवम् — पश्चिम में वटुक देव · उत्तरे योगिनीबलिम् — उत्तर में योगिनी-बलि · पूर्वे भूतबलिं दद्यात् — पूर्व में भूत-बलि दे · क्षेत्रपालज्य दक्षिणे — और दक्षिण में क्षेत्रपाल को · राजराजेश्वरं मध्ये — मध्य में राजराजेश्वर की · पूजयेत् कुलनायिके — पूजा करे, हे कुलनायिके

अङ्गुष्ठानामिकाभ्याज्य वटुकस्य बलिः स्मृतः ।

तर्जनीमध्यमानामिकाङ्गुष्ठैर्योगिनीबलिः ॥ ३१ ॥

३१

अँगूठे और अनामिका से वटुक का बलि कहा गया है; तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और अँगूठे से योगिनी-बलि।

पदपाठ अङ्गुष्ठानामिकाभ्याज्य — अँगूठे और अनामिका से · वटुकस्य बलिः स्मृतः — वटुक का बलि कहा गया है · तर्जनीमध्यमानामिकाङ्गुष्ठैः — तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, अँगूठे से · योगिनीबलिः — योगिनी-बलि

अङ्गुलीभिश्च सर्वाभिरुक्तो भूतबलिः प्रिये ।

अङ्गुष्ठतर्जनीभ्याञ्च क्षेत्रपालबलिर्भवेत् ।

३२

अङ्गुष्ठमध्यमाभ्याञ्च राजराजेश्वरस्य च ॥ ३२ ॥

सब अँगुलियों से भूत-बलि कहा गया है, हे प्रिये! अँगूठे और तर्जनी से क्षेत्रपाल-बलि; और अँगूठे और मध्यमा से राजराजेश्वर का।

पदपाठ अङ्गुलीभिश्च सर्वाभिः — और सब अंगुलियों से · उक्तो भूतबलिः प्रिये — भूत-बलि कहा गया, हे प्रिये · अङ्गुष्ठतर्जनीभ्याञ्च — अंगूठे और तर्जनी से · क्षेत्रपालबलिर्भवेत् — क्षेत्रपाल-बलि होता है · अङ्गुष्ठमध्यमाभ्याञ्च — अंगूठे और मध्यमा से · राजराजेश्वरस्य च — राजराजेश्वर का

वटुकादीन् समर्च्येवं कुलदीपान् प्रदर्शयेत् ।

३३

ईषद्रक्तसुपिष्टेन चतुरङ्गुलिमानतः ॥ ३३ ॥

इस प्रकार वटुक आदि की पूजा करके कुलदीप दिखाये — कुछ लाल रंग के अच्छी तरह पिसे आटे से, चार अंगुल के माप के,

पदपाठ वटुकादीन् समर्च्येवं — इस प्रकार वटुक आदि की पूजा कर · कुलदीपान् प्रदर्शयेत् — कुलदीप दिखाए · ईषद्रक्तसुपिष्टेन — थोड़े लाल रंग के अच्छे पिसे आटे से · चतुरङ्गुलिमानतः — चार अंगुल माप के

दीपान् डमरुकाकारान् त्रिकोणानतिशोभनान् ।

३४

कर्षाज्यग्राहिणः कुर्यान्नव सप्ताथ पञ्च वा ॥ ३४ ॥

डमरू के आकार के, त्रिकोण, अति सुन्दर दीप; उन्हें एक कर्ष घी धारण करने वाला बनाये — नौ, सात या पाँच।

पदपाठ दीपान् डमरुकाकारान् — डमरू के आकार के दीप · त्रिकोणानतिशोभनान् — त्रिकोण, अति सुन्दर · कर्षाज्यग्राहिणः कुर्यात् — एक कर्ष घी धारण करने वाले बनाए · नव सप्ताथ पञ्च वा — नौ, सात या पाँच

अन्तस्तेजो बहिस्तेज एकीकृत्यामितप्रभान् ।

त्रिधा देव्युपरि भ्राम्य कुलदीपान् निवेदयेत् ॥ ३५॥

३५

भीतर के तेज और बाहर के तेज को एक करके, अमित प्रभा वाले दीपों को देवी के ऊपर तीन बार घुमाकर कुलदीप निवेदित करे।

पदपाठ अन्तस्तेजो बहिस्तेज — अन्तः तेज और बाह्य तेज · एकीकृत्यामितप्रभान् — एक करके, अमित प्रभा वाले · त्रिधा देव्युपरि भ्राम्य — देवी के ऊपर तीन बार घुमाकर · कुलदीपान् निवेदयेत् — कुलदीप निवेदन करे

समस्तचक्रचक्रेषि देवेशि सकलात्मिके ।

आरत्रिकमिदं देवि गृहाण मम सिद्धये ।

३६

कुलदीपान् प्रदर्श्याथ शक्तिपूजां समाचरेत् ॥ ३६॥

"हे समस्त चक्रों की चक्रेश्वरि! हे देवेशि! हे सकलात्मिके! यह आरती, हे देवि! मेरी सिद्धि के लिए ग्रहण करो।" कुलदीप दिखाकर फिर शक्तिपूजा करे।

पदपाठ समस्तचक्रचक्रेषि — हे समस्त चक्रों की चक्रेश्वरि · देवेशि सकलात्मिके — हे देवेशि, हे सकलात्मिके · आरत्रिकमिदं देवि — यह आरात्रिक (आरती), हे देवि · गृहाण मम सिद्धये — मेरी सिद्धि के लिए ग्रहण करो · कुलदीपान् प्रदर्श्याथ — कुलदीप दिखाकर फिर · शक्तिपूजां समाचरेत् — शक्तिपूजा करे

स्वशक्तिं वीरशक्तिं वा दीक्षितां गुरुमार्गतः ।

३७

पाययित्वा चरेत् पानमिति शास्त्रस्य निश्चयः ॥ ३७ ॥

गुरु-मार्ग से दीक्षित अपनी शक्ति या वीर-शक्ति को पिलाकर फिर स्वयं पान करे — यह शास्त्र का निश्चय है।

पदपाठ स्वशक्तिं वीरशक्तिं वा — स्वशक्ति या वीरशक्ति · दीक्षितां गुरुमार्गतः — गुरुमार्ग से दीक्षित · पाययित्वा चरेत् पानम् — उसे पिलाकर पान करे · इति शास्त्रस्य निश्चयः — यह शास्त्र का निश्चय है

अदीक्षितां स्त्रियं कुर्यात् सद्यः संस्कारमम्बिके ।

३८

मन्त्रदीक्षाविधानेन शुद्धा भवति नान्यथा ॥ ३८ ॥

अदीक्षित स्त्री का तत्काल संस्कार करे, हे अम्बिके! मन्त्र-दीक्षा की विधि से वह शुद्ध होती है, अन्यथा नहीं।

पदपाठ अदीक्षितां स्त्रियं कुर्यात् — अदीक्षित स्त्री को · सद्यः संस्कारमम्बिके — तत्काल संस्कार दे, हे अम्बिके · मन्त्रदीक्षाविधानेन — मन्त्रदीक्षा के विधान से · शुद्धा भवति नान्यथा — शुद्ध होती है, अन्यथा नहीं

तस्मात् सुलक्षणां शक्तिं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।

३९

अभ्यर्च्य देवताबुद्ध्या भोगपात्रं निवेदयेत् ॥ ३९ ॥

इसलिए सुलक्षणा शक्ति की गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से देवता-बुद्धि से पूजा करके भोगपात्र निवेदित करे।

पदपाठ तस्मात् सुलक्षणां शक्तिं — इसलिए सुलक्षणा शक्ति की · गन्धपुष्पाक्षतादिभिः — गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से · अभ्यर्च्य देवताबुद्ध्या — देवता-बुद्धि से पूजा कर · भोगपात्रं निवेदयेत् — भोगपात्र निवेदन करे

तदन्ते कन्यकाश्चापि प्रमदाश्च मनोहराः ।

४०

सम्पूज्य देवताबुद्ध्या दद्यात् पात्रं पृथक् पृथक् ॥ ४०॥

उसके बाद कन्याओं और मनोहर युवतियों की भी देवता-बुद्धि से पूजा करके पृथक्-पृथक् पात्र दे।

पदपाठ तदन्ते कन्यकाश्चापि — उसके बाद कन्याएँ भी · प्रमदाश्च मनोहराः — और मनोहर युवतियाँ · सम्पूज्य देवताबुद्ध्या — देवता-बुद्धि से पूजकर · दद्यात् पात्रं पृथक् पृथक् — अलग-अलग पात्र दे

अनिवेद्य तु यः शक्त्यै कुलद्रव्यं निषेवते ।

४१

पूजितं निष्फलं तस्य देवता न प्रसीदति ॥ ४१॥

जो शक्ति को निवेदित किये बिना कुलद्रव्य का सेवन करता है, उसकी पूजा निष्फल है और देवता प्रसन्न नहीं होते।

पदपाठ अनिवेद्य तु यः शक्त्यै — जो शक्ति को निवेदन किए बिना · कुलद्रव्यं निषेवते — कुलद्रव्य का सेवन करता है · पूजितं निष्फलं तस्य — उसकी पूजा निष्फल है · देवता न प्रसीदति — देवता प्रसन्न नहीं होती

चण्डाली चर्मकारी च मागधी पुक्कसी तथा ।

४२

श्वपची खट्टकी चैव कैवर्ती वैश्ययोषितः ॥ ४२॥

चण्डाली, चर्मकारी, मागधी, पुक्कसी, श्वपची, खट्टकी, कैवर्ती और वैश्य-स्त्री —

पदपाठ चण्डाली चर्मकारी च — चण्डाली और चर्मकारी · मागधी पुक्कसी तथा — मागधी और पुक्कसी · श्वपची खट्टकी चैव — श्वपची और खट्टकी (कसाई-स्त्री) · कैवर्ती वैश्ययोषितः — कैवर्ती (मल्लाह-स्त्री) और वैश्य-स्त्री

कुलाष्टकमिदं प्रोक्तमकुलाष्टकमुच्यते ।

कन्दुकी शौण्डिकी चैव शस्त्रजीवी च रञ्जकी ॥ ४३॥

४३

यह कुलाष्टक कहा गया है। अब अकुलाष्टक कहा जाता है: कन्दुकी, शौण्डिकी, शस्त्रजीवी और रञ्जकी,

पदपाठ कुलाष्टकमिदं प्रोक्तम् — यह कुलाष्टक कहा गया · अकुलाष्टकमुच्यते — अकुलाष्टक कहा जाता है · कन्दुकी शौण्डिकी चैव — कन्दुकी और शौण्डिकी (कलवारिन) · शस्त्रजीवी च रञ्जकी — शस्त्रजीवी-स्त्री और रंजकी (रंगरेजिन)

गायकी रजकी शिल्पी कौलिकी च तथाष्टमी ।

तन्त्रमन्त्रसमायुक्ता समयाचारपालिका ॥ ४४॥

४४

गायकी, रजकी, शिल्पी और आठवीं कौलिकी। तन्त्र-मन्त्र से युक्त, समयाचार का पालन करने वाली,

पदपाठ गायकी रजकी शिल्पी — गायकी, रजकी (धोबिन), शिल्पी-स्त्री · कौलिकी च तथाष्टमी — और कौलिकी (जुलाहिन) आठवीं · तन्त्रमन्त्रसमायुक्ता — तन्त्र-मन्त्र से युक्त · समयाचारपालिका — समयाचार का पालन करने वाली

कुमारी च व्रतस्था च योगमुद्राधरापि वा ।

पूजाकाले स्वतः प्राप्ता सा ज्ञेया सहजा बुधैः ॥ ४५॥

४५

कुमारी, व्रतस्था, या योगमुद्रा धारण करने वाली, जो पूजा-काल में स्वयं आ जाये — उसे बुद्धिमान् सहजा (शक्ति) जानें।

पदपाठ कुमारी च व्रतस्था च — कुमारी, या व्रतस्था · योगमुद्राधरापि वा — या योगमुद्रा धारण करने वाली · पूजाकाले स्वतः प्राप्ता — पूजा-काल में स्वयं आई · सा ज्ञेया सहजा बुधैः — वह बुद्धों द्वारा "सहजा" जाननी चाहिए

उक्तजात्यङ्गनाभावे चातुर्वर्ण्याङ्गनां यजेत् ।

४६

सुरूपा तरुणी शान्ता कुलाचारयुता शुचिः ॥ ४६ ॥

कही गयी जातियों की स्त्री के अभाव में चारों वर्णों की स्त्री की पूजा करे — सुन्दर, तरुणी, शान्त, कुलाचार से युक्त, शुचि,

पदपाठ उक्तजात्यङ्गनाभावे — कही गई जातियों की स्त्री के अभाव में · चातुर्वर्ण्याङ्गनां यजेत् — चातुर्वर्ण्य की स्त्री की पूजा करे · सुरूपा तरुणी शान्ता — सुरूपा, तरुणी, शान्ता · कुलाचारयुता शुचिः — कुलाचार से युक्त, शुचि

शङ्काहीना भक्तियुक्ता गूढा शास्त्रोपजीविनी ।

४७

अलोलुपा सुशीला च स्मितास्या प्रियवादिनी ॥ ४७ ॥

शङ्का-रहित, भक्तियुक्त, गूढ़ (गोपनशील), शास्त्र के अनुसार जीने वाली, अलोलुप, सुशील, मुस्कराते मुख वाली, प्रिय बोलने वाली,

पदपाठ शङ्काहीना भक्तियुक्ता — शंका-रहित, भक्ति-युक्त · गूढा शास्त्रोपजीविनी — गूढ़, शास्त्र से जीविका करने वाली · अलोलुपा सुशीला च — अलोलुप और सुशीला · स्मितास्या प्रियवादिनी — मुस्कान-मुखी, प्रियवादिनी

गुरुदैवतसम्भक्ता सुचित्ता कौलिकप्रिया ।

विमत्सरा विशेषज्ञा देवताराधनोत्सुका ।

४८

मनोहरा सदाचारा शक्तिरेषा सुलक्षणा ॥ ४८ ॥

गुरु और देवता में भक्ति वाली, सुचित्ता, कौलिकों को प्रिय, मत्सर-रहित, विशेषज्ञा, देवता की आराधना में उत्सुक, मनोहर, सदाचारिणी — यह सुलक्षणा शक्ति है।

पदपाठ गुरुदैवतसम्भक्ता — गुरु-देवता की भक्त · सुचित्ता कौलिकप्रिया — सुचित्ता, कौलिकों की प्रिय · विमत्सरा विशेषज्ञा — मात्सर्य-रहित, विशेषज्ञा · देवताराधनोत्सुका — देवता की आराधना में उत्सुक · मनोहरा सदाचारा — मनोहर, सदाचारा · शक्तिरेषा सुलक्षणा — यह सुलक्षणा शक्ति है

दुष्टोग्रा कर्कशा क्रूरा दुःखिता कुलदूषणी ।

४९

दुराचारा पराधीना भीता लुब्धातुराऽलसा ॥ ४९॥

दुष्ट, उग्र, कर्कश, क्रूर, दुःखी, कुल को दूषित करने वाली, दुराचारिणी, पराधीन, भीरु, लोभी, रोगी, आलसी,

पदपाठ दुष्टोग्रा कर्कशा क्रूरा — दुष्टा, उग्रा, कर्कशा, क्रूरा · दुःखिता कुलदूषणी — दुःखिता, कुल को दूषित करने वाली · दुराचारा पराधीना — दुराचारा, पराधीना · भीता लुब्धातुराऽलसा — भीता, लुब्धा, आतुरा, आलसी

निद्रासक्तातिदुर्मेधा हीनाङ्गी व्याधिपीडिता ।

५०

दुर्गन्धा कुत्सिता मूढा वृद्धोन्मत्ता रहस्यभिक् ॥ ५०॥

निद्रा में आसक्त, अति मन्दबुद्धि, हीन अंग वाली, व्याधि से पीड़ित, दुर्गन्धयुक्त, कुत्सित, मूढ़, वृद्धा, उन्मत्त, रहस्य खोलने वाली,

पदपाठ निद्रासक्तातिदुर्मेधा — निद्रासक्ता, अति दुर्बुद्धि · हीनाङ्गी व्याधिपीडिता — हीनाङ्गी, व्याधि-पीडिता · दुर्गन्धा कुत्सिता मूढा — दुर्गन्धा, कुत्सिता, मूढ़ा · वृद्धोन्मत्ता रहस्यभिक् — वृद्धा, उन्मत्ता, रहस्य भेदने वाली

कुतर्का कुत्सितालापा निर्लज्जा कलहप्रिया ।

विरूपोन्मार्गगा स्तब्धा पङ्ग्वन्धविकृतानना ।

५१

ईदृशीं मन्त्रयुक्ताञ्च शक्तिं यागे विवर्जयेत् ॥ ५१ ॥

कुतर्क करने वाली, कुत्सित बोलने वाली, निर्लज्ज, कलहप्रिय, कुरूप, उन्मार्गगामिनी, स्तब्ध, लँगड़ी, अन्धी, विकृत मुख वाली — ऐसी स्त्री को, मन्त्रयुक्त होने पर भी, याग में शक्ति के रूप में त्याग दे।

पदपाठ कुतर्का कुत्सितालापा — कुतर्की, कुत्सित बोलने वाली · निर्लज्जा कलहप्रिया — निर्लज्जा, कलहप्रिया · विरूपोन्मार्गगा स्तब्धा — विरूपा, कुमार्गगामिनी, हठीली · पङ्ग्वन्धविकृतानना — पंगु, अन्धी, विकृत मुख वाली · ईदृशीं मन्त्रयुक्ताञ्च — ऐसी को, मन्त्र-युक्त हो तो भी · शक्तिं यागे विवर्जयेत् — याग में शक्ति के रूप में त्याग दे

ततोऽर्चनादिकं सर्वं मन्त्रोदकपुरःसरम् ।

इतः पूर्वादिमनुना मन्त्री देव्यै समर्पयेत् ॥ ५२ ॥

५२

फिर मन्त्री सारा अर्चन आदि, मन्त्र-जल के साथ, "इतः पूर्वम्" से आरम्भ होने वाले मन्त्र से देवी को समर्पित करे।

पदपाठ ततोऽर्चनादिकं सर्वं — फिर अर्चन आदि सब · मन्त्रोदकपुरःसरम् — मन्त्र-जल पूर्वक · इतः पूर्वादिमनुना — "इतः पूर्वम्" आदि मन्त्र से · मन्त्री देव्यै समर्पयेत् — मन्त्री देवी को समर्पित करे

तारत्रयमितः पूर्वं प्राणबुद्धी ततः परम् ।

देहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु ॥ ५३ ॥

५३

तीन तार, "इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु",

पदपाठ तारत्रयमितः पूर्वं — तारत्रय, "इतः पूर्वम्" · प्राणबुद्धी ततः परम् — फिर "प्राणबुद्धि" · देहधर्माधिकारतो — "देहधर्माधिकारतः" · जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु — "जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु"

मनसा चेतसा वाचा कर्मणा तत्परं वदेत् ।

५४

हस्ताभ्याञ्च ततः पद्भ्यामुदरेण ततः परम् ॥ ५४॥

"मनसा चेतसा वाचा", फिर "कर्मणा", "हस्ताभ्यां", फिर "पद्भ्याम्", फिर "उदरेण",

पदपाठ मनसा चेतसा वाचा — "मनसा चेतसा वाचा" · कर्मणा तत्परं वदेत् — फिर "कर्मणा" कहे · हस्ताभ्याञ्च ततः पद्भ्याम् — "हस्ताभ्यां", फिर "पद्भ्याम्" · उदरेण ततः परम् — फिर "उदरेण"

शिश्ना च यत् स्मृतं पश्चाद् यदुक्तं यत् कृतं वदेत् ।

५५

तत् सर्वं गुरवे चान्ते मत्समपीतमस्त्विति ।

स्वाहान्तो मनुरित्युक्तस्त्रिसप्तत्यक्षरः प्रिये ॥ ५५॥

"शिश्ना", फिर "यत् स्मृतं यदुक्तं यत् कृतं तत् सर्वं", और अन्त में "गुरवे मत्समर्पितमस्तु", स्वाहा के साथ — यह तिहत्तर अक्षरों का मन्त्र कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ शिश्ना च यत् स्मृतं पश्चाद् — "शिश्ना", फिर "यत् स्मृतम्" · यदुक्तं यत् कृतं वदेत् — "यदुक्तं यत् कृतम्" कहे · तत् सर्वं गुरवे चान्ते — "तत् सर्वं", और अन्त में "गुरवे" · मत्समर्पितमस्त्विति — "मत्समर्पितमस्तु" · स्वाहान्तो मनुरित्युक्तः — स्वाहा पर समाप्त — यह मन्त्र कहा गया · त्रिसप्तत्यक्षरः प्रिये — तिहत्तर अक्षरों का, हे प्रिये

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यन्मया क्रियते शिवे ।
तव कृत्यमिदं सर्वमिति ज्ञात्वा क्षमस्व मे ॥ ५६॥

५६

"जानकर या अनजाने जो कुछ मुझसे किया जाता है, हे शिवे! यह सब तुम्हारा ही कृत्य है; ऐसा जानकर मुझे क्षमा करो।"

पदपाठ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि — जानते हुए या अनजाने · यन्मया क्रियते शिवे — जो मैं करता हूँ, हे शिवे · तव कृत्यमिदं सर्वम् — यह सब तुम्हारा कृत्य है · इति ज्ञात्वा क्षमस्व मे — यह जानकर मुझे क्षमा करो

एवं सम्प्रार्थ्य देवेशि स्तुत्वा नत्वा च भक्तितः ।
प्रधानदेवतामूर्तीं परिवारान् समर्चयेत् ।
एवं सावरणां देवीं चिन्तयेत् स्वहृदम्बुजे ॥ ५७॥

५७

इस प्रकार प्रार्थना करके, हे देवेशि! भक्ति से स्तुति और प्रणाम करके, प्रधान देवता की मूर्ति में परिवार-देवताओं की पूजा करे, और इस प्रकार आवरण सहित देवी का अपने हृदय-कमल में चिन्तन करे।

पदपाठ एवं सम्प्रार्थ्य देवेशि — इस प्रकार प्रार्थना कर, हे देवेशि · स्तुत्वा नत्वा च भक्तितः — भक्ति से स्तुति और नमन कर · प्रधानदेवतामूर्तीं — प्रधान देवता की मूर्ति में · परिवारान् समर्चयेत् — परिवारों की पूजा करे · एवं सावरणां देवीं — इस प्रकार आवरण-सहित देवी का · चिन्तयेत् स्वहृदम्बुजे — अपने हृदय-कमल में चिन्तन करे

शेषिकाये समर्प्यात्ममूलमन्त्रेण शोधयेत् ।

स्याद्वाग्भवं हृदुच्छिष्टचाण्डालि तदनन्तरम् ॥ ५८ ॥

५८

शेषिका को समर्पित करके अपने मूलमन्त्र से शोधन करे: वाग्भव, फिर हृद् (नमः),
"उच्छिष्टचाण्डालि",

पदपाठ शेषिकायै समर्प्य — शेषिका को समर्पित कर · आत्ममूलमन्त्रेण शोधयेत् — अपने मूलमन्त्र से
शोधन करे · स्याद्वाग्भवं — वाग्भव · हृदुच्छिष्टचाण्डालि तदनन्तरम् — फिर "हृद् (नमः) उच्छिष्टचाण्डालि"

वदेन्मातङ्गि सर्वन्ते वश्यङ्कुरुयुगन्ततः ।

एकविंशतिवर्णैश्च शेषिकामनुरीरितः ॥ ५९ ॥

५९

"मातङ्गि" कहे, फिर "सर्व", फिर "वश्यं कुरु कुरु" — इक्कीस अक्षरों का
शेषिका मन्त्र कहा गया है।

पदपाठ वदेन्मातङ्गि सर्वन्ते — "मातङ्गि" कहे, फिर "सर्व" · वश्यङ्कुरुयुगन्ततः — फिर "वश्यं कुरु
कुरु" · एकविंशतिवर्णैश्च — इक्कीस वर्णों से · शेषिकामनुरीरितः — शेषिका-मन्त्र कहा गया

मन्त्रेणानेन निर्माल्यं शेषिकायै समर्पयेत् ।

देवीमुच्छिष्टमातङ्गीं ध्यायेत् त्रैलोक्यमोहिनीम् ॥ ६० ॥

६०

इस मन्त्र से निर्माल्य शेषिका को समर्पित करे, त्रैलोक्य को मोहित करने वाली देवी
उच्छिष्ट-मातङ्गी का ध्यान करते हुए:

पदपाठ मन्त्रेणानेन निर्माल्यं — इस मन्त्र से निर्माल्य · शेषिकायै समर्पयेत् — शेषिका को समर्पित
करे · देवीमुच्छिष्टमातङ्गीं — देवी उच्छिष्ट-मातङ्गी का · ध्यायेत् त्रैलोक्यमोहिनीम् — ध्यान करे, त्रैलोक्य-
मोहिनी

वीणावाद्यविनोदगीतनिरतां नीलांशुकोल्लासिनीं
बिम्बोष्ठीं नवयावकार्द्रचरणामाकीर्णकेशालकाम् ।

६१

मृदङ्गीं सितशङ्खकुण्डलधरां माणिक्यभूषोज्ज्वलां

मातङ्गीं प्रणतोऽस्मि सुस्मितमुखीं देवीं शुक्श्यामलाम् ॥ ६१ ॥

"वीणा-वादन और गीत के विनोद में रत, नीले वस्त्र से शोभित, बिम्ब-फल जैसे ओठों वाली, ताज़े महावर से आर्द्र चरणों वाली, बिखरे केश और अलकों वाली, कोमल अंगों वाली, श्वेत शंख के कुण्डल पहने, माणिक्य के आभूषणों से उज्ज्वल, मधुर मुस्कान वाली, शुक्-सी श्यामल देवी मातङ्गी को मैं प्रणाम करता हूँ।"

पदपाठ वीणावाद्यविनोदगीतनिरतां — वीणा-वादन और गीत के विनोद में रत · नीलांशुकोल्लासिनीं — नीले वस्त्र में उल्लसित · बिम्बोष्ठीं — बिम्ब-फल-से ओठों वाली · नवयावकार्द्रचरणाम् — नये यावक (महावर) से आर्द्र चरणों वाली · आकीर्णकेशालकाम् — खुले केश और अलकों वाली · मृदङ्गीं — मृदु अंगों वाली · सितशङ्खकुण्डलधरां — श्वेत शंख के कुण्डल धारण करने वाली · माणिक्यभूषोज्ज्वलां — माणिक्य के आभूषणों से उज्ज्वल · मातङ्गीं प्रणतोऽस्मि — मातङ्गी को मैं प्रणत हूँ · सुस्मितमुखीं देवीं शुक्श्यामलाम् — सुमुस्कान-मुखी देवी, तोते-सी श्यामल

ततः श्रीगुरुरूपाय साक्षात् परशिवाय च ।

६२

कराभ्यां पात्रमुद्धृत्य सद्वितीयं समर्पयेत् ॥ ६२ ॥

फिर दोनों हाथों से पात्र उठाकर, सद्वितीय (मांस सहित) उसे श्रीगुरु-रूप साक्षात् परशिव को समर्पित करे।

पदपाठ ततः श्रीगुरुरूपाय — फिर श्रीगुरु-रूप को · साक्षात् परशिवाय च — और साक्षात् परशिव को · कराभ्यां पात्रमुद्धृत्य — दोनों हाथों से पात्र उठाकर · सद्वितीयं समर्पयेत् — द्वितीय (मांस) सहित समर्पित करे

स्वसम्प्रदायसंयुक्तैर्वीरैश्च सह पूजयेत् ।

अन्योन्यवन्दनं कृत्वा पिबेत्तदनुज्ञया ॥ ६३ ॥

६३

अपने सम्प्रदाय के वीरों के साथ पूजा करे, और परस्पर वन्दना करके एक-दूसरे की अनुज्ञा से पान करे।

पदपाठ स्वसम्प्रदायसंयुक्तैः — अपने सम्प्रदाय से युक्त · वीरैश्च सह पूजयेत् — वीरों के साथ पूजा करे · अन्योन्यवन्दनं कृत्वा — परस्पर वन्दन कर · पिबेत्तदनुज्ञया — उन-उनकी अनुज्ञा से पिए

सव्येनोद्धृत्य पात्रन्तु मुद्रां कृत्वाऽपसव्यतः ।

यथाविधि द्वितीयेन गृहीयान्मन्त्रमुच्चरन् ॥ ६४ ॥

६४

बायें हाथ से पात्र उठाकर, दाहिने से मुद्रा बनाकर, विधिपूर्वक दूसरे (हाथ) से मन्त्र उच्चारण करते हुए ग्रहण करे।

पदपाठ सव्येनोद्धृत्य पात्रन्तु — बाएँ (हाथ) से पात्र उठाकर · मुद्रां कृत्वाऽपसव्यतः — दाएँ से मुद्रा बनाकर · यथाविधि द्वितीयेन — यथाविधि द्वितीय (हाथ) से · गृहीयान्मन्त्रमुच्चरन् — मन्त्र उच्चारते हुए ग्रहण करे

पिशितं माषमात्रन्तु द्रव्यं चुल्लुकसम्मितम् ।

आत्मदेहत्रयं तत्त्वं त्रयेणाथ विशोधयेत् ॥ ६५ ॥

६५

उड़द भर मांस, एक चुल्लू भर द्रव्य — इस त्रय से आत्मा के तीन देहों को तत्त्व-रूप से शुद्ध करे।

पदपाठ पिशितं माषमात्रन्तु — उड़द के दाने भर मांस · द्रव्यं चुल्लुकसम्मितम् — चुल्लू भर द्रव्य · आत्मदेहत्रयं तत्त्वं — आत्मा के तीन देह, तत्त्व · त्रयेणाथ विशोधयेत् — त्रय से शोधन करे

तरुणोल्लाससहितः प्रसन्नवदनेक्षणः ।

गुरुः शिष्यान् समाहूय दद्यात्तत्त्वत्रयं प्रिये ॥ ६६॥

६६

तरुण उल्लास से युक्त, प्रसन्न मुख और नेत्रों वाला गुरु शिष्यों को बुलाकर तत्त्वत्रय दे, हे प्रिये!

पदपाठ तरुणोल्लाससहितः — तरुण उल्लास सहित · प्रसन्नवदनेक्षणः — प्रसन्न मुख और दृष्टि वाला · गुरुः शिष्यान् समाहूय — गुरु शिष्यों को बुलाकर · दद्यात्तत्त्वत्रयं प्रिये — तत्त्वत्रय दे, हे प्रिये

शिष्योपायनमादाय शुद्धात्मा कुसुमादिकम् ।

यथाशक्ति निवेद्याथ वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ ६७॥

६७

शुद्धात्मा शिष्य पुष्प आदि उपहार लेकर, यथाशक्ति निवेदित करके, धन की कंजूसी से रहित,

पदपाठ शिष्योपायनमादाय — शिष्य उपायन (भेंट) लेकर · शुद्धात्मा कुसुमादिकम् — शुद्धात्मा, पुष्प आदि · यथाशक्ति निवेद्याथ — यथाशक्ति निवेदन कर · वित्तशाठ्यविवर्जितः — धन की कृपणता से रहित

प्रणम्य बहिरष्टाङ्गं प्रविश्यान्तः शनैः प्रिये ।

समर्प्योपायनं भक्त्या शिवाय गुरुरूपिणे ॥ ६८॥

६८

बाहर अष्टाङ्ग प्रणाम करके, धीरे-धीरे भीतर प्रवेश करके, हे प्रिये! गुरु-रूप शिव को भक्ति से उपहार समर्पित करके,

पदपाठ प्रणम्य बहिरष्टाङ्गं — बाहर अष्टांग प्रणाम कर · प्रविश्यान्तः शनैः प्रिये — धीरे भीतर प्रवेश कर, हे प्रिये · समर्प्योपायनं भक्त्या — भक्ति से उपायन समर्पित कर · शिवाय गुरुरूपिणे — गुरुरूपी शिव को

ग्रथिताङ्गुष्ठकौ कृत्वा करौ सक्ताग्रतर्जनी ।
जानुभ्यामवनिं गत्वा पञ्चाङ्गं प्रणमेद् गुरुम् ॥ ६९ ॥

६९

अँगूठों को गूँथकर, तर्जनियों के अग्रभाग मिलाये हुए हाथों से, दोनों घुटनों के बल भूमि पर जाकर, गुरु को पञ्चाङ्ग प्रणाम करे।

पदपाठ ग्रथिताङ्गुष्ठकौ कृत्वा — अँगूठे गूँथकर · करौ सक्ताग्रतर्जनी — तर्जनियों के अग्र मिलाए हाथ · जानुभ्यामवनिं गत्वा — दोनों घुटनों से भूमि पर जाकर · पञ्चाङ्गं प्रणमेद् गुरुम् — पंचांग प्रणाम गुरु को करे

वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां दक्षहस्तप्रसारितम् ।

७०

स्पृष्ट्वा विशुद्धहृदय ईषदानतमस्तकः ॥ ७० ॥

बायें अँगूठे और अनामिका से फैले हुए दाहिने हाथ को छूकर, विशुद्ध हृदय से, थोड़ा सिर झुकाये —

पदपाठ वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां — बाएँ अँगूठे और अनामिका से · दक्षहस्तप्रसारितम् — दाहिना हाथ फैलाया · स्पृष्ट्वा विशुद्धहृदय — स्पर्श कर, विशुद्ध हृदय · ईषदानतमस्तकः — थोड़ा नत मस्तक

वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां शिष्याय श्रीगुरुः प्रिये ।

७१

प्रकृत्याद्यैः पृथिव्यन्तैश्चतुर्विंशतिभिः प्रिये ॥ ७१ ॥

श्रीगुरु बायें अँगूठे और अनामिका से शिष्य को देते हैं, हे प्रिये: प्रकृति से पृथ्वी तक के चौबीस तत्त्वों से,

पदपाठ वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां — बाएँ अँगूठे और अनामिका से · शिष्याय श्रीगुरुः प्रिये — शिष्य को श्रीगुरु, हे प्रिये · प्रकृत्याद्यैः पृथिव्यन्तैः — प्रकृति आदि से पृथ्वी तक · चतुर्विंशतिभिः प्रिये — चौबीस से, हे प्रिये

स्वरैरशुद्धतत्त्वैश्च वाग्भवेन कुलेश्वरि ।

७२

संयुक्तेनात्मतत्त्वेन स्थूलदेहं विशोधयेत् ॥ ७२ ॥

स्वरों, अशुद्ध तत्त्वों और वाग्भव से, हे कुलेश्वरि! आत्मतत्त्व से संयुक्त, स्थूल देह को शुद्ध करे।

पदपाठ स्वरैरशुद्धतत्त्वैश्च — स्वरों से, अशुद्ध तत्त्वों से · वाग्भवेन कुलेश्वरि — और वाग्भव से, हे कुलेश्वरि · संयुक्तेनात्मतत्त्वेन — आत्मतत्त्व से युक्त · स्थूलदेहं विशोधयेत् — स्थूल देह का शोधन करे

मायादिपुरुषान्तैश्च शुद्धाशुद्धैश्च सप्तभिः ।

७३

तत्त्वैः स्पर्शाह्वयैर्वर्णैः कामराजेन मन्त्रवित् ।

युक्तेन विद्यातत्त्वेन सूक्ष्मदेहं विशोधयेत् ॥ ७३ ॥

माया से पुरुष तक के सात शुद्धाशुद्ध तत्त्वों से, स्पर्श (व्यञ्जन) वर्णों और कामराज से, विद्यातत्त्व से संयुक्त, मन्त्रवेत्ता सूक्ष्म देह को शुद्ध करे।

पदपाठ मायादिपुरुषान्तैश्च — माया आदि से पुरुष तक · शुद्धाशुद्धैश्च सप्तभिः — शुद्ध-अशुद्ध सात से · तत्त्वैः स्पर्शाह्वयैर्वर्णैः — तत्त्वों से, स्पर्श नामक वर्णों से · कामराजेन मन्त्रवित् — और कामराज से, मन्त्रज्ञ · युक्तेन विद्यातत्त्वेन — विद्यातत्त्व से युक्त · सूक्ष्मदेहं विशोधयेत् — सूक्ष्म देह का शोधन करे

शुद्धैः शिवादिविद्यान्तैः पञ्चतत्त्वैश्च व्यापकैः ।

७४

परया शिवतत्त्वेन परं देहं विशोधयेत् ॥ ७४ ॥

शिव से विद्या तक के पाँच शुद्ध, व्यापक तत्त्वों से, परा और शिवतत्त्व से, परम देह को शुद्ध करे।

पदपाठ शुद्धैः शिवादिविद्यान्तैः — शुद्ध, शिव से विद्या तक · पञ्चतत्त्वैश्च व्यापकैः — पाँच व्यापक तत्त्वों से · परया शिवतत्त्वेन — परा से, शिवतत्त्व से · परं देहं विशोधयेत् — पर देह का शोधन करे

षट्त्रिंशत्तत्त्वसहितमालिन्या बालया प्रिये ।
सर्वतत्त्वाश्रयं बीजं सर्वतत्त्वैर्विशोधयेत् ॥ ७५॥

७५

छत्तीस तत्त्वों सहित, मालिनी और बाला से, हे प्रिये! सर्वतत्त्वों के आश्रय बीज को सर्वतत्त्वों से शुद्ध करे।

पदपाठ षट्त्रिंशत्तत्त्वसहितम् — छत्तीस तत्त्वों सहित · मालिन्या बालया प्रिये — मालिनी और बाला से, हे प्रिये · सर्वतत्त्वाश्रयं बीजं — सब तत्त्वों का आश्रय बीज · सर्वतत्त्वैर्विशोधयेत् — सब तत्त्वों से शोधन करे

शोधयेति पदं दद्यात् सद्वितीयमलिं गुरुः ।
चुल्लुकं गुरुणा दत्तं शोधयामीति चोच्चरन् ।
भक्त्या चावनतः शिष्यो निःशब्दं त्रिः पिबेदलिम् ॥ ७६॥

७६

गुरु "शोधय" पद जोड़कर सद्वितीय मद्य दे; शिष्य भक्ति से झुककर "शोधयामि" कहते हुए गुरु द्वारा दिये चुल्लू को निःशब्द तीन बार पिये।

पदपाठ शोधयेति पदं दद्यात् — गुरु "शोधय" पद जोड़े · सद्वितीयमलिं गुरुः — (और) द्वितीय सहित मद्य (दे) · चुल्लुकं गुरुणा दत्तं — गुरु द्वारा दिया चुल्लू · शोधयामीति चोच्चरन् — "शोधयामि" उच्चारते हुए · भक्त्या चावनतः शिष्यो — भक्ति से नत शिष्य · निःशब्दं त्रिः पिबेदलिम् — निःशब्द तीन बार मद्य पिए

पाणिभ्यां संस्पृशेद्देहं सर्वतत्त्वं समुच्चरन् ।
शिरःप्रभृतिपादान्तं शुद्धं देहं विचिन्तयेत् ॥ ७७॥

७७

सब तत्त्वों का उच्चारण करते हुए दोनों हाथों से देह को छुए, और सिर से पैर तक देह को शुद्ध चिन्तन करे।

पदपाठ पाणिभ्यां संस्पृशेद्देहं — दोनों हाथों से देह का स्पर्श करे · सर्वतत्त्वं समुच्चरन् — सब तत्त्वों का उच्चारण करते हुए · शिरःप्रभृतिपादान्तं — सिर से पैर तक · शुद्धं देहं विचिन्तयेत् — देह को शुद्ध चिन्तन करे

स्थूलान्तमात्मतत्त्वं स्यात् सूक्ष्मं विद्यान्तगोचरम् ।

७८

परान्तं शिवतत्त्वं स्यादिति तत्त्वत्रयं जगत् ॥ ७८ ॥

आत्मतत्त्व स्थूल तक है, सूक्ष्म विद्यातत्त्व के क्षेत्र में है, और शिवतत्त्व पर तक है — इस प्रकार जगत् तत्त्वत्रय है।

पदपाठ स्थूलान्तमात्मतत्त्वं स्यात् — आत्मतत्त्व स्थूल तक है · सूक्ष्मं विद्यान्तगोचरम् — सूक्ष्म विद्यातत्त्व के अन्तर्गत है · परान्तं शिवतत्त्वं स्यात् — शिवतत्त्व पर तक है · इति तत्त्वत्रयं जगत् — इस प्रकार जगत् तत्त्वत्रय है

एवं तत्त्वत्रयज्ञानं गुरोर्ज्ञात्वा य आचरेत् ।

७९

स जीवन्नेव मुक्तः स्यादिति शङ्करभाषितम् ॥ ७९ ॥

जो गुरु से इस तत्त्वत्रय-ज्ञान को जानकर आचरण करता है — वह जीते-जी ही मुक्त है; यह शंकर का कथन है।

पदपाठ एवं तत्त्वत्रयज्ञानं — इस प्रकार तत्त्वत्रय का ज्ञान · गुरोर्ज्ञात्वा य आचरेत् — गुरु से जानकर जो आचरण करे · स जीवन्नेव मुक्तः स्यात् — वह जीते हुए ही मुक्त है · इति शङ्करभाषितम् — यह शंकर का कथन है

ततः स्वीकृत्य च गुरुः शिष्येभ्यः शेषदो भवेत् ।

८०

आदाय गुरुणा दत्तं सद्वितीयासवं पिबेत् ॥ ८० ॥

फिर गुरु स्वयं ग्रहण करके शिष्यों को शेष दे; गुरु द्वारा दिया हुआ लेकर सद्वितीय आसव पिये।

पदपाठ ततः स्वीकृत्य च गुरुः — फिर गुरु स्वयं ग्रहण कर · शिष्येभ्यः शेषदो भवेत् — शिष्यों को शेष दे · आदाय गुरुणा दत्तं — गुरु द्वारा दिया लेकर · सद्वितीयासवं पिबेत् — द्वितीय सहित आसव पिए

श्रीगुरुज्येष्ठपूज्यानां पुरतः कुलनायिके ।

नोपविश्य पिबेन्मद्यं इति शास्त्रस्य निर्णयः ॥ ८१ ॥

८१

श्रीगुरु, ज्येष्ठों और पूज्यों के सामने बैठकर मद्य न पिये, हे कुलनायिके! यह शास्त्र का निर्णय है।

पदपाठ श्रीगुरुज्येष्ठपूज्यानां — श्रीगुरु, ज्येष्ठ और पूज्यों के · पुरतः कुलनायिके — सामने, हे कुलनायिके · नोपविश्य पिबेन्मद्यं — बैठकर मद्य न पिए · इति शास्त्रस्य निर्णयः — यह शास्त्र का निर्णय है

प्राणभेदफलोल्लासप्रणामस्थितिलक्षणम् ।

अविज्ञायाचरेद् यस्तु स भवेदापदाम्पदम् ॥ ८२ ॥

८२

जो प्राण-भेद, फल, उल्लास, प्रणाम और स्थिति के लक्षणों को जाने बिना आचरण करता है — वह आपदाओं का घर बन जाता है।

पदपाठ प्राणभेदफलोल्लास- — प्राणभेद, फल, उल्लास · प्रणामस्थितिलक्षणम् — प्रणाम और स्थिति के लक्षण · अविज्ञायाचरेद् यस्तु — जो न जानकर आचरण करे · स भवेदापदाम्पदम् — वह आपदाओं का घर बनता है

निर्मन्त्रं न पिबेन्मद्यं प्रायश्चित्तं विधीयते ।

तस्मान्मन्त्रविधानेन कर्तव्यं कुलनायिके ॥ ८३ ॥

८३

मन्त्र के बिना मद्य न पिये — उसके लिए प्रायश्चित्त का विधान है; इसलिए मन्त्र-विधि से करना चाहिए, हे कुलनायिके!

पदपाठ निर्मन्त्रं न पिबेन्मद्यं — बिना मन्त्र मद्य न पिए · प्रायश्चित्तं विधीयते — प्रायश्चित्त विधान किया गया है · तस्मान्मन्त्रविधानेन — इसलिए मन्त्र-विधान से · कर्तव्यं कुलनायिके — करना चाहिए, हे कुलनायिके

इदं पवित्रममृतं पिबामि भवभेषजम् ।

८४

पशुपाशसमुच्छेदकारणं भैरवोदितम् ॥ ८४ ॥

"मैं इस पवित्र अमृत को पीता हूँ, जो भव का औषध है, पशु-पाश के छेदन का कारण है, भैरव द्वारा कहा गया है।

पदपाठ इदं पवित्रममृतं — यह पवित्र अमृत · पिबामि भवभेषजम् — मैं पीता हूँ, भव की औषधि · पशुपाशसमुच्छेद- — पशु-पाश के उच्छेद का · कारणं भैरवोदितम् — कारण, भैरव द्वारा कहा गया

चित्ते स्वातन्त्र्यसारत्वात्तदानन्दमयात्मनः ।

८५

तन्मयत्वाच्च भावानां भावाश्चान्तर्हिता रसे ॥ ८५ ॥

चित्त में स्वातन्त्र्य ही सार होने से, उस आनन्दमय आत्मा के, और भावों के तन्मय होने से, भाव रस में छिपे हुए हैं;

पदपाठ चित्ते स्वातन्त्र्यसारत्वात् — चित्त में स्वातन्त्र्य सार होने से · तदानन्दमयात्मनः — उस आनन्दमय आत्मा का · तन्मयत्वाच्च भावानां — और भावों के तन्मय होने से · भावाश्चान्तर्हिता रसे — भाव रस में अन्तर्हित हैं

सुषुम्नान्तं विकाशाय सुरसस्तेन पीयते ।

८६

तस्मादिमां सुरां देवीं पूर्णोऽहं त्वां पिबाम्यहम् ॥ ८६ ॥

इसलिए सुषुम्ना के अन्त तक विकास के लिए यह सुरस पिया जाता है। इसलिए हे सुरा-रूपी देवी! मैं पूर्ण होकर तुम्हें पीता हूँ।"

पदपाठ सुषुम्नान्तं विकाशाय — सुषुम्ना के अन्त तक विकास के लिए · सुरसस्तेन पीयते — इसलिए सुरस पिया जाता है · तस्मादिमां सुरां देवीं — इसलिए इस सुरा देवी को · पूर्णोऽहं त्वां पिबाम्यहम् — पूर्ण मैं, तुम्हें पीता हूँ

मन्त्रेणानेन देवेशि मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ।

८७

अनाकुलमनाः कुर्यादलिपानं शनैः शनैः ॥ ८७ ॥

इस मन्त्र से, हे देवेशि! और मूलमन्त्र से, मन्त्रवेत्ता अनाकुल मन से धीरे-धीरे मद्यपान करे।

पदपाठ मन्त्रेणानेन देवेशि — इस मन्त्र से, हे देवेशि · मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् — और मूलमन्त्र से, मन्त्रज्ञ · अनाकुलमनाः कुर्याद् — अनाकुल मन से करे · अलिपानं शनैः शनैः — मद्यपान, धीरे-धीरे

स्वात्ममूलत्रिकोणस्थे कोटिसूर्यसमप्रभे ।

८८

कुण्डल्याकृतिचिद्रूपे हुनेद् द्रव्यं समन्त्रकम् ॥ ८८ ॥

अपने आत्मा के मूल त्रिकोण में स्थित, करोड़ सूर्यों के समान प्रभा वाली, कुण्डली के आकार वाली चिद्रूप (अग्नि) में मन्त्र सहित द्रव्य की आहुति दे।

पदपाठ स्वात्ममूलत्रिकोणस्थे — अपने मूल त्रिकोण में स्थित · कोटिसूर्यसमप्रभे — करोड़ सूर्यों की प्रभा वाली · कुण्डल्याकृतिचिद्रूपे — कुण्डली-आकृति चिद्रूप में · हुनेद् द्रव्यं समन्त्रकम् — द्रव्य को मन्त्र-सहित हवन करे

अहन्तापात्रभरितमिदन्तापरमामृतम् ।

८९

पराहन्तामये वह्नौ होमस्वीकारलक्षणम् ॥ ८९ ॥

अहन्ता के पात्र में भरा इदन्ता रूपी परम अमृत, परा-अहन्ता रूपी अग्नि में — यह होम-रूप स्वीकार का लक्षण है।

पदपाठ अहन्तापात्रभरितम् — अहन्ता-पात्र में भरा · इदन्तापरमामृतम् — इदन्ता का परामृत · पराहन्तामये वह्नौ — पराहन्तामय अग्नि में · होमस्वीकारलक्षणम् — होम-स्वीकार का लक्षण

गुरुदैवतमन्त्राणामैक्यं सञ्चिन्तयेद्विद्या ।

९०

यावदुल्लासपर्यन्तमुपदेशे पिबेन्मधु ॥ ९० ॥

गुरु, देवता और मन्त्र की एकता का बुद्धि से चिन्तन करे, और उपदेश के अनुसार उल्लास की सीमा तक मधु पिये।

पदपाठ गुरुदैवतमन्त्राणाम् — गुरु, देवता और मन्त्र की · ऐक्यं सञ्चिन्तयेद्विद्या — एकता का बुद्धि से चिन्तन करे · यावदुल्लासपर्यन्तम् — उल्लास की सीमा तक · उपदेशे पिबेन्मधु — उपदेश के अनुसार मधु पिए

चुल्लनं सिद्धिदं प्रोक्तं दीपो ज्ञानप्रदायकः ।

९१

पानात् परपदप्राप्तिः कौले त्रयमितीरितम् ॥ ९१ ॥

चुल्लू सिद्धि देने वाला कहा गया है, दीप ज्ञान देने वाला, और पान से परम पद की प्राप्ति — कौल मार्ग में यह त्रय कहा गया है।

पदपाठ चुल्लनं सिद्धिदं प्रोक्तं — चुल्लू सिद्धि देने वाला कहा गया · दीपो ज्ञानप्रदायकः — दीप ज्ञान देने वाला · पानात् परपदप्राप्तिः — पान से परपद की प्राप्ति · कौले त्रयमितीरितम् — कौल में यह त्रय कहा गया

भोजनान्ते विषं मद्यं मद्यान्ते भोजनं विषम् ।

९२

अमृतं तद्विजानीयाद् यदन्नं सुरया सह ॥ ९२ ॥

भोजन के बाद मद्य विष है, मद्य के बाद भोजन विष है; उसे अमृत जाने — जो अन्न सुरा के साथ लिया जाये।

पदपाठ भोजनान्ते विषं मद्यं — भोजन के बाद मद्य विष है · मद्यान्ते भोजनं विषम् — मद्य के बाद भोजन विष है · अमृतं तद्विजानीयाद् — उसे अमृत जाने · यदन्नं सुरया सह — जो अन्न सुरा के साथ

चर्वणेन युतं पानममृतं कथितं प्रिये ।

९३

चर्वणेन विना पानं केवलं विषवर्द्धनं ॥ ९३ ॥

चर्वण (चबाने) के साथ पान अमृत कहा गया है, हे प्रिये! चर्वण के बिना पान केवल विष को बढ़ाने वाला है।

पदपाठ चर्वणेन युतं पानम् — चर्वण (चबाने) सहित पान · अमृतं कथितं प्रिये — अमृत कहा गया, हे प्रिये · चर्वणेन विना पानं — चर्वण के बिना पान · केवलं विषवर्द्धनं — केवल विष बढ़ाने वाला

पानञ्च त्रिविधं प्रोक्तं दिव्यवीरपशुक्रमात् ।

९४

दिव्यं देव्यग्रतः पानं वीरं मुद्रासने कृतम् ॥ ९४ ॥

पान तीन प्रकार का कहा गया है — दिव्य, वीर और पशु, इस क्रम से: देवी के सामने पान दिव्य है, मुद्रासन में किया हुआ वीर,

पदपाठ पानञ्च त्रिविधं प्रोक्तं — पान तीन प्रकार का कहा गया · दिव्यवीरपशुक्रमात् — दिव्य, वीर, पशु क्रम से · दिव्यं देव्यग्रतः पानं — दिव्य देवी के सामने पान · वीरं मुद्रासने कृतम् — वीर मुद्रासन में किया

स्वेच्छया पशुवत्पीतं पशुपानमितीरितम् ॥ ९५ ॥

९५

और स्वेच्छा से पशु की तरह पिया हुआ पशु-पान कहलाता है।

पदपाठ स्वेच्छया पशुवत्पीतं — स्वेच्छा से पशु की तरह पिया · पशुपानमितीरितम् — पशुपान कहा गया

भुक्तिमुक्तिप्रदं दिव्यं वीरं भुक्तिप्रदं भवेत् ।

९६

पशुपानं नरकदं प्रोक्तं पानफलं प्रिये ॥ ९६॥

दिव्य पान भोग और मोक्ष देता है, वीर पान भोग देता है, और पशु-पान नरक देता है
— यह पान का फल कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ भुक्तिमुक्तिप्रदं दिव्यं — दिव्य भुक्ति-मुक्ति देता है · वीरं भुक्तिप्रदं भवेत् — वीर भुक्ति देता है · पशुपानं नरकदं — पशुपान नरक देता है · प्रोक्तं पानफलं प्रिये — पान का फल कहा गया, हे प्रिये

दृष्टिमानसवाक्काये यावन्नो भवति भ्रमः ।

९७

तावत् पानं प्रकुर्वीत पशुपानमतः परम् ॥ ९७॥

जब तक दृष्टि, मन, वाणी और शरीर में भ्रम न हो, तब तक पान करे; उसके आगे पशु-पान है।

पदपाठ दृष्टिमानसवाक्काये — दृष्टि, मन, वाणी, काया में · यावन्नो भवति भ्रमः — जब तक भ्रम नहीं होता · तавत् पानं प्रकुर्वीत — तब तक पान करे · पशुपानमतः परम् — इसके आगे पशुपान है

यावन्नेन्द्रियवैकल्यं यावन्नो मुखवैकृतम् ।

९८

तावदेव पिबेन्मद्यमन्यथा पतनं भवेत् ॥ ९८॥

जब तक इन्द्रियों में विकलता न हो, जब तक मुख में विकृति न हो, तभी तक मद्य पिये; अन्यथा पतन होता है।

पदपाठ यावन्नेन्द्रियवैकल्यं — जब तक इन्द्रियों में विकलता नहीं · यावन्नो मुखवैकृतम् — जब तक मुख में विकृति नहीं · तवदेव पिबेन्मद्यम् — तब तक ही मद्य पिए · अन्यथा पतनं भवेत् — अन्यथा पतन होता है

पूर्णाभिषेकयुक्तानां पानं देवि निगद्यते ।

कराभ्यां पात्रमुद्धृत्य स्मरेन्मूलज्य पादुकाम् ।

९९

आगलान्तं पिबेद्द्रव्यं स मुक्तो नात्र संशयः ॥ ९९॥

पूर्णाभिषेक प्राप्त लोगों के लिए, हे देवि! पान इस प्रकार कहा गया है: दोनों हाथों से पात्र उठाकर, मूलमन्त्र और पादुका का स्मरण करके, गले तक द्रव्य पिये — वह मुक्त है, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ पूर्णाभिषेकयुक्तानां — पूर्णाभिषेक-युक्तों के लिए · पानं देवि निगद्यते — पान कहा गया है, हे देवि · कराभ्यां पात्रमुद्धृत्य — दोनों हाथों से पात्र उठाकर · स्मरेन्मूलज्य पादुकाम् — मूल और पादुका का स्मरण करे · आगलान्तं पिबेद्द्रव्यं — गले तक द्रव्य पिए · स मुक्तो नात्र संशयः — वह मुक्त है, इसमें सन्देह नहीं

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतति भूतले ।

१००

उत्थाय च पुनः पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १००॥

पीकर, पीकर, फिर पीकर, जब तक भूमि पर न गिर पड़े, और उठकर फिर पीकर — पुनर्जन्म नहीं होता।

पदपाठ पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा — पीकर, पीकर, फिर पीकर · यावत् पतति भूतले — जब तक भूमि पर गिरे · उत्थाय च पुनः पीत्वा — और उठकर फिर पीकर · पुनर्जन्म न विद्यते — पुनर्जन्म नहीं होता

आनन्दान्तृप्यते देवी मूर्च्छया भैरवः स्वयम् ।

१०१

वमनात् सर्वदेवाश्च तस्मात्त्रिविधमाचरेत् ॥ १०१॥

आनन्द से देवी तृप्त होती हैं, मूर्च्छा से स्वयं भैरव, और वमन से सब देवता; इसलिए त्रिविध का आचरण करे।

पदपाठ आनन्दान्तृप्यते देवी — आनन्द से देवी तृप्त होती है · मूर्च्छया भैरवः स्वयम् — मूर्च्छा से स्वयं भैरव · वमनात् सर्वदेवाश्च — वमन से सब देवता · तस्मात्त्रिविधमाचरेत् — इसलिए त्रिविध आचरण करे

दिव्यपानरतानां वै यत् सुखं कुलयोगिनाम् ।
तत् सुखं सार्वभौमस्य नृपस्यापि न विद्यते ॥ १०२ ॥

१०२

दिव्य पान में रत कुलयोगियों का जो सुख है — वह सुख सार्वभौम राजा को भी नहीं मिलता।

पदपाठ दिव्यपानरतानां वै — दिव्यपान में रत · यत् सुखं कुलयोगिनाम् — कुलयोगियों का जो सुख है · तत् सुखं सार्वभौमस्य — वह सुख सार्वभौम (चक्रवर्ती) · नृपस्यापि न विद्यते — राजा को भी नहीं है

यत् सुखं कुलनिष्ठानां कुलद्रव्यनिषेवनात् ।
तत् सौख्यमेव मोक्षः स्यात् सत्यमेव वरानने ॥ १०३ ॥

१०३

कुलनिष्ठों को कुलद्रव्यों के सेवन से जो सुख है — वह सुख ही मोक्ष है, यह सत्य है, हे वरानने!

पदपाठ यत् सुखं कुलनिष्ठानां — कुलनिष्ठों का जो सुख · कुलद्रव्यनिषेवनात् — कुलद्रव्य के सेवन से · तत् सौख्यमेव मोक्षः स्यात् — वह सुख ही मोक्ष है · सत्यमेव वरानने — यह सत्य ही है, हे वरानने

इति ते कथितं किञ्चित् वटुशक्त्यादिपूजनम् ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १०४ ॥

१०४

इस प्रकार मैंने तुम्हें वटु, शक्ति आदि की पूजा के विषय में कुछ संक्षेप में कहा, हे कुलेशानि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · वटुशक्त्यादिपूजनम् — वटु, शक्ति आदि का पूजन · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे वटुकशक्त्यादिपूजनं नाम सप्तम उल्लासः ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
वटुकशक्त्यादिपूजन नामक सप्तम उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथाष्टमोल्लासः

अष्टम उल्लास — तत्त्वत्रितयपानादिभेदकथनम्



ईश्वर उल्लास की सात अवस्थाएँ, किनके साथ पात्र-मेलन हो और किनके साथ नहीं, बलि-विसर्जन और शान्ति-स्तव, भैरवी-चक्र की उन्मत्त चेष्टाएँ, शाम्भवी मुद्रा, और चक्र के भीतर जाति-भेद के निषेध का वर्णन करते हैं।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि करुणामृतवारिधे ।

१

उल्लासभेदं देवेश द्रव्यपात्रादिसङ्गमम् ॥ १॥

हे कुलेश! हे करुणामृत के सागर! मैं उल्लास के भेद, हे देवेश! और द्रव्य, पात्र आदि के सङ्गम (मेलन) को सुनना चाहती हूँ,

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ : करुणामृतवारिधे — हे करुणामृत के सागर : उल्लासभेदं देवेश — उल्लास के भेद, हे देवेश : द्रव्यपात्रादिसङ्गमम् — द्रव्य, पात्र आदि का संगम (साझा)

रत्युद्वासनकालञ्च श्रीचक्रस्थितिमेव च ।

२

चेष्टां कौलिकशक्तीनां वद मे परमेश्वर ॥ २॥

रति के उद्वासन का काल, श्रीचक्र की स्थिति, और कौलिक शक्तियों की चेष्टा — मुझे बताइए, हे परमेश्वर!

पदपाठ रत्युद्वासनकालञ्च — और रति (अनुष्ठान) के उद्वासन का काल : श्रीचक्रस्थितिमेव च — और श्रीचक्र की स्थिति : चेष्टां कौलिकशक्तीनां — कौलिक शक्तियों की चेष्टा : वद मे परमेश्वर — मुझे बताइए, हे परमेश्वर

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण जायते दिव्यभावना ॥ ३॥

३

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से दिव्यभाव उत्पन्न होता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · जायते दिव्यभावना — दिव्य भावना उत्पन्न होती है

आरम्भस्तरुणश्चैव यौवनं प्रौढमेव च ।

तदन्तश्चोन्मनाश्चैव ततोल्लासश्च सप्तमः ॥ ४॥

४

आरम्भ, तरुण, यौवन, प्रौढ़, तदन्त, उन्मना, और सातवाँ उससे परे का उल्लास (अनवस्था)।

पदपाठ आरम्भस्तरुणश्चैव — आरम्भ और तरुण · यौवनं प्रौढमेव च — यौवन और प्रौढ़ · तदन्तश्चोन्मनाश्चैव — तदन्त और उन्मना · ततोल्लासश्च सप्तमः — और सातवाँ, उससे परे का उल्लास

तत्त्वत्रयं स्यादारम्भः कथितः कुलनायिके ।

कथितस्तरुणोल्लासस्तरुणं सुखमम्बिके ॥ ५॥

५

तत्त्वत्रय (का पान) आरम्भ है — ऐसा कहा गया है, हे कुलनायिके! तरुण सुख को तरुण उल्लास कहा गया है, हे अम्बिके!

पदपाठ तत्त्वत्रयं स्यादारम्भः — तत्त्वत्रय आरम्भ है · कथितः कुलनायिके — ऐसा कहा गया, हे कुलनायिके · कथितस्तरुणोल्लासः — तरुण उल्लास कहा गया · तरुणं सुखमम्बिके — तरुण (ताज़ा) सुख, हे अम्बिके

यौवनं मनसः सम्यगुल्लासः सुस्थितिः प्रिये ।

स्खलनं दृङ्गनोवाचां प्रौढमित्यभिधीयते ॥ ६॥

६

मन का पूर्ण उल्लास और सुस्थिति यौवन है, हे प्रिये! दृष्टि, मन और वाणी का स्खलन प्रौढ़ कहलाता है।

पदपाठ यौवनं मनसः सम्यगुल्लासः — यौवन मन का सम्यक् उल्लास है · सुस्थितिः प्रिये — सुस्थिति, हे प्रिये · स्खलनं दृङ्गनोवाचां — दृष्टि, मन, वाणी का स्खलन · प्रौढमित्यभिधीयते — प्रौढ़ कहा जाता है

समुल्लासपरे चक्रे य इच्छेत् पात्रमेलनम् ।

अर्वाक् प्रौढसमुल्लासं नैव कुर्यात् कदाचन ।

७

यथाधिकारं तत्रापि कर्तव्यं पात्रमेलनम् ॥ ७॥

समुल्लास में रत चक्र में जो पात्र-मेलन चाहे, वह प्रौढ़ समुल्लास से पहले कभी न करे; वहाँ भी यथाधिकार पात्र-मेलन करना चाहिए।

पदपाठ समुल्लासपरे चक्रे — समुल्लास-परायण चक्र में · य इच्छेत् पात्रमेलनम् — जो पात्र-मेलन चाहे · अर्वाक् प्रौढसमुल्लासं — प्रौढ़ समुल्लास से पहले · नैव कुर्यात् कदाचन — कभी न करे · यथाधिकारं तत्रापि — वहाँ भी अधिकार के अनुसार · कर्तव्यं पात्रमेलनम् — पात्र-मेलन करना चाहिए

अदीक्षितैरनाचारैरतन्त्रज्ञदैवतैः ।

दूषकैः समयभ्रष्टैर्न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् ॥ ८॥

८

अदीक्षितों, अनाचारियों, तन्त्र और देवता को न जानने वालों, दूषकों और समय-भ्रष्टों के साथ द्रव्य-सङ्गति न करे।

पदपाठ अदीक्षितैरनाचारैः — अदीक्षितों, अनाचारियों से · अतन्त्रज्ञदैवतैः — तन्त्र और देवता न जानने वालों से · दूषकैः समयभ्रष्टैः — दूषकों, समय-भ्रष्टों से · न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् — द्रव्य-संगति न करे

अभिज्ञं मन्यमानैश्च प्रपञ्चव्रतधारिभिः ।

९

पशुभिः क्षुद्रकर्मस्थैर्न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् ॥ ९ ॥

अपने को ज्ञानी मानने वालों, दिखावे के व्रत धारण करने वालों, क्षुद्र कर्मों में लगे पशुओं के साथ द्रव्य-सङ्गति न करे।

पदपाठ अभिज्ञं मन्यमानैश्च — अपने को अभिज्ञ मानने वालों से · प्रपञ्चव्रतधारिभिः — दिखावे के व्रत धारण करने वालों से · पशुभिः क्षुद्रकर्मस्थैः — क्षुद्र कर्मों में लगे पशुओं से · न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् — द्रव्य-संगति न करे

स्त्रीद्विष्टैर्गुरुभिः शप्तैर्भक्तिहीनैर्दुरात्मभिः ।

१०

कुलोपदेशहीनैश्च न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् ॥ १० ॥

स्त्रियों से द्वेष पाने वालों, गुरुओं से शापित, भक्तिहीन, दुरात्मा और कुल-उपदेश से रहित लोगों के साथ द्रव्य-सङ्गति न करे।

पदपाठ स्त्रीद्विष्टैर्गुरुभिः शप्तैः — स्त्री-द्वेषियों, गुरु-शापितों से · भक्तिहीनैर्दुरात्मभिः — भक्तिहीन, दुरात्माओं से · कुलोपदेशहीनैश्च — और कुल-उपदेश से हीनों से · न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् — द्रव्य-संगति न करे

पदवाक्यप्रमाणज्ञाः श्रुतिस्मृत्यर्थवेदिनः ।

११

कुलधर्मानभिज्ञाश्चेत्तत्सङ्गं परिवर्जयेत् ॥ ११ ॥

पद (व्याकरण), वाक्य (मीमांसा) और प्रमाण (न्याय) के ज्ञाता, श्रुति-स्मृति के अर्थ के वेत्ता भी — यदि कुलधर्म से अनभिज्ञ हों तो उनका सङ्ग छोड़ दे।

पदपाठ पदवाक्यप्रमाणज्ञाः — पद, वाक्य, प्रमाण के ज्ञाता · श्रुतिस्मृत्यर्थवेदिनः — श्रुति-स्मृति के अर्थ के ज्ञाता · कुलधर्मानभिज्ञाश्चेत् — यदि कुलधर्म से अनभिज्ञ हों · तत्सङ्गं परिवर्जयेत् — तो उनका संग त्याग दे

सत्कुले च प्रसूता वा वृद्धाश्चाचारवर्तिनः ।

त्वत्पूजाविमुखाः स्युश्चेत्तत्संसर्गं परित्यजेत् ॥ १२ ॥

१२

सत्कुल में उत्पन्न, आचारवान् वृद्ध भी — यदि तुम्हारी पूजा से विमुख हों तो उनका संसर्ग त्याग दे।

पदपाठ सत्कुले च प्रसूता वा — या सत्कुल में जन्मे · वृद्धाश्चाचारवर्तिनः — वृद्ध और आचार में चलने वाले · त्वत्पूजाविमुखाः स्युश्चेत् — यदि तुम्हारी पूजा से विमुख हों · तत्संसर्गं परित्यजेत् — तो उनका संसर्ग त्याग दे

स्त्रीपुत्रमित्रबन्धूनां स्निग्धानामपि पार्वति ।

कुलाचारानभिज्ञानां सङ्गतिं वर्जयेत्प्रिये ॥ १३ ॥

१३

स्त्री, पुत्र, मित्र और बन्धुओं का भी, स्नेही होने पर भी, हे पार्वति! यदि वे कुलाचार से अनभिज्ञ हों तो उनकी सङ्गति छोड़ दे, हे प्रिये!

पदपाठ स्त्रीपुत्रमित्रबन्धूनां — स्त्री, पुत्र, मित्र, बन्धुओं का · स्निग्धानामपि पार्वति — स्नेही होने पर भी, हे पार्वति · कुलाचारानभिज्ञानां — कुलाचार से अनभिज्ञों की · सङ्गतिं वर्जयेत्प्रिये — संगति त्याग दे, हे प्रिये

अदृष्टपौरुषाणाञ्च देशान्तरनिवासिनाम् ।

विना सङ्केतयोगेन न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् ॥ १४ ॥

१४

जिनका पौरुष देखा नहीं गया, और दूसरे देश के निवासियों के साथ, सङ्केत (गुप्त चिह्न) के मिलान के बिना द्रव्य-सङ्गति न करे।

पदपाठ अदृष्टपौरुषाणाञ्च — और जिनका पौरुष देखा न गया · देशान्तरनिवासिनाम् — देशान्तर में रहने वालों से · विना सङ्केतयोगेन — संकेत-योग के बिना · न कुर्याद् द्रव्यसङ्गतिम् — द्रव्य-संगति न करे

एकपात्रं न कुर्वीत यदि साक्षात् कुलेश्वरः ।

मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति विघ्नश्चैव पदे पदे ॥ १५॥

१५

एक पात्र (साझा) न करे, चाहे वह साक्षात् कुलेश्वर ही क्यों न हो; मन्त्र विमुख हो जाते हैं और पद-पद पर विघ्न होता है।

पदपाठ एकपात्रं न कुर्वीत — एक पात्र न करे · यदि साक्षात् कुलेश्वरः — यदि साक्षात् कुलेश्वर भी हो · मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति — मन्त्र विमुख हो जाते हैं · विघ्नश्चैव पदे पदे — और पद-पद पर विघ्न

स्वपात्रस्थितहेतुञ्च न दद्याद्भैरवाय च ।

यदि दद्यात्कुलेशानि देवताशापमाप्नुयात् ॥ १६॥

१६

अपने पात्र में रखा हेतु (मद्य) भैरव को भी न दे; यदि दे, हे कुलेशानि! तो देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ स्वपात्रस्थितहेतुञ्च — और अपने पात्र में स्थित हेतु (मद्य) · न दद्याद्भैरवाय च — भैरव को भी न दे · यदि दद्यात्कुलेशानि — यदि दे, हे कुलेशानि · देवताशापमाप्नुयात् — तो देवताओं का शाप पाता है

आसनं भोजनं पात्रमम्बरं शयनादिकम् ।

अनभिज्ञैरनर्हैश्च सङ्गमं नैव कारयेत् ॥ १७॥

१७

आसन, भोजन, पात्र, वस्त्र, शय्या आदि — अनभिज्ञों और अयोग्यों के साथ इनका सङ्गम कभी न करे।

पदपाठ आसनं भोजनं पात्रम् — आसन, भोजन, पात्र · अम्बरं शयनादिकम् — वस्त्र, शयन आदि · अनभिज्ञैरनर्हैश्च — अनभिज्ञों और अनधिकारियों से · सङ्गमं नैव कारयेत् — कभी साझा न करे

स्रोतोभेदेन वा कुर्यात्कौलिकः पात्रमेलनम् ।

पूर्वदक्षिणयोरैक्यमुदक्पश्चिमयोस्तथा ॥ १८ ॥

१८

अथवा कौलिक स्रोत-भेद के अनुसार पात्र-मेलन करे: पूर्व और दक्षिण (आम्नाय) एक हैं, वैसे ही उत्तर और पश्चिम।

पदपाठ स्रोतोभेदेन वा कुर्यात् — या स्रोत-भेद से करे · कौलिकः पात्रमेलनम् — कौलिक पात्र-मेलन · पूर्वदक्षिणयोरैक्यम् — पूर्व और दक्षिण की एकता · उदक्पश्चिमयोस्तथा — उत्तर और पश्चिम की वैसे ही

तस्मिन् क्रमार्चनपरैर्वीरैः स्वसदृशैरपि ।

कामिनीभिश्च तत्कुर्यात् स्रोतसाञ्च चतुष्टये ॥ १९ ॥

१९

वहाँ क्रमार्चन में रत, अपने समान वीरों और कामिनियों के साथ वह करे — चारों स्रोतों में भी।

पदपाठ तस्मिन् क्रमार्चनपरैः — उसमें क्रमार्चन-परायणों से · वीरैः स्वसदृशैरपि — अपने समान वीरों से भी · कामिनीभिश्च तत्कुर्यात् — और कामिनियों से वह करे · स्रोतसाञ्च चतुष्टये — चारों स्रोतों में भी

योगिभिर्योगिनीभिश्च प्रदत्तं पूर्णपात्रकम् ।

स्वमातृपादुकामूलमन्त्रजप्तं पिबेत्प्रिये ॥ २० ॥

२०

योगियों और योगिनियों द्वारा दिये पूर्ण पात्र को, अपनी मातृ-पादुका और मूलमन्त्र से जप कर, पिये, हे प्रिये!

पदपाठ योगिभिर्योगिनीभिश्च — योगियों और योगिनियों द्वारा · प्रदत्तं पूर्णपात्रकम् — दिया गया पूर्णपात्र · स्वमातृपादुकामूलमन्त्रजप्तं — अपनी मातृ-पादुका और मूलमन्त्र से जपा हुआ · पिबेत्प्रिये — पिए, हे प्रिये

क्वचित् यदृच्छया प्राप्तमलिपात्रन्तु भक्तितः ।

आदाय पूर्ववज्जप्त्वा पिबेद्देवि गुरुं स्मरन् ॥ २१ ॥

२१

कहीं यदृच्छा से प्राप्त मद्य-पात्र को भक्ति से लेकर, पूर्ववत् जप करके, गुरु का स्मरण करते हुए पिये, हे देवि!

पदपाठ क्वचित् यदृच्छया प्राप्तम् — कहीं यदृच्छा से प्राप्त · अलिपात्रन्तु भक्तितः — मद्यपात्र, भक्ति से · आदाय पूर्ववज्जप्त्वा — लेकर पूर्ववत् जपकर · पिबेद्देवि गुरुं स्मरन् — पिए, हे देवि, गुरु का स्मरण करते

गुरुशक्तिसुतानाञ्च गुरुज्येष्ठकनिष्ठयोः ।

स्वज्येष्ठस्यापि चोच्छिष्टं खादेन्नान्यस्य पार्वति ॥ २२ ॥

२२

गुरु, गुरु-शक्ति और गुरु-पुत्रों का, गुरु के ज्येष्ठ और कनिष्ठ का, और अपने ज्येष्ठ का भी उच्छिष्ट खा सकता है — दूसरे का नहीं, हे पार्वति!

पदपाठ गुरुशक्तिसुतानाञ्च — गुरु, उनकी शक्ति और पुत्रों का · गुरुज्येष्ठकनिष्ठयोः — गुरु के ज्येष्ठ और कनिष्ठ का · स्वज्येष्ठस्यापि चोच्छिष्टं — और अपने ज्येष्ठ का भी उच्छिष्ट · खादेन्नान्यस्य पार्वति — खाए — अन्य का नहीं, हे पार्वति

शक्त्युच्छिष्टं पिबेद् द्रव्यं वीरोच्छिष्टञ्च चर्वणम् ।

आत्मोच्छिष्टं न दातव्यं परकीयं न भक्षयेत् ॥ २३ ॥

२३

शक्ति का उच्छिष्ट द्रव्य पी सकता है, और वीर का उच्छिष्ट चर्वण खा सकता है; अपना उच्छिष्ट न दे, और पराया न खाये।

पदपाठ शक्त्युच्छिष्टं पिबेद् द्रव्यं — शक्ति का उच्छिष्ट द्रव्य पिए · वीरोच्छिष्टञ्च चर्वणम् — और वीर का उच्छिष्ट चर्वण (खाए) · आत्मोच्छिष्टं न दातव्यं — अपना उच्छिष्ट न दे · परकीयं न भक्षयेत् — और दूसरे का न खाए

उच्छिष्टं भक्षयेत् स्त्रीणां ताभ्यो नोच्छिष्टमर्पयेत् ।
चक्रमध्येऽपि देवेशि अन्यथा पतनं भवेत् ॥ २४ ॥

२४

स्त्रियों का उच्छिष्ट खा सकता है, पर उन्हें अपना उच्छिष्ट न दे, चक्र के भीतर भी, हे देवेशि! अन्यथा पतन होता है।

पदपाठ उच्छिष्टं भक्षयेत् स्त्रीणां — स्त्रियों का उच्छिष्ट खाए · ताभ्यो नोच्छिष्टमर्पयेत् — पर उन्हें अपना उच्छिष्ट न दे · चक्रमध्येऽपि देवेशि — चक्र के मध्य में भी, हे देवेशि · अन्यथा पतनं भवेत् — अन्यथा पतन होता है

कनिष्ठानां स्वशिष्याणां दद्यादुच्छिष्टमम्बिके ।
दद्यात् स्नेहेन योऽन्येभ्यः स भवेदापदाम्पदम् ॥ २५ ॥

२५

कनिष्ठों और अपने शिष्यों को उच्छिष्ट दे सकता है, हे अम्बिके! जो स्नेह से दूसरों को देता है वह आपदाओं का घर बन जाता है।

पदपाठ कनिष्ठानां स्वशिष्याणां — कनिष्ठों और अपने शिष्यों को · दद्यादुच्छिष्टमम्बिके — उच्छिष्ट दे सकता है, हे अम्बिके · दद्यात् स्नेहेन योऽन्येभ्यः — जो स्नेह से दूसरों को दे · स भवेदापदाम्पदम् — वह आपदाओं का घर बनता है

आसवोच्छिष्टपात्रन्तु यो वा गृह्णाति मोहतः ।
स्नेहाल्लोभात् भयाद्वापि देवताशापमाप्नुयात् ॥ २६ ॥

२६

जो मोह से, स्नेह से, लोभ से या भय से उच्छिष्ट आसव का पात्र लेता है, वह देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ आसवोच्छिष्टपात्रन्तु — आसव का उच्छिष्ट पात्र · यो वा गृह्णाति मोहतः — जो मोह से ग्रहण करता है · स्नेहाल्लोभात् भयाद्वापि — स्नेह, लोभ या भय से भी · देवताशापमाप्नुयात् — देवताओं का शाप पाता है

प्रौढोल्लासे कुलेशानि कुर्याद्वलिविसर्जनम् ।
पूजागृहाद्वहिः कुर्यात्त्रिकोणे तु गृहान्तरे ॥ २७ ॥

२७

प्रौढ उल्लास में, हे कुलेशानि! बलि-विसर्जन करे — पूजागृह के बाहर, दूसरे कमरे में त्रिकोण में।

पदपाठ प्रौढोल्लासे कुलेशानि — प्रौढोल्लास में, हे कुलेशानि · कुर्याद्वलिविसर्जनम् — बलि-विसर्जन करे · पूजागृहाद्वहिः कुर्यात् — पूजागृह से बाहर करे · त्रिकोणे तु गृहान्तरे — दूसरे घर में त्रिकोण में

गन्धपुष्पाक्षतैः पूज्य ध्यायेदुच्छिष्टभैरवम् ।
गदात्रिशूलडमरुपात्रहस्तं त्रिलोचनम् ।
कृष्णाभं भैरवं ध्यायेत् सर्वविघ्ननिवारणम् ॥ २८ ॥

२८

गन्ध, पुष्प और अक्षत से पूजा करके उच्छिष्ट-भैरव का ध्यान करे — गदा, त्रिशूल, डमरू और पात्र हाथों में लिये, त्रिनेत्र, कृष्ण वर्ण, सब विघ्नों को दूर करने वाले भैरव का ध्यान करे।

पदपाठ गन्धपुष्पाक्षतैः पूज्य — गन्ध, पुष्प, अक्षत से पूजकर · ध्यायेदुच्छिष्टभैरवम् — उच्छिष्ट-भैरव का ध्यान करे · गदात्रिशूलडमरुपात्रहस्तं — गदा, त्रिशूल, डमरू, पात्र हाथों में · त्रिलोचनम् — त्रिलोचन · कृष्णाभं भैरवं ध्यायेत् — कृष्ण आभा वाले भैरव का ध्यान करे · सर्वविघ्ननिवारणम् — सब विघ्नों का निवारण करने वाले

तारत्रयं समुच्चार्य पश्चादुच्छिष्टभैरवम् ।

एहियुग्मं बलिं गृह्युग्मं फट् च द्विठान्तकः ॥ २९ ॥

२९

तीन तार उच्चारण करके, फिर "उच्छिष्टभैरव एहि एहि बलिं गृह्ण गृह्ण फट्", अन्त में स्वाहा —

पदपाठ तारत्रयं समुच्चार्य — तारत्रय उच्चारण कर · पश्चादुच्छिष्टभैरवम् — फिर "उच्छिष्टभैरव" · एहियुग्मं बलिं गृह्युग्मं — "एहि एहि बलिं गृह्ण गृह्ण" · फट् च द्विठान्तकः — "फट्", और दो ठ (स्वाहा) पर समाप्त

बल्युद्वासनमन्त्रोऽयं द्वाविंशतिभिरक्षरैः ।

शान्तिस्तवं पठेत्पश्चात्तर्पयेदलिबिन्दुभिः ॥ ३० ॥

३०

यह बाईस अक्षरों का बलि-उद्वासन मन्त्र है। फिर शान्ति-स्तव पढ़े और मद्य की बूंदों से तर्पण करे।

पदपाठ बल्युद्वासनमन्त्रोऽयं — यह बलि-उद्वासन मन्त्र है · द्वाविंशतिभिरक्षरैः — बाईस अक्षरों का · शान्तिस्तवं पठेत्पश्चात् — फिर शान्तिस्तव पढ़े · तर्पयेदलिबिन्दुभिः — और मद्य-बिन्दुओं से तर्पण करे

यजन्ति देव्यो हरपादपङ्कजम्
प्रसन्नधामामृतमोक्षदायकम् ।

३१

अनन्तसिद्धान्तमयप्रबोधकं
नमामि चाष्टाष्टकयोगिनीगणम् ॥ ३१ ॥

"देवियाँ हर के चरण-कमल की पूजा करती हैं, जो प्रसन्नता का धाम, अमृत और मोक्ष देने वाला, अनन्त सिद्धान्त का प्रबोधक है; मैं आठ-आठ (चौंसठ) योगिनियों के गण को प्रणाम करता हूँ।"

पदपाठ यजन्ति देव्यो हरपादपङ्कजम् — देवियाँ हर के पादपङ्कज की पूजा करती हैं · प्रसन्नधामामृतमोक्षदायकम् — प्रसन्नता का धाम, अमृत और मोक्ष देने वाला · अनन्तसिद्धान्तमयप्रबोधकं — अनन्त सिद्धान्तमय बोध जगाने वाला · नमामि चाष्टाष्टकयोगिनीगणम् — मैं चौंसठ योगिनियों के गण को नमन करता हूँ

योगिनीचक्रमध्यस्थं मातृमण्डलवेष्टितम् ।
नमामि शिरसा नाथं भैरवं भैरवीप्रियम् ॥ ३२ ॥

३२

"योगिनी-चक्र के मध्य में स्थित, मातृ-मण्डल से घिरे, भैरवी के प्रिय नाथ भैरव को मैं सिर से प्रणाम करता हूँ।"

पदपाठ योगिनीचक्रमध्यस्थं — योगिनी-चक्र के मध्य में स्थित · मातृमण्डलवेष्टितम् — मातृ-मण्डल से घिरे · नमामि शिरसा नाथं — मैं सिर से नाथ को नमन करता हूँ · भैरवं भैरवीप्रियम् — भैरव, भैरवी के प्रिय

अनादिघोरसंसारध्वान्तैकध्वंसकारिणे ।

नमः श्रीनाथवैद्याय कुलौषधिविधायिने ॥ ३३ ॥

३३

"अनादि घोर संसार के अन्धकार के एकमात्र नाशक, कुल-औषधि का विधान करने वाले श्रीनाथ-वैद्य को नमस्कार।"

पदपाठ अनादिघोरसंसार- — अनादि घोर संसार के · ध्वान्तैकध्वंसकारिणे — अन्धकार के एकमात्र ध्वंसक · नमः श्रीनाथवैद्याय — श्रीनाथ-वैद्य को नमः · कुलौषधिविधायिने — कुल-औषधि का विधान करने वाले

आपदो दुरितं रोगाः समयाचारलङ्घनात् ।

ये ते सर्वे व्यपोहन्तु दिव्यचक्रस्य मेलनात् ॥ ३४ ॥

३४

"समयाचार के उल्लंघन से जो आपदाएँ, पाप और रोग हों — वे सब दिव्य चक्र के मेलन से दूर हो जायें।"

पदपाठ आपदो दुरितं रोगाः — आपदाएँ, पाप, रोग · समयाचारलङ्घनात् — समयाचार के उल्लंघन से · ये ते सर्वे व्यपोहन्तु — वे सब दूर हों · दिव्यचक्रस्य मेलनात् — दिव्य चक्र के मेलन से

आयुरारोग्यमैश्वर्यं कीर्तिर्लाभः सुखं जयः ।

कान्तिर्मनोहरा चास्तु पान्तु सर्वाश्च देवताः ॥ ३५ ॥

३५

"आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, कीर्ति, लाभ, सुख, जय और मनोहर कान्ति हो; और सब देवता रक्षा करें।"

पदपाठ आयुरारोग्यमैश्वर्यं — आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य · कीर्तिर्लाभः सुखं जयः — कीर्ति, लाभ, सुख, जय · कान्तिर्मनोहरा चास्तु — और मनोहर कान्ति हो · पान्तु सर्वाश्च देवताः — और सब देवता रक्षा करें

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां
यतीन्द्रयोगीन्द्रतपोधनानाम् ।

३६

देशस्य राष्ट्रस्य कुलस्य राज्ञः
करोतु शान्तिं भगवान् कुलेशः ॥ ३६ ॥

"पूजकों, प्रतिपालकों, यतीन्द्रों, योगीन्द्रों, तपोधनों, देश, राष्ट्र, कुल और राजा को भगवान् कुलेश शान्ति प्रदान करें।"

पदपाठ सम्पूजकानां प्रतिपालकानां — पूजकों की, प्रतिपालकों की · यतीन्द्रयोगीन्द्रतपोधनानाम् — यतीन्द्रों, योगीन्द्रों, तपोधनों की · देशस्य राष्ट्रस्य कुलस्य राज्ञः — देश, राष्ट्र, कुल और राजा की · करोतु शान्तिं भगवान् कुलेशः — भगवान् कुलेश शान्ति करें

नन्दन्तु साधककुलाद्वयदर्शका ये
सिंहासनाद्युषितशाक्तमहान्वया ये ।

३७

नन्दन्तु सर्वकुलकौलरताः परे ये
चान्ये विशेषपदभेदकशाम्भवा ये ॥ ३७ ॥

"आनन्दित हों — कुल-अद्वैत के दर्शक साधक, सिंहासन आदि पर स्थित महान् शाक्त वंश वाले; आनन्दित हों — सर्व कुल-कौल में रत परम जन, और विशेष पदों के भेद को जानने वाले अन्य शाम्भव।"

पदपाठ नन्दन्तु साधककुलाद्वयदर्शका ये — आनन्दित हों — कुल-अद्वैत के दर्शक साधक · सिंहासनाद्युषितशाक्तमहान्वया ये — सिंहासन आदि पर स्थित महान् शाक्त वंश वाले · नन्दन्तु सर्वकुलकौलरताः परे ये — आनन्दित हों — सर्व कुल-कौल में रत परम (साधक) · चान्ये विशेषपदभेदकशाम्भवा ये — और अन्य शाम्भव जो विशेष पदों के भेद जानते हैं

नन्दन्तु सिद्धगुरवस्तदनुक्रमज्ञा
ज्येष्ठान्वया समयिनो वटुकाः कुमार्यः ।

३८

ये योगिनीप्रवरवीरकुले प्रसूता
नन्दन्तु भूमिपतिगोद्विजसाधुलोकाः ॥ ३८ ॥

"सिद्ध गुरु आनन्दित हों, उस क्रम के ज्ञाता, ज्येष्ठ वंश, समयी, वटुक, कुमारियाँ, श्रेष्ठ योगिनियों और वीरों के कुल में उत्पन्न लोग; राजा, गौ, द्विज और साधु लोग आनन्दित हों।"

पदपाठ नन्दन्तु सिद्धगुरवस्तदनुक्रमज्ञा — आनन्दित हों सिद्ध-गुरु, उस क्रम के ज्ञाता · ज्येष्ठान्वया समयिनो वटुकाः कुमार्यः — ज्येष्ठ वंश, समयी, वटुक, कुमारियाँ · ये योगिनीप्रवरवीरकुले प्रसूता — जो योगिनी-श्रेष्ठ वीर-कुल में जन्मे · नन्दन्तु भूमिपतिगोद्विजसाधुलोकाः — आनन्दित हों राजा, गौ, द्विज, साधु लोक

नन्दन्तु नीतिनिपुणा निरवद्यनिष्ठा
निर्मत्सरा निरुपमा निरुपद्रवाश्च ।

३९

नित्यं निरञ्जनरता गुरवो निरीहाः
शान्ताश्च शान्तमनसो हृतशोकशङ्काः ॥ ३९ ॥

"आनन्दित हों — नीति-निपुण, निरवद्य निष्ठा वाले, मत्सर-रहित, अनुपम, उपद्रव-रहित; नित्य निरञ्जन में रत, निरीह गुरु, शान्त, शान्त मन वाले, शोक और शङ्का से मुक्त।"

पदपाठ नन्दन्तु नीतिनिपुणा निरवद्यनिष्ठा — आनन्दित हों — नीति-निपुण, निरवद्य निष्ठा वाले · निर्मत्सरा निरुपमा निरुपद्रवाश्च — मात्सर्य-रहित, अनुपम, उपद्रव-रहित · नित्यं निरञ्जनरता गुरवो निरीहाः — नित्य निरञ्जन में रत, निरीह गुरु · शान्ताश्च शान्तमनसो हृतशोकशङ्काः — शान्त, शान्त मन वाले, शोक-शंका से रहित

नन्दन्तु योगनिरताः कुलयोगयुक्ता
ह्याचार्यसामयिकसाधकपुत्रकाश्च ।

४०

गावो द्विजा युवतयो यतयः कुमार्यो

धर्मे चरन्तु निरता गुरुभक्तलोकाः ॥ ४० ॥

"आनन्दित हों — योग में रत, कुलयोग से युक्त, आचार्य, सामयिक, साधक और पुत्रक; गौ, द्विज, युवतियाँ, यति, कुमारियाँ और गुरुभक्त लोग धर्म में निरत होकर विचरें।"

पदपाठ नन्दन्तु योगनिरताः कुलयोगयुक्ता — आनन्दित हों — योग में रत, कुलयोग से युक्त · ह्याचार्यसामयिकसाधकपुत्रकाश्च — आचार्य, समयी, साधक और पुत्रक · गावो द्विजा युवतयो यतयः कुमार्यो — गौ, द्विज, युवतियाँ, यति, कुमारियाँ · धर्मे चरन्तु निरता गुरुभक्तलोकाः — गुरुभक्त लोक धर्म में निरत होकर चलें

नन्दन्तु साधककुला ह्यलमात्मनिष्ठाः

शापाः पतन्तु समयद्विषि योगिनीनाम् ।

४१

सा शाम्भवी स्फुरतु कापि ममाप्यवस्था

यस्यां गुरोश्चरणपङ्कजमेव सत्यम् ॥ ४१ ॥

"साधकों के कुल आनन्दित हों, पूर्णतः आत्मनिष्ठ; समय-द्वेषी पर योगिनियों के शाप गिरें; वह अनिर्वचनीय शाम्भवी अवस्था मुझमें भी स्फुरित हो, जिसमें गुरु के चरण-कमल ही सत्य हैं।"

पदपाठ नन्दन्तु साधककुला ह्यलमात्मनिष्ठाः — आनन्दित हों साधक-कुल, पूर्णतः आत्मनिष्ठ · शापाः पतन्तु समयद्विषि योगिनीनाम् — समय-द्वेषी पर योगिनियों के शाप गिरें · सा शाम्भवी स्फुरतु कापि ममाप्यवस्था — वह अनिर्वचनीय शाम्भवी अवस्था मुझमें भी स्फुरित हो · यस्यां गुरोश्चरणपङ्कजमेव सत्यम् — जिसमें गुरु के चरण-कमल ही सत्य हैं

याश्चक्रक्रमभूमिकावसतयो नाडीषु याः संस्थिता
याः कायोद्गतरोमकूपनिलया याः संस्थिता धातुषु ।

४२

उच्छ्वासोर्मिरुत्तरङ्गनिलया निश्वासवासाश्च या
स्ता देव्यो रिपुपक्षभक्षणरता नन्दन्तु कौलार्चिताः ॥ ४२ ॥

"जो चक्र-क्रम की भूमिकाओं में निवास करती हैं, जो नाड़ियों में स्थित हैं, जो शरीर के रोमकूपों में और धातुओं में स्थित हैं, जो उच्छ्वास की लहरों और वायु की तरंगों में तथा निःश्वास में निवास करती हैं — शत्रु-पक्ष के भक्षण में रत वे देवियाँ, कौलों से पूजित, आनन्दित हों।"

पदपाठ याश्चक्रक्रमभूमिकावसतयो — जो चक्र-क्रम की भूमिकाओं में रहती हैं · नाडीषु याः संस्थिता — जो नाड़ियों में स्थित हैं · याः कायोद्गतरोमकूपनिलया — जो शरीर के रोमकूपों में रहती हैं · याः संस्थिता धातुषु — जो धातुओं में स्थित हैं · उच्छ्वासोर्मिरुत्तरङ्गनिलया — उच्छ्वास की लहर और वायु की तरंग में रहने वाली · निश्वासवासाश्च याः — और जो निःश्वास में बसती हैं · ता देव्यो रिपुपक्षभक्षणरता — वे देवियाँ, शत्रु-पक्ष के भक्षण में रत · नन्दन्तु कौलार्चिताः — आनन्दित हों, कौलों से पूजित

या देव्यः कुलसम्भवाः क्षितिगता या देवतास्तोयगा
या नित्यं प्रथितप्रभाः शिखिगता या मातरिश्वालयाः ।

४३

या व्योमाहितमण्डलामृतमया याः सर्वगाः सर्वदा
स्ताः सर्वाः कुलमार्गपालनपराः शान्तिं प्रयच्छन्तु मे ॥ ४३ ॥

"कुल से उत्पन्न जो देवियाँ पृथ्वी में हैं, जो देवता जल में हैं, नित्य प्रसिद्ध प्रभा वाली जो अग्नि में हैं, जिनका निवास वायु में है, आकाश में स्थित मण्डल में जो अमृतमयी हैं, जो सर्वगामिनी और सर्वदा हैं — कुलमार्ग के पालन में तत्पर वे सब मुझे शान्ति प्रदान करें।"

पदपाठ या देव्यः कुलसम्भवाः क्षितिगता — जो कुल से उत्पन्न देवियाँ पृथ्वी में हैं · या देवतास्तोयगा — जो देवता जल में हैं · या नित्यं प्रथितप्रभाः शिखिगता — जो नित्य प्रसिद्ध प्रभा वाली अग्नि में हैं · या मातरिश्वालयाः — जिनका आलय वायु है · या व्योमाहितमण्डलामृतमया — जो आकाश में स्थित मण्डल में अमृतमय हैं · याः सर्वगाः सर्वदा — जो सर्वगामी हैं, सदा · ताः सर्वाः कुलमार्गपालनपराः — वे सब, कुलमार्ग के पालन में तत्पर · शान्तिं प्रयच्छन्तु मे — मुझे शान्ति दें

ऊर्ध्वे ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले वा तले वा
पाताले वानले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा ।

४४

क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन

प्रीता देव्यः सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥ ४४ ॥

"ऊपर ब्रह्माण्ड से परे, स्वर्ग में, आकाश-तल में, भूतल पर या नीचे, पाताल में या अग्नि में, जल या वायु में, जहाँ कहीं भी स्थित हों, जिन्होंने क्षेत्रों, पीठों, उपपीठों आदि में पद रखा है — धूप, दीप आदि से और इस शुभ बलि-विधि से प्रसन्न, वीरेन्द्रों से वन्दित देवियाँ सदा हमारी रक्षा करें।"

पदपाठ ऊर्ध्वे ब्रह्माण्डतो वा — ऊपर, ब्रह्माण्ड से परे · दिवि गगनतले भूतले वा तले वा — स्वर्ग में, गगनतल में, भूतल में या तल में · पाताले वानले वा — पाताल में या अग्नि में · सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा — जल या वायु में, जहाँ कहीं स्थित हों · क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा — क्षेत्र, पीठ, उपपीठ आदि में जिन्होंने पद रखा है · धूपदीपादिकेन — धूप, दीप आदि से · प्रीता देव्यः सदा नः — प्रसन्न देवियाँ सदा हमारी · शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः — इस शुभ बलि-विधि से रक्षा करें — वीरेन्द्रों से वन्दित

ब्रह्मा श्रीः शेषदुर्गागुहवटुकगणा भैरवाः क्षेत्रपाद्या
वेतालादित्यरुद्रग्रहवसुमनुसिद्धाप्सरोगुह्यकाद्याः ।

४५

भूता गन्धर्वविद्याधरऋषिपितृयक्षासुराः किन्नराद्या

योगीशाश्चारणाः किम्पुरुषमुनिवराश्चक्रगाः पान्तु सर्वे ॥ ४५॥

"ब्रह्मा, श्री, शेष, दुर्गा, गुह, वटुक और गण, भैरव, क्षेत्रपाल आदि, वेताल, आदित्य, रुद्र, ग्रह, वसु, मनु, सिद्ध, अप्सरा, गुह्यक आदि, भूत, गन्धर्व, विद्याधर, ऋषि, पितर, यक्ष, असुर, किन्नर आदि, योगीश्वर, चारण, किम्पुरुष और मुनिवर — चक्र में स्थित ये सब रक्षा करें।"

पदपाठ ब्रह्मा श्रीः शेषदुर्गागुहवटुकगणा — ब्रह्मा, श्री, शेष, दुर्गा, गुह, वटुक, गण · भैरवाः क्षेत्रपाद्या — भैरव, क्षेत्रपाल आदि · वेतालादित्यरुद्रग्रहवसुमनुसिद्धाप्सरोगुह्यकाद्याः — वेताल, आदित्य, रुद्र, ग्रह, वसु, मनु, सिद्ध, अप्सरा, गुह्यक आदि · भूता गन्धर्वविद्याधरऋषिपितृयक्षासुराः किन्नराद्या — भूत, गन्धर्व, विद्याधर, ऋषि, पितर, यक्ष, असुर, किन्नर आदि · योगीशाश्चारणाः किम्पुरुषमुनिवराश्चक्रगाः पान्तु सर्वे — योगीश, चारण, किम्पुरुष, मुनिवर — चक्र में स्थित सब रक्षा करें

देहस्थाखिलदेवता गजमुखाः क्षेत्राधिपा भैरवा
योगिन्यो वटुकाश्च यक्षपितरो भूताः पिशाचा ग्रहाः ।

४६

अन्ये भूचरखेचरा दिशिचरा वेतालकाश्चेटका-

स्तृप्यन्तां कुलपुत्रकस्य पिबतः पानं सदीपञ्चरुम् ॥ ४६ ॥

"देह में स्थित समस्त देवता, गजमुख, क्षेत्राधिप, भैरव, योगिनियाँ, वटुक, यक्ष, पितर, भूत, पिशाच, ग्रह, और अन्य भूचर, खेचर, दिशाचर, वेताल और चेटक — कुलपुत्र के दीप और चरु सहित पान करने पर ये तृप्त हों।"

पदपाठ देहस्थाखिलदेवता गजमुखाः — देह में स्थित समस्त देवता, गजमुख · क्षेत्राधिपा भैरवा — क्षेत्राधिप, भैरव · योगिन्यो वटुकाश्च यक्षपितरो — योगिनियाँ, वटुक, यक्ष, पितर · भूताः पिशाचा ग्रहाः — भूत, पिशाच, ग्रह · अन्ये भूचरखेचरा दिशिचरा — अन्य भूचर, खेचर, दिशाचर · वेतालकाश्चेटकाः — वेताल और चेटक · तृप्यन्तां कुलपुत्रकस्य पिबतः — तृप्त हों, कुलपुत्र के पीते हुए · पानं सदीपञ्चरुम् — दीप और चरु सहित पान

सत्यञ्चेद् गुरुवाक्यमेव पितरो देवाश्च चेद् योगिनी
प्रीता चेत् परदेवता यदि भवेद्वेदाः प्रमाणं हि चेत् ।

४७

शाक्तेयं यदि दर्शनं भवति चेदाज्ञाप्यमोघापि चेत्

सत्यञ्चापि च कौलधर्मपरमं स्यान्मे जयः सर्वदा ॥ ४७ ॥

"यदि गुरु का वचन ही सत्य है, यदि पितर और देवता हैं, यदि योगिनी प्रसन्न है, यदि परदेवता है, यदि वेद प्रमाण हैं, यदि शाक्त दर्शन सत्य है और आज्ञा अमोघ है, और यदि कौलधर्म सत्य और परम है — तो मेरी सदा जय हो।"

पदपाठ सत्यञ्चेद् गुरुवाक्यमेव — यदि गुरु का वाक्य ही सत्य है · पितरो देवाश्च चेद् — यदि पितर और देव हैं · योगिनी प्रीता चेत् — यदि योगिनी प्रसन्न है · परदेवता यदि भवेद् — यदि परदेवता है · वेदाः प्रमाणं हि चेत् — यदि वेद प्रमाण हैं · शाक्तेयं यदि दर्शनं भवति — यदि शाक्त दर्शन सत्य है · चेदाज्ञाप्यमोघापि चेत् — और यदि आज्ञा अमोघ है · सत्यञ्चापि च कौलधर्मपरमं — और यदि कौलधर्म सत्य और परम है · स्यान्मे जयः सर्वदा — तो मेरी जय सदा हो

नन्दन्तु साधकाः सर्वे नश्यन्तु कुलदूषकाः ।

४८

अन्तःस्था शाम्भवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा ॥ ४८ ॥

"सब साधक आनन्दित हों; कुल के दूषक नष्ट हों; शाम्भवी (अवस्था) मेरे भीतर स्थित हो; गुरु सदा प्रसन्न रहें।"

पदपाठ नन्दन्तु साधकाः सर्वे — सब साधक आनन्दित हों · नश्यन्तु कुलदूषकाः — कुल-दूषक नष्ट हों · अन्तःस्था शाम्भवी मेऽस्तु — शाम्भवी (अवस्था) मेरे भीतर हो · प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा — गुरु सदा प्रसन्न हों

यद्येषा भैरवी देवी यदि भैरवशासनम् ।

४९

यद्येष कुलधर्मः स्यात्तदा नश्यन्तु दूषकाः ॥ ४९ ॥

"यदि यह भैरवी देवी है, यदि यह भैरव का शासन है, यदि यह कुलधर्म है — तो दूषक नष्ट हों।"

पदपाठ यद्येषा भैरवी देवी — यदि यह भैरवी देवी है · यदि भैरवशासनम् — यदि यह भैरव का शासन है · यद्येष कुलधर्मः स्यात् — यदि यह कुलधर्म है · तदा नश्यन्तु दूषकाः — तो दूषक नष्ट हों

यासामाज्ञाप्रभावेण स्थापितं भुवनत्रयम् ।

५०

नमस्ताभ्यः समस्ताभ्यो योगिनीभ्यो निरन्तरम् ॥ ५० ॥

"जिनकी आज्ञा के प्रभाव से त्रिभुवन स्थापित है, उन सब योगिनियों को निरन्तर नमस्कार।"

पदपाठ यासामाज्ञाप्रभावेण — जिनकी आज्ञा के प्रभाव से · स्थापितं भुवनत्रयम् — तीनों भुवन स्थापित हैं · नमस्ताभ्यः समस्ताभ्यो — उन सबको नमस्कार · योगिनीभ्यो निरन्तरम् — योगिनियों को, निरन्तर

पिबन्तु मातरः सर्वाः पिबन्तु कुलसत्तमाः ।

५१

पिबन्तु भैरवाः सर्वे मम देहे व्यवस्थिताः ॥ ५१ ॥

"सब माताएँ पियें, कुल-श्रेष्ठ पियें, सब भैरव पियें — जो मेरे देह में स्थित हैं।"

पदपाठ पिबन्तु मातरः सर्वाः — सब मातृकाएँ पिएँ · पिबन्तु कुलसत्तमाः — कुल के श्रेष्ठ पिएँ · पिबन्तु भैरवाः सर्वे — सब भैरव पिएँ · मम देहे व्यवस्थिताः — जो मेरे देह में स्थित हैं

तृप्यन्तु मातरः सर्वाः समुद्राः सगणाधिपाः ।

योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च मम देहे व्यवस्थिताः ॥ ५२ ॥

५२

"सब माताएँ तृप्त हों, समुद्र, गणाधिप सहित, योगिनियाँ और क्षेत्रपाल — जो मेरे देह में स्थित हैं।"

पदपाठ तृप्यन्तु मातरः सर्वाः — सब मातृकाएँ तृप्त हों · समुद्राः सगणाधिपाः — समुद्र, गणाधिपों सहित · योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च — योगिनियाँ और क्षेत्रपाल · मम देहे व्यवस्थिताः — मेरे देह में स्थित

शिवाद्यवनिपर्यन्तं ब्रह्मादिस्तम्बसंयुतम् ।

कालाग्न्यादिशिवान्तञ्च जगद् यज्ञेन तृप्यतु ॥ ५३ ॥

५३

"शिव से पृथ्वी तक, ब्रह्मा से तृण तक, कालाग्नि से शिव तक — यह जगत् इस यज्ञ से तृप्त हो।"

पदपाठ शिवाद्यवनिपर्यन्तं — शिव से पृथ्वी तक · ब्रह्मादिस्तम्बसंयुतम् — ब्रह्मा से तिनके तक · कालाग्न्यादिशिवान्तञ्च — कालाग्नि से शिव तक · जगद् यज्ञेन तृप्यतु — जगत् इस यज्ञ से तृप्त हो

द्वारस्था मणिमण्डपस्य परितः श्रीनन्दने कानने
शून्यागारविहारकन्दरमठे व्योम्नि श्मशाने स्थिताः ।

५४

कूपस्थानगताश्चतुष्पथगताः सन्देशसंस्थाश्च ये
पङ्क्तार्थावहकेतुमानकुसुमात् गृह्णन्तु ते पान्तु च ॥ ५४॥

"मणिमण्डप के द्वारों और चारों ओर, श्रीनन्दन वन में, शून्य घरों, विहारों, कन्दराओं और मठों में, आकाश में और श्मशान में स्थित, कूप-स्थानों और चौराहों पर, और सीमाओं पर स्थित जो हैं — वे इस (बलि) को ग्रहण करें और रक्षा करें।"

पदपाठ द्वारस्था मणिमण्डपस्य परितः — मणिमण्डप के द्वार पर और चारों ओर स्थित · श्रीनन्दने कानने — श्रीनन्दन वन में · शून्यागारविहारकन्दरमठे — शून्य घर, विहार, कन्दरा, मठ में · व्योम्नि श्मशाने स्थिताः — आकाश और श्मशान में स्थित · कूपस्थानगताश्चतुष्पथगताः — कूप-स्थानों में, चौराहों पर · सन्देशसंस्थाश्च ये — और जो सीमाओं पर स्थित हैं · पङ्क्तार्थावहकेतुमानकुसुमात् — पुष्पों से ... (अस्पष्ट) · गृह्णन्तु ते पान्तु च — वे ग्रहण करें और रक्षा करें

पठित्वाभ्यर्चनापात्रं समुद्धृत्य गुरुः प्रिये ।

५५

ततो दद्यात् स्वशिष्याय प्रसादं कुलनायिके ॥ ५५॥

इसे पढ़कर गुरु पूजा-पात्र को उठाकर, हे प्रिये! फिर अपने शिष्य को प्रसाद रूप में दे, हे कुलनायिके!

पदपाठ पठित्वाभ्यर्चनापात्रं — पढ़कर, अर्चना का पात्र · समुद्धृत्य गुरुः प्रिये — उठाकर गुरु, हे प्रिये · ततो दद्यात् स्वशिष्याय — फिर अपने शिष्य को दे · प्रसादं कुलनायिके — प्रसाद रूप में, हे कुलनायिके

स्वाभीष्टचेष्टाचरणं प्रौढान्तः परिकीर्तितः ।

प्रौढान्तोल्लासिताद्देवि मुदिते योगिमण्डले ।

५६

योगिनीमण्डले चैव क्रमादानन्दमुच्यते ॥ ५६॥

अपनी इच्छानुसार चेष्टा करना प्रौढान्त कहा गया है; प्रौढान्त के उल्लास से, हे देवि! जब योगि-मण्डल और योगिनी-मण्डल मुदित हो, तो क्रम से उसे आनन्द कहा जाता है।

पदपाठ स्वाभीष्टचेष्टाचरणं — अपनी इच्छा के अनुसार चेष्टा · प्रौढान्तः परिकीर्तितः — प्रौढान्त कहा गया है · प्रौढान्तोल्लासिताद्देवि — प्रौढान्त में उल्लसित होने से, हे देवि · मुदिते योगिमण्डले — योगि-मण्डल के मुदित होने पर · योगिनीमण्डले चैव — और योगिनी-मण्डल के · क्रमादानन्दमुच्यते — क्रम से आनन्द कहलाता है

तदारूढेषु वीरेषु कार्याकार्यं न विद्यते ।

इच्छैव शास्त्रसम्पत्तिरित्याज्ञा परमेश्वरि ॥ ५७॥

५७

उस अवस्था में आरूढ़ वीरों के लिए कार्य-अकार्य नहीं होता; इच्छा ही शास्त्र की सम्पत्ति है — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि!

पदपाठ तदारूढेषु वीरेषु — उसमें आरूढ़ वीरों के लिए · कार्याकार्यं न विद्यते — कार्य-अकार्य नहीं है · इच्छैव शास्त्रसम्पत्तिः — इच्छा ही शास्त्र की सम्पत्ति है · इत्याज्ञा परमेश्वरि — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि

तत्र यद् यत् कृतं कर्म शुभं वा यदि वाऽशुभम् ।

तत्सर्वं देवताप्रीत्यै जायते सुरसुन्दरि ॥ ५८ ॥

५८

वहाँ जो-जो कर्म किया जाये, शुभ या अशुभ, वह सब देवता की प्रसन्नता के लिए हो जाता है, हे सुरसुन्दरि!

पदपाठ तत्र यद् यत् कृतं कर्म — वहाँ जो-जो कर्म किया गया · शुभं वा यदि वाऽशुभम् — शुभ या अशुभ · तत्सर्वं देवताप्रीत्यै — वह सब देवता की प्रीति के लिए · जायते सुरसुन्दरि — हो जाता है, हे सुरसुन्दरि

जल्पो जपफलं तन्द्रा समाधिरभिजायते ।

विक्रिया पूजनं देवि उदितं भैरवीबलिः ॥ ५९ ॥

५९

बकवाद जप का फल है, तन्द्रा समाधि हो जाती है, विकार पूजन है, हे देवि! और वमन भैरवी को बलि है;

पदपाठ जल्पो जपफलं — जल्प (बकवास) जप का फल है · तन्द्रा समाधिरभिजायते — तन्द्रा समाधि हो जाती है · विक्रिया पूजनं देवि — विकार पूजन है, हे देवि · उदितं भैरवीबलिः — वमन भैरवी-बलि है

मुक्तिः स्याच्छक्तिसंयोगः स्तोत्रं तत्कालभाषितम् ।

न्यासोऽवयवसंस्पर्शो भोजनं हवनक्रिया ॥ ६० ॥

६०

शक्ति-संयोग मुक्ति है, उस समय का भाषण स्तोत्र है, अंगों का स्पर्श न्यास है, भोजन हवन-क्रिया है;

पदपाठ मुक्तिः स्याच्छक्तिसंयोगः — शक्ति-संयोग मुक्ति है · स्तोत्रं तत्कालभाषितम् — उस समय बोला गया स्तोत्र है · न्यासोऽवयवसंस्पर्शो — अंगों का स्पर्श न्यास है · भोजनं हवनक्रिया — भोजन हवन-क्रिया है

वीक्षणं ध्यानमीशानि शयनं वन्दनं भवेत् ।

तदुल्लासे कृता नाना या चेष्टा सा च सत्क्रिया ।

६१

कार्याकार्यविचारन्तु यः करोति स पातकी ॥ ६१ ॥

देखना ध्यान है, हे ईशानि! लेटना वन्दन है। उस उल्लास में की गयी नाना चेष्टाएँ सत्क्रिया हैं; पर जो कार्य-अकार्य का विचार करता है वह पातकी है।

पदपाठ वीक्षणं ध्यानमीशानि — वीक्षण ध्यान है, हे ईशानि · शयनं वन्दनं भवेत् — शयन वन्दन है · तदुल्लासे कृता नाना — उस उल्लास में की गई नाना · या चेष्टा सा च सत्क्रिया — जो चेष्टा है वह सत्क्रिया है · कार्याकार्यविचारन्तु — पर कार्य-अकार्य का विचार · यः करोति स पातकी — जो करता है वह पातकी है

एतच्चक्रगता वीरा विज्ञेयाः परयोगिनः ।

६२

येनाप्नुवन्ति मनुजाः साक्षाद्भैरवरूपताम् ॥ ६२ ॥

इस चक्र में स्थित वीर परम योगी जानने चाहिए; जिससे मनुष्य साक्षात् भैरव-रूपता को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ एतच्चक्रगता वीरा — इस चक्र में स्थित वीर · विज्ञेयाः परयोगिनः — परयोगी जानने चाहिए · येनाप्नुवन्ति मनुजाः — जिससे मनुष्य पाते हैं · साक्षाद्भैरवरूपताम् — साक्षात् भैरव-रूपता

सम्मोदः परमानन्दः पतनं ज्ञानवर्द्धनम् ।

६३

वेणुवीणादिवाद्यञ्च कवितारचनादिकम् ॥ ६३ ॥

सम्मोद परमानन्द है, गिरना ज्ञान की वृद्धि है; वेणु, वीणा आदि बजाना, कविता रचना आदि,

पदपाठ सम्मोदः परमानन्दः — सम्मोद (हर्ष) परमानन्द है · पतनं ज्ञानवर्द्धनम् — पतन ज्ञान की वृद्धि है · वेणुवीणादिवाद्यञ्च — वेणु, वीणा आदि का वादन · कवितारचनादिकम् — कविता-रचना आदि

रोदनं भाषणं पातः समुत्थानं विजृम्भनम् ।
गमनं विक्रिया देवि योग इत्यभिधीयते ॥ ६४ ॥

६४

रोना, बोलना, गिरना, उठना, जम्हाई लेना, चलना, विकार, हे देवि! — यह सब योग कहलाता है।

पदपाठ रोदनं भाषणं पातः — रोना, बोलना, गिरना · समुत्थानं विजृम्भनम् — उठना, जँभाई लेना · गमनं विक्रिया देवि — चलना, विकार, हे देवि · योग इत्यभिधीयते — योग कहा जाता है

चक्रेऽस्मिन् योगिनो वीरा योगिन्यो मदमन्थराः ।
समाचरन्ति देवेशि यथोल्लासं मनोगतम् ॥ ६५ ॥

६५

इस चक्र में योगी, वीर और मद से मन्थर योगिनियाँ, हे देवेशि! अपने मन के उल्लास के अनुसार आचरण करते हैं।

पदपाठ चक्रेऽस्मिन् योगिनो वीरा — इस चक्र में योगी, वीर · योगिन्यो मदमन्थराः — योगिनियाँ, मद से मन्थर · समाचरन्ति देवेशि — आचरण करते हैं, हे देवेशि · यथोल्लासं मनोगतम् — मन में जैसा उल्लास हो

शनैः पृच्छन्ति पार्श्वस्थान् विस्मृत्यात्मविवक्षितम् ।
निधाय वदने पात्रं निर्विण्णा निवसन्ति च ॥ ६६ ॥

६६

वे धीरे से पास बैठे लोगों से पूछते हैं, अपनी कही जाने वाली बात भूलकर; पात्र को मुख पर रखे हुए निर्विण्ण (शिथिल) बैठे रहते हैं।

पदपाठ शनैः पृच्छन्ति पार्श्वस्थान् — धीरे पास वालों से पूछते हैं · विस्मृत्यात्मविवक्षितम् — अपना कहना भूलकर · निधाय वदने पात्रं — मुख पर पात्र रखकर · निर्विण्णा निवसन्ति च — उदासीन बैठे रहते हैं

मत्ता स्वपुरुषं मत्वा कान्तान्यमवलम्बते ।
तथैव पुरुषश्चापि प्रौढान्तोल्लाससंयुतः ॥ ६७ ॥

६७

मत्त स्त्री अपना पुरुष समझकर दूसरे कान्त का आलिंगन करती है; और वैसे ही पुरुष भी, प्रौढान्त उल्लास से युक्त,

पदपाठ मत्ता स्वपुरुषं मत्वा — मत्त स्त्री अपना पुरुष समझकर · कान्तान्यमवलम्बते — अन्य कान्त का आलिंगन करती है · तथैव पुरुषश्चापि — वैसे ही पुरुष भी · प्रौढान्तोल्लाससंयुतः — प्रौढान्त उल्लास से युक्त

पुरुषः पुरुषं मोहादालिङ्गित्यनाङ्गनाम् ।
पृच्छति स्वपतिं मुग्धा कस्त्वं काहम् इमे च के ॥ ६८ ॥

६८

पुरुष मोह से पुरुष को स्त्री समझकर आलिंगन करता है; मुग्ध स्त्री अपने पति से पूछती है: "तुम कौन हो? मैं कौन हूँ? और ये कौन हैं?"

पदपाठ पुरुषः पुरुषं मोहाद् — पुरुष पुरुष को मोह से · अलिङ्गित्यनाङ्गनाम् — स्त्री समझकर आलिंगन करता है · पृच्छति स्वपतिं मुग्धा — मुग्ध स्त्री अपने पति से पूछती है · कस्त्वं काहम् इमे च के — "तू कौन, मैं कौन, और ये कौन?"

किं कार्यं वयमायाताः किमर्थमिह संस्थिताः ।
उद्यानं किमिदं हन्त गृहं किं प्राङ्गणं किमु ॥ ६९ ॥

६९

"हम किस काम से आये हैं? यहाँ क्यों बैठे हैं? अहो, यह उद्यान है, घर है, या आँगन है?"

पदपाठ किं कार्यं वयमायाताः — "किस कार्य से हम आए?" · किमर्थमिह संस्थिताः — "किसलिए यहाँ बैठे हैं?" · उद्यानं किमिदं हन्त — "अरे, क्या यह उद्यान है?" · गृहं किं प्राङ्गणं किमु — "घर है? या आँगन?"

मुखे आपूर्य मदिरां पाययन्ति स्त्रियः प्रियान् ।
उपदंशं मुखे क्षिप्त्वा निक्षिपन्ति प्रियानने ॥ ७० ॥

७०

मुख में मदिरा भरकर स्त्रियाँ प्रियों को पिलाती हैं; उपदंश (चाट) मुख में रखकर प्रिय के मुख में डालती हैं।

पदपाठ मुखे आपूर्य मदिरां — मुख में मदिरा भरकर · पाययन्ति स्त्रियः प्रियान् — स्त्रियाँ प्रियों को पिलाती हैं · उपदंशं मुखे क्षिप्त्वा — उपदंश (चखना) मुख में डालकर · निक्षिपन्ति प्रियानने — प्रिय के मुख में रखती हैं

गृह्णन्त्यन्योन्यपात्राणि व्यञ्जनानि च शाम्भवि ।
धृत्वा शिरसि नृत्यन्ति मद्यभाण्डानि योगिनः ॥ ७१ ॥

७१

वे एक-दूसरे के पात्र और व्यञ्जन ले लेते हैं, हे शाम्भवि! योगी मद्य के घड़े सिर पर रखकर नाचते हैं।

पदपाठ गृह्णन्त्यन्योन्यपात्राणि — एक-दूसरे के पात्र लेते हैं · व्यञ्जनानि च शाम्भवि — और व्यंजन, हे शाम्भवि · धृत्वा शिरसि नृत्यन्ति — सिर पर रखकर नाचते हैं · मद्यभाण्डानि योगिनः — मद्य-भाण्ड, योगी

अज्ञानकरतालान्तमस्पष्टाक्षरगीतकम् ।
प्रस्खलत्पदविन्यासं नृत्यन्ति कुलशक्तयः ॥ ७२ ॥

७२

अनजाने ताली बजाते हुए, अस्पष्ट अक्षरों वाला गीत गाते हुए, लड़खड़ाते पैरों से कुलशक्तियाँ नाचती हैं।

पदपाठ अज्ञानकरतालान्तम् — अज्ञान में करताल (ताली) के साथ · अस्पष्टाक्षरगीतकम् — अस्पष्ट अक्षरों का गीत · प्रस्खलत्पदविन्यासं — लड़खड़ाते पदविन्यास से · नृत्यन्ति कुलशक्तयः — कुलशक्तियाँ नाचती हैं

योगिनो मदमत्ताश्च पतन्ति प्रमदोरसि ।

७३

मदाकुलाश्च योगिन्यः पतन्ति पुरुषोपरि ॥ ७३॥

मद से मत्त योगी स्त्रियों की छाती पर गिरते हैं; और मद से व्याकुल योगिनियाँ पुरुषों पर गिरती हैं।

पदपाठ योगिनो मदमत्ताश्च — और मद से मत्त योगी · पतन्ति प्रमदोरसि — स्त्रियों के वक्ष पर गिरते हैं · मदाकुलाश्च योगिन्यः — और मद से आकुल योगिनियाँ · पतन्ति पुरुषोपरि — पुरुषों पर गिरती हैं

मनोरथसुखं पूर्णं कुर्वन्ति च परस्परम् ।

७४

इत्यादिविविधां चेष्टां कुर्वन्ति कुलनायिके ॥ ७४॥

वे परस्पर मनोरथ का पूर्ण सुख देते हैं; इत्यादि विविध चेष्टाएँ करते हैं, हे कुलनायिके!

पदपाठ मनोरथसुखं पूर्णं — मनोरथ का पूर्ण सुख · कुर्वन्ति च परस्परम् — परस्पर देते हैं · इत्यादिविविधां चेष्टां — इत्यादि विविध चेष्टा · कुर्वन्ति कुलनायिके — करते हैं, हे कुलनायिके

विकृतिं मनसो हित्वा यदोल्लासः प्रवर्तते ।

७५

तदा तु देवताभावं भजन्ते योगिपुङ्गवाः ॥ ७५॥

जब मन के विकार को छोड़कर उल्लास प्रवृत्त होता है, तब योगि-श्रेष्ठ देवताभाव को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ विकृतिं मनसो हित्वा — मन के विकार को छोड़कर · यदोल्लासः प्रवर्तते — जब उल्लास प्रवृत्त होता है · तदा तु देवताभावं — तब देवताभाव को · भजन्ते योगिपुङ्गवाः — श्रेष्ठ योगी पाते हैं

कौलिकान् भैरवावेशान् यो वा निन्दति मूढधीः ।

७६

तं नाशयन्त्यसन्देहं योगिन्यः कुलनायिके ॥ ७६॥

जो मूढबुद्धि भैरव से आविष्ट कौलिकों की निन्दा करता है — उसे योगिनियाँ निःसन्देह नष्ट कर देती हैं, हे कुलनायिके!

पदपाठ कौलिकान् भैरवावेशान् — भैरव-आवेश वाले कौलिकों की · यो वा निन्दति मूढधीः — जो मूढबुद्धि निन्दा करता है · तं नाशयन्त्यसन्देहं — उसे निःसन्देह नष्ट कर देती हैं · योगिन्यः कुलनायिके — योगिनियाँ, हे कुलनायिके

न निन्देन्न हसेत् क्वापि चक्रे मधुमदालसान् ।

७७

एतच्चक्रगतां वार्तां बहिर्नैव प्रकाशयेत् ॥ ७७॥

चक्र में मधु के मद से अलस लोगों की न निन्दा करे न कहीं हँसे; इस चक्र की बात बाहर कभी प्रकट न करे।

पदपाठ न निन्देन्न हसेत् क्वापि — न निन्दा करे, न कहीं हँसे · चक्रे मधुमदालसान् — चक्र में मधु-मद से अलसाए हुआँ पर · एतच्चक्रगतां वार्तां — इस चक्र की बात · बहिर्नैव प्रकाशयेत् — बाहर कभी प्रकाशित न करे

तेभ्यो द्रोहं न कुर्वीत नाहितज्य समाचरेत् ।

७८

भक्त्या सत्कारयेदेतान् गोपयेच्च प्रयत्नतः ॥ ७८॥

उनसे द्रोह न करे, न उनका अहित करे; भक्ति से उनका सत्कार करे और यत्नपूर्वक उनकी रक्षा करे।

पदपाठ तेभ्यो द्रोहं न कुर्वीत — उनसे द्रोह न करे · नाहितज्य समाचरेत् — और अहित न करे · भक्त्या सत्कारयेदेतान् — भक्ति से इनका सत्कार करे · गोपयेच्च प्रयत्नतः — और यत्न से गोपन करे

चक्रे मदाकुलान् दृष्ट्वा चिन्तयेद्देवताधिया ।

७९

मोदते वन्दते भक्त्या स गच्छेत् योगिनीपदम् ॥ ७९॥

चक्र में मद से व्याकुल लोगों को देखकर उन्हें देवता-बुद्धि से देखे; जो भक्ति से प्रसन्न होता और वन्दना करता है, वह योगिनी-पद को जाता है।

पदपाठ चक्रे मदाकुलान् दृष्ट्वा — चक्र में मद से आकुलों को देखकर · चिन्तयेद्देवताधिया — देवता-बुद्धि से चिन्तन करे · मोदते वन्दते भक्त्या — जो भक्ति से हर्षित होता, वन्दन करता है · स गच्छेत् योगिनीपदम् — वह योगिनी-पद को जाता है

पश्येदेवम्विधं चक्रं यो भक्त्या कौलिकः प्रिये ।

८०

व्रततीर्थतपोदानयज्ञकोटिफलं लभेत् ॥ ८०॥

जो कौलिक भक्ति से ऐसे चक्र को देखता है, हे प्रिये! वह करोड़ व्रत, तीर्थ, तप, दान और यज्ञों का फल पाता है।

पदपाठ पश्येदेवम्विधं चक्रं — ऐसे चक्र को जो देखे · यो भक्त्या कौलिकः प्रिये — भक्ति से, कौलिक, हे प्रिये · व्रततीर्थतपोदान- — व्रत, तीर्थ, तप, दान · यज्ञकोटिफलं लभेत् — यज्ञ — करोड़ का फल पाता है

उन्मनाः पतनोत्थाने मूर्च्छना च मुहुर्मुहुः ।

८१

उन्मनाख्यतदुल्लासे चक्रे वीरसमर्चिते ॥ ८१॥

उन्मना — गिरना और उठना, और बार-बार मूर्च्छा — उस उन्मना नामक उल्लास में, वीरों से पूजित चक्र में।

पदपाठ उन्मनाः पतनोत्थाने — उन्मनाः गिरना-उठना · मूर्च्छना च मुहुर्मुहुः — और बार-बार मूर्च्छा · उन्मनाख्यतदुल्लासे — उन्मना नामक उस उल्लास में · चक्रे वीरसमर्चिते — वीरों से पूजित चक्र में

चिरं संविदधाते तौ यौ हि कर्मपराक्षरौ ।

८२

परं ब्रह्मानुसन्धानाकाङ्क्षिणौ कुलनायिके ॥ ८२ ॥

वे दोनों, जो कर्म से परे अक्षर हैं, परब्रह्म के अनुसन्धान की आकाङ्क्षा वाले, चिरकाल तक संवित् में स्थित रहते हैं, हे कुलनायिके!

पदपाठ चिरं संविदधाते तौ — चिरकाल वे दोनों संवित् में रहते हैं · यौ हि कर्मपराक्षरौ — जो कर्म से परे अक्षर हैं · परं ब्रह्मानुसन्धानाकाङ्क्षिणौ — परब्रह्म के अनुसन्धान के आकाङ्क्षी · कुलनायिके — हे कुलनायिके

देहेन्द्रियाणामवशः समवस्था निगद्यते ।

८३

समवस्थामिधे तस्मिन् ततोल्लासे समं भवेत् ॥ ८३ ॥

देह और इन्द्रियों का वश में न रहना समवस्था कहलाता है; उस समवस्था नामक, उससे परे के उल्लास में (साधक) सम हो जाता है।

पदपाठ देहेन्द्रियाणामवशः — देह और इन्द्रियों का अवश होना · समवस्था निगद्यते — समवस्था कहलाती है · समवस्थामिधे तस्मिन् — समवस्था नामक उस (उल्लास) में · ततोल्लासे समं भवेत् — उससे परे उल्लास में सम हो जाता है

परामन्त्रस्वरूपोऽसौ जायते मूर्च्छना परा ।

८४

मूर्च्छनासन्निकर्षो हि मूलमुक्तेः परं विदुः ॥ ८४ ॥

वह परा-मन्त्र-स्वरूप हो जाता है, परा मूर्च्छना उत्पन्न होती है; मूर्च्छना की समीपता को ही मुक्ति का परम मूल जानते हैं।

पदपाठ परामन्त्रस्वरूपोऽसौ — वह परा मन्त्र-स्वरूप हो जाता है · जायते मूर्च्छना परा — परा मूर्च्छा उत्पन्न होती है · मूर्च्छनासन्निकर्षो हि — मूर्च्छा का सन्निकर्ष ही · मूलमुक्तेः परं विदुः — मुक्ति का परम मूल जानते हैं

अन्तर्लक्ष्यो बहिर्दृष्टिर्निमेषोन्मेषवर्जितः ।

एषा तु शाम्भवी मुद्रा सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥ ८५॥

८५

लक्ष्य भीतर, दृष्टि बाहर, पलकों के खुलने-बन्द होने से रहित — यह शाम्भवी मुद्रा है, सब तन्त्रों में गुप्त रखी गयी।

पदपाठ अन्तर्लक्ष्यो बहिर्दृष्टिः — लक्ष्य भीतर, दृष्टि बाहर · निमेषोन्मेषवर्जितः — निमेष-उन्मेष से रहित · एषा तु शाम्भवी मुद्रा — यह शाम्भवी मुद्रा है · सर्वतन्त्रेषु गोपिता — सब तन्त्रों में गोपित

सर्वोत्तीर्णा सदाऽहन्ता सामरस्यसमाकृतिः ।

अनयोल्लासिनो वीराः शिवा एव न संशयः ॥ ८६॥

८६

सर्वोत्तीर्ण सदा-अहन्ता, सामरस्य-रूपा — इससे उल्लसित वीर शिव ही हैं, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ सर्वोत्तीर्णा सदाऽहन्ता — सर्वोत्तीर्ण सदा-अहन्ता · सामरस्यसमाकृतिः — सामरस्य की आकृति · अनयोल्लासिनो वीराः — इससे उल्लसित वीर · शिवा एव न संशयः — शिव ही हैं, सन्देह नहीं

नराः किमपि जानन्ति स्वात्मध्यानपरायणाः ।

तदा यत्परमं सौख्यमिति वक्तुं न शक्यते ॥ ८७॥

८७

स्वात्म-ध्यान में परायण मनुष्य कुछ (अनिर्वचनीय) जानते हैं; तब जो परम सुख होता है, उसे कहा नहीं जा सकता।

पदपाठ नराः किमपि जानन्ति — मनुष्य कुछ (अनिर्वचनीय) जानते हैं · स्वात्मध्यानपरायणाः — स्वात्म-ध्यान में परायण · तदा यत्परमं सौख्यम् — तब जो परम सुख है · इति वक्तुं न शक्यते — कहना सम्भव नहीं

स्वयमेवानुभूयन्ते शर्कराः क्षीरपानवत् ।

ईदृशं तादृशं सौख्यमिति वक्तुं न शक्यते ।

८८

दृश्यते पुलकाद्यैर्यत् तद्ब्रह्मध्यानमुच्यते ॥ ८८ ॥

वे स्वयं ही अनुभव किये जाते हैं, जैसे शर्करा या दूध का स्वाद; "सुख ऐसा है या वैसा है" — यह कहा नहीं जा सकता। जो रोमाञ्च आदि से दिखाई देता है, वह ब्रह्मध्यान कहलाता है।

पदपाठ स्वयमेवानुभूयन्ते — स्वयं ही अनुभव किए जाते हैं · शर्कराः क्षीरपानवत् — शर्करा या क्षीरपान की तरह · ईदृशं तादृशं सौख्यम् — "सुख ऐसा है, वैसा है" · इति वक्तुं न शक्यते — कहना सम्भव नहीं · दृश्यते पुलकाद्यैर्यत् — जो पुलक (रोमांच) आदि से दिखता है · तद्ब्रह्मध्यानमुच्यते — वह ब्रह्मध्यान कहलाता है

यत्सुखं विद्यते ध्याने देवावेशकरं परम् ।

कथितुं नैव शक्नोमि प्रबुद्धस्तत्समाहितः ॥ ८९ ॥

८९

ध्यान में जो परम सुख है, देव-आवेश कराने वाला — उसे मैं भी कह नहीं सकता; उसमें समाहित प्रबुद्ध ही (जानता है)।

पदपाठ यत्सुखं विद्यते ध्याने — ध्यान में जो सुख है · देवावेशकरं परम् — परम, देव-आवेश कराने वाला · कथितुं नैव शक्नोमि — मैं कह नहीं सकता · प्रबुद्धस्तत्समाहितः — उसमें समाहित प्रबुद्ध (ही जानता है)

ब्रह्मध्यानपरानन्दपराः सुकृतिनो नराः ।

क्षणेऽप्यन्तर्हिते तस्मिन् शोचयन्ति हतप्रभाः ॥ ९० ॥

९०

ब्रह्मध्यान के परमानन्द में रत पुण्यवान् मनुष्य — जब वह क्षण भर के लिए भी छिप जाता है, तो निष्प्रभ होकर शोक करते हैं।

पदपाठ ब्रह्मध्यानपरानन्दपराः — ब्रह्मध्यान के परानन्द में परायण · सुकृतिनो नराः — सुकृती मनुष्य · क्षणेऽप्यन्तर्हिते तस्मिन् — क्षण भर भी उसके छूटने पर · शोचयन्ति हतप्रभाः — शोक करते हैं, प्रभाहीन

सप्तमोल्लासयुक्तानां त्वद्भक्तानां महाफलम् ।

अष्टौ त्रिकालज्ञानोत्थाः प्रत्ययाश्च कुलेश्वरि ।

९१

अष्टावस्थाश्च कम्पाद्या जायन्ते नात्र संशयः ॥ ९१ ॥

सप्तम उल्लास से युक्त तुम्हारे भक्तों को महाफल है: त्रिकाल-ज्ञान से उत्पन्न आठ प्रत्यय, हे कुलेश्वरि! और कम्प आदि आठ अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ सप्तमोल्लासयुक्तानां — सप्तम उल्लास से युक्त · त्वद्भक्तानां महाफलम् — तुम्हारे भक्तों का महाफल · अष्टौ त्रिकालज्ञानोत्थाः — त्रिकाल-ज्ञान से उत्पन्न आठ (लक्षण) · प्रत्ययाश्च कुलेश्वरि — और प्रत्यय (निश्चय), हे कुलेश्वरि · अष्टावस्थाश्च कम्पाद्या — और कम्प आदि आठ अवस्थाएँ · जायन्ते नात्र संशयः — उत्पन्न होती हैं, सन्देह नहीं

बहुनात्र किमुक्तेन अणिमाद्यष्टसिद्धयः ।

प्रतीहारिपदं प्राप्ताः सेवन्ते मन्दिरं चिरम् ॥ ९२ ॥

९२

यहाँ अधिक कहने से क्या? अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ द्वारपाल का पद पाकर चिरकाल तक उसके घर की सेवा करती हैं।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या · अणिमाद्यष्टसिद्धयः — अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ · प्रतीहारिपदं प्राप्ताः — प्रतीहारी (द्वारपाल) पद पाकर · सेवन्ते मन्दिरं चिरम् — चिरकाल उसके मन्दिर की सेवा करती हैं

ये गुणाः परमेशस्य पञ्चवक्त्रतनोः शुभाः ।

ते गुणाः कुलतत्त्वज्ञे तत्त्वज्ञानसमाहृताः ॥ ९३ ॥

९३

पञ्चमुख शरीर वाले परमेश्वर के जो शुभ गुण हैं — वे गुण कुलतत्त्व के ज्ञाता में होते हैं, तत्त्वज्ञान से एकत्र किये हुए।

पदपाठ ये गुणाः परमेशस्य — परमेश के जो गुण हैं · पञ्चवक्त्रतनोः शुभाः — पंचमुख देह वाले के शुभ (गुण) · ते गुणाः कुलतत्त्वज्ञे — वे गुण कुलतत्त्वज्ञ में हैं · तत्त्वज्ञानसमाहृताः — तत्त्वज्ञान से संग्रहीत

आरम्भस्तरुणश्चैव यौवनं प्रौढमेव च ।

तदन्तो जाग्रदित्युक्तश्चोन्मनाः स्वप्न उच्यते ॥ ९४ ॥

९४

आरम्भ, तरुण, यौवन, प्रौढ़ और तदन्त — ये जाग्रत् कहे गये हैं; उन्मना स्वप्न कहलाता है;

पदपाठ आरम्भस्तरुणश्चैव — आरम्भ और तरुण · यौवनं प्रौढमेव च — यौवन और प्रौढ़ · तदन्तो जाग्रदित्युक्तः — तदन्त — ये जाग्रत कहे गए · चोन्मनाः स्वप्न उच्यते — और उन्मना स्वप्न कहलाता है

अनवस्था सुषुप्तिः स्यादवस्थात्रयसंयुता ।
सप्तोल्लासञ्च यो वेत्ति स मुक्तः स च कौलिकः ॥ ९५॥

९५

और अनवस्था सुषुप्ति है — इस प्रकार तीन अवस्थाओं से युक्त। जो सात उल्लासों को जानता है — वह मुक्त है, और वही कौलिक है।

पदपाठ अनवस्था सुषुप्तिः स्याद् — अनवस्था सुषुप्ति है · अवस्थात्रयसंयुता — तीन अवस्थाओं से युक्त · सप्तोल्लासञ्च यो वेत्ति — जो सात उल्लास जानता है · स मुक्तः स च कौलिकः — वह मुक्त है, और वह कौलिक है

प्रवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः ।
निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् ॥ ९६॥

९६

भैरवी-चक्र के प्रवृत्त होने पर सब वर्ण द्विज हैं; भैरवी-चक्र के निवृत्त होने पर सब वर्ण फिर पृथक्-पृथक् हैं।

पदपाठ प्रवृत्ते भैरवीचक्रे — भैरवी-चक्र प्रवृत्त होने पर · सर्वे वर्णा द्विजातयः — सब वर्ण द्विज हैं · निवृत्ते भैरवीचक्रे — भैरवी-चक्र निवृत्त होने पर · सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् — सब वर्ण फिर पृथक्-पृथक्

स्त्री वाथ पुरुषः षण्डश्चण्डालो वा द्विजोत्तमः ।
चक्रेऽस्मिन्नैव भेदोऽस्ति सर्वे शिवसमाः स्मृताः ॥ ९७॥

९७

स्त्री हो या पुरुष, षण्ड हो, चण्डाल हो या द्विजोत्तम — इस चक्र में कोई भेद नहीं है; सब शिव के समान माने गये हैं।

पदपाठ स्त्री वाथ पुरुषः षण्डः — स्त्री, पुरुष या षण्ड · चण्डालो वा द्विजोत्तमः — चण्डाल या द्विजोत्तम · चक्रेऽस्मिन्नैव भेदोऽस्ति — इस चक्र में भेद नहीं है · सर्वे शिवसमाः स्मृताः — सब शिव-समान माने गए हैं

नागरि निर्झराद्यम्बु गङ्गां प्राप्य यथैकताम् ।

याति श्रीचक्रमध्येऽपि चैकत्वं सर्वमानवाः ॥ ९८ ॥

९८

जैसे झरनों आदि का जल गङ्गा में मिलकर एकता को प्राप्त होता है, वैसे ही श्रीचक्र के मध्य में भी सब मनुष्य एकत्व को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ नागरि निर्झराद्यम्बु — हे नागरि! जैसे निर्झर आदि का जल · गङ्गां प्राप्य यथैकताम् — गंगा को पाकर एकता · याति श्रीचक्रमध्येऽपि — पाता है, वैसे श्रीचक्र के मध्य में भी · चैकत्वं सर्वमानवाः — सब मनुष्य एकत्व (पाते हैं)

क्षीरेण सहितं तोयं क्षीरमेव यथा भवेत् ।

तथा श्रीचक्रमध्ये तु जातिभेदो न विद्यते ॥ ९९ ॥

९९

जैसे दूध में मिला जल दूध ही हो जाता है, वैसे ही श्रीचक्र के मध्य में जाति-भेद नहीं होता।

पदपाठ क्षीरेण सहितं तोयं — दूध में मिला जल · क्षीरमेव यथा भवेत् — जैसे दूध ही हो जाता है · तथा श्रीचक्रमध्ये तु — वैसे श्रीचक्र के मध्य में · जातिभेदो न विद्यते — जातिभेद नहीं होता

स्वर्गादिपुण्यलोकेषु देवादन्यद् यथा नहि ।

तथैव चक्रमध्येऽपि देवताः सर्वमानवाः ॥ १०० ॥

१००

जैसे स्वर्ग आदि पुण्यलोकों में देवता के अतिरिक्त कुछ नहीं है, वैसे ही चक्र के मध्य में भी सब मनुष्य देवता हैं।

पदपाठ स्वर्गादिपुण्यलोकेषु — स्वर्ग आदि पुण्यलोकों में · देवादन्यद् यथा नहि — जैसे देवों से भिन्न कोई नहीं · तथैव चक्रमध्येऽपि — वैसे ही चक्र के मध्य में भी · देवताः सर्वमानवाः — सब मनुष्य देवता हैं

जातिभेदो न चक्रेऽस्मिन् सर्वे शिवसमाः स्मृताः ।
वेदेऽपि स्थितमेवं हि सर्वे हि ब्रह्म चाब्रवीत् ॥ १०१ ॥

१०१

इस चक्र में जाति-भेद नहीं है; सब शिव के समान माने गये हैं। वेद में भी ऐसा ही स्थित है, क्योंकि उसने कहा — सब ब्रह्म ही है।

पदपाठ जातिभेदो न चक्रेऽस्मिन् — इस चक्र में जातिभेद नहीं · सर्वे शिवसमाः स्मृताः — सब शिव-समान माने गए हैं · वेदेऽपि स्थितमेवं हि — वेद में भी ऐसा ही स्थित है · सर्वे हि ब्रह्म चाब्रवीत् — क्योंकि कहा — सब ब्रह्म है

बहुनात्र किमुक्तेन चक्रमध्ये कुलेश्वरि ।
मद्रूपा पुरुषाः सर्वे त्वद्रूपाः प्रमदाः प्रिये ॥ १०२ ॥

१०२

यहाँ अधिक कहने से क्या? चक्र के मध्य में, हे कुलेश्वरि! सब पुरुष मेरे रूप हैं और स्त्रियाँ तुम्हारे रूप, हे प्रिये!

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या · चक्रमध्ये कुलेश्वरि — चक्र के मध्य में, हे कुलेश्वरि · मद्रूपा पुरुषाः सर्वे — सब पुरुष मेरे रूप हैं · त्वद्रूपाः प्रमदाः प्रिये — स्त्रियाँ तुम्हारे रूप, हे प्रिये

चक्रमध्ये तु मूढात्मा जातिभेदं करोति यः ।
तं भक्षयन्ति योगिन्यस्त्वां शपे कुलनायिके ॥ १०३ ॥

१०३

जो मूढ़ चक्र के मध्य में जाति-भेद करता है — उसे योगिनियाँ खा जाती हैं; तुम्हारी शपथ, हे कुलनायिके!

पदपाठ चक्रमध्ये तु मूढात्मा — चक्र के मध्य में जो मूढात्मा · जातिभेदं करोति यः — जातिभेद करता है · तं भक्षयन्ति योगिन्यः — उसे योगिनियाँ भक्षण करती हैं · त्वां शपे कुलनायिके — तुम्हारी शपथ, हे कुलनायिके

स्त्रीणामन्यतमं स्थानं पुंसामन्यतमं पृथक् ।

१०४

अथवा मिथुनं कृत्वा क्रमात्समुपवेशयेत् ॥ १०४ ॥

स्त्रियों का एक स्थान और पुरुषों का दूसरा, पृथक् — अथवा मिथुन (जोड़े) बनाकर क्रम से बैठाये,

पदपाठ स्त्रीणामन्यतमं स्थानं — स्त्रियों का एक स्थान · पुंसामन्यतमं पृथक् — पुरुषों का दूसरा, पृथक् · अथवा मिथुनं कृत्वा — अथवा मिथुन (युगल) बनाकर · क्रमात्समुपवेशयेत् — क्रम से बैठाए

पङ्क्त्याकारेण वा सम्यक् चक्राकारेण वा प्रिये ।

१०५

शिवशक्तिधिया सर्वे चक्रमध्ये समर्चयेत् ॥ १०५ ॥

पंक्ति के आकार में या चक्र के आकार में, हे प्रिये! सबको शिव-शक्ति की बुद्धि से चक्र के मध्य में पूजे।

पदपाठ पङ्क्त्याकारेण वा सम्यक् — पंक्ति के आकार में सम्यक् · चक्राकारेण वा प्रिये — या चक्र के आकार में, हे प्रिये · शिवशक्तिधिया सर्वे — सबको शिव-शक्ति बुद्धि से · चक्रमध्ये समर्चयेत् — चक्र के मध्य में पूजे

अविभक्तौ यथा आवां लक्ष्मीनारायणौ यथा ।

१०६

यथा वाणीविधातारौ तथा वीरः सशक्तिकः ॥ १०६ ॥

जैसे हम दोनों अविभक्त हैं, जैसे लक्ष्मी और नारायण, जैसे वाणी और विधाता — वैसे ही वीर अपनी शक्ति के साथ है।

पदपाठ अविभक्तौ यथा आवां — जैसे हम दोनों अविभक्त हैं · लक्ष्मीनारायणौ यथा — जैसे लक्ष्मी-नारायण · यथा वाणीविधातारौ — जैसे वाणी और विधाता · तथा वीरः सशक्तिकः — वैसे शक्ति-सहित वीर है

मधुकुम्भसहस्रैस्तु मांसभारशतैरपि ।

१०७

न तुष्यामि वरारोहे भगलिङ्गामृतं विना ॥ १०७ ॥

हज़ार मधु के घड़ों से या सौ भार मांस से भी मैं तृप्त नहीं होता, हे वरारोहे! भग-
लिङ्ग के अमृत के बिना।

पदपाठ मधुकुम्भसहस्रैस्तु — हज़ार मधु-कुम्भों से · मांसभारशतैरपि — सौ मांस-भारों से भी · न तुष्यामि
वरारोहे — मैं तृप्त नहीं होता, हे वरारोहे · भगलिङ्गामृतं विना — भग-लिङ्ग अमृत के बिना

न चक्राङ्कं न पद्माङ्कं न वज्राङ्कमिदं जगत् ।

१०८

लिङ्गाङ्कञ्च भगाङ्कञ्च तस्माच्छक्तिशिवात्मकम् ॥ १०८ ॥

यह जगत् न चक्र से अंकित है, न पद्म से, न वज्र से; यह लिङ्ग और भग से अंकित है
— इसलिए शक्ति-शिवात्मक है।

पदपाठ न चक्राङ्कं न पद्माङ्कं — न चक्र से अंकित, न पद्म से · न वज्राङ्कमिदं जगत् — न वज्र से अंकित यह
जगत् है · लिङ्गाङ्कञ्च भगाङ्कञ्च — लिङ्ग से अंकित और भग से अंकित · तस्माच्छक्तिशिवात्मकम् —
इसलिए शक्ति-शिवात्मक है

शिवशक्तिसमायोगो यस्मिन् काले प्रजायते ।

१०९

सा सन्ध्या कुलनिष्ठानां समाधिः स विधीयते ॥ १०९ ॥

जिस समय शिव और शक्ति का संयोग होता है — वही कुलनिष्ठों की सन्ध्या है,
और वही उनकी समाधि कही गयी है।

पदपाठ शिवशक्तिसमायोगो — शिव-शक्ति का समायोग · यस्मिन् काले प्रजायते — जिस काल में होता
है · सा सन्ध्या कुलनिष्ठानां — वह कुलनिष्ठों की सन्ध्या है · समाधिः स विधीयते — और वह समाधि
विधान किया गया है

कामुको न स्त्रियं गच्छेद् यदीच्छन्तीमदीक्षिताम् ।

११०

सद्यः संस्कारसंशुद्धां विहितत्वात् स्त्रियं व्रजेत् ॥ ११० ॥

कामुक पुरुष इच्छुक होने पर भी अदीक्षित स्त्री के पास न जाये; ऐसा विधान होने से, सद्यः संस्कार से शुद्ध स्त्री के पास जाये।

पदपाठ कामुको न स्त्रियं गच्छेद् — कामुक स्त्री के पास न जाए · यदीच्छन्तीमदीक्षिताम् — जो इच्छुक होने पर भी अदीक्षित हो · सद्यः संस्कारसंशुद्धां — तत्काल संस्कार से शुद्ध · विहितत्वात् स्त्रियं व्रजेत् — विहित होने से, स्त्री के पास जाए

इति तत्त्वत्रयोल्लासपानभेदादि चोदितम् ।

१११

समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १११ ॥

इस प्रकार तत्त्वत्रय, उल्लास, पान-भेद आदि संक्षेप में कहे गये, हे कुलेशानि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति तत्त्वत्रयोल्लास- — इस प्रकार तत्त्वत्रय, उल्लास · पानभेदादि चोदितम् — पान-भेद आदि कहे गए · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णव निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे तत्त्वत्रितयपानादिभेदकथनं नामाष्टम उल्लासः ॥ ८ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
तत्त्वत्रितयपानादिभेदकथन नामक अष्टम उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ नवमोल्लासः

नवम उल्लास — योगसंस्थापनकथनम्



ईश्वर स्थूल और सूक्ष्म ध्यान, समाधि और जीवन्मुक्त की अवस्था का उपदेश करते हैं, फिर अलक्षित विचरने वाले कुलयोगी का वर्णन करते हैं जिसके लिए निषिद्ध भी विहित हो जाता है। वे कुलज्ञानियों की पूजा को अपनी ही पूजा बताकर उनके सत्कार और भोजन के फल की प्रशंसा करते हैं, और अन्त में बताते हैं कि कर्म कब करणीय है और ज्ञानी उसे कब त्याग सकता है।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि योगं योगीशलक्षणम् ।

१

कुलभक्त्यार्चनफलं वद मे करुणानिधे ॥ १॥

हे कुलेश! मैं योग और योगीश्वर के लक्षण, तथा कुलभक्तों की अर्चना का फल सुनना चाहती हूँ — मुझे बताइए, हे करुणानिधि!

पदपाठ कुलेश — हे कुलेश · श्रोतुमिच्छामि — मैं सुनना चाहती हूँ · योगं — योग · योगीशलक्षणम् — योगीश के लक्षण · कुलभक्त्यार्चनफलं — कुलभक्तों की पूजा का फल · वद मे — मुझे बताइए · करुणानिधे — हे करुणानिधि

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण योगः साक्षात् प्रकाशते ॥ २ ॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से योग साक्षात् प्रकाशित होता है।

पदपाठ शृणु देवि — सुनो देवि · प्रवक्ष्यामि — मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · योगः — योग · साक्षात् प्रकाशते — साक्षात् प्रकाशित होता है

ध्यानन्तु द्विविधं प्रोक्तं स्थूलसूक्ष्मप्रभेदतः ।

साकारं स्थूलमित्याहुर्निराकारन्तु सूक्ष्मकम् ॥ ३ ॥

३

ध्यान स्थूल और सूक्ष्म के भेद से दो प्रकार का कहा गया है: साकार को स्थूल कहते हैं और निराकार को सूक्ष्म।

पदपाठ ध्यानन्तु — ध्यान · द्विविधं प्रोक्तं — दो प्रकार का कहा गया है · स्थूलसूक्ष्मप्रभेदतः — स्थूल और सूक्ष्म के भेद से · साकारं — साकार · स्थूलमित्याहुः — स्थूल कहते हैं · निराकारन्तु — और निराकार · सूक्ष्मकम् — सूक्ष्म

स्थिरार्थं मनसः केचित् स्थूलध्यानं प्रचक्षते ।

स्थूलेऽपि निश्चलं चेतो भवेत् सूक्ष्मेऽपि निश्चलम् ॥ ४ ॥

४

मन को स्थिर करने के लिए कुछ लोग स्थूल ध्यान का उपदेश करते हैं; स्थूल में भी जो चित्त निश्चल हो जाता है, वह सूक्ष्म में भी निश्चल हो जाता है।

पदपाठ स्थिरार्थं मनसः — मन की स्थिरता के लिए · केचित् — कुछ (आचार्य) · स्थूलध्यानं प्रचक्षते — स्थूल ध्यान कहते हैं · स्थूलेऽपि — स्थूल में भी · निश्चलं चेतो भवेत् — चित्त निश्चल हो सकता है · सूक्ष्मेऽपि निश्चलम् — और सूक्ष्म में भी निश्चल

करपादोदरास्यादिरहितं परमेश्वरम् ।

सर्वतेजोमयं ध्यायेत् सच्चिदानन्दनिष्कलम् ॥ ५॥

५

हाथ, पैर, उदर, मुख आदि से रहित, सर्वतेजोमय, सच्चिदानन्दस्वरूप, निष्कल परमेश्वर का ध्यान करे।

पदपाठ करपादोदरास्यादिरहितं — हाथ, पैर, उदर, मुख आदि से रहित · परमेश्वरम् — परमेश्वर का · सर्वतेजोमयं — सर्वतेजोमय · ध्यायेत् — ध्यान करे · सच्चिदानन्दनिष्कलम् — सच्चिदानन्द, निष्कल

नोदेति नास्तमभ्येति न वृद्धिं याति न क्षयम् ।

स्वयं विभात्यथान्यानि भासयन् साधनं विना ॥ ६॥

६

वह न उदय होता है, न अस्त होता है, न बढ़ता है, न घटता है; वह स्वयं प्रकाशित होता है और बिना किसी साधन के अन्य वस्तुओं को प्रकाशित करता है।

पदपाठ नोदेति — उदित नहीं होता · नास्तमभ्येति — अस्त नहीं होता · न वृद्धिं याति — वृद्धि नहीं पाता · न क्षयम् — न क्षय · स्वयं विभाति — स्वयं प्रकाशित होता है · अथान्यानि भासयन् — और अन्यो को प्रकाशित करता हुआ · साधनं विना — साधन के बिना

अनन्तं गतभारूपं सत्तामात्रमगोचरम् ।

मनसा मात्रसम्बेद्यं तज्ज्ञानं ब्रह्मसंज्ञितम् ॥ ७॥

७

अनन्त, प्रकाश के रूप से परे, सत्तामात्र, इन्द्रियों से अगोचर, केवल मन से वेद्य — वह ज्ञान ब्रह्म कहलाता है।

पदपाठ अनन्तं — अनन्त · गतभारूपं — प्रकाश के रूप से परे · सत्तामात्रम् — सत्तामात्र · अगोचरम् — अगोचर · मनसा मात्रसम्बेद्यं — केवल मन से जानने योग्य · तज्ज्ञानं — वह ज्ञान · ब्रह्मसंज्ञितम् — ब्रह्म कहलाता है

प्रणष्टवायुसञ्चारः पाषाण इव निश्चलः ।

परजीवैकधामज्ञो योगी योगविदुच्यते ॥ ८॥

८

जिसके प्राणवायु का संचार सर्वथा रुक गया है, जो पाषाण की भाँति निश्चल है, जो परमात्मा और जीव के एक धाम को जानता है — वह योगी योगवित् कहलाता है।

पदपाठ प्रणष्टवायुसञ्चारः — वायु का संचार पूर्णतः रुका हुआ · पाषाण इव निश्चलः — पाषाण की तरह निश्चल · परजीवैकधामज्ञः — पर और जीव के एक धाम को जानने वाला · योगी — योगी · योगविदुच्यते — योगवेत्ता कहलाता है

यदत्र नात्र निर्भासः स्तिमितोदधिवत् स्थितम् ।

स्वरूपशून्यं तद्भ्यानं समाधिरभिधीयते ॥ ९॥

९

जहाँ "यह" या "वह" का कोई भास नहीं, जो स्तब्ध समुद्र की भाँति स्थित है, जो अपने स्वरूप से भी शून्य है — वह ध्यान समाधि कहलाता है।

पदपाठ यदत्र नात्र — जहाँ न "यहाँ" न "वहाँ" · निर्भासः — कोई आभास नहीं · स्तिमितोदधिवत् स्थितम् — स्थिर समुद्र की तरह स्थित · स्वरूपशून्यं — स्वरूप से शून्य · तद्भ्यानं — वह ध्यान · समाधिरभिधीयते — समाधि कहलाता है

न किञ्चिच्चिन्तनादेव स्वयं तत्त्वं प्रकाशते ।

स्वयं प्रकाशिते तत्त्वे तत्क्षणात्तन्मयो भवेत् ॥ १०॥

१०

किसी भी वस्तु का चिन्तन न करने से ही तत्त्व स्वयं प्रकाशित होता है; तत्त्व के स्वयं प्रकाशित होने पर उसी क्षण साधक तन्मय हो जाता है।

पदपाठ न किञ्चिच्चिन्तनादेव — कुछ भी न सोचने से ही · स्वयं तत्त्वं प्रकाशते — तत्त्व स्वयं प्रकाशित होता है · स्वयं प्रकाशिते तत्त्वे — तत्त्व के स्वयं प्रकाशित होने पर · तत्क्षणात् — उसी क्षण · तन्मयो भवेत् — तन्मय हो जाता है

स्वप्नजाग्रदवस्थायां सुप्तवत् योऽवतिष्ठते ।

निश्वासोच्छ्वासहीनश्च निश्चितं मुक्त एव सः ॥ ११॥

११

जो स्वप्न और जाग्रत अवस्था में सुप्त की भाँति रहता है और श्वास-प्रश्वास से रहित है — वह निश्चय ही मुक्त है।

पदपाठ स्वप्नजाग्रदवस्थायां — स्वप्न और जाग्रत अवस्था में · सुप्तवत् योऽवतिष्ठते — जो सोए हुए की तरह रहता है · निश्वासोच्छ्वासहीनश्च — और निःश्वास-उच्छ्वास से रहित · निश्चितं — निश्चित ही · मुक्त एव सः — वह मुक्त ही है

निष्पन्दकरणग्रामः स्वात्मलीनमनोऽनिलः ।

य आस्ते मृतवत्साक्षात् जीवन्मुक्तः स उच्यते ॥ १२॥

१२

जिसका समस्त इन्द्रिय-समूह निष्पन्द है, जिसका मन और प्राण अपने आत्मा में लीन हैं, जो साक्षात् मृत की भाँति स्थित रहता है — वह जीवन्मुक्त कहलाता है।

पदपाठ निष्पन्दकरणग्रामः — इन्द्रिय-समूह निस्पन्द · स्वात्मलीनमनोऽनिलः — मन और वायु स्वात्मा में लीन · य आस्ते — जो रहता है · मृतवत्साक्षात् — साक्षात् मृत की तरह · जीवन्मुक्तः स उच्यते — वह जीवन्मुक्त कहलाता है

न शृणोति न चाघ्राति न स्पृशति न पश्यति ।

न जानाति सुखं दुःखं न सङ्कल्पयते मनः ॥ १३॥

१३

वह न सुनता है, न सूँघता है, न स्पर्श करता है, न देखता है; वह सुख-दुःख को नहीं जानता; उसका मन कोई सङ्कल्प नहीं करता।

पदपाठ न शृणोति — न सुनता है · न चाघ्राति — न सूँघता है · न स्पृशति — न स्पर्श करता है · न पश्यति — न देखता है · न जानाति — न जानता है · सुखं दुःखं — सुख या दुःख · न सङ्कल्पयते मनः — मन संकल्प नहीं करता

न चापि किञ्चिज्जानाति न च बुध्यति काष्ठवत् ।

१४

एवं शिवे विलीनात्मा समाधिस्थ इहोच्यते ॥ १४ ॥

वह कुछ भी नहीं जानता, न ही काष्ठ की भाँति कुछ बोध करता है; इस प्रकार शिव में विलीन आत्मा वाला वह यहाँ समाधिस्थ कहलाता है।

पदपाठ न चापि किञ्चिज्जानाति — और कुछ भी नहीं जानता · न च बुध्यति — और न बोध करता है · काष्ठवत् — काष्ठ (लकड़ी) की तरह · एवं — इस प्रकार · शिवे विलीनात्मा — शिव में लीन आत्मा वाला · समाधिस्थ इहोच्यते — यहाँ समाधिस्थ कहलाता है

यथा जले जलं क्षिप्तं क्षीरे क्षीरं घृते घृतम् ।

१५

अविशेषो भवेत्तद्वज्जीवात्मपरमात्मनोः ॥ १५ ॥

जैसे जल में डाला हुआ जल, दूध में दूध, घी में घी अभिन्न हो जाता है, वैसे ही जीवात्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं रहता।

पदपाठ यथा — जैसे · जले जलं क्षिप्तं — जल में डाला जल · क्षीरे क्षीरं — दूध में दूध · घृते घृतम् — घी में घी · अविशेषो भवेत् — अभिन्न हो जाता है · तद्वत् — वैसे ही · जीवात्मपरमात्मनोः — जीवात्मा और परमात्मा का

यथा ध्यानस्य सामर्थ्यात् कीटोऽपि भ्रमरायते ।

१६

तथा समाधिसामर्थ्याद् ब्रह्मभूतो भवेन्नरः ॥ १६ ॥

जैसे ध्यान के सामर्थ्य से कीट भी भ्रमर हो जाता है, वैसे ही समाधि के सामर्थ्य से मनुष्य ब्रह्मस्वरूप हो जाता है।

पदपाठ यथा — जैसे · ध्यानस्य सामर्थ्यात् — ध्यान के सामर्थ्य से · कीटोऽपि भ्रमरायते — कीड़ा भी भ्रमर बन जाता है · तथा — वैसे · समाधिसामर्थ्यात् — समाधि के सामर्थ्य से · ब्रह्मभूतो भवेन्नरः — मनुष्य ब्रह्मभूत हो जाता है

क्षीरोद्धृतं घृतं यद्वत्तत्र क्षिप्तं न पूर्ववत् ।

१७

पृथक्कृतो गुणेभ्यः स्यादात्मा तद्वदिहोच्यते ॥ १७ ॥

जैसे दूध से निकाला हुआ घी उसमें पुनः डालने पर पहले जैसा नहीं होता, वैसे ही गुणों से पृथक् किया हुआ आत्मा भी होता है — ऐसा यहाँ कहा गया है।

पदपाठ क्षीरोद्धृतं घृतं — दूध से निकाला घी · यद्वत् — जैसे · तत्र क्षिप्तं — उसमें फिर डाला · न पूर्ववत् — पूर्ववत् नहीं होता · पृथक्कृतो गुणेभ्यः — गुणों से पृथक् किया · स्यादात्मा — आत्मा होता है · तद्वदिहोच्यते — वैसे ही यहाँ कहा जाता है

यथा गाढान्धकारस्थो न किञ्चिदिह पश्यति ।

१८

अलक्ष्यञ्च तथा योगी प्रपञ्चं नैव पश्यति ॥ १८ ॥

जैसे घने अन्धकार में स्थित व्यक्ति यहाँ कुछ नहीं देखता, वैसे ही अलक्षित योगी प्रपञ्च को बिलकुल नहीं देखता।

पदपाठ यथा — जैसे · गाढान्धकारस्थः — घोर अन्धकार में स्थित · न किञ्चिदिह पश्यति — यहाँ कुछ नहीं देखता · अलक्ष्यञ्च — और अलक्ष्य · तथा योगी — वैसे योगी · प्रपञ्चं नैव पश्यति — प्रपञ्च को नहीं देखता

यथा निमीलने काले प्रपञ्चं नैव पश्यति ।

१९

तथैवोन्मीलनेऽपि स्यादेतद्भ्यानस्य लक्षणम् ॥ १९ ॥

जैसे आँखें बन्द करने पर प्रपञ्च नहीं दिखता, वैसे ही आँखें खुली रहने पर भी न दिखे — यही ध्यान का लक्षण है।

पदपाठ यथा — जैसे · निमीलने काले — आँख मूँदने के समय · प्रपञ्चं नैव पश्यति — प्रपञ्च नहीं दिखता · तथैव — वैसे ही · उन्मीलनेऽपि स्यात् — आँख खुली रहने पर भी हो · एतद्भ्यानस्य लक्षणम् — यह ध्यान का लक्षण है

जनः स्वदेहकण्डूतिं विजानाति यथा तथा ।
परं ब्रह्मस्वरूपी च वेत्ति विश्वविचेष्टितम् ॥ २०॥

२०

जैसे मनुष्य अपने शरीर की खुजली को जानता है, वैसे ही परब्रह्मस्वरूप हुआ पुरुष समस्त विश्व की चेष्टाओं को जानता है।

पदपाठ जनः — मनुष्य · स्वदेहकण्डूतिं — अपने देह की खुजली · विजानाति यथा — जैसे जानता है · तथा — वैसे · परं ब्रह्मस्वरूपी च — परब्रह्म-स्वरूप हुआ · वेत्ति — जानता है · विश्वविचेष्टितम् — विश्व की चेष्टा

विदिते परमे तत्त्वे वर्णातीते ह्यविक्रिये ।
किङ्करत्वं हि गच्छन्ति मन्त्रा मन्त्राधिपैः सह ॥ २१॥

२१

वर्णों से परे और अविकारी परम तत्त्व के ज्ञात हो जाने पर मन्त्र अपने मन्त्राधिपों सहित उसके किंकर हो जाते हैं।

पदपाठ विदिते परमे तत्त्वे — परम तत्त्व के ज्ञात होने पर · वर्णातीते — वर्णों से अतीत · ह्यविक्रिये — और अविकारी · किङ्करत्वं हि गच्छन्ति — किंकर हो जाते हैं · मन्त्राः — मन्त्र · मन्त्राधिपैः सह — मन्त्राधिपों सहित

आत्मैकभावनिष्ठस्य या या चेष्टा तदर्चनम् ।
यो यो जल्पः स सन्मन्त्रस्तद्ध्यानं यन्निरीक्षणम् ॥ २२॥

२२

आत्मा के एकभाव में निष्ठ पुरुष की जो-जो चेष्टा है वह अर्चना है, जो-जो वाणी है वह सन्मन्त्र है, और जो-जो निरीक्षण है वह ध्यान है।

पदपाठ आत्मैकभावनिष्ठस्य — आत्मा के एक भाव में निष्ठ की · या या चेष्टा — जो-जो चेष्टा · तदर्चनम् — वह अर्चना है · यो यो जल्पः — जो-जो जल्प (बोल) · स सन्मन्त्रः — वह सन्मन्त्र है · तद्ध्यानं — वह ध्यान है · यन्निरीक्षणम् — जो देखना है

देहाभिमाने गलिते विज्ञाते परमात्मनि ।

२३

यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः ॥ २३ ॥

देहाभिमान के गल जाने और परमात्मा के विज्ञात हो जाने पर मन जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ-वहाँ समाधि ही है।

पदपाठ देहाभिमाने गलिते — देहाभिमान गल जाने पर · विज्ञाते परमात्मनि — परमात्मा के जान लिए जाने पर · यत्र यत्र मनो याति — जहाँ-जहाँ मन जाता है · तत्र तत्र समाधयः — वहाँ-वहाँ समाधि है

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।

२४

क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परात्मनि ॥ २४ ॥

उस परमात्मा के देखे जाने पर हृदय की ग्रन्थि टूट जाती है, सब संशय छिन्न हो जाते हैं और उसके कर्म क्षीण हो जाते हैं।

पदपाठ भिद्यते हृदयग्रन्थिः — हृदय की ग्रन्थि टूट जाती है · छिद्यन्ते सर्वसंशयाः — सब संशय छिन्न हो जाते हैं · क्षीयन्ते चास्य कर्माणि — और इसके कर्म क्षीण हो जाते हैं · तस्मिन् दृष्टे परात्मनि — उस परमात्मा को देख लेने पर

योगीन्द्रेण यदा प्राप्तं निर्मलं परमं पदम् ।

२५

देवासुरपदं यत्तत्प्राप्तञ्चापि न गृह्यते ॥ २५ ॥

जब योगीन्द्र निर्मल परम पद को प्राप्त कर लेता है, तब देवों और असुरों का पद प्राप्त होने पर भी वह उसे ग्रहण नहीं करता।

पदपाठ योगीन्द्रेण — योगीन्द्र द्वारा · यदा प्राप्तं — जब प्राप्त हो जाता है · निर्मलं परमं पदम् — निर्मल परम पद · देवासुरपदं — देव और असुर का पद · यत् — जो · तत्प्राप्तञ्चापि — प्राप्त होने पर भी · न गृह्यते — ग्रहण नहीं किया जाता

यः पश्येत् सर्वगं शान्तमानन्दात्मकमव्ययम् ।
तस्य किञ्चिदनालभ्यं ज्ञातव्यञ्चावशिष्यते ॥ २६ ॥

२६

जो सर्वव्यापी, शान्त, आनन्दस्वरूप, अव्यय को देख लेता है, उसके लिए कुछ भी अप्राप्त या ज्ञातव्य शेष नहीं रहता।

पदपाठ यः पश्येत् — जो देखता है · सर्वगं — सर्वगत · शान्तम् — शान्त · आनन्दात्मकम् —
आनन्दस्वरूप · अव्ययम् — अव्यय · तस्य — उसके लिए · किञ्चित् — कुछ · अनालभ्यं —
अप्राप्य · ज्ञातव्यञ्च — और ज्ञातव्य · अवशिष्यते — शेष रहता है?

सम्प्राप्ते ज्ञानविज्ञाने ज्ञेये च हृदि संस्थिते ।
लब्धे शान्तिपदे देवि न योगो नैव धारणा ॥ २७ ॥

२७

ज्ञान और विज्ञान के प्राप्त हो जाने पर, ज्ञेय के हृदय में स्थित हो जाने पर, शान्तिपद के लब्ध हो जाने पर, हे देवि! न योग रहता है, न धारणा।

पदपाठ सम्प्राप्ते ज्ञानविज्ञाने — ज्ञान-विज्ञान प्राप्त होने पर · ज्ञेये च हृदि संस्थिते — और ज्ञेय हृदय में
स्थित होने पर · लब्धे शान्तिपदे — शान्ति-पद पाने पर · देवि — हे देवि · न योगो — न योग · नैव धारणा
— न धारणा

परे ब्रह्मणि विज्ञाते समस्तैर्नियमैरलम् ।
तालवृन्तेन किं कार्यं लब्धे मलयमारुते ॥ २८ ॥

२८

परब्रह्म के विज्ञात हो जाने पर समस्त नियमों से क्या प्रयोजन? मलय-पवन के मिल जाने पर ताड़ के पंखे से क्या काम?

पदपाठ परे ब्रह्मणि विज्ञाते — परब्रह्म के जान लिए जाने पर · समस्तैर्नियमैरलम् — सब नियमों से बस
(पर्याप्त) · तालवृन्तेन — ताड़ के पंखे से · किं कार्यं — क्या काम · लब्धे मलयमारुते — मलय-वायु पा
लेने पर

आसिकाबन्धनं नास्ति नासिकाबन्धनं न हि ।

२९

न यमो नियमो नास्ति स्वयमोमिति पश्यताम् ॥ २९ ॥

जो "मैं स्वयं ओंकार हूँ" ऐसा देखते हैं, उनके लिए न आसन का बन्धन है, न नासिका का बन्धन, न यम है और न नियम।

पदपाठ आसिकाबन्धनं नास्ति — आसन का बन्धन नहीं · नासिकाबन्धनं न हि — नासिका का बन्धन नहीं · न यमो — न यम · नियमो नास्ति — न नियम · स्वयमोमिति — "मैं स्वयं ॐ हूँ" · पश्यताम् — ऐसा देखने वालों के लिए

न पद्मासनतो योगो न नासाग्रनिरीक्षणम् ।

३०

ऐक्यं जीवात्मनोराहुर्योगं योगविशारदाः ॥ ३० ॥

न पद्मासन से योग होता है, न नासाग्र-निरीक्षण से; योगविशारद जीव और आत्मा की एकता को ही योग कहते हैं।

पदपाठ न पद्मासनतो योगो — पद्मासन से योग नहीं · न नासाग्रनिरीक्षणम् — न नासाग्र-दर्शन · ऐक्यं जीवात्मनोः — जीव और आत्मा की एकता को · आहुर्योगं — योग कहते हैं · योगविशारदाः — योग में निपुण

ध्यायतां क्षणमात्रं हि श्रद्धया परमन्त्विह ।

३१

यद्भवेत् सुमहत् पुण्यं तस्यान्तो नैव गण्यते ॥ ३१ ॥

जो यहाँ श्रद्धापूर्वक क्षणमात्र भी परम तत्त्व का ध्यान करते हैं, उनका जो महान् पुण्य होता है उसका अन्त गिना नहीं जा सकता।

पदपाठ ध्यायतां — ध्यान करने वालों को · क्षणमात्रं हि — क्षण मात्र भी · श्रद्धया — श्रद्धा से · परमन्त्विह — यहाँ पर (परमात्मा) का · यद्भवेत् सुमहत् पुण्यं — जो अति महान् पुण्य होता है · तस्यान्तो नैव गण्यते — उसका अन्त गिना नहीं जाता

क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचिन्तनम् ।

स सर्व पातकं हन्यात्तमः सूर्योदयो यथा ॥ ३२ ॥

३२

जो क्षणभर भी "मैं ब्रह्म हूँ" इस प्रकार आत्मचिन्तन करता है, वह समस्त पाप को वैसे ही नष्ट कर देता है जैसे सूर्योदय अन्धकार को।

पदपाठ क्षणं — क्षण भर · ब्रह्माहमस्मीति — "मैं ब्रह्म हूँ" · यः कुर्यादात्मचिन्तनम् — जो ऐसा आत्म-चिन्तन करे · स सर्व पातकं हन्यात् — वह सब पातक नष्ट करता है · तमः सूर्योदयो यथा — जैसे सूर्योदय अन्धकार को

व्रतक्रतुतपस्तीर्थदानदेवार्चनादिषु ।

यत् फलं कोटिगुणितं तदवाप्नोति तत्त्ववित् ॥ ३३ ॥

३३

व्रत, यज्ञ, तप, तीर्थ, दान, देवार्चन आदि में जो फल है, तत्त्ववेत्ता उसे करोड़ गुना प्राप्त करता है।

पदपाठ व्रतक्रतुतपस्तीर्थदानदेवार्चनादिषु — व्रत, यज्ञ, तप, तीर्थ, दान, देवार्चन आदि में · यत् फलं — जो फल · कोटिगुणितं — करोड़ गुना · तदवाप्नोति — वह पाता है · तत्त्ववित् — तत्त्ववेत्ता

उत्तमा सहजावस्था मध्यमा ध्यानधारणा ।

जपस्तुतिः स्यादधमा होमपूजाऽधमाधमा ॥ ३४ ॥

३४

सहज अवस्था उत्तम है, ध्यान-धारणा मध्यम, जप-स्तुति अधम, और होम-पूजा अधमाधम है।

पदपाठ उत्तमा सहजावस्था — उत्तम सहज अवस्था है · मध्यमा ध्यानधारणा — मध्यम ध्यान-धारणा · जपस्तुतिः स्यादधमा — जप-स्तुति अधम है · होमपूजाऽधमाधमा — होम-पूजा अधमाधम

उत्तमा तत्त्वचिन्ता स्याज्जपचिन्ता तु मध्यमा ।

शास्त्रचिन्ताऽधमा ज्ञेया लोकचिन्ताऽधमाधमा ॥ ३५॥

३५

तत्त्वचिन्ता उत्तम है, जपचिन्ता मध्यम, शास्त्रचिन्ता अधम जाननी चाहिए, और लोकचिन्ता अधमाधम है।

पदपाठ उत्तमा तत्त्वचिन्ता स्यात् — उत्तम तत्त्व-चिन्ता है · जपचिन्ता तु मध्यमा — जप-चिन्ता मध्यम · शास्त्रचिन्ताऽधमा ज्ञेया — शास्त्र-चिन्ता अधम जाननी चाहिए · लोकचिन्ताऽधमाधमा — लोक-चिन्ता अधमाधम

पूजाकोटिसमं स्तोत्रं स्तोत्रकोटिसमो जपः ।

जपकोटिसमं ध्यानं ध्यानकोटिसमो लयः ॥ ३६॥

३६

स्तोत्र करोड़ पूजाओं के समान है, जप करोड़ स्तोत्रों के समान, ध्यान करोड़ जपों के समान, और लय करोड़ ध्यानों के समान है।

पदपाठ पूजाकोटिसमं स्तोत्रं — करोड़ पूजा के समान स्तोत्र · स्तोत्रकोटिसमो जपः — करोड़ स्तोत्र के समान जप · जपकोटिसमं ध्यानं — करोड़ जप के समान ध्यान · ध्यानकोटिसमो लयः — करोड़ ध्यान के समान लय

न हि ध्यानात् परो मन्त्रो न देवस्त्वात्मनः परः ।

नानुसन्धात् परा पूजा न हि तृप्तेः परं फलम् ॥ ३७॥

३७

ध्यान से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं, आत्मा से बढ़कर कोई देव नहीं, अनुसन्धान से बढ़कर कोई पूजा नहीं, और तृप्ति से बढ़कर कोई फल नहीं।

पदपाठ न हि ध्यानात् परो मन्त्रो — ध्यान से पर कोई मन्त्र नहीं · न देवस्त्वात्मनः परः — आत्मा से पर कोई देव नहीं · नानुसन्धात् परा पूजा — अनुसन्धान से परे कोई पूजा नहीं · न हि तृप्तेः परं फलम् — तृप्ति से पर कोई फल नहीं

अक्रियैव परा पूजा मौनमेव परो जपः ।

अचिन्तेव परं ध्यानमनिच्छैव परं फलम् ॥ ३८ ॥

३८

अक्रिया ही परम पूजा है, मौन ही परम जप है, अचिन्तन ही परम ध्यान है, और अनिच्छा ही परम फल है।

पदपाठ अक्रियैव परा पूजा — अक्रिया ही परा पूजा है · मौनमेव परो जपः — मौन ही पर जप है · अचिन्तेव परं ध्यानम् — अचिन्ता ही परम ध्यान है · अनिच्छैव परं फलम् — अनिच्छा ही परम फल है

मन्त्रोदकैर्विना सन्ध्यां पूजाहोमैर्विना तपः ।

उपचारैर्विना पूजां योगी नित्यं समाचरेत् ॥ ३९ ॥

३९

योगी सदा मन्त्र और जल के बिना सन्ध्या, पूजा और होम के बिना तप, तथा उपचारों के बिना पूजा करे।

पदपाठ मन्त्रोदकैर्विना सन्ध्यां — मन्त्र-जल के बिना सन्ध्या · पूजाहोमैर्विना तपः — पूजा-होम के बिना तप · उपचारैर्विना पूजां — उपचारों के बिना पूजा · योगी नित्यं समाचरेत् — योगी नित्य करे

निःसङ्गश्च विसङ्गश्च निस्तीर्णोपाधिवासनः ।

निजस्वरूपनिर्मग्नः स योगी परतत्त्ववित् ॥ ४० ॥

४०

जो निःसङ्ग और विसङ्ग है, जिसने उपाधियों की वासनाओं को पार कर लिया है, जो अपने स्वरूप में निमग्न है — वह योगी परतत्त्ववेत्ता है।

पदपाठ निःसङ्गश्च — निःसंग · विसङ्गश्च — संग-रहित · निस्तीर्णोपाधिवासनः — उपाधि की वासनाओं से पार · निजस्वरूपनिर्मग्नः — निज स्वरूप में निमग्न · स योगी परतत्त्ववित् — वह योगी परतत्त्ववेत्ता है

देहो देवालयो देवि जीवो देवः सदाशिवः ।

४१

त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोऽहम्भावेन पूजयेत् ॥ ४१ ॥

हे देवि! देह देवालय है, जीव देव सदाशिव है; अज्ञानरूपी निर्माल्य को त्यागकर "सोऽहम्" भाव से पूजा करे।

पदपाठ देहो देवालयो देवि — देह देवालय है, हे देवि · जीवो देवः सदाशिवः — जीव देव सदाशिव है · त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं — अज्ञान का निर्माल्य त्यागे · सोऽहम्भावेन पूजयेत् — "सोऽहम्" भाव से पूजा करे

जीवः शिवः शिवो जीवः स जीवः केवलः शिवः ।

४२

पाशबद्धः स्मृतो जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः ॥ ४२ ॥

जीव शिव है, शिव जीव है; वह जीव केवल शिव ही है। पाश से बद्ध होने पर वह जीव कहलाता है, पाश से मुक्त होने पर सदाशिव।

पदपाठ जीवः शिवः — जीव शिव है · शिवो जीवः — शिव जीव है · स जीवः केवलः शिवः — वह जीव केवल शिव है · पाशबद्धः स्मृतो जीवः — पाश से बद्ध जीव कहलाता है · पाशमुक्तः सदाशिवः — पाश से मुक्त सदाशिव

तुषेण बद्धो व्रीहिः स्यात्तुषाभावे हि तण्डुलः ।

४३

कर्मबद्धः स्मृतो जीवः कर्ममुक्तः सदाशिवः ॥ ४३ ॥

छिलके से ढका हुआ धान है, छिलके के अभाव में चावल; कर्म से बद्ध होने पर वह जीव कहलाता है, कर्म से मुक्त होने पर सदाशिव।

पदपाठ तुषेण बद्धो व्रीहिः स्यात् — तुष (भूसी) से बद्ध धान है · तुषाभावे हि तण्डुलः — तुष के अभाव में चावल · कर्मबद्धः स्मृतो जीवः — कर्म से बद्ध जीव कहलाता है · कर्ममुक्तः सदाशिवः — कर्म से मुक्त सदाशिव

अग्नौ तिष्ठति विप्राणां हृदि देवो मनीषिणाम् ।

४४

प्रतिमास्वप्रबुद्धानां सर्वत्र विदितात्मनाम् ॥ ४४॥

ब्राह्मणों के लिए देव अग्नि में स्थित है, मनीषियों के लिए हृदय में, अप्रबुद्धों के लिए प्रतिमाओं में, और आत्मज्ञानियों के लिए सर्वत्र।

पदपाठ अग्नौ तिष्ठति — अग्नि में स्थित है · विप्राणां — विप्रों (ब्राह्मणों) के लिए · हृदि — हृदय में · देवो — देव · मनीषिणाम् — मनीषियों के लिए · प्रतिमासु — प्रतिमाओं में · अप्रबुद्धानां — अप्रबुद्धों के लिए · सर्वत्र — सर्वत्र · विदितात्मनाम् — आत्मज्ञानियों के लिए

यो निन्दास्तुतिशीतोष्णसुखदुःखारिबन्धुषु ।

४५

सम आस्ते स योगीन्द्रो हर्षाहर्षविवर्जितः ॥ ४५॥

जो निन्दा-स्तुति, शीत-उष्ण, सुख-दुःख, शत्रु-बन्धु में सम रहता है, वह हर्ष और विषाद से रहित योगीन्द्र है।

पदपाठ यो — जो · निन्दास्तुतिशीतोष्णसुखदुःखारिबन्धुषु — निन्दा-स्तुति, शीत-उष्ण, सुख-दुःख, शत्रु-बन्धु में · सम आस्ते — सम रहता है · स योगीन्द्रो — वह योगीन्द्र है · हर्षाहर्षविवर्जितः — हर्ष और अहर्ष से रहित

निस्पृहो नित्यसन्तुष्टः समदर्शी जितेन्द्रियः ।

४६

आस्ते देहे प्रवासीव योगी परमतत्त्ववित् ॥ ४६॥

निस्पृह, नित्य सन्तुष्ट, समदर्शी, जितेन्द्रिय, परमतत्त्ववेत्ता योगी शरीर में प्रवासी की भाँति रहता है।

पदपाठ निस्पृहो — निस्पृह · नित्यसन्तुष्टः — नित्य सन्तुष्ट · समदर्शी — समदर्शी · जितेन्द्रियः — जितेन्द्रिय · आस्ते देहे प्रवासीव — देह में प्रवासी की तरह रहता है · योगी परमतत्त्ववित् — परम तत्त्ववेत्ता योगी

निःसङ्कल्पो निर्विकल्पो निर्लिप्तोपाधिवासनः ।

४७

निजस्वरूपनिर्मग्नः स योगी परतत्त्ववित् ॥ ४७॥

जो निःसङ्कल्प और निर्विकल्प है, जो उपाधियों की वासनाओं से निर्लिप्त है, जो अपने स्वरूप में निमग्न है — वह योगी परतत्त्ववेत्ता है।

पदपाठ निःसङ्कल्पो — निःसंकल्प · निर्विकल्पो — निर्विकल्प · निर्लिप्तोपाधिवासनः — उपाधि की वासनाओं से निर्लिप्त · निजस्वरूपनिर्मग्नः — निज स्वरूप में निमग्न · स योगी परतत्त्ववित् — वह योगी परतत्त्ववेत्ता है

यथा पङ्गवन्धबधिरक्लीबोन्मत्तजडादयः ।

४८

निवसन्ति कुलेशानि तथा योगी च तत्त्ववित् ॥ ४८॥

हे कुलेशानि! जैसे लँगड़े, अन्धे, बहरे, नपुंसक, उन्मत्त, जड़ आदि रहते हैं, वैसे ही तत्त्ववेत्ता योगी भी रहता है।

पदपाठ यथा — जैसे · पङ्गवन्धबधिरक्लीबोन्मत्तजडादयः — पंगु, अन्धे, बधिर, क्लीब, उन्मत्त, जड़ आदि · निवसन्ति — रहते हैं · कुलेशानि — हे कुलेशानि · तथा योगी च तत्त्ववित् — वैसे तत्त्ववेत्ता योगी भी

पञ्चमुद्रासमुत्पन्नपरमानन्दनिर्भरः ।

४९

य आस्ते स तु योगीन्द्रः पश्यत्यात्मानमात्मनि ॥ ४९॥

जो पञ्च मुद्राओं से उत्पन्न परमानन्द से परिपूर्ण होकर रहता है, वही योगीन्द्र है; वह आत्मा में आत्मा को देखता है।

पदपाठ पञ्चमुद्रासमुत्पन्नपरमानन्दनिर्भरः — पंच मुद्राओं से उत्पन्न परमानन्द से पूर्ण · य आस्ते — जो रहता है · स तु योगीन्द्रः — वह योगीन्द्र है · पश्यत्यात्मानमात्मनि — आत्मा में आत्मा को देखता है

अलिमांसाङ्गनासङ्गे यत् सुखं जायते प्रिये ।

५०

तदेव मोक्षो विदुषामबुधानान्तु पातकम् ॥ ५० ॥

हे प्रिये! मद्य, मांस और स्त्री के सङ्ग में जो सुख उत्पन्न होता है, वही विद्वानों के लिए मोक्ष है, किन्तु अज्ञानियों के लिए पाप।

पदपाठ अलिमांसाङ्गनासङ्गे — मद्य, मांस, स्त्री के संग में · यत् सुखं जायते — जो सुख उत्पन्न होता है · प्रिये — हे प्रिये · तदेव मोक्षो विदुषाम् — वही विद्वानों के लिए मोक्ष है · अबुधानान्तु पातकम् — पर अज्ञानियों के लिए पातक

सदा मांसासवोल्लासी सदा चरणचिन्तकः ।

५१

सदा संशयहीनो यः कुलयोगी स उच्यते ॥ ५१ ॥

जो सदा मांस और मद्य से उल्लसित रहता है, सदा (गुरु के) चरणों का चिन्तन करता है, सदा संशय से रहित है — वह कुलयोगी कहलाता है।

पदपाठ सदा मांसासवोल्लासी — सदा मांस-आसव से उल्लसित · सदा चरणचिन्तकः — सदा (गुरु के) चरणों का चिन्तक · सदा संशयहीनो यः — सदा संशय-हीन जो · कुलयोगी स उच्यते — वह कुलयोगी कहलाता है

पिबन्मद्यं पलं खादन् स्वेच्छाचारपरायणः ।

५२

अहं तदनयोरैक्यं भावयन्निवसेत् सुखी ॥ ५२ ॥

मद्य पीता हुआ, मांस खाता हुआ, स्वेच्छाचार में तत्पर, "मैं", "वह" और इन दोनों की एकता की भावना करता हुआ वह सुखपूर्वक रहता है।

पदपाठ पिबन्मद्यं — मद्य पीता · पलं खादन् — मांस खाता · स्वेच्छाचारपरायणः — स्वेच्छाचार-परायण · अहं तदनयोरैक्यं — "मैं", "वह" और इन दोनों की एकता · भावयन् — भावना करता हुआ · निवसेत् सुखी — सुखी रहे

आमिषासवसौरभ्यहीनं यस्य मुखं भवेत् ।

५३

प्रायश्चित्ती स वर्ज्यश्च पशुरेव न संशयः ॥ ५३॥

जिसका मुख मांस और मद्य की सुगन्ध से रहित है, वह प्रायश्चित्त का भागी और त्याज्य है; वह पशु ही है, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ आमिषासवसौरभ्यहीनं — मांस-आसव की सुगन्ध से रहित · यस्य मुखं भवेत् — जिसका मुख हो · प्रायश्चित्ती स — वह प्रायश्चित्ती है · वर्ज्यश्च — और त्याज्य · पशुरेव न संशयः — पशु ही है, सन्देह नहीं

यावदासवगन्धः स्यात् पशुः पशुपतिः स्वयम् ।

५४

विनालिमांसगन्धेन साक्षात् पशुपतिः पशुः ॥ ५४॥

जब तक मद्य की गन्ध रहती है, पशु स्वयं पशुपति है; मद्य और मांस की गन्ध के बिना साक्षात् पशुपति भी पशु है।

पदपाठ यावदासवगन्धः स्यात् — जब तक आसव की गन्ध हो · पशुः पशुपतिः स्वयम् — पशु स्वयं पशुपति है · विनालिमांसगन्धेन — मद्य-मांस की गन्ध के बिना · साक्षात् पशुपतिः पशुः — साक्षात् पशुपति पशु है

लोके निकृष्टमुत्कृष्टं लोकोत्कृष्टं निकृष्टकम् ।

५५

कुलमार्गं समुद्दिष्टं भैरवेण महात्मना ॥ ५५॥

लोक में जो निकृष्ट है वह उत्कृष्ट है, और लोक में जो उत्कृष्ट है वह निकृष्ट है — ऐसा कुलमार्ग महात्मा भैरव ने उपदिष्ट किया है।

पदपाठ लोके निकृष्टम् — लोक में जो निकृष्ट है · उत्कृष्टं — (वह) उत्कृष्ट है · लोकोत्कृष्टं निकृष्टकम् — लोक में उत्कृष्ट निकृष्ट है · कुलमार्गं — कुलमार्ग · समुद्दिष्टं — उपदिष्ट किया गया · भैरवेण महात्मना — महात्मा भैरव द्वारा

अनाचारः सदाचारस्त्वकार्यं कार्यमुत्तमम् ।

असत्यमपि सत्यं स्यात् कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ५६ ॥

५६

हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए अनाचार सदाचार है, अकार्य उत्तम कार्य है, और असत्य भी सत्य है।

पदपाठ अनाचारः सदाचारः — अनाचार सदाचार है · अकार्यं कार्यमुत्तमम् — अकार्य उत्तम कार्य है · असत्यमपि सत्यं स्यात् — असत्य भी सत्य है · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

अपेयमपि पेयं स्यादभक्ष्यं भक्ष्यमेव च ।

अगम्यमपि गम्यं स्यात् कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ५७ ॥

५७

हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए अपेय भी पेय है, अभक्ष्य भी भक्ष्य है, और अगम्या भी गम्या है।

पदपाठ अपेयमपि पेयं स्यात् — अपेय भी पेय है · अभक्ष्यं भक्ष्यमेव च — अभक्ष्य भक्ष्य ही है · अगम्यमपि गम्यं स्यात् — अगम्या भी गम्या है · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

न विधिर्न निषेधः स्यान्न पुण्यं न च पातकम् ।

न स्वर्गो नैव नरकं कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ५८ ॥

५८

हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए न विधि है न निषेध, न पुण्य है न पाप, न स्वर्ग है न नरक।

पदपाठ न विधिर्न निषेधः स्यात् — न विधि है न निषेध · न पुण्यं न च पातकम् — न पुण्य न पातक · न स्वर्गो नैव नरकं — न स्वर्ग न नरक · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

अनभिज्ञा अभिज्ञन्ति दरिद्रा धनयन्ति च ।

विनष्टा अपि वर्द्धन्ते कौलिकाः कुलनायिके ॥ ५९॥

५९

हे कुलनायिके! कौलिक अज्ञानी होकर भी ज्ञानी हो जाते हैं, दरिद्र होकर भी धनी हो जाते हैं, और नष्ट होकर भी बढ़ते हैं।

पदपाठ अनभिज्ञा अभिज्ञन्ति — अनभिज्ञ अभिज्ञ हो जाते हैं · दरिद्रा धनयन्ति च — और दरिद्र धनी हो जाते हैं · विनष्टा अपि वर्द्धन्ते — नष्ट हुए भी बढ़ते हैं · कौलिकाः कुलनायिके — कौलिक, हे कुलनायिके

रिपवश्चापि मित्रन्ति साक्षाद्वासन्ति भूमिपाः ।

बान्धवन्ति जनाः सर्वे कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ६०॥

६०

हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए शत्रु भी मित्र हो जाते हैं, राजा साक्षात् दास हो जाते हैं, और सब लोग बान्धव हो जाते हैं।

पदपाठ रिपवश्चापि मित्रन्ति — शत्रु भी मित्र हो जाते हैं · साक्षाद्वासन्ति भूमिपाः — राजा साक्षात् दास हो जाते हैं · बान्धवन्ति जनाः सर्वे — सब लोग बन्धु हो जाते हैं · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

विमुखाः सुमुखाः सर्वे गर्विताः प्रणयन्ति च ।

बाधकाः साधकायन्ते कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ६१॥

६१

हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए सब विमुख सुमुख हो जाते हैं, गर्वित प्रणाम करते हैं, और बाधक साधक बन जाते हैं।

पदपाठ विमुखाः सुमुखाः सर्वे — सब विमुख सुमुख हो जाते हैं · गर्विताः प्रणयन्ति च — और गर्वित प्रणत होते हैं · बाधकाः साधकायन्ते — बाधक साधक बन जाते हैं · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

निर्गुणाः सगुणायन्ते अकुलं सुकुलायते ।

अधर्माश्चापि धर्मन्ति कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ६२ ॥

६२

हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए निर्गुण सगुण हो जाते हैं, अकुल सुकुल हो जाता है, और अधर्म भी धर्म हो जाता है।

पदपाठ निर्गुणाः सगुणायन्ते — निर्गुण सगुण हो जाते हैं · अकुलं सुकुलायते — अकुल सुकुल हो जाता है · अधर्माश्चापि धर्मन्ति — अधर्म भी धर्म हो जाते हैं · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

मृत्युर्वैद्यायते देवि साक्षात् स्वर्गायते गृहम् ।

पुण्यायन्तेऽङ्गनासङ्गाः कौलिकानां कुलेश्वरि ॥ ६३ ॥

६३

हे देवि! हे कुलेश्वरि! कौलिकों के लिए मृत्यु वैद्य बन जाती है, घर साक्षात् स्वर्ग हो जाता है, और स्त्री-सङ्ग पुण्य हो जाता है।

पदपाठ मृत्युर्वैद्यायते देवि — मृत्यु वैद्य बन जाती है, हे देवि · साक्षात् स्वर्गायते गृहम् — घर साक्षात् स्वर्ग बन जाता है · पुण्यायन्तेऽङ्गनासङ्गाः — स्त्री-संग पुण्य बन जाते हैं · कौलिकानां कुलेश्वरि — कौलिकों के लिए, हे कुलेश्वरि

बहुनात्र किमुक्तेन कुलयोगीश्वराः प्रिये ।

सदा सङ्कल्पसिद्धाः स्युर्नात्र कार्या विचारणा ॥ ६४ ॥

६४

हे प्रिये! यहाँ अधिक कहने से क्या? कुलयोगीश्वर सदा सङ्कल्पसिद्ध होते हैं; इसमें विचार की आवश्यकता नहीं।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या · कुलयोगीश्वराः प्रिये — कुलयोगीश्वर, हे प्रिये · सदा सङ्कल्पसिद्धाः स्युः — सदा संकल्पसिद्ध होते हैं · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं

येन केनापि वेशेन येन केनाप्यलक्षितः ।

यत्र कुत्राश्रमे तिष्ठेत् कुलयोगी कुलेश्वरि ॥ ६५॥

६५

हे कुलेश्वरि! कुलयोगी किसी भी वेश में, किसी से भी अलक्षित, किसी भी आश्रम में रह सकता है।

पदपाठ येन केनापि वेशेन — जिस-किसी वेश में · येन केनाप्यलक्षितः — जिस-किसी से अलक्षित · यत्र कुत्राश्रमे तिष्ठेत् — जहाँ-कहीं आश्रम में रहे · कुलयोगी कुलेश्वरि — कुलयोगी, हे कुलेश्वरि

योगिनो विविधैर्वेशैर्नराणां हितकारिणः ।

भ्रमन्ति पृथिवीमेतामविज्ञातस्वरूपिणः ॥ ६६॥

६६

योगी विविध वेशों में मनुष्यों का हित करते हुए, अपने स्वरूप को अज्ञात रखकर, इस पृथ्वी पर विचरण करते हैं।

पदपाठ योगिनो — योगी · विविधैर्वेशैः — विविध वेशों में · नराणां हितकारिणः — मनुष्यों का हित करने वाले · भ्रमन्ति पृथिवीमेताम् — इस पृथ्वी पर भ्रमण करते हैं · अविज्ञातस्वरूपिणः — अपना स्वरूप अज्ञात रखते

सकृन्नैवात्मविज्ञानं क्षपयन्ति कुलेश्वरि ।

उन्मत्तमूकजडवन्निवसेल्लोकमध्यतः ॥ ६७॥

६७

हे कुलेश्वरि! वे आत्मज्ञान को एक बार भी नहीं खोते; योगी उन्मत्त, मूक और जड़ की भाँति लोगों के बीच रहे।

पदपाठ सकृन्नैव — एक बार भी नहीं · आत्मविज्ञानं — आत्मविज्ञान · क्षपयन्ति — खोते हैं · कुलेश्वरि — हे कुलेश्वरि · उन्मत्तमूकजडवत् — उन्मत्त, मूक, जड़ की तरह · निवसेल्लोकमध्यतः — लोगों के बीच रहे

अलक्ष्यो हि यथा लोके व्योम्नि चन्द्रार्कयोगतः ।

६८

नक्षत्राणां ग्रहाणाञ्च तथा वृत्तन्तु योगिनाम् ॥ ६८ ॥

जैसे लोक में आकाश में चन्द्र और सूर्य के योग से नक्षत्रों और ग्रहों की गति अलक्षित रहती है, वैसा ही योगियों का आचरण है।

पदपाठ अलक्ष्यो हि यथा लोके — जैसे लोक में अलक्ष्य है · व्योम्नि — आकाश में · चन्द्रार्कयोगतः — चन्द्र-सूर्य के योग से · नक्षत्राणां ग्रहाणाञ्च — नक्षत्रों और ग्रहों का · तथा वृत्तन्तु योगिनाम् — वैसे योगियों का आचरण है

आकाशे पक्षिणां देवि जलेऽपि जलचारिणाम् ।

६९

यथा गतिर्न दृश्येत तथा वृत्तं हि योगिनाम् ॥ ६९ ॥

हे देवि! जैसे आकाश में पक्षियों की और जल में जलचरों की गति दिखाई नहीं देती, वैसा ही योगियों का आचरण है।

पदपाठ आकाशे पक्षिणां देवि — आकाश में पक्षियों का, हे देवि · जलेऽपि जलचारिणाम् — और जल में जलचरों का · यथा गतिर्न दृश्येत — जैसे मार्ग नहीं दिखता · तथा वृत्तं हि योगिनाम् — वैसे ही योगियों का आचरण है

असन्त इव भाषन्ते चरन्त्यज्ञा इव प्रिये ।

७०

पामरा इव दृश्यन्ते कुलयोग विशारदाः ॥ ७० ॥

हे प्रिये! कुलयोग में विशारद योगी असज्जनों की भाँति बोलते हैं, अज्ञानियों की भाँति आचरण करते हैं, और पामरों की भाँति दिखाई देते हैं।

पदपाठ असन्त इव भाषन्ते — असज्जनों की तरह बोलते हैं · चरन्त्यज्ञा इव — अज्ञानियों की तरह चलते हैं · प्रिये — हे प्रिये · पामरा इव दृश्यन्ते — पामरों की तरह दिखते हैं · कुलयोग विशारदाः — कुलयोग में निपुण

जना यथावमन्यन्ते गच्छेयुर्नैव सङ्गतिम् ।

न किञ्चिदपि भाषन्ते तथा योगी प्रवर्तते ॥ ७१ ॥

७१

योगी ऐसा आचरण करता है कि लोग उसका अपमान करें, उसका सङ्ग न करें, और उससे कुछ भी न बोलें।

पदपाठ जना यथावमन्यन्ते — जैसे लोग अवमानना करें · गच्छेयुर्नैव सङ्गतिम् — और संगति न करें · न किञ्चिदपि भाषन्ते — और कुछ भी न बोलें · तथा योगी प्रवर्तते — वैसे योगी आचरण करता है

मुक्तोऽपि बालवत् क्रीडेत् कुलेशो जडवच्चरेत् ।

वदेदुन्मत्तवद्विद्वान् कुलयोगी महेश्वरि ॥ ७२ ॥

७२

हे महेश्वरि! मुक्त होने पर भी कुलेश बालक की भाँति क्रीड़ा करे, जड़ की भाँति चले, और विद्वान् कुलयोगी उन्मत्त की भाँति बोले।

पदपाठ मुक्तोऽपि — मुक्त होकर भी · बालवत् क्रीडेत् — बालक की तरह खेले · कुलेशो — कुलेश (कुलगुरु) · जडवच्चरेत् — जड़ की तरह चले · वदेदुन्मत्तवद्विद्वान् — विद्वान् उन्मत्त की तरह बोले · कुलयोगी महेश्वरि — कुलयोगी, हे महेश्वरि

यथा हसति लोकोऽयं जुगुप्सति च कुत्सति ।

विलोक्य दूरतो याति तथा योगी प्रवर्तते ॥ ७३ ॥

७३

योगी ऐसा आचरण करता है कि यह लोक उस पर हँसे, घृणा करे, निन्दा करे, और उसे देखकर दूर चला जाए।

पदपाठ यथा हसति लोकोऽयं — जैसे यह लोक हँसे · जुगुप्सति च कुत्सति — घृणा करे और निन्दा करे · विलोक्य दूरतो याति — देखकर दूर चला जाए · तथा योगी प्रवर्तते — वैसे योगी आचरण करता है

क्वचिच्छिष्टः क्वचिद्भ्रष्टः क्वचिद् भूतपिशाचवत् ।

७४

नानावेशधरो योगी विचरेज्जगतीतले ॥ ७४॥

कहीं शिष्ट, कहीं भ्रष्ट, कहीं भूत-पिशाच की भाँति — नाना वेश धारण करने वाला योगी पृथ्वीतल पर विचरण करता है।

पदपाठ क्वचिच्छिष्टः — कहीं शिष्ट · क्वचिद्भ्रष्टः — कहीं भ्रष्ट · क्वचिद् भूतपिशाचवत् — कहीं भूत-पिशाच की तरह · नानावेशधरो योगी — नाना वेश धारण करने वाला योगी · विचरेज्जगतीतले — पृथ्वी पर विचरण करे

योगी लोकोपकाराय भोगान् भुङ्क्ते न काङ्क्षया ।

७५

अनुगृह्णन् जनान् सर्वान् क्रीडेच्च पृथिवीतले ॥ ७५॥

योगी लोकोपकार के लिए भोगों को भोगता है, आकांक्षा से नहीं; सब जनों पर अनुग्रह करता हुआ वह पृथ्वीतल पर क्रीड़ा करता है।

पदपाठ योगी लोकोपकाराय — योगी लोक के उपकार के लिए · भोगान् भुङ्क्ते — भोग भोगता है · न काङ्क्षया — आकांक्षा से नहीं · अनुगृह्णन् जनान् सर्वान् — सब लोगों पर अनुग्रह करते हुए · क्रीडेच्च पृथिवीतले — पृथ्वी पर क्रीड़ा करे

सर्वशोषी यथा सूर्यः सर्वभोगी यथाऽनलः ।

७६

योगी भुक्त्वाखिलान् भोगान् तथा पापैर्न लिप्यते ॥ ७६॥

जैसे सूर्य सबको सोखता है और अग्नि सबको भोगती है, वैसे ही योगी समस्त भोगों को भोगकर भी पापों से लिप्त नहीं होता।

पदपाठ सर्वशोषी यथा सूर्यः — जैसे सब सुखाने वाला सूर्य · सर्वभोगी यथाऽनलः — जैसे सब भोगने वाली अग्नि · योगी भुक्त्वाखिलान् भोगान् — योगी समस्त भोग भोगकर · तथा पापैर्न लिप्यते — वैसे पापों से लिप्त नहीं होता

सर्वस्पर्शी यथा वायुर्यथाकाशश्च सर्वगः ।

७७

सर्वे यथा नदीस्नातास्तथा योगी सदा शुचिः ॥ ७७ ॥

जैसे सबको स्पर्श करने वाला वायु, सर्वव्यापी आकाश, और नदी में स्नान किये हुए सब लोग शुद्ध हैं, वैसे ही योगी सदा शुचि है।

पदपाठ सर्वस्पर्शी यथा वायुः — जैसे सब स्पर्श करने वाला वायु · यथाकाशश्च सर्वगः — जैसे सर्वगत आकाश · सर्वे यथा नदीस्नाताः — जैसे नदी में स्नान किए सब · तथा योगी सदा शुचिः — वैसे योगी सदा शुचि है

यथा ग्रामगतं तोयं नदीयुक्तं भवेच्छुचि ।

७८

तथा म्लेच्छगृहान्नादि योगिहस्तार्पितं शुचि ॥ ७८ ॥

जैसे गाँव का जल नदी में मिलकर शुद्ध हो जाता है, वैसे ही म्लेच्छ के घर का अन्न आदि योगी के हाथ में अर्पित होकर शुद्ध हो जाता है।

पदपाठ यथा ग्रामगतं तोयं — जैसे गाँव का जल · नदीयुक्तं भवेच्छुचि — नदी से मिलकर शुद्ध हो जाता है · तथा म्लेच्छगृहान्नादि — वैसे म्लेच्छ के घर का अन्न आदि · योगिहस्तार्पितं शुचि — योगी के हाथ में अर्पित होने पर शुद्ध

यथाऽऽचरन्ति देवेशि कुलज्ञानविशारदाः ।

७९

तदेव विदुषां मान्यमात्मनो हितकाङ्क्षिणाम् ॥ ७९ ॥

हे देवेशि! कुलज्ञान में विशारद जैसा आचरण करते हैं, वही अपना हित चाहने वाले विद्वानों के लिए मान्य है।

पदपाठ यथाऽऽचरन्ति देवेशि — जैसा आचरण करते हैं, हे देवेशि · कुलज्ञानविशारदाः — कुलज्ञान में निपुण · तदेव विदुषां मान्यम् — वही विद्वानों के लिए मान्य है · आत्मनो हितकाङ्क्षिणाम् — जो अपना हित चाहते हैं

यस्मिंश्चरन्ति योगीशाः सा मार्गः परमो मतः ।

यस्यामुदेति सूर्यो हि पूर्वाशा सा निगद्यते ॥ ८० ॥

८०

जिसमें योगीश्वर चलते हैं, वही परम मार्ग माना गया है; जिस दिशा में सूर्य उदय होता है, वही पूर्व दिशा कहलाती है।

पदपाठ यस्मिंश्चरन्ति योगीशाः — जिसमें योगीश चलते हैं · सा मार्गः परमो मतः — वह मार्ग परम माना गया है · यस्यामुदेति सूर्यो हि — जिस (दिशा) में सूर्य उदित होता है · पूर्वाशा सा निगद्यते — वह पूर्व दिशा कहलाती है

यत्र यत्र गजो याति तत्र मार्गो यथा भवेत् ।

कुलयोगी चरेद् यत्र स स मार्गः कुलेश्वरि ॥ ८१ ॥

८१

हे कुलेश्वरि! जैसे हाथी जहाँ-जहाँ जाता है वहाँ मार्ग बन जाता है, वैसे ही कुलयोगी जहाँ चलता है, वही मार्ग है।

पदपाठ यत्र यत्र गजो याति — जहाँ-जहाँ हाथी जाता है · तत्र मार्गो यथा भवेत् — वहाँ जैसे मार्ग बन जाता है · कुलयोगी चरेद् यत्र — कुलयोगी जहाँ चले · स स मार्गः कुलेश्वरि — वही मार्ग है, हे कुलेश्वरि

नदीं वक्रामृजुं कर्तुं निरोद्धुं तत्प्रवाहकम् ।

स्वेच्छाविहारिणं शान्तं को वा वारयितुं क्षमः ॥ ८२ ॥

८२

टेढ़ी नदी को सीधा करने, उसके प्रवाह को रोकने, और स्वेच्छा से विहार करने वाले शान्त योगी को रोकने में कौन समर्थ है?

पदपाठ नदीं वक्रामृजुं कर्तुं — टेढ़ी नदी को सीधा करने में · निरोद्धुं तत्प्रवाहकम् — उसके प्रवाह को रोकने में · स्वेच्छाविहारिणं शान्तं — स्वेच्छा से विहार करने वाले शान्त को · को वा वारयितुं क्षमः — कौन रोकने में समर्थ है?

यद्वन्मन्त्रबलोपेतः क्रीडनीयैर्न दृश्यते ।

तद्वन्न दृश्यते ज्ञानी क्रीडन्निन्द्रियपन्नगैः ॥ ८३ ॥

८३

जैसे मन्त्रबल से युक्त पुरुष अपने खिलौने-सर्पों से क्षति नहीं पाता, वैसे ही इन्द्रियरूपी सर्पों से खेलता हुआ ज्ञानी क्षति नहीं पाता।

पदपाठ यद्वन्मन्त्रबलोपेतः — जैसे मन्त्र-बल से युक्त · क्रीडनीयैर्न दृश्यते — खिलाए जाने वाले (सर्पों) से हानि नहीं पाता · तद्वन्न दृश्यते ज्ञानी — वैसे ज्ञानी हानि नहीं पाता · क्रीडन्निन्द्रियपन्नगैः — इन्द्रिय-सर्पों से खेलते हुए

निवृत्तदुःखसन्तुष्टा निर्द्वन्द्वा गतमत्सराः ।

कुलज्ञानरताः शान्तास्त्वद्भक्तास्ते च कौलिकाः ॥ ८४ ॥

८४

जिनके दुःख निवृत्त हो गये हैं, जो सन्तुष्ट, निर्द्वन्द्व, मत्सररहित, कुलज्ञान में रत, शान्त और तुम्हारे भक्त हैं — वे ही कौलिक हैं।

पदपाठ निवृत्तदुःखसन्तुष्टाः — दुःख निवृत्त, सन्तुष्ट · निर्द्वन्द्वाः — निर्द्वन्द्व · गतमत्सराः — मात्सर्य-रहित · कुलज्ञानरताः — कुलज्ञान में रत · शान्ताः — शान्त · त्वद्भक्ताः — तुम्हारे भक्त · ते च कौलिकाः — वे कौलिक हैं

अमदक्रोधदम्भाशाहङ्काराः सत्यवादिनः ।

कौलिकेन्द्रा ह्यचपला ये नेन्द्रियवशानुगाः ॥ ८५ ॥

८५

जो मद, क्रोध, दम्भ, आशा और अहंकार से रहित, सत्यवादी, अचपल हैं, और इन्द्रियों के वश में नहीं चलते — वे कौलिकेन्द्र हैं।

पदपाठ अमदक्रोधदम्भाशाहङ्काराः — मद, क्रोध, दम्भ, आशा, अहंकार से रहित · सत्यवादिनः — सत्यवादी · कौलिकेन्द्राः — कौलिकेन्द्र · ह्यचपलाः — अचपल · ये नेन्द्रियवशानुगाः — जो इन्द्रियों के वश में नहीं चलते

कीर्त्यमाने कुले येषां रोमाञ्चो गद्गदस्वरः ।

आनन्दाश्रु पतेद्देवि कथिताः कौलिकोत्तमाः ॥ ८६ ॥

८६

हे देवि! कुल का कीर्तन होने पर जिनके रोमाञ्च हो जाता है, स्वर गद्गद हो जाता है, और आनन्द के आँसू गिरते हैं — वे कौलिकोत्तम कहे गये हैं।

पदपाठ कीर्त्यमाने कुले — कुल का कीर्तन होने पर · येषां — जिनके · रोमाञ्चो — रोमांच · गद्गदस्वरः — गद्गद स्वर · आनन्दाश्रु पतेद्देवि — आनन्द के अश्रु गिरें, हे देवि · कथिताः कौलिकोत्तमाः — वे कौलिकोत्तम कहे गए हैं

सर्वधर्माधिको लोके कुलधर्मः शिवोदितः ।

इति ते निश्चितधियः प्रोक्तास्ते कौलिकोत्तमाः ॥ ८७ ॥

८७

"शिव द्वारा कथित कुलधर्म लोक में सब धर्मों से श्रेष्ठ है" — ऐसी निश्चित बुद्धि वाले कौलिकोत्तम कहे गये हैं।

पदपाठ सर्वधर्माधिको लोके — लोक में सब धर्मों से अधिक · कुलधर्मः शिवोदितः — शिव द्वारा कहा कुलधर्म है · इति ते निश्चितधियः — ऐसी निश्चित बुद्धि वाले · प्रोक्तास्ते कौलिकोत्तमाः — वे कौलिकोत्तम कहे गए हैं

यो भवेत् कुलतत्त्वज्ञः कुलशास्त्रविशारदः ।

कुलार्चनरतः स स्यात् कौलिको नापरः प्रिये ॥ ८८ ॥

८८

हे प्रिये! जो कुलतत्त्व का ज्ञाता, कुलशास्त्र में विशारद और कुलार्चन में रत है, वही कौलिक है, अन्य नहीं।

पदपाठ यो भवेत् कुलतत्त्वज्ञः — जो कुलतत्त्वज्ञ हो · कुलशास्त्रविशारदः — कुलशास्त्र में निपुण · कुलार्चनरतः — कुलार्चन में रत · स स्यात् कौलिको — वह कौलिक है · नापरः प्रिये — दूसरा नहीं, हे प्रिये

कुलभक्तान् कुलज्ञानान् कुलाचारकुलव्रतान् ।

प्रीतो भवति यो दृष्ट्वा कौलिकः स च मे प्रियः ॥ ८९॥

८९

जो कुलभक्तों, कुलज्ञानियों और कुलाचार-कुलव्रत का पालन करने वालों को देखकर प्रसन्न होता है, वह कौलिक है और मुझे प्रिय है।

पदपाठ कुलभक्तान् — कुलभक्तों को · कुलज्ञानान् — कुलज्ञानियों को · कुलाचारकुलव्रतान् — कुलाचार और कुलव्रत वालों को · प्रीतो भवति यो दृष्ट्वा — देखकर जो प्रसन्न होता है · कौलिकः स च मे प्रियः — वह कौलिक है और मुझे प्रिय है

तत्त्वत्रयश्रीचरणमूलमन्त्रार्थतत्त्ववित् ।

देवतागुरुभक्ताश्च कौलिकः स्याच्च दीक्षया ॥ ९०॥

९०

तत्त्वत्रय, श्रीचरण और मूलमन्त्र के अर्थ-तत्त्व को जानने वाला, देवता और गुरु का भक्त — दीक्षा से कौलिक होता है।

पदपाठ तत्त्वत्रयश्रीचरणमूलमन्त्रार्थतत्त्ववित् — तत्त्वत्रय, श्रीचरण, मूलमन्त्र के अर्थ का तत्त्ववेत्ता · देवतागुरुभक्ताश्च — और देवता-गुरु के भक्त · कौलिकः स्याच्च दीक्षया — दीक्षा से कौलिक होता है

दुर्लभं सर्वलोकेषु कुलाचार्यस्य दर्शनम् ।

सुपाकेनैव पुण्यानां लभ्यते नान्यथा प्रिये ॥ ९१॥

९१

हे प्रिये! सब लोकों में कुलाचार्य का दर्शन दुर्लभ है; वह पुण्यों के सुपाक से ही मिलता है, अन्यथा नहीं।

पदपाठ दुर्लभं सर्वलोकेषु — सब लोकों में दुर्लभ है · कुलाचार्यस्य दर्शनम् — कुलाचार्य का दर्शन · सुपाकेनैव पुण्यानां — पुण्यों के सुपाक से ही · लभ्यते — प्राप्त होता है · नान्यथा प्रिये — अन्यथा नहीं, हे प्रिये

संस्मृतः कीर्तितो दृष्टो वन्दिनो भाषितोऽपि वा ।

पुनाति कुलधर्मिष्ठश्चाण्डालोऽपि यदृच्छया ॥ ९२ ॥

९२

कुलधर्म में निष्ठ पुरुष, चाण्डाल होने पर भी, यदृच्छया स्मरण, कीर्तन, दर्शन, वन्दन या सम्भाषण किये जाने पर पवित्र कर देता है।

पदपाठ संस्मृतः — स्मरण किया गया · कीर्तितो — कीर्तित · दृष्टो — देखा गया · वन्दिनो — वन्दित · भाषितोऽपि वा — या बोला गया भी · पुनाति — पवित्र करता है · कुलधर्मिष्ठः — कुलधर्मनिष्ठ · चाण्डालोऽपि — चाण्डाल भी हो · यदृच्छया — यदृच्छा से

सर्वज्ञो वापि मूर्खो वाप्युत्तमो वाऽधमोऽपि वा ।

यत्र देवि कुलज्ञानी तत्राहज्य त्वया सह ॥ ९३ ॥

९३

हे देवि! चाहे सर्वज्ञ हो या मूर्ख, उत्तम हो या अधम — जहाँ कुलज्ञानी है, वहाँ मैं तुम्हारे साथ हूँ।

पदपाठ सर्वज्ञो वापि — सर्वज्ञ हो · मूर्खो वा — या मूर्ख · अप्युत्तमो वा — उत्तम हो · अधमोऽपि वा — या अधम भी · यत्र देवि कुलज्ञानी — जहाँ, हे देवि, कुलज्ञानी है · तत्राहज्य त्वया सह — वहाँ मैं तुम्हारे साथ हूँ

नाहं वसामि कैलासे न मेरौ न च मन्दिरे ।

कुलज्ञा यत्र तिष्ठन्ति तत्र तिष्ठामि भामिनि ॥ ९४ ॥

९४

हे भामिनि! मैं न कैलास में रहता हूँ, न मेरु में, न मन्दर में; जहाँ कुलज्ञानी रहते हैं, वहीं मैं रहता हूँ।

पदपाठ नाहं वसामि कैलासे — मैं कैलास में नहीं रहता · न मेरौ — न मेरु में · न च मन्दिरे — न मन्दर में · कुलज्ञा यत्र तिष्ठन्ति — जहाँ कुलज्ञ रहते हैं · तत्र तिष्ठामि भामिनि — वहाँ मैं रहता हूँ, हे भामिनि

सुदूरमपि गन्तव्यं यत्र माहेश्वरो जनः ।

द्रष्टव्यञ्च प्रयत्नेन तत्र सन्निहितो ह्यहम् ॥ ९५ ॥

९५

जहाँ माहेश्वर जन हो वहाँ बहुत दूर भी जाना चाहिए और प्रयत्नपूर्वक उसका दर्शन करना चाहिए, क्योंकि वहाँ मैं सन्निहित हूँ।

पदपाठ सुदूरमपि गन्तव्यं — बहुत दूर भी जाना चाहिए · यत्र माहेश्वरो जनः — जहाँ माहेश्वर जन (शिवभक्त) हो · द्रष्टव्यञ्च प्रयत्नेन — और यत्न से दर्शन करना चाहिए · तत्र सन्निहितो ह्यहम् — वहाँ मैं सन्निहित हूँ

अतिदूरस्थितो वापि द्रष्टव्यः कुलदेशिकः ।

समीपे वर्तमानोऽपि न द्रष्टव्यः पशुः प्रिये ॥ ९६ ॥

९६

हे प्रिये! अति दूर स्थित होने पर भी कुलदेशिक का दर्शन करना चाहिए; समीप होने पर भी पशु का दर्शन नहीं करना चाहिए।

पदपाठ अतिदूरस्थितो वापि — अति दूर स्थित हो तो भी · द्रष्टव्यः कुलदेशिकः — कुलदेशिक (कुलगुरु) दर्शनीय है · समीपे वर्तमानोऽपि — समीप में हो तो भी · न द्रष्टव्यः पशुः प्रिये — पशु दर्शनीय नहीं, हे प्रिये

कुलज्ञानी वसेद् यत्र स देशः पुण्यभाक् ततः ।

दर्शनादर्चनात्तस्य त्रिसप्तकुलमुद्धरेत् ॥ ९७ ॥

९७

जहाँ कुलज्ञानी रहता है, वह देश उससे पुण्यभागी हो जाता है; उसके दर्शन और अर्चन से इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार होता है।

पदपाठ कुलज्ञानी वसेद् यत्र — कुलज्ञानी जहाँ रहे · स देशः पुण्यभाक् ततः — वह देश उससे पुण्य का भागी है · दर्शनादर्चनात्तस्य — उसके दर्शन और अर्चन से · त्रिसप्तकुलमुद्धरेत् — इक्कीस कुलों (पीढ़ियों) का उद्धार करता है

कुलज्ञानिनमालोक्य स्वसन्तानगृहे स्थितम् ।
शंसन्ति पितरस्तस्य यास्यामः परमां गतिम् ॥ ९८ ॥

९८

अपने वंशज के घर में स्थित कुलज्ञानी को देखकर उसके पितर कहते हैं — "हम परम गति को प्राप्त होंगे।"

पदपाठ कुलज्ञानिनमालोक्य — कुलज्ञानी को देखकर · स्वसन्तानगृहे स्थितम् — अपने सन्तान के घर में स्थित · शंसन्ति पितरस्तस्य — उसके पितर कहते हैं · यास्यामः परमां गतिम् — "हम परम गति को जाएँगे"

समाश्वसन्ति पितरः सुवृष्टिमिव कर्षकाः ।
योऽस्मत्कुलेषु पुत्रो वा पौत्रो वा कौलिको भवेत् ॥ ९९ ॥

९९

जैसे किसान अच्छी वर्षा से आश्वस्त होते हैं, वैसे ही पितर आश्वस्त होते हैं — "हमारे कुल में पुत्र या पौत्र कौलिक हुआ है।"

पदपाठ समाश्वसन्ति पितरः — पितर आश्वस्त होते हैं · सुवृष्टिमिव कर्षकाः — जैसे किसान सुवृष्टि से · योऽस्मत्कुलेषु — "जो हमारे कुल में" · पुत्रो वा पौत्रो वा — "पुत्र या पौत्र" · कौलिको भवेत् — "कौलिक हुआ"

स धन्यः खलु लोकेऽस्मिन् पुरुषः क्षीणकल्मषः ।
यत्समीपं समायान्ति कुलाचार्या मुदा प्रिये ॥ १०० ॥

१००

हे प्रिये! इस लोक में वह पुरुष धन्य और क्षीणपाप है, जिसके समीप कुलाचार्य प्रसन्नतापूर्वक आते हैं।

पदपाठ स धन्यः खलु लोकेऽस्मिन् — वह इस लोक में धन्य है · पुरुषः क्षीणकल्मषः — क्षीण पाप वाला पुरुष · यत्समीपं समायान्ति — जिसके पास आते हैं · कुलाचार्या मुदा प्रिये — कुलाचार्य प्रसन्नता से, हे प्रिये

कौलिकेन्द्रे समायाते कौलिकावसथं प्रति ।

१०१

समायान्ति मुदा देवि योगिन्यो योगिभिः सह ॥ १०१ ॥

हे देवि! जब कौलिकेन्द्र किसी कौलिक के घर आता है, तब योगिनियाँ योगियों सहित प्रसन्नतापूर्वक वहाँ आती हैं।

पदपाठ कौलिकेन्द्रे समायाते — कौलिकेन्द्र के आने पर · कौलिकावसथं प्रति — कौलिक के आवास में · समायान्ति मुदा देवि — प्रसन्नता से आती हैं, हे देवि · योगिन्यो योगिभिः सह — योगिनियाँ योगियों सहित

प्रविश्य कुलयोगीन्द्रं भजन्ते पितृदेवताः ।

१०२

तस्मात् सम्पूजयेद्भक्त्या कुलज्ञानपरायणान् ॥ १०२ ॥

पितर और देवता प्रवेश करके कुलयोगीन्द्र की सेवा करते हैं; इसलिए कुलज्ञान में परायण जनों की भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए।

पदपाठ प्रविश्य — प्रवेश कर · कुलयोगीन्द्रं — कुलयोगीन्द्र की · भजन्ते — सेवा करते हैं · पितृदेवताः — पितर और देवता · तस्मात् — इसलिए · सम्पूजयेद्भक्त्या — भक्ति से पूजा करे · कुलज्ञानपरायणान् — कुलज्ञान-परायणों की

अभ्यर्चयित्वा त्वां देवि त्वद्भक्तान्नार्चयन्ति ये ।

१०३

पापिष्ठास्त्वत्प्रसादस्य भाजनं न भवन्ति ते ॥ १०३ ॥

हे देवि! जो तुम्हारी पूजा करके तुम्हारे भक्तों की पूजा नहीं करते, वे पापिष्ठ हैं और तुम्हारे प्रसाद के पात्र नहीं होते।

पदपाठ अभ्यर्चयित्वा त्वां देवि — तुम्हारी पूजा करके, हे देवि · त्वद्भक्तान्नार्चयन्ति ये — जो तुम्हारे भक्तों की पूजा नहीं करते · पापिष्ठाः — अति पापी · त्वत्प्रसादस्य — तुम्हारे प्रसाद के · भाजनं न भवन्ति ते — पात्र नहीं होते

नैवेद्यं पुरतो न्यस्तं दर्शनात् स्वीकृतं त्वया ।

१०४

रसान् भक्तस्य जिह्वाग्रादश्रामि कमलेक्षणे ॥ १०४ ॥

हे कमललोचने! सामने रखा हुआ नैवेद्य तुम दर्शन मात्र से स्वीकार करती हो; किन्तु मैं उसके रसों को भक्त की जिह्वा के अग्रभाग से खाता हूँ।

पदपाठ नैवेद्यं पुरतो न्यस्तं — सामने रखा नैवेद्य · दर्शनात् स्वीकृतं त्वया — तुमने दर्शन से स्वीकार किया · रसान् भक्तस्य — भक्त के रसों को · जिह्वाग्रादश्रामि — मैं जिह्वा के अग्र से खाता हूँ · कमलेक्षणे — हे कमलनयने

त्वद्भक्तपूजनादेवि पूजितोऽहं न संशयः ।

१०५

तस्मान्मम प्रियाकाङ्क्षी त्वद्भक्तानेव पूजयेत् ॥ १०५ ॥

हे देवि! तुम्हारे भक्तों की पूजा से मैं पूजित होता हूँ, इसमें संशय नहीं; इसलिए मेरा प्रिय चाहने वाला तुम्हारे भक्तों की ही पूजा करे।

पदपाठ त्वद्भक्तपूजनादेवि — तुम्हारे भक्तों की पूजा से, हे देवि · पूजितोऽहं न संशयः — मैं पूजित हूँ, सन्देह नहीं · तस्मान्मम प्रियाकाङ्क्षी — इसलिए मेरी प्रीति चाहने वाला · त्वद्भक्तानेव पूजयेत् — तुम्हारे भक्तों की ही पूजा करे

यत् कृतं कुलनिष्ठानां तद्देवानां कृतं भवेत् ।

१०६

सुराः कुलप्रियाः सर्वे तस्मात् कौलिकमर्चयेत् ॥ १०६ ॥

जो कुलनिष्ठों के लिए किया जाता है, वह देवताओं के लिए किया हुआ होता है; सब देवता कुल के प्रिय हैं; इसलिए कौलिक की पूजा करे।

पदपाठ यत् कृतं कुलनिष्ठानां — जो कुलनिष्ठों के लिए किया गया · तद्देवानां कृतं भवेत् — वह देवों के लिए किया गया है · सुराः कुलप्रियाः सर्वे — सब देव कुल-प्रिय हैं · तस्मात् कौलिकमर्चयेत् — इसलिए कौलिक की पूजा करे

न तुष्याम्यहमन्यत्र तथा भक्त्या सुपूजितः ।
कौलिकेन्द्रेऽर्चिते सम्यक् यथा तुष्यामि पार्वति ॥ १०७ ॥

१०७

हे पार्वति! अन्यत्र भक्तिपूर्वक भली-भाँति पूजित होने पर मैं उतना प्रसन्न नहीं होता, जितना कौलिकेन्द्र की सम्यक् अर्चना होने पर प्रसन्न होता हूँ।

पदपाठ न तुष्याम्यहमन्यत्र — मैं अन्यत्र (वैसा) तुष्ट नहीं होता · तथा भक्त्या सुपूजितः — जैसे भक्ति से सुपूजित · कौलिकेन्द्रेऽर्चिते सम्यक् — कौलिकेन्द्र के सम्यक् पूजित होने पर · यथा तुष्यामि पार्वति — जैसे मैं तुष्ट होता हूँ, हे पार्वति

यत् फलं कौलिकेन्द्राणां पूजया लभते प्रिये ।

तत् फलं नाप्नुयात्तीर्थतपोदानमखव्रतैः ॥ १०८ ॥

१०८

हे प्रिये! कौलिकेन्द्रों की पूजा से जो फल मिलता है, वह फल तीर्थ, तप, दान, यज्ञ और व्रतों से नहीं मिलता।

पदपाठ यत् फलं — जो फल · कौलिकेन्द्राणां पूजया — कौलिकेन्द्रों की पूजा से · लभते प्रिये — पाता है, हे प्रिये · तत् फलं नाप्नुयात् — वह फल नहीं पाता · तीर्थतपोदानमखव्रतैः — तीर्थ, तप, दान, यज्ञ, व्रतों से

दत्तमिष्टं हुतं तप्तं पूजितं जप्तमम्बिके ।

कौलिकस्य भवेद्द्वयर्थं कुलज्ञं योऽवमानयेत् ॥ १०९ ॥

१०९

हे अम्बिके! जो कौलिक किसी कुलज्ञ का अपमान करता है, उसका दिया हुआ दान, यज्ञ, होम, तप, पूजा और जप सब व्यर्थ हो जाता है।

पदपाठ दत्तमिष्टं हुतं तप्तं — दिया, यज्ञ किया, हवन किया, तप किया · पूजितं जप्तमम्बिके — पूजा किया, जप किया, हे अम्बिके · कौलिकस्य भवेद्द्वयर्थं — कौलिक का व्यर्थ हो जाता है · कुलज्ञं योऽवमानयेत् — जो कुलज्ञ का अपमान करे

श्मशानं तद् गृहं देवि स पापी श्वपचाधमः ।

११०

यः प्रविश्य कुलं धर्मं कुलाचारं न वेत्ति चेत् ॥ ११० ॥

हे देवि! जो कुल में प्रवेश करके भी उसके धर्म और कुलाचार को नहीं जानता, उसका घर श्मशान है और वह पापी श्वपच से भी अधम है।

पदपाठ श्मशानं तद् गृहं देवि — वह घर श्मशान है, हे देवि · स पापी श्वपचाधमः — वह पापी श्वपच से अधम है · यः प्रविश्य कुलं — जो कुल में प्रवेश करके · धर्मं कुलाचारं — धर्म, कुलाचार · न वेत्ति चेत् — यदि नहीं जानता

कुलनिष्ठान् परित्यज्य यच्चान्यस्मै प्रदीयते ।

१११

तद्दानं निष्फलं देवि दाता च नरकं व्रजेत् ॥ १११ ॥

हे देवि! कुलनिष्ठों को छोड़कर जो अन्य को दिया जाता है, वह दान निष्फल है और दाता नरक में जाता है।

पदपाठ कुलनिष्ठान् परित्यज्य — कुलनिष्ठों को छोड़कर · यच्चान्यस्मै प्रदीयते — जो दूसरे को दिया जाता है · तद्दानं निष्फलं देवि — वह दान निष्फल है, हे देवि · दाता च नरकं व्रजेत् — और दाता नरक में जाता है

भिन्नभाण्डे जलं यद्वत् शिलायामुप्तबीजवत् ।

११२

भस्मनीव हुतं हव्यं तद्वद्दानमकौलिके ॥ ११२ ॥

जैसे फूटे घड़े में जल, जैसे पत्थर पर बोया हुआ बीज, जैसे भस्म में डाली हुई आहुति — वैसा ही अकौलिक को दिया हुआ दान है।

पदपाठ भिन्नभाण्डे जलं यद्वत् — जैसे फूटे बर्तन में जल · शिलायामुप्तबीजवत् — जैसे शिला पर बोया बीज · भस्मनीव हुतं हव्यं — जैसे भस्म में डाला हव्य · तद्वद्दानमकौलिके — वैसा अकौलिक को दान

यथाशक्त्या तु यत् किञ्चिद् यो दद्यात् कुलयोगिने ।

११३

विशेषतिथिषु प्रीत्या तत्फलं नैव वर्ण्यते ॥ ११३ ॥

जो यथाशक्ति कुछ भी विशेष तिथियों में प्रेमपूर्वक कुलयोगी को देता है, उसका फल वर्णन नहीं किया जा सकता।

पदपाठ यथाशक्त्या तु — यथाशक्ति · यत् किञ्चिद् — जो कुछ · यो दद्यात् कुलयोगिने — जो कुलयोगी को दे · विशेषतिथिषु प्रीत्या — विशेष तिथियों में प्रीति से · तत्फलं नैव वर्ण्यते — उसका फल वर्णन नहीं किया जा सकता

यो देवि स्वयमाहूय कुलज्ञानान् शुभे दिने ।

११४

अभ्यर्च्य देवताबुद्ध्या गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ११४ ॥

हे देवि! जो शुभ दिन में स्वयं कुलज्ञानियों को बुलाकर, देवता-बुद्धि से गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से उनकी पूजा करके,

पदपाठ यो देवि — जो, हे देवि · स्वयमाहूय — स्वयं बुलाकर · कुलज्ञानान् शुभे दिने — कुलज्ञानियों को शुभ दिन में · अभ्यर्च्य देवताबुद्ध्या — देवता-बुद्धि से पूजकर · गन्धपुष्पाक्षतादिभिः — गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से

मादिभिः पञ्चमुद्राभिः सद्भक्त्या परितोषयेत् ।

११५

तेषु तुष्टेष्वहं तुष्टस्तुष्टाः स्युः सर्वदेवताः ॥ ११५ ॥

"म"-कारादि पञ्च मुद्राओं से सद्भक्तिपूर्वक उन्हें सन्तुष्ट करता है — उनके सन्तुष्ट होने पर मैं सन्तुष्ट होता हूँ और सब देवता सन्तुष्ट होते हैं।

पदपाठ मादिभिः पञ्चमुद्राभिः — म-कार आदि पञ्च मुद्राओं से · सद्भक्त्या परितोषयेत् — सद्भक्ति से सन्तुष्ट करे · तेषु तुष्टेषु — उनके तुष्ट होने पर · अहं तुष्टः — मैं तुष्ट हूँ · तुष्टाः स्युः सर्वदेवताः — और सब देवता तुष्ट होते हैं

भगिनीं वा सुतां भार्या यो दद्यात् कुलयोगिने ।

११६

मधुमत्ताय देवेशि तस्य पुण्यं न गण्यते ॥ ११६ ॥

हे देवेशि! जो मधु से मत्त कुलयोगी को बहन, पुत्री या पत्नी देता है, उसका पुण्य गिना नहीं जा सकता।

पदपाठ भगिनीं वा सुतां भार्या — बहन, पुत्री या भार्या · यो दद्यात् कुलयोगिने — जो कुलयोगी को दे · मधुमत्ताय — मधु से मत्त · देवेशि — हे देवेशि · तस्य पुण्यं न गण्यते — उसका पुण्य गिना नहीं जाता

अनिखातविनिक्षिप्तमप्रयत्नेन वर्द्धितम् ।

११७

परलोकस्य पाथेयं वीरचक्रेऽर्पितं मधु ॥ ११७ ॥

न गाड़ा हुआ, न जमा किया हुआ, फिर भी बिना प्रयत्न के बढ़ा हुआ — वीरचक्र में अर्पित मधु परलोक का पाथेय है।

पदपाठ अनिखातविनिक्षिप्तम् — न गाड़ा गया, न जमा किया गया · अप्रयत्नेन वर्द्धितम् — बिना प्रयत्न बढ़ा हुआ · परलोकस्य पाथेयं — परलोक का पाथेय (मार्ग-भोजन) · वीरचक्रेऽर्पितं मधु — वीरचक्र में अर्पित मधु है

पापाचारसमायुक्तं सर्वलोकबहिष्कृतम् ।

११८

जायते हि कुलद्रव्यं कुलयोगीश्वरार्पितम् ॥ ११८ ॥

पापाचार से युक्त और सब लोकों से बहिष्कृत वस्तु भी कुलयोगीश्वर को अर्पित होने पर कुलद्रव्य बन जाती है।

पदपाठ पापाचारसमायुक्तं — पापाचार से युक्त · सर्वलोकबहिष्कृतम् — सब लोक से बहिष्कृत · जायते हि कुलद्रव्यं — कुलद्रव्य हो जाता है · कुलयोगीश्वरार्पितम् — कुलयोगीश्वर को अर्पित (न होने पर)

यस्मिन् देशे वसेत् वीरः कुलपूजारतः प्रिये ।
सोऽपि देशो भवेत् पूतः किं पुनस्तत्पुरस्थिताः ॥ ११९ ॥

११९

हे प्रिये! जिस देश में कुलपूजा में रत वीर रहता है, वह देश भी पवित्र हो जाता है; फिर उसके समक्ष स्थित लोगों की तो बात ही क्या!

पदपाठ यस्मिन् देशे वसेत् वीरः — जिस देश में वीर रहे · कुलपूजारतः प्रिये — कुलपूजा में रत, हे प्रिये · सोऽपि देशो भवेत् पूतः — वह देश भी पवित्र हो जाता है · किं पुनस्तत्पुरस्थिताः — उसके सामने स्थितों की तो बात ही क्या

कौलिकेन्द्रे सकृद्भुक्ते पुण्यं कोटिगुणं भवेत् ।
किं पुनर्बहुभिर्भुक्तैस्तत् पुण्यं नैव गण्यते ॥ १२० ॥

१२०

कौलिकेन्द्र को एक बार भोजन कराने पर करोड़ गुना पुण्य होता है; फिर अनेक कौलिकों को भोजन कराने पर तो वह पुण्य गिना ही नहीं जा सकता।

पदपाठ कौलिकेन्द्रे सकृद्भुक्ते — कौलिकेन्द्र को एक बार भोजन कराने पर · पुण्यं कोटिगुणं भवेत् — पुण्य करोड़ गुना होता है · किं पुनर्बहुभिर्भुक्तैः — बहुतों को भोजन कराने की तो बात ही क्या · तत् पुण्यं नैव गण्यते — वह पुण्य गिना नहीं जाता

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा ।
कुलधर्मरतो भूयात् कुलज्ञानिनमर्चयेत् ॥ १२१ ॥

१२१

इसलिए सब प्रयत्न से, सब अवस्थाओं में, सदा कुलधर्म में रत रहे और कुलज्ञानी की पूजा करे।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · सर्वावस्थासु सर्वदा — सब अवस्थाओं में, सदा · कुलधर्मरतो भूयात् — कुलधर्म में रत रहे · कुलज्ञानिनमर्चयेत् — और कुलज्ञानी की पूजा करे

ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वापि यावत् देहस्य धारणा ।

१२२

तावद्वर्णाश्रमाचारः कर्तव्यः कर्ममुक्तये ॥ १२२ ॥

ज्ञानी हो या अज्ञानी, जब तक देह धारण है, तब तक कर्म से मुक्ति के लिए वर्णाश्रम का आचार करना चाहिए।

पदपाठ ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वापि — ज्ञानी हो या अज्ञानी · यावत् देहस्य धारणा — जब तक देह धारण है · तавद्वर्णाश्रमाचारः — तब तक वर्ण-आश्रम का आचार · कर्तव्यः — करना चाहिए · कर्ममुक्तये — कर्म से मुक्ति के लिए

कर्मणोऽन्मूलितेऽज्ञाने ज्ञानेन शिवतां व्रजेत् ।

१२३

शिवे तेनैव मुक्तिः स्यादतः कर्म समाचरेत् ॥ १२३ ॥

कर्म से अज्ञान के उन्मूलित होने पर ज्ञान से शिवत्व प्राप्त होता है; शिव में उसी से मुक्ति होती है; अतः कर्म का आचरण करे।

पदपाठ कर्मणा — कर्म से · उन्मूलितेऽज्ञाने — अज्ञान उन्मूलित होने पर · ज्ञानेन शिवतां व्रजेत् — ज्ञान से शिवत्व पाता है · शिवे — शिव में · तेनैव मुक्तिः स्यात् — उसी से मुक्ति होती है · अतः कर्म समाचरेत् — इसलिए कर्म करे

कुर्यादनिन्द्यकर्माणि नित्यकर्माणि वा चरेत् ।

१२४

कर्ममुक्तः सुखाकाङ्क्षी कर्मनिष्ठः सुखं व्रजेत् ॥ १२४ ॥

अनिन्द्य कर्म करे अथवा नित्यकर्म का आचरण करे; सुख चाहने वाला कर्ममुक्त पुरुष कर्मनिष्ठ होकर सुख को प्राप्त होता है।

पदपाठ कुर्यादनिन्द्यकर्माणि — अनिन्द्य कर्म करे · नित्यकर्माणि वा चरेत् — या नित्यकर्म करे · कर्ममुक्तः — कर्म से मुक्त · सुखाकाङ्क्षी — सुख चाहने वाला · कर्मनिष्ठः — कर्मनिष्ठ · सुखं व्रजेत् — सुख पाता है

सर्वकर्माणि संत्यक्तुं न शक्यं देहधारिणा ।

१२५

त्यजेत् कर्मफलं यो वा स त्यागीत्यभिधीयते ॥ १२५॥

देहधारी के लिए सब कर्मों का त्याग सम्भव नहीं; किन्तु जो कर्मफल का त्याग करता है, वह त्यागी कहलाता है।

पदपाठ सर्वकर्माणि संत्यक्तुं — सब कर्मों को त्यागना · न शक्यं देहधारिणा — देहधारी के लिए सम्भव नहीं · त्यजेत् कर्मफलं यो वा — पर जो कर्मफल त्यागे · स त्यागीत्यभिधीयते — वह त्यागी कहलाता है

स्वकार्येषु प्रवर्तन्ते करणानीति चिन्तयेत् ।

१२६

अहम्भावमपास्यैव यः कुर्यात् स न लिप्यते ॥ १२६॥

"इन्द्रियाँ अपने-अपने कार्यों में प्रवृत्त होती हैं" — ऐसा चिन्तन करे; जो अहंभाव को छोड़कर कर्म करता है, वह लिप्त नहीं होता।

पदपाठ स्वकार्येषु प्रवर्तन्ते — अपने कार्यों में प्रवृत्त होते हैं · करणानीति चिन्तयेत् — "इन्द्रियाँ" — ऐसा चिन्तन करे · अहम्भावमपास्यैव — अहंभाव को छोड़कर ही · यः कुर्यात् — जो करे · स न लिप्यते — वह लिप्त नहीं होता

क्रियमाणानि कर्माणि ज्ञानप्राप्तेरनन्तरम् ।

१२७

न च स्पृशन्ति तत्त्वज्ञं जलं पद्मदलं यथा ॥ १२७॥

ज्ञान की प्राप्ति के बाद किये जाने वाले कर्म तत्त्वज्ञ को वैसे ही स्पर्श नहीं करते, जैसे जल कमल के पत्ते को।

पदपाठ क्रियमाणानि कर्माणि — किए जाते कर्म · ज्ञानप्राप्तेरनन्तरम् — ज्ञान-प्राप्ति के बाद · न च स्पृशन्ति तत्त्वज्ञं — तत्त्वज्ञ को स्पर्श नहीं करते · जलं पद्मदलं यथा — जैसे जल कमल-पत्र को

तन्निष्ठस्य च कर्माणि पुण्यापुण्यानि संक्षयम् ।
प्रयान्ति नैव लिप्यन्ते क्रियमाणानि वा पुनः ॥ १२८ ॥

१२८

तत्त्वनिष्ठ पुरुष के पुण्य और अपुण्य कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं; और जो कर्म वह पुनः करता है, वे भी उसे लिप्त नहीं करते।

पदपाठ तन्निष्ठस्य च कर्माणि — तन्निष्ठ के कर्म · पुण्यापुण्यानि — पुण्य और अपुण्य · संक्षयं प्रयान्ति — क्षय को जाते हैं · नैव लिप्यन्ते — लिप्त नहीं करते · क्रियमाणानि वा पुनः — या फिर किए जाते हुए भी

उत्पन्नसहजानन्दतत्त्वज्ञानरतः प्रिये ।
संत्यक्तसर्वसङ्कल्पः स विद्वान् कर्म सन्त्यजेत् ॥ १२९ ॥

१२९

हे प्रिये! जिसमें सहज आनन्द उत्पन्न हो गया है, जो तत्त्वज्ञान में रत है और जिसने सब सङ्कल्प त्याग दिये हैं — वह विद्वान् कर्म का त्याग करे।

पदपाठ उत्पन्नसहजानन्दतत्त्वज्ञानरतः — उत्पन्न सहजानन्द तत्त्वज्ञान में रत · प्रिये — हे प्रिये · संत्यक्तसर्वसङ्कल्पः — सब संकल्प त्यागे हुए · स विद्वान् कर्म सन्त्यजेत् — वह विद्वान् कर्म त्याग सकता है

वृथैव यैः परित्यक्तं कर्मकाण्डमपण्डितैः ।
पाषण्डाः पण्डितम्मन्यास्ते यान्ति नरकं प्रिये ॥ १३० ॥

१३०

हे प्रिये! जिन अपण्डितों ने व्यर्थ ही कर्मकाण्ड का त्याग कर दिया है, वे अपने को पण्डित मानने वाले पाषण्डी नरक में जाते हैं।

पदपाठ वृथैव यैः परित्यक्तं — जिनके द्वारा व्यर्थ ही त्याग गया · कर्मकाण्डमपण्डितैः — कर्मकाण्ड, अपण्डितों द्वारा · पाषण्डाः — पाषण्डी · पण्डितम्मन्याः — अपने को पण्डित मानने वाले · ते यान्ति नरकं प्रिये — वे नरक में जाते हैं, हे प्रिये

फलं प्राप्य यथा वृक्षः पुष्पं त्यजति निस्पृहः ।

१३१

तत्त्वं प्राप्य तथा योगी त्यजेत् कर्मपरिग्रहम् ॥ १३१ ॥

जैसे वृक्ष फल पाकर निस्पृह होकर फूल को त्याग देता है, वैसे ही योगी तत्त्व को प्राप्त करके कर्म-परिग्रह को त्याग दे।

पदपाठ फलं प्राप्य यथा वृक्षः — जैसे वृक्ष फल पाकर · पुष्पं त्यजति निस्पृहः — निस्पृह होकर फूल त्याग देता है · तत्त्वं प्राप्य तथा योगी — वैसे योगी तत्त्व पाकर · त्यजेत् कर्मपरिग्रहम् — कर्म-परिग्रह त्याग दे

अश्वमेधायुतेनापि ब्रह्महत्यायुतेन च ।

१३२

पुण्यपापैर्न लिप्यन्ते येषां ब्रह्म हृदि स्थितम् ॥ १३२ ॥

जिनके हृदय में ब्रह्म स्थित है, वे दस हजार अश्वमेधों से भी और दस हजार ब्रह्महत्याओं से भी पुण्य-पाप से लिप्त नहीं होते।

पदपाठ अश्वमेधायुतेनापि — दस हजार अश्वमेधों से भी · ब्रह्महत्यायुतेन च — और दस हजार ब्रह्महत्याओं से · पुण्यपापैर्न लिप्यन्ते — पुण्य-पाप से लिप्त नहीं होते · येषां ब्रह्म हृदि स्थितम् — जिनके हृदय में ब्रह्म स्थित है

पृथिव्यां यानि कर्माणि जिह्वोपस्थनिमित्ततः ।

१३३

जिह्वोपस्थपरित्यागी कर्मणा किं करिष्यति ॥ १३३ ॥

पृथ्वी पर जितने कर्म हैं, वे जिह्वा और उपस्थ के निमित्त से होते हैं; जिसने जिह्वा और उपस्थ का त्याग कर दिया, वह कर्म से क्या करेगा?

पदपाठ पृथिव्यां यानि कर्माणि — पृथ्वी पर जो कर्म हैं · जिह्वोपस्थनिमित्ततः — जिह्वा और उपस्थ के निमित्त से · जिह्वोपस्थपरित्यागी — जिह्वा और उपस्थ का त्यागी · कर्मणा किं करिष्यति — कर्म से क्या करेगा?

इति ते कथितं किञ्चित् योगं योगीशलक्षणम् ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १३४ ॥

१३४

हे कुलेशानि! इस प्रकार योग और योगीश्वर के लक्षण के विषय में संक्षेप में तुमसे कुछ कहा गया; अब और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · योगं योगीशलक्षणम् — योग और योगीश के लक्षण · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णवि निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे योगसंस्थापनकथनं नाम नवम उल्लासः ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
योगसंस्थापनकथन नामक नवम उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ दशमोल्लासः

दशम उल्लास — विशेषदिवसार्चनम्



ईश्वर पाँच पर्वों और अन्य विशेष दिवसों को बताते हैं जिनमें चक्र अवश्य किया जाए, फिर ऋतु-कृत्य कहते हैं: आश्विन की नवकुमारी-पूजा, शुक्रवार की शक्ति-पूजा, संक्रान्तियों में नौ दिव्य मिथुनों की पूजा, वैशाख, माघ और कार्तिक के मास-भर के सूर्य, चन्द्र और दीप-व्रत, अष्टाष्टक और पचास मिथुनों की अर्चना, दूतीयाग और त्रिकपूजा। अन्त में सब कृत्यों से बढ़कर कुलपूजा की प्रशंसा, कुल की रक्षा करने वाले योगिनी-भैरव, षट्क अनुग्रह और छह डाकिनियों का ध्यान-स्वरूप वर्णित है।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि विशेषदिवसार्चनम् ।

तत्सपर्याफलं देव वद मे परमेश्वर ॥ १॥

१

हे कुलेश! मैं विशेष दिवसों की अर्चना और उस पूजा का फल सुनना चाहती हूँ, हे देव! मुझे बताइए, हे परमेश्वर!

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ विशेषदिवसार्चनम् — विशेष दिनों का अर्चन · तत्सपर्याफलं देव — और उस पूजा का फल, हे देव · वद मे परमेश्वर — मुझे बताइए, हे परमेश्वर

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ २ ॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · सर्वपापैः प्रमुच्यते — सब पापों से मुक्त होता है

उत्तमा नित्यपूजा स्यात् मध्यमं पर्वपूजनम् ।

मासपूजाऽधमा देवि मासादूर्ध्वं पशुर्भवेत् ॥ ३ ॥

३

नित्य पूजा उत्तम है, पर्व-दिनों की पूजा मध्यम है, मासिक पूजा अधम है, हे देवि! एक मास से अधिक बीत जाने पर वह पशु हो जाता है।

पदपाठ उत्तमा नित्यपूजा स्यात् — नित्यपूजा उत्तम है · मध्यमं पर्वपूजनम् — पर्व-पूजन मध्यम · मासपूजाऽधमा देवि — मास-पूजा अधम है, हे देवि · मासादूर्ध्वं पशुर्भवेत् — मास से आगे पशु हो जाता है

विहितैर्मादिभिर्द्रव्यैर्मासादूर्ध्वं समर्चनम् ।

पशोर्भूयः प्रवेशेच्छा यदि स्याद्दीक्षयेत् पुनः ॥ ४ ॥

४

विहित मकारादि द्रव्यों से एक मास से अधिक बीत जाने पर यदि उस पशु को पुनः प्रवेश की इच्छा हो, तो उसे फिर से दीक्षा दी जाए।

पदपाठ विहितैर्मादिभिर्द्रव्यैः — विहित म-कार आदि द्रव्यों से · मासादूर्ध्वं समर्चनम् — मास से अधिक (अन्तराल) पर पूजन · पशोर्भूयः प्रवेशेच्छा — पशु की फिर प्रवेश की इच्छा · यदि स्याद्दीक्षयेत् पुनः — यदि हो तो फिर दीक्षा दे

मद्यं मांसञ्च मत्स्यश्च मुद्रा मैथुनमेव च ।

मकारपञ्चकं देवि देवताप्रीतिकारकम् ॥ ५॥

५

मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन — यह मकार-पञ्चक, हे देवि! देवता को प्रीति देने वाला है।

पदपाठ मद्यं मांसञ्च मत्स्यश्च — मद्य, मांस और मत्स्य · मुद्रा मैथुनमेव च — मुद्रा और मैथुन · मकारपञ्चकं देवि — पाँच मकार, हे देवि · देवताप्रीतिकारकम् — देवता को प्रीति देने वाले

मादिपञ्चकर्मिशानि देवताप्रीतये सुधीः ।

यथाविधि निषेवेत तृष्णाया चेत् स पातकी ॥ ६॥

६

हे ईशानि! सुधी साधक मकारादि पञ्चक का सेवन देवता की प्रीति के लिए यथाविधि करे; यदि तृष्णा से करे तो वह पातकी है।

पदपाठ मादिपञ्चकर्म ईशानि — म-आदि पञ्चक, हे ईशानि · देवताप्रीतये सुधीः — देवता की प्रीति के लिए सुधी · यथाविधि निषेवेत — यथाविधि सेवन करे · तृष्णाया चेत् स पातकी — यदि तृष्णा से, तो वह पातकी है

कृष्णाष्टमीचतुर्दश्यावमावास्याथ पूर्णिमा ।

संक्रान्तिः पञ्च पर्वाणि तेषु पुण्यदिनेषु च ॥ ७॥

७

कृष्ण अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पूर्णिमा और संक्रान्ति — ये पाँच पर्व हैं; उन पुण्य दिनों में,

पदपाठ कृष्णाष्टमी — कृष्ण अष्टमी · चतुर्दश्यौ — और चतुर्दशी · अमावास्याथ पूर्णिमा — अमावास्या और पूर्णिमा · संक्रान्तिः पञ्च पर्वाणि — संक्रान्ति — ये पाँच पर्व हैं · तेषु पुण्यदिनेषु च — और उन पुण्य दिनों में

गुरुजन्मदिने प्राप्ते तद्गुरोस्तद्गुरोरपि ।

मानवौघादिपुंसाञ्च स्वजन्मदिवसे तथा ॥ ८॥

८

गुरु के, उनके गुरु के और उनके भी गुरु के जन्मदिन के आने पर, मानवौघ आदि के पुरुषों के जन्मदिन पर और अपने जन्मदिन पर भी,

पदपाठ गुरुजन्मदिने प्राप्ते — गुरु के जन्मदिन के आने पर · तद्गुरोस्तद्गुरोरपि — उनके गुरु और उनके भी गुरु का · मानवौघादिपुंसाञ्च — और मानवौघ आदि पुरुषों का · स्वजन्मदिवसे तथा — और वैसे ही अपने जन्मदिन पर

सम्पत्तौ च यजेल्लाभे तपोदीक्षाव्रतोत्सवे ।

पीठोपगमने वीरपीठे स्वजनदर्शने ॥ ९॥

९

सम्पत्ति और लाभ होने पर, तप, दीक्षा और व्रत के उत्सव में, पीठ में पहुँचने पर, वीरपीठ में, स्वजनों के दर्शन होने पर,

पदपाठ सम्पत्तौ च यजेल्लाभे — सम्पत्ति और लाभ पर पूजा करे · तपोदीक्षाव्रतोत्सवे — तप, दीक्षा, व्रत के उत्सव में · पीठोपगमने — पीठ पर पहुँचने पर · वीरपीठे स्वजनदर्शने — वीरपीठ में, स्वजनों के दर्शन पर

देशिकागमने पुण्यतीर्थदैवतदर्शने ।

एवमादिषु देवेशि विशेषदिवसेषु च ॥ १०॥

१०

देशिक (गुरु) के आगमन पर, पुण्य तीर्थ और देवता के दर्शन पर — हे देवेशि! ऐसे विशेष दिवसों में पूजा करे।

पदपाठ देशिकागमने — देशिक (गुरु) के आगमन पर · पुण्यतीर्थदैवतदर्शने — पुण्य तीर्थ या देवता के दर्शन पर · एवमादिषु देवेशि — इत्यादि में, हे देवेशि · विशेषदिवसेषु च — और विशेष दिनों में

यथाधनं यथाश्रद्धं यथाद्रव्यं यथोचितम् ।

११

यथाकालं यथादेशं तथा पूजां समाचरेत् ॥ ११ ॥

यथाधन, यथाश्रद्धा, यथाद्रव्य, यथोचित, यथाकाल और यथादेश — उसी प्रकार पूजा का आचरण करे।

पदपाठ यथाधनं यथाश्रद्धं — यथाधन, यथाश्रद्धा · यथाद्रव्यं यथोचितम् — यथाद्रव्य, यथोचित · यथाकालं यथादेशं — यथाकाल, यथादेश · तथा पूजां समाचरेत् — वैसे पूजा करे

आचार्येण विधानेन कारयेच्चक्रपूजनम् ।

१२

स्वयं वा पूजयेद्देवि बिन्दुपूजापुरःसरम् ॥ १२ ॥

आचार्य के द्वारा विधिपूर्वक चक्र-पूजन करवाए, अथवा हे देवि! बिन्दु-पूजा पूर्वक स्वयं पूजा करे।

पदपाठ आचार्येण विधानेन — आचार्य द्वारा, विधान से · कारयेच्चक्रपूजनम् — चक्रपूजन कराए · स्वयं वा पूजयेद्देवि — या स्वयं पूजा करे, हे देवि · बिन्दुपूजापुरःसरम् — बिन्दुपूजा-पूर्वक

स ते लोकमवाप्नोति पुनरावृत्तिवर्जितम् ।

१३

अकुर्वन् कौलिको मोहाद्देवताशापमाप्नुयात् ॥ १३ ॥

वह पुनरावृत्ति-रहित तुम्हारे लोक को प्राप्त करता है; जो कौलिक मोहवश यह नहीं करता वह देवता का शाप पाता है।

पदपाठ स ते लोकमवाप्नोति — वह तुम्हारे लोक को पाता है · पुनरावृत्तिवर्जितम् — पुनरावृत्ति से रहित · अकुर्वन् कौलिको मोहात् — जो कौलिक मोह से नहीं करता · देवताशापमाप्नुयात् — देवता का शाप पाता है

मासे वापि त्रिमासे वा षण्मासे वत्सरेऽपि वा ।

१४

श्रीगुरुं पूजयेद्भक्त्याऽप्राप्ते तत्स्त्रीसुतादिकान् ॥ १४ ॥

प्रति मास, या तीन मास, या छह मास, या वर्ष में भी श्रीगुरु की भक्तिपूर्वक पूजा करे; उनके न मिलने पर उनकी स्त्री, पुत्र आदि की।

पदपाठ मासे वापि त्रिमासे वा — मास में या तीन मास में · षण्मासे वत्सरेऽपि वा — छह मास में या वर्ष में भी · श्रीगुरुं पूजयेद्भक्त्या — श्रीगुरु की भक्ति से पूजा करे · अप्राप्ते तत्स्त्रीसुतादिकान् — न मिलें तो उनकी स्त्री, पुत्र आदि को

तदभावे कुलज्ञञ्च तच्छिष्यं वान्ययोगिनम् ।

१५

सन्तोषयेत् कुलद्रव्यैः कुलपूजापुरःसरम् ॥ १५ ॥

उनके अभाव में कुलज्ञ को, या उनके शिष्य को, या अन्य योगी को कुलपूजा पूर्वक कुलद्रव्यों से सन्तुष्ट करे।

पदपाठ तदभावे कुलज्ञञ्च — उनके अभाव में कुलज्ञ को · तच्छिष्यं वान्ययोगिनम् — या उनके शिष्य, या अन्य योगी को · सन्तोषयेत् कुलद्रव्यैः — कुलद्रव्यों से सन्तुष्ट करे · कुलपूजापुरःसरम् — कुलपूजा-पूर्वक

रोगेष्वपत्सु दोषेषु दुःसङ्गे दुर्निमित्तके ।

१६

पूजयेद् योगिनीवृन्दं देवि तद्दोषशान्तये ॥ १६ ॥

रोग, आपत्ति, दोष, दुःसङ्ग और दुर्निमित्त में, हे देवि! उस दोष की शान्ति के लिए योगिनी-वृन्द की पूजा करे।

पदपाठ रोगेष्वपत्सु दोषेषु — रोगों, आपदाओं, दोषों में · दुःसङ्गे दुर्निमित्तके — दुःसङ्ग में, दुर्निमित्त (अपशकुन) में · पूजयेद् योगिनीवृन्दं — योगिनी-वृन्द की पूजा करे · देवि तद्दोषशान्तये — हे देवि, उस दोष की शान्ति के लिए

यत्रैकाम्नायतत्त्वज्ञः कुलाचार्यः कुलेश्वरि ।

१७

कौलिकास्त्रिचतुःपञ्च शक्तयश्च तथा प्रिये ॥ १७ ॥

जहाँ एक आम्नाय के तत्त्व को जानने वाला कुलाचार्य हो, हे कुलेश्वरि! और तीन, चार या पाँच कौलिक तथा उतनी ही शक्तियाँ हों, हे प्रिये!

पदपाठ यत्र — जहाँ · एकाम्नायतत्त्वज्ञः — एक आम्नाय का तत्त्वज्ञ · कुलाचार्यः कुलेश्वरि — कुलाचार्य, हे कुलेश्वरि · कौलिकास्त्रिचतुःपञ्च — तीन, चार या पाँच कौलिक · शक्तयश्च तथा प्रिये — और वैसे ही शक्तियाँ, हे प्रिये

पृथग्वा पूजयेद्देवि मिथुनाकारतोऽपि वा ।

१८

गन्धपुष्पाक्षताद्यैस्तु देवेशि समलङ्कृताः ।

भक्ष्यभोज्यादिपिशितैः पदार्थैः षड्रसान्वितैः ॥ १८ ॥

हे देवि! उनकी पृथक्-पृथक् अथवा मिथुन-रूप में पूजा करे; हे देवेशि! गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से सुसज्जित, भक्ष्य-भोज्य आदि, मांस और षड्रस-युक्त पदार्थों से।

पदपाठ पृथग्वा पूजयेद्देवि — पृथक् पूजा करे, हे देवि · मिथुनाकारतोऽपि वा — या मिथुन (युगल) रूप में · गन्धपुष्पाक्षताद्यैस्तु — गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से · देवेशि समलङ्कृताः — हे देवेशि, समलंकृत · भक्ष्यभोज्यादिपिशितैः — भक्ष्य-भोज्य आदि, मांस · पदार्थैः षड्रसान्वितैः — षड्रस से युक्त पदार्थों से

प्रौढोल्लासेन सहिता यदि ता निवसन्ति च ।

१९

तच्छ्रीचक्रमिति प्रोक्तं वृन्दज्यापि तदुच्यते ॥ १९ ॥

यदि वे प्रौढ उल्लास से युक्त होकर वहाँ रहती हैं, तो वह श्रीचक्र कहलाता है, और वही वृन्द भी कहा जाता है।

पदपाठ प्रौढोल्लासेन सहिता — प्रौढोल्लास सहित · यदि ता निवसन्ति च — यदि वे रहें · तच्छ्रीचक्रमिति प्रोक्तं — वह श्रीचक्र कहा गया है · वृन्दज्यापि तदुच्यते — और वह वृन्द भी कहलाता है

कुर्यान्नवकुमारीणां पूजामाश्विनमासके ।

२०

प्रातर्निमन्त्रयेद्भक्त्या साधकः शुद्धमानसः ॥ २० ॥

आश्विन मास में नव कुमारियों की पूजा करे; शुद्ध मन वाला साधक प्रातः भक्तिपूर्वक उन्हें निमन्त्रित करे।

पदपाठ कुर्यान्नवकुमारीणां पूजाम् — नौ कुमारियों की पूजा करे · आश्विनमासके — आश्विन मास में · प्रातर्निमन्त्रयेद्भक्त्या — प्रातः भक्ति से निमन्त्रित करे · साधकः शुद्धमानसः — शुद्धमन साधक

मनोहरामेकवर्षी बालाञ्च शुभलक्षणाम् ।

२१

मन्त्री स्नात्वाथ शुद्धात्मा कुर्यादिवि क्रमार्चनम् ॥ २१ ॥

एक वर्ष की मनोहर, शुभ लक्षणों वाली बालिका को (लाकर) मन्त्री स्नान करके शुद्धात्मा होकर, हे देवि! क्रमार्चन करे।

पदपाठ मनोहरामेकवर्षी बालाञ्च — मनोहर एक वर्ष की बालिका को · शुभलक्षणाम् — शुभ लक्षणों वाली · मन्त्री स्नात्वाथ शुद्धात्मा — मन्त्री स्नान कर, शुद्धात्मा · कुर्यादिवि क्रमार्चनम् — क्रमार्चन करे, हे देवि

अभ्यङ्गस्नानशुद्धान्तां पूजासदनमानयेत् ।

२२

देवतासन्निधौ बालामुपवेश्य समर्चयेत् ॥ २२ ॥

अभ्यङ्ग-स्नान से शुद्ध हुई उस बालिका को पूजा-गृह में लाए, देवता के सन्निधान में बिठाकर उसकी भली प्रकार पूजा करे।

पदपाठ अभ्यङ्गस्नानशुद्धान्तां — अभ्यङ्ग-स्नान से शुद्ध · पूजासदनमानयेत् — पूजाभवन में लाए · देवतासन्निधौ बालाम् — देवता के सन्निधान में बालिका को · उपवेश्य समर्चयेत् — बैठकर पूजा करे

गन्धपुष्पादिभिर्धूपैर्दीपैश्च कुलदीपकैः ।

भोग्यभोज्यान्नपानाद्यैः क्षीराज्यमधुमांसकैः ।

२३

कदलीनारिकेलादिफलैस्तां परितोषयेत् ॥ २३ ॥

गन्ध, पुष्प आदि से, धूप, दीप और कुलदीपकों से, भोग्य, भोज्य, अन्न, पान आदि से, दूध, घी, मधु और मांस से, केला, नारियल आदि फलों से उसे सन्तुष्ट करे।

पदपाठ गन्धपुष्पादिभिः — गन्ध, पुष्प आदि से · धूपैर्दीपैश्च कुलदीपकैः — धूप, दीप और कुलदीपों से · भोग्यभोज्यान्नपानाद्यैः — भोग्य, भोज्य, अन्न, पान आदि से · क्षीराज्यमधुमांसकैः — क्षीर, घी, मधु, मांस से · कदलीनारिकेलादिफलैः — केला, नारियल आदि फलों से · तां परितोषयेत् — उसे सन्तुष्ट करे

सशक्तिकः स्वयं देवि प्रौढान्तोल्लाससंयुतः ।

२४

यथाशक्ति जपेदेकोत्तरवृद्ध्याऽथवा मनुम् ॥ २४ ॥

हे देवि! शक्ति-सहित स्वयं प्रौढान्त उल्लास से युक्त होकर यथाशक्ति, अथवा प्रतिदिन एक-एक बढ़ाते हुए, मन्त्र का जप करे।

पदपाठ सशक्तिकः स्वयं देवि — शक्ति-सहित स्वयं, हे देवि · प्रौढान्तोल्लाससंयुतः — प्रौढान्त उल्लास से युक्त · यथाशक्ति जपेत् — यथाशक्ति जपे · एकोत्तरवृद्ध्याऽथवा मनुम् — या एक-एक बढ़ाते हुए मन्त्र को

बालामलङ्कृतां पश्यन् चिन्तयेत् स्वेष्टदेवताम् ।

२५

ततस्तां देवताबुद्ध्या नमस्कृत्य विसर्जयेत् ॥ २५ ॥

अलङ्कृत बालिका को देखते हुए अपने इष्टदेवता का चिन्तन करे; फिर उसे देवता-बुद्धि से नमस्कार करके विसर्जित करे।

पदपाठ बालामलङ्कृतां पश्यन् — अलङ्कृत बालिका को देखते हुए · चिन्तयेत् स्वेष्टदेवताम् — अपने इष्टदेवता का चिन्तन करे · ततस्तां देवताबुद्ध्या — फिर उसे देवता-बुद्धि से · नमस्कृत्य विसर्जयेत् — नमस्कार कर विसर्जित करे

द्वितीयायां द्विवर्षान्तामेकवर्षाञ्च पूजयेत् ।

२६

एवं तिथौ कुमारीञ्च यजेत् पूर्वदिनार्चिताम् ॥ २६॥

द्वितीया को दो वर्ष तक की और एक वर्ष की बालिका की पूजा करे; इसी प्रकार प्रत्येक तिथि में पूर्व दिन पूजित कुमारी के साथ (नई) कुमारी की पूजा करे।

पदपाठ द्वितीयायां — द्वितीया को · द्विवर्षान्तामेकवर्षाञ्च पूजयेत् — दो वर्ष तक की और एक वर्ष की पूजा करे · एवं तिथौ कुमारीञ्च — इस प्रकार तिथि पर कुमारी की · यजेत् पूर्वदिनार्चिताम् — पूर्व दिन पूजित (कुमारी) सहित पूजा करे

नवम्यामेकवर्षादिनववर्षान्तकन्यकाः ।

२७

बाला शुद्धा च ललिता मालिनी च वसुन्धरा ।

सरस्वती रमा गौरी दुर्गा च नव कीर्तिताः ॥ २७॥

नवमी को एक वर्ष से नौ वर्ष तक की कन्याएँ — बाला, शुद्धा, ललिता, मालिनी, वसुन्धरा, सरस्वती, रमा, गौरी और दुर्गा — ये नौ कही गई हैं।

पदपाठ नवम्याम् — नवमी को · एकवर्षादिनववर्षान्तकन्यकाः — एक वर्ष से नौ वर्ष तक की कन्याएँ · बाला शुद्धा च ललिता — बाला, शुद्धा और ललिता · मालिनी च वसुन्धरा — मालिनी और वसुन्धरा · सरस्वती रमा गौरी — सरस्वती, रमा, गौरी · दुर्गा च नव कीर्तिताः — और दुर्गा — नौ कही गई हैं

त्रिताराद्यैनमोऽन्तैश्च देवतापदपश्चिमैः ।

नामभिश्च चतुर्थ्यन्तैः पूजयेत्ताः पृथक् पृथक् ॥ २८ ॥

२८

त्रितारा से आरम्भ करके, नमः से अन्त करते हुए, देवता-पद को अन्त में रखकर, चतुर्थ्यन्त नामों से उन सबकी पृथक्-पृथक् पूजा करे।

पदपाठ त्रिताराद्यैः — त्रितार आदि से · नमोऽन्तैश्च — और नमः अन्त में · देवतापदपश्चिमैः — "देवता" पद अन्त में रखकर · नामभिश्च चतुर्थ्यन्तैः — और चतुर्थ्यन्त नामों से · पूजयेत्ताः पृथक् पृथक् — उनकी पृथक्-पृथक् पूजा करे

वटुकं पञ्चवर्षञ्च नववर्षं गणेश्वरम् ।

गन्धपुष्पाम्बराकल्पैर्यथाविभवविस्तरैः ॥ २९ ॥

२९

पाँच वर्ष के वटुक और नौ वर्ष के गणेश्वर (बालक) को, यथाविभव विस्तार से गन्ध, पुष्प, वस्त्र और आभूषणों से,

पदपाठ वटुकं पञ्चवर्षञ्च — पाँच वर्ष का वटुक · नववर्षं गणेश्वरम् — और नौ वर्ष का गणेश्वर · गन्धपुष्पाम्बराकल्पैः — गन्ध, पुष्प, वस्त्र, आभूषणों से · यथाविभवविस्तरैः — यथावैभव विस्तार से

अभ्यर्च्य देवताबुद्ध्या पदार्थैः परितोषयेत् ।

स्वकार्यफलसिद्ध्यर्थं वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ ३० ॥

३०

देवता-बुद्धि से पूजा करके अपने कार्य की फल-सिद्धि के लिए, वित्त की कृपणता छोड़कर, पदार्थों से उन्हें सन्तुष्ट करे।

पदपाठ अभ्यर्च्य देवताबुद्ध्या — देवता-बुद्धि से पूजकर · पदार्थैः परितोषयेत् — पदार्थों से सन्तुष्ट करे · स्वकार्यफलसिद्ध्यर्थं — अपने कार्य की फल-सिद्धि के लिए · वित्तशाठ्यविवर्जितः — धन की कृपणता से रहित

नवरात्रं जपेदेकोत्तरवृद्ध्या क्रमेण च ।

३१

नवरात्रकृतां पूजां देवि देव्यै समर्पयेत् ॥ ३१ ॥

नवरात्र में क्रम से एक-एक बढ़ाते हुए जप करे, और हे देवि! नवरात्र में की गई पूजा देवी को समर्पित करे।

पदपाठ नवरात्रं जपेत् — नवरात्र में जपे · एकोत्तरवृद्ध्या क्रमेण च — एक-एक बढ़ाकर क्रम से · नवरात्रकृतां पूजां — नवरात्र में की गई पूजा · देवि देव्यै समर्पयेत् — हे देवि, देवी को समर्पित करे

ताम्बूलं दक्षिणां दत्त्वा कुमारीस्ता विसर्जयेत् ।

३२

एवं नवकुमारीणामर्चनं प्रतिवत्सरम् ॥ ३२ ॥

ताम्बूल और दक्षिणा देकर उन कुमारियों को विसर्जित करे। इस प्रकार प्रति वर्ष नव कुमारियों की पूजा

पदपाठ ताम्बूलं दक्षिणां दत्त्वा — ताम्बूल और दक्षिणा देकर · कुमारीस्ता विसर्जयेत् — उन कुमारियों को विसर्जित करे · एवं नवकुमारीणामर्चनं — इस प्रकार नौ कुमारियों का अर्चन · प्रतिवत्सरम् — प्रतिवर्ष

यः करोति स पुण्यात्मा देवताप्रीतिमाप्नुयात् ।

३३

मनोऽभिलाषं सम्प्राप्य निवसेत्तव सन्निधौ ॥ ३३ ॥

जो करता है, वह पुण्यात्मा देवता की प्रीति पाता है; मनोऽभिलाष को प्राप्त करके वह तुम्हारे सन्निधान में निवास करता है।

पदपाठ यः करोति स पुण्यात्मा — जो करता है वह पुण्यात्मा · देवताप्रीतिमाप्नुयात् — देवता की प्रीति पाता है · मनोऽभिलाषं सम्प्राप्य — मनोऽभिलाषा पाकर · निवसेत्तव सन्निधौ — तुम्हारे सन्निधान में रहता है

अथवा यौवनारूढाः प्रमदा नव पार्वति ।

३४

मनोज्ञाः पूजयेद्भक्त्या नवरात्रिषु मन्त्रवित् ॥ ३४ ॥

अथवा हे पार्वति! मन्त्रवित् नवरात्रियों में यौवन-प्राप्त नौ मनोज्ञ प्रमदाओं की भक्तिपूर्वक पूजा करे —

पदपाठ अथवा यौवनारूढाः — अथवा यौवन-प्राप्त · प्रमदा नव पार्वति — नौ प्रमदाएँ (युवतियाँ), हे पार्वति · मनोज्ञाः पूजयेद्भक्त्या — मनोहर, भक्ति से पूजा करे · नवरात्रिषु मन्त्रवित् — नवरात्रियों में मन्त्रज्ञ

हल्लेखां गगनां रक्तां महोच्छुष्मां करालिकाम् ।

इच्छां ज्ञानां क्रियां दुर्गां वटुकञ्च गणेश्वरम् ।

३५

पूर्ववत् पूर्वमद्याद्यैः पदार्थैः परितोषयेत् ॥ ३५ ॥

हल्लेखा, गगना, रक्ता, महोच्छुष्मा, करालिका, इच्छा, ज्ञाना, क्रिया, दुर्गा, तथा वटुक और गणेश्वर — पहले की भाँति, पूर्वोक्त मद्य आदि पदार्थों से उन्हें सन्तुष्ट करे।

पदपाठ हल्लेखां गगनां रक्तां — हल्लेखा, गगना, रक्ता · महोच्छुष्मां करालिकाम् — महोच्छुष्मा, करालिका · इच्छां ज्ञानां क्रियां दुर्गां — इच्छा, ज्ञाना, क्रिया, दुर्गा · वटुकञ्च गणेश्वरम् — और वटुक और गणेश्वर · पूर्ववत् पूर्वमद्याद्यैः — पूर्ववत्, पूर्वोक्त मद्य आदि · पदार्थैः परितोषयेत् — पदार्थों से सन्तुष्ट करे

प्रौढान्तोल्लाससंयुक्ताः सन्तुष्टा यदि ताः प्रिये ।

३६

साधकस्तुष्टिमासाद्य निवसेत्तव सन्निधौ ॥ ३६ ॥

यदि वे प्रौढान्त उल्लास से युक्त होकर सन्तुष्ट हों, हे प्रिये! तो साधक तुष्टि पाकर तुम्हारे सन्निधान में निवास करता है।

पदपाठ प्रौढान्तोल्लाससंयुक्ताः — प्रौढान्त उल्लास से युक्त · सन्तुष्टा यदि ताः प्रिये — यदि वे सन्तुष्ट हों, हे प्रिये · साधकस्तुष्टिमासाद्य — साधक तुष्टि पाकर · निवसेत्तव सन्निधौ — तुम्हारे सन्निधान में रहता है

एवं यः पूजयेद्देवि प्रतिवर्षं यतव्रतः ।

३७

षण्मासे वा त्रिमासे वा मासे मासेऽथवा प्रिये ॥ ३७ ॥

हे देवि! जो यतव्रत होकर इस प्रकार प्रति वर्ष, या छह मास में, या तीन मास में, या प्रति मास, हे प्रिये! पूजा करता है,

पदपाठ एवं यः पूजयेद्देवि — इस प्रकार जो पूजा करे, हे देवि · प्रतिवर्षं यतव्रतः — प्रतिवर्ष, यतव्रत · षण्मासे वा त्रिमासे वा — छह मास में या तीन मास में · मासे मासेऽथवा प्रिये — या मास-मास में, हे प्रिये

तिस्रो वा पञ्च वा सप्त पूजयेद्देवताधिया ।

३८

सर्वैश्वर्यसमृद्धात्मा स भवेदावयोः प्रियः ॥ ३८ ॥

तीन, पाँच या सात की देवता-बुद्धि से पूजा करता है — वह सर्व ऐश्वर्य से समृद्ध होकर हम दोनों का प्रिय होता है।

पदपाठ तिस्रो वा पञ्च वा सप्त — तीन, पाँच या सात · पूजयेद्देवताधिया — देवता-बुद्धि से पूजा करे · सर्वैश्वर्यसमृद्धात्मा — सब ऐश्वर्य से समृद्ध आत्मा वाला · स भवेदावयोः प्रियः — वह हम दोनों का प्रिय हो जाता है

भृगुवारे कुलेशानि कान्तामारूढयौवनाम् ।

३९

सर्वलक्षणसम्पन्नमनुकूलां मनोरमाम् ॥ ३९ ॥

शुक्रवार को, हे कुलेशानि! यौवन-प्राप्त, सर्वलक्षण-सम्पन्न, अनुकूल और मनोरम कान्ता को,

पदपाठ भृगुवारे कुलेशानि — शुक्रवार को, हे कुलेशानि · कान्तामारूढयौवनाम् — यौवन-प्राप्त कान्ता को · सर्वलक्षणसम्पन्नम् — सब लक्षणों से सम्पन्न · अनुकूलां मनोरमाम् — अनुकूल, मनोरम

कुलाकुलाष्टकां देवि निमन्त्र्याह्वय पुष्पिणीम् ।

४०

अभ्यङ्गस्नानशुद्धाङ्गीमासने चोपवेशयेत् ॥ ४० ॥

कुल या अकुल के अष्टक की, पुष्पवती (रजस्वला) को, हे देवि! निमन्त्रित करके बुलाकर, अभ्यङ्ग-स्नान से शुद्ध अङ्गों वाली उसे आसन पर बिठाए।

पदपाठ कुलाकुलाष्टकां देवि — कुल या अकुल अष्टक की, हे देवि · निमन्त्र्याह्वय पुष्पिणीम् — निमन्त्रित कर बुलाए, पुष्पिणी (रजस्वला) को · अभ्यङ्गस्नानशुद्धाङ्गीम् — अभ्यङ्ग-स्नान से शुद्ध अङ्गों वाली · आसने चोपवेशयेत् — आसन पर बैठाए

गन्धपुष्पाम्बराकल्पैरलङ्कृत्य विधानवित् ।

४१

आत्मानं गन्धपुष्पाद्यैरलङ्कुर्यात् कुलेश्वरि ॥ ४१ ॥

गन्ध, पुष्प, वस्त्र और आभूषणों से उसे अलङ्कृत करके विधानवित् स्वयं को गन्ध, पुष्प आदि से अलङ्कृत करे, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ गन्धपुष्पाम्बराकल्पैः — गन्ध, पुष्प, वस्त्र, आभूषणों से · अलङ्कृत्य विधानवित् — अलङ्कृत कर, विधानज्ञ · आत्मानं गन्धपुष्पाद्यैः — अपने को गन्ध, पुष्प आदि से · अलङ्कुर्यात् कुलेश्वरि — अलङ्कृत करे, हे कुलेश्वरि

आवाह्य देवतां तस्यां यजेन्न्यासक्रमेण च ।

४२

कृत्वा क्रमार्चनं धूपदीपाज्य कुलदीपकान् ॥ ४२ ॥

उसमें देवता का आवाहन करके न्यास-क्रम से पूजा करे; क्रमार्चन करके धूप, दीप और कुलदीपक

पदपाठ आवाह्य देवतां तस्यां — उसमें देवता का आवाहन कर · यजेन्न्यासक्रमेण च — न्यास-क्रम से पूजा करे · कृत्वा क्रमार्चनं — क्रमार्चन करके · धूपदीपाज्य कुलदीपकान् — धूप, दीप और कुलदीप

प्रदर्श्य देवताबुद्ध्या पदार्थैः षड्रसान्वितैः ।

मांसादिभक्ष्यभोज्याद्यैस्तोषयेद्देवि भक्तितः ॥ ४३॥

४३

दिखाकर, देवता-बुद्धि से षड्रस-युक्त पदार्थों, मांस आदि भक्ष्य-भोज्य से, हे देवि! भक्तिपूर्वक उसे सन्तुष्ट करे।

पदपाठ प्रदर्श्य देवताबुद्ध्या — दिखाकर, देवता-बुद्धि से · पदार्थैः षड्रसान्वितैः — षड्रस से युक्त पदार्थों से · मांसादिभक्ष्यभोज्याद्यैः — मांस आदि भक्ष्य-भोज्य से · तोषयेद्देवि भक्तितः — भक्ति से सन्तुष्ट करे, हे देवि

प्रौढान्तोल्लाससहितां तां प्रपश्यन् जपेन्मनुम् ।

यौवनोल्लाससहितः स्वयं तद्व्यानतत्परः ॥ ४४॥

४४

प्रौढान्त उल्लास से युक्त उसे देखते हुए, स्वयं यौवन उल्लास से युक्त और उसके ध्यान में तत्पर होकर मन्त्र का जप करे —

पदपाठ प्रौढान्तोल्लाससहितां — प्रौढान्त उल्लास सहित · तां प्रपश्यन् जपेन्मनुम् — उसे देखते हुए मन्त्र जपे · यौवनोल्लाससहितः स्वयं — स्वयं यौवन-उल्लास सहित · तद्व्यानतत्परः — उसके ध्यान में तत्पर

निर्विकारेण चित्तेन ह्यष्टोत्तरसहस्रकम् ।

जपादिकं समर्प्यथ तया सह निशां नयेत् ॥ ४५॥

४५

निर्विकार चित्त से एक हजार आठ बार; फिर जप आदि को समर्पित करके उसके साथ रात्रि बिताए।

पदपाठ निर्विकारेण चित्तेन — निर्विकार चित्त से · ह्यष्टोत्तरसहस्रकम् — एक हजार आठ बार · जपादिकं समर्प्यथ — फिर जप आदि समर्पित कर · तया सह निशां नयेत् — उसके साथ रात्रि बिताए

त्रिपञ्चसप्तनवसु भृगुवारेषु यः प्रिये ।

पूजयेद्विधिनाऽनेन तस्य पुण्यं न गण्यते ॥ ४६॥

४६

हे प्रिये! जो तीन, पाँच, सात या नौ शुक्रवारों को इस विधि से पूजा करता है, उसका पुण्य गिना नहीं जा सकता।

पदपाठ त्रिपञ्चसप्तनवसु — तीन, पाँच, सात या नौ · भृगुवारेषु यः प्रिये — शुक्रवारों को जो, हे प्रिये · पूजयेद्विधिनाऽनेन — इस विधि से पूजा करे · तस्य पुण्यं न गण्यते — उसका पुण्य गिना नहीं जाता

चतुःपीठार्चनफलं स प्राप्नोति कुलेश्वरि ।

यद् यत् स्वमनसोऽभीष्टं तत्तदाप्रोत्यसंशयम् ॥ ४७॥

४७

हे कुलेश्वरि! वह चारों पीठों की अर्चना का फल पाता है; उसके मन को जो-जो अभीष्ट है वह सब निःसन्देह प्राप्त करता है।

पदपाठ चतुःपीठार्चनफलं — चार पीठों के अर्चन का फल · स प्राप्नोति कुलेश्वरि — वह पाता है, हे कुलेश्वरि · यद् यत् स्वमनसोऽभीष्टं — जो-जो अपने मन को इष्ट है · तत्तदाप्रोत्यसंशयम् — वह-वह पाता है, निःसन्देह

नवम्यां वार्ययेदेवं विधानेन विधानवित् ।

स्तोत्रैः संपूजयेत् सर्वैर्महदैश्वर्यमाप्नुयात् ॥ ४८॥

४८

अथवा नवमी को विधानवित् इस प्रकार विधिपूर्वक पूजा करे; सब स्तोत्रों से पूजा करे और महान् ऐश्वर्य प्राप्त करे।

पदपाठ नवम्यां वार्ययेदेवं — या नवमी को इस प्रकार पूजा करे · विधानेन विधानवित् — विधान से, विधानज्ञ · स्तोत्रैः संपूजयेत् सर्वैः — सब स्तोत्रों से पूजा करे · महदैश्वर्यमाप्नुयात् — महान् ऐश्वर्य पाता है

कुर्यात् कर्कटके वापि मकरे मिथुनार्चनम् ।
तुलायां सिंहमेषे वा सर्वसंक्रान्तिषु प्रिये ॥ ४९ ॥

४९

कर्कट, मकर, तुला, सिंह या मेष की संक्रान्ति में — सब संक्रान्तियों में, हे प्रिये! मिथुनार्चन करे।

पदपाठ कुर्यात् कर्कटके वापि — कर्क में भी करे · मकरे मिथुनार्चनम् — या मकर में मिथुनार्चन · तुलायां सिंहमेषे वा — तुला में, या सिंह या मेष में · सर्वसंक्रान्तिषु प्रिये — सब संक्रान्तियों में, हे प्रिये

गौरीशिवौ रमाविष्णू वाणीसरसिजासनौ ।
शचीन्द्रौ रोहिणीचन्द्रौ स्वाहाग्नी च प्रभारवी ॥ ५० ॥

५०

गौरी-शिव, रमा-विष्णु, वाणी-ब्रह्मा, शची-इन्द्र, रोहिणी-चन्द्र, स्वाहा-अग्नि, प्रभारवि,

पदपाठ गौरीशिवौ रमाविष्णू — गौरी-शिव, रमा-विष्णु · वाणीसरसिजासनौ — वाणी-ब्रह्मा (कमलासन) · शचीन्द्रौ रोहिणीचन्द्रौ — शची-इन्द्र, रोहिणी-चन्द्र · स्वाहाग्नी च प्रभारवी — स्वाहा-अग्नि, प्रभा-सूर्य

भद्रकालीवीरभद्रौ भैरवीभैरवावपि ।
मिथुनानि नवाभ्यर्च्य पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ॥ ५१ ॥

५१

भद्रकाली-वीरभद्र, और भैरवी-भैरव — इन नौ मिथुनों की पूर्वोक्त मार्ग से पूजा करके,

पदपाठ भद्रकालीवीरभद्रौ — भद्रकाली-वीरभद्र · भैरवीभैरवावपि — और भैरवी-भैरव भी · मिथुनानि नवाभ्यर्च्य — नौ मिथुनों की पूजा कर · पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना — पूर्वोक्त मार्ग से ही

त्रितारादिनमोऽन्तेन तत्तन्नाम्ना विधानवित् ।

५२

गन्धपुष्पादिभिः पूज्य मद्याद्यैः परितोषयेत् ॥ ५२ ॥

विधानवित् त्रितारा से आरम्भ और नमः से अन्त करते हुए उन-उन के नाम से गन्ध, पुष्प आदि से पूजा करके मद्य आदि से उन्हें सन्तुष्ट करे।

पदपाठ त्रितारादिनमोऽन्तेन — त्रितार आदि और नमः अन्त में · तत्तन्नाम्ना विधानवित् — उस-उस नाम से, विधानज्ञ · गन्धपुष्पादिभिः पूज्य — गन्ध, पुष्प आदि से पूजकर · मद्याद्यैः परितोषयेत् — मद्य आदि से सन्तुष्ट करे

प्रौढान्तोल्लासयुक्तानि कुर्वीत मिथुनानि च ।

५३

एवं कृते न सन्देहस्तुष्टा मिथुनदेवताः ।

अनुगृह्णन्ति तं देवि प्रयच्छन्ति मनोरथम् ॥ ५३ ॥

मिथुनों को प्रौढान्त उल्लास से युक्त करे; ऐसा करने पर सन्देह नहीं — सन्तुष्ट मिथुन-देवता, हे देवि! उस पर अनुग्रह करते हैं और मनोरथ देते हैं।

पदपाठ प्रौढान्तोल्लासयुक्तानि — प्रौढान्त उल्लास से युक्त · कुर्वीत मिथुनानि च — मिथुनों को करे · एवं कृते न सन्देहः — ऐसा करने पर सन्देह नहीं · तुष्टा मिथुनदेवताः — तुष्ट मिथुन-देवता · अनुगृह्णन्ति तं देवि — उस पर अनुग्रह करते हैं, हे देवि · प्रयच्छन्ति मनोरथम् — और मनोरथ देते हैं

प्रतिवर्षन्तु यः कुर्यात् सभक्त्या मिथुनार्चनम् ।

५४

तव लोके स निवसेत् सर्वैश्वर्यसमन्वितः ॥ ५४ ॥

जो प्रति वर्ष भक्तिपूर्वक मिथुनार्चन करता है, वह सर्व ऐश्वर्य से युक्त होकर तुम्हारे लोक में निवास करता है।

पदपाठ प्रतिवर्षन्तु यः कुर्यात् — जो प्रतिवर्ष करे · सभक्त्या मिथुनार्चनम् — भक्ति से मिथुनार्चन · तव लोके स निवसेत् — वह तुम्हारे लोक में रहता है · सर्वैश्वर्यसमन्वितः — सब ऐश्वर्य से युक्त

अथ वैशाखमासस्य शुक्लप्रतिपदीश्वरि ।

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय स्नानं सन्ध्यामुपास्य च ॥ ५५॥

५५

अब वैशाख मास की शुक्ल प्रतिपदा को, हे ईश्वरि! ब्राह्म मुहूर्त में उठकर, स्नान और सन्ध्या की उपासना करके,

पदपाठ अथ वैशाखमासस्य — अब वैशाख मास की · शुक्लप्रतिपदीश्वरि — शुक्ल प्रतिपदा को, हे ईश्वरि · ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय — ब्राह्म मुहूर्त में उठकर · स्नानं सन्ध्यामुपास्य च — स्नान और सन्ध्या करके

मनोज्ञे रहसि स्थाने पूर्वाशाभिमुखस्थितः ।

आत्मानं गन्धपुष्पाद्यैरलङ्कृत्य विधानवित् ॥ ५६॥

५६

मनोहर एकान्त स्थान में पूर्व दिशा की ओर मुख करके, विधानवित् स्वयं को गन्ध, पुष्प आदि से अलङ्कृत करके,

पदपाठ मनोज्ञे रहसि स्थाने — मनोहर एकान्त स्थान में · पूर्वाशाभिमुखस्थितः — पूर्व दिशा की ओर मुख किए · आत्मानं गन्धपुष्पाद्यैः — अपने को गन्ध, पुष्प आदि से · अलङ्कृत्य विधानवित् — अलंकृत कर, विधानज्ञ

कृत्वा पुरोदितन्यासान् देवताभावमास्थितः ।

किञ्चिदभ्युदिते सूर्ये मण्डले स्वेष्टदेवताम् ॥ ५७॥

५७

पूर्वोक्त न्यास करके, देवता-भाव में स्थित होकर, सूर्य के कुछ उदित होने पर, मण्डल में अपने इष्टदेवता का

पदपाठ कृत्वा पुरोदितन्यासान् — पूर्वोक्त न्यास करके · देवताभावमास्थितः — देवता-भाव में स्थित · किञ्चिदभ्युदिते सूर्ये — सूर्य के थोड़ा उदित होने पर · मण्डले स्वेष्टदेवताम् — मण्डल में अपने इष्टदेवता का

ध्यात्वा सावरणां सम्यक् पूजयेद्विधिना प्रिये ।

५८

षोडशैरुपचारैस्तु चक्रपूजापुरःसरम् ॥ ५८ ॥

आवरण-सहित भली प्रकार ध्यान करके, हे प्रिये! चक्रपूजा पूर्वक षोडश उपचारों से विधिपूर्वक पूजा करे।

पदपाठ ध्यात्वा सावरणां सम्यक् — आवरण-सहित सम्यक् ध्यान कर · पूजयेद्विधिना प्रिये — विधि से पूजा करे, हे प्रिये · षोडशैरुपचारैस्तु — सोलह उपचारों से · चक्रपूजापुरःसरम् — चक्रपूजा-पूर्वक

कुलदीपान् प्रदर्शयथ शिवाय गुरुरूपिणे ।

५९

मत्स्यमांसादि विधिवद्भक्ष्यभोज्यसमन्वितम् ॥ ५९ ॥

फिर कुलदीपकों को दिखाकर, गुरु-रूपी शिव को विधिवत् मत्स्य, मांस आदि और भक्ष्य-भोज्य से युक्त

पदपाठ कुलदीपान् प्रदर्शयथ — फिर कुलदीप दिखाकर · शिवाय गुरुरूपिणे — गुरुरूपी शिव को · मत्स्यमांसादि विधिवत् — मत्स्य, मांस आदि विधिवत् · भक्ष्यभोज्यसमन्वितम् — भक्ष्य-भोज्य सहित

अर्घ्यं निवेद्य तच्छेषं स्वयं भक्त्या पिबेत् प्रिये ।

६०

यौवनोल्लाससहितो निर्विकारेण चेतसा ॥ ६० ॥

अर्घ्य निवेदन करके उसका शेष स्वयं भक्तिपूर्वक पिए, हे प्रिये! यौवन उल्लास से युक्त होकर, निर्विकार चित्त से।

पदपाठ अर्घ्यं निवेद्य तच्छेषं — अर्घ्य निवेदन कर, उसका शेष · स्वयं भक्त्या पिबेत् प्रिये — स्वयं भक्ति से पिए, हे प्रिये · यौवनोल्लाससहितो — यौवन-उल्लास सहित · निर्विकारेण चेतसा — निर्विकार चित्त से

ध्यायंस्तन्मण्डलं देवीमष्टोत्तरसहस्रकम् ।

६१

जप्त्वा समर्प्य तत्पूजां देवताञ्च समुद्धरेत् ॥ ६१ ॥

उस मण्डल में देवी का ध्यान करते हुए एक हजार आठ बार जप करके, वह पूजा समर्पित करके देवता का उद्घासन करे।

पदपाठ ध्यायंस्तन्मण्डलं देवीम् — उस मण्डल में देवी का ध्यान करते · अष्टोत्तरसहस्रकम् — एक हजार आठ बार · जप्त्वा समर्प्य तत्पूजां — जपकर, उस पूजा को समर्पित कर · देवताञ्च समुद्धरेत् — देवता का उद्घासन करे

एवं शुक्लप्रतिपदं समारभ्य दिने दिने ।

६२

कुर्याज्जपार्चनं कृष्णचतुर्दश्यन्तमम्बिके ॥ ६२ ॥

इस प्रकार शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ करके प्रतिदिन कृष्ण चतुर्दशी तक जप और अर्चन करे, हे अम्बिके!

पदपाठ एवं शुक्लप्रतिपदं समारभ्य — इस प्रकार शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ कर · दिने दिने — दिन-दिन · कुर्याज्जपार्चनं — जप और अर्चन करे · कृष्णचतुर्दश्यन्तमम्बिके — कृष्ण चतुर्दशी तक, हे अम्बिके

अमावस्यादिने देवि पूजयेच्छक्तिकौलिकान् ।

६३

त्रिपञ्चसप्तनव वा वित्तलोभविवर्जितः ॥ ६३ ॥

अमावास्या के दिन, हे देवि! वित्त के लोभ से रहित होकर तीन, पाँच, सात या नौ शक्तियों और कौलिकों की पूजा करे।

पदपाठ अमावस्यादिने देवि — अमावस्या के दिन, हे देवि · पूजयेच्छक्तिकौलिकान् — शक्तियों और कौलिकों की पूजा करे · त्रिपञ्चसप्तनव वा — तीन, पाँच, सात या नौ · वित्तलोभविवर्जितः — धन के लोभ से रहित

एवं यो मासमात्रन्तु कुर्यात् सूर्योदयार्चनम् ।
देवता तस्य सन्तुष्टा ददाति फलमीप्सितम् ॥ ६४ ॥

६४

जो इस प्रकार केवल एक मास सूर्योदय-अर्चन करता है, उससे सन्तुष्ट देवता उसे ईप्सित फल देती है।

पदपाठ एवं यो मासमात्रन्तु — इस प्रकार जो एक मास मात्र · कुर्यात् सूर्योदयार्चनम् — सूर्योदय-अर्चन करे · देवता तस्य सन्तुष्टा — देवता उस पर सन्तुष्ट · ददाति फलमीप्सितम् — इच्छित फल देती है

मध्याह्ने चार्चयेद्देवं सायाह्ने चार्चयेत् प्रिये ।
स तु तत्फलमाप्नोति योगिनीनां प्रियो भवेत् ॥ ६५ ॥

६५

और यदि मध्याह्न में देव की पूजा करे और सायं भी पूजा करे, हे प्रिये! तो वह उस फल को पाता है और योगिनियों का प्रिय होता है।

पदपाठ मध्याह्ने चार्चयेद्देवं — और मध्याह्न में देव की पूजा करे · सायाह्ने चार्चयेत् प्रिये — और सायंकाल पूजा करे, हे प्रिये · स तु तत्फलमाप्नोति — वह उस फल को पाता है · योगिनीनां प्रियो भवेत् — योगिनियों का प्रिय होता है

त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेद्देवं मासमात्रं विधानवित् ।
काङ्क्षितां लभते सिद्धिं देववद् विचरेद् भुवि ॥ ६६ ॥

६६

जो विधानवित् इस प्रकार एक मास तक तीनों सन्ध्याओं में पूजा करता है, वह वाञ्छित सिद्धि पाता है और देवता की भाँति पृथ्वी पर विचरता है।

पदपाठ त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेद्देवं — जो इस प्रकार त्रिसन्ध्या पूजा करे · मासमात्रं विधानवित् — एक मास मात्र, विधानज्ञ · काङ्क्षितां लभते सिद्धिं — इच्छित सिद्धि पाता है · देववद् विचरेद् भुवि — देव की तरह भूमि पर विचरता है

माघशुक्लप्रतिपदि दिवाहारविवर्जितः ।

६७

स्नात्वा शुक्लाम्बरधरः सायं सन्ध्यामुपास्य च ॥ ६७ ॥

माघ शुक्ल प्रतिपदा को दिन में आहार न करके, स्नान करके, श्वेत वस्त्र धारण कर, सायं सन्ध्या की उपासना करके,

पदपाठ माघशुक्लप्रतिपदि — माघ शुक्ल प्रतिपदा को · दिवाहारविवर्जितः — दिन में आहार से रहित · स्नात्वा शुक्लाम्बरधरः — स्नान कर, श्वेत वस्त्र धारण किए · सायं सन्ध्यामुपास्य च — और सायं सन्ध्या करके

सूर्यार्चनोक्तमार्गेण सर्वद्रव्यसमन्वितः ।

६८

यौवनोल्लाससहितश्चन्द्रस्थां देवतां स्मरन् ॥ ६८ ॥

सूर्यार्चन में कहे गए मार्ग से, सब द्रव्यों से युक्त, यौवन उल्लास से युक्त होकर, चन्द्र में स्थित देवता का स्मरण करते हुए,

पदपाठ सूर्यार्चनोक्तमार्गेण — सूर्यार्चन में कहे मार्ग से · सर्वद्रव्यसमन्वितः — सब द्रव्यों से युक्त · यौवनोल्लाससहितः — यौवन-उल्लास सहित · चन्द्रस्थां देवतां स्मरन् — चन्द्र में स्थित देवता का स्मरण करते

चन्द्रास्तमयपर्यन्तं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।

६९

एवं प्रतिदिनं शुक्लचतुर्दश्यन्तमर्चयेत् ॥ ६९ ॥

चन्द्रास्त तक अनन्य चित्त से मन्त्र का जप करे; इस प्रकार प्रतिदिन शुक्ल चतुर्दशी तक पूजा करे।

पदपाठ चन्द्रास्तमयपर्यन्तं — चन्द्रास्त तक · जपेन्मन्त्रमनन्यधीः — अनन्य बुद्धि से मन्त्र जपे · एवं प्रतिदिनं — इस प्रकार प्रतिदिन · शुक्लचतुर्दश्यन्तमर्चयेत् — शुक्ल चतुर्दशी तक पूजा करे

पौर्णमास्यां यथाशक्त्या पूजयेच्छक्तिकौलिकान् ।

७०

एवं यः कुरुते भक्त्या शुक्लपक्षार्चनं प्रिये ॥ ७० ॥

पौर्णमा को यथाशक्ति शक्तियों और कौलिकों की पूजा करे। हे प्रिये! जो इस प्रकार भक्तिपूर्वक शुक्लपक्ष-अर्चन करता है,

पदपाठ पौर्णमास्यां यथाशक्त्या — पूर्णिमा को यथाशक्ति · पूजयेच्छक्तिकौलिकान् — शक्तियों और कौलिकों की पूजा करे · एवं यः कुरुते भक्त्या — इस प्रकार जो भक्ति से करे · शुक्लपक्षार्चनं प्रिये — शुक्लपक्ष-अर्चन, हे प्रिये

सर्वपापविशुद्धात्मा सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।

७१

सर्वलोकैकसंपूज्यः शिववन्निवसेद् भुवि ॥ ७१ ॥

सर्व पापों से विशुद्ध आत्मा वाला, सर्व ऐश्वर्य से युक्त, सब लोकों में एकमात्र पूज्य होकर वह शिव की भाँति पृथ्वी पर निवास करता है।

पदपाठ सर्वपापविशुद्धात्मा — सब पापों से विशुद्ध आत्मा वाला · सर्वैश्वर्यसमन्वितः — सब ऐश्वर्य से युक्त · सर्वलोकैकसंपूज्यः — सब लोकों में एकमात्र पूज्य · शिववन्निवसेद् भुवि — शिव की तरह भूमि पर रहता है

शुक्लपक्षेऽर्चनं यद्वत्तद्वत् पक्षे सितेतरे ।

७२

यः करोति विधानेन सर्वान् कामान् समश्नुते ॥ ७२ ॥

जैसा शुक्ल पक्ष में अर्चन है वैसा ही जो कृष्ण पक्ष में विधिपूर्वक करता है, वह सब कामनाओं को भोगता है।

पदपाठ शुक्लपक्षेऽर्चनं यद्वत् — जैसे शुक्लपक्ष में अर्चन · तद्वत् पक्षे सितेतरे — वैसे कृष्णपक्ष में · यः करोति विधानेन — जो विधान से करे · सर्वान् कामान् समश्नुते — सब कामनाएँ भोगता है

इह भुक्त्वाऽखिलान् भोगान् देववत् प्रियदर्शनः ।

७३

योगिनीवीरमेलनं लभते नात्र संशयः ॥ ७३ ॥

यहाँ सब भोगों को भोगकर, देवता की भाँति प्रियदर्शन होकर वह योगिनी-वीर-मेलन पाता है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ इह भुक्त्वाऽखिलान् भोगान् — यहाँ समस्त भोग भोगकर · देववत् प्रियदर्शनः — देव की तरह प्रियदर्शन · योगिनीवीरमेलनं — योगिनी-वीर-मेलन · लभते नात्र संशयः — पाता है, इसमें सन्देह नहीं

अथ कार्तिकमासस्य शुक्लप्रतिपदीश्वरि ।

७४

स्नात्वाचम्य विशुद्धात्मा न्यासान् कृत्वा पुरोदितान् ॥ ७४ ॥

अब कार्तिक मास की शुक्ल प्रतिपदा को, हे ईश्वरि! स्नान और आचमन करके, विशुद्धात्मा होकर, पूर्वोक्त न्यास करके,

पदपाठ अथ कार्तिकमासस्य — अब कार्तिक मास की · शुक्लप्रतिपदीश्वरि — शुक्ल प्रतिपदा को, हे ईश्वरि · स्नात्वाचम्य विशुद्धात्मा — स्नान और आचमन कर, विशुद्धात्मा · न्यासान् कृत्वा पुरोदितान् — पूर्वोक्त न्यास करके

प्रसुप्ते जीवलोके तु मुदितात्मा महानिशि ।

७५

पूर्वार्चनोक्तविधिना सर्वद्रव्यसमन्वितः ॥ ७५ ॥

जीवलोक के सो जाने पर, प्रसन्न चित्त से महानिशा में, पूर्वोक्त अर्चन की विधि से, सब द्रव्यों से युक्त होकर,

पदपाठ प्रसुप्ते जीवलोके तु — जीवलोक के सो जाने पर · मुदितात्मा महानिशि — प्रसन्न आत्मा, महानिशा में · पूर्वार्चनोक्तविधिना — पूर्व अर्चन में कही विधि से · सर्वद्रव्यसमन्वितः — सब द्रव्यों से युक्त

आज्येनानामिकास्थूलवर्ति प्रज्वाल्य पार्वति ।

७६

पञ्चवर्णरजश्चित्रवसुपत्रसरोरुहे ॥ ७६ ॥

घी से अनामिका-जैसी मोटी बत्ती जलाकर, हे पार्वति! पाँच रंगों के चूर्ण से चित्रित
अष्टदल कमल पर,

पदपाठ आज्येन — घी से · अनामिकास्थूलवर्ति — अनामिका-सी मोटी बत्ती · प्रज्वाल्य पार्वति —
जलाकर, हे पार्वति · पञ्चवर्णरजश्चित्र — पाँच रंगों की रज से चित्रित · वसुपत्रसरोरुहे — अष्टदल कमल
पर

मधुपूर्णे च कलसे कांस्यपात्रे मनोहरे ।

७७

दीपं संस्थाप्य पुरत उत्तराभिमुखस्थितः ॥ ७७ ॥

मधु से भरे कलश पर, मनोहर कांस्य-पात्र में, दीप को सामने स्थापित करके, उत्तर
की ओर मुख करके,

पदपाठ मधुपूर्णे च कलसे — मधु से पूर्ण कलश पर · कांस्यपात्रे मनोहरे — मनोहर काँसे के पात्र में · दीपं
संस्थाप्य पुरतः — दीप सामने स्थापित कर · उत्तराभिमुखस्थितः — उत्तर की ओर मुख किए

दीपे सावरणां देवीं ध्यात्वा विधिवदर्चयेत् ।

७८

यौवनोल्लाससहितो दीपस्थां देवतां स्मरन् ॥ ७८ ॥

दीप में आवरण-सहित देवी का ध्यान करके विधिवत् पूजा करे; यौवन उल्लास से
युक्त होकर दीपस्थ देवता का स्मरण करते हुए,

पदपाठ दीपे सावरणां देवीं — दीप में आवरण-सहित देवी का · ध्यात्वा विधिवदर्चयेत् — ध्यान कर
विधिवत् पूजा करे · यौवनोल्लाससहितो — यौवन-उल्लास सहित · दीपस्थां देवतां स्मरन् — दीपस्थ देवता
का स्मरण करते

अष्टोत्तरसहस्रन्तु जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।

७९

एवं समर्चयेत् कृष्णचतुर्दश्यन्तमम्बिके ॥ ७९॥

अनन्य चित्त से एक हजार आठ बार मन्त्र का जप करे; इस प्रकार कृष्ण चतुर्दशी तक पूजा करे, हे अम्बिके!

पदपाठ अष्टोत्तरसहस्रन्तु — एक हजार आठ बार · जपेन्मन्त्रमनन्यधीः — अनन्य बुद्धि से मन्त्र जपे · एवं समर्चयेत् — इस प्रकार पूजा करे · कृष्णचतुर्दश्यन्तमम्बिके — कृष्ण चतुर्दशी तक, हे अम्बिके

अमावास्यादिने भक्त्या पूजयेच्छक्तिकौलिकान् ।

८०

एवं कृते कुलेशानि देवता प्रीतिमाप्नुयात् ॥ ८०॥

अमावास्या के दिन भक्तिपूर्वक शक्तियों और कौलिकों की पूजा करे; ऐसा करने पर, हे कुलेशानि! देवता प्रसन्न होती है।

पदपाठ अमावास्यादिने भक्त्या — अमावास्या के दिन भक्ति से · पूजयेच्छक्तिकौलिकान् — शक्तियों और कौलिकों की पूजा करे · एवं कृते कुलेशानि — ऐसा करने पर, हे कुलेशानि · देवता प्रीतिमाप्नुयात् — देवता प्रीति पाती है

सर्वकामसमृद्धात्मा सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।

८१

सर्वलोकैकसम्मान्यः सञ्चरेत् स यथासुखम् ॥ ८१॥

सर्व कामनाओं से समृद्ध, सर्व ऐश्वर्य से युक्त, सब लोकों में एकमात्र सम्मान्य होकर वह यथासुख विचरता है।

पदपाठ सर्वकामसमृद्धात्मा — सब कामनाओं से समृद्ध · सर्वैश्वर्यसमन्वितः — सब ऐश्वर्य से युक्त · सर्वलोकैकसम्मान्यः — सब लोकों में एकमात्र सम्माननीय · सञ्चरेत् स यथासुखम् — वह यथासुख विचरता है

अष्टाष्टकार्चनं कुर्यात् शक्तश्चेदेकवासरे ।

अथवाष्टाष्टदिवसेष्वथ द्व्यष्टदिनेषु च ।

८२

द्वात्रिंशदिवसेष्वेवं चतुःषष्टिदिनेषु च ॥ ८२ ॥

समर्थ हो तो एक ही दिन में अष्टाष्टक-अर्चन करे; अथवा आठ-आठ दिनों में, या सोलह दिनों में, या बत्तीस दिनों में, या चौंसठ दिनों में।

पदपाठ अष्टाष्टकार्चनं कुर्यात् — अष्टाष्टक-अर्चन करे · शक्तश्चेदेकवासरे — यदि समर्थ हो तो एक दिन में · अथवाष्टाष्टदिवसेषु — अथवा आठ-आठ (चौंसठ) दिनों में · अथ द्व्यष्टदिनेषु च — या सोलह दिनों में · द्वात्रिंशदिवसेष्वेवं — या बत्तीस दिनों में · चतुःषष्टिदिनेषु च — और चौंसठ दिनों में

गुरुणा कारयेद्देवि क्रमज्ञेनापरेण वा ।

८३

क्रमज्ञश्चेत् स्वयं कुर्याद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ ८३ ॥

हे देवि! गुरु से अथवा क्रम जानने वाले अन्य किसी से करवाए; यदि स्वयं क्रमज्ञ हो तो वित्त की कृपणता छोड़कर स्वयं करे।

पदपाठ गुरुणा कारयेद्देवि — गुरु से कराए, हे देवि · क्रमज्ञेनापरेण वा — या क्रमज्ञ अन्य से · क्रमज्ञश्चेत् स्वयं कुर्यात् — यदि क्रमज्ञ हो तो स्वयं करे · वित्तशाठ्यविवर्जितः — धन की कृपणता से रहित

मूलाष्टकन्तु ब्रह्माद्याश्चासिताङ्गादिभैरवाः ।

८४

मङ्गलाद्यैश्च मिथुनैरष्टभिः शब्दिताः प्रिये ॥ ८४ ॥

मूल अष्टक ब्रह्मा आदि और असिताङ्ग आदि भैरव हैं; मङ्गला आदि (शक्तियों) के साथ मिथुन-रूप में वे आठ कहे जाते हैं, हे प्रिये!

पदपाठ मूलाष्टकन्तु — मूलाष्टक · ब्रह्माद्याः — ब्रह्मा आदि · असिताङ्गादिभैरवाः — असिताङ्ग आदि भैरव · मङ्गलाद्यैश्च मिथुनैः — मङ्गला आदि मिथुनों सहित · अष्टभिः शब्दिताः प्रिये — आठ कहे गए हैं, हे प्रिये

मूलाष्टकोद्भवानीति प्रसिद्धानि कुलागमे ।

अक्षोभ्यादिचतुःषष्टिमिथुनानि समर्चयेत् ॥ ८५॥

८५

"मूलाष्टक से उत्पन्न" इस नाम से कुलागम में प्रसिद्ध अक्षोभ्य आदि चौंसठ मिथुनों की पूजा करे —

पदपाठ मूलाष्टकोद्भवानीति — "मूलाष्टक से उत्पन्न" ऐसे · प्रसिद्धानि कुलागमे — कुलागम में प्रसिद्ध हैं · अक्षोभ्यादिचतुःषष्टिमिथुनानि — अक्षोभ्य आदि चौंसठ मिथुनों की · समर्चयेत् — पूजा करे

पूर्वोक्तेन विधानेन यथाविभवविस्तरम् ।

क्रमलोपं न कुर्वीत स्वेष्टकार्यार्थसिद्धये ॥ ८६॥

८६

पूर्वोक्त विधान से, यथाविभव विस्तार से; अपने इष्ट कार्य की सिद्धि के लिए क्रम का लोप न करे।

पदपाठ पूर्वोक्तेन विधानेन — पूर्वोक्त विधान से · यथाविभवविस्तरम् — यथावैभव विस्तार से · क्रमलोपं न कुर्वीत — क्रम-लोप न करे · स्वेष्टकार्यार्थसिद्धये — अपने इष्ट कार्य की सिद्धि के लिए

गन्धपुष्पाक्षताद्यैश्च मत्स्यमांसासवादिभिः ।

भक्ष्यभोज्यादिभिर्नानापदार्थैः षड्रसान्वितैः ।

८७

सम्यक् सन्तोषयेद्देवि मिथुनान्यतिभक्तितः ॥ ८७॥

गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से, मत्स्य, मांस, आसव आदि से, भक्ष्य-भोज्य आदि षड्रस-युक्त नाना पदार्थों से, हे देवि! अत्यन्त भक्ति से मिथुनों को भली प्रकार सन्तुष्ट करे।

पदपाठ गन्धपुष्पाक्षताद्यैश्च — गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि से · मत्स्यमांसासवादिभिः — मत्स्य, मांस, आसव आदि से · भक्ष्यभोज्यादिभिः — भक्ष्य-भोज्य आदि से · नानापदार्थैः षड्रसान्वितैः — षड्रस युक्त नाना पदार्थों से · सम्यक् सन्तोषयेद्देवि — सम्यक् सन्तुष्ट करे, हे देवि · मिथुनान्यतिभक्तितः — मिथुनों को अति भक्ति से

प्रौढान्तोल्लासपर्यन्तं कुर्यात् श्रीचक्रमम्बिके ।

एवं यः कुरुते देवि सकृदष्टाष्टकार्चनम् ॥ ८८ ॥

८८

हे अम्बिके! प्रौढान्त उल्लास तक श्रीचक्र करे। हे देवि! जो इस प्रकार एक बार भी अष्टाष्टक-अर्चन करता है,

पदपाठ प्रौढान्तोल्लासपर्यन्तं — प्रौढान्त उल्लास की सीमा तक · कुर्यात् श्रीचक्रमम्बिके — श्रीचक्र करे, हे अम्बिके · एवं यः कुरुते देवि — इस प्रकार जो करे, हे देवि · सकृदष्टाष्टकार्चनम् — एक बार अष्टाष्टक-अर्चन

ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवताभिः स पूज्यते ।

किं पुनर्मानवाद्यैश्च साक्षात् शिव इवापरः ॥ ८९ ॥

८९

वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवताओं द्वारा पूजित होता है — मनुष्यों आदि की तो बात ही क्या — साक्षात् दूसरे शिव के समान।

पदपाठ ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवताभिः — ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवताओं द्वारा · स पूज्यते — वह पूजित होता है · किं पुनर्मानवाद्यैश्च — मनुष्य आदि की तो बात ही क्या · साक्षात् शिव इवापरः — साक्षात् दूसरे शिव की तरह

यदर्चनाच्चतुःषष्टियोगिनीगणसंस्तुतः ।

पुनरावृत्तिरहितो निवसेत्तव सन्निधौ ॥ ९० ॥

९०

जिसकी पूजा से चौंसठ योगिनियों के गण से संस्तुत होकर वह पुनरावृत्ति-रहित तुम्हारे सन्निधान में निवास करता है।

पदपाठ यदर्चनात् — जिसके अर्चन से · चतुःषष्टियोगिनीगणसंस्तुतः — चौंसठ योगिनी-गण से स्तुत · पुनरावृत्तिरहितो — पुनरावृत्ति से रहित · निवसेत्तव सन्निधौ — तुम्हारे सन्निधान में रहता है

समस्तदेवताप्रीतिकारणं परमेश्वरि ।

९१

अस्मात् परतरा पूजा नास्ति सत्यं न संशयः ॥ ९१ ॥

यह समस्त देवताओं की प्रीति का कारण है, हे परमेश्वरि! इससे बढ़कर कोई पूजा नहीं — यह सत्य है, सन्देह नहीं।

पदपाठ समस्तदेवताप्रीतिकारणं — समस्त देवताओं की प्रीति का कारण · परमेश्वरि — हे परमेश्वरि · अस्मात् परतरा पूजा नास्ति — इससे बढ़कर कोई पूजा नहीं · सत्यं न संशयः — सत्य, सन्देह नहीं

पश्येदेवम्विधं चक्रं यो भक्त्याष्टाष्टकं प्रिये ।

९२

यज्ञदानतपस्तीर्थव्रतकोटिफलं लभेत् ॥ ९२ ॥

हे प्रिये! जो भक्तिपूर्वक ऐसे अष्टाष्टक चक्र का दर्शन करता है, वह करोड़ों यज्ञ, दान, तप, तीर्थ और व्रतों का फल पाता है।

पदपाठ पश्येदेवम्विधं चक्रं — ऐसे चक्र को जो देखे · यो भक्त्याष्टाष्टकं प्रिये — अष्टाष्टक का भक्ति से, हे प्रिये · यज्ञदानतपस्तीर्थव्रत — यज्ञ, दान, तप, तीर्थ, व्रत का · कोटिफलं लभेत् — करोड़ फल पाता है

राजा यः कारयेद्देवि भक्त्याष्टाष्टकपूजनम् ।

९३

चतुःसागरपर्यन्तां महीं शास्ति न संशयः ॥ ९३ ॥

हे देवि! जो राजा भक्तिपूर्वक अष्टाष्टक-पूजन करवाता है, वह चारों समुद्रों तक की पृथ्वी पर शासन करता है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ राजा यः कारयेद्देवि — जो राजा कराए, हे देवि · भक्त्याष्टाष्टकपूजनम् — भक्ति से अष्टाष्टक-पूजन · चतुःसागरपर्यन्तां — चारों समुद्रों तक · महीं शास्ति न संशयः — पृथ्वी पर शासन करता है, सन्देह नहीं

श्रीकण्ठादीनि पञ्चाशन्मिथुनानि समर्चयेत् ।
पूर्वोक्तेन विधानेन कुलेश्वरि विधानवित् ॥ ९४ ॥

९४

विधानवित् श्रीकण्ठ आदि पचास मिथुनों की पूर्वोक्त विधान से पूजा करे, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ श्रीकण्ठादीनि — श्रीकण्ठ आदि · पञ्चाशन्मिथुनानि समर्चयेत् — पचास मिथुनों की पूजा करे · पूर्वोक्तेन विधानेन — पूर्वोक्त विधान से · कुलेश्वरि विधानवित् — हे कुलेश्वरि, विधानज्ञ

स्वकार्यफलसिद्ध्यर्थं वित्तशाठ्यविवर्जितः ।
प्रौढान्तोल्लासयुक्तानि मिथुनानि समर्चयेत् ॥ ९५ ॥

९५

अपने कार्य की फल-सिद्धि के लिए, वित्त की कृपणता छोड़कर; प्रौढान्त उल्लास से युक्त मिथुनों की पूजा करे।

पदपाठ स्वकार्यफलसिद्ध्यर्थं — अपने कार्य की फल-सिद्धि के लिए · वित्तशाठ्यविवर्जितः — धन की कृपणता से रहित · प्रौढान्तोल्लासयुक्तानि — प्रौढान्त उल्लास से युक्त · मिथुनानि समर्चयेत् — मिथुनों की पूजा करे

सन्तुष्टानि प्रयच्छन्ति साधकायेप्सितं फलम् ।

अव्याहताज्ञः सर्वत्र पूज्यते देववत् प्रिये ।

९६

तव लोके वसेद्देवि ब्रह्मादिसुरसंस्तुतः ॥ ९६ ॥

सन्तुष्ट होकर वे साधक को ईप्सित फल देते हैं; उसकी आज्ञा सर्वत्र अबाधित होती है, वह देवता की भाँति पूजा जाता है, हे प्रिये! हे देवि! ब्रह्मा आदि देवों से संस्तुत होकर वह तुम्हारे लोक में रहता है।

पदपाठ सन्तुष्टानि प्रयच्छन्ति — सन्तुष्ट होकर देते हैं · साधकायेप्सितं फलम् — साधक को इच्छित फल · अव्याहताज्ञः सर्वत्र — सर्वत्र अव्याहत आज्ञा वाला · पूज्यते देववत् प्रिये — देव की तरह पूजित होता है, हे प्रिये · तव लोके वसेद्देवि — तुम्हारे लोक में रहता है, हे देवि · ब्रह्मादिसुरसंस्तुतः — ब्रह्मा आदि देवों से स्तुत

केशवादि गणेशादि कामादि मिथुनानि च ।

श्रीकण्ठादि समभ्यर्च्य तत्फलं लभते ध्रुवम् ॥ ९७ ॥

९७

केशव आदि, गणेश आदि, काम आदि और श्रीकण्ठ आदि मिथुनों की पूजा करके वह निश्चय ही उस फल को पाता है।

पदपाठ केशवादि गणेशादि — केशव आदि, गणेश आदि · कामादि मिथुनानि च — और काम आदि मिथुन · श्रीकण्ठादि समभ्यर्च्य — श्रीकण्ठ आदि की पूजा कर · तत्फलं लभते ध्रुवम् — वह फल निश्चय पाता है

अनुग्रहन्तु यः कुर्यात् डाकिन्यादिसमर्चने ।

मासे मासेऽथवा वर्षे स्वजन्मदिवसे प्रिये ॥ ९८॥

९८

जो डाकिनी आदि की पूजा में अनुग्रह (कृत्य) करता है — प्रति मास, या वर्ष में, या अपने जन्मदिन पर, हे प्रिये!

पदपाठ अनुग्रहन्तु यः कुर्यात् — जो अनुग्रह करे · डाकिन्यादिसमर्चने — डाकिनी आदि के अर्चन में · मासे मासेऽथवा वर्षे — मास-मास में या वर्ष में · स्वजन्मदिवसे प्रिये — अपने जन्मदिन पर, हे प्रिये

पूर्वोक्तेन विधानेन यथाविभवविस्तरम् ।

प्रौढान्तोल्लासपर्यन्तं तोषयेत्तद्विधानवित् ॥ ९९॥

९९

पूर्वोक्त विधान से, यथाविभव विस्तार से, प्रौढान्त उल्लास तक वह विधानवित् उन्हें सन्तुष्ट करे —

पदपाठ पूर्वोक्तेन विधानेन — पूर्वोक्त विधान से · यथाविभवविस्तरम् — यथावैभव विस्तार से · प्रौढान्तोल्लासपर्यन्तं — प्रौढान्त उल्लास की सीमा तक · तोषयेत्तद्विधानवित् — विधानज्ञ उन्हें सन्तुष्ट करे

कुर्वन्त्यनुग्रहं देवि सन्तुष्टाः सर्वदेवताः ।

सर्वोपद्रवरहितः सर्वैश्वर्यसमन्वितः ॥ १००॥

१००

हे देवि! सन्तुष्ट होकर सब देवता अनुग्रह करते हैं; सब उपद्रवों से रहित, सर्व ऐश्वर्य से युक्त,

पदपाठ कुर्वन्त्यनुग्रहं देवि — अनुग्रह करती हैं, हे देवि · सन्तुष्टाः सर्वदेवताः — सन्तुष्ट सब देवता · सर्वोपद्रवरहितः — सब उपद्रवों से रहित · सर्वैश्वर्यसमन्वितः — सब ऐश्वर्य से युक्त

लोकेऽस्मिन् संस्तुतः सर्वैः स जीवेच्छरदां शतम् ।

१०१

देहान्ते समवाप्नोति तव लोकं न संशयः ॥ १०१ ॥

इस लोक में सबसे संस्तुत होकर वह सौ वर्ष जीता है; देहान्त में तुम्हारे लोक को पाता है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ लोकेऽस्मिन् संस्तुतः सर्वैः — इस लोक में सबसे स्तुत · स जीवेच्छरदां शतम् — वह सौ शरद (वर्ष) जीता है · देहान्ते समवाप्नोति — देहान्त में पाता है · तव लोकं न संशयः — तुम्हारा लोक, सन्देह नहीं

दूतीयागन्तु यः कुर्यात् पूर्वोक्तविधिना प्रिये ।

१०२

निर्विकल्पेन चित्तेन नवशक्तिसमन्वितः ॥ १०२ ॥

हे प्रिये! जो पूर्वोक्त विधि से निर्विकल्प चित्त से नौ शक्तियों के साथ दूतीयाग करता है,

पदपाठ दूतीयागन्तु यः कुर्यात् — जो दूतीयाग करे · पूर्वोक्तविधिना प्रिये — पूर्वोक्त विधि से, हे प्रिये · निर्विकल्पेन चित्तेन — निर्विकल्प चित्त से · नवशक्तिसमन्वितः — नौ शक्तियों सहित

वर्षे वर्षे चतुःषष्टिपीठार्चनफलं लभेत् ।

१०३

आज्ञासिद्धिर्भक्तस्य देवताप्रीतिमाप्नुयात् ॥ १०३ ॥

वर्ष-वर्ष में, वह चौंसठ पीठों की अर्चना का फल पाता है; उसकी आज्ञा सिद्ध होती है और वह देवता की प्रीति पाता है।

पदपाठ वर्षे वर्षे — वर्ष-वर्ष · चतुःषष्टिपीठार्चनफलं लभेत् — चौंसठ पीठों के अर्चन का फल पाता है · आज्ञासिद्धिर्भक्तस्य — उसकी आज्ञासिद्धि होती है · देवताप्रीतिमाप्नुयात् — देवता की प्रीति पाता है

त्रिकपूजान्तु यः कुर्यादिच्छाज्ञानक्रियात्मिकाम् ।

१०४

आगमोक्तेन विधिना पूर्ववत्तद्विधानवित् ॥ १०४ ॥

जो विधानवित् इच्छा, ज्ञान और क्रिया रूप त्रिक की पूजा आगमोक्त विधि से पहले की भाँति करता है,

पदपाठ त्रिकपूजान्तु यः कुर्यात् — जो त्रिक-पूजा करे · इच्छाज्ञानक्रियात्मिकाम् — इच्छा, ज्ञान, क्रिया स्वरूपा · आगमोक्तेन विधिना — आगम में कही विधि से · पूर्ववत्तद्विधानवित् — पूर्ववत्, उस विधानज्ञ

पदार्थैस्तोषयेत् सम्यक् यथाविभवविस्तरम् ।

१०५

सन्तुष्टा देवतास्तिस्रः सर्वकर्मफलप्रदाः ।

देवेशि साधकाभीष्टं प्रयच्छन्ति न संशयः ॥ १०५ ॥

और यथाविभव विस्तार से पदार्थों से उन्हें भली प्रकार सन्तुष्ट करता है — सर्व कर्मों का फल देने वाली वे तीनों देवियाँ सन्तुष्ट होकर, हे देवेशि! साधक का अभीष्ट देती हैं, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ पदार्थैस्तोषयेत् सम्यक् — पदार्थों से सम्यक् सन्तुष्ट करे · यथाविभवविस्तरम् — यथाविभव विस्तार से · सन्तुष्टा देवतास्तिस्रः — सन्तुष्ट तीन देवता · सर्वकर्मफलप्रदाः — सब कर्मों का फल देने वाली · देवेशि साधकाभीष्टं — हे देवेशि, साधक का अभीष्ट · प्रयच्छन्ति न संशयः — देती हैं, सन्देह नहीं

इत्यादिदेवतापूजां विशेषदिवसेषु यः ।

१०६

करोति शास्त्रविधिना स भवेदावयोः प्रियः ॥ १०६ ॥

जो इन आदि देवताओं की पूजा विशेष दिवसों में शास्त्र-विधि से करता है, वह हम दोनों का प्रिय होता है।

पदपाठ इत्यादिदेवतापूजां — इत्यादि देवताओं की पूजा · विशेषदिवसेषु यः — विशेष दिनों में जो · करोति शास्त्रविधिना — शास्त्र-विधि से करता है · स भवेदावयोः प्रियः — वह हम दोनों का प्रिय होता है

श्रीचक्रं कौलिको मोहाद्विशेषदिवसेषु यः ।

१०७

न करोति समर्थः सन् स भवेद् योगिनीपशुः ॥ १०७ ॥

जो कौलिक समर्थ होते हुए भी मोहवश विशेष दिवसों में श्रीचक्र नहीं करता, वह योगिनियों का पशु हो जाता है।

पदपाठ श्रीचक्रं कौलिको मोहात् — श्रीचक्र, जो कौलिक मोह से · विशेषदिवसेषु यः — विशेष दिनों में · न करोति समर्थः सन् — समर्थ होकर भी नहीं करता · स भवेद् योगिनीपशुः — वह योगिनी-पशु हो जाता है

कुलपूजां विना चक्रे नाधिकारः कथञ्चन ।

१०८

कुलपूजां सुनियतं यः करोति स कौलिकः ॥ १०८ ॥

कुलपूजा के बिना चक्र में किसी प्रकार का अधिकार नहीं; जो नियमपूर्वक कुलपूजा करता है वही कौलिक है।

पदपाठ कुलपूजां विना चक्रे — कुलपूजा के बिना चक्र में · नाधिकारः कथञ्चन — किसी प्रकार अधिकार नहीं · कुलपूजां सुनियतं — कुलपूजा सुनियत · यः करोति स कौलिकः — जो करता है वह कौलिक है

विना मन्त्रेण पूजा चेद्देवता न प्रसीदति ।

कुलपूजां सुनियतं यः करोति हि कौलिकः ।

१०९

कुलेशि सर्वदाप्नोति योगिनीवीरमेलनम् ॥ १०९ ॥

यदि पूजा मन्त्र के बिना हो तो देवता प्रसन्न नहीं होती; जो कौलिक नियमपूर्वक कुलपूजा करता है, हे कुलेशि! वह सदा योगिनी-वीर-मेलन पाता है।

पदपाठ विना मन्त्रेण पूजा चेत् — यदि मन्त्र के बिना पूजा हो · देवता न प्रसीदति — देवता प्रसन्न नहीं होती · कुलपूजां सुनियतं — कुलपूजा सुनियत · यः करोति हि कौलिकः — जो कौलिक करता है · कुलेशि सर्वदाप्नोति — हे कुलेशि! सदा पाता है · योगिनीवीरमेलनम् — योगिनी-वीर-मेलन

नीचोऽपि वा सकृद्भक्त्या कारयेद् यः कुलार्चनम् ।

११०

स सद्गतिमवाप्नोति किमुतान्ये द्विजातयः ॥ ११० ॥

नीच भी जो एक बार भक्ति से कुलार्चन करवाता है, वह सद्गति पाता है — फिर अन्य द्विजातियों की तो बात ही क्या।

पदपाठ नीचोऽपि वा सकृद्भक्त्या — नीच भी एक बार भक्ति से · कारयेद् यः कुलार्चनम् — जो कुलार्चन कराए · स सद्गतिमवाप्नोति — वह सद्गति पाता है · किमुतान्ये द्विजातयः — द्विज आदि की तो बात ही क्या

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा ।

१११

कुलपूजारतो भूयादभीष्टफलसिद्धये ॥ १११ ॥

इसलिए सर्व प्रयत्न से, सब अवस्थाओं में, सदा अभीष्ट फल की सिद्धि के लिए कुलपूजा में रत रहे।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · सर्वावस्थासु सर्वदा — सब अवस्थाओं में, सदा · कुलपूजारतो भूयात् — कुलपूजा में रत रहे · अभीष्टफलसिद्धये — अभीष्ट फल की सिद्धि के लिए

कुलपूजाधिको यज्ञः कुलपूजाधिकं व्रतम् ।

११२

कुलपूजाधिकं तीर्थं कुलपूजाधिकं तपः ॥ ११२ ॥

कुलपूजा यज्ञ से बढ़कर है, कुलपूजा व्रत से बढ़कर है, कुलपूजा तीर्थ से बढ़कर है, कुलपूजा तप से बढ़कर है।

पदपाठ कुलपूजाधिको यज्ञः — कुलपूजा यज्ञ से अधिक है · कुलपूजाधिकं व्रतम् — कुलपूजा व्रत से अधिक है · कुलपूजाधिकं तीर्थं — कुलपूजा तीर्थ से अधिक है · कुलपूजाधिकं तपः — कुलपूजा तप से अधिक है

कुलपूजाधिकं दानं कुलपूजाधिका क्रिया ।

११३

कुलपूजाधिकं ज्ञानं कुलपूजाधिकं सुखम् ॥ ११३ ॥

कुलपूजा दान से बढ़कर है, कुलपूजा क्रिया से बढ़कर है, कुलपूजा ज्ञान से बढ़कर है, कुलपूजा सुख से बढ़कर है।

पदपाठ कुलपूजाधिकं दानं — कुलपूजा दान से अधिक है · कुलपूजाधिका क्रिया — कुलपूजा क्रिया से अधिक है · कुलपूजाधिकं ज्ञानं — कुलपूजा ज्ञान से अधिक है · कुलपूजाधिकं सुखम् — कुलपूजा सुख से अधिक है

कुलपूजाधिको धर्मः कुलपूजाधिकं फलम् ।

११४

कुलपूजाधिकं ध्यानं कुलपूजाधिकं महः ॥ ११४ ॥

कुलपूजा धर्म से बढ़कर है, कुलपूजा फल से बढ़कर है, कुलपूजा ध्यान से बढ़कर है, कुलपूजा तेज से बढ़कर है।

पदपाठ कुलपूजाधिको धर्मः — कुलपूजा धर्म से अधिक है · कुलपूजाधिकं फलम् — कुलपूजा फल से अधिक है · कुलपूजाधिकं ध्यानं — कुलपूजा ध्यान से अधिक है · कुलपूजाधिकं महः — कुलपूजा तेज (महः) से अधिक है

कुलपूजाधिको योगः कुलपूजाधिका गतिः ।

११५

कुलपूजाधिकं भाग्यं कुलपूजाधिकाऽर्चना ॥ ११५ ॥

कुलपूजा योग से बढ़कर है, कुलपूजा गति से बढ़कर है, कुलपूजा भाग्य से बढ़कर है, कुलपूजा अन्य अर्चना से बढ़कर है।

पदपाठ कुलपूजाधिको योगः — कुलपूजा योग से अधिक है · कुलपूजाधिका गतिः — कुलपूजा गति से अधिक है · कुलपूजाधिकं भाग्यं — कुलपूजा भाग्य से अधिक है · कुलपूजाधिकाऽर्चना — कुलपूजा अर्चना से अधिक है

नास्ति नास्ति पुनर्नास्ति त्वां शपे कुलनायिके ।

बहुनात्र किमुक्तेन रहस्यं शृणु पार्वति ॥ ११६ ॥

११६

(इससे बढ़कर) नहीं है, नहीं है, फिर भी नहीं है — तुम्हारी शपथ, हे कुलनायिके! यहाँ बहुत कहने से क्या? रहस्य सुनो, हे पार्वति!

पदपाठ नास्ति नास्ति पुनर्नास्ति — नहीं है, नहीं है, फिर नहीं है · त्वां शपे कुलनायिके — तुम्हारी शपथ, हे कुलनायिके · बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या · रहस्यं शृणु पार्वति — रहस्य सुनो, हे पार्वति

वेदशास्त्रोक्तमार्गेण कुलपूजां करोति यः ।

तत्समीपे स्थितं मां त्वां विद्धि नान्यत्र भाविनि ।

११७

इदं सत्यमिदं सत्यं सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ११७ ॥

जो वेद-शास्त्र में कहे मार्ग से कुलपूजा करता है, उसके समीप मुझे और तुम्हें स्थित जानो, अन्यत्र नहीं, हे भाविनि! यह सत्य है, यह सत्य है, सत्य है, सत्य है, सन्देह नहीं।

पदपाठ वेदशास्त्रोक्तमार्गेण — वेद-शास्त्र में कहे मार्ग से · कुलपूजां करोति यः — जो कुलपूजा करता है · तत्समीपे स्थितं मां — उसके समीप स्थित मुझे · त्वां विद्धि नान्यत्र भाविनि — और तुम्हें जानो, अन्यत्र नहीं, हे भाविनि · इदं सत्यमिदं सत्यं — यह सत्य है, यह सत्य है · सत्यं सत्यं न संशयः — सत्य, सत्य, सन्देह नहीं

खभूमिदिग्जलगिरिवनसर्वचराः प्रिये ।

सहस्रकोटियोगिन्यस्तावन्तो भैरवा अपि ।

११८

नियुक्ता हि मया देवि कुलसंरक्षणाय च ॥ ११८ ॥

आकाश, भूमि, दिशाओं, जल, पर्वत और वन में सर्वत्र विचरने वाली, हे प्रिये! सहस्र करोड़ योगिनियाँ और उतने ही भैरव, हे देवि! मैंने कुल की रक्षा के लिए नियुक्त किए हैं।

पदपाठ खभूमिदिग्जलगिरिवन — आकाश, भूमि, दिशा, जल, पर्वत, वन में · सर्वचराः प्रिये — सर्वत्र विचरने वाली, हे प्रिये · सहस्रकोटियोगिन्यः — हजार करोड़ योगिनियाँ · तावन्तो भैरवा अपि — और उतने ही भैरव · नियुक्ता हि मया देवि — मैंने नियुक्त किए हैं, हे देवि · कुलसंरक्षणाय च — और कुल की रक्षा के लिए

दिवसे दिवसे सर्वे पार्वति मुदिताननाः ।

साधकानेव वीक्षन्ते स्वस्वपूजनलिप्सया ॥ ११९ ॥

११९

हे पार्वति! प्रतिदिन वे सब प्रसन्न मुख होकर अपनी-अपनी पूजा की लालसा से साधकों को ही देखते रहते हैं।

पदपाठ दिवसे दिवसे सर्वे — दिन-दिन सब · पार्वति मुदिताननाः — हे पार्वति, प्रसन्न मुख · साधकानेव वीक्षन्ते — साधकों को ही देखते हैं · स्वस्वपूजनलिप्सया — अपनी-अपनी पूजा की इच्छा से

अपूजितास्तु निघ्नन्ति पालयन्ति सुपूजिताः ।

१२०

गुरुभक्तान् सदाचारान् गुह्यधर्मान् सदाशिवान् ॥ १२० ॥

अपूजित होने पर वे मारते हैं; भली प्रकार पूजित होने पर गुरुभक्त, सदाचारी, गुह्य धर्म वाले और सदा शिव-स्वरूप साधकों की रक्षा करते हैं।

पदपाठ अपूजितास्तु निघ्नन्ति — अपूजित होने पर मारते हैं · पालयन्ति सुपूजिताः — सुपूजित होने पर पालन करते हैं · गुरुभक्तान् सदाचारान् — गुरुभक्तों, सदाचारियों को · गुह्यधर्मान् सदाशिवान् — गुह्यधर्म वालों, सदाशिवों को

भक्तिहीनान् दुराचारान् नाशयन्ति प्रकाशकान् ।

१२१

श्रीचक्रे संस्मरेत्तस्माद् योगिनीभैरवान् प्रिये ॥ १२१ ॥

भक्तिहीन, दुराचारी और (रहस्य के) प्रकाशकों का वे नाश करते हैं; इसलिए श्रीचक्र में योगिनियों और भैरवों का स्मरण करे, हे प्रिये!

पदपाठ भक्तिहीनान् दुराचारान् — भक्तिहीनों, दुराचारियों को · नाशयन्ति प्रकाशकान् — और प्रकाशकों (भेद खोलने वालों) को नष्ट करते हैं · श्रीचक्रे संस्मरेत्तस्मात् — इसलिए श्रीचक्र में स्मरण करे · योगिनीभैरवान् प्रिये — योगिनियों और भैरवों का, हे प्रिये

न स्मरेद् यदि मूढात्मा योगिनीनां भवेत् पशुः ।

१२२

तस्मात् श्रीचक्रमध्ये तु संस्मरेत् सर्वदेवताः ॥ १२२ ॥

यदि मूढात्मा स्मरण न करे तो वह योगिनियों का पशु हो जाता है; इसलिए श्रीचक्र के मध्य में सब देवताओं का स्मरण करे।

पदपाठ न स्मरेद् यदि मूढात्मा — यदि मूढात्मा स्मरण न करे · योगिनीनां भवेत् पशुः — तो योगिनियों का पशु हो जाता है · तस्मात् श्रीचक्रमध्ये तु — इसलिए श्रीचक्र के मध्य में · संस्मरेत् सर्वदेवताः — सब देवताओं का स्मरण करे

अनुगृह्णन्ति देवेशि साधकान् नात्र संशयः ।

१२३

अनुग्रहन्तु वक्ष्यामि शृणु देवि यथाक्रमम् ॥ १२३ ॥

हे देवेशि! वे साधकों पर अनुग्रह करते हैं, इसमें सन्देह नहीं। अब मैं अनुग्रह (कृत्य) कहता हूँ; हे देवि! क्रम से सुनो।

पदपाठ अनुगृह्णन्ति देवेशि — अनुग्रह करते हैं, हे देवेशि · साधकान् नात्र संशयः — साधकों पर, इसमें सन्देह नहीं · अनुग्रहन्तु वक्ष्यामि — अब अनुग्रह कहता हूँ · शृणु देवि यथाक्रमम् — सुनो देवि, यथाक्रम

आत्मनोऽनुग्रहार्थं वा परार्थं श्रेष्ठमुत्तमम् ।

१२४

शुचिद्रव्यसमायुक्तं चक्रपूजासमन्वितम् ॥ १२४ ॥

अपने अनुग्रह के लिए अथवा दूसरे के लिए — श्रेष्ठ और उत्तम, शुचि द्रव्यों से युक्त, चक्रपूजा-सहित —

पदपाठ आत्मनोऽनुग्रहार्थं वा — अपने अनुग्रह के लिए · परार्थं श्रेष्ठमुत्तमम् — या पर के लिए — श्रेष्ठ, उत्तम · शुचिद्रव्यसमायुक्तं — शुचि द्रव्यों से युक्त · चक्रपूजासमन्वितम् — चक्रपूजा सहित

सर्वेषां दक्षिणां दत्त्वा होमपात्रं पृथक् पृथक् ।

१२५

प्रपूजयेच्च वर्णस्थाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ १२५ ॥

सबको दक्षिणा और पृथक्-पृथक् होमपात्र देकर, अपने-अपने वर्ग में स्थित, सर्व आभरणों से भूषित उनकी पूजा करे,

पदपाठ सर्वेषां दक्षिणां दत्त्वा — सबको दक्षिणा देकर · होमपात्रं पृथक् पृथक् — और होमपात्र पृथक्-पृथक् · प्रपूजयेच्च वर्णस्थाः — पूजा करे, वर्णों में स्थित · सर्वाभरणभूषिताः — सब आभरणों से भूषित

हर्षानन्दस्वयंयुक्ताः प्रसन्नाश्च पृथक् पृथक् ।

१२६

पायसाज्यौदनैर्युक्तैर्नैवेद्यैर्भक्तिसंयुतैः ॥ १२६ ॥

स्वयं हर्ष और आनन्द से युक्त और प्रसन्न उनकी पृथक्-पृथक्, भक्ति-युक्त पायस, घी और ओदन के नैवेद्यों से पूजा करे।

पदपाठ हर्षानन्दस्वयंयुक्ताः — हर्ष-आनन्द से स्वयं युक्त · प्रसन्नाश्च पृथक् पृथक् — और प्रसन्न, पृथक्-पृथक् · पायसाज्यौदनैर्युक्तैः — पायस, घी, ओदन (चावल) सहित · नैवेद्यैर्भक्तिसंयुतैः — भक्ति-युक्त नैवेद्यों से

गन्धपुष्पादिभिः सम्यगर्चयित्वा गणेश्वरम् ।

१२७

हसख फ्रें हेसौं [ह्सौं] डां डीं डमलवरयूं ततः ॥ १२७ ॥

गन्ध, पुष्प आदि से गणेश्वर की भली प्रकार पूजा करके — हसख फ्रें हेसौं [ह्सौं] डां डीं डमलवरयूं, फिर

पदपाठ गन्धपुष्पादिभिः सम्यक् — गन्ध, पुष्प आदि से सम्यक् · अर्चयित्वा गणेश्वरम् — गणेश्वर की पूजा कर · हसख फ्रें हेसौं [ह्सौं] — हसख फ्रें हेसौं (ह्सौं) · डां डीं डमलवरयूं ततः — डां डीं डमलवरयूं, फिर

श्रीपादुकां हेसौ [ह्सौ] मिति च हसखफ्रें पुटन्ततः ।

१२८

सङ्कल्प्य मनसोऽभीष्टं मधुरत्रितयः प्रिये ॥ १२८ ॥

श्रीपादुका और हेसौ [ह्सौ] — इस प्रकार हसखफ्रें से सम्पुटित करके; फिर मन के अभीष्ट का सङ्कल्प करके, मधुर-त्रितय से, हे प्रिये!

पदपाठ श्रीपादुकां — श्रीपादुका · हेसौ [ह्सौ] मिति च — और हेसौ (ह्सौ) — इस प्रकार · हसखफ्रें पुटन्ततः — हसखफ्रें से पुटित, फिर · सङ्कल्प्य मनसोऽभीष्टं — मन के अभीष्ट का संकल्प कर · मधुरत्रितयः प्रिये — तीन मधुर (मधु, घी, शर्करा) से, हे प्रिये

गन्धपुष्पादिभिः सम्यगर्चयित्वा पृथक् पृथक् ।

१२९

पूजयित्वेप्सितान् कामान् प्रार्थयेत् कमलानने ॥ १२९ ॥

गन्ध, पुष्प आदि से पृथक्-पृथक् भली प्रकार पूजा करके, पूजा के बाद ईप्सित कामनाओं की प्रार्थना करे, हे कमलानने!

पदपाठ गन्धपुष्पादिभिः सम्यक् — गन्ध, पुष्प आदि से सम्यक् · अर्चयित्वा पृथक् पृथक् — पृथक्-पृथक् पूजा कर · पूजयित्वेप्सितान् कामान् — पूजा कर, इच्छित कामनाओं की · प्रार्थयेत् कमलानने — प्रार्थना करे, हे कमलानने

ईप्सितानि च सर्वाणि साधको लभते वरम् ।

१३०

आत्मनश्च परस्यापि रक्षार्थं पूजयेत् प्रिये ॥ १३० ॥

और साधक सब ईप्सित वस्तुएँ वर-रूप में पाता है। अपनी और दूसरे की भी रक्षा के लिए पूजा करे, हे प्रिये!

पदपाठ ईप्सितानि च सर्वाणि — और सब इच्छित · साधको लभते वरम् — साधक वर रूप में पाता है · आत्मनश्च परस्यापि — अपनी और दूसरे की भी · रक्षार्थं पूजयेत् प्रिये — रक्षा के लिए पूजा करे, हे प्रिये

रोगाणां नाशनार्थञ्च यथात्र पुत्रसिद्धये ।

१३१

वश्यार्थं मङ्गलार्थञ्च धर्मकर्मार्थसिद्धये ॥ १३१ ॥

रोगों के नाश के लिए, वैसे ही पुत्र-सिद्धि के लिए, वशीकरण और मङ्गल के लिए, और धर्म, कर्म और अर्थ की सिद्धि के लिए।

पदपाठ रोगाणां नाशनार्थञ्च — और रोगों के नाश के लिए · यथात्र पुत्रसिद्धये — वैसे ही यहाँ पुत्र-सिद्धि के लिए · वश्यार्थं मङ्गलार्थञ्च — वश्य के लिए और मङ्गल के लिए · धर्मकर्मार्थसिद्धये — धर्म, कर्म, अर्थ की सिद्धि के लिए

सप्ताहं पूजयेद्देवि चतुर्दशदिनानि च ।

१३२

एकविंशदिनान्यत्र लभते चेप्सितं फलम् ॥ १३२ ॥

हे देवि! सात दिन, या चौदह दिन, या इक्कीस दिन पूजा करे, और ईप्सित फल पाता है।

पदपाठ सप्ताहं पूजयेद्देवि — सात दिन पूजा करे, हे देवि · चतुर्दशदिनानि च — और चौदह दिन · एकविंशदिनान्यत्र — या यहाँ इक्कीस दिन · लभते चेप्सितं फलम् — और इच्छित फल पाता है

दक्षिणाञ्च पृथग् दद्याद्वस्त्रभूषाङ्गुरीयकम् ।

१३३

कुलाष्टकसमायुक्तं चतुःषष्टिसमन्वितम् ॥ १३३ ॥

और पृथक्-पृथक् दक्षिणा दे — वस्त्र, आभूषण और अँगूठी — कुलाष्टक से युक्त और चौंसठ से समन्वित (पूजा करे)।

पदपाठ दक्षिणाञ्च पृथग् दद्यात् — और दक्षिणा पृथक् दे · वस्त्रभूषाङ्गुरीयकम् — वस्त्र, आभूषण, अँगूठी · कुलाष्टकसमायुक्तं — कुलाष्टक से युक्त · चतुःषष्टिसमन्वितम् — चौंसठ सहित

अर्चितञ्च प्रयत्नेन सिद्धिर्भवत्यनेकशः ।

१३४

वित्तशाठ्यं न कुर्वीत यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः ॥ १३४ ॥

प्रयत्नपूर्वक पूजा करने पर अनेक प्रकार से सिद्धि होती है; यदि अपनी सिद्धि चाहे तो वित्त में कृपणता न करे।

पदपाठ अर्चितञ्च प्रयत्नेन — और यत्न से पूजित · सिद्धिर्भवत्यनेकशः — सिद्धि अनेक प्रकार से होती है · वित्तशाठ्यं न कुर्वीत — धन की कृपणता न करे · यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः — यदि अपनी सिद्धि चाहे

एवं षट्कं समाख्यातमनुग्रहं वरानने ।

अर्चितव्यं प्रयत्नेन साधकैः स्वेष्टसिद्धये ॥ १३५॥

१३५

इस प्रकार षट्क अनुग्रह कहा गया, हे वरानने! साधकों को अपने इष्ट की सिद्धि के लिए प्रयत्नपूर्वक इसकी अर्चना करनी चाहिए।

पदपाठ एवं षट्कं समाख्यातम् — इस प्रकार षट्क कहा गया · अनुग्रहं वरानने — अनुग्रह, हे वरानने · अर्चितव्यं प्रयत्नेन — यत्न से पूजनीय है · साधकैः स्वेष्टसिद्धये — साधकों द्वारा अपने इष्ट की सिद्धि के लिए

ध्यात्वैव पूजयेदेता डाकिन्याद्या वरानने ।

संपूज्य सप्तमीं देवीं पूजयेत् सर्वसिद्धये ॥ १३६॥

१३६

हे वरानने! डाकिनी आदि इनकी ध्यान करके ही पूजा करे; सातवीं देवी की पूजा करके सर्व सिद्धि के लिए पूजा करे।

पदपाठ ध्यात्वैव पूजयेदेता — ध्यान करके ही इनकी पूजा करे · डाकिन्याद्या वरानने — डाकिनी आदि, हे वरानने · संपूज्य सप्तमीं देवीं — सातवीं देवी की पूजा कर · पूजयेत् सर्वसिद्धये — सब सिद्धि के लिए पूजा करे

शक्तिदेहसमुत्पन्नं शक्तिनिर्माल्यभोजने ।

स्ववर्गेण समायुक्ता दत्तनिर्माल्यमित्यपि ।

१३७

प्रतिगृह्युगं स्वाहा इति निर्माल्यसर्जनम् ॥ १३७॥

शक्ति के देह से उत्पन्न शक्ति-निर्माल्य के भोजन में: "स्ववर्ग से युक्त, निर्माल्य दिया गया" — ऐसा भी; "प्रतिगृह्य प्रतिगृह्य स्वाहा" — यह निर्माल्य-सर्जन है।

पदपाठ शक्तिदेहसमुत्पन्नं — शक्ति के देह से उत्पन्न · शक्तिनिर्माल्यभोजने — शक्ति के निर्माल्य के भोजन में · स्ववर्गेण समायुक्ता — अपने वर्ग से युक्त · दत्तनिर्माल्यमित्यपि — "निर्माल्य दिया गया" — ऐसे भी · प्रतिगृह्युगं स्वाहा — "प्रतिगृह्य" दो बार, स्वाहा · इति निर्माल्यसर्जनम् — यह निर्माल्य-सर्जन है

डाकिनी सर्पवदना वित्तजा ज्वलनप्रभा ।

१३८

कमण्डलुं कर्तृकाञ्च धारयन्ती वरप्रदा ॥ १३८ ॥

डाकिनी सर्प के मुख वाली, वित्त से उत्पन्न, अग्नि के समान प्रभा वाली, कमण्डलु और कर्तरी धारण करने वाली, वरदायिनी है।

पदपाठ डाकिनी सर्पवदना — डाकिनी सर्प-मुखी · वित्तजा ज्वलनप्रभा — वित्त से जन्मी, अग्नि-सी प्रभा वाली · कमण्डलुं कर्तृकाञ्च — कमण्डलु और कर्तरी (छुरी) · धारयन्ती वरप्रदा — धारण करती, वर देने वाली

उलूकवदना देवी राकिणी नीलसन्निभा ।

१३९

खड्गखेटकसंयुक्ता सर्वालङ्कारभूषिता ॥ १३९ ॥

देवी राकिणी उलूक के मुख वाली, नील वर्ण की, खड्ग और खेटक से युक्त, सर्व अलङ्कारों से भूषित है।

पदपाठ उलूकवदना देवी — उलूक-मुखी देवी · राकिणी नीलसन्निभा — राकिणी नील वर्ण की · खड्गखेटकसंयुक्ता — खड्ग और खेटक (ढाल) से युक्त · सर्वालङ्कारभूषिता — सब अलंकारों से भूषित

लाकिनी श्रीकपालाढ्या पाशांकुशधरा सती ।

१४०

पाटलीपुष्पसङ्काशा सर्वाभरणभूषिता ॥ १४० ॥

लाकिनी श्रीकपाल से युक्त, पाश और अंकुश धारण करने वाली सती, पाटली पुष्प के समान वर्ण वाली, सर्व आभरणों से भूषित है।

पदपाठ लाकिनी श्रीकपालाढ्या — लाकिनी श्रीकपाल से समृद्ध · पाशांकुशधरा सती — पाश और अंकुश धारण करती सती · पाटलीपुष्पसङ्काशा — पाटली पुष्प के रंग की · सर्वाभरणभूषिता — सब आभरणों से भूषित

काकिनी हयवक्त्रा च माणिक्यसदृशप्रभा ।

१४१

त्रिमुखी मुण्डसंयुक्ता सिद्धिदा सर्वशोभना ॥ १४१ ॥

और काकिनी अश्व के मुख वाली, माणिक्य के समान प्रभा वाली, त्रिमुखी, मुण्ड से युक्त, सिद्धिदायिनी और सर्वशोभना है।

पदपाठ काकिनी हयवक्त्रा च — और काकिनी अश्व-मुखी · माणिक्यसदृशप्रभा — माणिक्य-सी प्रभा वाली · त्रिमुखी मुण्डसंयुक्ता — त्रिमुखी, मुण्ड से युक्त · सिद्धिदा सर्वशोभना — सिद्धि देने वाली, सर्वशोभना

शाकिनी त्वञ्जनप्रख्या मार्जारास्या सुशोभना ।

१४२

कुलिशञ्च तथा दण्डं धारयन्ती शुचिस्मिता ॥ १४२ ॥

शाकिनी अञ्जन के समान (श्याम), मार्जार के मुख वाली, सुशोभना, कुलिश और दण्ड धारण करने वाली, शुचि मुस्कान वाली है।

पदपाठ शाकिनी त्वञ्जनप्रख्या — शाकिनी अंजन-सी (काली) · मार्जारास्या सुशोभना — मार्जार-मुखी, सुशोभना · कुलिशञ्च तथा दण्डं — कुलिश (वज्र) और दण्ड · धारयन्ती शुचिस्मिता — धारण करती, शुचि मुस्कान वाली

हाकिनी ऋक्षवदना नीलनीरदसन्निभा ।

कपालशूलहस्ता च खेटकैरुपशोभिता ।

१४३

एकद्वित्रिचतुःपञ्चषण्मुखी सरभाभया ॥ १४३ ॥

हाकिनी ऋक्ष (भालू) के मुख वाली, नील मेघ के समान, कपाल और शूल हाथ में लिए, खेटकों से शोभित, एक, दो, तीन, चार, पाँच या छह मुख वाली, कान्तिमयी है।

पदपाठ हाकिनी ऋक्षवदना — हाकिनी ऋक्ष (भालू)-मुखी · नीलनीरदसन्निभा — नीले मेघ-सी · कपालशूलहस्ता च — कपाल और शूल हाथ में · खेटकैरुपशोभिता — खेटकों से सुशोभित · एकद्वित्रिचतुःपञ्चषण्मुखी — एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह मुखों वाली · सरभाभया — दीप्त कान्ति वाली

इति ते कथितं किञ्चिद्विशेषदिवसार्चनम् ।

समासेन कुलेशानि किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १४४ ॥

१४४

इस प्रकार विशेष दिवसों की अर्चना तुम्हें संक्षेप में कुछ कही गई, हे कुलेशानि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · विशेषदिवसार्चनम् — विशेष दिनों का अर्चन · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे विशेषदिवसार्चनं नाम दशम उल्लासः ॥ १० ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
विशेषदिवसार्चन नामक दशम उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथैकादशोल्लासः

एकादश उल्लास — कुलाचारकथनम्



ईश्वर कुलाचार के नियम बताते हैं: दीक्षितों में पौर्वापर्य, पूजा का समय और विधि, चक्र में पात्र का शिष्टाचार, पशुओं के सामने गोपन, गुरु, गुरु-स्त्रियों और कुलशास्त्रों का सम्मान, स्त्रियों और कुल-वृक्षों का आदर, पाँच महापातक, कुल-निन्दक और आचार त्यागने वाले कौलिक की गति, और गुरु द्वारा प्रायश्चित्त।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि सर्वलोकैकपूजित ।

१

कुलाचारक्रमं देव वद मे करुणानिधे ॥ १॥

हे कुलेश! हे समस्त लोकों के एकमात्र पूज्य! मैं कुलाचार का क्रम सुनना चाहती हूँ; हे देव! हे करुणानिधे! मुझे बताइए।

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · सर्वलोकैकपूजित — हे सब लोकों के एकमात्र पूजित · कुलाचारक्रमं देव — कुलाचार का क्रम, हे देव · वद मे करुणानिधे — मुझे बताइए, हे करुणानिधे

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

२

तस्य श्रवणमात्रेण पशुपाशैः प्रमुच्यते ॥ २॥

हे देवि! सुनो, जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवणमात्र से पशु-पाशों से मुक्ति हो जाती है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · पशुपाशैः प्रमुच्यते — पशु-पाशों से मुक्त होता है

यदि चेद्दीक्षितो ज्येष्ठः कुलपूजादिवर्जितः ।

तत्कनिष्ठः क्रमज्ञश्चेत् कुलपूजां समाचरेत् ॥ ३॥

३

यदि दीक्षित ज्येष्ठ कुलपूजा आदि से रहित हो और उसका कनिष्ठ क्रम को जानता हो, तो कनिष्ठ ही कुलपूजा करे।

पदपाठ यदि चेद्दीक्षितो ज्येष्ठः — यदि दीक्षित ज्येष्ठ · कुलपूजादिवर्जितः — कुलपूजा आदि से रहित हो · तत्कनिष्ठः क्रमज्ञश्चेत् — और उसका कनिष्ठ क्रमज्ञ हो · कुलपूजां समाचरेत् — तो कुलपूजा करे

तत्समीपं ततो गत्वा नमस्कृत्य गुरुं यथा ।

तस्मै निवेद्य तत्सर्वं शेषं भुञ्जीत पार्वति ॥ ४॥

४

फिर उसके समीप जाकर गुरु के समान प्रणाम कर, वह सब उसे निवेदन करके शेष का भोग करे, हे पार्वति!

पदपाठ तत्समीपं ततो गत्वा — फिर उसके समीप जाकर · नमस्कृत्य गुरुं यथा — गुरु की तरह नमस्कार कर · तस्मै निवेद्य तत्सर्वं — उसे वह सब निवेदन कर · शेषं भुञ्जीत पार्वति — शेष का भोग करे, हे पार्वति

पूजामध्ये गुरौ ज्येष्ठे पूज्ये वापि समागते ।

नत्वा ब्रूयात् स्थितं शिष्टमाचरेत्तदनुज्ञया ॥ ५॥

५

पूजा के बीच में गुरु, ज्येष्ठ अथवा कोई पूज्य आ जाए तो प्रणाम करके पूजा जहाँ तक पहुँची हो वह बताए और शेष उनकी अनुज्ञा से करे।

पदपाठ पूजामध्ये — पूजा के मध्य में · गुरौ ज्येष्ठे पूज्ये वापि समागते — गुरु, ज्येष्ठ या पूज्य के आने पर · नत्वा ब्रूयात् स्थितं — नमन कर, (पूजा की) स्थिति कहे · शिष्टमाचरेत्तदनुज्ञया — और शेष उनकी अनुज्ञा से करे

ज्येष्ठस्य च कनिष्ठस्य शिष्यावेकत्र संस्थितौ ।

तत्र पूर्ववदाचारः कथितः कुलनायिके ॥ ६॥

६

ज्येष्ठ और कनिष्ठ के दो शिष्य एक स्थान पर हों तो वहाँ पूर्ववत् आचार कहा गया है, हे कुलनायिके!

पदपाठ ज्येष्ठस्य च कनिष्ठस्य — ज्येष्ठ और कनिष्ठ के · शिष्यावेकत्र संस्थितौ — दो शिष्य एक स्थान पर हों · तत्र पूर्ववदाचारः — वहाँ पूर्ववत् आचार · कथितः कुलनायिके — कहा गया, हे कुलनायिके

अज्ञातकौलिके प्राप्ते पौर्वापर्यन्तु चिन्तयेत् ।

स्मृत्वा स्वस्य गुरुं देवि स्वस्य मार्गेण तर्पयेत् ॥ ७॥

७

अज्ञात कौलिक के आने पर पौर्वापर्य (कौन अग्रज है) का विचार करे; हे देवि! अपने गुरु का स्मरण कर अपने मार्ग से तर्पण करे।

पदपाठ अज्ञातकौलिके प्राप्ते — अज्ञात कौलिक के आने पर · पौर्वापर्यन्तु चिन्तयेत् — पूर्वापर (वरिष्ठता) का विचार करे · स्मृत्वा स्वस्य गुरुं देवि — अपने गुरु का स्मरण कर, हे देवि · स्वस्य मार्गेण तर्पयेत् — अपने मार्ग से तर्पण करे

नित्यार्चनं दिने कुर्याद्वात्रौ नैमित्तिकार्चनम् ।

उभयोः काम्यकर्माणि चेति शास्त्रस्य निर्णयः ॥ ८॥

८

नित्य अर्चन दिन में करे, नैमित्तिक अर्चन रात्रि में, और काम्य कर्म दोनों समय — यह शास्त्र का निर्णय है।

पदपाठ नित्यार्चनं दिने कुर्यात् — नित्यार्चन दिन में करे · वात्रौ नैमित्तिकार्चनम् — रात्रि में नैमित्तिक अर्चन · उभयोः काम्यकर्माणि — दोनों में काम्य कर्म · चेति शास्त्रस्य निर्णयः — यह शास्त्र का निर्णय है

अस्नात्वाऽनासनस्थो वा भुक्त्वा वा प्रलपन्नपि ।

गन्धपुष्पाक्षताकल्पवस्त्राद्यैरनलङ्कृतः ।

९

अविन्यस्तशरीरो वा कुलपूजां न चाचरेत् ॥ ९॥

बिना स्नान किए, आसन पर न बैठे, भोजन करके, या बकबक करते हुए, गन्ध, पुष्प, अक्षत, आभूषण, वस्त्र आदि से अलङ्कृत हुए बिना, अथवा शरीर पर न्यास किए बिना — कुलपूजा न करे।

पदपाठ अस्नात्वाऽनासनस्थो वा — बिना स्नान, या बिना आसन पर बैठे · भुक्त्वा वा प्रलपन्नपि — भोजन करके, या प्रलाप करते हुए · गन्धपुष्पाक्षताकल्पवस्त्राद्यैः — गन्ध, पुष्प, अक्षत, आभूषण, वस्त्र आदि से · अनलङ्कृतः — अनलंकृत · अविन्यस्तशरीरो वा — या बिना न्यास किए शरीर से · कुलपूजां न चाचरेत् — कुलपूजा न करे

विना मन्त्रेण या पूजा विना मांसेन तर्पणम् ।

१०

विना शक्त्या तु यत्पानं निष्फलं कथितं प्रिये ॥ १०॥

मन्त्र के बिना पूजा, मांस के बिना तर्पण और शक्ति के बिना पान — ये निष्फल कहे गए हैं, हे प्रिये!

पदपाठ विना मन्त्रेण या पूजा — बिना मन्त्र की पूजा · विना मांसेन तर्पणम् — बिना मांस का तर्पण · विना शक्त्या तु यत्पानं — और बिना शक्ति का पान · निष्फलं कथितं प्रिये — निष्फल कहा गया है, हे प्रिये

श्रीचक्रमेको वा कुयदिकपात्रन्तु नार्चयेत् ।

११

नार्चयेदेकहस्तेन न पिबेदेकपाणिना ॥ ११॥

श्रीचक्र अकेला भी कर सकता है, किन्तु एक पात्र से अर्चन न करे; एक हाथ से न अर्चन करे, न एक हाथ से पान करे।

पदपाठ श्रीचक्रमेको वा कुर्यात् — श्रीचक्र अकेला भी कर सकता है · एकपात्रन्तु नार्चयेत् — पर एक पात्र से पूजा न करे · नार्चयेदेकहस्तेन — एक हाथ से पूजा न करे · न पिबेदेकपाणिना — न एक हाथ से पिए

मत्स्यमांसासवैर्देवि नार्चयेत् पशुसन्निधौ ।

१२

प्रणम्य प्रविशेच्चक्रं विनिर्गच्छेत्प्रणम्य च ॥ १२॥

हे देवि! पशु के सामने मत्स्य, मांस और आसव से अर्चन न करे; प्रणाम करके चक्र में प्रवेश करे और प्रणाम करके ही निकले।

पदपाठ मत्स्यमांसासवैर्देवि — मत्स्य, मांस, आसव से, हे देवि · नार्चयेत् पशुसन्निधौ — पशु के सन्निधान में पूजा न करे · प्रणम्य प्रविशेच्चक्रं — प्रणाम कर चक्र में प्रवेश करे · विनिर्गच्छेत्प्रणम्य च — और प्रणाम कर बाहर निकले

श्रीचक्रे नासने तिष्ठेन्न च वीरासने प्रिये ।

श्रीचक्रदर्शने देवि नेत्रयोः पापनाशनम् ।

१३

तन्नास्ति चेद्ब्रणद्वन्द्वं कौलिकस्याक्षियुग्मकम् ॥ १३ ॥

श्रीचक्र में आसन पर न बैठे, न वीरासन में, हे प्रिये! हे देवि! श्रीचक्र के दर्शन से नेत्रों का पाप नष्ट होता है; यदि वह न हो तो कौलिक की आँखों का जोड़ा घावों का जोड़ा मात्र है।

पदपाठ श्रीचक्रे नासने तिष्ठेत् — श्रीचक्र में आसन पर न बैठे · न च वीरासने प्रिये — न वीरासन में, हे प्रिये · श्रीचक्रदर्शने देवि — श्रीचक्र के दर्शन से, हे देवि · नेत्रयोः पापनाशनम् — नेत्रों के पाप का नाश होता है · तन्नास्ति चेत् — यदि ऐसा न हो · ब्रणद्वन्द्वं कौलिकस्याक्षियुग्मकम् — तो कौलिक के दो नेत्र दो घाव हैं

अनाचारान् सदाचारान् चक्रस्थान् शक्तिकौलिकान् ।

शिवगौरीधिया देवि भावयेन्नावमानयेत् ॥ १४ ॥

१४

चक्र में स्थित शक्तियों और कौलिकों को, चाहे अनाचारी हों या सदाचारी, हे देवि! शिव और गौरी की बुद्धि से भावना करे, उनका अपमान न करे।

पदपाठ अनाचारान् सदाचारान् — अनाचारियों और सदाचारियों को · चक्रस्थान् शक्तिकौलिकान् — चक्र में स्थित शक्तियों और कौलिकों को · शिवगौरीधिया देवि — शिव और गौरी की बुद्धि से, हे देवि · भावयेन्नावमानयेत् — भावना करे, अपमान न करे

कुलाचार्यगृहं गत्वा भक्त्या पापविशुद्धये ।

याचेदमृतञ्चात्रञ्च तदभावे जलं पिबेत् ॥ १५॥

१५

पाप की शुद्धि के लिए भक्तिपूर्वक कुलाचार्य के घर जाकर अमृत (मद्य) और अन्न माँगे; उनके अभाव में जल पिए।

पदपाठ कुलाचार्यगृहं गत्वा — कुलाचार्य के घर जाकर · भक्त्या पापविशुद्धये — भक्ति से, पाप की शुद्धि के लिए · याचेदमृतञ्चात्रञ्च — अमृत और अन्न माँगे · तदभावे जलं पिबेत् — उनके अभाव में जल पिए

कुलाचार्येण तच्छक्त्या दत्तं पात्रञ्च भक्तितः ।

नमस्कृत्य तु गृहीयादन्यथा नरकं व्रजेत् ॥ १६॥

१६

कुलाचार्य या उनकी शक्ति द्वारा भक्तिपूर्वक दिया गया पात्र प्रणाम करके ग्रहण करे; अन्यथा नरक में जाता है।

पदपाठ कुलाचार्येण तच्छक्त्या — कुलाचार्य या उनकी शक्ति द्वारा · दत्तं पात्रञ्च भक्तितः — भक्ति से दिया पात्र · नमस्कृत्य तु गृहीयात् — नमस्कार कर ग्रहण करे · अन्यथा नरकं व्रजेत् — अन्यथा नरक में जाता है

अस्नात्वा वाप्यभक्त्या वा लोभाद्वापि कुलेश्वरि ।

यः सेवेत कुलद्रव्यं दारिद्र्यं समवाप्नुयात् ॥ १७॥

१७

हे कुलेश्वरि! जो बिना स्नान किए, बिना भक्ति के या लोभ से कुलद्रव्य का सेवन करता है, वह दरिद्रता को प्राप्त होता है।

पदपाठ अस्नात्वा वाप्यभक्त्या वा — बिना स्नान, या बिना भक्ति · लोभाद्वापि कुलेश्वरि — या लोभ से भी, हे कुलेश्वरि · यः सेवेत कुलद्रव्यं — जो कुलद्रव्य का सेवन करे · दारिद्र्यं समवाप्नुयात् — दरिद्रता पाता है

उष्णीषी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशो गणावृतः ।

१८

व्यग्रो रुष्टो विवादी च न सेवेत कुलामृतम् ॥ १८ ॥

पगड़ी बाँधे, कञ्चुक पहने, नग्न, खुले केश, भीड़ से घिरा, व्यग्र, रुष्ट या विवाद करता हुआ — कुलामृत का सेवन न करे।

पदपाठ उष्णीषी कञ्चुकी नग्नो — पगड़ी बाँधे, कंचुकी पहने, नग्न · मुक्तकेशो गणावृतः — खुले केश, भीड़ से घिरा · व्यग्रो रुष्टो विवादी च — व्यग्र, रुष्ट या विवादी · न सेवेत कुलामृतम् — कुलामृत का सेवन न करे

योगामृतेन निष्ठीवान्मद्यभाण्डपरिभ्रमात् ।

१९

ऊर्ध्वनालेन पानाच्च देवताशापमाप्नुयात् ॥ १९ ॥

योगामृत को थूकने से, मद्य के भाण्ड को घुमाने से और ऊपर उठाई नली से पीने से देवताओं का शाप प्राप्त होता है।

पदपाठ योगामृतेन निष्ठीवात् — योगामृत को थूकने से · मद्यभाण्डपरिभ्रमात् — मद्य-भाण्ड घुमाने से · ऊर्ध्वनालेन पानाच्च — और ऊपर नली से पीने से · देवताशापमाप्नुयात् — देवताओं का शाप पाता है

एकासने निविष्टस्तु भुञ्जानस्त्वेकभाजने ।

२०

एकपात्रे पिबेद्द्रव्यं ते यान्ति नरकं प्रिये ॥ २० ॥

जो एक आसन पर बैठकर, एक भाजन में खाते हुए, एक पात्र में द्रव्य पीते हैं, वे नरक में जाते हैं, हे प्रिये!

पदपाठ एकासने निविष्टस्तु — एक आसन पर बैठे · भुञ्जानस्त्वेकभाजने — एक भाजन में खाते · एकपात्रे पिबेद्द्रव्यं — एक पात्र में द्रव्य पीते · ते यान्ति नरकं प्रिये — वे नरक में जाते हैं, हे प्रिये

यः सेवेत कुलद्रव्यमेकग्रामे स्थिते गुरौ ।

तत्कुलज्ञे च तत्पुत्रे स्वज्येष्ठे कुलदेशिके ।

२१

विनानुज्ञां महेशानि सोऽक्षयं नरकं व्रजेत् ॥ २१ ॥

गुरु, उनके कुल को जानने वाला, गुरु-पुत्र, अपना ज्येष्ठ या कुल-देशिक उसी ग्राम में हों और उनकी अनुज्ञा के बिना जो कुलद्रव्य का सेवन करे, हे महेशानि! वह अक्षय नरक में जाता है।

पदपाठ यः सेवेत कुलद्रव्यम् — जो कुलद्रव्य का सेवन करे · एकग्रामे स्थिते गुरौ — गुरु के एक ही गाँव में होने पर · तत्कुलज्ञे च तत्पुत्रे — या उसके कुलज्ञ, या उसके पुत्र · स्वज्येष्ठे कुलदेशिके — या अपने ज्येष्ठ, या कुलदेशिक (के होने पर) · विनानुज्ञां महेशानि — बिना अनुज्ञा, हे महेशानि · सोऽक्षयं नरकं व्रजेत् — वह अक्षय नरक में जाता है

उच्छिष्टो न स्पृशेच्चक्रे कुलद्रव्याणि पार्वति ।

२२

बहिःप्रक्षाल्य च करौ कुलद्रव्याणि दापयेत् ॥ २२ ॥

हे पार्वति! उच्छिष्ट (जूठा) व्यक्ति चक्र में कुलद्रव्यों को न छुए; बाहर हाथ धोकर कुलद्रव्य दिलवाए।

पदपाठ उच्छिष्टो न स्पृशेच्चक्रे — उच्छिष्ट (अशुद्ध मुख) चक्र में स्पर्श न करे · कुलद्रव्याणि पार्वति — कुलद्रव्यों को, हे पार्वति · बहिःप्रक्षाल्य च करौ — बाहर हाथ धोकर · कुलद्रव्याणि दापयेत् — कुलद्रव्य दिलवाए

मद्यभाण्डं समुद्धृत्य न पात्रं पूरयेत् प्रिये ।

२३

भोगपात्रं सुराकुण्डे निक्षिपेन्न कदाचन ॥ २३ ॥

मद्य का भाण्ड उठाकर पात्र न भरे, हे प्रिये! भोगपात्र को सुराकुण्ड में कभी न डाले।

पदपाठ मद्यभाण्डं समुद्धृत्य — मद्य-भाण्ड उठाकर · न पात्रं पूरयेत् प्रिये — पात्र न भरे, हे प्रिये · भोगपात्रं सुराकुण्डे — भोगपात्र सुराकुण्ड में · निक्षिपेन्न कदाचन — कभी न डुबोए

चक्रमध्ये शुचिधिया करप्रक्षालनादिकम् ।

२४

यः करोति हि मूढात्मा स भवेदापदाम्पदम् ॥ २४ ॥

जो मूढ़ चक्र के बीच शुद्धि की बुद्धि से हाथ धोना आदि करता है, वह आपदाओं का घर बन जाता है।

पदपाठ चक्रमध्ये शुचिधिया — चक्र के मध्य में शुचि-बुद्धि से · करप्रक्षालनादिकम् — हाथ धोना आदि · यः करोति हि मूढात्मा — जो मूढात्मा करता है · स भवेदापदाम्पदम् — वह आपदाओं का घर बनता है

निष्ठीवनं मलं मूत्रमधोवायुविसर्जनम् ।

२५

श्रीचक्रमध्ये यः कुर्यात् स भवेद् योगिनीपशुः ॥ २५ ॥

जो श्रीचक्र के बीच थूकना, मल, मूत्र या अधोवायु का त्याग करता है, वह योगिनियों का पशु (बलि) बन जाता है।

पदपाठ निष्ठीवनं मलं मूत्रम् — थूकना, मल, मूत्र · अधोवायुविसर्जनम् — अधोवायु का विसर्जन · श्रीचक्रमध्ये यः कुर्यात् — जो श्रीचक्र के मध्य में करे · स भवेद् योगिनीपशुः — वह योगिनी-पशु हो जाता है

चक्रमध्ये घटे भग्ने पात्रे च पतिते भुवि ।

२६

दीपनाशे च शान्त्यर्थं श्रीचक्रं कारयेत् प्रिये ॥ २६ ॥

चक्र के बीच घड़ा फूट जाए, पात्र भूमि पर गिर जाए या दीप बुझ जाए तो शान्ति के लिए श्रीचक्र करवाए, हे प्रिये!

पदपाठ चक्रमध्ये घटे भग्ने — चक्र के मध्य में घड़ा फूटने पर · पात्रे च पतिते भुवि — और पात्र भूमि पर गिरने पर · दीपनाशे च शान्त्यर्थं — और दीप बुझने पर, शान्ति के लिए · श्रीचक्रं कारयेत् प्रिये — श्रीचक्र कराए, हे प्रिये

मत्ता जपन्ति ध्यायन्ति स्तुवन्ति प्रणमन्ति च ।

२७

बोधयन्ति च पृच्छन्ति नन्दन्ति ज्ञानिनः प्रिये ॥ २७ ॥

ज्ञानी मत्त होकर जप करते हैं, ध्यान करते हैं, स्तुति और प्रणाम करते हैं, बोध कराते हैं, पूछते हैं और आनन्दित होते हैं, हे प्रिये!

पदपाठ मत्ता जपन्ति ध्यायन्ति — मत्त होकर जपते हैं, ध्यान करते हैं · स्तुवन्ति प्रणमन्ति च — स्तुति और प्रणाम करते हैं · बोधयन्ति च पृच्छन्ति — बोध देते और पूछते हैं · नन्दन्ति ज्ञानिनः प्रिये — आनन्दित होते हैं — ज्ञानी, हे प्रिये

मत्ता भ्रमन्ति गर्जन्ति हसन्ति विवदन्ति च ।

२८

रुदन्ति स्त्रियमिच्छन्ति निन्दन्त्यज्ञानिनः प्रिये ॥ २८ ॥

अज्ञानी मत्त होकर भटकते हैं, गरजते हैं, हँसते हैं, झगड़ते हैं, रोते हैं, स्त्री की इच्छा करते हैं और निन्दा करते हैं, हे प्रिये!

पदपाठ मत्ता भ्रमन्ति गर्जन्ति — मत्त होकर भटकते, गर्जते हैं · हसन्ति विवदन्ति च — हँसते और विवाद करते हैं · रुदन्ति स्त्रियमिच्छन्ति — रोते हैं, स्त्री की इच्छा करते हैं · निन्दन्त्यज्ञानिनः प्रिये — निन्दा करते हैं — अज्ञानी, हे प्रिये

परिहासं प्रलापञ्च वितण्डां बहुभाषितम् ।

२९

औदासीन्यं भयं क्रोधं चक्रमध्ये विवर्जयेत् ॥ २९ ॥

परिहास, प्रलाप, वितण्डा, अधिक बोलना, उदासीनता, भय और क्रोध — चक्र के बीच इनका त्याग करे।

पदपाठ परिहासं प्रलापञ्च — परिहास और प्रलाप · वितण्डां बहुभाषितम् — वितण्डा, बहुत बोलना · औदासीन्यं भयं क्रोधं — उदासीनता, भय, क्रोध · चक्रमध्ये विवर्जयेत् — चक्र के मध्य में त्याग दे

पात्रहस्तो महादेवि न भ्रमेच्चक्रमध्यतः ।

पूर्णपात्रं करे कृत्वा न तिष्ठेत्तु चिरं प्रिये ॥ ३० ॥

३०

हे महादेवि! पात्र हाथ में लिए चक्र के बीच न घूमे; भरा पात्र हाथ में लेकर देर तक न रहे, हे प्रिये!

पदपाठ पात्रहस्तो महादेवि — पात्र हाथ में लिए, हे महादेवि · न भ्रमेच्चक्रमध्यतः — चक्र के मध्य में न घूमे · पूर्णपात्रं करे कृत्वा — पूर्णपात्र हाथ में लेकर · न तिष्ठेत्तु चिरं प्रिये — देर तक न रहे, हे प्रिये

नालपेत् पात्रहस्तः सन् न भिन्द्यात् पात्रमम्बिके ।

पादाभ्यां न स्पृशेत् पात्रं न बिन्दुं पातयेदधः ॥ ३१ ॥

३१

पात्र हाथ में लिए बात न करे, पात्र न तोड़े, हे अम्बिके! पैरों से पात्र न छुए, न एक बूँद नीचे गिरने दे।

पदपाठ नालपेत् पात्रहस्तः सन् — पात्र हाथ में हो तो न बोले · न भिन्द्यात् पात्रमम्बिके — पात्र न तोड़े, हे अम्बिके · पादाभ्यां न स्पृशेत् पात्रं — पैरों से पात्र का स्पर्श न करे · न बिन्दुं पातयेदधः — न बिन्दु नीचे गिराए

नैकहस्तेन दातव्यं न मुद्रावर्जितं प्रिये ।

पात्रं न चालयेत स्थानान्न कुर्यात् पात्रसङ्करम् ॥ ३२ ॥

३२

एक हाथ से न दे, न मुद्रा के बिना दे, हे प्रिये! पात्र को उसके स्थान से न हिलाए, न पात्रों को आपस में मिलाए।

पदपाठ नैकहस्तेन दातव्यं — एक हाथ से नहीं देना चाहिए · न मुद्रावर्जितं प्रिये — न मुद्रा-रहित, हे प्रिये · पात्रं न चालयेत स्थानान्न — पात्र को स्थान से न हटाए · न कुर्यात् पात्रसङ्करम् — न पात्रों को मिलाए

सशब्दं न पिबेन्मद्यं तथैव न च पूरयेत् ।

नान्योन्यं ताडयेत्पात्रं तथा न पातयेदधः ॥ ३३ ॥

३३

शब्द करते हुए मद्य न पिए, वैसे ही शब्द करते हुए न भरे; पात्रों को आपस में न टकराए, न नीचे गिराए।

पदपाठ सशब्दं न पिबेन्मद्यं — शब्द करते हुए मद्य न पिए · तथैव न च पूरयेत् — वैसे ही (शब्द करते) न भरे · नान्योन्यं ताडयेत्पात्रं — पात्र से पात्र न टकराए · तथा न पातयेदधः — और न नीचे गिराए

साधारं नोद्धरेत् पात्रमनाधारे न निक्षिपेत् ।

रिक्तपात्रं न कुर्वीत न पात्रं भ्रामयेत् प्रिये ॥ ३४ ॥

३४

पात्र को आधार सहित न उठाए, न बिना आधार के रखे; पात्र को रिक्त न रखे, न पात्र को घुमाए, हे प्रिये!

पदपाठ साधारं नोद्धरेत् पात्रम् — आधार सहित पात्र न उठाए · अनाधारे न निक्षिपेत् — बिना आधार न रखे · रिक्तपात्रं न कुर्वीत — पात्र रिक्त न रखे · न पात्रं भ्रामयेत् प्रिये — न पात्र घुमाए, हे प्रिये

न पात्रं लङ्घयेद्धीमान् पात्रं नोत्पातयेत् प्रिये ।

प्रक्षाल्य गोपयेत् पात्रमित्याज्ञा परमेश्वरि ॥ ३५ ॥

३५

बुद्धिमान् पात्र को न लाँधे, न पात्र को उछाले, हे प्रिये! धोकर पात्र को छिपाकर रखे — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि!

पदपाठ न पात्रं लङ्घयेद्धीमान् — बुद्धिमान् पात्र को न लाँधे · पात्रं नोत्पातयेत् प्रिये — पात्र को न उछाले, हे प्रिये · प्रक्षाल्य गोपयेत् पात्रम् — धोकर पात्र को गोपन करे · इत्याज्ञा परमेश्वरि — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि

यदा सन्दीपितोल्लासः कौलिकः पशुमीक्षते ।

पठेद्वा पशुशास्त्राणि सङ्गच्छेद्वा पशुस्त्रियम् ॥ ३६ ॥

३६

जब उल्लास से प्रदीप्त कौलिक पशु को देखता है, या पशु-शास्त्र पढ़ता है, या पशु-स्त्री से संगम करता है,

पदपाठ यदा सन्दीपितोल्लासः — जब प्रदीप्त उल्लास वाला · कौलिकः पशुमीक्षते — कौलिक पशु को देखे · पठेद्वा पशुशास्त्राणि — या पशु-शास्त्र पढ़े · सङ्गच्छेद्वा पशुस्त्रियम् — या पशु-स्त्री से संगम करे

कुर्यात् पशुप्रसङ्गं वा पशुकार्याणि वा चरेत् ।

धर्मार्थायुर्यशःपुण्यमर्थसौख्यादि नश्यति ॥ ३७ ॥

३७

या पशु के साथ प्रसङ्ग करता है, या पशु के कार्य करता है — तो उसके धर्म, अर्थ, आयु, यश, पुण्य, सम्पत्ति, सुख आदि नष्ट हो जाते हैं।

पदपाठ कुर्यात् पशुप्रसङ्गं वा — या पशु से प्रसंग (वार्ता) करे · पशुकार्याणि वा चरेत् — या पशु-कार्य करे · धर्मार्थायुर्यशःपुण्यम् — धर्म, अर्थ, आयु, यश, पुण्य · अर्थसौख्यादि नश्यति — अर्थ, सुख आदि नष्ट होते हैं

श्रीचक्रस्थं कुलद्रव्यं यः पशुभ्यः प्रयच्छति ।

स्नेहाल्लोभाद्भयाद्वापि स भवेद् योगिनीपशुः ॥ ३८ ॥

३८

जो श्रीचक्र में स्थित कुलद्रव्य को स्नेह, लोभ या भय से पशुओं को देता है, वह योगिनियों का पशु बन जाता है।

पदपाठ श्रीचक्रस्थं कुलद्रव्यं — श्रीचक्र में स्थित कुलद्रव्य · यः पशुभ्यः प्रयच्छति — जो पशुओं को देता है · स्नेहाल्लोभाद्भयाद्वापि — स्नेह, लोभ या भय से भी · स भवेद् योगिनीपशुः — वह योगिनी-पशु हो जाता है

रिपुणापि न कर्तव्यो वाग्वादश्चक्रमध्यतः ।

पितृमातृसमं पश्येत्तेनोक्तं परुषं सहेत् ॥ ३९॥

३९

चक्र के बीच शत्रु से भी वाद-विवाद न करे; उसे माता-पिता के समान देखे और उसके कहे कठोर वचन सह ले।

पदपाठ रिपुणापि न कर्तव्यो — शत्रु से भी नहीं करना चाहिए · वाग्वादश्चक्रमध्यतः — चक्र के मध्य में वाग्युद्ध · पितृमातृसमं पश्येत् — उसे माता-पिता के समान देखे · तेनोक्तं परुषं सहेत् — उसके कहे कठोर वचन सहे

यथास्त्रीपुत्रमित्रादि दृष्ट्वा चेतः प्रहृष्यति ।

तथा चेत् कौलिकान् दृष्ट्वा स भवेद् योगिनीप्रियः ॥ ४०॥

४०

जैसे स्त्री, पुत्र, मित्र आदि को देखकर चित्त प्रसन्न होता है, वैसे ही यदि कौलिकों को देखकर हो, तो वह योगिनियों का प्रिय हो जाता है।

पदपाठ यथास्त्रीपुत्रमित्रादि दृष्ट्वा — जैसे स्त्री, पुत्र, मित्र आदि को देखकर · चेतः प्रहृष्यति — चित्त प्रसन्न होता है · तथा चेत् कौलिकान् दृष्ट्वा — वैसे यदि कौलिकों को देखकर हो · स भवेद् योगिनीप्रियः — वह योगिनियों का प्रिय होता है

ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं यस्य मे गुरुसन्ततिः ।

यस्य मे सर्वशिष्यस्य को न पूज्यो महीतले ।

४१

इति निश्चितबुद्धिर्यः स भवेदावयोः प्रियः ॥ ४१॥

"ब्रह्मा से लेकर तृण तक मेरी गुरु-परम्परा है; मैं सबका शिष्य हूँ, तो पृथ्वी पर कौन मेरे लिए पूज्य नहीं?" — ऐसी निश्चित बुद्धि वाला हम दोनों का प्रिय होता है।

पदपाठ ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं — ब्रह्मा से तिनके तक · यस्य मे गुरुसन्ततिः — जिस तक मेरी गुरु-परम्परा है · यस्य मे सर्वशिष्यस्य — जिसका मैं सबका शिष्य हूँ · को न पूज्यो महीतले — पृथ्वी पर कौन पूज्य नहीं? · इति निश्चितबुद्धिर्यः — ऐसी निश्चित बुद्धि वाला जो · स भवेदावयोः प्रियः — वह हम दोनों का प्रिय होता है

अहं गुरुरहं ज्येष्ठस्त्वहं वेद्मीति गर्वितः ।

अहमेव गतिर्येषां कौलिका न भवन्ति ते ॥ ४२॥

४२

"मैं गुरु हूँ, मैं ज्येष्ठ हूँ, मैं जानता हूँ" — ऐसे गर्वित, जिनके लिए "मैं ही गति हूँ", वे कौलिक नहीं हैं।

पदपाठ अहं गुरुरहं ज्येष्ठः — "मैं गुरु हूँ, मैं ज्येष्ठ हूँ" · त्वहं वेद्मीति गर्वितः — "मैं जानता हूँ" — ऐसे गर्वित · अहमेव गतिर्येषां — जिनके लिए "मैं ही गति हूँ" · कौलिका न भवन्ति ते — वे कौलिक नहीं होते

श्रीगुरुं कुलशास्त्राणि पूजास्थानानि यानि च ।

भक्त्या श्रीपूर्वकं देवि प्रणम्य परिकीर्तयेत् ॥ ४३॥

४३

श्रीगुरु, कुलशास्त्रों और जो भी पूजा-स्थान हैं, उनका नाम हे देवि! भक्तिपूर्वक "श्री" लगाकर, प्रणाम करके ले।

पदपाठ श्रीगुरुं कुलशास्त्राणि — श्रीगुरु, कुलशास्त्र · पूजास्थानानि यानि च — और जो पूजा-स्थान हैं · भक्त्या श्रीपूर्वकं देवि — भक्ति से "श्री" पूर्वक, हे देवि · प्रणम्य परिकीर्तयेत् — प्रणाम कर नाम ले

गुरुं नाम्ना न भाषेत जपकालादृते प्रिये ।

४४

श्रीनाथ देव स्वामीति विवादे साधने वदेत् ॥ ४४॥

जप के समय के अतिरिक्त गुरु को नाम से न पुकारे, हे प्रिये! विवाद और साधना में उन्हें "श्रीनाथ", "देव", "स्वामी" कहे।

पदपाठ गुरुं नाम्ना न भाषेत — गुरु को नाम से न कहे · जपकालादृते प्रिये — जप-काल के अतिरिक्त, हे प्रिये · श्रीनाथ देव स्वामीति — "श्रीनाथ", "देव", "स्वामी" · विवादे साधने वदेत् — विवाद और साधन में कहे

श्रीगुरोः पादुकां मुद्रां मूलमन्त्रं स्वपादुकाम् ।

४५

शिष्यादन्यस्य देवेशि न वदेद् यस्य कस्यचित् ॥ ४५॥

श्रीगुरु की पादुका, मुद्रा, मूलमन्त्र और अपनी पादुका — हे देवेशि! शिष्य के अतिरिक्त किसी को भी न बताए, चाहे वह कोई भी हो।

पदपाठ श्रीगुरोः पादुकां मुद्रां — श्रीगुरु की पादुका, मुद्रा · मूलमन्त्रं स्वपादुकाम् — मूलमन्त्र, अपनी पादुका · शिष्यादन्यस्य देवेशि — शिष्य से अन्य को, हे देवेशि · न वदेद् यस्य कस्यचित् — जिस-किसी को न कहे

पारम्पर्यागमाम्नायं मन्त्राचारादिकं प्रिये ।

४६

सर्वं गुरुमुखाल्लब्धं सफलं स्यान्न चान्यथा ॥ ४६॥

परम्परा का आगम और आम्नाय, मन्त्र, आचार आदि, हे प्रिये! — यह सब गुरुमुख से प्राप्त होने पर ही सफल होता है, अन्यथा नहीं।

पदपाठ पारम्पर्यागमाम्नायं — परम्परा, आगम, आम्नाय · मन्त्राचारादिकं प्रिये — मन्त्र, आचार आदि, हे प्रिये · सर्वं गुरुमुखाल्लब्धं — सब गुरुमुख से प्राप्त · सफलं स्यान्न चान्यथा — सफल होता है, अन्यथा नहीं

श्रीशास्त्राश्रयमूलज्व पुस्तकं न वदेत् प्रिये ।

४७

नित्यं समर्चयेद्भक्त्या पशुहस्ते न निक्षिपेत् ॥ ४७ ॥

आश्रय और मूल रूप श्रीशास्त्र को "पुस्तक" न कहे, हे प्रिये! नित्य भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करे और पशु के हाथ में न दे।

पदपाठ श्रीशास्त्राश्रयमूलज्व — मूल और आश्रय श्रीशास्त्र को · पुस्तकं न वदेत् प्रिये — "पुस्तक" न कहे, हे प्रिये · नित्यं समर्चयेद्भक्त्या — नित्य भक्ति से पूजा करे · पशुहस्ते न निक्षिपेत् — पशु के हाथ में न दे

स्वदारवन्निषेवेत कुलशास्त्राणि पार्वति ।

४८

पशुशास्त्राणि सर्वाणि वर्जयेत् परदारवत् ॥ ४८ ॥

हे पार्वति! कुलशास्त्रों का अपनी स्त्री के समान सेवन करे और सब पशु-शास्त्रों को पर-स्त्री के समान त्याग दे।

पदपाठ स्वदारवन्निषेवेत — अपनी पत्नी की तरह सेवा करे · कुलशास्त्राणि पार्वति — कुलशास्त्रों की, हे पार्वति · पशुशास्त्राणि सर्वाणि — सब पशु-शास्त्रों को · वर्जयेत् परदारवत् — परस्त्री की तरह त्याग दे

स्वचर्मस्थं यथा क्षीरमपेयं स्याद् द्विजोत्तमैः ।

४९

तथा पशुमुखाद्धर्मो न श्रोतव्यो हि कौलिकैः ॥ ४९ ॥

जैसे कुत्ते के चमड़े में रखा दूध श्रेष्ठ द्विजों के लिए अपेय है, वैसे ही पशु के मुख से धर्म कौलिकों को नहीं सुनना चाहिए।

पदपाठ स्वचर्मस्थं यथा क्षीरम् — जैसे कुत्ते की खाल में रखा दूध · अपेयं स्याद् द्विजोत्तमैः — द्विजोत्तमों के लिए अपेय है · तथा पशुमुखाद्धर्मो — वैसे पशु के मुख से धर्म · न श्रोतव्यो हि कौलिकैः — कौलिकों को नहीं सुनना चाहिए

यः शृणोति कुलाचारं यथाशास्त्रञ्च यो वदेत् ।
तावुभौ गच्छतः साक्षाद् योगिनीवीरमेलनम् ॥ ५० ॥

५०

जो कुलाचार को सुनता है और जो शास्त्र के अनुसार उसे कहता है — वे दोनों साक्षात् योगिनी-वीर-मेलन को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ यः शृणोति कुलाचारं — जो कुलाचार सुनता है · यथाशास्त्रञ्च यो वदेत् — और जो शास्त्र के अनुसार कहता है · तавुभौ गच्छतः साक्षात् — वे दोनों साक्षात् जाते हैं · योगिनीवीरमेलनम् — योगिनी-वीर-मेलन में

अश्रद्धधाना ये चात्र कुलधर्मं कुलेश्वरि ।
नरकान्नो निवर्तन्ते यावदाहूतसंप्लवम् ॥ ५१ ॥

५१

जो इस कुलधर्म में श्रद्धा नहीं रखते, हे कुलेश्वरि! वे आभूतसंप्लव (महाप्रलय) तक नरक से नहीं लौटते।

पदपाठ अश्रद्धधाना ये चात्र — जो यहाँ श्रद्धा नहीं रखते · कुलधर्मं कुलेश्वरि — कुलधर्म में, हे कुलेश्वरि · नरकान्नो निवर्तन्ते — नरक से नहीं लौटते · यावदाहूतसंप्लवम् — आभूतसंप्लव (महाप्रलय) तक

ऊढा धृता तथा क्रीता मूल्येन च समाहृता ।

सकृत् कामरता वापि पञ्चधा गुरुयोषितः ।

५२

अलङ्घ्याः पूजनीयाः स्युर्गुरुवद्गुरुयोषितः ॥ ५२ ॥

विवाहिता, रखी हुई, खरीदी हुई, मूल्य देकर लाई हुई, अथवा एक बार भोगी हुई — गुरु की स्त्रियाँ पाँच प्रकार की हैं; गुरु-स्त्रियाँ अलङ्घ्य हैं और गुरु के समान पूजनीय हैं।

पदपाठ ऊढा धृता तथा क्रीता — विवाहिता, रखी हुई, वैसे ही खरीदी हुई · मूल्येन च समाहृता — और मूल्य से लाई गई · सकृत् कामरता वापि — या एक बार भी काम में रत · पञ्चधा गुरुयोषितः — पाँच प्रकार की गुरु-स्त्रियाँ · अलङ्घ्याः पूजनीयाः स्युः — अलङ्घ्य और पूजनीय हैं · गुरुवद्गुरुयोषितः — गुरु की तरह गुरु-स्त्रियाँ

गुरुशक्तिं वीरभार्या कुमारीं व्रतधारिणीम् ।

व्यङ्गाङ्गीं विकृताङ्गीञ्च कुब्जामपि न कामयेत् ॥ ५३ ॥

५३

गुरु की शक्ति, वीर की भार्या, कुमारी, व्रतधारिणी, अङ्गहीना, विकृताङ्गी और कुबड़ी की भी कामना न करे।

पदपाठ गुरुशक्तिं वीरभार्या — गुरु-शक्ति, वीर-भार्या · कुमारीं व्रतधारिणीम् — कुमारी, व्रतधारिणी · व्यङ्गाङ्गीं विकृताङ्गीञ्च — व्यंग अंग वाली, विकृत अंग वाली · कुब्जामपि न कामयेत् — कुबड़ी को भी कामना न करे

सुताञ्च भगिनीं पौत्रीं स्नुषां वापि प्रियामपि ।

५४

न कामयेद् गुरोरग्रे कुर्यान्नान्योन्यसंग्रहम् ॥ ५४ ॥

पुत्री, बहन, पौत्री या पुत्रवधू, प्रिय होने पर भी, गुरु के सामने उनकी कामना न करे, न परस्पर आलिङ्गन करे।

पदपाठ सुताञ्च भगिनीं पौत्रीं — पुत्री, बहन, पौत्री · स्नुषां वापि प्रियामपि — या पुत्रवधू, प्रिय हो तो भी · न कामयेद् गुरोरग्रे — गुरु के सामने कामना न करे · कुर्यान्नान्योन्यसंग्रहम् — परस्पर आलिङ्गन न करे

कृष्णांशुकां कृष्णवर्णां कुमारीञ्च कृशोदरीम् ।

५५

मनोहरां यौवनस्थामर्चयेद्देवताधिया ॥ ५५ ॥

काले वस्त्र वाली, श्याम वर्ण की, कृशोदरी, मनोहर, युवावस्था वाली कुमारी की देवता-बुद्धि से पूजा करे।

पदपाठ कृष्णांशुकां कृष्णवर्णां — काले वस्त्र वाली, काले वर्ण की · कुमारीञ्च कृशोदरीम् — कुमारी, कृशोदरी · मनोहरां यौवनस्थाम् — मनोहर, यौवन में स्थित · अर्चयेद्देवताधिया — देवता-बुद्धि से पूजा करे

एकदापि न सेवेत बलेन कुलयोगिनीम् ।

५६

चक्रमध्ये स्वयं क्षुब्धां कामयेत् कुलसुन्दरि ॥ ५६ ॥

कुल-योगिनी का बलपूर्वक एक बार भी सेवन न करे; चक्र के बीच जो स्वयं क्षुब्ध (कामोद्दीप्त) हो उसी की कामना करे, हे कुलसुन्दरि!

पदपाठ एकदापि न सेवेत — एक बार भी सेवन न करे · बलेन कुलयोगिनीम् — बल से कुलयोगिनी का · चक्रमध्ये स्वयं क्षुब्धां — चक्र के मध्य में स्वयं क्षुब्ध (उत्कण्ठित) · कामयेत् कुलसुन्दरि — की कामना कर सकता है, हे कुलसुन्दरि

आममांसं सुराकुम्भं मत्तेभं सिद्धिलिङ्गिनम् ।

५७

सहकारमशोकञ्च क्रीडालोलाः कुमारिकाः ॥ ५७ ॥

कच्चा मांस, सुरा का कुम्भ, मतवाला हाथी, सिद्धि के चिह्न धारण करने वाला, आम और अशोक का वृक्ष, खेल में मग्न कुमारियाँ,

पदपाठ आममांसं सुराकुम्भं — कच्चा मांस, सुरा-कुम्भ · मत्तेभं सिद्धिलिङ्गिनम् — मत्त हाथी, सिद्धि-
लिङ्गी · सहकारमशोकञ्च — आम्र और अशोक · क्रीडालोलाः कुमारिकाः — क्रीड़ा में मग्न कुमारियाँ

एकवृक्षं श्मशानञ्च समूहं योषितामपि ।

५८

नारीञ्च रक्तवसनां दृष्ट्वा वन्देत भक्तितः ॥ ५८ ॥

अकेला वृक्ष, श्मशान, स्त्रियों का समूह और लाल वस्त्र वाली नारी — इन्हें देखकर भक्तिपूर्वक प्रणाम करे।

पदपाठ एकवृक्षं श्मशानञ्च — एकाकी वृक्ष और श्मशान · समूहं योषितामपि — और स्त्रियों का
समूह · नारीञ्च रक्तवसनां — और लाल वस्त्र वाली नारी · दृष्ट्वा वन्देत भक्तितः — देखकर भक्ति से
वन्दन करे

गुरुशक्तिसुतज्येष्ठकनिष्ठान् कुलदेशिकान् ।

५९

कुलदर्शनशास्त्राणि कुलद्रव्याणि कौलिकान् ॥ ५९ ॥

गुरु की शक्ति, पुत्र, ज्येष्ठ और कनिष्ठ, कुल-देशिक, कुल-दर्शन के शास्त्र, कुलद्रव्य, कौलिक,

पदपाठ गुरुशक्तिसुतज्येष्ठकनिष्ठान् — गुरु-शक्ति, पुत्र, ज्येष्ठ, कनिष्ठ · कुलदेशिकान् —
कुलदेशिक · कुलदर्शनशास्त्राणि — कुलदर्शन के शास्त्र · कुलद्रव्याणि कौलिकान् — कुलद्रव्य, कौलिक

प्रेरकान् सूचकांश्चापि वाचकान् दर्शकांस्तथा ।

शिक्षकान् बोधकान् योगी योगिनीसिद्धिरूपकान् ॥ ६० ॥

६०

प्रेरक, सूचक, वाचक, दर्शक, शिक्षक और बोधक — योगी इन सबको योगिनियों और सिद्धों के रूप मानता है;

पदपाठ प्रेरकान् सूचकांश्चापि — प्रेरक और सूचक भी · वाचकान् दर्शकांस्तथा — वाचक और दर्शक वैसे ही · शिक्षकान् बोधकान् योगी — शिक्षक, बोधक — योगी · योगिनीसिद्धिरूपकान् — योगिनी-सिद्धि के रूप (मानता है)

कन्यां कुमारिकां नग्नमुन्मत्तां वापि योषितम् ।

न निन्देन्न जुगुप्सेत न हसेन्नावमानयेत् ॥ ६१ ॥

६१

कन्या, कुमारी, नग्न या उन्मत्त स्त्री — इनकी न निन्दा करे, न घृणा करे, न हँसे, न अपमान करे।

पदपाठ कन्यां कुमारिकां — कन्या, कुमारी · नग्नमुन्मत्तां वापि योषितम् — नग्न या उन्मत्त स्त्री · न निन्देन्न जुगुप्सेत — न निन्दा करे, न घृणा करे · न हसेन्नावमानयेत् — न हँसे, न अपमान करे

नाप्रियं नानृतं ब्रूयात् कस्यापि कुलयोगिनः ।

कुरूपा चेति कृष्णेति न वदेत् कुलयोषितम् ॥ ६२ ॥

६२

किसी भी कुल-योगी से अप्रिय या असत्य न बोले; कुल-स्त्री को "कुरूपा" या "काली" न कहे।

पदपाठ नाप्रियं नानृतं ब्रूयात् — न अप्रिय, न असत्य कहे · कस्यापि कुलयोगिनः — किसी कुलयोगी को · कुरूपा चेति कृष्णेति — "कुरूपा" या "काली" · न वदेत् कुलयोषितम् — कुल-स्त्री को न कहे

परीक्षयेन्न भक्तानां वीराणाञ्च कृताकृतम् ।
न पश्येद्वनितां नगनामुन्मत्तां प्रकटस्तनीम् ॥ ६३ ॥

६३

भक्तों और वीरों के किए-अनकिए की परीक्षा न करे; नग्न, उन्मत्त या खुले स्तनों वाली स्त्री को न देखे।

पदपाठ परीक्षयेन्न भक्तानां — परीक्षा न करे भक्तों के · वीराणाञ्च कृताकृतम् — और वीरों के कृत-अकृत की · न पश्येद्वनितां — स्त्री को न देखे · नगनामुन्मत्तां प्रकटस्तनीम् — नग्न, उन्मत्त, प्रकट स्तनों वाली

दिवसे न रमेन्नारीं तद्योनिं नैव वीक्षयेत् ।
या काचिदङ्गना लोके सा मातृकुलसम्भवा ॥ ६४ ॥

६४

दिन में स्त्री से रमण न करे, न उसकी योनि को देखे; संसार में जो कोई भी स्त्री है, वह मातृकुल से उत्पन्न है।

पदपाठ दिवसे न रमेन्नारीं — दिन में स्त्री से रमण न करे · तद्योनिं नैव वीक्षयेत् — उसकी योनि न देखे · या काचिदङ्गना लोके — लोक में जो कोई स्त्री है · सा मातृकुलसम्भवा — वह मातृ-कुल से उत्पन्न है

कुप्यन्ति कुलयोगिन्यो वनितानां व्यतिक्रमात् ।
स्त्रियं शतापराधाञ्चेत् पुष्पेणापि न ताडयेत् ।
दोषान्न गणयेत् स्त्रीणां गुणानेव प्रकाशयेत् ॥ ६५ ॥

६५

स्त्रियों के प्रति अपराध से कुल-योगिनियाँ कुपित होती हैं। स्त्री सौ अपराध करे तो भी उसे फूल से भी न मारे; स्त्रियों के दोष न गिने, उनके गुण ही प्रकट करे।

पदपाठ कुप्यन्ति कुलयोगिन्यो — कुलयोगिनियाँ कुपित होती हैं · वनितानां व्यतिक्रमात् — स्त्रियों के व्यतिक्रम (अपराध) से · स्त्रियं शतापराधाञ्चेत् — स्त्री सौ अपराध वाली हो तो भी · पुष्पेणापि न ताडयेत् — फूल से भी न मारे · दोषान्न गणयेत् स्त्रीणां — स्त्रियों के दोष न गिने · गुणानेव प्रकाशयेत् — गुणों को ही प्रकाशित करे

तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः कुलवृक्षेषु सर्वदा ।

६६

तत्पत्रेषु न भोक्तव्यमर्चयेत्तु विशेषतः ॥ ६६ ॥

कुल-योगिनियाँ सदा कुल-वृक्षों में निवास करती हैं; उनके पत्तों पर भोजन न करे, बल्कि विशेष रूप से उनकी पूजा करे।

पदपाठ तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः — कुलयोगिनियाँ रहती हैं · कुलवृक्षेषु सर्वदा — कुलवृक्षों में सदा · तत्पत्रेषु न भोक्तव्यम् — उनके पत्तों पर भोजन न करे · अर्चयेत्तु विशेषतः — पर विशेष रूप से पूजा करे

न स्वपेत् कुलवृक्षाधो न चोपद्रवमाचरेत् ।

६७

दृष्ट्वा भक्त्या नमस्कुर्याच्छेदयेन्न कदाचन ॥ ६७ ॥

कुल-वृक्ष के नीचे न सोए, न उसे कोई उपद्रव पहुँचाए; उसे देखकर भक्तिपूर्वक प्रणाम करे और कभी न काटे।

पदपाठ न स्वपेत् कुलवृक्षाधो — कुलवृक्ष के नीचे न सोए · न चोपद्रवमाचरेत् — न उपद्रव करे · दृष्ट्वा भक्त्या नमस्कुर्यात् — देखकर भक्ति से नमस्कार करे · छेदयेन्न कदाचन — कभी न काटे

श्लेष्मातकं करञ्जाख्यं निम्बाश्वत्थकदम्बकाः ।

६८

बिल्ववटोदुम्बराश्च तिन्तिडी नवमी स्मृता ॥ ६८ ॥

श्लेष्मातक (लसोड़ा), करञ्ज, नीम, पीपल, कदम्ब, बेल, बरगद, गूलर — और इमली नवाँ (कुल-वृक्ष) कहा गया है।

पदपाठ श्लेष्मातकं करञ्जाख्यं — श्लेष्मातक (लसोड़ा), करंज नामक · निम्बाश्वत्थकदम्बकाः — नीम, अश्वत्थ (पीपल), कदम्ब · बिल्ववटोदुम्बराश्च — बिल्व, वट और उदुम्बर (गूलर) · तिन्तिडी नवमी स्मृता — तिन्तिडी (इमली) नौवाँ माना गया

प्रायश्चित्तं भृगोः पातं सन्यासं व्रतधारणम् ।
तीर्थयात्राभिगमनं कौलः पञ्च विवर्जयेत् ॥ ६९ ॥

६९

प्रायश्चित्त, भृगुपात (पहाड़ से गिरना), संन्यास, व्रत धारण और तीर्थयात्रा — कौल इन पाँच को त्याग दे।

पदपाठ प्रायश्चित्तं भृगोः पातं — प्रायश्चित्त, भृगुपात (पहाड़ से गिरना) · सन्यासं व्रतधारणम् — संन्यास, व्रत-धारण · तीर्थयात्राभिगमनं — तीर्थयात्रा पर जाना · कौलः पञ्च विवर्जयेत् — कौल इन पाँच को त्याग दे

वीरहत्या वृथापानं वीरपत्नीनिषेवणम् ।
वीरद्रव्यापहरणम् तत्संयोगश्च पञ्चमः ।
महापातकमित्युक्तं कौलिकानां कुलान्वये ॥ ७० ॥

७०

वीर-हत्या, वृथा पान, वीर-पत्नी का सेवन, वीर के द्रव्य का हरण और ऐसे पापियों का संसर्ग पाँचवाँ — ये कुल-परम्परा में कौलिकों के महापातक कहे गए हैं।

पदपाठ वीरहत्या वृथापानं — वीरहत्या, वृथा पान · वीरपत्नीनिषेवणम् — वीर-पत्नी का सेवन · वीरद्रव्यापहरणम् — वीर-द्रव्य का हरण · तत्संयोगश्च पञ्चमः — और उनका संयोग — पाँचवाँ · महापातकमित्युक्तं — महापातक कहा गया है · कौलिकानां कुलान्वये — कुल-परम्परा में कौलिकों के लिए

शैवे तत्त्वपरिज्ञानं गारुडे विषभक्षणम् ।
ज्योतिषे ग्रहणं सारं कौलेऽनुग्रहनिग्रहौ ॥ ७१ ॥

७१

शैव में तत्त्वज्ञान सार है, गारुड में विष-भक्षण, ज्योतिष में ग्रहण, और कौल में अनुग्रह और निग्रह।

पदपाठ शैवे तत्त्वपरिज्ञानं — शैव में तत्त्व-परिज्ञान · गारुडे विषभक्षणम् — गारुड में विष-भक्षण · ज्योतिषे ग्रहणं सारं — ज्योतिष में ग्रहण सार है · कौलेऽनुग्रहनिग्रहौ — कौल में अनुग्रह-निग्रह

देवतागुरुशास्त्राणां सिद्धाचारविडम्बकाः ।

७२

विद्याचौरो गुरुद्रोही ब्रह्मराक्षसतां व्रजेत् ॥ ७२ ॥

देवता, गुरु और शास्त्र के सिद्ध आचार का उपहास करने वाले, विद्या का चोर और गुरु-द्रोही — ऐसा व्यक्ति ब्रह्मराक्षस हो जाता है।

पदपाठ देवतागुरुशास्त्राणां — देवता, गुरु, शास्त्रों के · सिद्धाचारविडम्बकाः — सिद्धाचार की नकल करने वाले · विद्याचौरो गुरुद्रोही — विद्या-चोर, गुरु-द्रोही · ब्रह्मराक्षसतां व्रजेत् — ब्रह्मराक्षस बनता है

गुरुवाक्यं हतं कृत्वा वीरान् निर्भर्त्स्य च प्रिये ।

७३

गुरुं हुङ्कृत्य तुङ्कृत्य वीरं निर्जित्य वादतः ।

विकल्प्य कुलशास्त्राणि भवन्ति ब्रह्मराक्षसाः ॥ ७३ ॥

गुरु के वचन को व्यर्थ करके, वीरों को डाँटकर, हे प्रिये! गुरु के प्रति हुंकार और तूकार करके, वाद में वीर को हराकर, कुलशास्त्रों में विकल्प उठाकर — ऐसे लोग ब्रह्मराक्षस हो जाते हैं।

पदपाठ गुरुवाक्यं हतं कृत्वा — गुरु-वाक्य को व्यर्थ कर · वीरान् निर्भर्त्स्य च प्रिये — और वीरों को डाँटकर, हे प्रिये · गुरुं हुङ्कृत्य तुङ्कृत्य — गुरु पर हुंकार-तुंकार कर · वीरं निर्जित्य वादतः — वाद में वीर को जीतकर · विकल्प्य कुलशास्त्राणि — कुलशास्त्रों में विकल्प (सन्देह) कर · भवन्ति ब्रह्मराक्षसाः — ब्रह्मराक्षस बनते हैं

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुज्वावमानयेत् ।

७४

श्वानं योनिशतं गत्वा चण्डालत्वमवाप्नुयात् ॥ ७४ ॥

जो एक अक्षर भी देने वाले गुरु का अपमान करता है, वह सौ बार कुत्ते की योनि में जाकर चाण्डाल होता है।

पदपाठ एकाक्षरप्रदातारं — एक अक्षर देने वाले · यो गुरुज्वावमानयेत् — गुरु का जो अपमान करे · श्वानं योनिशतं गत्वा — सौ कुत्ते की योनियों में जाकर · चण्डालत्वमवाप्नुयात् — चण्डालत्व पाता है

मातरं पितरं भार्या भ्रातरं बान्धवं सुतम् ।
कुलनिन्दाकरं देवि हन्यादेवाविचारयन् ॥ ७५॥

७५

माता, पिता, भार्या, भाई, बन्धु या पुत्र — जो कुल की निन्दा करे, हे देवि! उसे बिना विचारे मार डाले।

पदपाठ मातरं पितरं भार्या — माता, पिता, भार्या · भ्रातरं बान्धवं सुतम् — भ्राता, बान्धव,
पुत्र · कुलनिन्दाकरं देवि — कुल की निन्दा करने वाले को, हे देवि · हन्यादेवाविचारयन् — बिना विचार मार दे

गुर्वर्थं देवतार्थं वा कौलिकार्थं कुलेश्वरि ।
कुलागमार्थमथवा कुलधर्मार्थमेव वा ॥ ७६॥

७६

गुरु के लिए, देवता के लिए, कौलिक के लिए, हे कुलेश्वरि! कुल-आगम के लिए अथवा कुलधर्म के लिए,

पदपाठ गुर्वर्थं देवतार्थं वा — गुरु के लिए या देवता के लिए · कौलिकार्थं कुलेश्वरि — कौलिक के लिए, हे कुलेश्वरि · कुलागमार्थमथवा — या कुलागम के लिए · कुलधर्मार्थमेव वा — या कुलधर्म के लिए ही

देवि निन्दाकरं हत्वा बाधितः स्वयमेव वा ।
यस्त्यजेद्दुस्त्यजप्राणान् स परे लीयते शिवे ॥ ७७॥

७७

हे देवि! जो निन्दक को मारकर, या स्वयं पीड़ित होकर, दुस्त्यज प्राणों को त्याग देता है, वह परम शिव में लीन हो जाता है।

पदपाठ देवि निन्दाकरं हत्वा — हे देवि, निन्दक को मारकर · बाधितः स्वयमेव वा — या स्वयं बाधित होकर · यस्त्यजेद्दुस्त्यजप्राणान् — जो दुस्त्यज प्राणों को त्यागे · स परे लीयते शिवे — वह पर शिव में लीन होता है

एकस्मिन्निधनं यत्र प्रापिते दुष्टचारिणि ।

७८

बहूनां भवति क्षेमं पुण्यं तस्य वधे भवेत् ॥ ७८ ॥

जहाँ एक दुराचारी की मृत्यु से बहुतों का कल्याण होता है, वहाँ उसके वध में पुण्य होता है।

पदपाठ एकस्मिन्निधनं यत्र — जहाँ एक के मारे जाने से · प्रापिते दुष्टचारिणि — दुष्टाचारी के (मारे जाने पर) · बहूनां भवति क्षेमं — बहुतों का क्षेम होता है · पुण्यं तस्य वधे भवेत् — उसके वध में पुण्य है

श्रीचक्रकृतवृत्तान्तं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ।

७९

कदाचिन्नैव वक्तव्यमित्याज्ञा परमेश्वरि ॥ ७९ ॥

श्रीचक्र में जो हुआ, शुभ हो या अशुभ, वह कभी न कहे — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि!

पदपाठ श्रीचक्रकृतवृत्तान्तं — श्रीचक्र में हुआ वृत्तान्त · शुभं वा यदि वाऽशुभम् — शुभ हो या अशुभ · कदाचिन्नैव वक्तव्यम् — कभी नहीं कहना चाहिए · इत्याज्ञा परमेश्वरि — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि

कुलधर्मप्रसङ्गञ्च पशूनां पुरतः प्रिये ।

८०

कदाचिन्नैव कुर्वीत शूद्राग्रे वेदपाठवत् ॥ ८० ॥

पशुओं के सामने कुलधर्म की चर्चा कभी न करे, हे प्रिये! जैसे शूद्र के सामने वेद-पाठ नहीं किया जाता।

पदपाठ कुलधर्मप्रसङ्गञ्च — और कुलधर्म का प्रसंग · पशूनां पुरतः प्रिये — पशुओं के सामने, हे प्रिये · कदाचिन्नैव कुर्वीत — कभी न करे · शूद्राग्रे वेदपाठवत् — शूद्र के सामने वेद-पाठ की तरह

पीठक्षेत्रागमाम्नायं तद्विद्याचारकौलिकान् ।
कुलद्रव्यादिकं देवि न वदेत् पशुसन्निधौ ॥ ८१ ॥

८१

पीठ, क्षेत्र, आगम, आम्नाय, उनकी विद्याएँ, आचार और कौलिक, कुलद्रव्य आदि
— हे देवि! पशु के सामने इनकी बात न करे।

पदपाठ पीठक्षेत्रागमाम्नायं — पीठ, क्षेत्र, आगम, आम्नाय · तद्विद्याचारकौलिकान् — उनकी विद्या,
आचार, कौलिक · कुलद्रव्यादिकं देवि — कुलद्रव्य आदि, हे देवि · न वदेत् पशुसन्निधौ — पशु के सन्निधान
में न कहे

यथा रक्षति चौरैभ्यो धनधान्यादिकं प्रिये ।
कुलधर्मं तथा देवि पशुभ्यः परिरक्षयेत् ॥ ८२ ॥

८२

जैसे धन, धान्य आदि की चोरों से रक्षा करता है, हे प्रिये! वैसे ही कुलधर्म की, हे
देवि! पशुओं से रक्षा करे।

पदपाठ यथा रक्षति चौरैभ्यो — जैसे चोरों से रक्षा करता है · धनधान्यादिकं प्रिये — धन-धान्य आदि की, हे
प्रिये · कुलधर्मं तथा देवि — वैसे कुलधर्म की, हे देवि · पशुभ्यः परिरक्षयेत् — पशुओं से रक्षा करे

अन्तः कौलो बहिः शैवो जनमध्ये तु वैष्णवः ।
कौलं सुगोपयेद्देवि नारिकेलफलाम्बुवत् ॥ ८३ ॥

८३

भीतर से कौल, बाहर से शैव, और लोगों के बीच वैष्णव — कौल को भली-भाँति
छिपाए, हे देवि! नारियल के भीतर के जल की तरह।

पदपाठ अन्तः कौलो बहिः शैवो — भीतर कौल, बाहर शैव · जनमध्ये तु वैष्णवः — और जनों के मध्य
वैष्णव · कौलं सुगोपयेद्देवि — कौल को सुगोपित रखे, हे देवि · नारिकेलफलाम्बुवत् — नारियल के फल
के जल की तरह

कुलधर्मादिकं सर्वं सर्वावस्थासु सर्वदा ।

८४

गोपयेच्च प्रयत्नेन जननीजारगर्भवत् ॥ ८४ ॥

कुलधर्म आदि सब कुछ, सब अवस्थाओं में, सदा, प्रयत्नपूर्वक छिपाए — जैसे माता जार से हुए गर्भ को छिपाती है।

पदपाठ कुलधर्मादिकं सर्वं — कुलधर्म आदि सब · सर्वावस्थासु सर्वदा — सब अवस्थाओं में, सदा · गोपयेच्च प्रयत्नेन — यत्न से गोपन करे · जननीजारगर्भवत् — जैसे माता जार (परपुरुष) के गर्भ को

वेदशास्त्रपुराणानि स्पष्टानि गणिका इव ।

८५

इयन्तु शाम्भवी विद्या गुप्ता कुलवधूरिव ॥ ८५ ॥

वेद, शास्त्र और पुराण गणिका की तरह प्रकट हैं; किन्तु यह शाम्भवी विद्या कुलवधू की तरह गुप्त है।

पदपाठ वेदशास्त्रपुराणानि — वेद, शास्त्र, पुराण · स्पष्टानि गणिका इव — स्पष्ट (खुले) हैं, गणिका की तरह · इयन्तु शाम्भवी विद्या — पर यह शाम्भवी विद्या · गुप्ता कुलवधूरिव — गुप्त है, कुलवधू की तरह

सुगुप्तकौलिकाचारमनुगृह्णन्ति देवताः ।

८६

वाञ्छासिद्धिं प्रयच्छन्ति नाशयन्ति प्रकाशकान् ॥ ८६ ॥

जिसका कौलिक आचार भली-भाँति गुप्त है उस पर देवता अनुग्रह करते हैं, वाञ्छित सिद्धि देते हैं; प्रकट करने वालों को नष्ट कर देते हैं।

पदपाठ सुगुप्तकौलिकाचारम् — सुगुप्त कौलिक आचार वाले पर · अनुगृह्णन्ति देवताः — देवता अनुग्रह करते हैं · वाञ्छासिद्धिं प्रयच्छन्ति — इच्छा की सिद्धि देते हैं · नाशयन्ति प्रकाशकान् — प्रकाशकों को नष्ट करते हैं

कुलेशि कुलशास्त्रज्ञाः कुलपूजापरायणाः ।

ये त्वां रहसि सेवन्ते ते तिष्ठन्ति तवान्तिके ॥ ८७ ॥

८७

हे कुलेशि! जो कुलशास्त्र के ज्ञाता, कुलपूजा में परायण, तुम्हारी गुप्त रूप से सेवा करते हैं, वे तुम्हारे समीप रहते हैं।

पदपाठ कुलेशि कुलशास्त्रज्ञाः — हे कुलेशि! कुलशास्त्रज्ञ · कुलपूजापरायणाः — कुलपूजा-परायण · ये त्वां रहसि सेवन्ते — जो एकान्त में तुम्हारी सेवा करते हैं · ते तिष्ठन्ति तवान्तिके — वे तुम्हारे समीप रहते हैं

गुरुं प्रकाशयेद्धिमान् मन्त्रं यत्नेन गोपयेत् ।

अप्रकाशप्रकाशाभ्यां नश्यतः सम्पदायुषी ॥ ८८ ॥

८८

बुद्धिमान् गुरु को प्रकट करे और मन्त्र को यत्नपूर्वक गुप्त रखे; गुरु को छिपाने और मन्त्र को प्रकट करने से सम्पत्ति और आयु नष्ट होती हैं।

पदपाठ गुरुं प्रकाशयेद्धिमान् — बुद्धिमान् गुरु को प्रकाशित करे · मन्त्रं यत्नेन गोपयेत् — मन्त्र को यत्न से गोपन करे · अप्रकाशप्रकाशाभ्यां — (गुरु को) गुप्त और (मन्त्र को) प्रकट करने से · नश्यतः सम्पदायुषी — सम्पत्ति और आयु नष्ट होती हैं

सर्वाचारपरिभ्रष्टः कुलाचारं समाश्रयेत् ।

कुलाचारपरिभ्रष्टो रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ८९ ॥

८९

सब आचारों से भ्रष्ट व्यक्ति कुलाचार का आश्रय ले; कुलाचार से भ्रष्ट व्यक्ति रौरव नरक में जाता है।

पदपाठ सर्वाचारपरिभ्रष्टः — सब आचारों से भ्रष्ट · कुलाचारं समाश्रयेत् — कुलाचार का आश्रय ले · कुलाचारपरिभ्रष्टो — कुलाचार से भ्रष्ट · रौरवं नरकं व्रजेत् — रौरव नरक में जाता है

शास्त्रेषु निष्कृतिर्दृष्टा महापातकिनामपि ।

कुलभ्रष्टस्य देवेशि न दृष्टा निष्कृतिः क्वचित् ॥ ९० ॥

९०

शास्त्रों में महापातकियों के लिए भी निष्कृति (प्रायश्चित्त) देखी गई है; किन्तु कुल से भ्रष्ट के लिए, हे देवेशि! कहीं कोई निष्कृति नहीं देखी गई।

पदपाठ शास्त्रेषु निष्कृतिर्दृष्टा — शास्त्रों में निष्कृति (प्रायश्चित्त) देखी गई · महापातकिनामपि — महापातकियों की भी · कुलभ्रष्टस्य देवेशि — कुलभ्रष्ट की, हे देवेशि · न दृष्टा निष्कृतिः क्वचित् — कहीं निष्कृति नहीं देखी गई

कुलधर्म समाश्रित्य आचारं यो न पालयेत् ।

यथेच्छचारिणस्तस्य महापातकिनः प्रिये ॥ ९१ ॥

९१

जो कुलधर्म का आश्रय लेकर उसके आचार का पालन नहीं करता, उस स्वेच्छाचारी महापातकी के लिए, हे प्रिये!

पदपाठ कुलधर्म समाश्रित्य — कुलधर्म का आश्रय लेकर · आचारं यो न पालयेत् — जो आचार का पालन न करे · यथेच्छचारिणस्तस्य — यथेच्छ चलने वाले उस · महापातकिनः प्रिये — महापातकी के, हे प्रिये

आपदो दुरितं रोगा दारिद्र्यं कलहो भयम् ।

योगिनीनां प्रकोपश्च स्वलितानि पदे पदे ॥ ९२ ॥

९२

आपदाएँ, दुरित, रोग, दारिद्र्यता, कलह, भय, योगिनियों का प्रकोप और पद-पद पर स्वखलन होते हैं।

पदपाठ आपदो दुरितं रोगा — आपदाएँ, दुरित, रोग · दारिद्र्यं कलहो भयम् — दारिद्र्यता, कलह, भय · योगिनीनां प्रकोपश्च — योगिनियों का प्रकोप · स्वलितानि पदे पदे — और पद-पद पर स्वखलन

भ्रंशमानः प्रनष्टश्च तेजोहीनोऽतिदुर्मतिः ।

निन्दितः सर्वविद्विष्टो विह्वलः सङ्गवर्जितः ।

९३

देशादेशान्तरं याति कार्यहानिश्च सर्वदा ॥ ९३ ॥

भ्रष्ट होता हुआ, नष्ट, तेजहीन, अति दुर्बुद्धि, निन्दित, सबसे द्वेष पाता हुआ, विह्वल, सङ्ग से वर्जित — वह देश-देशान्तर भटकता है और उसके कार्य सदा हानि को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ भ्रंशमानः प्रनष्टश्च — भ्रष्ट होता, नष्ट होता · तेजोहीनोऽतिदुर्मतिः — तेजोहीन, अति दुर्बुद्धि · निन्दितः सर्वविद्विष्टो — निन्दित, सबसे द्वेष पाता · विह्वलः सङ्गवर्जितः — विह्वल, संग-वर्जित · देशादेशान्तरं याति — देश से देशान्तर जाता है · कार्यहानिश्च सर्वदा — और सदा कार्य-हानि

तत्रापि कुलमार्गस्थाः शाकिन्यः कुलपालिकाः ।

९४

भक्षयन्ति पुरा तासां वरो दत्तो मयेव तु ॥ ९४ ॥

और वहाँ भी कुलमार्ग में स्थित कुल-पालिका शाकिनियाँ उसे खा जाती हैं; क्योंकि पहले मैंने ही उन्हें यह वर दिया था।

पदपाठ तत्रापि कुलमार्गस्थाः — वहाँ भी कुलमार्ग में स्थित · शाकिन्यः कुलपालिकाः — शाकिनियाँ, कुल की पालिकाएँ · भक्षयन्ति — भक्षण करती हैं · पुरा तासां वरो दत्तो मयेव तु — पहले उन्हें मैंने ही वर दिया है

तस्मादाचारवान् देवि योगिनीनां प्रियो भवेत् ।

९५

नाशयन्ति चतुर्वेदाननाचाराः कुलेश्वरि ॥ ९५॥

इसलिए, हे देवि! आचारवान् योगिनियों का प्रिय होता है; चारों वेदों के ज्ञाता को भी अनाचारी होने पर वे नष्ट कर देती हैं, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ तस्मादाचारवान् देवि — इसलिए आचारवान्, हे देवि · योगिनीनां प्रियो भवेत् — योगिनियों का प्रिय होता है · नाशयन्ति चतुर्वेदान् — चतुर्वेदों को भी नष्ट करती हैं · अनाचाराः कुलेश्वरि — अनाचारी हो तो, हे कुलेश्वरि

पादुकामात्रसारज्ञः सदाचारेषु यन्त्रितः ।

९६

सदाचारेण देवत्वं योगिनीवीरमेलनम् ।

सम्प्राप्नुवन्ति तिर्यक्त्वं कौलिकास्तद्विपर्ययात् ॥ ९६॥

जो पादुका मात्र के सार को जानता है और सदाचार में नियन्त्रित है — सदाचार से कौलिक देवत्व और योगिनी-वीर-मेलन को प्राप्त करते हैं; उसके विपरीत आचरण से तिर्यक् योनि को।

पदपाठ पादुकामात्रसारज्ञः — केवल पादुका का सार जानने वाला · सदाचारेषु यन्त्रितः — सदाचारों में नियन्त्रित · सदाचारेण देवत्वं — सदाचार से देवत्व · योगिनीवीरमेलनम् — योगिनी-वीर-मेलन · सम्प्राप्नुवन्ति — पाते हैं · तिर्यक्त्वं कौलिकास्तद्विपर्ययात् — उसके विपरीत से कौलिक तिर्यक्त्व (पशुता) पाते हैं

आज्ञासिद्धमिदं कौलमनाचाराद्विनश्यति ।

९७

आचारपालनात् सत्यमाज्ञासिद्धिर्भविष्यति ॥ ९७ ॥

यह कौल आज्ञा से सिद्ध है; अनाचार से यह नष्ट हो जाता है। आचार के पालन से निश्चय ही आज्ञा-सिद्धि होगी।

पदपाठ आज्ञासिद्धमिदं कौलम् — यह कौल आज्ञासिद्ध है · अनाचाराद्विनश्यति — अनाचार से नष्ट होता है · आचारपालनात् सत्यम् — आचार-पालन से, सत्य · आज्ञासिद्धिर्भविष्यति — आज्ञासिद्धि होगी

नाभिषेको न मन्त्रो वा न शास्त्रपठनादिकम् ।

९८

कारणं कुलधर्मस्य सदाचारः कुलेश्वरि ॥ ९८ ॥

न अभिषेक, न मन्त्र, न शास्त्र-पठन आदि कुलधर्म का कारण है, बल्कि सदाचार है, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ नाभिषेको न मन्त्रो वा — न अभिषेक, न मन्त्र · न शास्त्रपठनादिकम् — न शास्त्र-पठन आदि · कारणं कुलधर्मस्य — कुलधर्म का कारण है · सदाचारः कुलेश्वरि — (बल्कि) सदाचार, हे कुलेश्वरि

बाला श्रीपादुकातत्त्वत्रयाचारादिवासनाः ।

९९

यो वेत्ति समयी स स्यात् कौलिकश्चापि शाम्भवि ॥ ९९ ॥

जो बाला, श्रीपादुका, तत्त्वत्रय, आचार आदि वासनाओं को जानता है, वही समयी है और कौलिक भी, हे शाम्भवि!

पदपाठ बाला श्रीपादुकातत्त्वत्रयाचारादिवासनाः — बाला, श्रीपादुका, तत्त्वत्रय, आचार आदि की वासनाएँ · यो वेत्ति समयी स स्यात् — जो जानता है वह समयी है · कौलिकश्चापि शाम्भवि — और कौलिक भी, हे शाम्भवि

तावन्न कौलिको देवि यावन्न समयीकृतः ।

देहपाते विमोक्षः स्यात् समयाचारपालनात् ॥ १०० ॥

१००

हे देवि! जब तक समयी नहीं बनाया गया, तब तक कोई कौलिक नहीं है; समयाचार के पालन से देह-पात पर मोक्ष होता है।

पदपाठ तौवन्न कौलिको देवि — तब तक कौलिक नहीं, हे देवि · यावन्न समयीकृतः — जब तक समयी न बना हो · देहपाते विमोक्षः स्यात् — देहपात पर विमोक्ष होता है · समयाचारपालनात् — समयाचार के पालन से

संस्कारेण विहीनत्वाद् गुरुवाक्यस्य लङ्घनात् ।

आचारवर्जनादेवि कौलिकः पतितो भवेत् ॥ १०१ ॥

१०१

संस्कार से रहित होने से, गुरु-वाक्य का उल्लङ्घन करने से और आचार छोड़ने से, हे देवि! कौलिक पतित हो जाता है।

पदपाठ संस्कारेण विहीनत्वात् — संस्कार से हीन होने से · गुरुवाक्यस्य लङ्घनात् — गुरु-वाक्य के उल्लङ्घन से · आचारवर्जनादेवि — आचार के त्याग से, हे देवि · कौलिकः पतितो भवेत् — कौलिक पतित होता है

नित्यं नैमित्तिकं द्रव्यं मन्त्रयन्त्रादिलोपनम् ।

अनर्हपशुदुःसङ्गमन्त्रसाङ्कर्यसम्भवम् ॥ १०२ ॥

१०२

नित्य और नैमित्तिक द्रव्य, मन्त्र, यन्त्र आदि का लोप, अयोग्यों और पशुओं का दुःसङ्ग, और मन्त्रों के मिश्रण से उत्पन्न दोष,

पदपाठ नित्यं नैमित्तिकं द्रव्यं — नित्य और नैमित्तिक द्रव्य · मन्त्रयन्त्रादिलोपनम् — मन्त्र, यन्त्र आदि का लोप · अनर्हपशुदुःसङ्ग — अनधिकारी और पशु का दुःसङ्ग · मन्त्रसाङ्कर्यसम्भवम् — मन्त्र-संकर से उत्पन्न

गुप्तप्रकटसम्भूतं ज्ञानाज्ञानकृतं प्रिये ।

१०३

एवमादिषु दोषेषु पापस्य गुरुलाघवम् ॥ १०३ ॥

गुप्त या प्रकट रूप से हुआ, जानकर या अनजाने किया गया, हे प्रिये! — ऐसे दोषों में पाप का गुरुत्व या लघुत्व होता है।

पदपाठ गुप्तप्रकटसम्भूतं — गुप्त या प्रकट में हुआ · ज्ञानाज्ञानकृतं प्रिये — जानते या अनजाने किया, हे प्रिये · एवमादिषु दोषेषु — इत्यादि दोषों में · पापस्य गुरुलाघवम् — पाप का गुरुत्व-लघुत्व

देशं कालं वयो वित्तं सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि ।

१०४

प्रायश्चित्तं गुरुर्दद्यात् सर्वपापविशुद्धये ॥ १०४ ॥

देश, काल, आयु और धन को भली-भाँति जानकर, गुरु विधिपूर्वक सब पापों की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त दे।

पदपाठ देशं कालं वयो वित्तं — देश, काल, आयु, वित्त · सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि — सम्यक् जानकर यथाविधि · प्रायश्चित्तं गुरुर्दद्यात् — गुरु प्रायश्चित्त दे · सर्वपापविशुद्धये — सब पापों की शुद्धि के लिए

शिष्योऽपि गुरुणाऽऽज्ञप्तं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।

१०५

अथवा सर्वपापानां गुरुनामजपः स्मृतः ॥ १०५ ॥

शिष्य भी गुरु द्वारा आज्ञापित प्रायश्चित्त करे; अथवा सब पापों के लिए गुरु-नाम का जप कहा गया है।

पदपाठ शिष्योऽपि गुरुणाऽऽज्ञप्तं — शिष्य भी गुरु द्वारा आज्ञप्त · प्रायश्चित्तं समाचरेत् — प्रायश्चित्त करे · अथवा सर्वपापानां — अथवा सब पापों के लिए · गुरुनामजपः स्मृतः — गुरु-नाम का जप कहा गया है

जाम्बूनदस्य कलुषं परिशुद्धं यथाग्निना ।

१०६

अनाचारस्य मालिन्यं प्रायश्चित्ताग्निना दहेत् ॥ १०६ ॥

जैसे सोने का मैल अग्नि से शुद्ध होता है, वैसे ही अनाचार की मलिनता को प्रायश्चित्त की अग्नि से जला दे।

पदपाठ जाम्बूनदस्य कलुषं — सोने का मल (मैल) · परिशुद्धं यथाग्निना — जैसे अग्नि से शुद्ध होता है · अनाचारस्य मालिन्यं — अनाचार की मलिनता · प्रायश्चित्ताग्निना दहेत् — प्रायश्चित्त की अग्नि से जलाए

बहुनात्र किमुक्तेन रहस्यं शृणु पार्वति ।

१०७

वर्णाश्रमाणां सर्वेषामाचारः सद्गतिप्रदः ॥ १०७ ॥

यहाँ अधिक कहने से क्या? रहस्य सुनो, हे पार्वति! सब वर्णों और आश्रमों के लिए आचार ही सद्गति देने वाला है।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या · रहस्यं शृणु पार्वति — रहस्य सुनो, हे पार्वति · वर्णाश्रमाणां सर्वेषाम् — सब वर्णों और आश्रमों के लिए · आचारः सद्गतिप्रदः — आचार सद्गति देने वाला है

गुरुस्त्रिवारमाचारं कथयेच्च कुलेश्वरि ।

१०८

न गृह्णाति हि शिष्यश्चेत्तदा पापं गुरोर्न हि ॥ १०८ ॥

गुरु तीन बार आचार बताए, हे कुलेश्वरि! यदि शिष्य ग्रहण न करे, तो पाप गुरु का नहीं है।

पदपाठ गुरुस्त्रिवारमाचारं — गुरु तीन बार आचार · कथयेच्च कुलेश्वरि — कहे, हे कुलेश्वरि · न गृह्णाति हि शिष्यश्चेत् — यदि शिष्य ग्रहण न करे · तदा पापं गुरोर्न हि — तब पाप गुरु का नहीं

मन्त्रिदोषश्च राजानं जायादोषः पतिं यथा ।

१०९

तथा प्राप्नोत्यसन्देहं शिष्यपापं गुरुं प्रिये ॥ १०९ ॥

जैसे मन्त्री का दोष राजा को और पत्नी का दोष पति को लगता है, वैसे ही निस्सन्देह शिष्य का पाप गुरु को लगता है, हे प्रिये!

पदपाठ मन्त्रिदोषश्च राजानं — जैसे मन्त्री का दोष राजा को · जायादोषः पतिं यथा — जैसे पत्नी का दोष पति को · तथा प्राप्नोत्यसन्देहं — वैसे निःसन्देह पहुँचता है · शिष्यपापं गुरुं प्रिये — शिष्य का पाप गुरु को, हे प्रिये

इति ते कथितं किञ्चित् समासेन कुलेश्वरि ।

११०

कुलाचारविधिं देवि किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ११० ॥

इस प्रकार कुलाचार की विधि के विषय में कुछ संक्षेप में तुम्हें कहा, हे कुलेश्वरि! हे देवि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · समासेन कुलेश्वरि — संक्षेप में, हे कुलेश्वरि · कुलाचारविधिं देवि — कुलाचार की विधि, हे देवि · किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णव निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाग्न्यायतन्त्रे कुलाचारकथनं नाम एकादश उल्लासः ॥ ११ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाग्न्यायतन्त्र में
कुलाचारकथन नामक एकादश उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ द्वादशोल्लासः

द्वादश उल्लास — पादुकाकथनम्



ईश्वर गुरु की पादुका के स्मरण को हर दान, व्रत और यज्ञ से ऊपर बताते हैं, गुरु को ध्यान, पूजा, मन्त्र और मोक्ष का मूल घोषित करते हैं, और शिष्य के आचार का विस्तार से वर्णन करते हैं: चतुर्विध शुश्रूषा, गुरु के प्रति अपराध और उनके फल, गुरु के समक्ष निषिद्ध कर्म, आसन, प्रणाम और प्रदक्षिणा का शिष्टाचार, दूरी के अनुसार दर्शन का क्रम, और चार प्रकार के ज्येष्ठ।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि पादुका भक्तिलक्षणम् ।

आचारमपि देवेश वद मे करुणानिधे ॥ १॥

१

हे कुलेश! मैं पादुका-भक्ति के लक्षण सुनना चाहती हूँ, और आचार भी, हे देवेश! मुझे बताइए, हे करुणानिधे!

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · पादुकाभक्तिलक्षणम् — पादुका-भक्ति के लक्षण · आचारमपि देवेश — और आचार भी, हे देवेश · वद मे करुणानिधे — मुझे बताइए, हे करुणानिधे

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण भक्तिराशु प्रजायते ॥ २॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से शीघ्र भक्ति उत्पन्न होती है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · भक्तिराशु प्रजायते — भक्ति शीघ्र उत्पन्न होती है

वाग्भवा मूलवलये शूद्राद्याः करणीकृताः ।

एवं कुलाणवि ज्ञानं पादुकायां प्रतिष्ठितम् ॥ ३॥

३

मूलवलय में वाग्भव (बीज) — शूद्र आदि उसके करण बनाये गये हैं; इस प्रकार कुलाणवि में ज्ञान पादुका में प्रतिष्ठित है।

पदपाठ वाग्भवा मूलवलये — वाग्भव (बीज) मूल-वलय में · शूद्राद्याः करणीकृताः — शूद्र आदि उसके साधन बनाए गए · एवं कुलाणवि ज्ञानं — इस प्रकार कुलाणवि में ज्ञान · पादुकायां प्रतिष्ठितम् — पादुका में प्रतिष्ठित है

कोटिकोटिमहादानात् कोटिकोटिमहाव्रतात् ।

कोटिकोटिमहायज्ञात् परा श्रीपादुकास्मृतिः ॥ ४॥

४

कोटि-कोटि महादान से, कोटि-कोटि महाव्रत से, कोटि-कोटि महायज्ञ से श्रीपादुका का स्मरण श्रेष्ठ है।

पदपाठ कोटिकोटिमहादानात् — करोड़ों-करोड़ महादानों से · कोटिकोटिमहाव्रतात् — करोड़ों-करोड़ महाव्रतों से · कोटिकोटिमहायज्ञात् — करोड़ों-करोड़ महायज्ञों से · परा श्रीपादुकास्मृतिः — श्रीपादुका की स्मृति पर (श्रेष्ठ) है

कोटिकोटिमन्त्रजापात् कोटितीर्थावगाहनात् ।

कोटिदेवार्चनाद्देवि परा श्रीपादुकास्मृतिः ॥ ५॥

५

कोटि-कोटि मन्त्र-जप से, कोटि तीर्थों में अवगाहन से, कोटि देवताओं की अर्चना से, हे देवि! श्रीपादुका का स्मरण श्रेष्ठ है।

पदपाठ कोटिकोटिमन्त्रजापात् — करोड़ों-करोड़ मन्त्र-जप से · कोटितीर्थावगाहनात् — करोड़ तीर्थों के स्नान से · कोटिदेवार्चनाद्देवि — करोड़ देवों के अर्चन से, हे देवि · परा श्रीपादुकास्मृतिः — श्रीपादुका की स्मृति पर (श्रेष्ठ) है

महारोगे महोत्पाते महादोषे महाभये ।

महापदि महापापे स्मृता रक्षति पादुका ॥ ६॥

६

महारोग में, महान् उत्पात में, महादोष में, महाभय में, महान् आपत्ति में, महापाप में — स्मरण की गई पादुका रक्षा करती है।

पदपाठ महारोगे महोत्पाते — महारोग में, महा-उत्पात में · महादोषे महाभये — महादोष में, महाभय में · महापदि महापापे — महा-आपदा में, महापाप में · स्मृता रक्षति पादुका — स्मरण की गई पादुका रक्षा करती है

दुराचारे दुरालापे दुःसङ्गे दुष्प्रतिग्रहे ।

दुराचारे च दुर्बुद्धौ स्मृता रक्षति पादुका ॥ ७॥

७

दुराचार में, दुरालाप में, दुःसङ्ग में, दुष्प्रतिग्रह में, दुराचार और दुर्बुद्धि में — स्मरण की गई पादुका रक्षा करती है।

पदपाठ दुराचारे दुरालापे — दुराचार में, दुरालाप में · दुःसङ्गे दुष्प्रतिग्रहे — दुःसङ्ग में, दुष्प्रतिग्रह में · दुराचारे च दुर्बुद्धौ — दुराचार और दुर्बुद्धि में · स्मृता रक्षति पादुका — स्मरण की गई पादुका रक्षा करती है

तेनाधीतं स्मृतं ज्ञातम् इष्टं दत्तञ्च पूजितम् ।
जिह्वाग्रे वर्तते यस्य सदा श्रीपादुकास्मृतिः ॥ ८ ॥

८

जिसकी जिह्वा के अग्रभाग पर सदा श्रीपादुका का स्मरण रहता है, उसने सब कुछ पढ़ लिया, स्मरण कर लिया, जान लिया, यज्ञ कर लिया, दान दे दिया और पूजा कर ली।

पदपाठ तेनाधीतं स्मृतं ज्ञातम् — उसने पढ़ा, स्मरण किया, जाना · इष्टं दत्तञ्च पूजितम् — यज्ञ किया, दान दिया और पूजा की · जिह्वाग्रे वर्तते यस्य — जिसकी जिह्वा के अग्र पर रहती है · सदा श्रीपादुकास्मृतिः — सदा श्रीपादुका की स्मृति

सकृत् श्रीपादुकां देवि यो वा जपति भक्तितः ।
स सर्वपापरहितः प्राप्नोति परमां गतिम् ॥ ९ ॥

९

हे देवि! जो एक बार भी भक्ति से श्रीपादुका का जप करता है, वह सर्वपापरहित होकर परम गति प्राप्त करता है।

पदपाठ सकृत् श्रीपादुकां देवि — एक बार श्रीपादुका को, हे देवि · यो वा जपति भक्तितः — जो भक्ति से जपता है · स सर्वपापरहितः — वह सब पापों से रहित · प्राप्नोति परमां गतिम् — परम गति पाता है

शुचिर्वाप्यशुचिर्वापि भक्त्या स्मरति पादुकाम् ।
अनायासेन धर्मार्थकाममोक्षान् लभते सः ॥ १० ॥

१०

शुचि हो या अशुचि, जो भक्ति से पादुका का स्मरण करता है, वह अनायास ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करता है।

पदपाठ शुचिर्वाप्यशुचिर्वापि — शुचि हो या अशुचि · भक्त्या स्मरति पादुकाम् — भक्ति से पादुका का स्मरण करता है · अनायासेन — बिना प्रयास · धर्मार्थकाममोक्षान् — धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष · लभते सः — वह पाता है

श्रीनाथचरणाम्भोजं यस्यां दिशि विराजते ।

११

तस्यां दिशि नमस्कुर्यात् भक्त्या प्रतिदिनं प्रिये ॥ ११ ॥

जिस दिशा में श्रीनाथ (गुरु) के चरण-कमल विराजते हैं, उस दिशा में प्रतिदिन भक्ति से नमस्कार करे, हे प्रिये!

पदपाठ श्रीनाथचरणाम्भोजं — श्रीनाथ के चरण-कमल · यस्यां दिशि विराजते — जिस दिशा में विराजते हैं · तस्यां दिशि नमस्कुर्यात् — उस दिशा में नमस्कार करे · भक्त्या प्रतिदिनं प्रिये — भक्ति से प्रतिदिन, हे प्रिये

न पादुकापरो मन्त्रो न देवः श्रीगुरोः परः ।

१२

न हि शाक्तात् परा दीक्षा न पुण्यं कुलपूजनात् ॥ १२ ॥

पादुका से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं, श्रीगुरु से बढ़कर कोई देव नहीं, शाक्त से बढ़कर कोई दीक्षा नहीं, कुलपूजन से बढ़कर कोई पुण्य नहीं।

पदपाठ न पादुकापरो मन्त्रो — पादुका से पर कोई मन्त्र नहीं · न देवः श्रीगुरोः परः — श्रीगुरु से पर कोई देव नहीं · न हि शाक्तात् परा दीक्षा — शाक्त से परा कोई दीक्षा नहीं · न पुण्यं कुलपूजनात् — कुलपूजन से (बढ़कर) कोई पुण्य नहीं

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।

१३

मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥ १३ ॥

ध्यान का मूल गुरु की मूर्ति है, पूजा का मूल गुरु का चरण है, मन्त्र का मूल गुरु का वाक्य है, मोक्ष का मूल गुरु की कृपा है।

पदपाठ ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः — ध्यान का मूल गुरु की मूर्ति है · पूजामूलं गुरोः पदम् — पूजा का मूल गुरु के चरण हैं · मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं — मन्त्र का मूल गुरु का वाक्य है · मोक्षमूलं गुरोः कृपा — मोक्ष का मूल गुरु की कृपा है

गुरुमूलाः क्रियाः सर्वा लोकेऽस्मिन् कुलनायिके ।

तस्मात् सेव्यो गुरुर्नित्यं सिद्ध्यर्थं भक्तिसंयुतैः ॥ १४ ॥

१४

इस लोक में सब क्रियाएँ गुरु-मूलक हैं, हे कुलनायिके! इसलिए सिद्धि के लिए भक्तियुक्त जनों को सदा गुरु की सेवा करनी चाहिए।

पदपाठ गुरुमूलाः क्रियाः सर्वा — सब क्रियाएँ गुरुमूल हैं · लोकेऽस्मिन् कुलनायिके — इस लोक में, हे कुलनायिके · तस्मात् सेव्यो गुरुर्नित्यं — इसलिए गुरु नित्य सेव्य हैं · सिद्ध्यर्थं भक्तिसंयुतैः — सिद्धि के लिए, भक्ति-युक्तों द्वारा

तावदार्तिर्भयं शोको लोभमोहभ्रमादयः ।

यावन्नायाति शरणं श्रीगुरुं भक्तवत्सलम् ॥ १५ ॥

१५

तब तक आर्ति, भय, शोक, लोभ, मोह, भ्रम आदि रहते हैं, जब तक भक्तवत्सल श्रीगुरु की शरण में नहीं आता।

पदपाठ तावदार्तिर्भयं शोको — तब तक पीड़ा, भय, शोक · लोभमोहभ्रमादयः — लोभ, मोह, भ्रम आदि · यावन्नायाति शरणं — जब तक शरण में नहीं आता · श्रीगुरुं भक्तवत्सलम् — भक्तवत्सल श्रीगुरु की

तावद् भ्रमन्ति संसारे सर्वदुःखमलीमसाः ।

न भवेत् सद्गुरौ भक्तिर्यावद्देवेशि देहिनाम् ॥ १६ ॥

१६

हे देवेशि! देहधारी तब तक सब दुःखों से मलिन होकर संसार में भटकते रहते हैं, जब तक उनमें सद्गुरु के प्रति भक्ति नहीं होती।

पदपाठ तावद् भ्रमन्ति संसारे — तब तक संसार में भटकते हैं · सर्वदुःखमलीमसाः — सब दुःखों से मलिन · न भवेत् सद्गुरौ भक्तिः — सद्गुरु में भक्ति नहीं होती · यावद्देवेशि देहिनाम् — जब तक, हे देवेशि, देहधारियों की

सर्वसिद्धिफलोपेतो मन्त्रः शुध्यति शोभनः ।

१७

गुरुप्रसादमूलोऽयं परतत्त्वमहाक्रमः ॥ १७ ॥

सर्वसिद्धि-फल से युक्त शोभन मन्त्र शुद्ध होता है; यह परतत्त्व का महाक्रम गुरु-प्रसाद-मूलक है।

पदपाठ सर्वसिद्धिफलोपेतो — सब सिद्धियों के फल से युक्त · मन्त्रः शुध्यति शोभनः — शोभन मन्त्र शुद्ध होता है · गुरुप्रसादमूलोऽयं — गुरु-प्रसाद-मूल यह · परतत्त्वमहाक्रमः — परतत्त्व का महाक्रम है

यथा ददाति सन्तुष्टः प्रसन्नो वरदो मनुम् ।

१८

तथा भक्त्या धनैः प्राणैर्गुरुं यत्नेन तोषयेत् ॥ १८ ॥

जिससे सन्तुष्ट, प्रसन्न और वरदायक होकर वे मन्त्र दें, इसलिए भक्ति से, धन से, प्राणों से यत्नपूर्वक गुरु को सन्तुष्ट करे।

पदपाठ यथा ददाति सन्तुष्टः — जैसे सन्तुष्ट होकर देता है · प्रसन्नो वरदो मनुम् — प्रसन्न, वरदायी, मन्त्र को · तथा भक्त्या धनैः प्राणैः — वैसे भक्ति से, धन से, प्राणों से · गुरुं यत्नेन तोषयेत् — गुरु को यत्न से सन्तुष्ट करे

यदा दद्यात् स्वशिष्याय स्वात्मानं देशिकोत्तमः ।

१९

तदा मुक्तो भवेच्छिष्यस्ततो नास्ति पुनर्भवः ॥ १९ ॥

जब देशिकोत्तम (श्रेष्ठ गुरु) अपने शिष्य को अपना आत्मा दे देते हैं, तब शिष्य मुक्त हो जाता है; उसके बाद पुनर्जन्म नहीं होता।

पदपाठ यदा दद्यात् स्वशिष्याय — जब अपने शिष्य को देता है · स्वात्मानं देशिकोत्तमः — अपनी आत्मा, देशिकोत्तम · तदा मुक्तो भवेच्छिष्यः — तब शिष्य मुक्त हो जाता है · ततो नास्ति पुनर्भवः — उसके बाद पुनर्जन्म नहीं

तावदाराधयेच्छिष्यः प्रसन्नोऽसौ यदा भवेत् ।

गुरौ प्रसन्ने शिष्यस्य सद्यः पापक्षयो भवेत् ॥ २०॥

२०

शिष्य तब तक आराधना करे जब तक वे प्रसन्न न हो जाएँ; गुरु के प्रसन्न होने पर शिष्य के पापों का तत्काल क्षय हो जाता है।

पदपाठ तौवदररधयेच्छिष्यः — तब तक शिष्य आररधनर करे · प्रसन्नोऽसौ यदर भवेत् — जब तक वे प्रसन्न न हों · गुरौ प्रसन्ने शिष्यस्य — गुरु के प्रसन्न होने पर शिष्य के · सद्यः परपक्षयो भवेत् — परप तत्कल क्षय होते हैं

मनसपि न कड्क्षन्ते यान् कामरननुजीविनः ।

सम्पदयन्ति तान् सर्वान् स्वामिनो भक्तवत्सलरः ॥ २१॥

२१

भक्तवत्सल स्वामी उन सब कामनरओं को पूर्ण कर देते हैं जिन्हें आश्रित जन मन से भी नहीं चरहते।

पदपलठ मनसरपि न कड्क्षन्ते — मन से भी नहीं चरहते · यान् कामरननुजीविनः — जो कामनरएँ अनुजीवी (सेवक) · सम्पदयन्ति तान् सर्वान् — उन सबको पूर्ण करते हैं · स्वामिनो भक्तवत्सलरः — भक्तवत्सल स्वामी

ब्रह्मविष्णुमहेशरदिदेवतरमुनियोगिनः ।

कुर्वन्त्यनुग्रहं तुष्टर गुरौ तुष्टे न संशयः ॥ २२॥

२२

गुरु के सन्तुष्ट होने पर ब्रह्मर, विष्णु, महेश आदि देवतर, मुनि और योगी सन्तुष्ट होकर अनुग्रह करते हैं — इसमें सन्देह नहीं।

पदपलठ ब्रह्मविष्णुमहेशरदि- — ब्रह्मर, विष्णु, महेश आदि · देवतरमुनियोगिनः — देवतर, मुनि, योगी · कुर्वन्त्यनुग्रहं तुष्टर — तुष्ट होकर अनुग्रह करते हैं · गुरौ तुष्टे न संशयः — गुरु के तुष्ट होने पर, सन्देह नहीं

भक्त्या तुष्टेन गुरुणा यः प्रदिष्टः कृपालुना ।

कर्ममुक्तो भवेच्छिष्यो भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् ॥ २३ ॥

२३

भक्ति से सन्तुष्ट कृपालु गुरु के द्वारा जो शिष्य उपदिष्ट होता है, वह कर्म से मुक्त हो जाता है; वह भुक्ति और मुक्ति दोनों का भाजन है।

पदपाठ भक्त्या तुष्टेन गुरुणा — भक्ति से तुष्ट गुरु द्वारा · यः प्रदिष्टः कृपालुना — जो कृपालु द्वारा उपदिष्ट है · कर्ममुक्तो भवेच्छिष्यो — शिष्य कर्म से मुक्त हो जाता है · भुक्तिमुक्त्योः स भाजनम् — वह भुक्ति-मुक्ति का पात्र है

शिष्येणापि तथा कार्यं यथा सन्तोषितो गुरुः ।

प्रियं कुर्याच्च देवेशि मनोवाक्कायकर्मभिः ॥ २४ ॥

२४

शिष्य को भी ऐसा करना चाहिए जिससे गुरु सन्तुष्ट हों, और हे देवेशि! मन, वाणी और शरीर के कर्मों से उनका प्रिय करे।

पदपाठ शिष्येणापि तथा कार्यं — शिष्य को भी वैसा करना चाहिए · यथा सन्तोषितो गुरुः — जिससे गुरु सन्तुष्ट हों · प्रियं कुर्याच्च देवेशि — और प्रिय करे, हे देवेशि · मनोवाक्कायकर्मभिः — मन, वाणी, काया के कर्मों से

यदि तुष्टेन गुरुणात्मशिष्यो यत्र कुत्रचित् ।

मुक्तोऽसीति समादिष्टः सोऽपि मुक्तिं व्रजेत् प्रिये ॥ २५ ॥

२५

यदि प्रसन्न गुरु अपने शिष्य से कहीं भी कह दें कि "तू मुक्त है", तो वह भी मुक्ति प्राप्त करता है, हे प्रिये!

पदपाठ यदि तुष्टेन गुरुणा — यदि तुष्ट गुरु द्वारा · आत्मशिष्यो यत्र कुत्रचित् — अपना शिष्य, जहाँ-कहीं भी · मुक्तोऽसीति समादिष्टः — "तू मुक्त है" ऐसा आदेश पाए · सोऽपि मुक्तिं व्रजेत् प्रिये — वह भी मुक्ति पाता है, हे प्रिये

अथवा निष्प्रपञ्चेन धाम्ना केनचिदीश्वरः ।

करोति गुरुरूपेण पशुपाशविमोचनम् ॥ २६ ॥

२६

अथवा ईश्वर गुरु के रूप में किसी निष्प्रपञ्च (अनिर्वचनीय) तेज से पशु के पाश का विमोचन कर देते हैं।

पदपाठ अथवा निष्प्रपञ्चेन — अथवा निष्प्रपञ्च · धाम्ना केनचिदीश्वरः — किसी (अनिर्वचनीय) धाम से ईश्वर · करोति गुरुरूपेण — गुरु के रूप में करते हैं · पशुपाशविमोचनम् — पशु का पाश से विमोचन

न मे प्रियश्चतुर्वेदी मद्भक्तः श्वपचोऽपि वा ।

तस्मै देयं ततो ग्राह्यं स तु पूज्यो ह्यहं यथा ॥ २७ ॥

२७

मुझे चतुर्वेदी प्रिय नहीं; मेरा भक्त, चाहे श्वपच (चाण्डाल) ही क्यों न हो — उसे दिया जाए, उससे लिया जाए, और वह मेरे ही समान पूज्य है।

पदपाठ न मे प्रियश्चतुर्वेदी — मुझे चतुर्वेदी प्रिय नहीं · मद्भक्तः श्वपचोऽपि वा — मेरा भक्त, श्वपच हो तो भी · तस्मै देयं ततो ग्राह्यं — उसे देना चाहिए, उससे लेना चाहिए · स तु पूज्यो ह्यहं यथा — वह पूज्य है, जैसे मैं

विप्रः षड्गुणयुक्तश्चेदभक्तो न प्रशस्यते ।

म्लेच्छोऽपि गुणहीनोऽपि भक्तिमान् शिष्य उच्यते ॥ २८ ॥

२८

षड्गुणयुक्त विप्र भी यदि अभक्त हो तो प्रशंसनीय नहीं; म्लेच्छ भी, गुणहीन भी, यदि भक्तिमान् हो तो शिष्य कहलाता है।

पदपाठ विप्रः षड्गुणयुक्तश्चेत् — विप्र छह गुणों से युक्त हो तो भी · अभक्तो न प्रशस्यते — अभक्त प्रशंसित नहीं होता · म्लेच्छोऽपि गुणहीनोऽपि — म्लेच्छ भी, गुणहीन भी · भक्तिमान् शिष्य उच्यते — भक्तिमान् शिष्य कहलाता है

गुरुभक्तिविहीनस्य तपो विद्या कुलं व्रतम् ।
सर्वं नश्यति तत्रैव भूषणं लोकरञ्जनम् ॥ २९ ॥

२९

गुरुभक्ति से रहित व्यक्ति के तप, विद्या, कुल और व्रत — सब वहीं नष्ट हो जाते हैं; वे केवल लोकरञ्जन का आभूषण हैं।

पदपाठ गुरुभक्तिविहीनस्य — गुरुभक्ति से हीन का · तपो विद्या कुलं व्रतम् — तप, विद्या, कुल, व्रत · सर्वं नश्यति तत्रैव — सब वहीं नष्ट हो जाता है · भूषणं लोकरञ्जनम् — (केवल) लोकरञ्जन का भूषण

गुरुभक्त्यग्निना सम्यग्दग्धदुर्मतिकल्मषः ।
श्वपचोऽपि परैः पूज्यो विद्वानपि न नास्तिकः ॥ ३० ॥

३०

गुरुभक्ति की अग्नि से जिसके दुर्मति के कल्मष भली-भाँति दग्ध हो गये हैं, ऐसा श्वपच भी अन्यो के लिए पूज्य है — किन्तु नास्तिक विद्वान् भी नहीं।

पदपाठ गुरुभक्त्यग्निना — गुरुभक्ति की अग्नि से · सम्यग्दग्धदुर्मतिकल्मषः — दुर्बुद्धि का मल सम्यक् जला हुआ · श्वपचोऽपि परैः पूज्यो — श्वपच भी दूसरों से पूज्य है · विद्वानपि न नास्तिकः — नास्तिक विद्वान् भी नहीं

धर्मार्थकामैः किन्तस्य मोक्ष एव करे स्थितः ।
सर्वार्थैः श्रीगुरौ देवि यस्य भक्तिः सदा स्थिरा ॥ ३१ ॥

३१

उसे धर्म, अर्थ, काम से क्या? मोक्ष ही उसके हाथ में है — हे देवि! जिसकी श्रीगुरु में सर्वस्व के साथ सदा स्थिर भक्ति है।

पदपाठ धर्मार्थकामैः किन्तस्य — धर्म, अर्थ, काम से उसे क्या · मोक्ष एव करे स्थितः — मोक्ष ही हाथ में स्थित है · सर्वार्थैः श्रीगुरौ देवि — सर्वस्व से श्रीगुरु में, हे देवि · यस्य भक्तिः सदा स्थिरा — जिसकी भक्ति सदा स्थिर है

स शिवो गुरुरूपेण भुक्तिमुक्तिप्रदो मम ।

इति भक्त्या स्मरेद् यस्तु तस्य सिद्धिरदूरतः ॥ ३२ ॥

३२

"वे गुरु के रूप में शिव हैं, मुझे भुक्ति और मुक्ति देने वाले" — जो इस प्रकार भक्ति से स्मरण करता है, उसकी सिद्धि दूर नहीं।

पदपाठ स शिवो गुरुरूपेण — वह शिव गुरु-रूप से · भुक्तिमुक्तिप्रदो मम — मुझे भुक्ति-मुक्ति देने वाले हैं · इति भक्त्या स्मरेद् यस्तु — ऐसा जो भक्ति से स्मरण करे · तस्य सिद्धिरदूरतः — उसकी सिद्धि दूर नहीं

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।

तस्य ते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते कुलेश्वरि ॥ ३३ ॥

३३

जिसकी देव में परा भक्ति है, और जैसी देव में वैसी ही गुरु में — उसके लिए ये कहे हुए अर्थ प्रकाशित होते हैं, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ यस्य देवे परा भक्तिः — जिसकी देव में परा भक्ति है · यथा देवे तथा गुरौ — जैसी देव में वैसी गुरु में · तस्य ते कथिता ह्यर्थाः — उसे ये कहे गए अर्थ · प्रकाशन्ते कुलेश्वरि — प्रकाशित होते हैं, हे कुलेश्वरि

नारायणे महादेवे मातापित्रोश्च राजनि ।

भक्तिर्यथा महादेवि तथा कार्या निजे गुरौ ॥ ३४ ॥

३४

हे महादेवि! जैसी भक्ति नारायण में, महादेव में, माता-पिता में और राजा में की जाती है, वैसी ही अपने गुरु में करनी चाहिए।

पदपाठ नारायणे महादेवे — नारायण में, महादेव में · मातापित्रोश्च राजनि — माता-पिता में और राजा में · भक्तिर्यथा महादेवि — जैसी भक्ति है, हे महादेवि · तथा कार्या निजे गुरौ — वैसी अपने गुरु में करनी चाहिए

लक्ष्मीनारायणौ वाणीधातारौ गिरिजाशिवौ ।
श्रीगुरुं गुरुपत्नीञ्च पितराविति चिन्तयेत् ॥ ३५॥

३५

श्रीगुरु और गुरुपत्नी को लक्ष्मी-नारायण, वाणी-धाता (सरस्वती-ब्रह्मा), गिरिजा-शिव तथा माता-पिता समझे।

पदपाठ लक्ष्मीनारायणौ — लक्ष्मी-नारायण · वाणीधातारौ — वाणी-धाता (सरस्वती-ब्रह्मा) · गिरिजाशिवौ
— गिरिजा-शिव · श्रीगुरुं गुरुपत्नीञ्च — श्रीगुरु और गुरुपत्नी को · पितराविति चिन्तयेत् — माता-पिता
समझे

गुरुभक्त्या यथा देवि प्राप्यन्ते सर्वसिद्धयः ।
यज्ञदानतपस्तीर्थव्रताद्यैर्न तथा प्रिये ॥ ३६॥

३६

हे देवि! जैसे गुरुभक्ति से सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, वैसे यज्ञ, दान, तप, तीर्थ, व्रत आदि से नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ गुरुभक्त्या यथा देवि — गुरुभक्ति से जैसे, हे देवि · प्राप्यन्ते सर्वसिद्धयः — सब सिद्धियाँ प्राप्त
होती हैं · यज्ञदानतपस्तीर्थव्रताद्यैः — यज्ञ, दान, तप, तीर्थ, व्रत आदि से · न तथा प्रिये — वैसे नहीं, हे प्रिये

श्रीगुरौ निश्चला भक्तिर्वर्द्धते हि यथा यथा ।
तथा तथास्य विज्ञानं वर्द्धते कुलनायिके ॥ ३७॥

३७

श्रीगुरु में निश्चल भक्ति जैसे-जैसे बढ़ती है, वैसे-वैसे उसका विज्ञान बढ़ता है, हे कुलनायिके!

पदपाठ श्रीगुरौ निश्चला भक्तिः — श्रीगुरु में निश्चल भक्ति · वर्द्धते हि यथा यथा — जैसे-जैसे बढ़ती
है · तथा तथास्य विज्ञानं — वैसे-वैसे इसका विज्ञान · वर्द्धते कुलनायिके — बढ़ता है, हे कुलनायिके

किं तीर्थाद्यैर्महायासैः किं व्रतैः कायशोषणैः ।

३८

निर्व्याजसेवा देवेशि भक्तिरेषा हि सद्गुरोः ॥ ३८॥

महान् परिश्रम वाले तीर्थ आदि से क्या? शरीर को सुखाने वाले व्रतों से क्या? हे देवेशि! निष्कपट सेवा ही सद्गुरु की भक्ति है।

पदपाठ किं तीर्थाद्यैर्महायासैः — महाश्रम वाले तीर्थ आदि से क्या · किं व्रतैः कायशोषणैः — काया सुखाने वाले व्रतों से क्या · निर्व्याजसेवा देवेशि — निर्व्याज (निष्कपट) सेवा, हे देवेशि · भक्तिरेषा हि सद्गुरोः — यही सद्गुरु की भक्ति है

कायाक्लेशन महता तपसा वापि यत् फलम् ।

३९

तत् फलं लभते देवि सुखेन गुरुसेवया ॥ ३९॥

महान् कायाक्लेश से अथवा तप से जो फल मिलता है, वह फल, हे देवि! गुरुसेवा से सुखपूर्वक मिल जाता है।

पदपाठ कायाक्लेशन महता — काया के महान् क्लेश से · तपसा वापि यत् फलम् — या तप से जो फल · तत् फलं लभते देवि — वह फल पाता है, हे देवि · सुखेन गुरुसेवया — सुख से गुरुसेवा द्वारा

भोगमोक्षार्थिनां ब्रह्मविष्ण्वीशपदकाङ्क्षिणाम् ।

४०

भक्तिरेव गुरौ देवि नान्यः पन्था इति श्रुतिः ॥ ४०॥

भोग और मोक्ष चाहने वालों के लिए, ब्रह्मा, विष्णु, ईश के पद की कामना करने वालों के लिए, हे देवि! गुरु में भक्ति ही (मार्ग) है; अन्य कोई पथ नहीं — ऐसी श्रुति है।

पदपाठ भोगमोक्षार्थिनां — भोग और मोक्ष चाहने वालों के लिए · ब्रह्मविष्ण्वीशपदकाङ्क्षिणाम् — ब्रह्मा, विष्णु, ईश के पद की आकांक्षा वालों के लिए · भक्तिरेव गुरौ देवि — गुरु में भक्ति ही, हे देवि · नान्यः पन्था इति श्रुतिः — अन्य कोई मार्ग नहीं — यह श्रुति है

अशुभानि च कर्माणि महापातकजानि च ।

भक्तिः क्षणेन दहति तूलराशिमिवानलः ॥ ४१॥

४१

अशुभ कर्मों को और महापातकों से उत्पन्न कर्मों को भक्ति क्षण भर में जला देती है, जैसे अग्नि रुई के ढेर को।

पदपाठ अशुभानि च कर्माणि — और अशुभ कर्म · महापातकजानि च — और महापातकों से उत्पन्न · भक्तिः क्षणेन दहति — भक्ति क्षण में जला देती है · तूलराशिमिवानलः — जैसे अग्नि रुई के ढेर को

विश्वासाय नमस्तस्मै सर्वसिद्धिप्रदायिने ।

येन मृद्धारुदृषदः फलन्त्यविफलं फलम् ॥ ४२॥

४२

सर्वसिद्धि देने वाले उस विश्वास को नमस्कार, जिससे मिट्टी, काठ और पत्थर (की प्रतिमाएँ) अविफल फल देते हैं।

पदपाठ विश्वासाय नमस्तस्मै — उस विश्वास को नमस्कार · सर्वसिद्धिप्रदायिने — सब सिद्धियाँ देने वाले · येन मृद्धारुदृषदः — जिससे मिट्टी, लकड़ी, पत्थर · फलन्त्यविफलं फलम् — अविफल फल देते हैं

न योगो न तपो नार्चाक्रमः कोऽपि प्रलीयते ।

अमाये कुलमार्गेऽस्मिन् भक्तिरेव विशिष्यते ॥ ४३॥

४३

न योग, न तप, न कोई अर्चा-क्रम (सफल) होता है; इस माया-रहित कुलमार्ग में भक्ति ही विशिष्ट है।

पदपाठ न योगो न तपो — न योग, न तप · नार्चाक्रमः कोऽपि — न कोई अर्चा-क्रम · प्रलीयते — काम आता है · अमाये कुलमार्गेऽस्मिन् — इस माया-रहित कुलमार्ग में · भक्तिरेव विशिष्यते — भक्ति ही विशिष्ट है

साक्षाद् गुरुमये देवि सर्वस्मिन् भुवनान्तरे ।

४४

किन्तु भक्तिमतां क्षेत्रे मन्त्रः केषां न सिध्यति ॥ ४४॥

हे देवि! जब सम्पूर्ण भुवन साक्षात् गुरुमय है, तो भक्तिमानों के क्षेत्र में किनका मन्त्र सिद्ध न होगा?

पदपाठ साक्षाद् गुरुमये देवि — साक्षात् गुरुमय, हे देवि · सर्वस्मिन् भुवनान्तरे — सब भुवनों के भीतर · किन्तु भक्तिमतां क्षेत्रे — भक्तिमानों के क्षेत्र में · मन्त्रः केषां न सिध्यति — किनका मन्त्र सिद्ध न हो?

गुरौ मनुष्यबुद्धिञ्च मन्त्रे चाक्षरबुद्धिकम् ।

४५

प्रतिमासु शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ॥ ४५॥

गुरु में मनुष्य-बुद्धि, मन्त्र में अक्षर-बुद्धि और प्रतिमाओं में शिला-बुद्धि करने वाला नरक में जाता है।

पदपाठ गुरौ मनुष्यबुद्धिञ्च — गुरु में मनुष्य-बुद्धि · मन्त्रे चाक्षरबुद्धिकम् — और मन्त्र में अक्षर-बुद्धि · प्रतिमासु शिलाबुद्धिं — प्रतिमाओं में शिला-बुद्धि · कुर्वाणो नरकं व्रजेत् — करने वाला नरक में जाता है

गुरुं न मर्त्यं बुध्येत यदि बुध्येत तस्य हि ।

४६

न कदाचिद्भवेत् सिद्धिर्मन्त्रैर्वा देवतार्चनैः ॥ ४६॥

गुरु को मर्त्य (मनुष्य) न समझे; यदि समझे तो उसे मन्त्रों से या देवता-अर्चन से कभी सिद्धि नहीं होती।

पदपाठ गुरुं न मर्त्यं बुध्येत — गुरु को मर्त्य न समझे · यदि बुध्येत तस्य हि — यदि समझे तो उसकी · न कदाचिद्भवेत् सिद्धिः — कभी सिद्धि नहीं होती · मन्त्रैर्वा देवतार्चनैः — मन्त्रों से या देवताओं के अर्चन से

श्रीगुरुं प्राकृतैः सार्द्धं ये स्मरन्ति वदन्ति च ।
तेषां हि सुकृतं सर्वं पातकं भवति प्रिये ॥ ४७ ॥

४७

जो श्रीगुरु का प्राकृत जनों के साथ (समान रूप से) स्मरण करते और कहते हैं, उनका सारा सुकृत पाप हो जाता है, हे प्रिये!

पदपाठ श्रीगुरुं प्राकृतैः सार्द्धं — श्रीगुरु को साधारण मनुष्यों के साथ · ये स्मरन्ति वदन्ति च — जो स्मरण करते और कहते हैं · तेषां हि सुकृतं सर्वं — उनका सब सुकृत · पातकं भवति प्रिये — पातक हो जाता है, हे प्रिये

जन्महेतू हि पितरौ पूजनीयौ प्रयत्नतः ।
गुरुर्विशेषतः पूज्यो धर्माधर्मप्रदर्शकः ॥ ४८ ॥

४८

जन्म के हेतु माता-पिता प्रयत्नपूर्वक पूजनीय हैं; धर्म-अधर्म के प्रदर्शक गुरु विशेष रूप से पूज्य हैं।

पदपाठ जन्महेतू हि पितरौ — जन्म के हेतु माता-पिता · पूजनीयौ प्रयत्नतः — यत्न से पूजनीय हैं · गुरुर्विशेषतः पूज्यो — गुरु विशेष रूप से पूज्य हैं · धर्माधर्मप्रदर्शकः — धर्म-अधर्म के प्रदर्शक

गुरुः पिता गुरुमाता गुरुर्देवो महेश्वरः ।
शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ॥ ४९ ॥

४९

गुरु पिता हैं, गुरु माता हैं, गुरु देव महेश्वर हैं; शिव के रुष्ट होने पर गुरु त्राता हैं, गुरु के रुष्ट होने पर कोई नहीं।

पदपाठ गुरुः पिता गुरुमाता — गुरु पिता हैं, गुरु माता हैं · गुरुर्देवो महेश्वरः — गुरु देव महेश्वर हैं · शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता — शिव रुष्ट हों तो गुरु त्राता हैं · गुरौ रुष्टे न कश्चन — गुरु रुष्ट हों तो कोई नहीं

गुरोर्हितं हि कर्तव्यं मनोवाक्कायकर्मभिः ।

अहिताचरणाद्देवि विष्ठायां जायते क्रिमिः ॥ ५० ॥

५०

मन, वाणी और शरीर के कर्मों से गुरु का हित करना चाहिए; अहित के आचरण से, हे देवि! विष्ठा में कृमि होकर जन्म लेता है।

पदपाठ गुरोर्हितं हि कर्तव्यं — गुरु का हित करना चाहिए · मनोवाक्कायकर्मभिः — मन, वाणी, काया के कर्मों से · अहिताचरणाद्देवि — अहित करने से, हे देवि · विष्ठायां जायते क्रिमिः — विष्ठा में कीड़ा जन्मता है

शरीरवित्तप्राणैश्च श्रीगुरुं वञ्चयन्ति ये ।

क्रिमिकीटपतङ्गत्वं प्राप्नुवन्ति न संशयः ॥ ५१ ॥

५१

जो शरीर, धन और प्राणों से श्रीगुरु को ठगते हैं, वे कृमि, कीट और पतंग की योनि पाते हैं — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ शरीरवित्तप्राणैश्च — शरीर, धन, प्राणों से · श्रीगुरुं वञ्चयन्ति ये — जो श्रीगुरु को ठगते हैं · क्रिमिकीटपतङ्गत्वं — कीड़े, कीट, पतंगे की योनि · प्राप्नुवन्ति न संशयः — पाते हैं, सन्देह नहीं

मन्त्रत्यागाद्भवेन्मृत्युर्गुरुत्यागाद्विरद्रता ।

गुरुमन्त्रपरित्यागाद्रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ५२ ॥

५२

मन्त्र के त्याग से मृत्यु होती है, गुरु के त्याग से दरिद्रता; गुरु और मन्त्र दोनों के परित्याग से रौरव नरक में जाता है।

पदपाठ मन्त्रत्यागाद्भवेन्मृत्युः — मन्त्र-त्याग से मृत्यु होती है · गुरुत्यागाद्विरद्रता — गुरु-त्याग से दरिद्रता · गुरुमन्त्रपरित्यागात् — गुरु और मन्त्र दोनों के त्याग से · रौरवं नरकं व्रजेत् — रौरव नरक में जाता है

गुर्वर्थं धारयेद्देहं तदर्थं धनमर्जयेत् ।

निजप्राणान् परित्यज्य गुरुकार्यं समाचरेत् ॥ ५३ ॥

५३

गुरु के लिए देह धारण करे, उनके लिए धन कमाए; अपने प्राणों का परित्याग करके भी गुरु का कार्य करे।

पदपाठ गुर्वर्थं धारयेद्देहं — गुरु के लिए देह धारण करे · तदर्थं धनमर्जयेत् — उनके लिए धन अर्जित करे · निजप्राणान् परित्यज्य — अपने प्राणों को छोड़कर · गुरुकार्यं समाचरेत् — गुरु का कार्य करे

गुरुक्तं परुषं वाक्यमाशिषं परिचिन्तयेत् ।

तेन सन्ताडितो वापि प्रसादमिति संस्मरेत् ॥ ५४ ॥

५४

गुरु के कहे कठोर वचन को आशीर्वाद समझे; उनके द्वारा ताड़ित होने पर भी उसे प्रसाद समझे।

पदपाठ गुरुक्तं परुषं वाक्यं — गुरु का कहा कठोर वाक्य · आशिषं परिचिन्तयेत् — आशीर्वाद समझे · तेन सन्ताडितो वापि — उनसे पीटा जाने पर भी · प्रसादमिति संस्मरेत् — प्रसाद (कृपा) समझे

भोग्यभोज्यानि वस्तूनि गुरुवे च समर्पयेत् ।

तच्छेषमिति सज्जिन्त्य चानुभूयात् कुलेश्वरि ॥ ५५ ॥

५५

भोग्य और भोज्य वस्तुएँ गुरु को समर्पित करे, और उन्हें उनका शेष (प्रसाद) समझकर भोगे, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ भोग्यभोज्यानि वस्तूनि — भोग्य और भोज्य वस्तुएँ · गुरुवे च समर्पयेत् — गुरु को समर्पित करे · तच्छेषमिति सज्जिन्त्य — "उनका शेष" ऐसा समझकर · चानुभूयात् कुलेश्वरि — उपभोग करे, हे कुलेश्वरि

गुर्वग्रे न तपः कुर्यान्नोपवासव्रतादिकम् ।

तीर्थयात्रां न कुर्याच्च न स्नायादात्मशुद्धये ॥ ५६॥

५६

गुरु के सम्मुख तप न करे, न उपवास-व्रत आदि; तीर्थयात्रा न करे, न आत्मशुद्धि के लिए स्नान करे।

पदपाठ गुर्वग्रे न तपः कुर्यात् — गुरु के सामने तप न करे · नोपवासव्रतादिकम् — न उपवास, व्रत आदि · तीर्थयात्रां न कुर्याच्च — तीर्थयात्रा भी न करे · न स्नायादात्मशुद्धये — न आत्मशुद्धि के लिए स्नान करे

न नियोगं गुरोः कुर्यात् युष्मदा नैव भाषयेत् ।

ऋणदानं तथाऽऽदानं वस्तूनां क्रयविक्रयम् ।

५७

न कुर्याद् गुरुभिः सार्द्धं शिष्यो भूत्वा कथञ्चन ॥ ५७॥

गुरु को आदेश न दे, न उन्हें "तुम" कहकर सम्बोधित करे; ऋण देना और लेना, वस्तुओं का क्रय-विक्रय — शिष्य होकर गुरुजनों के साथ किसी प्रकार न करे।

पदपाठ न नियोगं गुरोः कुर्यात् — गुरु को आदेश न दे · युष्मदा नैव भाषयेत् — "तुम" (त्वम्) कहकर न बोले · ऋणदानं तथाऽऽदानं — ऋण देना और वैसे ही लेना · वस्तूनां क्रयविक्रयम् — वस्तुओं का क्रय-विक्रय · न कुर्याद् गुरुभिः सार्द्धं — गुरुओं के साथ न करे · शिष्यो भूत्वा कथञ्चन — शिष्य होकर किसी प्रकार

न कुर्यान्नास्तिकैर्वादं सम्भाषणमपीश्वरि ।

विलोक्य दूरतो गच्छेन्नासीत सह तैः क्वचित् ॥ ५८ ॥

५८

नास्तिकों से वाद न करे, न सम्भाषण भी, हे ईश्वरि! उन्हें देखकर दूर चला जाए, उनके साथ कभी न बैठे।

पदपाठ न कुर्यान्नास्तिकैर्वादं — नास्तिकों से वाद न करे · सम्भाषणमपीश्वरि — सम्भाषण भी नहीं, हे ईश्वरि · विलोक्य दूरतो गच्छेत् — देखकर दूर चला जाए · नासीत सह तैः क्वचित् — उनके साथ कभी न बैठे

गुरौ सन्निहिते यस्तु पूजयेदन्यमम्बिके ।

स याति नरकं घोरं सा पूजा निष्फला भवेत् ॥ ५९ ॥

५९

हे अम्बिके! गुरु के समीप रहते जो अन्य की पूजा करता है, वह घोर नरक में जाता है, और वह पूजा निष्फल होती है।

पदपाठ गुरौ सन्निहिते यस्तु — गुरु के सन्निहित होने पर जो · पूजयेदन्यमम्बिके — अन्य की पूजा करे, हे अम्बिके · स याति नरकं घोरं — वह घोर नरक में जाता है · सा पूजा निष्फला भवेत् — और वह पूजा निष्फल होती है

शिरसा न वहेद्भारं गुरुपादाब्जधारिणा ।

तदाज्ञया तु कर्तव्यमाज्ञारूपो गुरुः स्मृतः ॥ ६० ॥

६०

गुरु के चरण-कमल को धारण करने वाले सिर से भार न ढोए; किन्तु उनकी आज्ञा से करे, क्योंकि गुरु आज्ञा-स्वरूप माने गये हैं।

पदपाठ शिरसा न वहेद्भारं — सिर पर भार न ढोए · गुरुपादाब्जधारिणा — (जो सिर) गुरु के चरण-कमल धारण करता है · तदाज्ञया तु कर्तव्यम् — पर उनकी आज्ञा से करना चाहिए · आज्ञारूपो गुरुः स्मृतः — गुरु आज्ञा-रूप माने गए हैं

मन्त्रागमाद्यमन्यत्र श्रुतं तस्मै निवेदयेत् ।

गुर्वाज्ञया तु गृहीयात्तन्निषिद्धं विवर्जयेत् ॥ ६१॥

६१

अन्यत्र सुने हुए मन्त्र, आगम आदि को उन्हें निवेदित करे; गुरु की आज्ञा से उसे ग्रहण करे, और उनके द्वारा निषिद्ध को त्याग दे।

पदपाठ मन्त्रागमाद्यमन्यत्र — मन्त्र, आगम आदि अन्यत्र · श्रुतं तस्मै निवेदयेत् — सुना हो तो उन्हें निवेदन करे · गुर्वाज्ञया तु गृहीयात् — गुरु की आज्ञा से ग्रहण करे · तन्निषिद्धं विवर्जयेत् — उनके निषिद्ध को त्याग दे

स्वशास्त्रोक्तं रहस्यार्थं न वदेद् यस्य कस्यचित् ।

यदि ब्रूयात् स समयाच्युत एव न संशयः ॥ ६२॥

६२

अपने शास्त्र में कहे रहस्यार्थ को जिस-किसी को न बताए; यदि बताए तो वह निश्चय ही समय (कुल-नियम) से च्युत है — इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ स्वशास्त्रोक्तं रहस्यार्थं — अपने शास्त्र में कहा रहस्यार्थ · न वदेद् यस्य कस्यचित् — जिस-किसी को न कहे · यदि ब्रूयात् — यदि कहे · स समयाच्युत एव — वह समय से च्युत ही है · न संशयः — सन्देह नहीं

अद्वैतं भावयेन्नित्यं न द्वैतं गुरुणा सह ।

आत्मवत् सर्वभूतेभ्यो हितं कुर्यात् कुलेश्वरि ॥ ६३॥

६३

गुरु के साथ सदा अद्वैत की भावना करे, द्वैत की नहीं; अपने समान सब प्राणियों का हित करे, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ अद्वैतं भावयेन्नित्यं — नित्य अद्वैत की भावना करे · न द्वैतं गुरुणा सह — गुरु के साथ द्वैत नहीं · आत्मवत् सर्वभूतेभ्यो — अपने समान सब प्राणियों का · हितं कुर्यात् कुलेश्वरि — हित करे, हे कुलेश्वरि

आत्मार्थमानसद्भावैः शुश्रूषा स्याच्चतुर्विधा ।

६४

शुश्रूषया धिया देवि शिष्यः सन्तोषयेद् गुरुम् ॥ ६४॥

आत्मा, अर्थ, मन और सद्भाव — इनसे शुश्रूषा चार प्रकार की है; शुश्रूषा और बुद्धि से, हे देवि! शिष्य गुरु को सन्तुष्ट करे।

पदपाठ आत्मार्थमानसद्भावैः — आत्मा, अर्थ (धन), मन, सद्भाव से · शुश्रूषा स्याच्चतुर्विधा — शुश्रूषा चार प्रकार की है · शुश्रूषया धिया देवि — शुश्रूषा और बुद्धि से, हे देवि · शिष्यः सन्तोषयेद् गुरुम् — शिष्य गुरु को सन्तुष्ट करे

पदे पदेऽश्वमेधस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयः ।

६५

शुश्रूषणपरो यस्तु गुरुदेवमहात्मनाम् ॥ ६५॥

जो गुरु, देवता और महात्माओं की शुश्रूषा में तत्पर है, वह पद-पद पर अश्वमेध का फल पाता है, इसमें सन्देह नहीं।

पदपाठ पदे पदेऽश्वमेधस्य — पद-पद पर अश्वमेध का · फलं प्राप्नोत्यसंशयः — फल पाता है, निःसन्देह · शुश्रूषणपरो यस्तु — जो शुश्रूषा में तत्पर है · गुरुदेवमहात्मनाम् — गुरु, देव, महात्माओं की

केवलं गुरुशुश्रूषा त्वत्कृपाकारिणी प्रिये ।

६६

सद्भक्तिसहिता चेत् सा सर्वकामफलप्रदा ॥ ६६॥

केवल गुरु-शुश्रूषा ही तुम्हारी कृपा कराने वाली है, हे प्रिये! यदि वह सद्भक्ति-सहित हो तो सब कामनाओं का फल देती है।

पदपाठ केवलं गुरुशुश्रूषा — केवल गुरु-शुश्रूषा · त्वत्कृपाकारिणी प्रिये — तुम्हारी कृपा कराती है, हे प्रिये · सद्भक्तिसहिता चेत् सा — यदि वह सद्भक्ति सहित हो · सर्वकामफलप्रदा — सब कामनाओं का फल देती है

क्षीयन्ते सर्वपापानि वर्द्धन्ते पुण्यराशयः ।

६७

सिध्यन्ति सर्वकार्याणि गुरुशुश्रूषया प्रिये ॥ ६७ ॥

सब पाप क्षीण होते हैं, पुण्य की राशियाँ बढ़ती हैं, सब कार्य सिद्ध होते हैं — गुरु-शुश्रूषा से, हे प्रिये!

पदपाठ क्षीयन्ते सर्वपापानि — सब पाप क्षीण होते हैं · वर्द्धन्ते पुण्यराशयः — पुण्य-राशि बढ़ती है · सिध्यन्ति सर्वकार्याणि — सब कार्य सिद्ध होते हैं · गुरुशुश्रूषया प्रिये — गुरु-शुश्रूषा से, हे प्रिये

यद् यदात्महितं वस्तु तत्तद्धितमुपाचरेत् ।

६८

गुरुदेवार्चको यस्तु तस्य पुण्यं न गण्यते ॥ ६८ ॥

जो-जो वस्तु अपने लिए हितकर है, वही हित (गुरु के लिए) करे; जो गुरु को देव मानकर अर्चना करता है, उसका पुण्य गिना नहीं जा सकता।

पदपाठ यद् यदात्महितं वस्तु — जो-जो वस्तु अपने लिए हितकर · तत्तद्धितमुपाचरेत् — वह-वह हित (गुरु के लिए) करे · गुरुदेवार्चको यस्तु — जो गुरु को देव मानकर पूजता है · तस्य पुण्यं न गण्यते — उसका पुण्य गिना नहीं जाता

भक्त्या वित्तानुसारेण गुरुमुद्दिश्य यत् कृतम् ।

६९

अल्पे महति वा तुल्यं पुण्यमाढ्यदरिद्रयोः ॥ ६९ ॥

भक्तिपूर्वक अपनी सम्पत्ति के अनुसार गुरु के उद्देश्य से जो किया जाता है, छोटा हो या बड़ा — धनी और दरिद्र दोनों का पुण्य समान है।

पदपाठ भक्त्या वित्तानुसारेण — भक्ति से, वित्त के अनुसार · गुरुमुद्दिश्य यत् कृतम् — गुरु के उद्देश्य से जो किया · अल्पे महति वा — अल्प हो या महान् · तुल्यं पुण्यमाढ्यदरिद्रयोः — धनी और दरिद्र का पुण्य समान है

सर्वस्वमपि यो दद्याद् गुरौ भक्तिविवर्जितः ।

शिष्यो न फलमाप्नोति भक्तिरेव हि कारणम् ॥ ७० ॥

७०

जो शिष्य भक्ति से रहित होकर गुरु को सर्वस्व भी दे दे, वह फल नहीं पाता; भक्ति ही कारण है।

पदपाठ सर्वस्वमपि यो दद्याद् — सर्वस्व भी जो दे · गुरौ भक्तिविवर्जितः — गुरु को, भक्ति-रहित · शिष्यो न फलमाप्नोति — वह शिष्य फल नहीं पाता · भक्तिरेव हि कारणम् — भक्ति ही कारण है

यस्मिन् द्रव्ये गुरोरस्ति स्पृहा नानुभवेत्तु तत् ।

अवश्यं यदि वाञ्छा स्यादनुभूयात्तदाज्ञया ॥ ७१ ॥

७१

जिस वस्तु में गुरु की स्पृहा हो, उसका स्वयं उपभोग न करे; यदि अवश्य इच्छा हो तो उनकी आज्ञा से उपभोग करे।

पदपाठ यस्मिन् द्रव्ये गुरोरस्ति स्पृहा — जिस द्रव्य में गुरु की इच्छा हो · नानुभवेत्तु तत् — उसका उपभोग न करे · अवश्यं यदि वाञ्छा स्यात् — यदि अवश्य इच्छा हो · अनुभूयात्तदाज्ञया — उनकी आज्ञा से उपभोग करे

यस्तिलार्द्धं तदर्द्धं वा गुरुस्वमुपजीवति ।

लोभान्मोहात् स पच्येत नरके च त्रिसप्तके ॥ ७२ ॥

७२

जो लोभ या मोह से गुरु के धन का आधा तिल या उसका भी आधा उपभोग करता है, वह इक्कीस (जन्मों तक) नरक में पकाया जाता है।

पदपाठ यस्तिलार्द्धं तदर्द्धं वा — जो आधा तिल या उसका आधा भी · गुरुस्वमुपजीवति — गुरु के धन पर जीता है · लोभान्मोहात् स पच्येत — लोभ या मोह से, वह पकाया जाता है · नरके च त्रिसप्तके — नरक में इक्कीस (जन्म)

अत्यल्पं हि गुरोर्द्रव्यमदत्तं स्वीकरोति यः ।
स तिर्यग्योनिमापन्नः क्रव्यादैर्भक्ष्यते प्रिये ॥ ७३ ॥

७३

जो गुरु का अत्यल्प द्रव्य भी बिना दिये ले लेता है, वह तिर्यक् योनि में पड़कर मांसभक्षी पशुओं द्वारा खाया जाता है, हे प्रिये!

पदपाठ अत्यल्पं हि गुरोर्द्रव्यम् — गुरु का अति अल्प द्रव्य भी · अदत्तं स्वीकरोति यः — जो बिना दिए स्वीकार करता है · स तिर्यग्योनिमापन्नः — वह तिर्यक् योनि में पड़कर · क्रव्यादैर्भक्ष्यते प्रिये — मांसभक्षियों द्वारा खाया जाता है, हे प्रिये

गुरुद्रव्याभिलाषी च गुरुस्त्रीगमनोत्सुकः ।
पतितस्य क्षुल्लकस्य प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ ७४ ॥

७४

गुरु के द्रव्य का अभिलाषी और गुरु-पत्नी के पास जाने को उत्सुक — ऐसे पतित क्षुद्र के लिए कोई प्रायश्चित्त नहीं है।

पदपाठ गुरुद्रव्याभिलाषी च — गुरु-द्रव्य का अभिलाषी · गुरुस्त्रीगमनोत्सुकः — गुरु-स्त्री के पास जाने में उत्सुक · पतितस्य क्षुल्लकस्य — उस पतित क्षुद्र का · प्रायश्चित्तं न विद्यते — प्रायश्चित्त नहीं है

आज्ञाभङ्गोऽर्थहरणं गुरोरप्रियवर्तनम् ।
गुरुद्रोहमिदं प्राहुः करोति स पातकी ॥ ७५ ॥

७५

आज्ञा-भङ्ग, धन-हरण, गुरु के प्रति अप्रिय व्यवहार — इसे गुरुद्रोह कहते हैं; जो ऐसा करता है वह पातकी है।

पदपाठ आज्ञाभङ्गोऽर्थहरणं — आज्ञा-भंग, अर्थ-हरण · गुरोरप्रियवर्तनम् — गुरु के प्रति अप्रिय व्यवहार · गुरुद्रोहमिदं प्राहुः — इसे गुरु-द्रोह कहते हैं · यः करोति स पातकी — जो करता है वह पातकी है

स्वद्रव्यविनियोगञ्च नानिवेद्य गुरौ चरेत् ।

७६

अनिवेद्य तु यः कुर्यात् स भवेद् ब्रह्मघातकः ॥ ७६॥

अपने द्रव्य का विनियोग गुरु को निवेदन किये बिना न करे; जो बिना निवेदन किये करता है, वह ब्रह्मघातक होता है।

पदपाठ स्वद्रव्यविनियोगञ्च — अपने द्रव्य का विनियोग · नानिवेद्य गुरौ चरेत् — गुरु को निवेदन किए बिना न करे · अनिवेद्य तु यः कुर्यात् — जो निवेदन किए बिना करे · स भवेद् ब्रह्मघातकः — वह ब्रह्मघातक हो जाता है

गुरोः स्थानं सम्प्रदायं तद्धर्मं यो विनाशयेत् ।

७७

गुरुभिः स बहिष्कार्यो दण्ड्यो वध्यः स घातकैः ॥ ७७॥

जो गुरु के स्थान, सम्प्रदाय और उनके धर्म का विनाश करता है, वह गुरुजनों द्वारा बहिष्कार्य, दण्डनीय और घातकों द्वारा वध्य है।

पदपाठ गुरोः स्थानं सम्प्रदायं — गुरु का स्थान, सम्प्रदाय · तद्धर्मं यो विनाशयेत् — उनका धर्म — जो नष्ट करे · गुरुभिः स बहिष्कार्यो — वह गुरुओं द्वारा बहिष्कार्य है · दण्ड्यो वध्यः स घातकैः — दण्ड्य और घातकों द्वारा वध्य

गुरुकोपाद्विनाशः स्याद् गुरुद्रोहात्तु पातकम् ।

७८

विस्मृत्युर्गुरुनिन्दायां गुर्वनिष्ठान्महापदः ॥ ७८॥

गुरु के कोप से विनाश होता है, गुरुद्रोह से पातक, गुरुनिन्दा से मृत्यु, गुरु के अनिष्ट से महान् आपत्तियाँ।

पदपाठ गुरुकोपाद्विनाशः स्याद् — गुरु के कोप से विनाश होता है · गुरुद्रोहात्तु पातकम् — गुरु-द्रोह से पातक · विस्मृत्युर्गुरुनिन्दायां — गुरु-निन्दा से (अकाल) मृत्यु · गुर्वनिष्ठान्महापदः — गुरु के अनिष्ट से महा-आपदाएँ

जीवेदग्निप्रविष्टो वा नरः पीतविषोऽपि वा ।

७९

मृत्युहस्तगतो वापि नापराधकरो गुरोः ॥ ७९॥

अग्नि में प्रविष्ट मनुष्य जीवित रह सकता है, विष पीने वाला भी, मृत्यु के हाथ में पड़ा हुआ भी — किन्तु गुरु का अपराध करने वाला नहीं।

पदपाठ जीवेदग्निप्रविष्टो वा — अग्नि में प्रविष्ट जी सकता है · नरः पीतविषोऽपि वा — या विष पिया मनुष्य भी · मृत्युहस्तगतो वापि — या मृत्यु के हाथ में गया भी · नापराधकरो गुरोः — पर गुरु का अपराधी नहीं

यत्र श्रीगुरुनिन्दा स्यात् पिधाय श्रवणेऽम्बिके ।

८०

सद्यस्तस्माद्विनिष्क्रामेत् पुनर्न श्रवणं यथा ।

गुरोर्नाम स्मरेत् पश्चात् श्रवणे सा प्रतिक्रिया ॥ ८०॥

जहाँ श्रीगुरु की निन्दा हो, वहाँ कान बन्द करके, हे अम्बिके! तुरन्त वहाँ से निकल जाए जिससे फिर सुनाई न दे; बाद में गुरु का नाम स्मरण करे — सुनने का यही प्रतिकार है।

पदपाठ यत्र श्रीगुरुनिन्दा स्यात् — जहाँ श्रीगुरु की निन्दा हो · पिधाय श्रवणेऽम्बिके — कान बन्द कर, हे अम्बिके · सद्यस्तस्माद्विनिष्क्रामेत् — तत्काल वहाँ से निकल जाए · पुनर्न श्रवणं यथा — जिससे फिर न सुने · गुरोर्नाम स्मरेत् पश्चात् — बाद में गुरु का नाम स्मरण करे · श्रवणे सा प्रतिक्रिया — सुनने का यह प्रतिकार है

गुरुमित्रसुहृदासीदासाद्यान् नावमानयेत् ।

न निन्देदस्य समयान् वेदशास्त्रागमादिकान् ॥ ८१ ॥

८१

गुरु के मित्र, सुहृद्, दासी, दास आदि का अपमान न करे; उनके समय (नियमों), वेद, शास्त्र, आगम आदि की निन्दा न करे।

पदपाठ गुरुमित्रसुहृदासीदासाद्यान् — गुरु के मित्र, सुहृद्, दासी, दास आदि का · नावमानयेत् — अपमान न करे · न निन्देदस्य समयान् — उनके समयों (नियमों) की निन्दा न करे · वेदशास्त्रागमादिकान् — वेद, शास्त्र, आगम आदि की

गुरोः श्रीपादुकाभूषा गुरुनामस्मृतिर्जपः ।

गुर्वाज्ञाकरणं कृत्यं शुश्रूषा भजनं गुरोः ॥ ८२ ॥

८२

गुरु की श्रीपादुका ही भूषण है, गुरु के नाम का स्मरण ही जप है, गुरु की आज्ञा का पालन ही कृत्य है, शुश्रूषा ही गुरु का भजन है।

पदपाठ गुरोः श्रीपादुकाभूषा — गुरु की श्रीपादुका भूषण है · गुरुनामस्मृतिर्जपः — गुरु-नाम की स्मृति जप है · गुर्वाज्ञाकरणं कृत्यं — गुरु-आज्ञा का पालन कृत्य है · शुश्रूषा भजनं गुरोः — शुश्रूषा गुरु का भजन है

विविक्षुर्देशिकावासं शान्तचित्तोऽतिभक्तिमान् ।

वाहनं पादुकां छत्रं चामरं व्यजनादिकम् ।

८३

ताम्बूलं कज्जलं वेशमुत्सृज्य प्रविशेच्छनैः ॥ ८३ ॥

गुरु के निवास में प्रवेश की इच्छा वाला, शान्तचित्त और अति भक्तिमान् शिष्य वाहन, पादुका, छत्र, चामर, पंखा आदि, ताम्बूल, काजल और वेश-भूषा को छोड़कर धीरे-धीरे प्रवेश करे।

पदपाठ विविक्षुर्देशिकावासं — देशिक (गुरु) के आवास में प्रवेश चाहता · शान्तचित्तोऽतिभक्तिमान् — शान्तचित्त, अतिभक्तिमान् · वाहनं पादुकां छत्रं — वाहन, पादुका, छत्र · चामरं व्यजनादिकम् — चामर, पंखा आदि · ताम्बूलं कज्जलं वेशम् — ताम्बूल, काजल, वेश · उत्सृज्य प्रविशेच्छनैः — छोड़कर धीरे प्रवेश करे

पादुकामासनं वस्त्रं वाहनं छत्रचामरे ।

८४

दृष्ट्वा गुरोर्नमस्कुर्यान्नात्मभोगाय कामयेत् ॥ ८४ ॥

गुरु की पादुका, आसन, वस्त्र, वाहन, छत्र और चामर को देखकर नमस्कार करे; उन्हें अपने भोग के लिए न चाहे।

पदपाठ पादुकामासनं वस्त्रं — पादुका, आसन, वस्त्र · वाहनं छत्रचामरे — वाहन, छत्र, चामर · दृष्ट्वा गुरोर्नमस्कुर्यात् — गुरु के — देखकर नमस्कार करे · नात्मभोगाय कामयेत् — अपने भोग के लिए कामना न करे

पादप्रक्षालनं स्नानमभ्यङ्गं दन्तधावनम् ।

मूत्रं निष्ठीवनं क्षौरं शयनं स्त्रीनिषेवनम् ॥ ८५ ॥

८५

पैर धोना, स्नान, तेल-मालिश, दन्तधावन, मूत्र-त्याग, थूकना, क्षौर, शयन, स्त्री-सेवन,

पदपाठ पादप्रक्षालनं स्नानम् — पैर धोना, स्नान · अभ्यङ्गं दन्तधावनम् — अभ्यंग, दन्तधावन · मूत्रं निष्ठीवनं क्षौरं — मूत्र, थूकना, क्षौर · शयनं स्त्रीनिषेवनम् — शयन, स्त्री-सेवन

वीरासनं सुदुर्वाक्यं शासनं हास्यरोदनम् ।

केशमोचनमुष्णीषं कञ्चुकं नग्नतां तथा ॥ ८६ ॥

८६

वीरासन, अत्यन्त कटु वचन, आदेश देना, हँसना और रोना, केश खोलना, पगड़ी, कञ्चुक (अंगरखा) तथा नग्नता,

पदपाठ वीरासनं सुदुर्वाक्यं — वीरासन, अति कटु वाक्य · शासनं हास्यरोदनम् — शासन (आदेश), हास्य, रोदन · केशमोचनमुष्णीषं — केश खोलना, पगड़ी · कञ्चुकं नग्नतां तथा — कंचुकी, वैसे ही नग्नता

पादप्रसारणं वादं कलहं दूषणं प्रिये ।

अङ्गभङ्गाङ्गवाद्यादिकरास्फालनधूननम् ॥ ८७ ॥

८७

पैर फैलाना, वाद, कलह, दोषारोपण, हे प्रिये! अंग मरोड़ना, अंगों को बजाना आदि, हाथ पटकना और हिलाना,

पदपाठ पादप्रसारणं वादं — पैर फैलाना, वाद · कलहं दूषणं प्रिये — कलह, दोष-दर्शन, हे प्रिये · अङ्गभङ्गाङ्गवाद्यादि- — अंग मोड़ना, अंग बजाना आदि · करास्फालनधूननम् — हाथ पटकना, झटकना

घूतकौतुकमल्लादियुद्धनृत्यादि चाम्बिके ।

गुरुयोगिमहासिद्धिपीठक्षेत्राश्रमेषु च ।

८८

नाचरेदाचरेन्मोहादेवताशापमाप्नुयात् ॥ ८८ ॥

घूत, कौतुक, मल्लयुद्ध आदि, युद्ध, नृत्य आदि, हे अम्बिके! — गुरु, योगी और महासिद्धों के पीठ, क्षेत्र और आश्रमों में न करे; यदि मोहवश करे तो देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ घूतकौतुकमल्लादि- — घूत, कौतुक, मल्ल आदि · युद्धनृत्यादि चाम्बिके — युद्ध, नृत्य आदि, हे अम्बिके · गुरुयोगिमहासिद्धि- — गुरु, योगी, महासिद्धों के · पीठक्षेत्राश्रमेषु च — पीठ, क्षेत्र, आश्रमों में · नाचरेत् — न करे · आचरेन्मोहात् — यदि मोह से करे · देवताशापमाप्नुयात् — देवताओं का शाप पाता है

उपचारेण सन्तिष्ठेद् गुर्वग्रे नेच्छया विशेत् ।

८९

मुखावलोकी सेवेत तदुक्तञ्च समाचरेत् ॥ ८९ ॥

गुरु के सम्मुख उपचारपूर्वक खड़ा रहे, अपनी इच्छा से प्रवेश न करे; उनके मुख की ओर देखते हुए सेवा करे और उनके कहे का पालन करे।

पदपाठ उपचारेण सन्तिष्ठेद् — उपचार (आदर) से स्थित रहे · गुर्वग्रे — गुरु के सामने · नेच्छया विशेत् — इच्छा से प्रवेश न करे · मुखावलोकी सेवेत — मुख देखते हुए सेवा करे · तदुक्तञ्च समाचरेत् — और उनका कहा करे

गुरुक्तानुक्तकार्येषु नोपेक्षां कारयेत् प्रिये ।

९०

शिरसा यद्गुरुर्ब्रूयात् कार्यमविशङ्कया ॥ ९० ॥

गुरु के कहे या अनकहे कार्यों में उपेक्षा न करे, हे प्रिये! गुरु जो कहें उसे सिर से (स्वीकार कर) निःशङ्क होकर करे।

पदपाठ गुरुक्तानुक्तकार्येषु — गुरु के कहे-अनकहे कार्यों में · नोपेक्षां कारयेत् प्रिये — उपेक्षा न करे, हे प्रिये · शिरसा यद्गुरुर्ब्रूयात् — जो गुरु कहें, सिर से (स्वीकार) · तत् कार्यमविशङ्कया — वह निःशंक करना चाहिए

निग्रहेऽनुग्रहे वापि गुरुः सर्वस्य कारणम् ।

९१

निर्गतं यद्गुरोर्वक्त्रात् सर्वं शास्त्रं तदुच्यते ॥ ९१ ॥

निग्रह में या अनुग्रह में गुरु ही सबका कारण हैं; जो कुछ गुरु के मुख से निकलता है, वह सब शास्त्र कहलाता है।

पदपाठ निग्रहेऽनुग्रहे वापि — निग्रह में या अनुग्रह में · गुरुः सर्वस्य कारणम् — गुरु सबके कारण हैं · निर्गतं यद्गुरोर्वक्त्रात् — जो गुरु के मुख से निकला · सर्वं शास्त्रं तदुच्यते — वह सब शास्त्र कहलाता है

गुरुकार्ये स्वयं शक्तो नापरं प्रेषयेत् प्रिये ।

९२

बहुभृत्यपरैर्भृत्यैः सहितोऽप्यतिभक्तिमान् ॥ ९२ ॥

गुरु का कार्य स्वयं करने में समर्थ होते हुए दूसरे को न भेजे, हे प्रिये! अनेक सेवकों और सेवकों के सेवकों से युक्त होने पर भी अति भक्तिमान् (स्वयं करे)।

पदपाठ गुरुकार्ये स्वयं शक्तो — गुरु-कार्य में स्वयं समर्थ · नापरं प्रेषयेत् प्रिये — दूसरे को न भेजे, हे प्रिये · बहुभृत्यपरैर्भृत्यैः — बहुत सेवकों और सेवकों के सेवकों · सहितोऽप्यतिभक्तिमान् — सहित हो तो भी अतिभक्तिमान्

गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन् जाग्रज्जपन् जुह्वत् प्रपूजयेत् ।

९३

गुर्वाज्ञामेव कुर्वीत तदगतेनान्तरात्मना ॥ ९३ ॥

चलते, खड़े रहते, सोते, जागते, जप करते, हवन करते, पूजा करते — गुरु की आज्ञा का ही पालन करे, अन्तरात्मा को उन्हीं में लगाकर।

पदपाठ गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन् जाग्रत् — चलते, खड़े, सोते, जागते · जपन् जुह्वत् प्रपूजयेत् — जपते, हवन करते, पूजा करते · गुर्वाज्ञामेव कुर्वीत — गुरु-आज्ञा ही करे · तदगतेनान्तरात्मना — उनमें लगे अन्तरात्मा से

अभिमानो न कर्तव्यो जातिविद्याधनादिभिः ।

९४

सर्वदा सेवयेत् नित्यं शिष्यः श्रीगुरुसन्निधौ ॥ ९४ ॥

जाति, विद्या, धन आदि का अभिमान न करे; शिष्य सदा-सर्वदा श्रीगुरु के सान्निध्य में सेवा करे।

पदपाठ अभिमानो न कर्तव्यो — अभिमान नहीं करना चाहिए · जातिविद्याधनादिभिः — जाति, विद्या, धन आदि से · सर्वदा सेवयेत् नित्यं — सदा नित्य सेवा करे · शिष्यः श्रीगुरुसन्निधौ — शिष्य श्रीगुरु के सन्निधान में

कामक्रोधपरित्यागी विनीतः स्तुतिभक्तिमान् ।

९५

देवि भूम्यासने तिष्ठेद् गुरुकार्यं समाचरेत् ॥ ९५ ॥

काम और क्रोध का परित्याग करके, विनीत, स्तुति और भक्ति से युक्त होकर, हे देवि! वह भूमि पर आसन लगाकर गुरु का कार्य करे।

पदपाठ कामक्रोधपरित्यागी — काम-क्रोध का त्यागी · विनीतः स्तुतिभक्तिमान् — विनीत, स्तुति और भक्ति वाला · देवि भूम्यासने तिष्ठेद् — हे देवि, भूमि के आसन पर बैठे · गुरुकार्यं समाचरेत् — गुरु-कार्य करे

स्वकार्यमन्यकार्यं वा शिष्यः स्वगुरुचित्तवित् ।

९६

गुरुपार्श्वगतो नम्रः प्रसन्नवदनो भवेत् ॥ ९६ ॥

अपना कार्य हो या दूसरे का, अपने गुरु के चित्त को जानने वाला शिष्य गुरु के पास नम्र और प्रसन्न-मुख रहे।

पदपाठ स्वकार्यमन्यकार्यं वा — अपना कार्य या दूसरे का · शिष्यः स्वगुरुचित्तवित् — शिष्य अपने गुरु का चित्त जानने वाला · गुरुपार्श्वगतो नम्रः — गुरु के पास, नम्र · प्रसन्नवदनो भवेत् — प्रसन्न मुख रहे

सामान्यतो निषिद्धञ्च तद्गुरोर्यदि सन्निधौ ।

९७

आचरेत्तस्य सर्वस्य दोषः कोटिगुणो भवेत् ॥ ९७ ॥

जो सामान्यतः निषिद्ध है, उसे यदि गुरु के सान्निध्य में करे, तो उस सबका दोष करोड़ गुना हो जाता है।

पदपाठ सामान्यतो निषिद्धञ्च — सामान्यतः जो निषिद्ध है · तद्गुरोर्यदि सन्निधौ — वह यदि गुरु के सान्निधान में · आचरेत्तस्य सर्वस्य — करे तो उस सबका · दोषः कोटिगुणो भवेत् — दोष करोड़ गुना होता है

अनादृत्य गुरोर्वाक्यं शृणुयाद् यः पराङ्मुखः ।

९८

अहितं वा हितं वापि रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ९८ ॥

जो गुरु के वचन का अनादर करके विमुख होकर सुनता है, चाहे वह अहितकर हो या हितकर, वह रौरव नरक में जाता है।

पदपाठ अनादृत्य गुरोर्वाक्यं — गुरु-वाक्य का अनादर कर · शृणुयाद् यः पराङ्मुखः — जो विमुख होकर सुने · अहितं वा हितं वापि — अहित हो या हित · रौरवं नरकं व्रजेत् — रौरव नरक में जाता है

गोब्राह्मणवधं कृत्वा यत् पापं समवाप्नुयात् ।
तत् पापं समवाप्नोति गुर्वग्रेऽनृतभाषणात् ॥ ९९ ॥

९९

गौ या ब्राह्मण का वध करके जो पाप होता है, वही पाप गुरु के सामने असत्य बोलने से होता है।

पदपाठ गोब्राह्मणवधं कृत्वा — गौ या ब्राह्मण का वध करके · यत् पापं समवाप्नुयात् — जो पाप पाता है · तत् पापं समवाप्नोति — वह पाप पाता है · गुर्वग्रेऽनृतभाषणात् — गुरु के सामने असत्य बोलने से

स्थानान्तरगते चार्ये व्यसने विषमे स्थिते ।
श्रीगुरुं न त्यजेत् क्वापि तदादिष्टो ब्रजेत् प्रिये ॥ १०० ॥

१००

आचार्य के अन्य स्थान चले जाने पर, या विपत्ति या विषम स्थिति में होने पर, श्रीगुरु को कहीं भी न छोड़े; उनके आदेश से ही जाए, हे प्रिये!

पदपाठ स्थानान्तरगते चार्ये — आचार्य के अन्य स्थान जाने पर · व्यसने विषमे स्थिते — व्यसन या विषम स्थिति में होने पर · श्रीगुरुं न त्यजेत् क्वापि — श्रीगुरु को कभी न छोड़े · तदादिष्टो ब्रजेत् प्रिये — उनके आदेश पर ही जाए, हे प्रिये

अधः स्थिते गुरावूर्ध्वे न तिष्ठेत् कदाचन ।
न गच्छेदग्रतस्तस्य न तिष्ठेदुत्थिते गुरौ ॥ १०१ ॥

१०१

गुरु के नीचे बैठे होने पर कभी ऊपर न रहे; उनके आगे न चले, और गुरु के उठ जाने पर (बैठा) न रहे।

पदपाठ अधः स्थिते गुरौ — गुरु के नीचे स्थित होने पर · ऊर्ध्वे न तिष्ठेत् कदाचन — ऊपर कभी न रहे · न गच्छेदग्रतस्तस्य — उनके आगे न चले · न तिष्ठेदुत्थिते गुरौ — गुरु के उठने पर (बैठा) न रहे

शक्तिच्छायां सुरच्छायां गुरुच्छायां न लङ्घयेत् ।

१०२

न तेषु कुर्यात् स्वच्छायां न स्वपेद् गुरुसन्निधौ ॥ १०२ ॥

शक्ति की छाया, देवता की छाया और गुरु की छाया को न लाँघे; उन पर अपनी छाया न डाले; गुरु के समीप न सोए।

पदपाठ शक्तिच्छायां सुरच्छायां — शक्ति की छाया, देव की छाया · गुरुच्छायां न लङ्घयेत् — गुरु की छाया न लाँघे · न तेषु कुर्यात् स्वच्छायां — उन पर अपनी छाया न डाले · न स्वपेद् गुरुसन्निधौ — गुरु के सन्निधान में न सोए

भाषणं पाठनं गानं भोजनं शयनादिकम् ।

१०३

अनादिष्टो न कुर्वीत न चावन्दनपूर्वकम् ॥ १०३ ॥

भाषण, पाठ, गान, भोजन, शयन आदि बिना आदेश के न करे, न बिना वन्दना किये।

पदपाठ भाषणं पाठनं गानं — बोलना, पढ़ना, गाना · भोजनं शयनादिकम् — भोजन, शयन आदि · अनादिष्टो न कुर्वीत — बिना आदेश न करे · न चावन्दनपूर्वकम् — न वन्दन के बिना

ब्रह्महत्याशतं कुर्यात् गुर्वाज्ञापरिपालनात् ।

१०४

विना गुर्वाज्ञया शिष्यो विश्वसेन्नान्यशासनात् ॥ १०४ ॥

गुरु की आज्ञा के पालन में सौ ब्रह्महत्या भी कर सकता है; गुरु की आज्ञा के बिना शिष्य अन्य के शासन पर विश्वास न करे।

पदपाठ ब्रह्महत्याशतं कुर्यात् — सौ ब्रह्महत्या कर सकता है · गुर्वाज्ञापरिपालनात् — गुरु-आज्ञा के पालन में · विना गुर्वाज्ञया शिष्यो — गुरु-आज्ञा के बिना शिष्य · विश्वसेन्नान्यशासनात् — अन्य के शासन पर विश्वास न करे

सर्वं गुर्वाज्ञया कुर्यान्न निन्देतस्त्रियं प्रिये ।

भक्त्या प्रणम्य चोत्तिष्ठेत् कृताञ्जलिपुटः प्रिये ॥ १०५॥

१०५

सब कुछ गुरु की आज्ञा से करे, उनकी स्त्री की निन्दा न करे, हे प्रिये! भक्ति से प्रणाम करके हाथ जोड़े हुए उठे, हे प्रिये!

पदपाठ सर्वं गुर्वाज्ञया कुर्यात् — सब गुरु-आज्ञा से करे · न निन्देतस्त्रियं प्रिये — उनकी स्त्री की निन्दा न करे, हे प्रिये · भक्त्या प्रणम्य चोत्तिष्ठेत् — भक्ति से प्रणाम कर उठे · कृताञ्जलिपुटः प्रिये — हाथ जोड़े हुए, हे प्रिये

पश्चात्पदेन निर्गच्छेन्नमस्कृत्य गुरोर्गृहात् ।

एकासने नोपविशेद् गुरुणा तत्समैः सह ॥ १०६॥

१०६

नमस्कार करके गुरु के घर से पीछे पैर रखते हुए निकले; गुरु के साथ या उनके समान जनों के साथ एक आसन पर न बैठे।

पदपाठ पश्चात्पदेन निर्गच्छेत् — पीछे पैर रखते हुए निकले · नमस्कृत्य गुरोर्गृहात् — नमस्कार कर, गुरु के घर से · एकासने नोपविशेद् — एक आसन पर न बैठे · गुरुणा तत्समैः सह — गुरु या उनके समानों के साथ

न विशेदासने देवि देवतागुरुसन्निधौ ।

गुरोः सिंहासनं देयं ज्येष्ठानामुत्तमासनम् ।

१०७

देश्यासनं कनिष्ठानामितरेषां समासनम् ॥ १०७ ॥

हे देवि! देवता और गुरु के सान्निध्य में आसन पर न बैठे; गुरु को सिंहासन दे, ज्येष्ठों को उत्तम आसन, कनिष्ठों को साधारण आसन और अन्यो को समान आसन।

पदपाठ न विशेदासने देवि — आसन पर न बैठे, हे देवि · देवतागुरुसन्निधौ — देवता और गुरु के सन्निधान में · गुरोः सिंहासनं देयं — गुरु को सिंहासन देना चाहिए · ज्येष्ठानामुत्तमासनम् — ज्येष्ठों को उत्तम आसन · देश्यासनं कनिष्ठानाम् — कनिष्ठों को साधारण आसन · इतरेषां समासनम् — अन्यो को समान आसन

जातिविद्याधनाढ्यो वा दूरे दृष्ट्वा गुरुं मुदा ।

दण्डप्रणामं कृत्वैकं त्रिः प्रदक्षिणमाचरेत् ॥ १०८ ॥

१०८

जाति, विद्या या धन से सम्पन्न भी, दूर से गुरु को देखकर प्रसन्नतापूर्वक एक दण्डवत् प्रणाम करके तीन बार प्रदक्षिणा करे।

पदपाठ जातिविद्याधनाढ्यो वा — जाति, विद्या, धन से समृद्ध हो तो भी · दूरे दृष्ट्वा गुरुं मुदा — दूर से गुरु को देखकर प्रसन्नता से · दण्डप्रणामं कृत्वैकं — एक दण्ड-प्रणाम कर · त्रिः प्रदक्षिणमाचरेत् — तीन प्रदक्षिणा करे

ततस्त्रिः षड् द्वादश वा ज्येष्ठादिष्वेकमेव वा ।

१०९

गुरुप्रगुरुयोगेन वन्देत प्रगुरुं प्रिये ॥ १०९ ॥

फिर तीन, छह या बारह बार, अथवा ज्येष्ठ आदि को एक बार ही (प्रणाम करे); गुरु और परमगुरु के साथ होने पर परमगुरु की वन्दना करे, हे प्रिये!

पदपाठ ततस्त्रिः षड् द्वादश वा — फिर तीन, छह या बारह · ज्येष्ठादिष्वेकमेव वा — ज्येष्ठ आदि को एक ही · गुरुप्रगुरुयोगेन — गुरु और परमगुरु के साथ होने पर · वन्देत प्रगुरुं प्रिये — परमगुरु को वन्दन करे, हे प्रिये

ततो नमेद् गुरुं वापि गुर्वाज्ञां न विचारयेत् ।

११०

प्रगुरोः सन्निधौ शिष्यः स्वगुरुं मनसा नमेत् ॥ ११० ॥

फिर गुरु को भी प्रणाम करे; गुरु की आज्ञा पर विचार (सन्देह) न करे। परमगुरु के सान्निध्य में शिष्य अपने गुरु को मन से प्रणाम करे।

पदपाठ ततो नमेद् गुरुं वापि — फिर गुरु को भी नमन करे · गुर्वाज्ञां न विचारयेत् — गुरु-आज्ञा का विचार न करे · प्रगुरोः सन्निधौ शिष्यः — परमगुरु के सन्निधान में शिष्य · स्वगुरुं मनसा नमेत् — अपने गुरु को मन से नमन करे

गुरुबुद्ध्या नमेत् सर्वं दैवतं तृणमेव वा ।

१११

न नमेद्देवबुद्ध्या तु प्रतिमां लौहमृण्मयीम् ॥ १११ ॥

गुरु-बुद्धि से प्रत्येक देवता को, यहाँ तक कि तिनके को भी प्रणाम करे; किन्तु देव-बुद्धि से धातु या मिट्टी की प्रतिमा को प्रणाम न करे।

पदपाठ गुरुबुद्ध्या नमेत् — गुरु-बुद्धि से नमन करे · सर्वं दैवतं तृणमेव वा — सब देवताओं को, या तिनके को भी · न नमेद्देवबुद्ध्या तु — पर देव-बुद्धि से न नमे · प्रतिमां लौहमृण्मयीम् — लोहे या मिट्टी की प्रतिमा को

गुरोः प्रणामत्रितयं ज्येष्ठानामेक एव च ।

११२

पूज्यानामञ्जलिस्तद्वदन्येषां वाक्यवन्दनम् ॥ ११२ ॥

गुरु को तीन प्रणाम, ज्येष्ठों को एक ही, पूज्यों को उसी प्रकार अञ्जलि, और अन्यो को वचन से वन्दना।

पदपाठ गुरोः प्रणामत्रितयं — गुरु को तीन प्रणाम · ज्येष्ठानामेक एव च — और ज्येष्ठों को एक ही · पूज्यानामञ्जलिस्तद्वत् — पूज्यों को वैसे ही अञ्जलि · अन्येषां वाक्यवन्दनम् — अन्यो को वाक्य-वन्दन

देवान् गुरुन् कुलाचार्यान् ज्ञानवृद्धान् तपोधनान् ।

११३

विद्याधिकान् स्वधर्मस्थान् प्रणमेत् कुलनायिके ॥ ११३ ॥

देवताओं, गुरुओं, कुलाचार्यों, ज्ञानवृद्धों, तपोधनों, विद्या में अधिकों और स्वधर्म में स्थित जनों को प्रणाम करे, हे कुलनायिके!

पदपाठ देवान् गुरुन् कुलाचार्यान् — देव, गुरु, कुलाचार्य · ज्ञानवृद्धान् तपोधनान् — ज्ञानवृद्ध, तपोधन · विद्याधिकान् स्वधर्मस्थान् — विद्या में अधिक, स्वधर्म में स्थित · प्रणमेत् कुलनायिके — को प्रणाम करे, हे कुलनायिके

स्त्रीद्विष्टं गुरुभिः शप्तं पाषण्डं पण्डितं शठम् ।

११४

विकर्माणं कृतघ्नज्यानाश्रमिणञ्च नो नमेत् ॥ ११४ ॥

स्त्रियों से द्वेषित, गुरुओं द्वारा शापित, पाषण्डी, (केवल) पण्डित, शठ, विकर्मी, कृतघ्न और आश्रमहीन को प्रणाम न करे।

पदपाठ स्त्रीद्विष्टं गुरुभिः शप्तं — स्त्री-द्वेषी, गुरु-शापित · पाषण्डं पण्डितं शठम् — पाषण्डी, पण्डित (दम्भी), शठ · विकर्माणं कृतघ्नञ्च — विकर्मी और कृतघ्न · अनाश्रमिणञ्च नो नमेत् — और आश्रम-रहित को न नमे

अनिवेद्य गुरोर्भुङ्क्ते यस्त्वेकग्रामसंस्थितः ।

११५

अमेध्यं तद्भवेदन्नं शूकरो जायते मृतः ॥ ११५॥

जो एक ही ग्राम में रहते हुए गुरु को निवेदन किये बिना भोजन करता है, उसका वह अन्न अपवित्र हो जाता है और वह मरकर सूअर होता है।

पदपाठ अनिवेद्य गुरोर्भुङ्क्ते — गुरु को निवेदन किए बिना खाता है · यस्त्वेकग्रामसंस्थितः — जो एक ही गाँव में स्थित है · अमेध्यं तद्भवेदन्नं — वह अन्न अमेध्य (अपवित्र) हो जाता है · शूकरो जायते मृतः — मरकर सूअर जन्मता है

एकग्रामस्थितः शिष्यस्त्रिसन्ध्यं प्रणमेद् गुरुम् ।

११६

क्रोशमात्रस्थितः शिष्यो गुरुं प्रतिदिनं नमेत् ॥ ११६॥

एक ही ग्राम में रहने वाला शिष्य तीनों सन्ध्याओं में गुरु को प्रणाम करे; एक कोस की दूरी पर रहने वाला शिष्य प्रतिदिन गुरु को प्रणाम करे।

पदपाठ एकग्रामस्थितः शिष्यः — एक गाँव में स्थित शिष्य · त्रिसन्ध्यं प्रणमेद् गुरुम् — त्रिसन्ध्या गुरु को प्रणाम करे · क्रोशमात्रस्थितः शिष्यो — एक कोस पर स्थित शिष्य · गुरुं प्रतिदिनं नमेत् — गुरु को प्रतिदिन नमन करे

अर्द्धयोजनगः शिष्यः प्रणमेत् पञ्चपर्वसु ।

११७

एकयोजनमारम्य योजनद्वादशावधि ॥ ११७॥

आधे योजन की दूरी वाला शिष्य पाँच पर्वों पर प्रणाम करे; एक योजन से लेकर बारह योजन तक,

पदपाठ अर्द्धयोजनगः शिष्यः — आधे योजन पर शिष्य · प्रणमेत् पञ्चपर्वसु — पाँच पर्वों पर प्रणाम करे · एकयोजनमारम्य — एक योजन से आरम्भ कर · योजनद्वादशावधि — बारह योजन तक

तत्संख्यादिवसैर्मासैः श्रीगुरुं प्रणमेत् प्रिये ।

११८

दूरदेशस्थितः शिष्यो भक्त्या तत्सन्निधिं गतः ॥ ११८ ॥

उतने ही दिनों या महीनों में श्रीगुरु को प्रणाम करे, हे प्रिये! दूर देश में रहने वाला शिष्य भक्तिपूर्वक उनके समीप आकर,

पदपाठ तत्संख्यादिवसैर्मासैः — उतने दिनों या मासों में · श्रीगुरुं प्रणमेत् प्रिये — श्रीगुरु को प्रणाम करे, हे प्रिये · दूरदेशस्थितः शिष्यो — दूर देश में स्थित शिष्य · भक्त्या तत्सन्निधिं गतः — भक्ति से उनके सन्निधान में आया

तत्र योजनसंख्योक्तमासेन प्रणमेद् गुरुम् ।

११९

अतिदूरगतः शिष्यो यदिच्छा स्यात्तदा व्रजेत् ॥ ११९ ॥

वहाँ कही गई योजन-संख्या के अनुसार महीनों में गुरु को प्रणाम करे; अति दूर गया हुआ शिष्य जब इच्छा हो तब जाए।

पदपाठ तत्र योजनसंख्योक्त- — वहाँ कहे योजन-संख्या के · मासेन प्रणमेद् गुरुम् — मासों में गुरु को प्रणाम करे · अतिदूरगतः शिष्यो — अति दूर गया शिष्य · यदिच्छा स्यात्तदा व्रजेत् — जब इच्छा हो तब जाए

रिक्तहस्तश्च नोपेयाद्राजानं देवतां गुरुम् ।

१२०

फलपुष्पाम्बरादीनि यथाशक्त्या समर्पयेत् ॥ १२० ॥

राजा, देवता और गुरु के पास खाली हाथ न जाए; फल, पुष्प, वस्त्र आदि यथाशक्ति समर्पित करे।

पदपाठ रिक्तहस्तश्च नोपेयात् — रिक्त हाथ न जाए · राजानं देवतां गुरुम् — राजा, देवता, गुरु के पास · फलपुष्पाम्बरादीनि — फल, पुष्प, वस्त्र आदि · यथाशक्त्या समर्पयेत् — यथाशक्ति समर्पित करे

एवं यो न चरेद्देवि ब्रह्मराक्षसतां व्रजेत् ।

१२१

गुरुशक्तिश्च तत्पुत्रो ज्येष्ठभ्राता गुरुः स्मृतः ॥ १२१ ॥

जो ऐसा आचरण नहीं करता, हे देवि! वह ब्रह्मराक्षस हो जाता है। गुरु की शक्ति, उनके पुत्र और ज्येष्ठ भ्राता गुरु माने गये हैं।

पदपाठ एवं यो न चरेद्देवि — जो ऐसा न करे, हे देवि · ब्रह्मराक्षसतां व्रजेत् — ब्रह्मराक्षस हो जाता है · गुरुशक्तिश्च तत्पुत्रो — गुरु-शक्ति और उनका पुत्र · ज्येष्ठभ्राता गुरुः स्मृतः — ज्येष्ठ भ्राता गुरु माने गए

आत्मविच्च कनीयांसं पुत्रवत् परिपालयेत् ।

१२२

कुलाचार्यस्य देवेशि गुरुज्येष्ठकनिष्ठयोः ।

गुरुकल्पस्य कुर्वीत प्रणामं स्वगुरोर्यथा ॥ १२२ ॥

और आत्मज्ञानी छोटे को पुत्र की भाँति पाले। कुलाचार्य को, हे देवेशि! गुरु के ज्येष्ठ और कनिष्ठ (भ्राताओं) को, तथा गुरु-तुल्य व्यक्ति को अपने गुरु के समान प्रणाम करे।

पदपाठ आत्मविच्च कनीयांसं — और आत्मवेत्ता कनिष्ठ को · पुत्रवत् परिपालयेत् — पुत्र की तरह पाले · कुलाचार्यस्य देवेशि — कुलाचार्य के, हे देवेशि · गुरुज्येष्ठकनिष्ठयोः — गुरु के ज्येष्ठ और कनिष्ठ (भ्राता) के · गुरुकल्पस्य कुर्वीत — गुरु-तुल्य के करे · प्रणामं स्वगुरोर्यथा — प्रणाम अपने गुरु के समान

यागज्येष्ठः क्रमज्येष्ठः कुलज्येष्ठस्तृतीयकः ।

१२३

गुरुज्येष्ठसुतो देवि इति ज्येष्ठचतुष्टयम् ॥ १२३ ॥

यागज्येष्ठ, क्रमज्येष्ठ, तीसरा कुलज्येष्ठ, और गुरु का ज्येष्ठ पुत्र, हे देवि! — ये चार ज्येष्ठ हैं।

पदपाठ यागज्येष्ठः क्रमज्येष्ठः — याग-ज्येष्ठ, क्रम-ज्येष्ठ · कुलज्येष्ठस्तृतीयकः — कुल-ज्येष्ठ तीसरा · गुरुज्येष्ठसुतो देवि — गुरु का ज्येष्ठ पुत्र, हे देवि · इति ज्येष्ठचतुष्टयम् — ये चार ज्येष्ठ हैं

यागज्येष्ठाभिवादेन क्रमिकाष्टाङ्गयोगतः ।

१२४

गुरुश्च कुलवृक्षश्च वन्दनीयौ विधानतः ॥ १२४ ॥

यागज्येष्ठ के अभिवादन से, क्रमिक अष्टाङ्ग योग के द्वारा, गुरु और कुलवृक्ष की विधिपूर्वक वन्दना करनी चाहिए।

पदपाठ यागज्येष्ठाभिवादेन — याग-ज्येष्ठ के अभिवादन से · क्रमिकाष्टाङ्गयोगतः — क्रम के अष्टाङ्ग-योग से · गुरुश्च कुलवृक्षश्च — गुरु और कुलवृक्ष · वन्दनीयौ विधानतः — विधान से वन्दनीय हैं

पितृमात्रादिसर्वेषु पूज्यकोटिषु बन्धुषु ।

१२५

अभ्युत्थानप्रणामाद्यैरव्यक्तो दोषभागबहिः ॥ १२५ ॥

पिता, माता आदि सब पूज्य-कोटि के बन्धुओं में, (आचार्य रूप में) अप्रकट व्यक्ति बाहर अभ्युत्थान, प्रणाम आदि से दोष का भागी नहीं होता।

पदपाठ पितृमात्रादिसर्वेषु — पिता, माता आदि सब · पूज्यकोटिषु बन्धुषु — पूज्य-कोटि के बन्धुओं में · अभ्युत्थानप्रणामाद्यैः — अभ्युत्थान, प्रणाम आदि से · अव्यक्तो दोषभागबहिः — अव्यक्त (आचार्य-रूप में अप्रकट) बाहर दोष का भागी नहीं

यदा त्वाचार्यरूपेण चात्मानं सम्प्रकाशयेत् ।

१२६

अभ्युत्थानप्रणामाद्यैर्दोषभाक् स भवेत्तदा ॥ १२६ ॥

किन्तु जब वह आचार्य के रूप में स्वयं को प्रकट कर दे, तब अभ्युत्थान, प्रणाम आदि से वह दोष का भागी होता है।

पदपाठ यदा त्वाचार्यरूपेण — पर जब आचार्य-रूप में · चात्मानं सम्प्रकाशयेत् — अपने को प्रकाशित करे · अभ्युत्थानप्रणामाद्यैः — अभ्युत्थान, प्रणाम आदि से · दोषभाक् स भवेत्तदा — तब वह दोष का भागी होता है

पतिर्भूत्वा पशुभ्यश्च प्रणामं यः करिष्यति ।

१२७

स महापशुरित्युक्तो देवताशापमाप्नुयात् ॥ १२७ ॥

जो पति (स्वामी) होकर पशुओं को प्रणाम करेगा, वह महापशु कहलाता है और देवताओं का शाप पाता है।

पदपाठ पतिर्भूत्वा पशुभ्यश्च — पति (स्वामी) होकर पशुओं को · प्रणामं यः करिष्यति — जो प्रणाम करेगा · स महापशुरित्युक्तो — वह महापशु कहा गया · देवताशापमाप्नुयात् — देवताओं का शाप पाता है

यो गुरुस्थानकं प्राप्तः पादुकापरिसंख्यया ।

१२८

गुरुवत् स तु मन्तव्यो ज्येष्ठैर्वन्द्यो न च प्रिये ॥ १२८ ॥

जो पादुका की परिसंख्या से गुरु के स्थान को प्राप्त हुआ है, वह गुरु के समान मानने योग्य है, किन्तु ज्येष्ठों द्वारा वन्दनीय नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ यो गुरुस्थानकं प्राप्तः — जो गुरु-स्थान को प्राप्त है · पादुकापरिसंख्यया — पादुका की संख्या से · गुरुवत् स तु मन्तव्यो — वह गुरु के समान माना जाए · ज्येष्ठैर्वन्द्यो न च प्रिये — पर ज्येष्ठों द्वारा वन्द्य नहीं, हे प्रिये

इति ते कथितं किञ्चित् पादुकाभक्तिलक्षणम् ।

१२९

समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १२९ ॥

इस प्रकार पादुका-भक्ति के लक्षण का कुछ अंश संक्षेप में तुम्हें कहा, हे कुलेशानि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · पादुकाभक्तिलक्षणम् — पादुका-भक्ति के लक्षण · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे पादुकाकथनं नाम द्वादश उल्लासः ॥ १२ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
पादुकाकथन नामक द्वादश उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ त्रयोदशोल्लासः

त्रयोदश उल्लास — गुरुशिष्यलक्षणम्



ईश्वर पहले उन दोषों को गिनाते हैं जिनके कारण गुरु शिष्य को त्याग दे और उन गुणों को जिनसे युक्त शिष्य को स्वीकार करे; फिर सच्चे गुरु का वर्णन करते हैं — उनके बाह्य लक्षण, अध्वा, तत्त्व, मुद्रा, पाश और वाणी के स्तरों का ज्ञान, और शिव से उनकी अभिन्नता। अन्त में सच्चे गुरु की दुर्लभता, सब कर्मकाण्ड पर तत्त्वज्ञान की श्रेष्ठता, छह प्रकार के गुरु, और शिष्य कब एक गुरु को छोड़कर दूसरे के पास जा सकता है, यह बताते हैं।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि करुणामृतवारिधे ।

वक्तुमर्हसि देवेश लक्षणं गुरुशिष्ययोः ॥ १॥

१

हे कुलेश! हे करुणामृत के सागर! मैं सुनना चाहती हूँ; हे देवेश! गुरु और शिष्य के लक्षण बताने की कृपा कीजिए।

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · करुणामृतवारिधे — हे करुणामृत के सागर · वक्तुमर्हसि देवेश — आप कहने योग्य हैं, हे देवेश · लक्षणं गुरुशिष्ययोः — गुरु और शिष्य के लक्षण

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण गुरुभावः प्रजायते ॥ २॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से गुरुभाव उत्पन्न होता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · गुरुभावः प्रजायते — गुरुभाव उत्पन्न होता है

दुष्टवंशोद्भवं दुष्टं गुणहीनं विरूपिणम् ।

परशिष्यञ्च पाषण्डं षण्डं पण्डितमानिनम् ॥ ३॥

३

दुष्ट वंश में उत्पन्न, दुष्ट, गुणहीन, विरूप, दूसरे का शिष्य, पाषण्डी, नपुंसक, अपने को पण्डित मानने वाला,

पदपाठ दुष्टवंशोद्भवं — दुष्ट वंश में जन्मा · दुष्टं — दुष्ट · गुणहीनं — गुणहीन · विरूपिणम् — विरूप · परशिष्यञ्च — और दूसरे का शिष्य · पाषण्डं — पाषण्डी · षण्डं — षण्ड (नपुंसक) · पण्डितमानिनम् — अपने को पण्डित मानने वाला

हीनाधिकविकाराङ्गं विकलावयवान्वितम् ।

पङ्गुमन्धञ्च बधिरं मलिनं व्याधिपीडितम् ॥ ४॥

४

जिसके अङ्ग हीन, अधिक या विकृत हों, जिसके अवयव विकल हों, लँगड़ा, अन्धा और बहरा, मलिन, व्याधि से पीड़ित,

पदपाठ हीनाधिकविकाराङ्गं — हीन, अधिक या विकृत अंगों वाला · विकलावयवान्वितम् — विकल अवयवों से युक्त · पङ्गुमन्धञ्च बधिरं — पंगु, अन्धा और बधिर · मलिनं — मलिन · व्याधिपीडितम् — व्याधि से पीड़ित

उत्सृष्टं दुर्मुखज्वापि स्वेच्छावेशधरं प्रिये ।

दुर्विकाराङ्गचेष्टादिगतिभाषणवीक्षणम् ॥ ५॥

५

परित्यक्त, दुर्मुख भी, स्वेच्छानुसार वेश धारण करने वाला, हे प्रिये! जिसके अङ्ग, चेष्टा, गति, भाषण और दृष्टि विकृत हों,

पदपाठ उत्सृष्टं — उत्सृष्ट (बहिष्कृत) · दुर्मुखज्वापि — और दुर्मुख भी · स्वेच्छावेशधरं — स्वेच्छा से वेश धारण करने वाला · प्रिये — हे प्रिये · दुर्विकाराङ्गचेष्टादिगतिभाषणवीक्षणम् — जिसके अंग, चेष्टा, गति, भाषण और दृष्टि विकृत हैं

निद्रातन्द्राजडालस्यधूतादिव्यसनान्वितम् ।

कपाटकुड्यस्तम्भादौ तिरोहिततनुं सदा ।

६

अन्तर्भक्तिकरं क्षुद्रं बाह्यभक्तिविवर्जितम् ॥ ६॥

निद्रा, तन्द्रा, जड़ता, आलस्य, धूत आदि व्यसनों से युक्त, सदा किवाड़, दीवार, खम्भे आदि के पीछे शरीर छिपाने वाला, केवल भीतर भक्ति दिखाने वाला, क्षुद्र, बाह्य भक्ति से रहित,

पदपाठ निद्रातन्द्राजडालस्यधूतादिव्यसनान्वितम् — निद्रा, तन्द्रा, जड़ता, आलस्य, धूत आदि व्यसनों से युक्त · कपाटकुड्यस्तम्भादौ — किवाड़, दीवार, खम्भे आदि के पीछे · तिरोहिततनुं सदा — सदा शरीर छिपाने वाला · अन्तर्भक्तिकरं — केवल भीतर भक्ति दिखाने वाला · क्षुद्रं — क्षुद्र · बाह्यभक्तिविवर्जितम् — बाह्य भक्ति से रहित

व्यलीकवादिनं स्तब्धं प्रोषितं प्रेषकं शठम् ।
धनस्त्रीशुद्धिरहितं निषेधविधिवर्जितम् ॥ ७॥

७

मिथ्याभाषी, अकडू, दूर रहने वाला, अपने स्थान पर दूसरों को भेजने वाला, शठ,
धन और स्त्री के विषय में शुद्धि से रहित, निषेध और विधि की उपेक्षा करने वाला,

पदपाठ व्यलीकवादिनं — असत्यवादी · स्तब्धं — हठी (जड़) · प्रोषितं — दूर रहने वाला · प्रेषकं — अपने
स्थान पर दूसरे को भेजने वाला · शठम् — शठ · धनस्त्रीशुद्धिरहितं — धन और स्त्री के विषय में
अशुद्ध · निषेधविधिवर्जितम् — निषेध और विधि से रहित

रहस्यभेदकं वापि देवि कार्यविनाशकम् ।
मार्जारबकवृत्तिञ्च रन्ध्रान्वेषणतत्परम् ॥ ८॥

८

अथवा रहस्य खोलने वाला, हे देवि! कार्य का विनाश करने वाला, बिल्ली और बगुले
की वृत्ति वाला, छिद्र खोजने में तत्पर,

पदपाठ रहस्यभेदकं वापि — या रहस्य भेदने वाला · देवि — हे देवि · कार्यविनाशकम् — कार्य नष्ट करने
वाला · मार्जारबकवृत्तिञ्च — बिलाव और बगुले की वृत्ति वाला · रन्ध्रान्वेषणतत्परम् — छिद्र खोजने में
तत्पर

मायाविनं कृतघ्नञ्च प्रच्छन्नान्तरदायकम् ।
विश्वासघातकं स्वामिद्रोहिणं पापकारिणम् ॥ ९॥

९

मायावी और कृतघ्न, भीतर का भाव छिपाने वाला, विश्वासघाती, स्वामी से द्रोह
करने वाला, पापकर्मी,

पदपाठ मायाविनं — मायावी · कृतघ्नञ्च — और कृतघ्न · प्रच्छन्नान्तरदायकम् — अपना वास्तविक
अभिप्राय छिपाने वाला · विश्वासघातकं — विश्वासघाती · स्वामिद्रोहिणं — स्वामी से द्रोह करने
वाला · पापकारिणम् — पापकारी

अविश्वासकरं संशयात्मकं सिद्धकाङ्क्षिणम् ।

आततायिनमादित्सुं कोपितं कूटसाक्षिणम् ॥ १० ॥

१०

अविश्वासनीय, संशयशील, सिद्धि की आकाङ्क्षा न रखने वाला, आततायी, लोभी, क्रोधी, झूठा साक्षी,

पदपाठ अविश्वासकरं — अविश्वास करने वाला · संशयात्मकं — संशयात्मा · सिद्धकाङ्क्षिणम् — सिद्धि की आकाङ्क्षा न करने वाला · आततायिनम् — आततायी · आदित्सुं — लोभी (लेने की इच्छा वाला) · कोपितं — क्रोधी · कूटसाक्षिणम् — झूठा गवाह

सर्वप्रतारकं देवि सर्वोत्कृष्टाभिमानिनम् ।

असत्यं निष्ठुरासक्तं ग्राम्यादिबहुभाषिणम् ॥ ११ ॥

११

सबको ठगने वाला, हे देवि! अपने को सर्वोत्कृष्ट मानने वाला, असत्यवादी, कठोरता में आसक्त, ग्राम्य आदि बहुत बोलने वाला,

पदपाठ सर्वप्रतारकं — सबको ठगने वाला · देवि — हे देवि · सर्वोत्कृष्टाभिमानिनम् — अपने को सर्वोत्कृष्ट मानने वाला · असत्यं — असत्य · निष्ठुरासक्तं — निष्ठुरता में आसक्त · ग्राम्यादिबहुभाषिणम् — ग्राम्य आदि बहुत बोलने वाला

दुर्विचारकुतर्कादिकारकं कलहप्रियम् ।

वृथाक्षेपकरं मूर्खं चपलं वाग्विडम्बकम् ॥ १२ ॥

१२

दुर्विचार, कुतर्क आदि करने वाला, कलहप्रिय, व्यर्थ आक्षेप करने वाला, मूर्ख, चञ्चल, वाणी से उपहास करने वाला,

पदपाठ दुर्विचारकुतर्कादिकारकं — दुर्विचार, कुतर्क आदि करने वाला · कलहप्रियम् — कलहप्रिय · वृथाक्षेपकरं — व्यर्थ आक्षेप करने वाला · मूर्खं — मूर्ख · चपलं — चंचल · वाग्विडम्बकम् — वाणी से उपहास करने वाला

परोक्षे दूषणकरं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।

१३

वाग्ब्रह्मवादिनं विद्याचौरमात्मप्रशंसकम् ॥ १३ ॥

परोक्ष में निन्दा करने वाला और प्रत्यक्ष में प्रिय बोलने वाला, केवल वाणी से ब्रह्म की बात करने वाला, विद्या का चोर, आत्मप्रशंसक,

पदपाठ परोक्षे दूषणकरं — परोक्ष में दोष लगाने वाला · प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् — प्रत्यक्ष में प्रिय बोलने वाला · वाग्ब्रह्मवादिनं — केवल वाणी से ब्रह्म की बात करने वाला · विद्याचौरम् — विद्या-चोर · आत्मप्रशंसकम् — आत्म-प्रशंसक

गुणासहिष्णुमहितमार्तं क्रोधनमम्बिके ।

१४

वाचालं दुर्जनसखं सर्वलोकविगर्हितम् ॥ १४ ॥

गुणों को सहन न करने वाला, अहितकारी, आर्त, क्रोधी, हे अम्बिके! वाचाल, दुर्जनों का मित्र, सब लोगों द्वारा निन्दित,

पदपाठ गुणासहिष्णुम् — गुण न सहने वाला · अहितम् — अहितकारी · आर्त — आर्त (पीड़ित) · क्रोधनम् — क्रोधी · अम्बिके — हे अम्बिके · वाचालं — वाचाल · दुर्जनसखं — दुर्जनों का मित्र · सर्वलोकविगर्हितम् — सब लोकों से निन्दित

पिशुनं परसन्ताप्यं सन्विदप्रणयं प्रिये ।

स्वक्लेशवादिनं स्वामिद्रोहिणं स्वात्मवञ्चकम् ॥ १५॥

१५

चुगलखोर, दूसरों को सन्ताप देने वाला, संवित् (साथियों) से प्रेम न रखने वाला, हे प्रिये! अपने क्लेश का ही रोना रोने वाला, स्वामी से द्रोह करने वाला, अपनी आत्मा को ठगने वाला,

पदपाठ पिशुनं — पिशुन (चुगलखोर) · परसन्ताप्यं — दूसरों को सन्ताप देने वाला · सन्विदप्रणयं — संवित् (कुल-समाज) में प्रेम न रखने वाला · प्रिये — हे प्रिये · स्वक्लेशवादिनं — अपने क्लेश की बात करने वाला · स्वामिद्रोहिणं — स्वामी से द्रोह करने वाला · स्वात्मवञ्चकम् — अपनी आत्मा को ठगने वाला

जिह्वोपस्थपरं देवि तस्करं पशुचेष्टितम् ।

अकारणद्वेषहासक्लेशक्रोधादिकारिणम् ॥ १६॥

१६

जिह्वा और उपस्थ के वश में, हे देवि! चोर, पशु की भाँति चेष्टा करने वाला, अकारण द्वेष, हँसी, क्लेश, क्रोध आदि करने वाला,

पदपाठ जिह्वोपस्थपरं — जिह्वा और उपस्थ में परायण · देवि — हे देवि · तस्करं — तस्कर (चोर) · पशुचेष्टितम् — पशु-सी चेष्टा वाला · अकारणद्वेषहासक्लेशक्रोधादिकारिणम् — अकारण द्वेष, हास, क्लेश, क्रोध आदि करने वाला

अतिहासमकर्माणं मर्मन्तपरिहासकम् ।

१७

कामुकञ्चातिनिर्लज्जं मिथ्यादुश्चेष्टसूचकम् ॥ १७ ॥

अति हँसने वाला, अकर्मण्य, मर्म को चीरने वाला परिहास करने वाला, कामुक और अत्यन्त निर्लज्ज, मिथ्या और दुष्ट चेष्टाओं का सूचक,

पदपाठ अतिहासम् — अति हँसने वाला · अकर्माणं — अकर्मण्य · मर्मन्तपरिहासकम् — मर्म तक चोट करने वाला परिहास करने वाला · कामुकञ्च — और कामुक · अतिनिर्लज्जं — अति निर्लज्ज · मिथ्यादुश्चेष्टसूचकम् — मिथ्या और दुष्ट चेष्टाओं का सूचक

असूयामदमात्सर्यदम्भाहङ्कारसंयुतम् ।

१८

ईर्ष्यापारुष्यपैशुन्यकार्पण्यक्रोधमानसम् ॥ १८ ॥

असूया, मद, मात्सर्य, दम्भ और अहङ्कार से युक्त, जिसका मन ईर्ष्या, कठोरता, चुगली, कृपणता और क्रोध में लगा हो,

पदपाठ असूयामदमात्सर्यदम्भाहङ्कारसंयुतम् — असूया, मद, मात्सर्य, दम्भ, अहंकार से युक्त · ईर्ष्यापारुष्यपैशुन्यकार्पण्यक्रोधमानसम् — ईर्ष्या, कठोरता, पिशुनता, कृपणता, क्रोध में मन वाला

अधीरं दुःखिनं भीरुमशक्तस्तवमातुरम् ।

१९

अप्रबुद्धमतिं मन्दं मूढं चिन्ताकुलं विटम् ॥ १९ ॥

अधीर, दुःखी, डरपोक, स्तुति में असमर्थ, आतुर, अप्रबुद्ध बुद्धि वाला, मन्द, मूढ़, चिन्ता से व्याकुल, लम्पट,

पदपाठ अधीरं — अधीर · दुःखिनं — दुःखी · भीरुम् — भीरु · अशक्तस्तवम् — स्तुति में असमर्थ · आतुरम् — आतुर (रोगी) · अप्रबुद्धमतिं — अप्रबुद्ध बुद्धि वाला · मन्दं — मन्द · मूढं — मूढ़ · चिन्ताकुलं — चिन्ता से व्याकुल · विटम् — विट (लम्पट)

तृष्णालोभयुतं दीनमतुष्टं सर्वयाचकम् ।

बह्वाशिनं कपटिनं भ्रामकं कुटिलं प्रिये ॥ २० ॥

२०

तृष्णा और लोभ से युक्त, दीन, असन्तुष्ट, सबसे माँगने वाला, बहुत खाने वाला, कपटी, भ्रम में डालने वाला, कुटिल, हे प्रिये!

पदपाठ तृष्णालोभयुतं — तृष्णा और लोभ से युक्त · दीनम् — दीन · अतुष्टं — असन्तुष्ट · सर्वयाचकम् — सबसे माँगने वाला · बह्वाशिनं — बहुत खाने वाला · कपटिनं — कपटी · भ्रामकं — भ्रमित करने वाला · कुटिलं — कुटिल · प्रिये — हे प्रिये

भक्तिश्रद्धादयाशान्तिधर्माचारविवर्जितम् ।

मातापितृगुरुप्राज्ञसद्वचोहास्यकारकम् ॥ २१ ॥

२१

भक्ति, श्रद्धा, दया, शान्ति, धर्म और सदाचार से रहित, माता, पिता, गुरु और ज्ञानियों के सद्वचनों का उपहास करने वाला,

पदपाठ भक्तिश्रद्धादयाशान्तिधर्माचारविवर्जितम् — भक्ति, श्रद्धा, दया, शान्ति, धर्म, आचार से रहित · मातापितृगुरुप्राज्ञसद्वचोहास्यकारकम् — माता, पिता, गुरु, प्राज्ञ के सद्वचनों का उपहास करने वाला

कुलद्रव्यादिबीभत्सं गुरुसेवाभिमानिनम् ।

स्त्रीद्विष्टं समयभ्रष्टं गुरुशप्तं कुलेश्वरि ।

२२

इत्यादिदुर्गुणोपेतं गुरुः शिष्यं विवर्जयेत् ॥ २२ ॥

कुलद्रव्य आदि से घृणा करने वाला, गुरुसेवा का अभिमानी, स्त्रियों से द्वेष करने वाला, समय से भ्रष्ट, गुरु द्वारा शापित, हे कुलेश्वरि! — इत्यादि दुर्गुणों से युक्त शिष्य को गुरु त्याग दे।

पदपाठ कुलद्रव्यादिबीभत्सं — कुलद्रव्य आदि से घृणा करने वाला · गुरुसेवाभिमानिनम् — गुरुसेवा का अभिमानी · स्त्रीद्विष्टं — स्त्री-द्वेषी · समयभ्रष्टं — समय से भ्रष्ट · गुरुशप्तं — गुरु से शापित · कुलेश्वरि — हे कुलेश्वरि · इत्यादिदुर्गुणोपेतं — इत्यादि दुर्गुणों से युक्त · गुरुः शिष्यं विवर्जयेत् — गुरु (ऐसे) शिष्य को त्याग दे

सच्छिष्यन्तु कुलेशानि शुभलक्षणसंयुतम् ।

समाधिसाधनोपेतं गुणशीलसमन्वितम् ॥ २३ ॥

२३

किन्तु सच्छिष्य, हे कुलेशानि! शुभ लक्षणों से युक्त, समाधि और साधन से सम्पन्न, गुण और शील से युक्त,

पदपाठ सच्छिष्यन्तु — पर सच्छिष्य · कुलेशानि — हे कुलेशानि · शुभलक्षणसंयुतम् — शुभ लक्षणों से युक्त · समाधिसाधनोपेतं — समाधि और साधन से युक्त · गुणशीलसमन्वितम् — गुण और शील से युक्त

स्वच्छदेहाम्बरं प्राज्ञं धार्मिकं शुद्धमानसम् ।

२४

दृढव्रतं सदाचारं श्रद्धाभक्तिसमन्वितम् ॥ २४ ॥

स्वच्छ देह और वस्त्र वाला, प्राज्ञ, धार्मिक, शुद्ध मन वाला, दृढव्रती, सदाचारी, श्रद्धा और भक्ति से युक्त,

पदपाठ स्वच्छदेहाम्बरं — स्वच्छ देह और वस्त्र वाला · प्राज्ञं — प्राज्ञ · धार्मिकं — धार्मिक · शुद्धमानसम् — शुद्ध मन वाला · दृढव्रतं — दृढव्रती · सदाचारं — सदाचारी · श्रद्धाभक्तिसमन्वितम् — श्रद्धा और भक्ति से युक्त

दक्षमल्पाशिनं गूढचित्तं निर्व्याजसेवकम् ।

२५

विमृश्यकारिणं वीरं मनोदारिद्र्यवर्जितम् ॥ २५ ॥

दक्ष, अल्पाहारी, गूढ चित्त वाला, निष्कपट सेवा करने वाला, सोच-विचार कर कार्य करने वाला, वीर, मन की दरिद्रता से रहित,

पदपाठ दक्षम् — दक्ष · अल्पाशिनं — अल्प भोजन करने वाला · गूढचित्तं — गूढ चित्त वाला · निर्व्याजसेवकम् — निष्कपट सेवक · विमृश्यकारिणं — विचार कर करने वाला · वीरं — वीर · मनोदारिद्र्यवर्जितम् — मन की दरिद्रता से रहित

सर्वकार्यातिकुशलं स्वच्छं सर्वोपकारिणम् ।

२६

कृतज्ञं पापभीतञ्च साधुसज्जनसम्मतम् ॥ २६ ॥

सब कार्यों में अति कुशल, स्वच्छ, सबका उपकार करने वाला, कृतज्ञ और पाप से डरने वाला, साधु-सज्जनों द्वारा सम्मानित,

पदपाठ सर्वकार्यातिकुशलं — सब कार्यों में अति कुशल · स्वच्छं — स्वच्छ · सर्वोपकारिणम् — सबका उपकार करने वाला · कृतज्ञं — कृतज्ञ · पापभीतञ्च — और पाप से भीत · साधुसज्जनसम्मतम् — साधु-सज्जनों से सम्मत

आस्तिकं दानशीलञ्च सर्वभूतहिते रतम् ।
विश्वासविनयोपेतं धनदेहाद्यवञ्चकम् ॥ २७ ॥

२७

आस्तिक और दानशील, सब प्राणियों के हित में रत, विश्वास और विनय से युक्त,
धन, देह आदि में छल न करने वाला,

पदपाठ आस्तिकं — आस्तिक · दानशीलञ्च — और दानशील · सर्वभूतहिते रतम् — सब प्राणियों के हित
में रत · विश्वासविनयोपेतं — विश्वास और विनय से युक्त · धनदेहाद्यवञ्चकम् — धन, देह आदि में ठगी न
करने वाला

असाध्यसाधकं शूरमुत्साहबलसंयुतम् ।
अनुकूलक्रियायुक्तमप्रमत्तं विचक्षणम् ॥ २८ ॥

२८

असाध्य को साधने वाला, शूर, उत्साह और बल से युक्त, अनुकूल क्रिया में लगा
हुआ, अप्रमत्त, विचक्षण,

पदपाठ असाध्यसाधकं — असाध्य को साधने वाला · शूरम् — शूर · उत्साहबलसंयुतम् — उत्साह और
बल से युक्त · अनुकूलक्रियायुक्तम् — अनुकूल क्रिया से युक्त · अप्रमत्तं — अप्रमत्त
(सावधान) · विचक्षणम् — विचक्षण

हितसत्यमितस्मेरभाषणं मुक्तदूषणम् ।
सकृदुक्तगृहीतार्थं चतुरं बुद्धिविस्तरम् ॥ २९ ॥

२९

हितकर, सत्य, परिमित और मुस्कान सहित बोलने वाला, दोषरहित, एक बार कहने
पर अर्थ ग्रहण कर लेने वाला, चतुर, विस्तृत बुद्धि वाला,

पदपाठ हितसत्यमितस्मेरभाषणं — हित, सत्य, मित (संयत), मुस्कान-युक्त बोलने वाला · मुक्तदूषणम्
— दोष से मुक्त · सकृदुक्तगृहीतार्थं — एक बार कहे अर्थ को ग्रहण करने वाला · चतुरं —
चतुर · बुद्धिविस्तरम् — विस्तृत बुद्धि वाला

स्वस्तुतौ परनिन्दायां विमुखं सुमुखं प्रिये ।
जितेन्द्रियं सुसन्तुष्टं धीमन्तं ब्रह्मचारिणम् ॥ ३० ॥

३०

आत्मस्तुति और परनिन्दा से विमुख, प्रसन्नमुख, हे प्रिये! जितेन्द्रिय, भली-भाँति सन्तुष्ट, बुद्धिमान्, ब्रह्मचारी,

पदपाठ स्वस्तुतौ परनिन्दायां — आत्म-स्तुति और पर-निन्दा से · विमुखं — विमुख · सुमुखं — सुमुख · प्रिये — हे प्रिये · जितेन्द्रियं — जितेन्द्रिय · सुसन्तुष्टं — सुसन्तुष्ट · धीमन्तं — धीमान् · ब्रह्मचारिणम् — ब्रह्मचारी

त्यक्ताधिव्याधिचापल्यदुःखभ्रान्तिमसंशयम् ।
गुरुध्यानस्तुतिकथादेवार्चावन्दनोत्सुकम् ॥ ३१ ॥

३१

आधि, व्याधि, चपलता, दुःख और भ्रान्ति को त्यागे हुए, संशयरहित, गुरु के ध्यान, स्तुति, कथा, देवार्चन और वन्दन में उत्सुक,

पदपाठ त्यक्ताधिव्याधिचापल्यदुःखभ्रान्तिम् — आधि, व्याधि, चपलता, दुःख, भ्रान्ति त्यागे हुए · असंशयम् — संशय-रहित · गुरुध्यानस्तुतिकथादेवार्चावन्दनोत्सुकम् — गुरु-ध्यान, स्तुति, कथा, देव-अर्चा, वन्दन में उत्सुक

गुरुदैवतसम्भक्तं कामिनीपूजकं परम् ।
नित्यं गुरुसमीपस्थं गुरुसन्तोषकारकम् ॥ ३२ ॥

३२

गुरु और देवता का पूर्ण भक्त, कामिनियों का परम पूजक, सदा गुरु के समीप रहने वाला, गुरु को सन्तोष देने वाला,

पदपाठ गुरुदैवतसम्भक्तं — गुरु और देवता में पूर्ण भक्त · कामिनीपूजकं परम् — कामिनियों का परम पूजक · नित्यं गुरुसमीपस्थं — नित्य गुरु के समीप रहने वाला · गुरुसन्तोषकारकम् — गुरु को सन्तोष देने वाला

मनोवाक्त्तनुभिर्नित्यं परिचर्यासमुद्यतम् ।

गुर्वाज्ञापालकं देवि गुरुकीर्तिप्रकाशकम् ॥ ३३ ॥

३३

मन, वाणी और शरीर से सदा सेवा में तत्पर, गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला, हे देवि! गुरु की कीर्ति का प्रकाश करने वाला,

पदपाठ मनोवाक्त्तनुभिर्नित्यं — मन, वाणी, तनु से नित्य · परिचर्यासमुद्यतम् — परिचर्या में उद्यत · गुर्वाज्ञापालकं — गुरु-आज्ञा पालने वाला · देवि — हे देवि · गुरुकीर्तिप्रकाशकम् — गुरु-कीर्ति प्रकाशित करने वाला

गुरुवाक्यप्रमाणज्ञं गुरुशुश्रूषणे रतम् ।

चित्तानुवर्तिनं प्रेष्यकारिणं कुलनायिके ॥ ३४ ॥

३४

गुरुवाक्य को प्रमाण मानने वाला, गुरु की शुश्रूषा में रत, उनके चित्त के अनुसार चलने वाला, आज्ञापालक, हे कुलनायिके!

पदपाठ गुरुवाक्यप्रमाणज्ञं — गुरु-वाक्य को प्रमाण मानने वाला · गुरुशुश्रूषणे रतम् — गुरु-शुश्रूषा में रत · चित्तानुवर्तिनं — चित्त के अनुसार चलने वाला · प्रेष्यकारिणं — कहा गया करने वाला · कुलनायिके — हे कुलनायिके

जातिमानधने गर्ववर्जितं गुरुसन्निधौ ।

निरपेक्षं गुरुद्रव्ये तत्प्रसादाभिकाङ्क्षिणम् ॥ ३५ ॥

३५

गुरु के सान्निध्य में जाति, मान और धन के गर्व से रहित, गुरु के द्रव्य में निरपेक्ष, उनके प्रसाद की आकाङ्क्षा करने वाला,

पदपाठ जातिमानधने — जाति, मान, धन में · गर्ववर्जितं — गर्व से रहित · गुरुसन्निधौ — गुरु के सन्निधान में · निरपेक्षं गुरुद्रव्ये — गुरु-द्रव्य में निरपेक्ष · तत्प्रसादाभिकाङ्क्षिणम् — उनके प्रसाद की आकाङ्क्षा वाला

कुलधर्मकथायोगियोगिनीकौलिकप्रियम् ।

कुलार्चनादिनिरतं कुलद्रव्याजुगुप्सकम् ॥ ३६ ॥

३६

कुलधर्म, उसकी कथा, योगी, योगिनी और कौलिकों से प्रेम करने वाला, कुलार्चन आदि में रत, कुलद्रव्यों से घृणा न करने वाला,

पदपाठ कुलधर्मकथायोगियोगिनीकौलिकप्रियम् — कुलधर्म, कथा, योगी, योगिनी, कौलिकों का प्रिय · कुलार्चनादिनिरतं — कुलार्चन आदि में निरत · कुलद्रव्याजुगुप्सकम् — कुलद्रव्य से घृणा न करने वाला

जपध्यानादिनिरतं मोक्षमार्गाभिकाङ्क्षिणम् ।

कुलशास्त्रप्रियं देवि पशुशास्त्रपराङ्मुखम् ।

३७

इत्यादिलक्षणोपेतं गुरुः शिष्यं परिग्रहेत् ॥ ३७ ॥

जप, ध्यान आदि में रत, मोक्षमार्ग की आकाङ्क्षा करने वाला, कुलशास्त्र से प्रेम करने वाला, हे देवि! पशुशास्त्रों से विमुख — इत्यादि लक्षणों से युक्त शिष्य को गुरु स्वीकार करे।

पदपाठ जपध्यानादिनिरतं — जप, ध्यान आदि में निरत · मोक्षमार्गाभिकाङ्क्षिणम् — मोक्षमार्ग की आकाङ्क्षा वाला · कुलशास्त्रप्रियं — कुलशास्त्र-प्रिय · देवि — हे देवि · पशुशास्त्रपराङ्मुखम् — पशु-शास्त्रों से विमुख · इत्यादिलक्षणोपेतं — इत्यादि लक्षणों से युक्त · गुरुः शिष्यं परिग्रहेत् — गुरु (ऐसे) शिष्य को ग्रहण करे

श्रीगुरुः परमेशानि शुद्धवेशो मनोहरः ।

३८

सर्वलक्षणसम्पन्नः सर्वावयवशोभितः ॥ ३८ ॥

श्रीगुरु, हे परमेशानि! शुद्ध वेश वाले, मनोहर, सब लक्षणों से सम्पन्न, सब अङ्गों से सुशोभित,

पदपाठ श्रीगुरुः — श्रीगुरु · परमेशानि — हे परमेशानि · शुद्धवेशः — शुद्ध वेश वाले · मनोहरः — मनोहर · सर्वलक्षणसम्पन्नः — सब लक्षणों से सम्पन्न · सर्वावयवशोभितः — सब अवयवों से शोभित

सर्वागमार्थतत्त्वज्ञः सर्वमन्त्रविधानवित् ।

३९

लोकसम्मोहनकरो देववत् प्रियदर्शनः ॥ ३९ ॥

सब आगमों के अर्थ और तत्त्व को जानने वाले, सब मन्त्रों के विधान को जानने वाले, लोक को मोहित करने वाले, देवता के समान प्रियदर्शन,

पदपाठ सर्वागमार्थतत्त्वज्ञः — सब आगमों के अर्थ का तत्त्व जानने वाले · सर्वमन्त्रविधानवित् — सब मन्त्रों के विधान के ज्ञाता · लोकसम्मोहनकरः — लोक को मोहित करने वाले · देववत् प्रियदर्शनः — देव की तरह प्रियदर्शन

सुमुखः सुलभः स्वच्छो भ्रमसंशयनाशकः ।

४०

इङ्गिताकारवित् प्राज्ञ ऊहापोहविदुज्ज्वलः ॥ ४० ॥

प्रसन्नमुख, सुलभ, स्वच्छ, भ्रम और संशय के नाशक, सङ्केत और आकार को समझने वाले, प्राज्ञ, ऊहापोह में निपुण, उज्ज्वल,

पदपाठ सुमुखः — सुमुख · सुलभः — सुलभ · स्वच्छः — स्वच्छ · भ्रमसंशयनाशकः — भ्रम और संशय के नाशक · इङ्गिताकारवित् — संकेत और आकार को जानने वाले · प्राज्ञः — प्राज्ञ · ऊहापोहवित् — ऊहापोह (तर्क-वितर्क) जानने वाले · उज्ज्वलः — उज्ज्वल

अन्तर्लक्ष्यो बहिर्दृष्टिः सर्वज्ञो देशकालवित् ।

४१

आज्ञासिद्धिस्त्रिकालज्ञो निग्रहानुग्रहक्षमः ॥ ४१ ॥

भीतर लक्ष्य और बाहर दृष्टि वाले, सर्वज्ञ, देश और काल को जानने वाले, जिनकी आज्ञा सिद्ध होती है, त्रिकालज्ञ, निग्रह और अनुग्रह में समर्थ,

पदपाठ अन्तर्लक्ष्यः — अन्तर्लक्ष्य वाले · बहिर्दृष्टिः — बाहर दृष्टि वाले · सर्वज्ञः — सर्वज्ञ · देशकालवित् — देश-काल के ज्ञाता · आज्ञासिद्धिः — आज्ञासिद्ध · त्रिकालज्ञः — त्रिकालज्ञ · निग्रहानुग्रहक्षमः — निग्रह और अनुग्रह में समर्थ

वेधको बोधकः शान्तः सर्वजीवदयापरः ।

४२

स्वाधीनेन्द्रियसञ्चारषड्वर्गविजयक्षमः ॥ ४२ ॥

वेधक, बोधक, शान्त, सब जीवों पर दया करने वाले, जिनकी इन्द्रियों की गति उनके वश में है, षड्वर्ग (काम आदि छह शत्रुओं) को जीतने में समर्थ,

पदपाठ वेधकः — वेधक · बोधकः — बोधक · शान्तः — शान्त · सर्वजीवदयापरः — सब जीवों पर दया करने वाले · स्वाधीनेन्द्रियसञ्चारः — इन्द्रियों का संचार अपने अधीन रखने वाले · षड्वर्गविजयक्षमः — षड्वर्ग (छह शत्रुओं) को जीतने में समर्थ

अग्रगण्योऽतिगम्भीरः पात्रापात्रविशेषवित् ।

४३

शिवविष्णुसमः साधुर्मन्ददर्शनदूषकः ॥ ४३ ॥

अग्रगण्य, अति गम्भीर, पात्र और अपात्र का भेद जानने वाले, शिव और विष्णु के समान, साधु, मन्द दृष्टि (हीन मतों) के निन्दक,

पदपाठ अग्रगण्यः — अग्रगण्य · अतिगम्भीरः — अति गम्भीर · पात्रापात्रविशेषवित् — पात्र-अपात्र का भेद जानने वाले · शिवविष्णुसमः — शिव और विष्णु के समान · साधुः — साधु · मन्ददर्शनदूषकः — मन्द दर्शनों के दूषक

निर्मलो नित्यसन्तुष्टः स्वतन्त्रो मन्त्रशक्तिमान् ।

४४

सद्भक्तवत्सलो धीरः कृपालुः स्मितपूर्णवाक् ॥ ४४॥

निर्मल, नित्य सन्तुष्ट, स्वतन्त्र, मन्त्रशक्ति से सम्पन्न, सद्भक्तों पर वात्सल्य रखने वाले, धीर, कृपालु, मुस्कान से पूर्ण वाणी वाले,

पदपाठ निर्मलः — निर्मल · नित्यसन्तुष्टः — नित्य सन्तुष्ट · स्वतन्त्रः — स्वतन्त्र · मन्त्रशक्तिमान् — मन्त्र-शक्ति वाले · सद्भक्तवत्सलः — सद्भक्तों पर वत्सल · धीरः — धीर · कृपालुः — कृपालु · स्मितपूर्णवाक् — मुस्कान से पूर्ण वाणी वाले

भक्तप्रियः सदोदारो गम्भीरः शिष्टसाधकः ।

४५

स्वेष्टदेवगुरुज्येष्ठवनितापूजनोत्सुकः ॥ ४५॥

भक्तों के प्रिय, सदा उदार, गम्भीर, शिष्टों को सिद्धि दिलाने वाले, अपने इष्टदेव, गुरु, ज्येष्ठ और स्त्रियों के पूजन में उत्सुक,

पदपाठ भक्तप्रियः — भक्तों के प्रिय · सदोदारः — सदा उदार · गम्भीरः — गम्भीर · शिष्टसाधकः — शिष्टों को सिद्धि देने वाले · स्वेष्टदेवगुरुज्येष्ठवनितापूजनोत्सुकः — अपने इष्टदेव, गुरु, ज्येष्ठ, स्त्रियों की पूजा में उत्सुक

नित्ये नैमित्तिके काम्ये रतः कर्मण्यनिन्दिते ।

४६

रागद्वेषभयक्लेशदम्भाहङ्कारवर्जितः ॥ ४६॥

नित्य, नैमित्तिक और काम्य अनिन्दित कर्मों में रत, राग, द्वेष, भय, क्लेश, दम्भ और अहङ्कार से रहित,

पदपाठ नित्ये नैमित्तिके काम्ये — नित्य, नैमित्तिक, काम्य · रतः कर्मण्यनिन्दिते — अनिन्दित कर्म में रत · रागद्वेषभयक्लेशदम्भाहङ्कारवर्जितः — राग, द्वेष, भय, क्लेश, दम्भ, अहंकार से रहित

स्वविद्यानुष्ठानरतो धर्मादीनामुपार्जकः ।

४७

यदृच्छालाभसन्तुष्टो गुणदोषविभेदकः ॥ ४७ ॥

अपनी विद्या के अनुष्ठान में रत, धर्म आदि पुरुषार्थों का उपार्जन करने वाले, यदृच्छा से प्राप्त लाभ में सन्तुष्ट, गुण और दोष का भेद करने वाले,

पदपाठ स्वविद्यानुष्ठानरतः — अपनी विद्या के अनुष्ठान में रत · धर्मादीनामुपार्जकः — धर्म आदि के उपार्जक · यदृच्छालाभसन्तुष्टः — यदृच्छा-लाभ से सन्तुष्ट · गुणदोषविभेदकः — गुण-दोष का भेद करने वाले

स्त्रीधनादिष्वनासक्तो दुःसङ्गव्यसनादिषु ।

४८

सर्वाहम्भावसंयुक्तो निर्द्वन्द्वो नियतव्रतः ॥ ४८ ॥

स्त्री, धन आदि में तथा कुसङ्ग, व्यसन आदि में अनासक्त, "सब कुछ मैं ही हूँ" इस भाव से युक्त, द्वन्द्वरहित, नियत व्रत वाले,

पदपाठ स्त्रीधनादिषु — स्त्री, धन आदि में · अनासक्तः — अनासक्त · दुःसङ्गव्यसनादिषु — दुःसङ्ग, व्यसन आदि में · सर्वाहम्भावसंयुक्तः — "सब मैं हूँ" इस भाव से युक्त · निर्द्वन्द्वः — निर्द्वन्द्व · नियतव्रतः — नियत व्रत वाले

अलोलुपो ह्यसङ्कल्पपक्षपाती विचक्षणः ।

४९

वित्तविद्यादिभिर्मन्त्रयन्त्रतन्त्राद्यविक्रयी ॥ ४९ ॥

लोभरहित, सङ्कल्पहीनता के पक्षपाती, विचक्षण, धन, विद्या आदि के बदले मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र आदि को न बेचने वाले,

पदपाठ अलोलुपः — अलोलुप · हि — ही · असङ्कल्पपक्षपाती — संकल्प-रहितता के पक्षपाती · विचक्षणः — विचक्षण · वित्तविद्यादिभिः — धन, विद्या आदि के लिए · मन्त्रयन्त्रतन्त्राद्यविक्रयी — मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र आदि न बेचने वाले

निःसङ्गो निर्विकल्पश्च निर्णीतार्थोऽतिधार्मिकः ।

तुल्यनिन्दास्तुतिमौनो निरपेक्षो निरामयः ।

५०

इत्यादिलक्षणोपेतः श्रीगुरुः कथितः प्रिये ॥ ५० ॥

निःसङ्ग और निर्विकल्प, निश्चित अर्थ वाले, अति धार्मिक, निन्दा और स्तुति में समान, मौनी, निरपेक्ष, नीरोग — इत्यादि लक्षणों से युक्त श्रीगुरु कहे गए हैं, हे प्रिये!

पदपाठ निःसङ्गः — निःसंग · निर्विकल्पश्च — और निर्विकल्प · निर्णीतार्थः — निर्णीत अर्थ वाले · अतिधार्मिकः — अति धार्मिक · तुल्यनिन्दास्तुतिः — निन्दा-स्तुति में समान · मौनः — मौनी · निरपेक्षः — निरपेक्ष · निरामयः — निरामय (रोग-रहित) · इत्यादिलक्षणोपेतः — इत्यादि लक्षणों से युक्त · श्रीगुरुः कथितः प्रिये — श्रीगुरु कहे गए हैं, हे प्रिये

यः शिवः सर्वगः सूक्ष्मश्चोन्मना निष्कलोऽव्ययः ।

५१

व्योमाकारो ह्यजोऽनन्तः स कथं पूज्यते प्रिये ॥ ५१ ॥

जो शिव सर्वव्यापी, सूक्ष्म, उन्मना, निष्कल, अव्यय, आकाश-रूप, अज और अनन्त हैं, उनकी पूजा कैसे हो, हे प्रिये?

पदपाठ यः शिवः — जो शिव · सर्वगः — सर्वगत · सूक्ष्मश्च — और सूक्ष्म · उन्मनाः — उन्मना (मन से परे) · निष्कलः — निष्कल · अव्ययः — अव्यय · व्योमाकारः — व्योम-आकार · हि अजोऽनन्तः — अज और अनन्त · स कथं पूज्यते प्रिये — वह कैसे पूजा जाए, हे प्रिये

अत एव शिवः साक्षाद्गुरुरूपं समाश्रितः ।

भक्त्या सम्पूजितो देवि भुक्तिं मुक्तिं प्रयच्छति ॥ ५२ ॥

५२

इसीलिए साक्षात् शिव ने गुरु का रूप धारण किया है; भक्ति से पूजित होकर, हे देवि! वे भुक्ति और मुक्ति प्रदान करते हैं।

पदपाठ अत एव — इसीलिए · शिवः साक्षात् — शिव साक्षात् · गुरुरूपं समाश्रितः — गुरु-रूप का आश्रय लिए हैं · भक्त्या सम्पूजितः — भक्ति से सम्पूजित · देवि — हे देवि · भुक्तिं मुक्तिं प्रयच्छति — भुक्ति और मुक्ति देते हैं

शिवोऽहं नाकृतिर्देवि नरदृग्गोचरो नहि ।

तस्मात् श्रीगुरुरूपेण शिष्यान् रक्षति धार्मिकान् ॥ ५३ ॥

५३

मैं शिव आकृतिरहित हूँ, हे देवि! मनुष्यों की दृष्टि का विषय नहीं हूँ; इसलिए श्रीगुरु के रूप से वह धार्मिक शिष्यों की रक्षा करता है।

पदपाठ शिवोऽहं — मैं शिव हूँ · नाकृतिः — आकृति-रहित · देवि — हे देवि · नरदृग्गोचरो नहि — मनुष्य की दृष्टि का विषय नहीं · तस्मात् — इसलिए · श्रीगुरुरूपेण — श्रीगुरु-रूप से · शिष्यान् रक्षति धार्मिकान् — धार्मिक शिष्यों की रक्षा करता हूँ

मनुष्यचर्मणा बद्धः साक्षात् परशिवः स्वयम् ।

सच्छिष्यानुग्रहार्थाय गूढं पर्यटति क्षितौ ॥ ५४ ॥

५४

मनुष्य की त्वचा में बँधे हुए साक्षात् परशिव स्वयं सच्छिष्यों पर अनुग्रह करने के लिए गुप्त रूप से पृथ्वी पर विचरते हैं।

पदपाठ मनुष्यचर्मणा बद्धः — मनुष्य-चर्म से बद्ध · साक्षात् परशिवः स्वयम् — साक्षात् परशिव स्वयं · सच्छिष्यानुग्रहार्थाय — सच्छिष्यों के अनुग्रह के लिए · गूढं पर्यटति क्षितौ — गुप्त रूप से पृथ्वी पर विचरते हैं

सद्भक्तरक्षणायैव निराकारोऽपि साकृतिः ।

शिवः कृपानिधिर्लोके संसारीव हि चेष्टते ॥ ५५॥

५५

सद्भक्तों की रक्षा के लिए ही कृपानिधि शिव निराकार होते हुए भी आकार धारण करते हैं और लोक में संसारी की भाँति आचरण करते हैं।

पदपाठ सद्भक्तरक्षणायैव — सद्भक्तों की रक्षा के लिए ही · निराकारोऽपि — निराकार होकर भी · साकृतिः — साकार · शिवः कृपानिधिः — शिव, कृपानिधि · लोके — लोक में · संसारीव हि चेष्टते — संसारी की तरह व्यवहार करते हैं

ललाटलोचनं चान्द्रीं कलामपि च दोर्दयम् ।

अन्तर्धाय च वर्तेयं गुरुरूपो महीतले ॥ ५६॥

५६

ललाट के नेत्र, चन्द्रकला और दो भुजाओं को छिपाकर मैं गुरु के रूप में पृथ्वी पर विचरता हूँ।

पदपाठ ललाटलोचनं — ललाट का नेत्र · चान्द्रीं कलाम् — चन्द्र-कला · अपि च दोर्दयम् — और दो भुजाएँ भी · अन्तर्धाय — छिपाकर · च वर्तेयं — मैं रहता हूँ · गुरुरूपः — गुरु-रूप · महीतले — पृथ्वी पर

अत्रिनेत्रः शिवः साक्षादचतुर्बाहुरच्युतः ।

अचतुर्वदनो ब्रह्मा श्रीगुरुः कथितः प्रिये ॥ ५७॥

५७

तीन नेत्रों से रहित साक्षात् शिव, चार भुजाओं से रहित विष्णु, चार मुखों से रहित ब्रह्मा — ऐसे श्रीगुरु कहे गए हैं, हे प्रिये!

पदपाठ अत्रिनेत्रः शिवः साक्षात् — बिना तीसरे नेत्र के साक्षात् शिव · अचतुर्बाहुः अच्युतः — बिना चार भुजाओं के अच्युत (विष्णु) · अचतुर्वदनो ब्रह्मा — बिना चार मुखों के ब्रह्मा · श्रीगुरुः कथितः प्रिये — श्रीगुरु कहे गए हैं, हे प्रिये

नरवदृश्यते लोके श्रीगुरुः पापकर्मणा ।

शिववद् दृश्यते लोके भवानि पुण्यकर्मणा ॥ ५८ ॥

५८

पापकर्मी को श्रीगुरु लोक में मनुष्य के समान दिखाई देते हैं, और पुण्यकर्मी को, हे भवानि! शिव के समान दिखाई देते हैं।

पदपाठ नरवदृश्यते लोके — लोक में मनुष्य की तरह दिखते हैं · श्रीगुरुः — श्रीगुरु · पापकर्मणा — पापकर्मी को · शिववद् दृश्यते लोके — लोक में शिव की तरह दिखते हैं · भवानि — हे भवानि · पुण्यकर्मणा — पुण्यकर्मी को

श्रीगुरुं परमं तत्त्वं तिष्ठन्तं चक्षुरग्रतः ।

मन्दभाग्या न पश्यन्ति ह्यन्धाः सूर्यमिवोदितम् ॥ ५९ ॥

५९

मन्दभागी लोग अपने नेत्रों के सामने खड़े परम तत्त्व श्रीगुरु को नहीं देखते, जैसे अन्धे उदित सूर्य को नहीं देखते।

पदपाठ श्रीगुरुं परमं तत्त्वं — श्रीगुरु परम तत्त्व · तिष्ठन्तं चक्षुरग्रतः — आँखों के सामने खड़े · मन्दभाग्या न पश्यन्ति — मन्दभाग्य नहीं देखते · हि अन्धाः सूर्यमिवोदितम् — जैसे अन्धे उदित सूर्य को

गुरुः सदाशिवः साक्षात् सत्यमेव न संशयः ।

शिव एव गुरुर्नो चेद्भुक्तिं मुक्तिं ददाति कः ॥ ६० ॥

६०

गुरु साक्षात् सदाशिव हैं; यह सत्य है, इसमें संशय नहीं। यदि गुरु शिव ही न होते तो भुक्ति और मुक्ति कौन देता?

पदपाठ गुरुः सदाशिवः साक्षात् — गुरु साक्षात् सदाशिव हैं · सत्यमेव न संशयः — यह सत्य ही है, सन्देह नहीं · शिव एव गुरुर्नो चेत् — यदि गुरु शिव ही न हों · भुक्तिं मुक्तिं ददाति कः — तो भुक्ति-मुक्ति कौन दे?

सदाशिवस्य देवस्य श्रीगुरोरपि पार्वति ।

६१

उभयोरन्तरं नास्ति यः करोति स पातकी ॥ ६१ ॥

देव सदाशिव और श्रीगुरु में, हे पार्वति! कोई अन्तर नहीं है; जो दोनों में भेद करता है वह पातकी है।

पदपाठ सदाशिवस्य देवस्य — सदाशिव देव के · श्रीगुरोरपि — और श्रीगुरु के · पार्वति — हे पार्वति · उभयोरन्तरं नास्ति — दोनों में अन्तर नहीं · यः करोति स पातकी — जो (अन्तर) करता है वह पातकी है

देशिकाकृतिमास्थाय पशोः पाशानशेषतः ।

६२

छित्त्वा परं पदं देवि नयत्येनमतो गुरुः ॥ ६२ ॥

देशिक का रूप धारण कर पशु के समस्त पाशों को काटकर, हे देवि! वह उसे परम पद तक ले जाता है; इसीलिए वह गुरु है।

पदपाठ देशिकाकृतिमास्थाय — देशिक (गुरु) की आकृति धारण कर · पशोः पाशान् अशेषतः — पशु के पाशों को पूर्णतः · छित्त्वा — काटकर · परं पदं देवि — परम पद को, हे देवि · नयत्येनम् — इसे ले जाते हैं · अतो गुरुः — इसलिए गुरु हैं

सर्वानुग्रहकर्तृत्वादीश्वरः करुणानिधिः ।

६३

आचार्यरूपमास्थाय दीक्षया मोक्षयेत् पशून् ॥ ६३ ॥

सब पर अनुग्रह करने के कारण करुणानिधि ईश्वर आचार्य का रूप धारण कर दीक्षा द्वारा पशुओं को मुक्त करते हैं।

पदपाठ सर्वानुग्रहकर्तृत्वात् — सब पर अनुग्रह करने से · ईश्वरः करुणानिधिः — ईश्वर, करुणानिधि · आचार्यरूपमास्थाय — आचार्य-रूप धारण कर · दीक्षया मोक्षयेत् पशून् — दीक्षा से पशुओं को मुक्त करते हैं

यथा घटश्च कलसः कुम्भश्चैकार्थवाचकः ।

६४

तथा देवश्च मन्त्रश्च गुरुश्चैकार्थ उच्यते ॥ ६४ ॥

जैसे घट, कलश और कुम्भ एक ही अर्थ के वाचक हैं, वैसे ही देवता, मन्त्र और गुरु एक ही अर्थ वाले कहे जाते हैं।

पदपाठ यथा घटश्च कलसः कुम्भश्च — जैसे घट, कलश और कुम्भ · एकार्थवाचकः — एक अर्थ के वाचक हैं · तथा देवश्च मन्त्रश्च गुरुश्च — वैसे देव, मन्त्र और गुरु · एकार्थ उच्यते — एक अर्थ कहे जाते हैं

यथा देवस्तथा मन्त्रो यथा मन्त्रस्तथा गुरुः ।

६५

देवमन्त्रगुरुणाञ्च पूजया सदृशं फलम् ॥ ६५ ॥

जैसे देवता वैसे मन्त्र, जैसे मन्त्र वैसे गुरु; देवता, मन्त्र और गुरु की पूजा का फल समान है।

पदपाठ यथा देवस्तथा मन्त्रः — जैसे देव वैसे मन्त्र · यथा मन्त्रस्तथा गुरुः — जैसे मन्त्र वैसे गुरु · देवमन्त्रगुरुणाञ्च — और देव, मन्त्र, गुरु की · पूजया सदृशं फलम् — पूजा का फल समान है

शिवरूपं समास्थाय पूजां गृह्णामि पार्वति ।

६६

गुरुरूपं समादाय भवपाशान्निकृन्तये ॥ ६६ ॥

शिव का रूप धारण कर मैं पूजा ग्रहण करता हूँ, हे पार्वति! और गुरु का रूप लेकर संसार के पाशों को काटता हूँ।

पदपाठ शिवरूपं समास्थाय — शिव-रूप धारण कर · पूजां गृह्णामि — मैं पूजा ग्रहण करता हूँ · पार्वति — हे पार्वति · गुरुरूपं समादाय — गुरु-रूप धारण कर · भवपाशान् निकृन्तये — भव-पाशों को काटता हूँ

सिद्धान्तसारवेत्ताहं बीजोऽहमिति बोधकृत् ।

६७

अविच्छिन्नः सदा हृष्टहृदयो गुरुच्यते ॥ ६७ ॥

"मैं सिद्धान्त के सार का ज्ञाता हूँ, मैं बीज हूँ" — ऐसा बोध कराने वाला, अविच्छिन्न, सदा प्रसन्न हृदय वाला गुरु कहलाता है।

पदपाठ सिद्धान्तसारवेत्ताहं — मैं सिद्धान्त के सार का ज्ञाता हूँ · बीजोऽहम् — मैं बीज हूँ · इति बोधकृत् — ऐसा बोध कराने वाला · अविच्छिन्नः — अविच्छिन्न · सदा हृष्टहृदयः — सदा प्रसन्न हृदय · गुरुच्यते — गुरु कहलाता है

यो विलङ्घ्याश्रमान् वर्णानात्मन्येव स्थितः सदा ।

६८

ज्योतिर्वर्णाश्रमी योगी स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ६८ ॥

जो आश्रमों और वर्णों को लाँघकर सदा आत्मा में ही स्थित रहता है, जिसका वर्ण और आश्रम ज्योति ही है, ऐसा योगी गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ यो विलङ्घ्य आश्रमान् वर्णान् — जो आश्रमों और वर्णों को लाँघकर · आत्मन्येव स्थितः सदा — सदा आत्मा में ही स्थित है · ज्योतिर्वर्णाश्रमी योगी — ज्योति ही जिसका वर्ण और आश्रम है, वह योगी · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

नवाधारं षडध्वानं षोडशाधारनिर्णयम् ।

६९

यो जानाति विधानेन स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ६९ ॥

जो नौ आधारों, छह अध्वाओं और सोलह आधारों के निर्णय को विधिपूर्वक जानता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ नवाधारं — नौ आधार · षडध्वानं — छह अध्वा · षोडशाधारनिर्णयम् — सोलह आधारों का निर्णय · यो जानाति विधानेन — जो विधान से जानता है · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

दृश्यं विना स्थिरा दृष्टिर्मनश्चालम्बनं विना ।

विनायासं स्थिरो वायुर्यस्य स्यात् स गुरुः प्रिये ॥ ७० ॥

७०

जिसकी दृष्टि दृश्य के बिना स्थिर हो, मन आलम्बन के बिना हो, और प्राणवायु बिना प्रयास स्थिर हो, वह गुरु है, हे प्रिये!

पदपाठ दृश्यं विना स्थिरा दृष्टिः — बिना दृश्य के स्थिर दृष्टि · मनश्चालम्बनं विना — और बिना आलम्बन के मन · विनायासं स्थिरो वायुः — बिना प्रयास के स्थिर वायु · यस्य स्यात् — जिसकी हो · स गुरुः प्रिये — वह गुरु है, हे प्रिये

यत्तु संवित्तिजननं परानन्दसमुद्भवम् ।

तत्तत्त्वं विदितं येन स गुरुः कुलनायिके ॥ ७१ ॥

७१

जो संवित् को उत्पन्न करने वाला और परानन्द से उद्भूत है, वह तत्त्व जिसने जान लिया, वह गुरु है, हे कुलनायिके!

पदपाठ यत्तु संवित्तिजननं — जो संवित् (चेतना) को जन्म देता है · परानन्दसमुद्भवम् — परानन्द से उत्पन्न · तत्तत्त्वं विदितं येन — जिसने वह तत्त्व जाना · स गुरुः कुलनायिके — वह गुरु है, हे कुलनायिके

भूतभव्यौ तन्त्रमन्त्रौ वेत्ति यः शाक्तशाम्भवम् ।

वेधञ्च षड्विधं देवि स हि वेधकरो गुरुः ॥ ७२ ॥

७२

जो भूत और भविष्य के तन्त्र और मन्त्र, शाक्त और शाम्भव, तथा छह प्रकार के वेध को जानता है, हे देवि! वही वेध करने वाला गुरु है।

पदपाठ भूतभव्यौ तन्त्रमन्त्रौ — भूत-भविष्य, तन्त्र-मन्त्र · वेत्ति यः — जो जानता है · शाक्तशाम्भवम् — शाक्त और शाम्भव · वेधञ्च षड्विधं — और छह प्रकार का वेध · देवि — हे देवि · स हि वेधकरो गुरुः — वही वेध करने वाला गुरु है

पदमन्त्रकलायन्त्रसतत्त्वतद्गुणाह्वयम् ।

शोधयेद् यः षडध्वानं स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ७३॥

७३

जो पद, मन्त्र, कला, यन्त्र, तत्त्व और तद्गुण नामक छह अध्वाओं का शोधन करता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ पदमन्त्रकलायन्त्रसतत्त्वतद्गुणाह्वयम् — पद, मन्त्र, कला, यन्त्र, तत्त्व और उसके गुण नामक · शोधयेद् यः षडध्वानं — जो छह अध्वाओं का शोधन करे · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

वेधं पदं विरोधञ्च ग्रहणं मोक्षणं तथा ।

यो वा सम्यग्विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ७४॥

७४

वेध, पद, विरोध, ग्रहण और मोक्षण — जो इन्हें भली-भाँति जानता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ वेधं पदं विरोधञ्च — वेध, पद, विरोध · ग्रहणं मोक्षणं तथा — ग्रहण और मोक्षण · यो वा सम्यग्विजानाति — जो सम्यक् जानता है · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

जाग्रत् स्वप्नः सुषुप्तिश्च तुरीयं तदतीतकम् ।

यो वेत्ति पञ्चकं देवि स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ७५॥

७५

जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय और तुरीयातीत — जो इन पाँचों को जानता है, हे देवि! वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ जाग्रत् स्वप्नः सुषुप्तिश्च — जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति · तुरीयं तदतीतकम् — तुरीय और उससे अतीत · यो वेत्ति पञ्चकं — जो इस पंचक को जानता है · देवि — हे देवि · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

पिण्डं पदं तथा रूपं रूपातीतं चतुष्टयम् ।

७६

यो वा सम्यग्विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ७६ ॥

पिण्ड, पद, रूप और रूपातीत — इस चतुष्टय को जो भली-भाँति जानता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ पिण्डं पदं तथा रूपं — पिण्ड, पद और रूप · रूपातीतं चतुष्टयम् — और रूपातीत, यह चतुष्टय · यो वा सम्यग्विजानाति — जो सम्यक् जानता है · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

यो वा पराञ्च पश्यन्तीं मध्यमां वैखरीमपि ।

७७

चतुष्टयं विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ७७ ॥

जो परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी — इस (वाणी के) चतुष्टय को जानता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ यो वा पराञ्च पश्यन्तीं — जो परा और पश्यन्ती · मध्यमां वैखरीमपि — मध्यमा और वैखरी भी · चतुष्टयं विजानाति — इस चतुष्टय को जानता है · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

आत्मविद्याशिवसर्वमिति तत्त्वचतुष्टयम् ।

७८

यो वेत्ति परमेशानि स गुरुर्नापरः प्रिये ॥ ७८ ॥

आत्मा, विद्या, शिव और सर्व — इस तत्त्वचतुष्टय को जो जानता है, हे परमेशानि! वही गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ आत्मविद्याशिवसर्वम् — आत्मा, विद्या, शिव और सर्व · इति तत्त्वचतुष्टयम् — यह तत्त्व-चतुष्टय · यो वेत्ति — जो जानता है · परमेशानि — हे परमेशानि · स गुरुर्नापरः प्रिये — वह गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये

पाशच्छेदं वेधदीक्षां पशुग्रहणमेव च ।

त्रिविधं यो विजानाति स गुरुः परमो मतः ॥ ७९॥

७९

पाशच्छेद, वेधदीक्षा और पशुग्रहण — इस त्रिविध को जो जानता है, वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ पाशच्छेदं — पाश-छेद · वेधदीक्षां — वेध-दीक्षा · पशुग्रहणमेव च — और पशु-ग्रहण · त्रिविधं यो विजानाति — जो इस त्रिविध को जानता है · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

पदं पाशं पशुनाञ्च रहस्यार्थं विधानतः ।

यो जानाति वरारोहे स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ८०॥

८०

जो पशुओं के पद, पाश और रहस्यार्थ को विधिपूर्वक जानता है, हे वरारोहे! वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ पदं पाशं पशुनाञ्च — पशुओं का पद और पाश · रहस्यार्थं विधानतः — और रहस्यार्थ विधान से · यो जानाति — जो जानता है · वरारोहे — हे वरारोहे · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

चक्रसङ्केतकं मन्त्रं पूजासङ्केतकं तथा ।

त्रितयं यो विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ८१॥

८१

चक्रसङ्केत, मन्त्र और पूजासङ्केत — इस त्रितय को जो जानता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ चक्रसङ्केतकं — चक्र-संकेत · मन्त्रं — मन्त्र · पूजासङ्केतकं तथा — और पूजा-संकेत · त्रितयं यो विजानाति — जो इस त्रय को जानता है · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

वाणेतरस्वयम्बवाख्यलिङ्गत्रितयसंस्थितिम् ।
तत्त्वतो यो विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये ॥ ८२ ॥

८२

जो बाण, इतर और स्वयम्भू नामक तीन लिङ्गों की स्थिति को तत्त्वतः जानता है, वह गुरु कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ वाणेतरस्वयम्बवाख्यलिङ्गत्रितयसंस्थितिम् — बाण, इतर और स्वयम्भू नामक तीन लिंगों की स्थिति · तत्त्वतो यो विजानाति — जो तत्त्वतः जानता है · स गुरुः कथितः प्रिये — वह गुरु कहा गया, हे प्रिये

आणवं कर्मणज्चैव मायीयज्च मलत्रयम् ।
यो विशोधयितुं शक्तः स गुरुः परमो मतः ॥ ८३ ॥

८३

आणव, कर्म और मायीय — इन तीन मलों का जो शोधन करने में समर्थ है, वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ आणवं कर्मणज्चैव — आणव और कर्म · मायीयज्च — और मायीय · मलत्रयम् — तीन मल · यो विशोधयितुं शक्तः — जो शुद्ध करने में समर्थ है · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

आरक्तशुक्लमिश्रा[कृष्णा]ख्यचरणत्रयवासनाम् ।
यो जानाति महादेवि स गुरुः परमो मतः ॥ ८४ ॥

८४

आरक्त, शुक्ल, मिश्र [और कृष्ण] नामक तीन चरणों की वासना को जो जानता है, हे महादेवि! वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ आरक्तशुक्लमिश्रा[कृष्णा]ख्य — रक्त, श्वेत, मिश्र (कृष्ण) नामक · चरणत्रयवासनाम् — तीन चरणों की वासना · यो जानाति — जो जानता है · महादेवि — हे महादेवि · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

महामुद्रां नभोमुद्रां उड्डीयानं जलन्धरम् ।

मूलबन्धञ्च यो वेत्ति स गुरुः परमो मतः ॥ ८५॥

८५

महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्डीयान, जालन्धर और मूलबन्ध को जो जानता है, वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ महामुद्रां — महामुद्रा · नभोमुद्रां — नभोमुद्रा (खेचरी) · उड्डीयानं — उड्डीयान · जलन्धरम् — जालन्धर · मूलबन्धञ्च — और मूलबन्ध · यो वेत्ति — जो जानता है · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

शिवादिक्षितिपर्यन्तं षट्त्रिंशत्तत्त्वनिर्णयम् ।

यो विजानाति तत्त्वेन स गुरुः परमो मतः ॥ ८६॥

८६

शिव से लेकर पृथ्वी तक छत्तीस तत्त्वों के निर्णय को जो यथार्थतः जानता है, वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ शिवादिक्षितिपर्यन्तं — शिव से पृथ्वी तक · षट्त्रिंशत्तत्त्वनिर्णयम् — छत्तीस तत्त्वों का निर्णय · यो विजानाति तत्त्वेन — जो तत्त्व से जानता है · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

अन्तर्यागं बहिर्यागं कलाज्ञानस्थितिं प्रिये ।

बाधामन्त्रविधानञ्च यो वेत्ति स गुरुः प्रिये ॥ ८७॥

८७

अन्तर्याग, बहिर्याग, कलाज्ञान की स्थिति, हे प्रिये! और बाधा-निवारक मन्त्रों का विधान — जो इन्हें जानता है, वह गुरु है, हे प्रिये!

पदपाठ अन्तर्यागं बहिर्यागं — अन्तर्याग और बहिर्याग · कलाज्ञानस्थितिं — कला-ज्ञान की स्थिति · प्रिये — हे प्रिये · बाधामन्त्रविधानञ्च — और बाधा-मन्त्रों का विधान · यो वेत्ति — जो जानता है · स गुरुः प्रिये — वह गुरु है, हे प्रिये

पिण्डब्रह्माण्डयोरैक्यं स्थितिं यो वेत्ति तत्त्वतः ।

शिरास्थिरोमसंख्यादि स गुरुर्नापरः प्रिये ॥ ८८ ॥

८८

जो पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एकता और उसकी स्थिति को तत्त्वतः जानता है, तथा शिराओं, अस्थियों, रोमों आदि की संख्या को जानता है, वही गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ पिण्डब्रह्माण्डयोरैक्यं — पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एकता · स्थितिं यो वेत्ति तत्त्वतः — जो उसकी स्थिति तत्त्वतः जानता है · शिरास्थिरोमसंख्यादि — शिरा, अस्थि, रोम की संख्या आदि · स गुरुर्नापरः प्रिये — वह गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये

पद्मादिचतुरशीतिनानासनविचक्षणः ।

यमाद्यष्टाङ्गयोगज्ञः स गुरुः परमो मतः ॥ ८९ ॥

८९

पद्म आदि चौरासी विविध आसनों में निपुण, यम आदि अष्टाङ्ग योग का ज्ञाता — वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ पद्मादिचतुरशीतिनानासनविचक्षणः — पद्म आदि चौरासी नाना आसनों में निपुण · यमाद्यष्टाङ्गयोगज्ञः — यम आदि अष्टाङ्ग योग का ज्ञाता · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

घृणा शङ्का भयं लज्जा जुगुप्सा चेति पञ्चमी ।

कुलं शीलं तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः ॥ ९० ॥

९०

घृणा, शङ्का, भय, लज्जा, पाँचवीं जुगुप्सा, कुल, शील और जाति — ये आठ पाश कहे गए हैं।

पदपाठ घृणा शङ्का भयं लज्जा — घृणा, शंका, भय, लज्जा · जुगुप्सा चेति पञ्चमी — और जुगुप्सा पाँचवीं · कुलं शीलं तथा जातिः — कुल, शील और जाति · अष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः — ये आठ पाश कहे गए हैं

पाशबद्धः पशुर्ज्ञेयः पाशमुक्तो महेश्वरः ।

९१

तस्मात् पाशहरो यस्तु स गुरुः परमो मतः ॥ ९१ ॥

पाशों से बँधा हुआ पशु जानना चाहिए, पाशों से मुक्त महेश्वर है; इसलिए जो पाशों को हरने वाला है, वह परम गुरु माना गया है।

पदपाठ पाशबद्धः पशुर्ज्ञेयः — पाश से बद्ध पशु जानना चाहिए · पाशमुक्तो महेश्वरः — पाश से मुक्त महेश्वर है · तस्मात् पाशहरो यस्तु — इसलिए जो पाश हरता है · स गुरुः परमो मतः — वह परम गुरु माना गया

बन्धनं योनिमुद्राया मन्त्रचैतन्यदर्शनम् ।

९२

यन्त्रमन्त्रस्वरूपञ्च यो वेत्ति स गुरुः प्रिये ॥ ९२ ॥

योनिमुद्रा का बन्धन, मन्त्रचैतन्य का दर्शन, और यन्त्र-मन्त्र का स्वरूप — जो इन्हें जानता है, वह गुरु है, हे प्रिये!

पदपाठ बन्धनं योनिमुद्रायाः — योनिमुद्रा का बन्धन · मन्त्रचैतन्यदर्शनम् — मन्त्र-चैतन्य का दर्शन · यन्त्रमन्त्रस्वरूपञ्च — और यन्त्र-मन्त्र का स्वरूप · यो वेत्ति — जो जानता है · स गुरुः प्रिये — वह गुरु है, हे प्रिये

विनिक्षिप्तां गतायातां संक्लिष्टां संविनीतकाम् ।

९३

चतुर्विधां मनोऽवस्थां यो वेत्ति स गुरुः प्रिये ॥ ९३ ॥

विनिक्षिप्त, गतायात, संक्लिष्ट और संविनीत — मन की इस चतुर्विध अवस्था को जो जानता है, वह गुरु है, हे प्रिये!

पदपाठ विनिक्षिप्तां — विनिक्षिप्त (विक्षिप्त) · गतायातां — गतायात (आती-जाती) · संक्लिष्टां — संक्लिष्ट · संविनीतकाम् — संविनीत (सुशिक्षित) · चतुर्विधां मनोऽवस्थां — मन की चार अवस्थाएँ · यो वेत्ति — जो जानता है · स गुरुः प्रिये — वह गुरु है, हे प्रिये

मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तसप्ताम्भोजदलेषु यः ।

९४

जीवाचारफलं वेत्ति स गुरुर्नापरः प्रिये ॥ ९४ ॥

मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक सात कमलों के दलों में जीव के आचार और फल को जो जानता है, वही गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तसप्ताम्भोजदलेषु — मूल से ब्रह्मरन्ध्र तक सात कमलों के दलों में · यः — जो · जीवाचारफलं वेत्ति — जीव के आचार और फल को जानता है · स गुरुर्नापरः प्रिये — वह गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये

शिवादिगुरुपर्यन्तं पारम्पर्यक्रमेण यः ।

९५

अवाप्ततत्त्वसम्भारः स गुरुर्नापरः प्रिये ॥ ९५ ॥

जिसने शिव से लेकर अपने गुरु तक परम्परा के क्रम से तत्त्व की सम्पूर्ण सामग्री प्राप्त की है, वही गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ शिवादिगुरुपर्यन्तं — शिव से अपने गुरु तक · पारम्पर्यक्रमेण यः — जो परम्परा-क्रम से · अवाप्ततत्त्वसम्भारः — तत्त्व की पूर्ण सम्पत्ति पाया है · स गुरुर्नापरः प्रिये — वह गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये

येन वा दर्शिते तत्त्वे तत्क्षणात्तन्मयो भवेत् ।

९६

मन्यते मुक्तमात्मानं स गुरुर्नापरः प्रिये ॥ ९६ ॥

जिसके द्वारा तत्त्व दिखाए जाने पर शिष्य उसी क्षण तन्मय हो जाता है और अपने को मुक्त मानता है, वही गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ येन वा दर्शिते तत्त्वे — जिसके द्वारा तत्त्व दिखाए जाने पर · तत्क्षणात् तन्मयो भवेत् — उसी क्षण तन्मय हो जाए · मन्यते मुक्तमात्मानं — अपने को मुक्त माने · स गुरुर्नापरः प्रिये — वह गुरु है, दूसरा नहीं, हे प्रिये

ये दत्त्वा सहजानन्दं हरन्तीन्द्रियजं सुखम् ।

९७

सेव्यास्ते गुरवः शिष्यैरन्ये त्याज्याः प्रतारकाः ॥ ९७ ॥

जो सहजानन्द देकर इन्द्रियजन्य सुख को हर लेते हैं, वे गुरु शिष्यों द्वारा सेवनीय हैं; अन्य ठग त्याज्य हैं।

पदपाठ ये दत्त्वा सहजानन्दं — जो सहजानन्द देकर · हरन्ति इन्द्रियजं सुखम् — इन्द्रियजन्य सुख को हर लेते हैं · सेव्यास्ते गुरवः शिष्यैः — वे गुरु शिष्यों द्वारा सेव्य हैं · अन्ये त्याज्याः प्रतारकाः — अन्य ठग त्याज्य हैं

संसारभयभीतस्य शिष्यस्य गुरुरादरात् ।

९८

व्रतोपवासनियमैर्नियन्ता स गुरुर्मतः ॥ ९८ ॥

संसार के भय से भीत शिष्य को जो आदरपूर्वक व्रत, उपवास और नियमों से नियन्त्रित करता है, वह गुरु माना गया है।

पदपाठ संसारभयभीतस्य शिष्यस्य — संसार के भय से भीत शिष्य का · गुरुः आदरात् — गुरु आदर से · व्रतोपवासनियमैः — व्रत, उपवास, नियमों से · नियन्ता — नियन्ता (नियमन करने वाला) · स गुरुर्मतः — वह गुरु माना गया

यः प्रसन्नः क्षणार्द्धेन मोक्षलक्ष्मीं प्रयच्छति ।

९९

दुर्लभं तं विजानीयाद् गुरुं संसारतारकम् ॥ ९९ ॥

जो प्रसन्न होकर आधे क्षण में मोक्षलक्ष्मी प्रदान करता है, उस संसार से तारने वाले गुरु को दुर्लभ जानना चाहिए।

पदपाठ यः प्रसन्नः क्षणार्द्धेन — जो प्रसन्न होकर आधे क्षण में · मोक्षलक्ष्मीं प्रयच्छति — मोक्ष-लक्ष्मी देता है · दुर्लभं तं विजानीयात् — उसे दुर्लभ जाने · गुरुं संसारतारकम् — संसार से तारने वाला गुरु

यः क्षणेनात्मसामर्थ्यं स्वशिष्याय ददाति हि ।

१००

क्रियायासादिरहितं स गुरुर्देवदुर्लभः ॥ १०० ॥

जो क्षण भर में अपनी सामर्थ्य अपने शिष्य को क्रिया, आयास आदि के बिना दे देता है, वह गुरु देवताओं में भी दुर्लभ है।

पदपाठ यः क्षणेन आत्मसामर्थ्यं — जो क्षण में अपना सामर्थ्य · स्वशिष्याय ददाति हि — अपने शिष्य को देता है · क्रियायासादिरहितं — क्रिया, श्रम आदि से रहित · स गुरुर्देवदुर्लभः — वह गुरु देवों में भी दुर्लभ है

यः सद्यः प्रत्ययकरं सुलभञ्चात्मसौख्यदम् ।

१०१

ज्ञानोपदेशं कुरुते स गुरुर्देवदुर्लभः ॥ १०१ ॥

जो तत्काल प्रतीति कराने वाला, सुलभ और आत्मसुख देने वाला ज्ञानोपदेश करता है, वह गुरु देवताओं में भी दुर्लभ है।

पदपाठ यः सद्यः प्रत्ययकरं — जो तत्काल प्रतीति कराने वाला · सुलभञ्च — सुलभ · आत्मसौख्यदम् — और आत्म-सुख देने वाला · ज्ञानोपदेशं कुरुते — ज्ञान का उपदेश करता है · स गुरुर्देवदुर्लभः — वह गुरु देवों में भी दुर्लभ है

द्वीपाद् द्वीपान्तरं देवि सञ्चरेद्यथा तथा ।

१०२

यो दद्यात् स गुरुर्ज्ञानमभ्यासादिविवर्जितम् ॥ १०२ ॥

जैसे कोई एक द्वीप से दूसरे द्वीप में चला जाता है, हे देवि! वैसे ही जो अभ्यास आदि के बिना ज्ञान दे देता है, वह गुरु है।

पदपाठ द्वीपाद् द्वीपान्तरं — एक द्वीप से दूसरे द्वीप · देवि — हे देवि · सञ्चरेद् यथा तथा — जैसे पार कर जाए, वैसे · यो दद्यात् स गुरुः — जो देता है वह गुरु है · ज्ञानम् — ज्ञान · अभ्यासादिविवर्जितम् — अभ्यास आदि से रहित

क्षुधितस्य यथा तृप्तिराहारादाशु जायते ।

१०३

तथोपदेशमात्रेण ज्ञानदो दुर्लभो गुरुः ॥ १०३ ॥

जैसे भूखे को भोजन से तुरन्त तृप्ति होती है, वैसे ही उपदेश मात्र से ज्ञान देने वाला गुरु दुर्लभ है।

पदपाठ क्षुधितस्य यथा तृप्तिः — जैसे भूखे को तृप्ति · आहारात् आशु जायते — आहार से शीघ्र होती है · तथा उपदेशमात्रेण — वैसे उपदेश मात्र से · ज्ञानदः — ज्ञान देने वाला · दुर्लभो गुरुः — दुर्लभ गुरु है

गुरवो बहवः सन्ति दीपवच्च गृहे गृहे ।

१०४

दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि सूर्यवत् सर्वदीपकः ॥ १०४ ॥

घर-घर में दीपक की भाँति गुरु बहुत हैं; हे देवि! सूर्य की भाँति सबको प्रकाशित करने वाला यह गुरु दुर्लभ है।

पदपाठ गुरवो बहवः सन्ति — गुरु बहुत हैं · दीपवच्च गृहे गृहे — घर-घर दीपक की तरह · दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि — दुर्लभ है यह गुरु, हे देवि · सूर्यवत् सर्वदीपकः — सूर्य की तरह सबको प्रकाशित करने वाला

गुरवो बहवः सन्ति वेदशास्त्रादिपारगाः ।

१०५

दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि परतत्त्वार्थपारगः ॥ १०५ ॥

वेद, शास्त्र आदि में पारङ्गत गुरु बहुत हैं; हे देवि! परतत्त्व के अर्थ में पारङ्गत यह गुरु दुर्लभ है।

पदपाठ गुरवो बहवः सन्ति — गुरु बहुत हैं · वेदशास्त्रादिपारगाः — वेद-शास्त्र आदि में पारंगत · दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि — दुर्लभ है यह गुरु, हे देवि · परतत्त्वार्थपारगः — परतत्त्व के अर्थ में पारंगत

गुरवो बहवः सन्ति आत्मनोऽन्यप्रदा भुवि ।

१०६

दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि लोकेष्वात्मप्रकाशकः ॥ १०६ ॥

पृथ्वी पर आत्मा से भिन्न वस्तु देने वाले गुरु बहुत हैं; हे देवि! लोकों में आत्मा का प्रकाश करने वाला यह गुरु दुर्लभ है।

पदपाठ गुरवो बहवः सन्ति — गुरु बहुत हैं · आत्मनोऽन्यप्रदा भुवि — पृथ्वी पर आत्मा से अन्य देने वाले · दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि — दुर्लभ है यह गुरु, हे देवि · लोकेषु आत्मप्रकाशकः — लोकों में आत्मा का प्रकाशक

गुरवो बहवः सन्ति कुमन्त्रौषधिवेदिनः ।

१०७

निगमागमशास्त्रोक्तमन्त्रज्ञो दुर्लभो भुवि ॥ १०७ ॥

कुमन्त्र और औषधियों को जानने वाले गुरु बहुत हैं; निगम, आगम और शास्त्रों में कहे मन्त्रों का ज्ञाता पृथ्वी पर दुर्लभ है।

पदपाठ गुरवो बहवः सन्ति — गुरु बहुत हैं · कुमन्त्रौषधिवेदिनः — कुमन्त्र और औषधि जानने वाले · निगमागमशास्त्रोक्तमन्त्रज्ञः — निगम, आगम, शास्त्र में कहे मन्त्रों का ज्ञाता · दुर्लभो भुवि — पृथ्वी पर दुर्लभ है

गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः ।

१०८

दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि शिष्यदुःखापहारकः ॥ १०८ ॥

शिष्यों का धन हरने वाले गुरु बहुत हैं; हे देवि! शिष्यों का दुःख हरने वाला यह गुरु दुर्लभ है।

पदपाठ गुरवो बहवः सन्ति — गुरु बहुत हैं · शिष्यवित्तापहारकाः — शिष्यों का धन हरने वाले · दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि — दुर्लभ है यह गुरु, हे देवि · शिष्यदुःखापहारकः — शिष्यों का दुःख हरने वाला

वर्णाश्रमकुलाचारनिरता बहवो भुवि ।

१०९

सर्वसङ्कल्पहीनो यः स गुरुर्देवि दुर्लभः ॥ १०९ ॥

वर्ण, आश्रम और कुल के आचार में रत लोग पृथ्वी पर बहुत हैं; जो सब सङ्कल्पों से रहित है, वह गुरु, हे देवि! दुर्लभ है।

पदपाठ वर्णाश्रमकुलाचारनिरताः — वर्ण, आश्रम, कुल के आचार में निरत · बहवो भुवि — पृथ्वी पर बहुत हैं · सर्वसङ्कल्पहीनो यः — जो सब संकल्पों से रहित है · स गुरुर्देवि दुर्लभः — वह गुरु, हे देवि, दुर्लभ है

गुरोर्यस्यैव सम्पर्कात् परानन्दोऽभिजायते ।

११०

गुरुं तमेव वृणुयान्नापरं मतिमान्नरः ॥ ११० ॥

जिस गुरु के सम्पर्क मात्र से परानन्द उत्पन्न होता है, बुद्धिमान् मनुष्य उसी गुरु को चुने, दूसरे को नहीं।

पदपाठ गुरोर्यस्यैव सम्पर्कात् — जिस गुरु के ही सम्पर्क से · परानन्दोऽभिजायते — परानन्द उत्पन्न होता है · गुरुं तमेव वृणुयात् — उसी गुरु को चुने · नापरं — दूसरे को नहीं · मतिमान् नरः — बुद्धिमान् मनुष्य

यस्यानुभवपर्यन्तं बुद्धिस्तत्र प्रवर्तते ।

१११

तस्यालोकनमात्रेण मुच्यते नात्र संशयः ॥ १११ ॥

जिसकी बुद्धि अनुभव की सीमा तक पहुँचती है, उसके दर्शन मात्र से मनुष्य मुक्त हो जाता है; इसमें संशय नहीं।

पदपाठ यस्यानुभवपर्यन्तं — जिसके अनुभव की सीमा तक · बुद्धिस्तत्र प्रवर्तते — बुद्धि वहाँ पहुँचती है · तस्यालोकनमात्रेण — उसके दर्शन मात्र से · मुच्यते — मुक्त होता है · नात्र संशयः — इसमें सन्देह नहीं

शङ्कया भक्षितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।
सा शङ्का भक्षिता येन स गुरुर्देवि दुर्लभः ॥ ११२ ॥

११२

शङ्का ने चराचर सहित सम्पूर्ण त्रैलोक्य को खा लिया है; जिसने उस शङ्का को खा लिया, वह गुरु, हे देवि! दुर्लभ है।

पदपाठ शङ्कया भक्षितं सर्वं — शंका ने सब खा लिया · त्रैलोक्यं सचराचरम् — चराचर सहित त्रैलोक्य · सा शङ्का भक्षिता येन — जिसने वह शंका खा ली · स गुरुर्देवि दुर्लभः — वह गुरु, हे देवि, दुर्लभ है

यथा वह्निसमीपस्थं नवनीतं विलीयते ।
तथा पापं विलीयते सदाचार्यसमीपतः ॥ ११३ ॥

११३

जैसे अग्नि के समीप रखा मक्खन पिघल जाता है, वैसे ही सदाचार्य के समीप पाप गल जाता है।

पदपाठ यथा वह्निसमीपस्थं — जैसे अग्नि के समीप रखा · नवनीतं विलीयते — मक्खन गल जाता है · तथा पापं विलीयते — वैसे पाप गल जाता है · सदाचार्यसमीपतः — सदाचार्य के समीप से

यथा दीप्तानलः काष्ठं शुष्कमार्द्रञ्च निर्दहेत् ।
तथा गुरुकटाक्षस्तु शिष्यपापं दहेत् क्षणात् ॥ ११४ ॥

११४

जैसे प्रज्वलित अग्नि सूखी और गीली लकड़ी को जला देती है, वैसे ही गुरु का कटाक्ष शिष्य के पाप को क्षण भर में जला देता है।

पदपाठ यथा दीप्तानलः — जैसे प्रदीप्त अग्नि · काष्ठं शुष्कम् आर्द्रञ्च निर्दहेत् — सूखी और गीली लकड़ी को जला देती है · तथा गुरुकटाक्षस्तु — वैसे गुरु का कटाक्ष · शिष्यपापं दहेत् क्षणात् — शिष्य के पाप को क्षण में जला देता है

यथा महानिलोद्धूतं तूलं दशदिशो ब्रजेत् ।

११५

तथैव गुरुकारुण्यात् पापराशिः पलायते ॥ ११५॥

जैसे प्रचण्ड वायु से उड़ाई गई रुई दसों दिशाओं में चली जाती है, वैसे ही गुरु की करुणा से पापों का ढेर भाग जाता है।

पदपाठ यथा महानिलोद्धूतं — जैसे महावायु से उड़ाई · तूलं दशदिशो ब्रजेत् — रुई दस दिशाओं में जाती है · तथैव गुरुकारुण्यात् — वैसे ही गुरु की करुणा से · पापराशिः पलायते — पाप-राशि भाग जाती है

दीपदर्शनमात्रेण प्रणश्यति तमो यथा ।

११६

सद्गुरोर्दर्शनाद्देवि तथाऽज्ञानं विनश्यति ॥ ११६॥

जैसे दीपक के दर्शन मात्र से अन्धकार नष्ट हो जाता है, वैसे ही, हे देवि! सद्गुरु के दर्शन से अज्ञान नष्ट हो जाता है।

पदपाठ दीपदर्शनमात्रेण — दीपक के दर्शन मात्र से · प्रणश्यति तमो यथा — जैसे अन्धकार नष्ट होता है · सद्गुरोर्दर्शनात् देवि — सद्गुरु के दर्शन से, हे देवि · तथा अज्ञानं विनश्यति — वैसे अज्ञान नष्ट होता है

सर्वलक्षणसम्पन्नो वेदशास्त्रविधानवित् ।

११७

सर्वोपायविधानज्ञस्तत्त्वज्ञानी गुरुः स हि ॥ ११७॥

सब लक्षणों से सम्पन्न, वेद और शास्त्र के विधान का ज्ञाता, सब उपायों के विधान का ज्ञाता, तत्त्वज्ञानी — वही गुरु है।

पदपाठ सर्वलक्षणसम्पन्नः — सब लक्षणों से सम्पन्न · वेदशास्त्रविधानवित् — वेद-शास्त्र के विधान का ज्ञाता · सर्वोपायविधानज्ञः — सब उपायों के विधान का ज्ञाता · तत्त्वज्ञानी — तत्त्वज्ञानी · गुरुः स हि — वही गुरु है

पूजाहोमाश्रमाचारतपस्तीर्थव्रतादिकम् ।

११८

मन्त्रागमादिविज्ञानं तत्त्वहीनस्य निष्फलम् ॥ ११८ ॥

पूजा, होम, आश्रमाचार, तप, तीर्थ, व्रत आदि तथा मन्त्र, आगम आदि का विज्ञान — तत्त्वहीन के लिए सब निष्फल है।

पदपाठ पूजाहोमाश्रमाचारतपस्तीर्थव्रतादिकम् — पूजा, होम, आश्रम-आचार, तप, तीर्थ, व्रत आदि · मन्त्रागमादिविज्ञानं — मन्त्र, आगम आदि का विज्ञान · तत्त्वहीनस्य निष्फलम् — तत्त्वहीन के लिए निष्फल है

स्वयं वेद्ये परे तत्त्वे स्वात्मानं वेत्ति निश्चलः ।

११९

आत्मनोऽनुग्रहो नास्ति परस्यानुग्रहः कथम् ॥ ११९ ॥

जो स्वयं वेद्य परम तत्त्व में निश्चल होकर अपनी आत्मा को नहीं जानता, उसका अपने पर ही अनुग्रह नहीं है — दूसरे पर अनुग्रह कैसे हो?

पदपाठ स्वयं वेद्ये परे तत्त्वे — स्वयं वेद्य पर तत्त्व में · स्वात्मानं वेत्ति निश्चलः — जो निश्चल होकर अपनी आत्मा को नहीं जानता · आत्मनोऽनुग्रहो नास्ति — उसका अपने पर अनुग्रह नहीं · परस्यानुग्रहः कथम् — दूसरे पर अनुग्रह कैसे?

षट्प्रकारं मनोरूपं प्रत्यक्षं स्वतनुस्थितम् ।

१२०

यो न जानाति चान्यस्य कथं मोक्षं ददात्यसौ ॥ १२० ॥

जो अपने ही शरीर में स्थित, प्रत्यक्ष, छह प्रकार के मनोरूप को नहीं जानता, वह दूसरे को मोक्ष कैसे दे सकता है?

पदपाठ षट्प्रकारं मनोरूपं — छह प्रकार का मनोरूप · प्रत्यक्षं स्वतनुस्थितम् — प्रत्यक्ष, अपने शरीर में स्थित · यो न जानाति — जो नहीं जानता · च अन्यस्य — और दूसरे का · कथं मोक्षं ददात्यसौ — वह मोक्ष कैसे दे?

सर्वलक्षणहीनोऽपि तत्त्वज्ञानी गुरुः स्मृतः ।

१२१

तस्मात्तत्त्वविदेवेह मुक्तो मोचक एव च ॥ १२१ ॥

सब लक्षणों से हीन होने पर भी तत्त्वज्ञानी गुरु माना गया है; इसलिए यहाँ तत्त्ववेत्ता ही मुक्त और मोचक है।

पदपाठ सर्वलक्षणहीनोऽपि — सब लक्षणों से हीन भी · तत्त्वज्ञानी गुरुः स्मृतः — तत्त्वज्ञानी गुरु माना गया · तस्मात् तत्त्वविदेव इह — इसलिए तत्त्ववेत्ता ही यहाँ · मुक्तो मोचक एव च — मुक्त और मोचक (मुक्त करने वाला) है

यस्तत्त्वविन्महेशानि स पशुं बोधयत्यपि ।

१२२

तत्त्वहीनात् कुतोऽध्यात्मतत्त्वज्ञानपरिग्रहः ॥ १२२ ॥

जो तत्त्ववेत्ता है, हे महेशानि! वह पशु को भी बोध करा देता है; तत्त्वहीन से अध्यात्म-तत्त्वज्ञान की प्राप्ति कहाँ से हो?

पदपाठ यस्तत्त्ववित् — जो तत्त्ववेत्ता है · महेशानि — हे महेशानि · स पशुं बोधयत्यपि — वह पशु को भी बोध देता है · तत्त्वहीनात् कुतः — तत्त्वहीन से कहाँ · अध्यात्मतत्त्वज्ञानपरिग्रहः — अध्यात्म-तत्त्वज्ञान की प्राप्ति?

तत्त्वज्ञैरुपदिष्टा ये तत्त्वाज्ञस्ते न संशयः ।

१२३

पशुभिश्चोपदिष्टा ये देवि ते पशवः स्मृताः ॥ १२३ ॥

जो तत्त्वज्ञों से उपदिष्ट हैं वे निःसन्देह तत्त्वज्ञ हैं; और जो पशुओं से उपदिष्ट हैं, हे देवि! वे पशु माने गए हैं।

पदपाठ तत्त्वज्ञैरुपदिष्टा ये — तत्त्वज्ञों द्वारा जो उपदिष्ट · तत्त्वाज्ञस्ते न संशयः — वे तत्त्वज्ञ हैं, सन्देह नहीं · पशुभिश्चोपदिष्टा ये — और पशुओं द्वारा जो उपदिष्ट · देवि — हे देवि · ते पशवः स्मृताः — वे पशु माने गए हैं

विद्धस्तु वेधयेद्देवि नाविद्धो वेधको भवेत् ।

१२४

मुक्तस्तु मोचयेद् बद्धं न मुक्तो मोचकः कथम् ॥ १२४ ॥

विद्ध ही वेध कर सकता है, हे देवि! अविद्ध वेधक नहीं हो सकता। मुक्त ही बद्ध को मुक्त करे; जो स्वयं मुक्त नहीं वह मोचक कैसे हो?

पदपाठ विद्धस्तु वेधयेद् देवि — विद्ध (वेधित) ही वेध करे, हे देवि · नाविद्धो वेधको भवेत् — अविद्ध वेधक नहीं हो सकता · मुक्तस्तु मोचयेद् बद्धं — मुक्त ही बद्ध को मुक्त करे · न मुक्तो मोचकः कथम् — अमुक्त मोचक कैसे?

अभिज्ञश्चोद्धरेन्मूर्खं न मूर्खो मूर्खमुद्धरेत् ।

१२५

शिलां सन्तारयेन्नौहि किं शिला तारयेच्छिलाम् ॥ १२५ ॥

ज्ञानी मूर्ख का उद्धार कर सकता है, मूर्ख मूर्ख का उद्धार नहीं कर सकता। नाव पत्थर को पार लगा सकती है; क्या पत्थर पत्थर को पार लगा सकता है?

पदपाठ अभिज्ञश्चोद्धरेन्मूर्खं — अभिज्ञ मूर्ख का उद्धार करे · न मूर्खो मूर्खमुद्धरेत् — मूर्ख मूर्ख का उद्धार नहीं कर सकता · शिलां सन्तारयेन्नौहि — नौका शिला को पार लगा दे · किं शिला तारयेच्छिलाम् — क्या शिला शिला को पार लगाए?

तत्त्वहीनं गुरुं लब्ध्वा केवलं भवतत्परः ।

१२६

इहामुत्र फलं किञ्चित् स नरो नाप्नुयात् प्रिये ॥ १२६ ॥

तत्त्वहीन, केवल संसार में तत्पर गुरु को पाकर वह मनुष्य इस लोक और परलोक में कोई फल नहीं पाता, हे प्रिये!

पदपाठ तत्त्वहीनं गुरुं लब्ध्वा — तत्त्वहीन गुरु को पाकर · केवलं भवतत्परः — केवल भव (संसार) में तत्पर · इहामुत्र फलं किञ्चित् — इस लोक और परलोक में कोई फल · स नरो नाप्नुयात् — वह मनुष्य नहीं पाता · प्रिये — हे प्रिये

शैवे गुरुत्रयं प्रोक्तं वैष्णवे गुरुपञ्चकम् ।

वेदशास्त्रेषु शतशो गुरुरेकः कुलान्वये ॥ १२७ ॥

१२७

शैव मत में तीन गुरु कहे गए हैं, वैष्णव में पाँच गुरु, वेद और शास्त्रों में सैकड़ों; कुल की परम्परा में गुरु एक ही है।

पदपाठ शैवे गुरुत्रयं प्रोक्तं — शैव में तीन गुरु कहे गए · वैष्णवे गुरुपञ्चकम् — वैष्णव में पाँच गुरु · वेदशास्त्रेषु शतशः — वेद-शास्त्रों में सैकड़ों · गुरुरेकः कुलान्वये — कुल-परम्परा में गुरु एक है

प्रेरकः सूचकश्चैव वाचको दर्शकस्तथा ।

शिक्षको बोधकश्चैव षडेते गुरवः स्मृताः ॥ १२८ ॥

१२८

प्रेरक, सूचक, वाचक, दर्शक, शिक्षक और बोधक — ये छह गुरु माने गए हैं।

पदपाठ प्रेरकः — प्रेरक · सूचकश्चैव — और सूचक · वाचकः — वाचक · दर्शकस्तथा — और दर्शक · शिक्षकः — शिक्षक · बोधकश्चैव — और बोधक · षडेते गुरवः स्मृताः — ये छह गुरु माने गए हैं

पञ्चैते कार्यभूताः स्युः कारणं बोधको भवेत् ।

पूर्णाभिषेककर्ता यो गुरुस्तस्यैव पादुका ।

१२९

पूजनीया महेशानि बहुत्वेऽपि न संशयः ॥ १२९ ॥

ये पाँच कार्यरूप हैं; बोधक कारण है। जो गुरु पूर्णाभिषेक करता है, उसी की पादुका पूजनीय है, हे महेशानि! गुरु बहुत होने पर भी, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ पञ्चैते कार्यभूताः स्युः — ये पाँच कार्यभूत हैं · कारणं बोधको भवेत् — बोधक कारण है · पूर्णाभिषेककर्ता यो गुरुः — जो गुरु पूर्णाभिषेक करता है · तस्यैव पादुका — उसी की पादुका · पूजनीया महेशानि — पूजनीय है, हे महेशानि · बहुत्वेऽपि न संशयः — बहुत होने पर भी, सन्देह नहीं

श्रीगुरुं लक्षणोपेतं संशयच्छेदकारकम् ।

१३०

लब्ध्वा ज्ञानप्रदं देवि न गुर्वन्तरमाश्रयेत् ॥ १३० ॥

लक्षणों से युक्त, संशय का छेदन करने वाले, ज्ञान देने वाले श्रीगुरु को पाकर, हे देवि! दूसरे गुरु का आश्रय न ले।

पदपाठ श्रीगुरुं लक्षणोपेतं — लक्षणों से युक्त श्रीगुरु को · संशयच्छेदकारकम् — संशय का छेदन करने वाले को · लब्ध्वा ज्ञानप्रदं — ज्ञान देने वाले को पाकर · देवि — हे देवि · न गुर्वन्तरमाश्रयेत् — अन्य गुरु का आश्रय न ले

अनभिज्ञं गुरुं प्राप्य सदा संशयकारकम् ।

१३१

गुर्वन्तरन्तु गत्वा स नैतद्दोषेण लिप्यते ॥ १३१ ॥

सदा संशय उत्पन्न करने वाले अज्ञानी गुरु को पाकर यदि कोई दूसरे गुरु के पास चला जाए तो वह इस दोष से लिप्त नहीं होता।

पदपाठ अनभिज्ञं गुरुं प्राप्य — अनभिज्ञ गुरु को पाकर · सदा संशयकारकम् — सदा संशय कराने वाले · गुर्वन्तरन्तु गत्वा — अन्य गुरु के पास जाए तो · स नैतद्दोषेण लिप्यते — वह इस दोष से लिप्त नहीं होता

मधुलुब्धो यथा भृङ्गः पुष्पात् पुष्पान्तरं व्रजेत् ।

१३२

ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यः गुरोर्गुर्वन्तरं व्रजेत् ॥ १३२ ॥

जैसे मधु का लोभी भ्रमर एक फूल से दूसरे फूल पर जाता है, वैसे ही ज्ञान का लोभी शिष्य एक गुरु से दूसरे गुरु के पास जा सकता है।

पदपाठ मधुलुब्धो यथा भृङ्गः — जैसे मधु-लोभी भ्रमर · पुष्पात् पुष्पान्तरं व्रजेत् — एक फूल से दूसरे फूल पर जाता है · ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यः — वैसे ज्ञान-लोभी शिष्य · गुरोर्गुर्वन्तरं व्रजेत् — एक गुरु से दूसरे गुरु के पास जाए

इति ते कथितं किञ्चिल्लक्षणं गुरुशिष्ययोः ।
समासेन कुलेशानि किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १३३ ॥

१३३

इस प्रकार गुरु और शिष्य के लक्षण संक्षेप में तुम्हें कुछ कहे गए, हे कुलेशानि! अब और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · लक्षणं गुरुशिष्ययोः — गुरु और शिष्य के लक्षण · समासेन — संक्षेप में · कुलेशानि — हे कुलेशानि · किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे गुरुशिष्यलक्षणं नाम त्रयोदशोल्लासः ॥ १३ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
गुरुशिष्यलक्षण नामक त्रयोदश उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ चतुर्दशोल्लासः

चतुर्दश उल्लास — गुरुशिष्यपरीक्षाकथनम्



ईश्वर बताते हैं कि उपदेश से पहले गुरु और शिष्य को परस्पर परीक्षा क्यों करनी चाहिए, योग्य शिष्य और योग्य गुरु के लक्षण, शिष्यों के तीन स्तर, सप्तविध दीक्षा (क्रिया, वर्ण, कला, स्पर्श, वाक्, दृक् और मानस) तथा वेध-दीक्षा और उसकी छह अवस्थाएँ, समयी से आचार्य तक के अभिषेक, और दीक्षा की जातिभेद मिटाने तथा पाप दग्ध करने की शक्ति।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि परीक्षां गुरुशिष्ययोः ।

१

उपदेशक्रमं दीक्षाभेदांश्च वद मे प्रभो ॥ १॥

हे कुलेश! मैं गुरु और शिष्य की परीक्षा, उपदेश का क्रम और दीक्षा के भेद सुनना चाहती हूँ — हे प्रभो! मुझे बताइए।

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · परीक्षां गुरुशिष्ययोः — गुरु और शिष्य की परीक्षा · उपदेशक्रमं — उपदेश का क्रम · दीक्षाभेदांश्च — और दीक्षा के भेद · वद मे प्रभो — मुझे बताइए, हे प्रभो

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण चित्तशुद्धिः प्रजायते ॥ २ ॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से चित्त की शुद्धि हो जाती है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · चित्तशुद्धिः प्रजायते — चित्तशुद्धि उत्पन्न होती है

विना दीक्षां न मोक्षः स्यात्तदुक्तं शिवशासने ।

सा च न स्याद्विनाचार्यमित्याचार्यपरम्परा ॥ ३ ॥

३

दीक्षा के बिना मोक्ष नहीं होता — ऐसा शिवशासन में कहा गया है; और वह दीक्षा आचार्य के बिना नहीं होती — इसीलिए आचार्य-परम्परा है।

पदपाठ विना दीक्षां — दीक्षा के बिना · न मोक्षः स्यात् — मोक्ष नहीं होता · तदुक्तं शिवशासने — ऐसा शिव-शासन में कहा गया है · सा च न स्यात् — और वह नहीं हो सकती · विना आचार्यम् — आचार्य के बिना · इति आचार्यपरम्परा — इसलिए आचार्य-परम्परा

तस्मात् सिद्धान्तं सम्प्राप्य सम्प्रदायादिहेतुभिः ।

अन्तरेणोपदेष्टारं मन्त्राः स्युर्निष्फला यतः ॥ ४ ॥

४

इसलिए सम्प्रदाय आदि साधनों से सिद्धान्त प्राप्त करना चाहिए, क्योंकि उपदेष्टा के बिना मन्त्र निष्फल हो जाते हैं।

पदपाठ तस्मात् — इसलिए · सिद्धान्तं सम्प्राप्य — सिद्धान्त को प्राप्त कर · सम्प्रदायादिहेतुभिः — सम्प्रदाय आदि हेतुओं से · अन्तरेण उपदेष्टारं — उपदेशक के बिना · मन्त्राः स्युः निष्फलाः यतः — क्योंकि मन्त्र निष्फल हो जाते हैं

देवास्तमेव शंसन्ति पारम्पर्यप्रवर्तकम् ।

गुरुं मन्त्रागमाभिज्ञं समयाचारपालकम् ॥ ५॥

५

देवता उसी गुरु की प्रशंसा करते हैं जो परम्परा का प्रवर्तक है, मन्त्र और आगम का ज्ञाता है और समयाचार का पालक है।

पदपाठ देवाः तम् एव शंसन्ति — देवता उसी की प्रशंसा करते हैं · पारम्पर्यप्रवर्तकम् — परम्परा को चलाने वाले · गुरुं मन्त्रागमाभिज्ञं — मन्त्र और आगम के ज्ञाता गुरु · समयाचारपालकम् — समयाचार का पालक

गुरुः शिष्याधिकारार्थं विरक्तोऽपि शिवाज्ञया ।

किञ्चित्कालं विधायेत्यं स्वशिष्याय समर्पयेत् ॥ ६॥

६

गुरु विरक्त होने पर भी शिव की आज्ञा से शिष्य के अधिकार के लिए कुछ काल तक इस प्रकार आचरण करके अपने शिष्य को (अधिकार) सौंप दे।

पदपाठ गुरुः — गुरु · शिष्याधिकारार्थं — शिष्य के अधिकार के लिए · विरक्तः अपि — विरक्त होकर भी · शिवाज्ञया — शिव की आज्ञा से · किञ्चित्कालं विधाय — कुछ काल (साधना) करके · इत्थं — इस प्रकार · स्वशिष्याय समर्पयेत् — अपने शिष्य को समर्पित करे

तस्यार्पिताधिकारस्य योगः साक्षात् परे शिवे ।

देहान्ते शाश्वती मुक्तिरिति शङ्करभाषितम् ॥ ७॥

७

जिसने अपना अधिकार सौंप दिया है, उसका साक्षात् परशिव में योग होता है और देहान्त में शाश्वत मुक्ति — ऐसा शङ्कर ने कहा है।

पदपाठ तस्य अर्पिताधिकारस्य — जिसने अधिकार समर्पित कर दिया, उसका · योगः साक्षात् परे शिवे — पर शिव में साक्षात् योग · देहान्ते शाश्वती मुक्तिः — देहान्त में शाश्वत मुक्ति · इति शङ्करभाषितम् — यह शंकर का कथन है

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन साक्षात्परशिवोदितम् ।
सम्प्रदायमविच्छिन्नं सदा कुर्यात् गुरुः प्रिये ॥ ८ ॥

८

इसलिए हे प्रिये! गुरु सर्वप्रयत्न से साक्षात् परशिव द्वारा कहे गए सम्प्रदाय को सदा अविच्छिन्न रखे।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · साक्षात् परशिवोदितम् — साक्षात् परशिव द्वारा कहा गया · सम्प्रदायम् अविच्छिन्नं — अविच्छिन्न सम्प्रदाय · सदा कुर्यात् गुरुः प्रिये — गुरु सदा चलाए, हे प्रिये

शक्तिसिद्धिसुसिद्ध्यर्थं परीक्ष्य विधिवद् गुरुः ।
पश्चादुपदिशेन्मन्त्रमन्यथा निष्फलं भवेत् ॥ ९ ॥

९

शक्ति की सिद्धि के भली-भाँति सिद्ध होने के लिए गुरु विधिपूर्वक परीक्षा करके ही पीछे मन्त्र का उपदेश करे; अन्यथा वह निष्फल हो जाता है।

पदपाठ शक्तिसिद्धिसुसिद्ध्यर्थं — शक्ति-सिद्धि की सुसिद्धि के लिए · परीक्ष्य विधिवद् गुरुः — गुरु विधिवत् परीक्षा कर · पश्चाद् उपदिशेत् मन्त्रम् — बाद में मन्त्र का उपदेश करे · अन्यथा निष्फलं भवेत् — अन्यथा निष्फल होता है

अन्यायेन तु यो दद्याद् गृह्णात्यन्यायतश्च यः ।
ददता गृह्णता देवि कुलशापो भविष्यति ॥ १० ॥

१०

जो अन्याय से देता है और जो अन्याय से लेता है — हे देवि! देने वाले और लेने वाले दोनों को कुल का शाप होगा।

पदपाठ अन्यायेन तु यः दद्यात् — पर जो अन्याय से दे · गृह्णाति अन्यायतः च यः — और जो अन्याय से ग्रहण करे · ददता गृह्णता देवि — देने और लेने वाले को, हे देवि · कुलशापः भविष्यति — कुल का शाप होगा

गुरुशिष्यावुभौ मोहादपरीक्ष्य परस्परम् ।

११

उपदेशं ददद् गृह्णन् प्राप्नुयातां पिशाचताम् ॥ ११ ॥

गुरु और शिष्य दोनों जो मोहवश परस्पर परीक्षा किए बिना उपदेश देते और लेते हैं, वे पिशाचता को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ गुरुशिष्यौ उभौ — गुरु और शिष्य दोनों · मोहात् — मोह से · अपरीक्ष्य परस्परम् — परस्पर बिना परीक्षा · उपदेशं ददद् गृह्णन् — उपदेश देते-लेते · प्राप्नुयातां पिशाचताम् — दोनों पिशाचता पाते हैं

अशास्त्रीयोपदेशञ्च यो गृह्णाति ददाति हि ।

१२

भुञ्जाते तावुभौ घोरान्नरकानेकविंशतिम् ॥ १२ ॥

जो अशास्त्रीय उपदेश लेता है और जो देता है — वे दोनों इक्कीस घोर नरकों को भोगते हैं।

पदपाठ अशास्त्रीयोपदेशं च — और अशास्त्रीय उपदेश · यः गृह्णाति ददाति हि — जो लेता या देता है · भुञ्जाते तौ उभौ — वे दोनों भोगते हैं · घोरान् नरकान् एकविंशतिम् — इक्कीस घोर नरक

असंस्कृतोपदेशञ्च यः करोति स पातकी ।

१३

विनश्यति च तन्मन्त्रं सैकते शालिबीजवत् ॥ १३ ॥

जो असंस्कृत (संस्कारहीन) को उपदेश देता है वह पातकी है, और वह मन्त्र बालू में बोए धान के बीज की तरह नष्ट हो जाता है।

पदपाठ असंस्कृतोपदेशं च — और असंस्कृत को उपदेश · यः करोति स पातकी — जो करता है वह पातकी है · विनश्यति च तन्मन्त्रं — और वह मन्त्र नष्ट हो जाता है · सैकते शालिबीजवत् — बालू में धान के बीज की तरह

अनर्हे मन्त्रविज्ञानं न तिष्ठति कदाचन ।

१४

तस्मात् परीक्ष्य कर्तव्यमन्यथा निष्फलं भवेत् ॥ १४ ॥

अयोग्य में मन्त्र का विज्ञान कभी नहीं ठहरता; इसलिए परीक्षा करके ही (उपदेश) करना चाहिए, अन्यथा वह निष्फल हो जाता है।

पदपाठ अनर्हे — अनधिकारी में · मन्त्रविज्ञान — मन्त्र-विज्ञान · न तिष्ठति कदाचन — कभी नहीं ठहरता · तस्मात् परीक्ष्य कर्तव्यम् — इसलिए परीक्षा करके करना चाहिए · अन्यथा निष्फलं भवेत् — अन्यथा निष्फल होता है

कृत्वा समयदीक्षाञ्च दत्त्वा समयपादुकाम् ।

१५

सन्निधायात्मनः शिष्यं वदेन्मन्त्रं न चान्यथा ॥ १५ ॥

समय-दीक्षा करके और समय-पादुका देकर, शिष्य को अपने समीप बैठाकर मन्त्र कहे — अन्यथा नहीं।

पदपाठ कृत्वा समयदीक्षां च — और समय-दीक्षा करके · दत्त्वा समयपादुकाम् — समय-पादुका देकर · सन्निधाय आत्मनः शिष्यं — शिष्य को अपने सन्निधान में लाकर · वदेत् मन्त्रं — मन्त्र कहे · न च अन्यथा — और अन्यथा नहीं

सच्छिष्यायातिभक्ताय यज्ज्ञानमुपदिश्यते ।

१६

तज्ज्ञानं तत्तु शास्त्रार्थं तद्विदध्यादखण्डितम् ॥ १६ ॥

सच्छिष्य और अति भक्त को जो ज्ञान उपदेश किया जाता है, उस ज्ञान और शास्त्रार्थ को वह अखण्डित रूप से स्थापित करे।

पदपाठ सच्छिष्याय अतिभक्ताय — अतिभक्त सच्छिष्य को · यत् ज्ञानम् उपदिश्यते — जो ज्ञान उपदिष्ट किया जाता है · तत् ज्ञानं तत्तु शास्त्रार्थं — वह ज्ञान और वह शास्त्रार्थ · तत् विदध्यात् अखण्डितम् — उसे अखण्डित स्थापित करे

असच्छिष्येष्वभक्तेषु यज्ज्ञानमुपदिश्यते ।
तत् प्रयात्यपवित्रत्वं गोक्षीरं श्वघृतादिव ॥ १७ ॥

१७

असच्छिष्यों और अभक्तों को जो ज्ञान उपदेश किया जाता है, वह कुत्ते के घी से गाय के दूध की तरह अपवित्र हो जाता है।

पदपाठ असच्छिष्येषु अभक्तेषु — असच्छिष्यों, अभक्तों में · यत् ज्ञानम् उपदिश्यते — जो ज्ञान उपदिष्ट किया जाता है · तत् प्रयाति अपवित्रत्वं — वह अपवित्रता को जाता है · गोक्षीरं श्वघृतात् इव — कुत्ते के घी से गौ-दूध की तरह

धनेच्छाभयलोभाद्यैरयोग्यं यदि दीक्षयेत् ।
देवताशापमाप्नोति कृतञ्च निष्फलं भवेत् ॥ १८ ॥

१८

यदि धन की इच्छा, भय, लोभ आदि से अयोग्य को दीक्षा दे, तो वह देवता के शाप को प्राप्त होता है और किया हुआ निष्फल हो जाता है।

पदपाठ धनेच्छाभयलोभाद्यैः — धन की इच्छा, भय, लोभ आदि से · अयोग्यं यदि दीक्षयेत् — यदि अयोग्य को दीक्षा दे · देवताशापम् आप्नोति — देवता का शाप पाता है · कृतं च निष्फलं भवेत् — और किया हुआ निष्फल होता है

ज्ञानेन क्रियया वापि गुरुः शिष्यं परीक्षयेत् ।
संवत्सरं तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा प्रयत्नतः ॥ १९ ॥

१९

ज्ञान से अथवा क्रिया से गुरु प्रयत्नपूर्वक शिष्य की परीक्षा करे — एक वर्ष, उसका आधा, या उसका भी आधा।

पदपाठ ज्ञानेन क्रियया वापि — ज्ञान से या क्रिया से · गुरुः शिष्यं परीक्षयेत् — गुरु शिष्य की परीक्षा करे · संवत्सरं — एक वर्ष · तदर्द्धं वा — या उसका आधा · तदर्द्धं वा — या उसका भी आधा · प्रयत्नतः — यत्नपूर्वक

उत्तमांश्चाधमे कुर्यान्नीचानुत्तमकर्मणि ।

२०

प्राणद्रव्यप्रणामाद्यैरादेशैश्च स्वयं समैः ॥ २० ॥

उत्तम (जनों) को अधम कार्य में और नीच को उत्तम कार्य में लगाए, प्राण, द्रव्य, प्रणाम आदि (की माँग) से और स्वयं समान रूप से दिए आदेशों से,

पदपाठ उत्तमान् च अधमे कुर्यात् — उत्तमों को अधम (कार्य) में लगाए · नीचान् उत्तमकर्मणि — और नीचों को उत्तम कर्म में · प्राणद्रव्यप्रणामाद्यैः — प्राण, द्रव्य, प्रणाम आदि से · आदेशैः च स्वयं समैः — और स्वयं समान आदेशों से

तत्कर्मसूचकैर्वाक्यैर्मायाभिः क्रूरचेष्टितैः ।

२१

पक्षपातैरुदासीनैरनेकैश्च मुहुर्मुहुः ॥ २१ ॥

उस कार्य के सूचक वाक्यों से, मायाओं से, क्रूर चेष्टाओं से, पक्षपात और उदासीनता से, और अनेक (उपायों) से बार-बार।

पदपाठ तत्कर्मसूचकैः वाक्यैः — उस कर्म का संकेत करने वाले वाक्यों से · मायाभिः — मायाओं से · क्रूरचेष्टितैः — क्रूर चेष्टाओं से · पक्षपातैः उदासीनैः — पक्षपात और उदासीनता से · अनेकैः च मुहुर्मुहुः — और अनेक (उपायों) से बार-बार

आकृष्टस्ताडितो वापि यो विषादं न याति च ।

२२

गुरुः कृपां करोतीति मुदा सञ्चिन्तयेत् सदा ॥ २२ ॥

जो खींचे जाने या पीटे जाने पर भी विषाद को प्राप्त नहीं होता और सदा प्रसन्नता से यही सोचता है कि "गुरु कृपा कर रहे हैं" —

पदपाठ आकृष्टः ताडितः वापि — खींचा या पीटा गया भी · यः विषादं न याति च — जो विषाद को नहीं जाता · गुरुः कृपां करोति इति — "गुरु कृपा कर रहे हैं" ऐसा · मुदा सञ्चिन्तयेत् सदा — सदा प्रसन्नता से सोचे

श्रीगुरोः स्मरणे चापि कीर्तनं दर्शनेऽपि च ।

२३

वन्दने परिचर्यायामाह्वाने प्रेषणे प्रिये ॥ २३ ॥

श्रीगुरु के स्मरण में, कीर्तन में, दर्शन में, वन्दन में, परिचर्या में, बुलाए जाने और भेजे जाने में, हे प्रिये!

पदपाठ श्रीगुरोः स्मरणे चापि — श्रीगुरु के स्मरण में भी · कीर्तनं दर्शने अपि च — कीर्तन में, दर्शन में भी · वन्दने परिचर्यायाम् — वन्दन में, परिचर्या में · आह्वाने प्रेषणे प्रिये — आह्वान और प्रेषण में, हे प्रिये

आनन्दकम्परोमाज्यस्वरनेत्रादिविक्रियाः ।

२४

येषां स्युस्तेऽत्र योग्याश्च दीक्षासंस्कारकर्मणि ॥ २४ ॥

जिनमें आनन्द, कम्प, रोमाज्य, स्वर और नेत्र आदि के विकार होते हैं, वे ही यहाँ दीक्षा-संस्कार के कर्म में योग्य हैं।

पदपाठ आनन्दकम्परोमाज्य- — आनन्द, कम्प, रोमांच · स्वरनेत्रादिविक्रियाः — स्वर, नेत्र आदि के विकार · येषां स्युः — जिनमें हों · ते अत्र योग्याः च — वे यहाँ योग्य हैं · दीक्षासंस्कारकर्मणि — दीक्षा-संस्कार के कर्म में

शिष्योऽपि लक्षणैरैतैः कुर्याद् गुरुपरीक्षणम् ।

२५

आनन्दाद्यैर्जपस्तोत्रध्यानहोमार्चनादिषु ॥ २५ ॥

शिष्य भी इन लक्षणों से — जप, स्तोत्र, ध्यान, होम, अर्चन आदि में आनन्द आदि से — गुरु की परीक्षा करे।

पदपाठ शिष्यः अपि — शिष्य भी · लक्षणैः एतैः — इन लक्षणों से · कुर्यात् गुरुपरीक्षणम् — गुरु की परीक्षा करे · आनन्दाद्यैः — आनन्द आदि से · जपस्तोत्रध्यानहोमार्चनादिषु — जप, स्तोत्र, ध्यान, होम, अर्चन आदि में

ज्ञानोपदेशसामर्थ्यं मन्त्रसिद्धिमपीश्वरि ।

२६

वेधकत्वं परिज्ञाय शिष्यो भूयान्न चान्यथा ॥ २६॥

हे ईश्वरि! ज्ञान-उपदेश की सामर्थ्य, मन्त्रसिद्धि और वेधकत्व को भली-भाँति जानकर ही शिष्य बने — अन्यथा नहीं।

पदपाठ ज्ञानोपदेशसामर्थ्यं — ज्ञान-उपदेश का सामर्थ्य · मन्त्रसिद्धिम् अपि ईश्वरि — और मन्त्र-सिद्धि भी, हे ईश्वरि · वेधकत्वं परिज्ञाय — वेधकत्व को जानकर · शिष्यः भूयात् — शिष्य बने · न च अन्यथा — और अन्यथा नहीं

आदिमध्यावसानेषु योग्याः शक्तिनिपातिताः ।

२७

अधमा मध्यमाः श्रेष्ठाः शिष्या देवि प्रकीर्तिताः ॥ २७॥

आदि, मध्य और अन्त में जिन पर शक्तिपात होता है वे योग्य हैं; हे देवि! शिष्य अधम, मध्यम और श्रेष्ठ कहे गए हैं।

पदपाठ आदिमध्यावसानेषु — आदि, मध्य और अन्त में · योग्याः शक्तिनिपातिताः — योग्य, जिन पर शक्तिपात हुआ · अधमाः मध्यमाः श्रेष्ठाः — अधम, मध्यम, श्रेष्ठ · शिष्याः देवि प्रकीर्तिताः — शिष्य कहे गए हैं, हे देवि

आदौ भक्तिर्भवेद्देवि दीक्षार्थं समुदन्ति ये ।

२८

पुनर्विपुलहृष्टास्ते आदियोग्या इतीरिताः ॥ २८॥

हे देवि! जिनमें पहले ही भक्ति होती है, जो दीक्षा के लिए उत्सुक हो उठते हैं और फिर अत्यन्त हर्षित होते हैं — वे आदियोग्य कहे गए हैं।

पदपाठ आदौ भक्तिः भवेत् देवि — आदि में भक्ति हो, हे देवि · दीक्षार्थं समुदन्ति ये — जो दीक्षा के लिए उत्सुक होते हैं · पुनः विपुलहृष्टाः ते — फिर अति प्रसन्न होते हैं · आदियोग्याः इति ईरिताः — वे "आदियोग्य" कहे गए

दीक्षासमयसम्प्राप्ता ज्ञानविज्ञानवर्जिताः ।

२९

भक्त्या प्रध्वस्तपर्याया मध्ययोग्याश्च ते स्मृताः ॥ २९॥

जो दीक्षा के समय ज्ञान-विज्ञान से रहित होकर आते हैं, किन्तु भक्ति से जिनकी (सांसारिक) गति ध्वस्त हो जाती है — वे मध्ययोग्य माने गए हैं।

पदपाठ दीक्षासमयसम्प्राप्ताः — दीक्षा के समय पर आए · ज्ञानविज्ञानवर्जिताः — ज्ञान-विज्ञान से रहित · भक्त्या प्रध्वस्तपर्यायाः — भक्ति से जिनका (सांसारिक) क्रम ध्वस्त · मध्ययोग्याः च ते स्मृताः — वे "मध्ययोग्य" माने गए

आदौ भक्तिविहीना ये मध्यभक्तास्तु ये नराः ।

३०

अन्तप्रवृद्धभक्ताश्च अन्तयोग्या भवन्ति ते ।

उत्तमज्ञानसंज्ञाश्चेत्युपदेशस्त्रिधा प्रिये ॥ ३०॥

जो आरम्भ में भक्तिहीन हैं, मध्य में भक्त होते हैं और अन्त में जिनकी भक्ति बढ़ जाती है — वे अन्तयोग्य होते हैं और उत्तमज्ञान-संज्ञक भी; इस प्रकार हे प्रिये! उपदेश तीन प्रकार का है।

पदपाठ आदौ भक्तिविहीनाः ये — जो आदि में भक्ति-रहित · मध्यभक्ताः तु ये नराः — और मध्य में भक्त मनुष्य · अन्तप्रवृद्धभक्ताः च — और अन्त में प्रवृद्ध भक्त · अन्तयोग्याः भवन्ति ते — वे "अन्तयोग्य" होते हैं · उत्तमज्ञानसंज्ञाः च — और उत्तम ज्ञान वाले कहलाते हैं · इति उपदेशः त्रिधा प्रिये — इस प्रकार उपदेश तीन प्रकार का है, हे प्रिये

यथा पिपीलिका मन्दमन्दं वृक्षाग्रं फलम् ।

चिरेणाप्नोति कर्मोपदेशश्चापि तथा स्मृतः ॥ ३१ ॥

३१

जैसे चींटी धीरे-धीरे बहुत समय में वृक्ष के अग्रभाग के फल को प्राप्त करती है, वैसा ही कर्मोपदेश माना गया है।

पदपाठ यथा पिपीलिका — जैसे चींटी · मन्दमन्दं — धीरे-धीरे · वृक्षाग्रं फलम् — वृक्ष के अग्र का फल · चिरेण आप्नोति — देर से पाती है · कर्मोपदेशः चापि तथा स्मृतः — कर्म-उपदेश भी वैसा माना गया

यथा कपिश्र शाखायां शाखामुल्लङ्घ्य यत्नतः ।

फलं प्राप्नोति धर्मस्य चोपदेशस्तथा प्रिये ॥ ३२ ॥

३२

जैसे बन्दर यत्नपूर्वक शाखा से शाखा पर लाँघकर फल प्राप्त करता है, वैसा ही हे प्रिये! धर्म का उपदेश है।

पदपाठ यथा कपिः च — और जैसे बन्दर · शाखायां शाखाम् उल्लङ्घ्य — शाखा से शाखा लाँघकर · यत्नतः फलं प्राप्नोति — यत्न से फल पाता है · धर्मस्य च उपदेशः तथा प्रिये — वैसे धर्म का उपदेश है, हे प्रिये

यथा वियद्गमः शीघ्रं फल एव निषीदति ।

तथा ज्ञानोपदेशश्च कथितः कुलनायिके ॥ ३३ ॥

३३

जैसे आकाश में उड़ने वाला (पक्षी) शीघ्र ही फल पर जा बैठता है, वैसा ही हे कुलनायिके! ज्ञानोपदेश कहा गया है।

पदपाठ यथा वियद्गमः — जैसे आकाशगामी (पक्षी) · शीघ्रं फले एव निषीदति — शीघ्र फल पर ही बैठता है · तथा ज्ञानोपदेशः च — वैसे ज्ञान-उपदेश है · कथितः कुलनायिके — कहा गया, हे कुलनायिके

स्पर्शाख्या देवि दृक्संज्ञा मानसाख्या महेश्वरि ।
क्रियायासादिरहिता देवि दीक्षा त्रिधा स्मृता ॥ ३४ ॥

३४

हे देवि! स्पर्श नामक, दृक् संज्ञक और मानस नामक, हे महेश्वरि! — क्रिया, आयास आदि से रहित दीक्षा तीन प्रकार की मानी गई है।

पदपाठ स्पर्शाख्या देवि — "स्पर्श" नामक, हे देवि · दृक्संज्ञा — "दृक्" (दृष्टि) नामक · मानसाख्या महेश्वरि — "मानस" नामक, हे महेश्वरि · क्रियायासादिरहिता — क्रिया, श्रम आदि से रहित · देवि दीक्षा त्रिधा स्मृता — हे देवि, दीक्षा तीन प्रकार की मानी गई

यथा पक्षी स्वपक्षाभ्यां शिशून् संवर्द्धयेच्छनैः ।
स्पर्शदीक्षोपदेशश्च तादृशः कथितः प्रिये ॥ ३५ ॥

३५

जैसे पक्षी अपने पंखों से धीरे-धीरे अपने बच्चों का पालन करता है, वैसा ही हे प्रिये! स्पर्श-दीक्षा का उपदेश कहा गया है।

पदपाठ यथा पक्षी — जैसे पक्षी · स्वपक्षाभ्यां — अपने पंखों से · शिशून् संवर्द्धयेत् शनैः — बच्चों को धीरे-धीरे बढ़ाता है · स्पर्शदीक्षोपदेशः च — स्पर्श-दीक्षा का उपदेश · तादृशः कथितः प्रिये — वैसा कहा गया, हे प्रिये

स्वापत्यानि यथा मत्स्यो वीक्षणेनैव पोषयेत् ।
दृग्भ्यां दीक्षोपदेशश्च तादृशः परमेश्वरि ॥ ३६ ॥

३६

जैसे मछली अपनी सन्तानों को केवल देखने से ही पुष्ट करती है, वैसा ही हे परमेश्वरि! दृष्टि द्वारा दीक्षा का उपदेश है।

पदपाठ स्वापत्यानि यथा मत्स्यः — जैसे मछली अपनी सन्तान को · वीक्षणेनैव पोषयेत् — देखने से ही पोषण करती है · दृग्भ्यां दीक्षोपदेशः च — नेत्रों से दीक्षा का उपदेश · तादृशः परमेश्वरि — वैसा है, हे परमेश्वरि

यथा कूर्मः स्वतनयान् ध्यानमात्रेण पोषयेत् ।

३७

वेधदीक्षोपदेशश्च मानसः स्यात् तथाविधः ॥ ३७ ॥

जैसे कछुआ अपनी सन्तानों को केवल ध्यान से ही पुष्ट करता है, वैसा ही मानस वेध-दीक्षा का उपदेश होता है।

पदपाठ यथा कूर्मः स्वतनयान् — जैसे कछुआ अपने बच्चों को · ध्यानमात्रेण पोषयेत् — ध्यान मात्र से पोषण करता है · वेधदीक्षोपदेशः च — वेध-दीक्षा का उपदेश · मानसः स्यात् तथाविधः — मानस, उसी प्रकार का है

शक्तिपातानुसारेण शिष्योऽनुग्रहमर्हति ।

३८

यत्र शक्तिर्न पतति तत्र सिद्धिर्न जायते ॥ ३८ ॥

शक्तिपात के अनुसार शिष्य अनुग्रह का पात्र होता है; जहाँ शक्ति नहीं गिरती, वहाँ सिद्धि नहीं होती।

पदपाठ शक्तिपातानुसारेण — शक्तिपात के अनुसार · शिष्यः अनुग्रहम् अर्हति — शिष्य अनुग्रह के योग्य है · यत्र शक्तिः न पतति — जहाँ शक्ति नहीं गिरती · तत्र सिद्धिः न जायते — वहाँ सिद्धि नहीं होती

क्रियावर्णकलास्पर्शवाग्दृङ्मानससंज्ञया ।

३९

दीक्षा मोक्षप्रदा देवि सप्तधा परिकीर्तिता ॥ ३९ ॥

क्रिया, वर्ण, कला, स्पर्श, वाक्, दृक् और मानस — इन संज्ञाओं से, हे देवि! मोक्षदायिनी दीक्षा सात प्रकार की कही गई है।

पदपाठ क्रियावर्णकलास्पर्श- — क्रिया, वर्ण, कला, स्पर्श · वाग्दृङ्मानससंज्ञया — वाक्, दृक्, मानस — इन नामों से · दीक्षा मोक्षप्रदा देवि — मोक्ष देने वाली दीक्षा, हे देवि · सप्तधा परिकीर्तिता — सात प्रकार की कही गई है

समयाख्या विशेषा च साधिका पुत्रिकाहया ।

४०

वेधका पूर्णसंज्ञा चाचार्या निर्वाणसंज्ञिका ॥ ४०॥

समय नामक, विशेषा, साधिका, पुत्रिका नामक, वेधका, पूर्ण संज्ञक, आचार्या और निर्वाण संज्ञक (— ये दीक्षा की अवस्थाएँ हैं)।

पदपाठ समयाख्या — समय नामक · विशेषा च — और विशेषा · साधिका — साधिका · पुत्रिकाहया —
पुत्रिका नामक · वेधका — वेधका · पूर्णसंज्ञा च — और पूर्णा नामक · आचार्या —
आचार्या · निर्वाणसंज्ञिका — निर्वाण नामक

क्रियादीक्षाष्टधा प्रोक्ता कुण्डमण्डपपूर्विका ।

४१

कलसादिसमायुक्ता कर्तव्या गुरुणा बहिः ।

देवेशि देहशुद्ध्यर्थं पूर्वोक्तविधिनाचरेत् ॥ ४१॥

क्रियादीक्षा आठ प्रकार की कही गई है; कुण्ड और मण्डप से युक्त, कलश आदि से सम्पन्न, गुरु द्वारा बाह्य रूप से करने योग्य है; हे देवेशि! देहशुद्धि के लिए पूर्वोक्त विधि से उसका आचरण करे।

पदपाठ क्रियादीक्षा अष्टधा प्रोक्ता — क्रिया-दीक्षा आठ प्रकार की कही गई · कुण्डमण्डपपूर्विका — कुण्ड
और मण्डप पूर्वक · कलसादिसमायुक्ता — कलश आदि से युक्त · कर्तव्या गुरुणा बहिः — गुरु द्वारा बाहर
करनी चाहिए · देवेशि — हे देवेशि · देहशुद्ध्यर्थं — देहशुद्धि के लिए · पूर्वोक्तविधिना आचरेत् — पूर्वोक्त
विधि से करे

वर्णदीक्षा त्रिधा प्रोक्ता द्विचत्वारिंशदक्षरैः ।

४२

पञ्चाशद्वर्णैर्वा देवि द्विषष्टिलिपिभिस्तु वा ॥ ४२ ॥

वर्णदीक्षा तीन प्रकार की कही गई है — बयालीस अक्षरों से, या पचास वर्णों से, हे देवि! अथवा बासठ लिपियों से।

पदपाठ वर्णदीक्षा त्रिधा प्रोक्ता — वर्ण-दीक्षा तीन प्रकार की कही गई · द्विचत्वारिंशदक्षरैः — बयालीस अक्षरों से · पञ्चाशद्वर्णैः वा देवि — या पचास वर्णों से, हे देवि · द्विषष्टिलिपिभिः तु वा — या बासठ लिपियों से

वर्णान् शिष्यतनौ न्यस्य प्रतिलोमेन संहरेत् ।

४३

परमात्मनि संयोज्य तच्चैतन्यं गुरुः प्रिये ॥ ४३ ॥

शिष्य के शरीर में वर्णों का न्यास करके गुरु उन्हें प्रतिलोम क्रम से संहृत करे और उस चैतन्य को परमात्मा में संयुक्त करे, हे प्रिये!

पदपाठ वर्णान् शिष्यतनौ न्यस्य — वर्णों को शिष्य के देह में न्यास कर · प्रतिलोमेन संहरेत् — प्रतिलोम से संहार करे · परमात्मनि संयोज्य — परमात्मा में संयोजित कर · तत् चैतन्यं गुरुः प्रिये — उस चैतन्य को गुरु, हे प्रिये

तस्मादुत्पाद्य तान् वर्णान् न्यसेच्छिष्यतनौ पुनः ।

४४

सृष्टिक्रमेण विधिना चैतन्यञ्च प्रयोजयेत् ॥ ४४ ॥

फिर उन वर्णों को उत्पन्न करके सृष्टिक्रम से विधिपूर्वक शिष्य के शरीर में पुनः न्यास करे और चैतन्य का प्रयोग करे।

पदपाठ तस्मात् उत्पाद्य तान् वर्णान् — फिर उन वर्णों को उत्पन्न कर · न्यसेत् शिष्यतनौ पुनः — शिष्य के देह में फिर न्यास करे · सृष्टिक्रमेण विधिना — सृष्टि-क्रम की विधि से · चैतन्यं च प्रयोजयेत् — और चैतन्य को प्रयोजित करे

जायते देवताभावः परानन्दमयः शिशोः ।

४५

एषा वर्णमयी प्रोक्ता दीक्षा पाशहरा प्रिये ॥ ४५॥

शिष्य में परमानन्दमय देवताभाव उत्पन्न होता है; हे प्रिये! यह पाशों को हरने वाली वर्णमयी दीक्षा कही गई है।

पदपाठ जायते देवताभावः — देवताभाव उत्पन्न होता है · परानन्दमयः शिशोः — परानन्दमय, शिष्य में · एषा वर्णमयी प्रोक्ता — यह वर्णमयी कही गई · दीक्षा पाशहरा प्रिये — पाश हरने वाली दीक्षा, हे प्रिये

कलादीक्षा त्रिधा ज्ञेया कर्तव्या विधिवत् प्रिये ।

४६

निवृत्तिर्जानुपर्यन्तं तलादारभ्य संस्थिता ॥ ४६॥

कलादीक्षा तीन प्रकार की जाननी चाहिए और विधिपूर्वक करनी चाहिए, हे प्रिये! निवृत्ति (कला) तलवों से आरम्भ करके घुटनों तक स्थित है;

पदपाठ कलादीक्षा त्रिधा ज्ञेया — कला-दीक्षा तीन प्रकार की जाननी चाहिए · कर्तव्या विधिवत् प्रिये — विधिवत् करनी चाहिए, हे प्रिये · निवृत्तिः — निवृत्ति · जानुपर्यन्तं — घुटनों तक · तलात् आरभ्य संस्थिता — तलवों से आरम्भ कर स्थित है

जानुनोर्नाभिपर्यन्तं प्रतिष्ठा तिष्ठति प्रिये ।

४७

नाभेः कण्ठावधि व्याप्ता विद्या शान्तिस्ततः परम् ॥ ४७॥

घुटनों से नाभि तक प्रतिष्ठा रहती है, हे प्रिये! नाभि से कण्ठ तक विद्या व्याप्त है; उसके परे शान्ति,

पदपाठ जानुनोः नाभिपर्यन्तं — घुटनों से नाभि तक · प्रतिष्ठा तिष्ठति प्रिये — प्रतिष्ठा स्थित है, हे प्रिये · नाभेः कण्ठावधि व्याप्ता विद्या — नाभि से कण्ठ तक विद्या व्याप्त है · शान्तिः ततः परम् — उससे परे शान्ति

कण्ठाल्ललाटपर्यन्तं व्याप्ता तस्माच्छिरोऽवधि ।

४८

शान्त्यतीता कला चैषा कलाव्याप्तिरितीरिता ॥ ४८ ॥

कण्ठ से ललाट तक व्याप्त है; और वहाँ से शिर तक यह शान्त्यतीता कला है — इसे कलाव्याप्ति कहा गया है।

पदपाठ कण्ठात् ललाटपर्यन्तं व्याप्ता — कण्ठ से ललाट तक व्याप्त · तस्मात् शिरोऽवधि — वहाँ से शिर तक · शान्त्यतीता कला च एषा — यह शान्त्यतीता कला है · कलाव्याप्तिः इति ईरिता — यह कला-व्याप्ति कही गई

संहारक्रमयोगेन स्थानात् स्थानान्तरं प्रिये ।

४९

संयोज्य विधिवत् सम्यग्विधिवेत्ता शिरोऽवधि ॥ ४९ ॥

विधि का ज्ञाता संहारक्रम के योग से एक स्थान से दूसरे स्थान तक, हे प्रिये! विधिपूर्वक भली-भाँति शिर तक संयुक्त करे।

पदपाठ संहारक्रमयोगेन — संहार-क्रम के योग से · स्थानात् स्थानान्तरं प्रिये — एक स्थान से दूसरे स्थान, हे प्रिये · संयोज्य विधिवत् सम्यक् — विधिवत् सम्यक् संयोजित कर · विधिवेत्ता शिरोऽवधि — विधिज्ञ शिर तक

इयं प्रोक्ता कुलेशानि दिव्यभावप्रदायिनी ।

५०

अष्टत्रिंशत्कलाभिर्वा पञ्चाशद्विरथापि वा ॥ ५० ॥

हे कुलेशानि! यह दिव्यभाव देने वाली कही गई है — अड़तीस कलाओं से अथवा पचास से।

पदपाठ इयं प्रोक्ता कुलेशानि — यह कही गई, हे कुलेशानि · दिव्यभावप्रदायिनी — दिव्यभाव देने वाली · अष्टत्रिंशत्कलाभिः वा — अड़तीस कलाओं से · पञ्चाशद्विः अथापि वा — अथवा पचास से

तत्त्वन्यासक्रमेणैव सृष्टिसंहारमार्गतः ।

ज्ञात्वा गुरुमुखाद्देवि शिष्ये संयोज्य वेधयेत् ॥ ५१ ॥

५१

तत्त्वन्यास के क्रम से ही सृष्टि और संहार के मार्ग से, हे देवि! गुरुमुख से जानकर शिष्य में संयुक्त करके वेध करे।

पदपाठ तत्त्वन्यासक्रमेण एव — तत्त्व-न्यास के क्रम से ही · सृष्टिसंहारमार्गतः — सृष्टि-संहार के मार्ग से · ज्ञात्वा गुरुमुखाद् देवि — गुरुमुख से जानकर, हे देवि · शिष्ये संयोज्य वेधयेत् — शिष्य में संयोजित कर वेध करे

जायते देवताभावो योगिनीवीरमेलनम् ।

कलादीक्षा समुद्दिष्टा पशुपाशापहारिणी ॥ ५२ ॥

५२

देवताभाव उत्पन्न होता है और योगिनियों तथा वीरों का मेलन; कलादीक्षा पशुपाश को हरने वाली कही गई है।

पदपाठ जायते देवताभावः — देवताभाव उत्पन्न होता है · योगिनीवीरमेलनम् — योगिनी-वीर-मेलन · कलादीक्षा समुद्दिष्टा — कला-दीक्षा कही गई · पशुपाशापहारिणी — पशु-पाश हरने वाली

हस्ते शिवं गुरुं ध्यात्वा जपेन्मूलाङ्गमालिनीम् ।

गुरुः स्पृशेच्छिष्यतनुं स्पर्शदीक्षा भवेदियम् ॥ ५३ ॥

५३

हाथ में गुरु को शिव रूप में ध्यान करके मूलमन्त्र, अङ्ग और मालिनी का जप करे; गुरु शिष्य के शरीर का स्पर्श करे — यह स्पर्श-दीक्षा होती है।

पदपाठ हस्ते शिवं गुरुं ध्यात्वा — हाथ में शिवरूप गुरु का ध्यान कर · जपेत् मूलाङ्गमालिनीम् — मूल, अंग और मालिनी का जप करे · गुरुः स्पृशेत् शिष्यतनुं — गुरु शिष्य के देह का स्पर्श करे · स्पर्शदीक्षा भवेत् इयम् — यह स्पर्श-दीक्षा है

चित्तं तत्त्वे समाधाय परतत्त्वोपबृंहितान् ।

५४

उच्यरेत् संहतान्मन्त्रान् वाग्दीक्षेति निगद्यते ॥ ५४॥

चित्त को तत्त्व में समाहित करके परतत्त्व से उपबृंहित संहत मन्त्रों का उच्चारण करे
— यह वाग्-दीक्षा कही जाती है।

पदपाठ चित्तं तत्त्वे समाधाय — चित्त को तत्त्व में समाहित कर · परतत्त्वोपबृंहितान् — परतत्त्व से
पुष्ट · उच्यरेत् संहतान् मन्त्रान् — संहत मन्त्रों का उच्चारण करे · वाग्दीक्षा इति निगद्यते — यह वाक्-दीक्षा
कही जाती है

निमील्य नयने ध्यात्वा परतत्त्वप्रसन्नधीः ।

५५

सम्यक् पश्येद्गुरुः शिष्यं दृग्दीक्षा च भवेत् प्रिये ॥ ५५॥

नेत्र मूँदकर ध्यान करके, परतत्त्व में प्रसन्न बुद्धि वाला गुरु शिष्य को भली-भाँति देखे
— यह दृग्-दीक्षा होती है, हे प्रिये!

पदपाठ निमील्य नयने ध्यात्वा — नेत्र मूँदकर ध्यान कर · परतत्त्वप्रसन्नधीः — परतत्त्व में प्रसन्न
बुद्धि · सम्यक् पश्येत् गुरुः शिष्यं — गुरु शिष्य को सम्यक् देखे · दृग्दीक्षा च भवेत् प्रिये — और यह दृक्-
दीक्षा है, हे प्रिये

गुरोरालोकमात्रेण भाषणात् स्पर्शनादपि ।

५६

सद्यः सज्जायते ज्ञानं सा दीक्षा शाम्भवी मता ॥ ५६॥

गुरु के देखने मात्र से, बोलने से अथवा स्पर्श से भी जहाँ तत्काल ज्ञान उत्पन्न हो
जाता है — वह दीक्षा शाम्भवी मानी गई है।

पदपाठ गुरोः आलोकमात्रेण — गुरु के अवलोकन मात्र से · भाषणात् स्पर्शनात् अपि — भाषण से, स्पर्श
से भी · सद्यः सज्जायते ज्ञानं — तत्काल ज्ञान उत्पन्न होता है · सा दीक्षा शाम्भवी मता — वह दीक्षा
शाम्भवी मानी गई

मनोदीक्षा द्विधा प्रोक्ता तीव्रा तीव्रतरापि च ।

५७

अध्वानं षड्विधं ज्ञात्वा शिष्यदेहे स्मरन् प्रिये ॥ ५७ ॥

मनोदीक्षा दो प्रकार की कही गई है — तीव्रा और तीव्रतरा। छह प्रकार के अध्वा को जानकर शिष्य के देह में उसका स्मरण करते हुए, हे प्रिये!

पदपाठ मनोदीक्षा द्विधा प्रोक्ता — मनो-दीक्षा दो प्रकार की कही गई · तीव्रा तीव्रतरा अपि च — तीव्रा और तीव्रतरा भी · अध्वानं षड्विधं ज्ञात्वा — छह प्रकार के अध्वा को जानकर · शिष्यदेहे स्मरन् प्रिये — शिष्य के देह में स्मरण करते, हे प्रिये

कल्पयेद्भुवनं तत्त्वं कलां वर्णं पदं मनुम् ।

५८

आजानुनाभिहृत्कण्ठतालुमूर्धान्तमम्बिके ॥ ५८ ॥

हे अम्बिके! घुटनों, नाभि, हृदय, कण्ठ, तालु से मूर्धा तक भुवन, तत्त्व, कला, वर्ण, पद और मन्त्र की कल्पना करे।

पदपाठ कल्पयेत् भुवनं तत्त्वं — भुवन, तत्त्व की कल्पना करे · कलां वर्णं पदं मनुम् — कला, वर्ण, पद, मन्त्र · आजानुनाभिहृत्कण्ठ- — घुटनों, नाभि, हृदय, कण्ठ · तालुमूर्धान्तम् अम्बिके — तालु से मूर्धा तक, हे अम्बिके

गुरुपदिष्टमार्गेण वेधं कुर्याद्विचक्षणः ।

पाशयुक्तः क्षणाच्छिष्यश्छिन्नपाशस्तदा भवेत् ।

५९

एषा मुक्तिप्रदा प्रोक्ता तीव्रदीक्षा कुलेश्वरि ॥ ५९॥

विचक्षण (गुरु) गुरु द्वारा उपदिष्ट मार्ग से वेध करे; पाशों से बँधा शिष्य क्षण भर में तब छिन्नपाश हो जाता है। हे कुलेश्वरि! यह मुक्ति देने वाली तीव्र-दीक्षा कही गई है।

पदपाठ गुरुपदिष्टमार्गेण — गुरु द्वारा उपदिष्ट मार्ग से · वेधं कुर्यात् विचक्षणः — विचक्षण वेध करे · पाशयुक्तः क्षणात् शिष्यः — पाश-युक्त शिष्य क्षण में · छिन्नपाशः तदा भवेत् — तब छिन्न-पाश हो जाता है · एषा मुक्तिप्रदा प्रोक्ता — यह मुक्ति देने वाली कही गई · तीव्रदीक्षा कुलेश्वरि — तीव्र-दीक्षा, हे कुलेश्वरि

देवि तीव्रतरा चापि गुरुणा स्मृतमात्रतः ।

सम्यक् संवेधिनः शिष्यश्छिन्नपापस्तदा भवेत् ॥ ६०॥

६०

हे देवि! तीव्रतरा (दीक्षा) में सम्यक् वेध करने वाले गुरु के स्मरण मात्र से शिष्य तब छिन्नपाप हो जाता है।

पदपाठ देवि तीव्रतरा चापि — हे देवि, और तीव्रतरा भी · गुरुणा स्मृतमात्रतः — गुरु के स्मरण मात्र से · सम्यक् संवेधिनः — सम्यक् वेध करने वाले के · शिष्यः छिन्नपापः तदा भवेत् — शिष्य तब छिन्न-पाप हो जाता है

वाह्यव्यापारनिर्मुक्तो भूमौ पतति तत्क्षणात् ।

सञ्जातदिव्यभावोऽसौ सर्वं जानाति शाम्भवि ॥ ६१ ॥

६१

बाह्य व्यापार से मुक्त होकर वह उसी क्षण भूमि पर गिर पड़ता है; उसमें दिव्यभाव उत्पन्न हो जाता है और वह सब कुछ जान लेता है, हे शाम्भवि!

पदपाठ वाह्यव्यापारनिर्मुक्तः — बाह्य व्यापार से मुक्त · भूमौ पतति तत्क्षणात् — उसी क्षण भूमि पर गिरता है · सञ्जातदिव्यभावः असौ — जिसमें दिव्यभाव उत्पन्न हुआ · सर्वं जानाति शाम्भवि — वह सब जानता है, हे शाम्भवि

यदस्ति वेधकाले तत् स्वयमेवानुभूयते ।

प्रबुद्धः सन् न शक्नोति तत् सुखं वक्तुमीश्वरि ॥ ६२ ॥

६२

वेध के समय जो होता है वह स्वयं ही अनुभव किया जाता है; जागने पर वह उस सुख को कह नहीं सकता, हे ईश्वरि!

पदपाठ यत् अस्ति वेधकाले — वेध-काल में जो है · तत् स्वयम् एव अनुभूयते — वह स्वयं ही अनुभव किया जाता है · प्रबुद्धः सन् — प्रबुद्ध होकर · न शक्नोति तत् सुखं वक्तुम् ईश्वरि — वह सुख कह नहीं सकता, हे ईश्वरि

वेधविद्धः शिवः साक्षान्न पुनर्जन्मभाग् भवेत् ।

एषा तीव्रतरा दीक्षा भवबन्धविमोचनी ।

६३

शिवभावप्रदा साक्षात् त्वां शपे कुलनायिके ॥ ६३॥

वेध से विद्ध हुआ वह साक्षात् शिव है, पुनर्जन्म का भागी नहीं होता। यह तीव्रतरा दीक्षा भवबन्धन से छुड़ाने वाली और साक्षात् शिवभाव देने वाली है — हे कुलनायिके! मैं तुम्हारी शपथ लेकर कहता हूँ।

पदपाठ वेधविद्धः शिवः साक्षात् — वेध से विद्ध साक्षात् शिव है · न पुनर्जन्मभाक् भवेत् — फिर जन्म का भागी नहीं होता · एषा तीव्रतरा दीक्षा — यह तीव्रतरा दीक्षा है · भवबन्धविमोचनी — भव-बन्धन से मुक्त करने वाली · शिवभावप्रदा साक्षात् — साक्षात् शिवभाव देने वाली · त्वां शपे कुलनायिके — तुम्हारी शपथ, हे कुलनायिके

आनन्दश्चैव कम्पश्चोद्भवो घूर्णा कुलेश्वरि ।

निद्रा मूर्च्छा च वेधस्य षडवस्थाः प्रकीर्तिताः ॥ ६४॥

६४

आनन्द, कम्प, उद्भव, घूर्णा, हे कुलेश्वरि! निद्रा और मूर्च्छा — ये वेध की छह अवस्थाएँ कही गई हैं।

पदपाठ आनन्दः च एव — आनन्द · कम्पः च — और कम्प · उद्भवः — उद्भव (उठना) · घूर्णा कुलेश्वरि — घूर्णा (घूमना), हे कुलेश्वरि · निद्रा मूर्च्छा च — निद्रा और मूर्च्छा · वेधस्य षडवस्थाः प्रकीर्तिताः — वेध की छह अवस्थाएँ कही गई हैं

दृश्यन्ते षड्गुणा ह्येते वेधकाले कुलेश्वरि ।

वेधितो यत्र कुत्रापि तिष्ठेन्मुक्तो न संशयः ॥ ६५॥

६५

हे कुलेश्वरि! वेध के समय ये छह गुण दिखाई देते हैं; वेधित (शिष्य) जहाँ कहीं भी रहे, वह मुक्त है — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ दृश्यन्ते षड्गुणाः हि एते — ये छह गुण दिखते हैं · वेधकाले कुलेश्वरि — वेध-काल में, हे कुलेश्वरि · वेधितः यत्र कुत्रापि तिष्ठेत् — वेधित जहाँ-कहीं भी रहे · मुक्तः न संशयः — मुक्त है, सन्देह नहीं

वेधदीक्षाकरो लोके श्रीगुरुर्दुर्लभः प्रिये ।

शिष्योऽपि दुर्लभस्तादृक् पुण्ययोगेन लभ्यते ।

६६

न दद्याद् यस्य कस्यापि इत्याज्ञा परमेश्वरि ॥ ६६॥

हे प्रिये! संसार में वेध-दीक्षा देने वाला श्रीगुरु दुर्लभ है; वैसा शिष्य भी दुर्लभ है, वह पुण्ययोग से ही मिलता है। जिस-किसी को यह न दे — यही आज्ञा है, हे परमेश्वरि!

पदपाठ वेधदीक्षाकरः लोके — वेध-दीक्षा करने वाला लोक में · श्रीगुरुः दुर्लभः प्रिये — श्रीगुरु दुर्लभ है, हे प्रिये · शिष्यः अपि दुर्लभः तादृक् — वैसा शिष्य भी दुर्लभ है · पुण्ययोगेन लभ्यते — पुण्य-योग से मिलता है · न दद्यात् यस्य कस्यापि — जिस-किसी को न दे · इति आज्ञा परमेश्वरि — यह आज्ञा है, हे परमेश्वरि

कुलद्रव्यैः समभ्यर्च्य कुलचक्रं विधानतः ।

शिष्याय दर्शयेद्देवि दीक्षैषा कौलिकी स्मृता ॥ ६७॥

६७

कुलद्रव्यों से विधानपूर्वक कुलचक्र की पूजा करके उसे शिष्य को दिखाए, हे देवि! — यह दीक्षा कौलिकी मानी गई है।

पदपाठ कुलद्रव्यैः समभ्यर्च्य — कुलद्रव्यों से पूजा कर · कुलचक्रं विधानतः — कुलचक्र की विधान से · शिष्याय दर्शयेत् देवि — शिष्य को दिखाए, हे देवि · दीक्षा एषा कौलिकी स्मृता — यह दीक्षा कौलिकी मानी गई

कुलद्रव्यं मुखे पूर्य पञ्चगव्यामृतान्वितम् ।

अभिषिञ्चेद् गुरुः शिष्यं गण्डूषाख्या समीरिता ॥ ६८ ॥

६८

पञ्चगव्य और अमृत से युक्त कुलद्रव्य को मुख में भरकर गुरु शिष्य का अभिषेक करे — इसे गण्डूषा (अभिषेक) कहा गया है।

पदपाठ कुलद्रव्यं मुखे पूर्य — कुलद्रव्य मुख में भरकर · पञ्चगव्यामृतान्वितम् — पञ्चगव्य और अमृत सहित · अभिषिञ्चेद् गुरुः शिष्यं — गुरु शिष्य का अभिषेक करे · गण्डूषाख्या समीरिता — यह गण्डूषा (कुल्ला) कही गई

सजीवमीनयुक्तेन सुरया पूरितेन च ।

पञ्चामृतैः सुसम्पूर्णशङ्खेन कलसेन वा ।

६९

अभिषेकं ततः कुर्याद्बाह्ये तत् कथितं प्रिये ॥ ६९ ॥

जीवित मछली से युक्त, सुरा से भरे और पञ्चामृत से परिपूर्ण शङ्ख अथवा कलश से फिर अभिषेक करे — वह बाह्य (अभिषेक) कहा गया है, हे प्रिये!

पदपाठ सजीवमीनयुक्तेन — जीवित मछली सहित · सुरया पूरितेन च — और सुरा से भरे · पञ्चामृतैः सुसम्पूर्ण- — पञ्चामृत से परिपूर्ण · शङ्खेन कलसेन वा — शंख या कलश से · अभिषेकं ततः कुर्यात् — फिर अभिषेक करे · बाह्ये तत् कथितं प्रिये — वह बाह्य कहा गया, हे प्रिये

मीनस्तु लम्बिका देवि वक्त्रं कलस उच्यते ।

पञ्चगव्यामृतापूर्णं शिष्यं तेनाभिषेचयेत् ॥ ७० ॥

७०

मछली लम्बिका है, हे देवि! और मुख कलश कहा जाता है; पञ्चगव्य और अमृत से भरे उस (मुख) से शिष्य का अभिषेक करे।

पदपाठ मीनः तु लम्बिका देवि — मीन तो लम्बिका है, हे देवि · वक्त्रं कलसः उच्यते — मुख कलश कहलाता है · पञ्चगव्यामृतापूर्णं — पञ्चगव्य और अमृत से पूर्ण · शिष्यं तेन अभिषेचयेत् — उससे शिष्य का अभिषेक करे

अयं सिद्धाभिषेकः स्यादाचार्यस्यापि पार्वति ।

७१

त्रिकालं दन्तकाष्ठञ्च पुष्पाञ्जलिरपि प्रिये ॥ ७१ ॥

यह सिद्धाभिषेक है, आचार्य के लिए भी, हे पार्वति! तीनों काल दन्तकाष्ठ और पुष्पाञ्जलि भी (अभिषेक हैं), हे प्रिये!

पदपाठ अयं सिद्धाभिषेकः स्यात् — यह सिद्धाभिषेक है · आचार्यस्य अपि पार्वति — आचार्य के लिए भी, हे पार्वति · त्रिकालं दन्तकाष्ठं च — तीन काल, दन्तकाष्ठ · पुष्पाञ्जलिः अपि प्रिये — पुष्पाञ्जलि भी, हे प्रिये

शङ्खे वेदकलान्यासस्तज्ज्ञानञ्चाष्टधा भवेत् ।

७२

समयी दन्तकाष्ठेन साधकः कुसुमाञ्जलिः ॥ ७२ ॥

शङ्ख में चार कलाओं का न्यास — और वह ज्ञान आठ प्रकार का होता है: दन्तकाष्ठ से समयी, कुसुमाञ्जलि से साधक,

पदपाठ शङ्खे वेदकलान्यासः — शंख में चार कलाओं का न्यास · तत् ज्ञानं च अष्टधा भवेत् — और वह ज्ञान आठ प्रकार का होता है · समयी दन्तकाष्ठेन — समयी दन्तकाष्ठ से · साधकः कुसुमाञ्जलिः — साधक पुष्पाञ्जलि से

पुत्रं शङ्खाभिषेकेण बोधको वेधसंज्ञया ।

७३

पूर्णाभिषेकेणाचार्यः पञ्चावस्थाः प्रकीर्तिताः ॥ ७३ ॥

शङ्खाभिषेक से पुत्रक, वेध संज्ञक (अभिषेक) से बोधक, और पूर्णाभिषेक से आचार्य — ये पाँच अवस्थाएँ कही गई हैं।

पदपाठ पुत्रं शङ्खाभिषेकेण — पुत्रक शंखाभिषेक से · बोधकः वेधसंज्ञया — बोधक वेध नामक से · पूर्णाभिषेकेण आचार्यः — पूर्णाभिषेक से आचार्य · पञ्चावस्थाः प्रकीर्तिताः — पाँच अवस्थाएँ कही गई हैं

कुलाचारैकनिरता गुरुभक्ता दृढव्रताः ।

७४

पूर्णाभिषेकपूता ये ते मुक्ताश्चेह जन्मनि ॥ ७४ ॥

जो कुलाचार में एकनिष्ठ, गुरुभक्त, दृढव्रत और पूर्णाभिषेक से पवित्र हैं — वे इसी जन्म में मुक्त हैं।

पदपाठ कुलाचारैकनिरताः — कुलाचार में एकनिष्ठ · गुरुभक्ताः दृढव्रताः — गुरुभक्त,
दृढव्रती · पूर्णाभिषेकपूताः ये — जो पूर्णाभिषेक से पवित्र हैं · ते मुक्ताः च इह जन्मनि — वे इसी जन्म में
मुक्त हैं

पूर्णाभिषेकपूता ये मृताश्च कुलनायिके ।

७५

पुनर्लब्धोत्तमं जन्म गुरुणा शिवरूपिणा ॥ ७५ ॥

जो पूर्णाभिषेक से पवित्र होकर मर गए हैं, हे कुलनायिके! वे पुनः उत्तम जन्म पाकर शिवरूपी गुरु के द्वारा

पदपाठ पूर्णाभिषेकपूताः ये — जो पूर्णाभिषेक से पवित्र हैं · मृताः च कुलनायिके — और मर गए, हे
कुलनायिके · पुनः लब्ध्वा उत्तमं जन्म — फिर उत्तम जन्म पाकर · गुरुणा शिवरूपिणा — शिवरूपी गुरु
द्वारा

शुद्धाः पूर्णाभिषेकेण शिवसायुज्यदायिना ।

७६

तेन मुक्तिं ब्रजेयुस्ते शाम्भवी वाचमब्रवीत् ॥ ७६ ॥

शिवसायुज्य देने वाले पूर्णाभिषेक से शुद्ध होकर उसी से मुक्ति को प्राप्त होते हैं — यह वचन शाम्भवी ने कहा।

पदपाठ शुद्धाः पूर्णाभिषेकेण — पूर्णाभिषेक से शुद्ध · शिवसायुज्यदायिना — शिव-सायुज्य देने वाले
(अभिषेक) से · तेन मुक्तिं ब्रजेयुः ते — उससे वे मुक्ति को जाते हैं · शाम्भवी वाचमब्रवीत् — शाम्भवी ने
यह वचन कहा

पूर्णा[दीक्षा]भिषेकहीनो यः कौलिको म्रियते यदि ।

७७

पिशाचत्वमवाप्नोति यावदाहूतसंप्लवम् ॥ ७७ ॥

जो कौलिक पूर्णा[दीक्षा]अभिषेक से हीन होकर मरता है, वह प्रलय पर्यन्त पिशाचता को प्राप्त होता है।

पदपाठ पूर्णा[दीक्षा]भिषेकहीनः यः — जो पूर्ण (दीक्षा) अभिषेक से हीन है · कौलिकः म्रियते यदि — यदि कौलिक (ऐसे) मरे · पिशाचत्वम् अवाप्नोति — पिशाचत्व पाता है · यावत् आहूतसंप्लवम् — आभूतसंप्लव (महाप्रलय) तक

दीक्षा च द्विविधा प्रोक्ता बाह्याभ्यन्तरभेदतः ।

७८

क्रियादीक्षा भवेद्बाह्या वेधाख्याभ्यन्तरी मता ॥ ७८ ॥

और दीक्षा बाह्य और आभ्यन्तर भेद से दो प्रकार की कही गई है: क्रियादीक्षा बाह्य होती है और वेध नामक (दीक्षा) आभ्यन्तरी मानी गई है।

पदपाठ दीक्षा च द्विविधा प्रोक्ता — और दीक्षा दो प्रकार की कही गई · बाह्याभ्यन्तरभेदतः — बाह्य और आभ्यन्तर के भेद से · क्रियादीक्षा भवेत् बाह्या — क्रिया-दीक्षा बाह्य है · वेधाख्या आभ्यन्तरी मता — वेध नामक आभ्यन्तरी मानी गई

अन्तः शुद्धिर्बहिः शुद्धिर्द्विविधा परिकीर्तिता ।

७९

अन्तरा च क्रियाशुद्धिर्बहिः शुद्धिश्च दीक्षया ॥ ७९ ॥

अन्तःशुद्धि और बहिःशुद्धि — यह दो प्रकार की कही गई है; भीतर क्रिया से शुद्धि, और बाहर दीक्षा से शुद्धि।

पदपाठ अन्तःशुद्धिः बहिःशुद्धिः — अन्तःशुद्धि और बहिःशुद्धि · द्विविधा परिकीर्तिता — दो प्रकार की कही गई · अन्तरा च क्रियाशुद्धिः — और भीतर क्रिया से शुद्धि · बहिःशुद्धिः च दीक्षया — और बहिःशुद्धि दीक्षा से

दीक्षया मोक्षदीपेन चण्डालोऽपि विमुच्यते ।

आभ्यां विना कुलेशानि कौलिको नैव मुच्यते ॥ ८० ॥

८०

मोक्ष के दीपक दीक्षा से चण्डाल भी मुक्त हो जाता है; इन दोनों के बिना, हे कुलेशानि! कौलिक कभी मुक्त नहीं होता।

पदपाठ दीक्षया मोक्षदीपेन — मोक्ष-दीप दीक्षा से · चण्डालः अपि विमुच्यते — चण्डाल भी मुक्त होता है · आभ्यां विना कुलेशानि — इन दोनों के बिना, हे कुलेशानि · कौलिकः न एव मुच्यते — कौलिक मुक्त नहीं होता

शरीरस्य न संस्कारो जायते न च कर्मणः ।

आत्मनः कारयेद्दीक्षामनादिकुलकुण्डलीम् ॥ ८१ ॥

८१

संस्कार न शरीर का होता है, न कर्म का; आत्मा के लिए ही दीक्षा करानी चाहिए — जो अनादि कुल-कुण्डली है।

पदपाठ शरीरस्य न संस्कारः जायते — शरीर का संस्कार नहीं होता · न च कर्मणः — न कर्म का · आत्मनः कारयेत् दीक्षाम् — आत्मा की दीक्षा कराए · अनादिकुलकुण्डलीम् — अनादि कुल-कुण्डली

दीक्षा ह्येताः कर्मसाम्ये भिन्नार्थप्रतिपादिकाः ।

अभिसन्धानतो देवि देशिकोत्तमशिष्ययोः ॥ ८२ ॥

८२

ये दीक्षाएँ कर्म में समान होने पर भी, हे देवि! उत्तम गुरु और शिष्य के अभिसन्धान (सङ्कल्प) के अनुसार भिन्न-भिन्न फल देने वाली हैं।

पदपाठ दीक्षाः हि एताः — ये दीक्षाएँ · कर्मसाम्ये — कर्म में समान होकर भी · भिन्नार्थप्रतिपादिकाः — भिन्न फल देती हैं · अभिसन्धानतो देवि — अभिसन्धान (संकल्प) से, हे देवि · देशिकोत्तमशिष्ययोः — श्रेष्ठ गुरु और शिष्य के

मन्त्रौषधेर्यथा हन्याद्विषशक्तिं कुलेश्वरि ।

पशुपाशं तथा छिन्द्यादीक्षया मन्त्रवित् क्षणात् ॥ ८३ ॥

८३

जैसे मन्त्र और औषधि से विष की शक्ति नष्ट की जाती है, हे कुलेश्वरि! वैसे ही मन्त्रवेत्ता दीक्षा से क्षण भर में पशुपाश को काट देता है।

पदपाठ मन्त्रौषधेः यथा हन्यात् — जैसे मन्त्र और औषधि से नष्ट करे · विषशक्तिं कुलेश्वरि — विष-शक्ति को, हे कुलेश्वरि · पशुपाशं तथा छिन्द्यात् — वैसे पशु-पाश को काटे · दीक्षया मन्त्रवित् क्षणात् — दीक्षा से मन्त्रज्ञ क्षण में

अस्मात् प्रवितताद्वन्धात् परसंस्थानबोधकात् ।

दीक्षैव मोक्षयेत् पूर्वं दिव्यं धाम नयत्यपि ॥ ८४ ॥

८४

इस विस्तृत बन्धन से, जो परम स्थान का बोध कराती है, दीक्षा ही पहले मुक्त करती है और दिव्य धाम को भी ले जाती है।

पदपाठ अस्मात् प्रवितताद्वन्धात् — इस विस्तृत बन्धन से · परसंस्थानबोधकात् — पर-संस्थान (परम धाम) का बोध कराने वाली · दीक्षा एव मोक्षयेत् पूर्वं — दीक्षा ही पहले मुक्त करती है · दिव्यं धाम नयति अपि — और दिव्य धाम को भी ले जाती है

उपपातकलक्षाणि महापातककोटिशः ।

क्षणाद्दहति देवेशि दीक्षा हि विधिना कृता ॥ ८५ ॥

८५

लाखों उपपातकों और करोड़ों महापातकों को, हे देवेशि! विधिपूर्वक की गई दीक्षा क्षण भर में भस्म कर देती है।

पदपाठ उपपातकलक्षाणि — लाखों उपपातक · महापातककोटिशः — करोड़ों महापातक · क्षणाद् दहति देवेशि — क्षण में जला देती है, हे देवेशि · दीक्षा हि विधिना कृता — विधि से की गई दीक्षा

यया चोन्मीलितात्मानो भवन्ति पशवः शिवाः ।

सा दीक्षा ह्युदिता देवि पशुपाशविमोचिका ॥ ८६ ॥

८६

जिससे आत्मा के उन्मीलित होने पर पशु शिव हो जाते हैं — हे देवि! वह दीक्षा पशुपाश से छुड़ाने वाली कही गई है।

पदपाठ यया च उन्मीलितात्मानः — जिससे उन्मीलित आत्मा वाले · भवन्ति पशवः शिवाः — पशु शिव हो जाते हैं · सा दीक्षा हि उदिता देवि — वह दीक्षा कही गई, हे देवि · पशुपाशविमोचिका — पशु-पाश से मुक्त करने वाली

यया दीक्षितमात्रेण जायन्ते प्रत्ययाः प्रिये ।

सा दीक्षा मोक्षदा ज्ञेया शेषास्तु जनसेविकाः ॥ ८७ ॥

८७

जिससे दीक्षित होते ही प्रत्यय (लक्षण) उत्पन्न हो जाते हैं, हे प्रिये! वह दीक्षा मोक्षदा जाननी चाहिए; शेष तो जन-सेविका (लौकिक) हैं।

पदपाठ यया दीक्षितमात्रेण — जिससे दीक्षित होने मात्र से · जायन्ते प्रत्ययाः प्रिये — प्रत्यय (प्रतीति) उत्पन्न होते हैं, हे प्रिये · सा दीक्षा मोक्षदा ज्ञेया — वह दीक्षा मोक्षदा जाननी चाहिए · शेषाः तु जनसेविकाः — शेष तो जनसेविका (लोकरंजन) हैं

उपासनाशतेनापि यां विना नैव सिध्यति ।

तां दीक्षामाश्रयेद् यत्नात् श्रीगुरोर्मन्त्रसिद्धये ॥ ८८ ॥

८८

जिसके बिना सौ उपासनाओं से भी सिद्धि नहीं होती, मन्त्रसिद्धि के लिए श्रीगुरु से उस दीक्षा का यत्नपूर्वक आश्रय ले।

पदपाठ उपासनाशतेन अपि — सौ उपासनाओं से भी · यां विना नैव सिध्यति — जिसके बिना सिद्ध नहीं होता · तां दीक्षाम् आश्रयेत् यत्नात् — उस दीक्षा का यत्न से आश्रय ले · श्रीगुरोः मन्त्रसिद्धये — श्रीगुरु से, मन्त्र-सिद्धि के लिए

रसेन्द्रेण यथा विद्धमयः सुवर्णतां व्रजेत् ।

दीक्षाविद्धस्तथा ह्यात्मा शिवत्वं लभते प्रिये ॥ ८९॥

८९

जैसे पारद से विद्ध लोहा सुवर्ण हो जाता है, वैसे ही दीक्षा से विद्ध आत्मा शिवत्व को प्राप्त होती है, हे प्रिये!

पदपाठ रसेन्द्रेण यथा विद्धम् — जैसे रसेन्द्र (पारद) से विद्ध · अयः सुवर्णतां व्रजेत् — लोहा सुवर्ण हो जाता है · दीक्षाविद्धः तथा हि आत्मा — वैसे दीक्षा से विद्ध आत्मा · शिवत्वं लभते प्रिये — शिवत्व पाता है, हे प्रिये

दीक्षाग्निदग्धकर्मासौ मायाविच्छिन्नबन्धनः ।

गतः परां ज्ञानकाष्ठां निर्बीजस्तु शिवो भवेत् ॥ ९०॥

९०

जिसका कर्म दीक्षा की अग्नि से दग्ध हो गया, जिसका मायाबन्धन कट गया, वह ज्ञान की परम काष्ठा को प्राप्त होकर निर्बीज शिव हो जाता है।

पदपाठ दीक्षाग्निदग्धकर्मा असौ — दीक्षा-अग्नि से दग्ध कर्म वाला वह · मायाविच्छिन्नबन्धनः — माया के बन्धन छिन्न · गतः परां ज्ञानकाष्ठां — ज्ञान की परम सीमा पहुँचा · निर्बीजः तु शिवः भवेत् — निर्बीज होकर शिव हो जाता है

गतं शूद्रस्य शूद्रत्वं विप्रस्यापि च विप्रता ।

दीक्षासंस्कारसम्पन्ने जातिभेदो न विद्यते ॥ ९१॥

९१

शूद्र का शूद्रत्व और विप्र का विप्रत्व भी चला जाता है; दीक्षा-संस्कार से सम्पन्न में जातिभेद नहीं होता।

पदपाठ गतं शूद्रस्य शूद्रत्वं — शूद्र का शूद्रत्व गया · विप्रस्य अपि च विप्रता — और विप्र का विप्रत्व भी · दीक्षासंस्कारसम्पन्ने — दीक्षा-संस्कार से सम्पन्न में · जातिभेदः न विद्यते — जातिभेद नहीं होता

शिवलिङ्गे शिला बुद्धिं कुर्वन् यत् पापमश्रुते ।

दीक्षितश्चापि पूर्वत्वस्मृत्या तत् पापमाप्नुयात् ॥ ९२ ॥

९२

शिवलिङ्ग में शिला की बुद्धि करने से जो पाप लगता है, दीक्षित (व्यक्ति) के पूर्व (जाति) का स्मरण करने से भी वही पाप प्राप्त होता है।

पदपाठ शिवलिङ्गे शिलाबुद्धिं कुर्वन् — शिवलिङ्ग में शिला-बुद्धि करते · यत् पापम् अश्रुते — जो पाप पाता है · दीक्षितः च अपि — दीक्षित भी · पूर्वत्वस्मृत्या — पूर्व अवस्था की स्मृति से · तत् पापम् आप्नुयात् — वह पाप पाता है

दार्वश्मलौहमृद्रत्नजातिलिङ्गप्रतिष्ठितम् ।

यथोच्यते तथा शुद्धाः सर्ववर्णास्तु दीक्षिताः ॥ ९३ ॥

९३

जैसे काष्ठ, पत्थर, लोहा, मिट्टी या रत्न — किसी भी जाति का लिङ्ग प्रतिष्ठित होने पर (शिव) कहा जाता है, वैसे ही सब वर्णों के दीक्षित शुद्ध हैं।

पदपाठ दार्वश्मलौहमृद्रत्न- — लकड़ी, पत्थर, लोहा, मिट्टी, रत्न · जातिलिङ्गप्रतिष्ठितम् — जाति (प्रकार) का प्रतिष्ठित लिङ्ग · यथा उच्यते — जैसे (शिव) कहलाता है · तथा शुद्धाः — वैसे शुद्ध हैं · सर्ववर्णाः तु दीक्षिताः — सब वर्णों के दीक्षित

येन पूजितमात्रेण चाब्रह्मभुवनान्तिकम् ।

पूजितं तेन सर्वं स्याद्दीक्षितेन न संशयः ॥ ९४ ॥

९४

जिस दीक्षित की पूजा मात्र से ब्रह्मलोक पर्यन्त सब कुछ पूजित हो जाता है — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ येन पूजितमात्रेण — जिसकी पूजा मात्र से · च आब्रह्मभुवनान्तिकम् — ब्रह्मलोक तक · पूजितं तेन सर्वं स्यात् — उसके द्वारा सब पूजित हो जाता है · दीक्षितेन न संशयः — दीक्षित द्वारा, सन्देह नहीं

दीक्षितस्य न कार्यं स्यात्तपोभिर्नियमव्रतैः ।

९५

न तीर्थक्षेत्रगमनैर्न च शरीरयन्त्रणैः ॥ ९५॥

दीक्षित को तप, नियम और व्रतों से कोई प्रयोजन नहीं, न तीर्थ-क्षेत्र की यात्राओं से, न शरीर की यन्त्रणाओं से।

पदपाठ दीक्षितस्य न कार्यं स्यात् — दीक्षित को आवश्यकता नहीं · तपोभिः नियमव्रतैः — तप, नियम, व्रतों की · न तीर्थक्षेत्रगमनैः — न तीर्थ-क्षेत्र जाने की · न च शरीरयन्त्रणैः — न शरीर-यन्त्रणा की

अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जपपूजादिकाः क्रियाः ।

९६

न फलन्ति प्रिये तेषां शिलायामुप्तबीजवत् ॥ ९६॥

अदीक्षित जो जप-पूजा आदि क्रियाएँ करते हैं, हे प्रिये! वे उनके लिए फलती नहीं — पत्थर पर बोए बीज की तरह।

पदपाठ अदीक्षिताः ये कुर्वन्ति — अदीक्षित जो करते हैं · जपपूजादिकाः क्रियाः — जप, पूजा आदि क्रियाएँ · न फलन्ति प्रिये तेषां — उनके लिए फल नहीं देतीं, हे प्रिये · शिलायाम् उप्तबीजवत् — शिला पर बोए बीज की तरह

देवि दीक्षाविहीनस्य न सिद्धिर्न च सद्गतिः ।

९७

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गुरुणा दीक्षितो भवेत् ॥ ९७॥

हे देवि! दीक्षाहीन को न सिद्धि होती है, न सद्गति; इसलिए सर्वप्रयत्न से गुरु द्वारा दीक्षित होना चाहिए।

पदपाठ देवि दीक्षाविहीनस्य — हे देवि, दीक्षा-हीन की · न सिद्धिः न च सद्गतिः — न सिद्धि न सद्गति · तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · गुरुणा दीक्षितः भवेत् — गुरु से दीक्षित हो

द्विजो यो दीक्षितः पश्चादन्यजः पूर्वदीक्षितः ।

९८

द्विजः कनिष्ठः स ज्येष्ठ इति शास्त्रार्थनिर्णयः ॥ ९८ ॥

जो द्विज बाद में दीक्षित हुआ और अन्यज पहले दीक्षित हुआ — द्विज कनिष्ठ है और वह (अन्यज) ज्येष्ठ; यही शास्त्रार्थ का निर्णय है।

पदपाठ द्विजः यः दीक्षितः पश्चात् — जो द्विज बाद में दीक्षित हुआ · अन्यजः पूर्वदीक्षितः — अन्यज पहले दीक्षित · द्विजः कनिष्ठः स ज्येष्ठः — द्विज कनिष्ठ, वह ज्येष्ठ · इति शास्त्रार्थनिर्णयः — यह शास्त्रार्थ का निर्णय है

गुरुशक्तिसुतानाञ्च यो वा स्यात् पूर्वदीक्षितः ।

९९

गुरुवत्तेन ते पूज्या नावमान्याः कथञ्चन ॥ ९९ ॥

गुरु की शक्ति और पुत्रों में जो भी पहले दीक्षित हो — वे इसलिए गुरु के समान पूज्य हैं, किसी प्रकार अपमान के योग्य नहीं।

पदपाठ गुरुशक्तिसुतानां च — और गुरु-शक्ति और पुत्रों में · यः वा स्यात् पूर्वदीक्षितः — जो पहले दीक्षित हो · गुरुवत् तेन ते पूज्याः — गुरु की तरह इसलिए वे पूज्य हैं · न अवमान्याः कथञ्चन — किसी प्रकार अपमान्य नहीं

शिष्यो दीक्षितमात्रश्चेद् यदि स्वर्गं गतो गुरुः ।

१००

एकसन्तानकेनैव पूर्णसंस्कारमाचरेत् ॥ १०० ॥

यदि शिष्य केवल दीक्षित ही हुआ हो और गुरु स्वर्ग चले गए हों, तो उसी सन्तान-परम्परा के (गुरु) से ही पूर्ण संस्कार कराए।

पदपाठ शिष्यः दीक्षितमात्रः चेत् — यदि शिष्य अभी दीक्षित मात्र हो · यदि स्वर्गं गतः गुरुः — और गुरु स्वर्ग चले गए हों · एकसन्तानकेन एव — एक सन्तान (परम्परा) वाले से ही · पूर्णसंस्कारम् आचरेत् — पूर्ण संस्कार कराए

दर्शनेषु च सर्वेषु गुरुणा ज्ञानशालिना ।

दीक्षितो यस्तु विधिना स मुक्तो नापरः प्रिये ॥ १०१ ॥

१०१

और सभी दर्शनों में जो ज्ञानशाली गुरु द्वारा विधिपूर्वक दीक्षित है — वही मुक्त है, दूसरा नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ दर्शनेषु च सर्वेषु — और सब दर्शनों में · गुरुणा ज्ञानशालिना — ज्ञानशाली गुरु द्वारा · दीक्षितः यः तु विधिना — जो विधि से दीक्षित है · स मुक्तः न अपरः प्रिये — वह मुक्त है, दूसरा नहीं, हे प्रिये

अधिवासनपूर्वन्तु चक्रपूजापुरःसरम् ।

दीक्षया शोधयेच्छिष्यमन्यथा निष्फलं भवेत् ॥ १०२ ॥

१०२

अधिवासन पूर्वक और चक्रपूजा के साथ शिष्य को दीक्षा से शुद्ध करे; अन्यथा वह निष्फल हो जाता है।

पदपाठ अधिवासनपूर्वं तु — अधिवासन पूर्वक · चक्रपूजापुरःसरम् — चक्रपूजा-पूर्वक · दीक्षया शोधयेत् शिष्यम् — दीक्षा से शिष्य को शुद्ध करे · अन्यथा निष्फलं भवेत् — अन्यथा निष्फल होता है

शूद्रसङ्करजातीनामादिशुद्धिर्विधीयते ।

पादोदकप्रदानाद्यैः कुर्यात् पापविमोचनम् ॥ १०३ ॥

१०३

शूद्रों और सङ्कर जातियों के लिए आदिशुद्धि का विधान है; पादोदक-दान आदि से उनका पाप-विमोचन करे।

पदपाठ शूद्रसङ्करजातीनाम् — शूद्र और संकर जातियों की · आदिशुद्धिः विधीयते — आदिशुद्धि विधान की गई है · पादोदकप्रदानाद्यैः — पादोदक (चरणामृत) देने आदि से · कुर्यात् पापविमोचनम् — पाप-विमोचन करे

एकाब्देन द्विजो योग्यः क्षत्रियो वत्सरद्वयात् ।

१०४

वैश्यो योग्यस्त्रिभिर्वर्षैश्चतुर्भिः शूद्र एव च ॥ १०४ ॥

द्विज एक वर्ष में योग्य होता है, क्षत्रिय दो वर्ष से, वैश्य तीन वर्षों से योग्य होता है, और शूद्र चार से।

पदपाठ एकाब्देन द्विजः योग्यः — एक वर्ष में द्विज योग्य · क्षत्रियः वत्सरद्वयात् — क्षत्रिय दो वर्ष से · वैश्यः योग्यः त्रिभिः वर्षैः — वैश्य तीन वर्ष से योग्य · चतुर्भिः शूद्रः एव च — और शूद्र चार से

विधवायाः सुतादेशात् कन्यायाः पितुराज्ञया ।

१०५

नाधिकारः स्वतो नार्या भार्याया भर्तुराज्ञया ॥ १०५ ॥

विधवा के लिए पुत्र के आदेश से, कन्या के लिए पिता की आज्ञा से, भार्या के लिए पति की आज्ञा से — स्त्री का स्वयं अधिकार नहीं।

पदपाठ विधवायाः सुतादेशात् — विधवा के लिए पुत्र के आदेश से · कन्यायाः पितुः आज्ञया — कन्या के लिए पिता की आज्ञा से · न अधिकारः स्वतः नार्याः — नारी को स्वतः अधिकार नहीं · भार्यायाः भर्तुः आज्ञया — भार्या के लिए पति की आज्ञा से

स्याद्वेदाध्ययने शूद्रो नाधिकारी यथा प्रिये ।

१०६

तथैवादीक्षितश्चापि नाधिकारी कुलेश्वरि ॥ १०६ ॥

जैसे वेदाध्ययन में शूद्र का अधिकार नहीं, हे प्रिये! वैसे ही अदीक्षित का भी (कुल में) अधिकार नहीं, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ स्यात् वेदाध्ययने शूद्रः — जैसे वेदाध्ययन में शूद्र · न अधिकारी यथा प्रिये — अधिकारी नहीं, हे प्रिये · तथा एव अदीक्षितः च अपि — वैसे ही अदीक्षित भी · न अधिकारी कुलेश्वरि — अधिकारी नहीं, हे कुलेश्वरि

श्रीगुरुं गुरुपत्नीञ्च तत्पुत्रं शक्तिकौलिकान् ।

दीक्षितस्तोषयेद्देवि यथाविभवविस्तरम् ॥ १०७ ॥

१०७

दीक्षित (शिष्य) श्रीगुरु, गुरुपत्नी, उनके पुत्र, शक्तियों और कौलिकों को, हे देवि! अपने वैभव के विस्तार के अनुसार सन्तुष्ट करे।

पदपाठ श्रीगुरुं गुरुपत्नीं च — श्रीगुरु और गुरुपत्नी को · तत्पुत्रं शक्तिकौलिकान् — उनके पुत्र, शक्तियों, कौलिकों को · दीक्षितः तोषयेत् देवि — दीक्षित सन्तुष्ट करे, हे देवि · यथाविभवविस्तरम् — यथावैभव विस्तार से

इति ते कथितं किञ्चित् परीक्षा गुरुशिष्ययोः ।

दीक्षाभेदादिकं देवि किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १०८ ॥

१०८

इस प्रकार गुरु और शिष्य की परीक्षा, दीक्षा के भेद आदि के विषय में तुम्हें कुछ कहा गया, हे देवि! अब और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · परीक्षा गुरुशिष्ययोः — गुरु और शिष्य की परीक्षा · दीक्षाभेदादिकं देवि — दीक्षा-भेद आदि, हे देवि · किं भूयः श्रोतुम् इच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णव निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे गुरुशिष्यपरीक्षाकथनं नाम चतुर्दश उल्लासः ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
गुरुशिष्यपरीक्षाकथन नामक चतुर्दश उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ पञ्चदशोल्लासः

पञ्चदश उल्लास — पुरश्चरणादिकथनम्



ईश्वर पुरश्चरण का उपदेश करते हैं: पञ्चाङ्ग, जप के योग्य स्थान और आसन, बीजों सहित प्राणायाम-क्रम, अक्षमाला और गणना की अङ्गुलियाँ, जप के तीन भेद, मन्त्रचैतन्य और जागृत मन्त्र के लक्षण, मन्त्र के साथ दोष और उन्हें हरने वाले दस संस्कार, मन्त्री का आहार, नक्षत्र-राशि सूत्रों सहित सिद्ध-साध्य-सुसिद्ध-अरि का शोधन, उससे मुक्त मन्त्र, तथा जापक का आचार और गुण।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि पुरश्चरणलक्षणम् ।

१

स्थानाहारादिभेदञ्च वद मे परमेश्वर ॥ १॥

हे कुलेश! मैं पुरश्चरण के लक्षण, तथा स्थान, आहार आदि के भेद सुनना चाहती हूँ
— मुझे बताइए, हे परमेश्वर!

पदपाठ कुलेश — हे कुलेश · श्रोतुमिच्छामि — मैं सुनना चाहती हूँ · पुरश्चरणलक्षणम् — पुरश्चरण के लक्षण · स्थानाहारादिभेदञ्च — और स्थान, आहार आदि के भेद · वद मे — मुझे बताइए · परमेश्वर — हे परमेश्वर

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण मन्त्रतत्त्वं प्रकाशते ॥ २ ॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से मन्त्र का तत्त्व प्रकाशित हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि — सुनो देवि · प्रवक्ष्यामि — मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · मन्त्रतत्त्वं — मन्त्र-तत्त्व · प्रकाशते — प्रकाशित होता है

जपयज्ञात् परो यज्ञो नापरोऽस्तीह कश्चन ।

तस्माज्जपेन धर्मार्थकाममोक्षांश्च साधयेत् ॥ ३ ॥

३

जपयज्ञ से बढ़कर कोई भी यज्ञ इस लोक में नहीं है; अतः जप के द्वारा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करे।

पदपाठ जपयज्ञात् परः — जपयज्ञ से पर · यज्ञः — यज्ञ · नापरोऽस्तीह — यहाँ दूसरा नहीं है · कश्चन — कोई भी · तस्माज्जपेन — इसलिए जप से · धर्मार्थकाममोक्षांश्च — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष · साधयेत् — साधे

सर्वपादान् परित्यज्य मन्त्रपादं समभ्यसेत् ।

अप्रमादाद् भवेत् सिद्धिः प्रमादादशुभं फलम् ॥ ४ ॥

४

अन्य सब मार्गों को छोड़कर मन्त्रमार्ग का ही सम्यक् अभ्यास करे; अप्रमाद से सिद्धि होती है और प्रमाद से अशुभ फल।

पदपाठ सर्वपादान् परित्यज्य — सब (अन्य) मार्गों को छोड़कर · मन्त्रपादं — मन्त्र-मार्ग का · समभ्यसेत् — अभ्यास करे · अप्रमादाद् भवेत् सिद्धिः — अप्रमाद से सिद्धि होती है · प्रमादादशुभं फलम् — प्रमाद से अशुभ फल

भोगापवर्गसङ्कल्पकल्पव्रतशुभो जपः ।

जपध्यानमयं योगं तस्मादेवि समाचरेत् ॥ ५॥

५

भोग और अपवर्ग के सङ्कल्प के लिए जप कल्पवृक्ष के समान शुभ व्रत है; अतः हे देवि! जप और ध्यान से युक्त योग का आचरण करे।

पदपाठ भोगापवर्गसङ्कल्पकल्पव्रतशुभः — भोग और अपवर्ग (मोक्ष) के संकल्प के लिए कल्पव्रत-सा शुभ · जपः — जप · जपध्यानमयं योगं — जप-ध्यानमय योग · तस्मादेवि — इसलिए, हे देवि · समाचरेत् — आचरण करे

आब्रह्मबीजदोषाश्च नियमातिक्रमोद्भवाः ।

ज्ञानाज्ञानकृताः सर्वं प्रणश्यन्ति जपात् प्रिये ॥ ६॥

६

ब्रह्मा से लेकर बीज तक के जो दोष नियमों के अतिक्रमण से उत्पन्न होते हैं, जानकर या अनजाने किये गये — वे सब जप से नष्ट हो जाते हैं, हे प्रिये!

पदपाठ आब्रह्मबीजदोषाश्च — ब्रह्मा से बीज तक के दोष · नियमातिक्रमोद्भवाः — नियम के अतिक्रम से उत्पन्न · ज्ञानाज्ञानकृताः — जानते-अनजाने किए · सर्वं — सब · प्रणश्यन्ति — नष्ट होते हैं · जपात् प्रिये — जप से, हे प्रिये

संसारे दुःखभूयिष्ठे यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः ।

पञ्चाङ्गोपासनेनैव मन्त्रजापी व्रजेत् सुखम् ॥ ७॥

७

दुःखबहुल संसार में यदि कोई अपनी सिद्धि चाहे, तो पञ्चाङ्ग उपासना से ही मन्त्रजापी सुख को प्राप्त होता है।

पदपाठ संसारे दुःखभूयिष्ठे — दुःख-बहुल संसार में · यदीच्छेत् — यदि चाहे · सिद्धिमात्मनः — अपनी सिद्धि · पञ्चाङ्गोपासनेनैव — पंचांग उपासना से ही · मन्त्रजापी — मन्त्र-जापी · व्रजेत् सुखम् — सुख पाता है

पूजा त्रैकालिकी नित्यं जपस्तर्पणमेव च ।

होमो ब्राह्मणभुक्तिश्च पुरश्चरणमुच्यते ॥ ८ ॥

८

नित्य त्रिकाल पूजा, जप, तर्पण, होम और ब्राह्मण-भोजन — यह पुरश्चरण कहलाता है।

पदपाठ पूजा त्रैकालिकी नित्यं — नित्य त्रैकालिक पूजा · जपः — जप · तर्पणमेव च — और तर्पण · होमः — होम · ब्राह्मणभुक्तिश्च — और ब्राह्मण-भोजन · पुरश्चरणमुच्यते — पुरश्चरण कहलाता है

यद् यदङ्गं विहीयेत तत्संख्याद्विगुणो जपः ।

कुर्याद् द्वित्रिचतुःपञ्चसंख्यां वा साधकः प्रिये ॥ ९ ॥

९

जो-जो अङ्ग छूट जाए, उसकी संख्या से दुगुना जप करे, अथवा हे प्रिये! साधक दो, तीन, चार या पाँच गुनी संख्या करे।

पदपाठ यद् यदङ्गं विहीयेत — जो-जो अंग छूट जाए · तत्संख्याद्विगुणः जपः — उसकी संख्या का दुगुना जप · कुर्याद् — करे · द्वित्रिचतुःपञ्चसंख्यां वा — या दो, तीन, चार, पाँच गुना संख्या · साधकः प्रिये — साधक, हे प्रिये

कुर्वीत चाङ्गसिद्ध्यर्थं तदशक्तौ स भक्तितः ।

तच्चेदङ्गं विहीयेत मन्त्री नेष्टमवाप्नुयात् ॥ १० ॥

१०

अङ्गों की सिद्धि के लिए, उनमें असमर्थ होने पर, भक्तिपूर्वक वह (प्रतिनिधि जप) करे; यदि वह अङ्ग छूट जाए तो मन्त्री अभीष्ट को प्राप्त नहीं करता।

पदपाठ कुर्वीत — करे · चाङ्गसिद्ध्यर्थं — अंग-सिद्धि के लिए · तदशक्तौ — उसमें असमर्थ होने पर · स भक्तितः — वह भक्ति से · तच्चेदङ्गं विहीयेत — यदि वह अंग छूट जाए · मन्त्री — मन्त्री · नेष्टमवाप्नुयात् — इष्ट नहीं पाता

अन्नैश्चतुर्विधैर्देवि पदार्थैः षड्रसान्वितैः ।

सुभोजितेषु विप्रेषु सर्वं हि सफलं भवेत् ॥ ११ ॥

११

हे देवि! चार प्रकार के अन्न और षड्रसयुक्त पदार्थों से ब्राह्मणों को भली-भाँति भोजन कराने पर सब कुछ सफल हो जाता है।

पदपाठ अन्नैश्चतुर्विधैर्देवि — चार प्रकार के अन्नों से, हे देवि · पदार्थैः षड्रसान्वितैः — षड्रस युक्त पदार्थों से · सुभोजितेषु विप्रेषु — विप्रों को भली प्रकार भोजन कराने पर · सर्वं हि सफलं भवेत् — सब सफल होता है

सम्यक्सिद्धैकमन्त्रस्य पञ्चाङ्गोपासनेन च ।

सर्वमन्त्राश्च सिध्यन्ति त्वत्प्रसादात् कुलेश्वरि ॥ १२ ॥

१२

जिसका एक मन्त्र पञ्चाङ्ग उपासना से सम्यक् सिद्ध हो गया है, उसके सब मन्त्र तुम्हारी कृपा से सिद्ध हो जाते हैं, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ सम्यक्सिद्धैकमन्त्रस्य — जिसका एक मन्त्र सम्यक् सिद्ध है · पञ्चाङ्गोपासनेन च — और पंचांग उपासना से · सर्वमन्त्राश्च सिध्यन्ति — सब मन्त्र सिद्ध होते हैं · त्वत्प्रसादात् — तुम्हारे प्रसाद से · कुलेश्वरि — हे कुलेश्वरि

उपदेशस्य सामर्थ्यात् श्रीगुरोश्च प्रसादतः ।

मन्त्रप्रभावाद्भक्त्या च मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ १३ ॥

१३

उपदेश के सामर्थ्य से, श्रीगुरु की कृपा से, मन्त्र के प्रभाव से और भक्ति से मन्त्रसिद्धि उत्पन्न होती है।

पदपाठ उपदेशस्य सामर्थ्यात् — उपदेश के सामर्थ्य से · श्रीगुरोश्च प्रसादतः — और श्रीगुरु के प्रसाद से · मन्त्रप्रभावाद् — मन्त्र के प्रभाव से · भक्त्या च — और भक्ति से · मन्त्रसिद्धिः प्रजायते — मन्त्र-सिद्धि होती है

सिद्धमन्त्राद् गुरोर्लब्धो मन्त्रो यः सिद्धिभाग्यभवेत् ।

१४

पूर्वजन्मकृताभ्यासान्मन्त्रो वा शीघ्रसिद्धिदः ॥ १४ ॥

सिद्धमन्त्र गुरु से प्राप्त मन्त्र सिद्धि का भागी होता है; अथवा पूर्वजन्म में किये अभ्यास से मन्त्र शीघ्र सिद्धि देने वाला होता है।

पदपाठ सिद्धमन्त्राद् गुरोः — सिद्ध-मन्त्र गुरु से · लब्धः मन्त्रः यः — जो मन्त्र प्राप्त है · सिद्धिभाग्यभवेत् — सिद्धि का भागी होता है · पूर्वजन्मकृताभ्यासात् — पूर्वजन्म के अभ्यास से · मन्त्रः वा — या मन्त्र · शीघ्रसिद्धिदः — शीघ्र सिद्धि देता है

दीक्षापूर्व कुलेशानि पारम्पर्यक्रमागतम् ।

१५

न्यायलब्धश्च यो मन्त्रः स च सिद्धो न संशयः ॥ १५ ॥

हे कुलेशानि! जो मन्त्र दीक्षापूर्वक, परम्परा-क्रम से आया हुआ और न्यायपूर्वक प्राप्त है, वह सिद्ध ही है, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ दीक्षापूर्व — दीक्षा-पूर्वक · कुलेशानि — हे कुलेशानि · पारम्पर्यक्रमागतम् — परम्परा-क्रम से आया · न्यायलब्धश्च यः मन्त्रः — और जो मन्त्र न्याय से प्राप्त है · स च सिद्धः — वह सिद्ध है · न संशयः — सन्देह नहीं

मासमात्रं जपेन्मन्त्रं भूतलिप्या तु संपुटम् ।

१६

क्रमोत्क्रमात् सहस्रन्तु तस्य सिद्धो भवेन्मनुः ॥ १६ ॥

एक मास तक भूतलिपि से संपुटित मन्त्र का क्रम और उत्क्रम से सहस्र जप करे; उसका मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

पदपाठ मासमात्रं — एक मास मात्र · जपेन्मन्त्रं — मन्त्र जपे · भूतलिप्या तु संपुटम् — भूतलिपि से संपुटित · क्रमोत्क्रमात् — क्रम और उत्क्रम से · सहस्रन्तु — हजार बार · तस्य — उसका · सिद्धः भवेन्मनुः — मन्त्र सिद्ध हो जाता है

त्रिषष्ट्यक्षरसंयुक्तमातृकाक्षरसंपुटम् ।

१७

मण्डलं पूजयेन्मन्त्रं मातृकावर्णमुच्चरन् ॥ १७ ॥

तिरसठ अक्षरों से युक्त मातृका-अक्षरों से संपुटित मन्त्र को, मातृका के वर्णों का उच्चारण करते हुए, मण्डल की पूजा करे।

पदपाठ त्रिषष्ट्यक्षरसंयुक्तमातृकाक्षरसंपुटम् — तिरसठ अक्षरों सहित मातृका-अक्षरों से संपुटित · मण्डलं पूजयेत् — मण्डल की पूजा करे · मन्त्रं — मन्त्र · मातृकावर्णमुच्चरन् — मातृका-वर्णों का उच्चारण करते

मातृकाजपमात्रेण मन्त्राणां कोटिकोटयः ।

१८

जपिताः स्युर्न सन्देहो यतः सर्वं तदुद्भवम् ॥ १८ ॥

मातृका के जप मात्र से कोटि-कोटि मन्त्रों का जप हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं, क्योंकि सब कुछ उसी से उत्पन्न है।

पदपाठ मातृकाजपमात्रेण — मातृका-जप मात्र से · मन्त्राणां कोटिकोटयः — करोड़ों-करोड़ मन्त्र · जपिताः स्युः — जपे हुए होते हैं · न सन्देहः — सन्देह नहीं · यतः — क्योंकि · सर्वं तदुद्भवम् — सब उससे उत्पन्न है

अनेककोटिमन्त्राणि चित्ताकुलकराणि च ।

१९

मन्त्रं गुरुकृपाप्राप्तमेकं स्यात् सर्वसिद्धिदम् ॥ १९ ॥

अनेक कोटि मन्त्र चित्त को व्याकुल करने वाले हैं; गुरुकृपा से प्राप्त एक ही मन्त्र सर्वसिद्धि देने वाला होता है।

पदपाठ अनेककोटिमन्त्राणि — अनेक करोड़ मन्त्र · चित्ताकुलकराणि च — चित्त को आकुल करने वाले हैं · मन्त्रं गुरुकृपाप्राप्तमेकं — गुरु-कृपा से प्राप्त एक मन्त्र · स्यात् सर्वसिद्धिदम् — सब सिद्धियाँ देता है

यदृच्छया श्रुतं मन्त्रं दृष्टेनापि छलेन च ।

२०

पत्रे स्थितं वा चाध्याप्य तज्जपः स्यादनर्थकृत् ॥ २० ॥

अकस्मात् सुना हुआ, देखा हुआ, छल से पाया हुआ, पत्र पर लिखा हुआ अथवा पढ़ाकर लिया हुआ मन्त्र — उसका जप अनर्थकारी होता है।

पदपाठ यदृच्छया श्रुतं मन्त्रं — यदृच्छा से सुना मन्त्र · दृष्टेनापि — या देखा · छलेन च — या छल से · पत्रे स्थितं वा — या पत्र पर लिखा मिला · चाध्याप्य — या (किसी को) पढ़ाकर · तज्जपः — उसका जप · स्यादनर्थकृत् — अनर्थ करता है

पुस्तके लिखितान्मन्त्रान् विलोक्य प्रजपन्ति ये ।

२१

ब्रह्महत्यासमं तेषां पातकं व्याधिदुःखदम् ॥ २१ ॥

जो पुस्तक में लिखे मन्त्रों को देखकर जप करते हैं, उनका पाप ब्रह्महत्या के समान है और व्याधि व दुःख देने वाला है।

पदपाठ पुस्तके लिखितान्मन्त्रान् — पुस्तक में लिखे मन्त्रों को · विलोक्य — देखकर · प्रजपन्ति ये — जो जपते हैं · ब्रह्महत्यासमं — ब्रह्महत्या के समान · तेषां पातकं — उनका पातक · व्याधिदुःखदम् — व्याधि और दुःख देने वाला

पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहा पर्वतमस्तकम् ।

२२

तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमः पावनं वनम् ॥ २२ ॥

पुण्यक्षेत्र, नदी का तट, गुफा, पर्वत का शिखर, तीर्थस्थान, नदियों का सङ्गम, पवित्र वन,

पदपाठ पुण्यक्षेत्रं — पुण्यक्षेत्र · नदीतीरं — नदीतट · गुहा — गुहा · पर्वतमस्तकम् — पर्वत-शिखर · तीर्थप्रदेशाः — तीर्थ-प्रदेश · सिन्धूनां सङ्गमः — नदियों का संगम · पावनं वनम् — पावन वन

उद्यानानि विविक्तानि विल्वमूलं तटं गिरेः ।

देवतायतनं कूलं समुद्रस्य निजं गृहम् ॥ २३ ॥

२३

एकान्त उद्यान, बिल्ववृक्ष का मूल, पर्वत का तट, देवालय, समुद्र का किनारा, अपना घर —

पदपाठ उद्यानानि विविक्तानि — एकान्त उद्यान · विल्वमूलं — बिल्व-मूल · तटं गिरेः — पर्वत का तट · देवतायतनं — देवालय · कूलं समुद्रस्य — समुद्र का तट · निजं गृहम् — अपना घर

साधनेषु प्रशस्तानि स्थानान्येतानि मन्त्रिणाम् ।

अथवा निवसेत्तत्र यत्र चित्तं प्रसीदति ॥ २४ ॥

२४

ये स्थान मन्त्रियों की साधना के लिए प्रशस्त हैं; अथवा वहीं निवास करे जहाँ चित्त प्रसन्न हो।

पदपाठ साधनेषु प्रशस्तानि — साधनों में प्रशस्त · स्थानान्येतानि — ये स्थान · मन्त्रिणाम् — मन्त्रियों के लिए · अथवा — अथवा · निवसेत्तत्र — वहाँ रहे · यत्र चित्तं प्रसीदति — जहाँ चित्त प्रसन्न हो

सूर्यस्याग्नेगुरोरिन्दोर्दीपस्य च जलस्य च ।

गोविप्रकुलवृक्षाणां सन्निधौ शस्यते जपः ॥ २५ ॥

२५

सूर्य, अग्नि, गुरु, चन्द्रमा, दीपक, जल, गौ, ब्राह्मण और कुलवृक्षों के सान्निध्य में जप प्रशस्त है।

पदपाठ सूर्यस्य — सूर्य के · अग्नेः — अग्नि के · गुरोः — गुरु के · इन्दोः — चन्द्र के · दीपस्य च — और दीप के · जलस्य च — और जल के · गोविप्रकुलवृक्षाणां — गौ, विप्र और कुलवृक्षों के · सन्निधौ — सन्निधान में · शस्यते जपः — जप प्रशस्त है

गृहे शतगुणं विद्याद् गोष्ठे लक्षगुणं भवेत् ।
कोटिर्देवालये पुण्यमनन्तं शिवसन्निधौ ॥ २६ ॥

२६

घर में सौ गुना, गोशाला में लाख गुना, देवालय में करोड़ गुना और शिव के सान्निध्य में अनन्त पुण्य जानना चाहिए।

पदपाठ गृहे शतगुणं विद्याद् — घर में सौ गुना जाने · गोष्ठे लक्षगुणं भवेत् — गोशाला में लाख गुना होता है · कोटिर्देवालये — देवालय में करोड़ · पुण्यमनन्तं — पुण्य अनन्त · शिवसन्निधौ — शिव के सन्निधान में

म्लेच्छदुष्टमृगव्यालशङ्कातङ्कविवर्जितः ।
एकान्तपावने निन्दारहिते भक्तिसंयुते ॥ २७ ॥

२७

म्लेच्छ, दुष्ट, हिंस्र पशु और सर्पों की शङ्का व आतङ्क से रहित, एकान्त पवित्र, निन्दारहित और भक्तियुक्त स्थान में,

पदपाठ म्लेच्छदुष्टमृगव्यालशङ्कातङ्कविवर्जितः — म्लेच्छ, दुष्ट, हिंस्र पशु, सर्प की शंका और भय से रहित · एकान्तपावने — एकान्त पावन में · निन्दारहिते — निन्दा-रहित · भक्तिसंयुते — भक्ति-युक्त

स्वदेशे धार्मिके देशे सुभिक्षे निरुपद्रवे ।
राजभक्तजनस्थाने निवसेत्तापसाश्रये ॥ २८ ॥

२८

अपने देश में, धार्मिक देश में, सुभिक्ष और उपद्रवरहित स्थान में, जहाँ के लोग राजभक्त हों, वहाँ तपस्वियों के आश्रम में निवास करे।

पदपाठ स्वदेशे — स्वदेश में · धार्मिके देशे — धार्मिक देश में · सुभिक्षे — सुभिक्ष में · निरुपद्रवे — उपद्रव-रहित · राजभक्तजनस्थाने — राजभक्त जनों के स्थान में · निवसेत् — रहे · तापसाश्रये — तपस्वियों के आश्रय में

राजानः सचिवा राज्ञां पुरुषाः प्रभवो जनाः ।
चरन्ति येन मार्गेण न वसेत्तत्र मन्त्रवित् ॥ २९ ॥

२९

जिस मार्ग से राजा, राजाओं के मन्त्री, उनके पुरुष और प्रभावशाली लोग आते-जाते हों, वहाँ मन्त्रवेत्ता निवास न करे।

पदपाठ राजानः — राजा · सचिवा राज्ञां — राजाओं के मन्त्री · पुरुषाः — उनके पुरुष · प्रभवः जनाः — प्रभावशाली लोग · चरन्ति येन मार्गेण — जिस मार्ग से चलते हैं · न वसेत्तत्र — वहाँ न रहे · मन्त्रवित् — मन्त्रवेत्ता

जीण्दिवालयोद्यानगृहवृक्षतलेषु च ।
नदीतडागकूपेषु भूच्छिद्रादिषु नो वसेत् ॥ ३० ॥

३०

जीर्ण देवालय, उद्यान, घर, वृक्ष के नीचे, नदी, तालाब, कुएँ के पास और भूमि के छिद्र आदि में निवास न करे।

पदपाठ जीण्दिवालयोद्यानगृहवृक्षतलेषु च — जीर्ण देवालय, उद्यान, घर या वृक्ष के नीचे · नदीतडागकूपेषु — नदी, तडाग, कूप पर · भूच्छिद्रादिषु — भूमि के छिद्र आदि में · नो वसेत् — न रहे

दीपनाथमयष्ट्वा यो जपपूजादिकं चरेत् ।
तत्फलं गृह्यते तेन तस्यायासः फलं भवेत् ॥ ३१ ॥

३१

जो दीपनाथ की पूजा किये बिना जप-पूजा आदि करता है, उसका फल वही (दीपनाथ) ले लेता है; उसे केवल परिश्रम ही फल में मिलता है।

पदपाठ दीपनाथमयष्ट्वा — दीपनाथ की पूजा किए बिना · यः — जो · जपपूजादिकं चरेत् — जप, पूजा आदि करे · तत्फलं गृह्यते तेन — उसका फल वह (दीपनाथ) ले लेता है · तस्यायासः फलं भवेत् — उसका श्रम ही फल होता है

वंशाश्मधरणीदारुतृणपल्लवनिर्मितम् ।

वर्जयेदासनं धीमान् दारिद्र्यव्याधिदुःखदम् ॥ ३२ ॥

३२

बुद्धिमान् बाँस, पत्थर, नंगी भूमि, काठ, तृण या पत्तों से बने आसन को त्याग दे, जो दारिद्र्यता, व्याधि और दुःख देने वाला है।

पदपाठ वंशाश्मधरणीदारुतृणपल्लवनिर्मितम् — बाँस, पत्थर, नंगी भूमि, लकड़ी, तृण, पल्लव से बना · वर्जयेदासनं — ऐसा आसन त्याग दे · धीमान् — बुद्धिमान् · दारिद्र्यव्याधिदुःखदम् — दारिद्र्यता, व्याधि, दुःख देने वाला

तूलकम्बलवस्त्राणां सिंहव्याघ्रमृगाजिनम् ।

कल्पयेदासनं धीमान् सौभाग्यज्ञानवृद्धिदम् ॥ ३३ ॥

३३

बुद्धिमान् रुई, कम्बल, वस्त्र अथवा सिंह, व्याघ्र या मृग के चर्म का आसन बनाए, जो सौभाग्य और ज्ञान की वृद्धि करने वाला है।

पदपाठ तूलकम्बलवस्त्राणां — रुई, कम्बल, वस्त्र का · सिंहव्याघ्रमृगाजिनम् — सिंह, बाघ, मृग का चर्म · कल्पयेदासनं — आसन बनाए · धीमान् — बुद्धिमान् · सौभाग्यज्ञानवृद्धिदम् — सौभाग्य और ज्ञान बढ़ाने वाला

पद्मस्वस्तिकवीरादिष्वासनेषूपविश्य च ।

जपार्चनादिकं कुर्यादन्यथा निष्फलं भवेत् ॥ ३४ ॥

३४

पद्म, स्वस्तिक, वीर आदि आसनों में बैठकर जप, अर्चन आदि करे; अन्यथा वह निष्फल हो जाता है।

पदपाठ पद्मस्वस्तिकवीरादिषु — पद्म, स्वस्तिक, वीर आदि · आसनेषूपविश्य च — आसनों में बैठकर · जपार्चनादिकं कुर्याद् — जप, अर्चन आदि करे · अन्यथा — अन्यथा · निष्फलं भवेत् — निष्फल होता है

द्वादशावर्तयन् बुद्ध्या प्रणवन्तु त्रिमात्रकम् ।
मुञ्चेत् पिङ्गलया वायुमन्तःस्थं रेचको भवेत् ॥ ३५॥

३५

तीन मात्रा वाले प्रणव को बुद्धि से बारह बार आवर्तित करते हुए भीतर स्थित वायु को पिङ्गला से छोड़े — यह रेचक है।

पदपाठ द्वादशावर्तयन् — बारह बार आवर्तन करते · बुद्ध्या — बुद्धि से · प्रणवन्तु त्रिमात्रकम् — त्रिमात्रा प्रणव · मुञ्चेत् पिङ्गलया — पिंगला से छोड़े · वायुमन्तःस्थं — भीतर स्थित वायु को · रेचकः भवेत् — रेचक होता है

षोडशावर्तयन् तारं पूरयेद् बाह्यमारुतम् ।
शनकैरिडया बद्ध्वा पूरकं परिकीर्तितम् ॥ ३६॥

३६

तार (प्रणव) को सोलह बार आवर्तित करते हुए धीरे-धीरे इडा से बाहरी वायु को भरकर रोके — यह पूरक कहा गया है।

पदपाठ षोडशावर्तयन् तारं — सोलह बार तार का आवर्तन करते · पूरयेद् बाह्यमारुतम् — बाह्य वायु भरे · शनकैरिडया — धीरे-धीरे इडा से · बद्ध्वा — रोककर · पूरकं परिकीर्तितम् — पूरक कहा गया

द्वादशावर्तयन् तारं वायुं मध्ये च कुम्भयेत् ।
शोषयेद्वायुबीजेन देहशोषणमीरितम् ॥ ३७॥

३७

तार को बारह बार आवर्तित करते हुए वायु को मध्य में कुम्भित करे और वायुबीज से शोषण करे — यह देहशोषण कहा गया है।

पदपाठ द्वादशावर्तयन् तारं — बारह बार तार का आवर्तन करते · वायुं मध्ये च कुम्भयेत् — वायु को मध्य में कुम्भित करे · शोषयेद्वायुबीजेन — वायु-बीज से शोषण करे · देहशोषणमीरितम् — देह-शोषण कहा गया

पुनश्च पूर्ववद्वायुं विरेच्यापूर्य कुम्भयेत् ।

३८

दहेत् दहनबीजेन देहदाहनमीरितम् ॥ ३८ ॥

फिर पहले की भाँति वायु का रेचन, पूरण और कुम्भन करके दहनबीज से दग्ध करे
— यह देहदाहन कहा गया है।

पदपाठ पुनश्च पूर्ववद् — फिर पूर्ववत् · वायुं विरेच्य — वायु को निकालकर · आपूर्य — भरकर · कुम्भयेत्
— कुम्भित करे · दहेत् दहनबीजेन — दहन-बीज से जलाए · देहदाहनमीरितम् — देह-दाहन कहा गया

पुनश्च पूर्ववद्वायुं विरेच्यापूर्य कुम्भयेत् ।

३९

शिवकुण्डलिनीयोगस्यन्दनामृतधारया ।

आपादमस्तकं देवि प्लावयेत् प्लावनं भवेत् ॥ ३९ ॥

फिर पहले की भाँति वायु का रेचन, पूरण और कुम्भन करके शिव और कुण्डलिनी
के योग से झरती अमृतधारा से, हे देवि! पैर से सिर तक (देह को) आप्लावित करे
— यह प्लावन है।

पदपाठ पुनश्च पूर्ववद् — फिर पूर्ववत् · वायुं विरेच्य — वायु को निकालकर · आपूर्य — भरकर · कुम्भयेत्
— कुम्भित करे · शिवकुण्डलिनीयोगस्यन्दनामृतधारया — शिव-कुण्डलिनी योग से झरती अमृत-धारा
से · आपादमस्तकं देवि — पैर से सिर तक, हे देवि · प्लावयेत् — प्लावित करे · प्लावनं भवेत् — प्लावन
होता है

जपध्यानं विनाऽगर्भः सगर्भस्तद्विपर्ययात् ।

४०

अगर्भाद् गर्भसंयुक्तः प्राणायामः शताधिकः ॥ ४० ॥

जप और ध्यान के बिना (प्राणायाम) अगर्भ है, उसके विपरीत सगर्भ है; अगर्भ की अपेक्षा गर्भयुक्त प्राणायाम सौ गुना अधिक है।

पदपाठ जपध्यानं विना — जप-ध्यान के बिना · अगर्भः — अगर्भ है · सगर्भः — सगर्भ · तद्विपर्ययात् — उसके विपरीत से · अगर्भाद् — अगर्भ से · गर्भसंयुक्तः प्राणायामः — गर्भ-युक्त प्राणायाम · शताधिकः — सौ गुना अधिक है

तपांसि तीर्थयात्राद्या मखदानव्रतादयः ।

४१

प्राणायामस्य तस्यैते कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ ४१ ॥

तप, तीर्थयात्रा आदि, यज्ञ, दान, व्रत आदि — ये सब उस प्राणायाम की सोलहवीं कला के भी योग्य नहीं हैं।

पदपाठ तपांसि — तप · तीर्थयात्राद्याः — तीर्थयात्रा आदि · मखदानव्रतादयः — यज्ञ, दान, व्रत आदि · प्राणायामस्य तस्य — उस प्राणायाम की · एते — ये · कलां नार्हन्ति षोडशीम् — सोलहवीं कला के योग्य नहीं

मानसं वाचिकं पापं कायिकं वापि यत् कृतम् ।

४२

तत् सर्वं निर्दहेच्छीघ्रं प्राणायामत्रयं शिवे ॥ ४२ ॥

मन, वाणी अथवा शरीर से जो पाप किया गया हो, उस सबको तीन प्राणायाम शीघ्र ही भस्म कर देते हैं, हे शिवे!

पदपाठ मानसं वाचिकं पापं — मानसिक, वाचिक पाप · कायिकं वापि — या कायिक भी · यत् कृतम् — जो किया गया · तत् सर्वं निर्दहेच्छीघ्रं — वह सब शीघ्र जल जाता है · प्राणायामत्रयं — तीन प्राणायामों से · शिवे — हे शिवे

दह्यते ध्मार्यमानानां धातूनाञ्च यथा मलम् ।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य संयमात् ॥ ४३॥

४३

जैसे धौंके जाते हुए धातुओं का मल जल जाता है, वैसे ही प्राण के संयम से इन्द्रियों के दोष जल जाते हैं।

पदपाठ दह्यते — जल जाता है · ध्मार्यमानानां धातूनाञ्च — धौंके जाते धातुओं का · यथा मलम् — जैसे मल · तथेन्द्रियाणां — वैसे इन्द्रियों के · दह्यन्ते दोषाः — दोष जल जाते हैं · प्राणस्य संयमात् — प्राण के संयम से

प्राणायामैर्विशुद्धात्मा यद् यत् कर्म करोति हि ।
तत्तत् फलत्यसन्देहस्त्वप्रयत्नेन वा कृतम् ॥ ४४॥

४४

प्राणायामों से विशुद्ध आत्मा वाला जो-जो कर्म करता है, वह निःसन्देह फलता है, भले ही वह बिना प्रयत्न के किया गया हो।

पदपाठ प्राणायामैर्विशुद्धात्मा — प्राणायामों से विशुद्ध आत्मा वाला · यद् यत् कर्म करोति हि — जो-जो कर्म करता है · तत्तत् फलति — वह-वह फलता है · असन्देहः — निःसन्देह · तु अप्रयत्नेन वा कृतम् — बिना प्रयत्न किया हुआ भी

आगमोक्तेन मार्गेणाभ्यासं नित्यं करोति यः ।
देवताभावमाप्नोति मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥ ४५॥

४५

जो आगमोक्त मार्ग से नित्य अभ्यास करता है, वह देवताभाव को प्राप्त होता है और उसे मन्त्रसिद्धि हो जाती है।

पदपाठ आगमोक्तेन मार्गेण — आगमोक्त मार्ग से · अभ्यासं नित्यं करोति यः — जो नित्य अभ्यास करता है · देवताभावमाप्नोति — देवताभाव पाता है · मन्त्रसिद्धिः प्रजायते — मन्त्र-सिद्धि होती है

यो न्यासकवचच्छन्दो मन्त्रं जपति तं प्रिये ।

विघ्ना दृष्ट्वा पलायन्ते सिंहं दृष्ट्वा यथा गजाः ॥ ४६ ॥

४६

जो न्यास, कवच और छन्द के साथ मन्त्र का जप करता है, हे प्रिये! उसे देखकर विघ्न वैसे ही भाग जाते हैं जैसे सिंह को देखकर हाथी।

पदपाठ यः — जो · न्यासकवचच्छन्दः — न्यास, कवच, छन्द सहित · मन्त्रं जपति — मन्त्र जपता है · तं प्रिये — उसे, हे प्रिये · विघ्ना दृष्ट्वा पलायन्ते — देखकर विघ्न भाग जाते हैं · सिंहं दृष्ट्वा यथा गजाः — जैसे सिंह को देखकर हाथी

अकृत्वा न्यासजालं यो मूढात्मा प्रजपेन्मनुम् ।

वाध्यते सर्वविघ्नैश्च व्याघ्रैर्मृगशिशुर्यथा ॥ ४७ ॥

४७

जो मूढ़ न्यासजाल किये बिना मन्त्र का जप करता है, वह सब विघ्नों से वैसे ही पीड़ित होता है जैसे व्याघ्रों से मृग का बच्चा।

पदपाठ अकृत्वा न्यासजालं — न्यास-जाल न करके · यः मूढात्मा — जो मूढात्मा · प्रजपेन्मनुम् — मन्त्र जपे · वाध्यते सर्वविघ्नैश्च — सब विघ्नों से पीड़ित होता है · व्याघ्रैर्मृगशिशुर्यथा — जैसे मृग-शिशु बाघों से

अक्षमाला द्विधा प्रोक्ता कल्पिताऽकल्पितेति च ।

कल्पिता मणिभिः कृप्ता मातृका स्यादकल्पिता ॥ ४८ ॥

४८

अक्षमाला दो प्रकार की कही गयी है — कल्पिता और अकल्पिता; कल्पिता मणियों से बनी होती है और मातृका अकल्पिता है।

पदपाठ अक्षमाला द्विधा प्रोक्ता — अक्षमाला दो प्रकार की कही गई · कल्पिता अकल्पिता इति च — कल्पिता और अकल्पिता · कल्पिता मणिभिः कृप्ता — कल्पिता मणियों से बनी · मातृका स्यादकल्पिता — मातृका अकल्पिता है

आदिक्षान्ताक्षवर्णत्वादक्षमालेति कीर्तिता ।

अनुलोमविलोमाभ्यां गणयेन्मन्त्रवित्तमः ॥ ४९॥

४९

अ से क्ष तक के अक्षरों (वर्णों) से बनी होने के कारण यह अक्षमाला कही गयी है; श्रेष्ठ मन्त्रवेत्ता इसे अनुलोम और विलोम क्रम से गिने।

पदपाठ आदिक्षान्ताक्षवर्णत्वात् — अ से क्ष तक अक्षरों (अक्ष) से बनी होने से · अक्षमालेति कीर्तिता — अक्षमाला कहलाती है · अनुलोमविलोमाभ्यां — अनुलोम और विलोम से · गणयेत् — गणना करे · मन्त्रवित्तमः — मन्त्रवित्तम

एकैकमङ्गुलीभिः स्याद्रेखाभिर्दशधा फलम् ।

मणिभिः शतसाहस्रं माणिक्याऽनन्तमुच्यते ॥ ५०॥

५०

अङ्गुलियों से (गिनने पर) एक गुना, रेखाओं से दस गुना, मणियों से लाख गुना और माणिक्य से अनन्त फल कहा गया है।

पदपाठ एकैकं — एक-एक · अङ्गुलीभिः स्यात् — अङ्गुलियों से होता है · रेखाभिः दशधा फलम् — रेखाओं से दस गुना फल · मणिभिः शतसाहस्रं — मणियों से लाख गुना · माणिक्यात् अनन्तमुच्यते — माणिक्य से अनन्त कहा गया

त्रिंशद्भिः स्याद्धनं पुष्टिः सप्तविंशतिभिर्भवेत् ।

पञ्चविंशतिभिर्मोक्षं पञ्चदश्याभिचारके ।

५१

पञ्चाशद्भिः कुलेशानि सर्वसिद्धिरुदीरिता ॥ ५१॥

तीस (मणियों) से धन, सत्ताईस से पुष्टि, पच्चीस से मोक्ष, अभिचार में पन्द्रह; और हे कुलेशानि! पचास से सर्वसिद्धि कही गयी है।

पदपाठ त्रिंशद्भिः स्याद्धनं — तीस (मणियों) से धन · पुष्टिः सप्तविंशतिभिर्भवेत् — सत्ताईस से पुष्टि होती है · पञ्चविंशतिभिर्मोक्षं — पच्चीस से मोक्ष · पञ्चदश्याभिचारके — पन्द्रह अभिचार में · पञ्चाशद्भिः कुलेशानि — पचास से, हे कुलेशानि · सर्वसिद्धिरुदीरिता — सर्वसिद्धि कही गई

अङ्गुष्ठेन च मोक्षः स्यात्तर्जनी शत्रुनाशिनी ।

मध्यमां धनदां विद्यात् शान्तिकर्मण्यनामिका ।

५२

कनिष्ठा स्तम्भन्याकर्षण्यङ्गुली सुप्रकीर्तिता ॥ ५२ ॥

अङ्गुष्ठ से मोक्ष होता है, तर्जनी शत्रुनाशिनी है, मध्यमा को धन देने वाली जानो, शान्तिकर्म में अनामिका, और कनिष्ठा अङ्गुली स्तम्भन और आकर्षण करने वाली कही गयी है।

पदपाठ अङ्गुष्ठेन च मोक्षः स्यात् — अंगूठे से मोक्ष होता है · तर्जनी शत्रुनाशिनी — तर्जनी शत्रुनाशिनी · मध्यमां धनदां विद्यात् — मध्यमा को धनदा जाने · शान्तिकर्मणि अनामिका — शान्तिकर्म में अनामिका · कनिष्ठा — कनिष्ठा · स्तम्भनी आकर्षणी — स्तम्भन और आकर्षण करने वाली · अङ्गुली सुप्रकीर्तिता — अंगुली भली प्रकार कही गई

एतज्जपिष्यामीत्यादौ सङ्कल्प्य मन्त्रवित्तमः ।

स्थिरासनो जपित्वाऽथ देव्यै सोदकमर्पयेत् ॥ ५३ ॥

५३

"मैं इतना जप करूँगा" — इस प्रकार पहले सङ्कल्प करके श्रेष्ठ मन्त्रवेत्ता स्थिर आसन पर जप करके फिर उसे जल सहित देवी को अर्पित करे।

पदपाठ एतज्जपिष्यामि इति — "मैं इतना जप करूँगा" ऐसा · आदौ सङ्कल्प्य — पहले संकल्प कर · मन्त्रवित्तमः — मन्त्रवित्तम · स्थिरासनः — स्थिर आसन · जपित्वा अथ — फिर जप करके · देव्यै — देवी को · सोदकमर्पयेत् — जल सहित समर्पित करे

उच्चैर्जपोऽधमः प्रोक्त उपांशुर्मध्यमः स्मृतः ।

५४

उत्तमो मानसो देवि त्रिविधः कथितो जपः ॥ ५४ ॥

उच्च स्वर का जप अधम कहा गया है, उपांशु मध्यम माना गया है, और मानस जप उत्तम है, हे देवि! इस प्रकार जप तीन प्रकार का कहा गया है।

पदपाठ उच्चैर्जपः अधमः प्रोक्तः — उच्च (ज़ोर से) जप अधम कहा गया · उपांशुर्मध्यमः स्मृतः — उपांशु मध्यम माना गया · उत्तमः मानसः देवि — उत्तम मानस है, हे देवि · त्रिविधः कथितः जपः — जप तीन प्रकार का कहा गया

अतिह्रस्वो व्याधिहेतुरतिदीर्घस्तपःक्षयः ।

५५

अक्षराक्षरसंयुक्तो यो मन्त्रः स न सिध्यति ॥ ५५ ॥

अति ह्रस्व (जप) व्याधि का कारण है, अति दीर्घ तप का क्षय है; जिस मन्त्र के अक्षर एक-दूसरे में मिल जाएँ, वह सिद्ध नहीं होता।

पदपाठ अतिह्रस्वः व्याधिहेतुः — अति ह्रस्व व्याधि का कारण · अतिदीर्घः तपःक्षयः — अति दीर्घ तप का क्षय · अक्षराक्षरसंयुक्तः — अक्षर से अक्षर मिला हुआ · यः मन्त्रः — जो मन्त्र · स न सिध्यति — वह सिद्ध नहीं होता

मनसा यः स्मरेत् स्तोत्रं वचसा वा मनुं जपेत् ।

५६

उभयं निष्फलं देवि भिन्नभाण्डोदकं यथा ॥ ५६ ॥

जो स्तोत्र का मन से स्मरण करता है अथवा मन्त्र का वाणी से जप करता है — दोनों निष्फल हैं, हे देवि! जैसे फूटे घड़े में जल।

पदपाठ मनसा यः स्मरेत् स्तोत्रं — जो मन से स्तोत्र स्मरण करे · वचसा वा मनुं जपेत् — या वाणी से मन्त्र जपे · उभयं निष्फलं देवि — दोनों निष्फल हैं, हे देवि · भिन्नभाण्डोदकं यथा — जैसे फूटे बर्तन का जल

जातसूतकमादौ स्यात्तदन्ते मृतसूतकम् ।

५७

सूतकद्वयसंयुक्तो यो मन्त्रः स न सिध्यति ॥ ५७ ॥

(मन्त्र के) आदि में जातसूतक होता है और अन्त में मृतसूतक; जो मन्त्र इन दोनों सूतकों से युक्त है, वह सिद्ध नहीं होता।

पदपाठ जातसूतकमादौ स्यात् — आदि में जात-सूतक (जन्म की अशुद्धि) होता है · तदन्ते मृतसूतकम् — अन्त में मृत-सूतक · सूतकद्वयसंयुक्तः — दो सूतकों से युक्त · यः मन्त्रः — जो मन्त्र · स न सिध्यति — वह सिद्ध नहीं होता

आद्यन्तरहितं कृत्वा मन्त्रमावर्तयेद्बुद्धिः ।

५८

सूतकद्वयनिर्मुक्तो यो मन्त्रः सर्वसिद्धिदः ॥ ५८ ॥

मन्त्र को आदि और अन्त से रहित करके बुद्धि से उसका आवर्तन करे; दोनों सूतकों से मुक्त मन्त्र सर्वसिद्धि देने वाला होता है।

पदपाठ आद्यन्तरहितं कृत्वा — आदि-अन्त रहित करके · मन्त्रमावर्तयेत् — मन्त्र का आवर्तन करे · धिया — बुद्धि से · सूतकद्वयनिर्मुक्तः — दो सूतकों से मुक्त · यः मन्त्रः — जो मन्त्र · सर्वसिद्धिदः — सब सिद्धियाँ देता है

मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं योनिमुद्रां न वेत्ति यः ।

५९

शतकोटिजपेनापि तस्य सिद्धिर्न जायते ॥ ५९ ॥

जो मन्त्रार्थ, मन्त्रचैतन्य और योनिमुद्रा को नहीं जानता, उसे सौ करोड़ जप से भी सिद्धि नहीं होती।

पदपाठ मन्त्रार्थं — मन्त्रार्थ · मन्त्रचैतन्यं — मन्त्र-चैतन्य · योनिमुद्रां — योनिमुद्रा · न वेत्ति यः — जो नहीं जानता · शतकोटिजपेनापि — सौ करोड़ जप से भी · तस्य सिद्धिर्न जायते — उसकी सिद्धि नहीं होती

सुप्तबीजाश्च ये मन्त्रा न दास्यन्ति फलं प्रिये ।

मन्त्राश्चैतन्यसहिताः सर्वसिद्धिकराः स्मृताः ॥ ६० ॥

६०

जिन मन्त्रों का बीज सोया हुआ है वे फल नहीं देंगे, हे प्रिये! चैतन्ययुक्त मन्त्र सर्वसिद्धि करने वाले माने गये हैं।

पदपाठ सुप्तबीजाश्च ये मन्त्राः — जिन मन्त्रों का बीज सुप्त है · न दास्यन्ति फलं प्रिये — वे फल नहीं देंगे, हे प्रिये · मन्त्राश्चैतन्यसहिताः — चैतन्य-सहित मन्त्र · सर्वसिद्धिकराः स्मृताः — सब सिद्धियाँ देने वाले माने गए

चैतन्यरहिता मन्त्राः प्रोक्ता वर्णास्तु केवलम् ।

फलं नैव प्रयच्छन्ति लक्षकोटिजपादपि ॥ ६१ ॥

६१

चैतन्यरहित मन्त्र केवल वर्ण कहे गये हैं; वे लाख करोड़ जप से भी फल नहीं देते।

पदपाठ चैतन्यरहिता मन्त्राः — चैतन्य-रहित मन्त्र · प्रोक्ता वर्णास्तु केवलम् — केवल वर्ण कहे गए · फलं नैव प्रयच्छन्ति — फल नहीं देते · लक्षकोटिजपादपि — लाख करोड़ जप से भी

मन्त्रोच्चारं कृते यादृक् स्वरूपं प्रथमं भवेत् ।

शतैः सहस्रैर्लक्षैर्वा कोटिजापेन तत् फलम् ॥ ६२ ॥

६२

मन्त्र का उच्चारण करने पर पहले जैसा स्वरूप होता है, वही सौ, हजार, लाख या करोड़ जप का फल है।

पदपाठ मन्त्रोच्चारं कृते — मन्त्रोच्चार करने पर · यादृक् स्वरूपं प्रथमं भवेत् — जैसा स्वरूप पहले हो · शतैः सहस्रैर्लक्षैर्वा — सैकड़ों, हजारों या लाखों से · कोटिजापेन — करोड़ जप से · तत् फलम् — वह फल है

हृत्कण्ठग्रन्थिभेदश्च सर्वावयववर्द्धनम् ।

आनन्दाश्रु च पुलको देहावेशः कुलेश्वरि ।

६३

गद्गदोक्तिश्च सहसा जायते नात्र संशयः ॥ ६३॥

हृदय और कण्ठ की ग्रन्थियों का भेदन, सब अङ्गों का प्रफुल्लित होना, आनन्द के आँसू, रोमाञ्च, देह में आवेश, हे कुलेश्वरि! और गद्गद वाणी सहसा उत्पन्न होते हैं — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ हृत्कण्ठग्रन्थिभेदश्च — हृदय और कण्ठ की ग्रन्थि का भेद · सर्वावयववर्द्धनम् — सब अंगों का पुष्ट होना · आनन्दाश्रु च — और आनन्द के अश्रु · पुलकः — रोमांच · देहावेशः — देह में आवेश · कुलेश्वरि — हे कुलेश्वरि · गद्गदोक्तिश्च — और गद्गद वाणी · सहसा जायते — सहसा उत्पन्न होते हैं · नात्र संशयः — इसमें सन्देह नहीं

सकृदुच्चरितेऽप्येवं मन्त्रे चैतन्यसंयुते ।

दृश्यन्ते प्रत्यया यत्र पारम्पर्यं तदुच्यते ॥ ६४॥

६४

चैतन्ययुक्त मन्त्र के एक बार उच्चारण करने पर भी जहाँ इस प्रकार के लक्षण दिखाई देते हैं, वही पारम्पर्य कहलाता है।

पदपाठ सकृदुच्चरिते अपि — एक बार उच्चारण पर भी · एवं — इस प्रकार · मन्त्रे चैतन्यसंयुते — चैतन्य-युक्त मन्त्र में · दृश्यन्ते प्रत्यया यत्र — जहाँ प्रत्यय (लक्षण) दिखते हैं · पारम्पर्यं तदुच्यते — वह परम्परा कहलाती है

रुद्धः कूटाक्षरो मुग्धो बद्धः क्रुद्धश्च भेदितः ।

बालः कुमारो युवकः प्रौढो वृद्धश्च गर्वितः ॥ ६५॥

६५

रुद्ध, कूटाक्षर, मुग्ध, बद्ध, क्रुद्ध, भेदित, बाल, कुमार, युवक, प्रौढ, वृद्ध, गर्वित,

पदपाठ रुद्धः — रुद्ध · कूटाक्षरः — कूटाक्षर · मुग्धः — मुग्ध · बद्धः — बद्ध · क्रुद्धश्च — और क्रुद्ध · भेदितः — भेदित · बालः — बाल · कुमारः — कुमार · युवकः — युवक · प्रौढः — प्रौढ · वृद्धश्च — और वृद्ध · गर्वितः — गर्वित

स्तम्भितो मूर्च्छितो मत्तः कीलितः खण्डितः शठः ।

मन्दः पराङ्मुखश्छिन्नो बधिरोऽन्धस्त्वचेतनः ॥ ६६॥

६६

स्तम्भित, मूर्च्छित, मत्त, कीलित, खण्डित, शठ, मन्द, पराङ्मुख, छिन्न, बधिर, अन्ध, अचेतन,

पदपाठ स्तम्भितः — स्तम्भित · मूर्च्छितः — मूर्च्छित · मत्तः — मत्त · कीलितः — कीलित · खण्डितः — खण्डित · शठः — शठ · मन्दः — मन्द · पराङ्मुखः — पराङ्मुख · छिन्नः — छिन्न · बधिरः — बधिर · अन्धः — अन्ध · तु अचेतनः — और अचेतन

किङ्करः क्षुधितः स्तब्धः स्थानभ्रष्टश्च पीडितः ।

निःस्नेहो विकलो ध्वस्तो निर्जीवः खण्डितारिकः ॥ ६७॥

६७

किङ्कर, क्षुधित, स्तब्ध, स्थानभ्रष्ट, पीडित, निःस्नेह, विकल, ध्वस्त, निर्जीव, खण्डितारिक,

पदपाठ किङ्करः — किङ्कर · क्षुधितः — क्षुधित · स्तब्धः — स्तब्ध · स्थानभ्रष्टश्च — और स्थानभ्रष्ट · पीडितः — पीडित · निःस्नेहः — निःस्नेह · विकलः — विकल · ध्वस्तः — ध्वस्त · निर्जीवः — निर्जीव · खण्डितारिकः — खण्डितारि (जिसका शत्रु खण्डित)

सुप्तस्तिरस्कृतो नीचो मलिनश्च दुरासदः ।

निःसत्त्वो निर्जितो दग्धश्चपलश्च भयङ्करः ॥ ६८ ॥

६८

सुप्त, तिरस्कृत, नीच, मलिन, दुरासद, निःसत्त्व, निर्जित, दग्ध, चपल, भयङ्कर,

पदपाठ सुप्तः — सुप्त · तिरस्कृतः — तिरस्कृत · नीचः — नीच · मलिनश्च — और मलिन · दुरासदः —
दुरासद · निःसत्त्वः — निःसत्त्व · निर्जितः — निर्जित · दग्धः — दग्ध · चपलश्च — और चपल · भयङ्करः —
भयंकर

निस्त्रिंशो निन्दितः क्रूरः फलहीनो निकृन्तनः ।

निर्वीर्यो भ्रमितो शप्त ऋणक्लिष्टोऽङ्गहीनकः ।

६९

जडो रिपुरुदासीनो लज्जितो मोहितोऽलसः ॥ ६९ ॥

निस्त्रिंश, निन्दित, क्रूर, फलहीन, निकृन्तन, निर्वीर्य, भ्रमित, शप्त, ऋणक्लिष्ट,
अङ्गहीन, जड, रिपु, उदासीन, लज्जित, मोहित, अलस —

पदपाठ निस्त्रिंशः — निस्त्रिंश (निर्दय) · निन्दितः — निन्दित · क्रूरः — क्रूर · फलहीनः —
फलहीन · निकृन्तनः — निकृन्तन (काटने वाला) · निर्वीर्यः — निर्वीर्य · भ्रमितः — भ्रमित · शप्त —
शप्त · ऋणक्लिष्टः — ऋण-क्लिष्ट · अङ्गहीनकः — अङ्गहीन · जडः — जड़ · रिपुः — रिपु · उदासीनः —
उदासीन · लज्जितः — लज्जित · मोहितः — मोहित · अलसः — अलस

षष्ठ्येतान् मन्त्रदोषांश्च योऽज्ञात्वा प्रजपेन्मनुम् ।

सिद्धिर्न जायते तस्य लक्षकोटिजपादपि ॥ ७० ॥

७०

जो इन साठ मन्त्रदोषों को जाने बिना मन्त्र का जप करता है, उसे लाख करोड़ जप
से भी सिद्धि नहीं होती।

पदपाठ षष्टि एतान् मन्त्रदोषांश्च — ये साठ मन्त्र-दोष · यः अज्ञात्वा — जो न जानकर · प्रजपेन्मनुम् —
मन्त्र जपे · सिद्धिर्न जायते तस्य — उसकी सिद्धि नहीं होती · लक्षकोटिजपादपि — लाख करोड़ जप से भी

कथ्यन्ते दश संस्कारा मन्त्रदोषहराः प्रिये ।

७१

जननं जीवनं पश्चात्ताडनं बोधनं ततः ॥ ७१ ॥

मन्त्रदोषों को हरने वाले दस संस्कार कहे जाते हैं, हे प्रिये! — जनन, जीवन, फिर ताडन, तदनन्तर बोधन,

पदपाठ कथ्यन्ते — कहे जाते हैं · दश संस्काराः — दस संस्कार · मन्त्रदोषहराः प्रिये — मन्त्र-दोष हरने वाले, हे प्रिये · जननं — जनन · जीवनं — जीवन · पश्चात्ताडनं — फिर ताड़न · बोधनं ततः — फिर बोधन

अभिषेकोऽथ विमलीकरणाप्यायने तथा ।

७२

तर्पणं दीपनं गुप्तिः संस्काराः कुलनायिके ॥ ७२ ॥

फिर अभिषेक, विमलीकरण और आप्यायन, तर्पण, दीपन, गुप्ति — ये संस्कार हैं, हे कुलनायिके!

पदपाठ अभिषेकः अथ — फिर अभिषेक · विमलीकरण आप्यायने तथा — विमलीकरण और आप्यायन · तर्पणं — तर्पण · दीपनं — दीपन · गुप्तिः — गुप्ति · संस्काराः कुलनायिके — ये संस्कार हैं, हे कुलनायिके

शाणोल्लोढानि शस्त्राणि यथा स्युर्निशितानि वै ।

७३

मन्त्राश्च स्फूर्तिमायान्ति संस्कारैर्दशभिस्तथा ॥ ७३ ॥

जैसे सान पर घिसे हुए शस्त्र तीक्ष्ण हो जाते हैं, वैसे ही दस संस्कारों से मन्त्र स्फूर्ति को प्राप्त होते हैं।

पदपाठ शाणोल्लोढानि शस्त्राणि — सान पर घिसे शस्त्र · यथा स्युः निशितानि वै — जैसे तीखे हो जाते हैं · मन्त्राश्च स्फूर्तिमायान्ति — वैसे मन्त्र स्फूर्ति पाते हैं · संस्कारैर्दशभिः तथा — दस संस्कारों से

भक्ष्यं हविष्यं शाकादि विहितानि फलान्यपि ।

७४

मूलं शक्तुं यवानाञ्च शस्तान्येतानि मन्त्रिणाम् ॥ ७४ ॥

भक्ष्य, हविष्य, शाक आदि, विहित फल, मूल और जौ का सत्तू — ये मन्त्रियों के लिए प्रशस्त हैं।

पदपाठ भक्ष्यं हविष्यं — भक्ष्य, हविष्य · शाकादि — शाक आदि · विहितानि फलान्यपि — और विहित फल भी · मूलं — मूल (कन्द) · शक्तुं — सत्तू · यवानाञ्च — और जौ का · शस्तान्येतानि मन्त्रिणाम् — ये मन्त्रियों के लिए प्रशस्त हैं

यस्यान्नपानपुष्टाङ्गः कुरुते धर्मसञ्चयम् ।

७५

अन्नदातुः फलं चार्द्धं कर्तुश्चार्द्धं न संशयः ॥ ७५ ॥

जिसके अन्न-पान से पुष्ट शरीर वाला होकर कोई धर्म का सञ्चय करता है, उसका आधा फल अन्नदाता का और आधा कर्ता का होता है, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ यस्य अन्नपानपुष्टाङ्गः — जिसके अन्न-पान से पुष्ट अंग वाला · कुरुते धर्मसञ्चयम् — धर्म-संचय करता है · अन्नदातुः फलं च अर्द्धं — अन्नदाता का आधा फल · कर्तुश्च अर्द्धं — और कर्ता का आधा · न संशयः — सन्देह नहीं

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन परान्नं वर्जयेत् सुधीः ।

७६

पुरश्चरणकाले च काम्यकर्मस्वपीश्वरि ॥ ७६ ॥

अतः बुद्धिमान् पुरश्चरण के समय और काम्य कर्मों में भी, हे ईश्वरि! सर्वप्रयत्न से पराया अन्न त्याग दे।

पदपाठ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन — इसलिए सब प्रयत्न से · परान्नं वर्जयेत् सुधीः — सुधी परान्न त्याग दे · पुरश्चरणकाले च — और पुरश्चरण-काल में · काम्यकर्मसु अपि — काम्य कर्मों में भी · ईश्वरि — हे ईश्वरि

जिह्वा दग्धा परात्रेन करौ दग्धौ प्रतिग्रहात् ।

७७

मनो दग्धं परस्त्रीभिः कार्यसिद्धिः कथं भवेत् ॥ ७७ ॥

जिह्वा पराये अन्न से दग्ध है, हाथ प्रतिग्रह से दग्ध हैं, मन परस्त्रियों से दग्ध है — कार्य की सिद्धि कैसे हो?

पदपाठ जिह्वा दग्धा परात्रेन — जिह्वा परात्र से दग्ध · करौ दग्धौ प्रतिग्रहात् — हाथ प्रतिग्रह (दान लेने) से दग्ध · मनः दग्धं परस्त्रीभिः — मन परस्त्रियों से दग्ध · कार्यसिद्धिः कथं भवेत् — कार्य-सिद्धि कैसे हो?

इन्द्राग्निरुद्रग्रहदृक्वेदार्कदिक्षडष्टसु ।

७८

षोडशमनुबाणाब्धितिथित्रयोदशस्वपि ॥ ७८ ॥

इन्द्र (चौदह), अग्नि (तीन), रुद्र (ग्यारह), ग्रह (नौ), दृक् (दो), वेद (चार), अर्क (बारह), दिक् (दस), छह, आठ, सोलह, मनु (चौदह), बाण (पाँच), अब्धि (सात), तिथि (पन्द्रह) और तेरह (संख्या वाले कोष्ठों) में,

पदपाठ इन्द्र — इन्द्र (14) · अग्नि — अग्नि (3) · रुद्र — रुद्र (11) · ग्रह — ग्रह (9) · दृक् — दृक् (नेत्र, 2) · वेद — वेद (4) · अर्क — अर्क (सूर्य, 12) · दिक् — दिक् (10) · षट् — छह · अष्टसु — आठ में · षोडश — सोलह · मनु — मनु (14) · बाण — बाण (5) · अब्धि — अब्धि (समुद्र, 7) · तिथि — तिथि (15) · त्रयोदशसु अपि — और तेरह में

लिखेत् षोडशकोष्ठेषु मातृकार्णान् विचक्षणः ।

७९

स्वनामाद्यक्षराद् यावन्मन्त्राद्यक्षरदर्शनम् ॥ ७९ ॥

विचक्षण साधक सोलह कोष्ठों में मातृका के वर्ण लिखे, और अपने नाम के प्रथम अक्षर से लेकर मन्त्र के प्रथम अक्षर के दर्शन तक (गिने)।

पदपाठ लिखेत् षोडशकोष्ठेषु — सोलह कोष्ठों में लिखे · मातृकार्णान् — मातृका-वर्ण · विचक्षणः — विचक्षण · स्वनामाद्यक्षराद् — अपने नाम के आद्याक्षर से · यावत् मन्त्राद्यक्षरदर्शनम् — मन्त्र के आद्याक्षर के दर्शन तक

सिद्धादीन् कल्पयेन्मन्त्री कुर्यात् साध्यादिभिः पुनः ।

चतुश्चतुर्विभागेन सिद्धादीन् गणयेत् पुनः ॥ ८० ॥

८०

मन्त्री सिद्ध आदि की कल्पना करे और फिर साध्य आदि से करे; चार-चार के विभाग से फिर सिद्ध आदि की गणना करे।

पदपाठ सिद्धादीन् कल्पयेत् मन्त्री — मन्त्री सिद्ध आदि की कल्पना करे · कुर्यात् साध्यादिभिः पुनः — फिर साध्य आदि से करे · चतुश्चतुर्विभागेन — चार-चार के विभाग से · सिद्धादीन् गणयेत् पुनः — सिद्ध आदि की फिर गणना करे

सिद्धसिद्धो जपात् सिद्धो द्विगुणात् सिद्धसाध्यकः ।

सिद्धसुसिद्धोऽर्द्धजपात् सिद्धारिहन्ति बान्धवान् ॥ ८१ ॥

८१

सिद्धसिद्ध (मन्त्र) जप से सिद्ध होता है, सिद्धसाध्य दुगुने जप से, सिद्धसुसिद्ध आधे जप से; सिद्धारि बान्धवों को मारता है।

पदपाठ सिद्धसिद्धः — सिद्ध-सिद्ध · जपात् सिद्धः — (विहित) जप से सिद्ध होता है · द्विगुणात् — दुगुने से · सिद्धसाध्यकः — सिद्ध-साध्य · सिद्धसुसिद्धः अर्द्धजपात् — सिद्ध-सुसिद्ध आधे जप से · सिद्धारिः — सिद्ध-अरि · हन्ति बान्धवान् — बान्धवों को मारता है

साध्यसिद्धोऽतिसंक्लेशात् साध्यसाध्यो निरर्थकः ।

साध्यसुसिद्धो भजनात् साध्यारिहन्ति गोत्रजान् ॥ ८२ ॥

८२

साध्यसिद्ध अत्यन्त क्लेश से सिद्ध होता है, साध्यसाध्य निरर्थक है, साध्यसुसिद्ध भजन से; साध्यारि गोत्रजों को मारता है।

पदपाठ साध्यसिद्धः — साध्य-सिद्ध · अतिसंक्लेशात् — अति क्लेश से · साध्यसाध्यः निरर्थकः — साध्य-साध्य निरर्थक · साध्यसुसिद्धः भजनात् — साध्य-सुसिद्ध भजन से · साध्यारिः — साध्य-अरि · हन्ति गोत्रजान् — गोत्रजों को मारता है

सुसिद्धसिद्धोऽर्द्धजपात्तत्साध्यस्तु यथोक्ततः ।

तत्सुसिद्धो ग्रहादेव सुसिद्धारिः स्वगोत्रहा ॥ ८३ ॥

८३

सुसिद्धसिद्ध आधे जप से, उसका साध्य यथोक्त जप से, उसका सुसिद्ध ग्रहण मात्र से (सिद्ध होता है); सुसिद्धारि अपने गोत्र का नाश करता है।

पदपाठ सुसिद्धसिद्धः — सुसिद्ध-सिद्ध · अर्द्धजपात् — आधे जप से · तत्साध्यस्तु — और उसका साध्य · यथोक्ततः — यथोक्त (जप) से · तत्सुसिद्धः — उसका सुसिद्ध · ग्रहादेव — ग्रहण से ही · सुसिद्धारिः — सुसिद्ध-अरि · स्वगोत्रहा — अपने गोत्र को मारने वाला

अरिसिद्धः सुतं हन्यादरिसाध्यस्तु योषितम् ।

तत्सुसिद्धः कुलं हन्ति स्वात्मानं हन्ति तद्रिपुः ॥ ८४ ॥

८४

अरिसिद्ध पुत्र को मारता है, अरिसाध्य स्त्री को, उसका सुसिद्ध कुल को मारता है, और उसका अरि स्वयं (साधक) को मारता है।

पदपाठ अरिसिद्धः — अरि-सिद्ध · सुतं हन्यात् — पुत्र को मारे · अरिसाध्यस्तु योषितम् — अरि-साध्य स्त्री को · तत्सुसिद्धः कुलं हन्ति — उसका सुसिद्ध कुल को मारता है · स्वात्मानं हन्ति तद्रिपुः — उसका रिपु अपने को मारता है

सिद्धार्णा बान्धवाः प्रोक्ताः साध्यास्ते सेवकाः स्मृताः ।

सुसिद्धाः पोषका ज्ञेयाः शत्रवो घातकाः स्मृताः ॥ ८५ ॥

८५

सिद्ध वर्ण बान्धव कहे गये हैं, साध्य वर्ण सेवक माने गये हैं, सुसिद्ध पोषक जानने चाहिए, और शत्रु वर्ण घातक माने गये हैं।

पदपाठ सिद्धार्णाः — सिद्ध वर्ण · बान्धवाः प्रोक्ताः — बान्धव कहे गए · साध्याः ते सेवकाः स्मृताः — साध्य सेवक माने गए · सुसिद्धाः पोषकाः ज्ञेयाः — सुसिद्ध पोषक जानने चाहिए · शत्रवः घातकाः स्मृताः — शत्रु घातक माने गए

बान्धवा नववार्णकाः स्युर्द्विषड्दश सेवकाः ।

वहिरुद्रसुताश्चैव द्वादशाः पोषकाः स्मृताः ॥ ८६ ॥

८६

नौ (संख्या) के वर्ण बान्धव हैं, दो, छह और दस के वर्ण सेवक हैं; अग्नि (तीन), रुद्र (ग्यारह) और सुत, तथा बारह के वर्ण पोषक माने गये हैं।

पदपाठ बान्धवाः — बान्धव · नववार्णकाः स्युः — नौ वर्ण वाले हैं · द्विषड्दश सेवकाः — दो, छह, दस सेवक · वहिरुद्रसुताश्चैव — वह्नि (3), रुद्र (11) और सुत · द्वादशाः — बारह · पोषकाः स्मृताः — पोषक माने गए

प्रापलाभो पटु प्राह्यं रुद्रस्याद्रिरुरुः करम् ।

लोक लोप पटु प्रायः खलौ घो भेषु भेदिताः ।

८७

वर्णाः क्रमात् स्वरान्तौ तु रेवत्यंशगतौ तदा ॥ ८७ ॥

"प्रापलाभो पटु प्राह्यं रुद्रस्याद्रिरुरुः करम्, लोक लोप पटु प्रायः खलौ घो" — इस क्रम से वर्ण नक्षत्रों में विभक्त हैं, और स्वरान्त दोनों (वर्ण) तब रेवती के अंश में जाते हैं।

पदपाठ प्रापलाभो — प्रापलाभो · पटु — पटु · प्राह्यं — प्राह्यं · रुद्रस्याद्रिरुरुः — रुद्रस्याद्रिरुरुः · करम् — करम् · लोक — लोक · लोप — लोप · पटु — पटु · प्रायः — प्रायः · खलौ — खलौ · घो — घो · भेषु — भेषु · भेदिताः — विभक्त हैं · वर्णाः क्रमात् — वर्ण क्रम से · स्वरान्तौ तु — स्वरों के अन्त वाले · रेवत्यंशगतौ तदा — तब रेवती के अंश में जाते हैं

जन्म सम्पद् विपत् क्षेम प्रत्यरिः साधको वधः ।

मित्रं परममित्रञ्च जन्मादीनि पुनः पुनः ॥ ८८ ॥

८८

जन्म, सम्पद्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मित्र और परममित्र — फिर बार-बार जन्म आदि (इस क्रम से नक्षत्र गिने जाते हैं)।

पदपाठ जन्म — जन्म · सम्पद् — सम्पद् · विपत् — विपत् · क्षेम — क्षेम · प्रत्यरिः — प्रत्यरि · साधकः — साधक · वधः — वध · मित्रं — मित्र · परममित्रञ्च — और परममित्र · जन्मादीनि पुनः पुनः — जन्म आदि बार-बार

वालं गौरं खुरं शोणं शमीशोभेति राशिषु ।

क्रमेण भेदिता वर्णाः कन्यायां शादयः स्मृता ॥ ८९ ॥

८९

"वालं गौरं खुरं शोणं शमीशोभ" — इस (सूत्र) से वर्ण क्रमशः राशियों में विभक्त हैं; श आदि वर्ण कन्या राशि में माने गये हैं।

पदपाठ वालं — वालं · गौरं — गौरं · खुरं — खुरं · शोणं — शोणं · शमीशोभेति — शमीशोभेति · राशिषु — राशियों में · क्रमेण भेदिताः वर्णाः — क्रम से वर्ण विभक्त हैं · कन्यायां — कन्या में · शादयः स्मृताः — श आदि माने गए

लग्नो धनं भ्रातृबन्धुपुत्रशत्रुकलत्रकाः ।

मरणं धर्मकर्माय व्यया द्वादश राशयः ॥ ९० ॥

९०

लग्न, धन, भ्रातृ, बन्धु, पुत्र, शत्रु, कलत्र, मरण, धर्म, कर्म, आय और व्यय — ये बारह राशियाँ (भाव) हैं।

पदपाठ लग्नः — लग्न · धनं — धन · भ्रातृ — भ्राता · बन्धु — बन्धु · पुत्र — पुत्र · शत्रु — शत्रु · कलत्रकाः — कलत्र (स्त्री) · मरणं — मरण · धर्म — धर्म · कर्म — कर्म · आय — आय · व्ययाः — व्यय · द्वादश राशयः — बारह राशियाँ (भाव)

स्वराशेर्मन्त्रराश्यन्तं गणनीयं विचक्षणैः ।

९१

अज्ञाते राशिनक्षत्रे नामाद्यक्षरराशितः ॥ ९१ ॥

विचक्षण जन अपनी राशि से मन्त्र की राशि तक गणना करें; राशि और नक्षत्र ज्ञात न होने पर नाम के प्रथम अक्षर की राशि से (गिनें)।

पदपाठ स्वराशेः — अपनी राशि से · मन्त्रराश्यन्तं — मन्त्र की राशि तक · गणनीयं — गणना करनी चाहिए · विचक्षणैः — विचक्षणों द्वारा · अज्ञाते राशिनक्षत्रे — राशि-नक्षत्र अज्ञात होने पर · नामाद्यक्षरराशितः — नाम के आद्याक्षर की राशि से

नामाद्यक्षरमारभ्य यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ।

९२

त्रिधा कृत्वा स्वरैर्भिन्धात्तदन्यद्विपरीतकम् ॥ ९२ ॥

नाम के प्रथम अक्षर से आरम्भ करके मन्त्र के प्रथम अक्षर तक (गिनकर), तीन भाग करके स्वरों से विभाजित करे; दूसरी (गणना) उसके विपरीत है।

पदपाठ नामाद्यक्षरमारभ्य — नाम के आद्याक्षर से आरम्भ कर · यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् — मन्त्र के आद्याक्षर तक · त्रिधा कृत्वा — तीन भाग करके · स्वरैः भिन्धात् — स्वरों से भाग दे · तदन्यत् विपरीतकम् — उससे अन्य विपरीत है

कृत्वाधिकमृणं ज्ञेयं ऋणी चेन्मन्त्रवित्तमः ।

९३

स्वयमृणी चेत्तन्मन्त्रं जपेत्पूर्वमृणी यतः ॥ ९३ ॥

ऐसा करके अधिक को ऋण जानना चाहिए; यदि (मन्त्र) ऋणी हो तो श्रेष्ठ मन्त्रवेत्ता (उसे न ले); यदि स्वयं ऋणी हो तो उस मन्त्र का जप करे, क्योंकि वह पहले से ऋणी है।

पदपाठ कृत्वा — करके · अधिकं ऋणं ज्ञेयं — अधिक को ऋण जाने · ऋणी चेत् — यदि ऋणी हो · मन्त्रवित्तमः — मन्त्रवित्तम · स्वयमृणी चेत् — यदि स्वयं ऋणी हो · तन्मन्त्रं जपेत् — उस मन्त्र को जपे · पूर्वमृणी यतः — क्योंकि पहले ऋणी था

पञ्च ह्रस्वाः पञ्च दीर्घा बिन्द्वन्ताः सन्धिसम्भवाः ।

९४

कादयः पञ्चशः षक्षसहान्ताश्च प्रकीर्तिताः ॥ ९४ ॥

पाँच ह्रस्व, पाँच दीर्घ, बिन्दु-पर्यन्त, सन्धिज (स्वर), फिर क आदि पाँच-पाँच, और ष, क्ष, स, ह पर्यन्त — इस प्रकार (वर्ण) कहे गये हैं।

पदपाठ पञ्च ह्रस्वाः — पाँच ह्रस्व · पञ्च दीर्घाः — पाँच दीर्घ · बिन्द्वन्ताः — बिन्दु-अन्त वाले · सन्धिसम्भवाः — सन्धि से उत्पन्न · कादयः पञ्चशः — क आदि पाँच-पाँच · षक्षसहान्ताश्च — और ष, क्ष, स, ह अन्त वाले · प्रकीर्तिताः — कहे गए हैं

वाय्वग्निभूजलाकाशाः पञ्चाशल्लिपयः क्रमात् ।

महीसलिलयोर्मित्रमनिलानलयोरपि ।

९५

शात्रवं वैपरीत्येन मैत्रं सर्वत्र चापरम् ॥ ९५ ॥

वायु, अग्नि, भू, जल और आकाश — पचास वर्ण क्रमशः इन्हीं के हैं। पृथ्वी और जल में मैत्री है, वायु और अग्नि में भी; इसके विपरीत शत्रुता है, और शेष (आकाश) सर्वत्र मित्र है।

पदपाठ वायु अग्नि भू जल आकाशाः — वायु, अग्नि, भूमि, जल, आकाश · पञ्चाशल्लिपयः क्रमात् — पचास लिपियाँ क्रम से · महीसलिलयोः मित्रम् — भूमि और जल मित्र हैं · अनिलानलयोरपि — वायु और अग्नि भी · शात्रवं वैपरीत्येन — विपरीत से शत्रुता · मैत्रं सर्वत्र चापरम् — और अन्य (आकाश) सर्वत्र मित्र

परस्परविरुद्धानां वर्णानां यत्र सङ्गतिः ।

वर्जयेत्तादृशं मन्त्रं नाशकृत्तत् कुलेश्वरि ॥ ९६ ॥

९६

जहाँ परस्पर विरुद्ध वर्णों का संयोग हो, ऐसे मन्त्र को त्याग दे; वह नाश करने वाला है, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ परस्परविरुद्धानां वर्णानां — परस्पर विरुद्ध वर्णों की · यत्र सङ्गतिः — जहाँ संगति हो · वर्जयेत्तादृशं मन्त्रं — ऐसे मन्त्र को त्याग दे · नाशकृत्तत् — वह नाश करता है · कुलेश्वरि — हे कुलेश्वरि

एकाक्षरे तथा कूटे त्रैपुरे मन्त्रनायिके ।

स्त्रीदत्ते स्वप्नलब्धे च सिद्धादीन्नैव शोधयेत् ॥ ९७ ॥

९७

एकाक्षर मन्त्र में, कूट मन्त्र में, त्रैपुर मन्त्र में, हे मन्त्रनायिके! स्त्री के दिये हुए और स्वप्न में प्राप्त मन्त्र में सिद्ध आदि का शोधन न करे।

पदपाठ एकाक्षरे — एकाक्षर में · तथा कूटे — वैसे कूट में · त्रैपुरे — त्रैपुर में · मन्त्रनायिके — हे मन्त्रनायिके · स्त्रीदत्ते — स्त्री से दिए में · स्वप्नलब्धे च — और स्वप्न में प्राप्त में · सिद्धादीन्नैव शोधयेत् — सिद्ध आदि का शोधन न करे

मन्त्रसिद्धोपदिष्टेषु चतुराम्नायजेषु च ।

मालामन्त्रेषु देवेशि सिद्धादीन्नैव शोधयेत् ॥ ९८ ॥

९८

मन्त्रसिद्ध (गुरु) के द्वारा उपदिष्ट, चारों आम्नायों से उत्पन्न और मालामन्त्रों में, हे देवेशि! सिद्ध आदि का शोधन न करे।

पदपाठ मन्त्रसिद्धोपदिष्टेषु — मन्त्र-सिद्ध द्वारा उपदिष्ट में · चतुराम्नायजेषु च — और चार आम्नायों से उत्पन्न में · मालामन्त्रेषु — माला-मन्त्रों में · देवेशि — हे देवेशि · सिद्धादीन्नैव शोधयेत् — सिद्ध आदि का शोधन न करे

नृसिंहार्कवराहाणां प्रासादप्रणवस्य च ।

सपिण्डाक्षरमन्त्राणां सिद्धादीनैव शोधयेत् ॥ ९९ ॥

९९

नृसिंह, सूर्य और वराह के मन्त्रों में, प्रासाद और प्रणव में, तथा पिण्डाक्षरयुक्त मन्त्रों में सिद्ध आदि का शोधन न करे।

पदपाठ नृसिंहार्कवराहाणां — नृसिंह, सूर्य, वराह के · प्रासादप्रणवस्य च — और प्रासाद और प्रणव के · सपिण्डाक्षरमन्त्राणां — पिण्डाक्षर मन्त्रों के · सिद्धादीनैव शोधयेत् — सिद्ध आदि का शोधन न करे

मनोऽन्यत्र शिवोऽन्यत्र शक्तिरन्यत्र मारुतः ।

न सिध्यति वरारोहे लक्षकोटिजपादपि ॥ १०० ॥

१००

मन कहीं और, शिव कहीं और, शक्ति कहीं और, प्राणवायु कहीं और — तो हे वरारोहे! लाख करोड़ जप से भी सिद्धि नहीं होती।

पदपाठ मनः अन्यत्र — मन अन्यत्र · शिवः अन्यत्र — शिव अन्यत्र · शक्तिः अन्यत्र — शक्ति अन्यत्र · मारुतः — प्राण (अन्यत्र) · न सिध्यति — सिद्ध नहीं होता · वरारोहे — हे वरारोहे · लक्षकोटिजपादपि — लाख करोड़ जप से भी

वादार्थं पठ्यते विद्या परार्थं क्रियते जपः ।

ख्यात्यर्थं दीयते दानं कथं सिद्धिर्वरानने ॥ १०१ ॥

१०१

विद्या वाद के लिए पढ़ी जाती है, जप दूसरों के लिए किया जाता है, दान ख्याति के लिए दिया जाता है — फिर सिद्धि कैसे हो, हे वरानने?

पदपाठ वादार्थं पठ्यते विद्या — वाद के लिए विद्या पढ़ी जाती है · परार्थं क्रियते जपः — दूसरों के लिए जप किया जाता है · ख्यात्यर्थं दीयते दानं — ख्याति के लिए दान दिया जाता है · कथं सिद्धिः — सिद्धि कैसे · वरानने — हे वरानने

धनार्थं गम्यते तीर्थं दम्भार्थं क्रियते तपः ।

१०२

कार्यार्थं देवतापूजा कथं सिद्धिर्नु जायते ॥ १०२ ॥

धन के लिए तीर्थ जाया जाता है, दम्भ के लिए तप किया जाता है, किसी कार्य के लिए देवता की पूजा — फिर सिद्धि कैसे हो सकती है?

पदपाठ धनार्थं गम्यते तीर्थ — धन के लिए तीर्थ जाया जाता है · दम्भार्थं क्रियते तपः — दम्भ के लिए तप किया जाता है · कार्यार्थं देवतापूजा — कार्य के लिए देवता-पूजा · कथं सिद्धिर्नु जायते — सिद्धि कैसे हो?

अमेध्येन तु देहेन न्यासं देवार्चनं जपम् ।

१०३

होमं कुर्वन्ति चेन्मूढास्तत् सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ १०३ ॥

यदि मूढ़ अपवित्र शरीर से न्यास, देवार्चन, जप और होम करते हैं, तो वह सब निष्फल हो जाता है।

पदपाठ अमेध्येन तु देहेन — अशुद्ध देह से · न्यास — न्यास · देवार्चन — देवार्चन · जपम् — जप · होमं — होम · कुर्वन्ति चेन्मूढाः — यदि मूढ़ करें · तत् सर्वं निष्फलं भवेत् — वह सब निष्फल होता है

विष्मूत्रत्यागशेषादियुक्तः कर्म करोति यः ।

१०४

जपार्चनादिकं सर्वमपवित्रं भवेत् प्रिये ॥ १०४ ॥

जो मल-मूत्र त्याग के शेष आदि से युक्त होकर कर्म करता है, उसका जप, अर्चन आदि सब अपवित्र हो जाता है, हे प्रिये!

पदपाठ विष्मूत्रत्यागशेषादियुक्तः — मल-मूत्र त्याग के शेष आदि से युक्त · कर्म करोति यः — जो कर्म करता है · जपार्चनादिकं सर्वम् — उसका जप, अर्चन आदि सब · अपवित्रं भवेत् प्रिये — अपवित्र होता है, हे प्रिये

मलिनाम्बरकेशादिमुखदौर्गन्धसंयुतः ।

यो जपेत्तं दहत्याशु देवता सुजुगुप्सिता ॥ १०५॥

१०५

जो मलिन वस्त्र, केश आदि और मुख की दुर्गन्ध से युक्त होकर जप करता है, उसे अत्यन्त जुगुप्सित देवता शीघ्र ही दग्ध कर देती है।

पदपाठ मलिनाम्बरकेशादि — मलिन वस्त्र, केश आदि · मुखदौर्गन्धसंयुतः — और मुख की दुर्गन्ध से युक्त · यः जपेत् — जो जपे · तं दहत्याशु — उसे शीघ्र जला देती है · देवता सुजुगुप्सिता — अति घृणा करती देवता

आलस्यं जृम्भणं निद्रां क्षुतं निष्ठीवनं भयम् ।

नीचाङ्गस्पर्शनं कोपं जपकाले विवर्जयेत् ॥ १०६॥

१०६

आलस्य, जँभाई, निद्रा, छींक, थूकना, भय, नीचे के अङ्गों का स्पर्श और क्रोध — इन्हें जप के समय त्याग दे।

पदपाठ आलस्यं — आलस्य · जृम्भणं — जँभाई · निद्रां — निद्रा · क्षुतं — छींक · निष्ठीवनं — थूकना · भयम् — भय · नीचाङ्गस्पर्शनं — नीचे अङ्गों का स्पर्श · कोपं — कोप · जपकाले विवर्जयेत् — जप-काल में त्याग दे

अत्याहारः प्रलापश्च प्रजल्पो नियमाग्रहः ।

अन्यासङ्गश्च लौल्यञ्च षड्भिर्मन्त्रो न सिध्यति ॥ १०७॥

१०७

अत्याहार, प्रलाप, प्रजल्प, नियमों का आग्रह, अन्य वस्तुओं में आसक्ति और लोलुपता — इन छह से मन्त्र सिद्ध नहीं होता।

पदपाठ अत्याहारः — अत्याहार · प्रलापश्च — और प्रलाप · प्रजल्पः — प्रजल्प (गप) · नियमाग्रहः — नियम का आग्रह · अन्यासङ्गश्च — और अन्य में आसक्ति · लौल्यञ्च — और लोलुपता · षड्भिर्मन्त्रः न सिध्यति — इन छह से मन्त्र सिद्ध नहीं होता

उष्णीशी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशो गणावृतः ।

१०८

अपवित्रोत्तरीयश्चाशुचिर्गच्छंश्च नो जपेत् ॥ १०८ ॥

पगड़ी पहने, कञ्चुक पहने, नग्न, खुले केश, समूह से घिरा हुआ, अपवित्र उत्तरीय वाला, अशुचि और चलते हुए जप न करे।

पदपाठ उष्णीशी — पगड़ी बाँधे · कञ्चुकी — कंचुकी पहने · नग्नः — नग्न · मुक्तकेशः — खुले केश · गणावृतः — भीड़ से घिरा · अपवित्रोत्तरीयश्च — और अपवित्र उत्तरीय वाला · अशुचिः — अशुचि · गच्छंश्च — और चलते हुए · नो जपेत् — न जपे

जाड्यं दुःखं तृणच्छेदं विवादं वा मनोरथम् ।

१०९

बहिस्तु देहवायुञ्च जपकाले विवर्जयेत् ॥ १०९ ॥

जड़ता, दुःख, तिनके तोड़ना, विवाद, मनोरथ और देह की वायु को बाहर निकालना — इन्हें जप के समय त्याग दे।

पदपाठ जाड्यं — जड़ता · दुःखं — दुःख · तृणच्छेदं — तृण तोड़ना · विवादं वा — या विवाद · मनोरथम् — मनोरथ (कल्पना) · बहिस्तु देहवायुञ्च — और बाहर देह-वायु (छोड़ना) · जपकाले विवर्जयेत् — जप-काल में त्याग दे

शान्तः शुचिर्मिताहारो भूशायी भक्तिमान् वशी ।

११०

निर्द्वन्द्वः स्थिरधीर्मौनी संयतात्मा जपेत् प्रिये ॥ ११० ॥

शान्त, शुचि, मिताहारी, भूमि पर सोने वाला, भक्तिमान्, जितेन्द्रिय, निर्द्वन्द्व, स्थिरबुद्धि, मौनी और संयतात्मा होकर जप करे, हे प्रिये!

पदपाठ शान्तः — शान्त · शुचिः — शुचि · मिताहारः — मिताहारी · भूशायी — भूमि पर शयन करने वाला · भक्तिमान् — भक्तिमान् · वशी — वशी (संयमी) · निर्द्वन्द्वः — निर्द्वन्द्व · स्थिरधीः — स्थिर बुद्धि · मौनी — मौनी · संयतात्मा — संयत आत्मा · जपेत् प्रिये — जपे, हे प्रिये

विश्वासास्तिक्यकरुणाश्रद्धानियमनिश्चयैः ।

१११

सन्तोषौत्सुक्यधर्मादिगुणैर्युक्तो जपेन्नरः ॥ १११ ॥

विश्वास, आस्तिक्य, करुणा, श्रद्धा, नियम, निश्चय, सन्तोष, उत्सुकता, धर्म आदि गुणों से युक्त होकर मनुष्य जप करे।

पदपाठ विश्वास — विश्वास · आस्तिक्य — आस्तिक्य · करुणा — करुणा · श्रद्धा — श्रद्धा · नियम — नियम · निश्चयैः — और निश्चय से · सन्तोष — सन्तोष · औत्सुक्य — औत्सुक्य · धर्मादिगुणैः — धर्म आदि गुणों से · युक्तः जपेन्नरः — युक्त मनुष्य जपे

सुगन्धिपुष्पाभरणवस्त्रादिभिरलङ्कृतः ।

११२

तस्य हस्तगता सिद्धिर्नान्यस्य जपकोटितः ॥ ११२ ॥

सुगन्धित पुष्प, आभूषण, वस्त्र आदि से अलङ्कृत (साधक) के हाथ में सिद्धि है; दूसरे को करोड़ जप से भी नहीं।

पदपाठ सुगन्धिपुष्पाभरणवस्त्रादिभिः — सुगन्धित पुष्प, आभूषण, वस्त्र आदि से · अलङ्कृतः — अलंकृत · तस्य हस्तगता सिद्धिः — उसके हाथ में सिद्धि है · नान्यस्य — दूसरे की नहीं · जपकोटितः — करोड़ जप से भी

तन्निष्ठस्तद्गतप्राणस्तच्चित्तस्तत्परायणः ।

११३

तत्पदार्थानुसन्धानं कुर्वन् मन्त्रं जपेत् प्रिये ॥ ११३ ॥

उसमें निष्ठा रखने वाला, उसमें प्राण लगाये हुए, उसमें चित्त लगाये हुए, उसी में परायण, उसके पदार्थ का अनुसन्धान करता हुआ मन्त्र का जप करे, हे प्रिये!

पदपाठ तन्निष्ठः — तन्निष्ठ · तद्गतप्राणः — उसमें गए प्राण वाला · तच्चित्तः — उसमें चित्त वाला · तत्परायणः — तत्परायण · तत्पदार्थानुसन्धानं कुर्वन् — उसके पदार्थ का अनुसन्धान करते · मन्त्रं जपेत् प्रिये — मन्त्र जपे, हे प्रिये

जपात् श्रान्तः पुनर्ध्यायेद्भ्यानात् श्रान्तः पुनर्जपेत् ।
जपध्यानादियुक्तस्य क्षिप्रं मन्त्रः प्रसिध्यति ॥ ११४ ॥

११४

जप से थकने पर फिर ध्यान करे, ध्यान से थकने पर फिर जप करे; जप, ध्यान आदि से युक्त साधक का मन्त्र शीघ्र सिद्ध हो जाता है।

पदपाठ जपात् श्रान्तः — जप से थका · पुनर्ध्यायेत् — फिर ध्यान करे · ध्यानात् श्रान्तः — ध्यान से थका · पुनर्जपेत् — फिर जपे · जपध्यानादियुक्तस्य — जप-ध्यान आदि से युक्त का · क्षिप्रं मन्त्रः प्रसिध्यति — शीघ्र मन्त्र सिद्ध होता है

इति ते कथितं किञ्चित् पुरश्चरणलक्षणम् ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ११५ ॥

११५

इस प्रकार तुम्हें संक्षेप में पुरश्चरण का कुछ लक्षण कहा गया, हे कुलेशानि! अब और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितं किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · पुरश्चरणलक्षणम् — पुरश्चरण के लक्षण · समासेन — संक्षेप में · कुलेशानि — हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे पुरश्चरणादिकथनं नाम पञ्चदश उल्लासः ॥ १५ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में पुरश्चरणादिकथन नामक पञ्चदश उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ षोडशोल्लासः

षोडश उल्लास — काम्यकर्मविधानम्



ईश्वर परा-प्रासाद मन्त्र के काम्यकर्म बताते हैं: होम-तर्पण सहित प्रारम्भिक लक्ष-जप, षट्कर्म से पहले मन्त्री को जानने योग्य विषयों की लम्बी सूची, मन्त्रान्त पदों का नियम, प्रत्येक कर्म के द्रव्य और स्थान, बीज के सात्त्विक, राजस और तामस ध्यान और उनके फल, यन्त्र और कलशाभिषेक, शान्तिक, वश्य और क्रूर होम, तथा मारण के लिए प्रतिकृति-विधान।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि करुणामृतवारिधे ।

१

काम्यकर्मविधानञ्च वद मे परमेश्वर ॥ १॥

हे कुलेश! हे करुणामृत के सागर! मैं काम्यकर्म का विधान सुनना चाहती हूँ; मुझे बताइए, हे परमेश्वर!

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · करुणामृतवारिधे — हे करुणामृत के सागर · काम्यकर्मविधानञ्च — और काम्य कर्मों का विधान · वद मे परमेश्वर — मुझे बताइए, हे परमेश्वर

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

२

तस्य श्रवणमात्रेण प्रयोगनिपुणो भवेत् ॥ २॥

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से मनुष्य प्रयोग में निपुण हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · प्रयोगनिपुणो भवेत् — प्रयोग में निपुण होता है

मन्त्री विशुद्धहृदयः पूर्वोक्तनियमान्वितः ।
श्रीप्रासादपरामन्त्रं तत्त्वलक्षं जपेत् प्रिये ॥ ३॥

३

विशुद्ध हृदय वाला, पूर्वोक्त नियमों से युक्त मन्त्री श्रीप्रासाद-परा मन्त्र का तत्त्वों की संख्या के अनुसार लाख-लाख जप करे, हे प्रिये!

पदपाठ मन्त्री — मन्त्री · विशुद्धहृदयः — विशुद्ध हृदय वाला · पूर्वोक्तनियमान्वितः — पूर्वोक्त नियमों से युक्त · श्रीप्रासादपरामन्त्रं — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · तत्त्वलक्षं — तत्त्व-लक्ष (तत्त्वों की संख्या के लाख) · जपेत् प्रिये — जपे, हे प्रिये

दशांशं जुहुयाद्देवि संस्कृते हव्यवाहने ।
दशांशं तर्पयेद्गुधैः सलिलैः शालितण्डुलैः ॥ ४॥

४

हे देवि! संस्कृत अग्नि में (जप का) दशांश हवन करे, और दूध, जल तथा शालि-तण्डुलों से दशांश तर्पण करे।

पदपाठ दशांशं जुहुयाद्देवि — दशांश हवन करे, हे देवि · संस्कृते हव्यवाहने — संस्कृत अग्नि में · दशांशं तर्पयेद् — दशांश तर्पण करे · गुधैः सलिलैः शालितण्डुलैः — दूध, जल, शालि-चावल से

गन्धपुष्पाक्षताकल्पधनवस्त्रादिभिः प्रिये ।
भक्ष्यभोज्यान्नपानाद्यैर्हव्यद्रव्यैर्मनोहरैः ॥ ५॥

५

हे प्रिये! गन्ध, पुष्प, अक्षत, आभूषण, धन, वस्त्र आदि से, भक्ष्य-भोज्य, अन्न-पान आदि से, मनोहर हव्य-द्रव्यों से,

पदपाठ गन्धपुष्पाक्षताकल्पधनवस्त्रादिभिः — गन्ध, पुष्प, अक्षत, आभूषण, धन, वस्त्र आदि से · प्रिये — हे प्रिये · भक्ष्यभोज्यान्नपानाद्यैः — भक्ष्य, भोज्य, अन्न, पान आदि से · हव्यद्रव्यैर्मनोहरैः — मनोहर हव्य-द्रव्यों से

तोषयेद् योगिनीचक्रं यथाविभवविस्तरम् ।

एवं न्यासजपध्यानसहोमार्चनतर्पणः ॥ ६॥

६

यथाशक्ति विस्तार से योगिनी-चक्र को सन्तुष्ट करे। इस प्रकार न्यास, जप, ध्यान सहित होम, अर्चन और तर्पण करने वाला

पदपाठ तोषयेद् योगिनीचक्रं — योगिनी-चक्र को सन्तुष्ट करे · यथाविभवविस्तरम् — यथावैभव विस्तार से · एवं — इस प्रकार · न्यासजपध्यानसहोमार्चनतर्पणः — न्यास, जप, ध्यान, होम, अर्चन, तर्पण सहित

मन्त्री सिद्धमनुर्देवि साक्षात् परशिवो भवेत् ।

ततः स्वमनसोऽभीष्टान् प्रयोगान् कुलनायिके ॥ ७॥

७

मन्त्री सिद्धमन्त्र होकर, हे देवि! साक्षात् परशिव हो जाता है। तब, हे कुलनायिके! अपने मन के अभीष्ट प्रयोगों को

पदपाठ मन्त्री सिद्धमनुर्देवि — सिद्ध-मन्त्र मन्त्री, हे देवि · साक्षात् परशिवो भवेत् — साक्षात् परशिव हो जाता है · ततः — फिर · स्वमनसोऽभीष्टान् प्रयोगान् — अपने मन के अभीष्ट प्रयोग · कुलनायिके — हे कुलनायिके

मन्त्रेणानेन मतिमान् साधयेद् भुक्तिमुक्तये ।

सिद्धमन्त्रस्य सिध्यन्ति षट् कर्माणि न संशयः ।

८

नैव सिध्यन्त्यसिद्धस्य देवताशापमाप्नुयात् ॥ ८ ॥

बुद्धिमान् इस मन्त्र से भुक्ति और मुक्ति के लिए सिद्ध करे। सिद्धमन्त्र वाले के षट्कर्म सिद्ध होते हैं, इसमें संशय नहीं; असिद्ध के सिद्ध नहीं होते, वह देवता के शाप को प्राप्त करता है।

पदपाठ मन्त्रेणानेन मतिमान् — इस मन्त्र से बुद्धिमान् · साधयेद् भुक्तिमुक्तये — भुक्ति-मुक्ति के लिए साधे · सिद्धमन्त्रस्य सिध्यन्ति — सिद्ध-मन्त्र वाले के सिद्ध होते हैं · षट् कर्माणि न संशयः — छह कर्म, सन्देह नहीं · नैव सिध्यन्त्यसिद्धस्य — असिद्ध के सिद्ध नहीं होते · देवताशापमाप्नुयात् — देवता का शाप पाता है

काम्यप्रयोगकर्तृणां परलोको न विद्यते ।

९

प्रयोगसिद्धिरेवैषां फलमन्यन्न तु प्रिये ॥ ९ ॥

काम्य प्रयोग करने वालों के लिए परलोक नहीं है; प्रयोग की सिद्धि ही उनका फल है, अन्य कुछ नहीं, हे प्रिये!

पदपाठ काम्यप्रयोगकर्तृणां — काम्य प्रयोग करने वालों के लिए · परलोको न विद्यते — परलोक नहीं है · प्रयोगसिद्धिरेवैषां — उनके लिए प्रयोग-सिद्धि ही · फलमन्यन्न तु प्रिये — फल है, अन्य नहीं, हे प्रिये

एकस्यापि विधानस्य न कुत्रापि फलद्वयम् ।

१०

देवेशि दृश्यते तस्मान्निष्कामो देवतां यजेत् ॥ १० ॥

हे देवेशि! किसी एक विधान का दो फल कहीं नहीं देखा जाता; इसलिए निष्काम होकर देवता का यजन करे।

पदपाठ एकस्यापि विधानस्य — एक भी विधान का · न कुत्रापि फलद्वयम् — कहीं दो फल नहीं · देवेशि दृश्यते — दिखता, हे देवेशि · तस्मान्निष्कामो देवतां यजेत् — इसलिए निष्काम होकर देवता का यजन करे

होमतर्पणमन्त्राद्यैर्यासध्यानविशेषकैः ।

११

आत्मनश्च परस्यापि षट् कर्माणि समाचरेत् ॥ ११ ॥

होम, तर्पण, मन्त्र आदि से और विशेष न्यास-ध्यानों से अपने लिए और दूसरे के लिए भी षट्कर्म का आचरण करे।

पदपाठ होमतर्पणमन्त्राद्यैः — होम, तर्पण, मन्त्र आदि से · न्यासध्यानविशेषकैः — विशेष न्यास और ध्यानों से · आत्मनश्च परस्यापि — अपने लिए और दूसरे के लिए भी · षट् कर्माणि समाचरेत् — छह कर्म करे

प्रयोगान्ते चक्रपूजां विधिनैव समाचरेत् ।

१२

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं न्यासध्यानसमन्वितः ॥ १२ ॥

प्रयोग के अन्त में विधिपूर्वक चक्रपूजा करे, और न्यास-ध्यान सहित मन्त्र का एक लाख जप करे,

पदपाठ प्रयोगान्ते — प्रयोग के अन्त में · चक्रपूजां विधिनैव समाचरेत् — चक्रपूजा विधि से ही करे · लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं — एक लाख मन्त्र जपे · न्यासध्यानसमन्वितः — न्यास और ध्यान सहित

प्रयोगदोषशान्त्यर्थमात्मरक्षार्थमेव च ।

१३

न चेत् फलं न चाप्नोति देवताशापमाप्नुयात् ॥ १३ ॥

प्रयोग के दोषों की शान्ति के लिए और आत्मरक्षा के लिए। यदि नहीं करता तो फल नहीं पाता और देवता के शाप को प्राप्त होता है।

पदपाठ प्रयोगदोषशान्त्यर्थम् — प्रयोग-दोष की शान्ति के लिए · आत्मरक्षार्थमेव च — और आत्मरक्षा के लिए · न चेत् — यदि नहीं · फलं न चाप्नोति — फल नहीं पाता · देवताशापमाप्नुयात् — देवता का शाप पाता है

तिथिवारञ्च नक्षत्रं योगमासर्तुपक्षकम् ।

दीपेशं कुलचक्राणि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ १४ ॥

१४

तिथि, वार, नक्षत्र, योग, मास, ऋतु, पक्ष, दीपेश और कुलचक्रों को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ तिथिवारञ्च नक्षत्रं — तिथि, वार और नक्षत्र · योगमासर्तुपक्षकम् — योग, मास, ऋतु, पक्ष · दीपेशं कुलचक्राणि — दीपेश और कुलचक्र · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

ऋषिच्छन्दोदेवताङ्गन्यासध्यानार्चनादिकम् ।

बीजं शक्तिं कीलकञ्च ज्ञात्वा मन्त्राणि साधयेत् ॥ १५ ॥

१५

ऋषि, छन्द, देवता, अङ्गन्यास, ध्यान, अर्चन आदि, बीज, शक्ति और कीलक को जानकर मन्त्रों को सिद्ध करे।

पदपाठ ऋषिच्छन्दोदेवताङ्गन्यासध्यानार्चनादिकम् — ऋषि, छन्द, देवता, अङ्गन्यास, ध्यान, अर्चन आदि · बीजं शक्तिं कीलकञ्च — बीज, शक्ति और कीलक · ज्ञात्वा मन्त्राणि साधयेत् — जानकर मन्त्र साधे

पुत्रबान्धवदाराश्च राशिवर्णानुकूलता ।

भूतमैत्रीं तथोद्यन्तं ज्ञात्वा मन्त्राणि साधयेत् ॥ १६ ॥

१६

(मन्त्र के) पुत्र, बान्धव, दारा, राशि और वर्ण की अनुकूलता, भूत-मैत्री तथा उदय को जानकर मन्त्रों को सिद्ध करे।

पदपाठ पुत्रबान्धवदाराश्च — पुत्र, बान्धव, स्त्री · राशिवर्णानुकूलता — राशि और वर्ण की अनुकूलता · भूतमैत्रीं — भूत-मैत्री · तथोद्यन्तं — और उदयमान (मन्त्र) · ज्ञात्वा मन्त्राणि साधयेत् — जानकर मन्त्र साधे

मन्त्रविद्याऽभेदरूपं निद्राञ्च बोधरूपकम् ।

स्त्रीपुनपुंसकादींश्च ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ १७ ॥

१७

मन्त्र और विद्या के अभेद रूप, निद्रा और बोध रूप, स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि (भेदों) को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ मन्त्रविद्याऽभेदरूपं — मन्त्र और विद्या का अभेद रूप · निद्राञ्च बोधरूपकम् — निद्रा और बोध रूप · स्त्रीपुनपुंसकादींश्च — स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

स्वरवर्णपदद्वित्वं विदुश्चैतन्यसूतकम् ।

ह्रस्वदीर्घप्लुतादींश्च ज्ञात्वा मन्त्राणि साधयेत् ॥ १८ ॥

१८

विद्वान् स्वर, वर्ण और पद के द्वित्व, चैतन्य और सूतक को जानते हैं; ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत आदि को जानकर मन्त्रों को सिद्ध करे।

पदपाठ स्वरवर्णपदद्वित्वं — स्वर, वर्ण, पद का द्वित्व · विदुश्चैतन्यसूतकम् — चैतन्य और सूतक जानते हैं · ह्रस्वदीर्घप्लुतादींश्च — ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत आदि · ज्ञात्वा मन्त्राणि साधयेत् — जानकर मन्त्र साधे

पञ्चशुद्ध्यासनप्राणायामन्यासाक्षमालिकाः ।

दोषसंस्कारमुद्रादीन् ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ १९ ॥

१९

पञ्चशुद्धि, आसन, प्राणायाम, न्यास, अक्षमाला, दोष, संस्कार, मुद्रा आदि को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ पञ्चशुद्ध्यासनप्राणायामन्यासाक्षमालिकाः — पञ्चशुद्धि, आसन, प्राणायाम, न्यास, अक्षमाला · दोषसंस्कारमुद्रादीन् — दोष, संस्कार, मुद्रा आदि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

तथैवासनदिग्बन्धनाडीबन्धादिसङ्गतिम् ।

२०

देवताकालमुद्रादि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ २० ॥

इसी प्रकार आसन, दिग्बन्ध, नाडीबन्ध आदि की सङ्गति, देवता, काल, मुद्रा आदि को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ तथैवासनदिग्बन्धनाडीबन्धादिसङ्गतिम् — वैसे ही आसन, दिग्बन्ध, नाडीबन्ध आदि की संगति · देवताकालमुद्रादि — देवता, काल, मुद्रा आदि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

साध्यसाधककर्माणि लेखनीद्रव्यपञ्चकम् ।

२१

स्थानं यन्त्रं प्रमाणञ्च ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ २१ ॥

साध्य और साधक के कर्म, लेखनी और द्रव्यों का पञ्चक, स्थान, यन्त्र और प्रमाण को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ साध्यसाधककर्माणि — साध्य और साधक के कर्म · लेखनीद्रव्यपञ्चकम् — लेखनी, द्रव्य-पञ्चक · स्थानं यन्त्रं प्रमाणञ्च — स्थान, यन्त्र और प्रमाण · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

उत्पत्तिवासनावर्णमूर्तिसंस्कारसंस्थितम् ।

२२

कुण्डद्रव्यप्रमाणादीन् ज्ञात्वा होमं समाचरेत् ॥ २२ ॥

(अग्नि की) उत्पत्ति, वासना, वर्ण, मूर्ति, संस्कार और संस्थिति, कुण्ड, द्रव्य, प्रमाण आदि को जानकर होम करे।

पदपाठ उत्पत्तिवासनावर्णमूर्तिसंस्कारसंस्थितम् — उत्पत्ति, वासना, वर्ण, मूर्ति, संस्कार, संस्थिति · कुण्डद्रव्यप्रमाणादीन् — कुण्ड, द्रव्य, प्रमाण आदि · ज्ञात्वा होमं समाचरेत् — जानकर होम करे

अग्निप्रभां धूम्रवर्णध्वनिगन्धशिखाकृतीः ।

शुभचेष्टादिकं ज्ञात्वा कल्पयेत्तु शुभाशुभम् ॥ २३ ॥

२३

अग्नि की प्रभा, धूम का वर्ण, ध्वनि, गन्ध, शिखा की आकृतियाँ, शुभ चेष्टा आदि को जानकर शुभ और अशुभ का निर्णय करे।

पदपाठ अग्निप्रभां — अग्नि की प्रभा · धूम्रवर्णध्वनिगन्धशिखाकृतीः — धूम्र-वर्ण, ध्वनि, गन्ध, शिखा की आकृति · शुभचेष्टादिकं ज्ञात्वा — शुभ चेष्टा आदि जानकर · कल्पयेत्तु शुभाशुभम् — शुभ-अशुभ की कल्पना करे

मन्त्रतत्त्वानुसन्धानदेहावेशादिलक्षणम् ।

मन्त्रोच्चारणभेदञ्च ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ २४ ॥

२४

मन्त्र-तत्त्व के अनुसन्धान, देह में आवेश आदि के लक्षण और मन्त्रोच्चारण के भेद को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ मन्त्रतत्त्वानुसन्धानदेहावेशादिलक्षणम् — मन्त्र-तत्त्व के अनुसन्धान, देहावेश आदि के लक्षण · मन्त्रोच्चारणभेदञ्च — और मन्त्रोच्चारण के भेद · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

मण्डलं कलसद्रव्यशुद्धिं गन्धाष्टकादिकम् ।

दीक्षानामप्रदानादि ज्ञात्वा दीक्षां समाचरेत् ॥ २५ ॥

२५

मण्डल, कलश और द्रव्यों की शुद्धि, गन्धाष्टक आदि, दीक्षा, नाम-प्रदान आदि को जानकर दीक्षा करे।

पदपाठ मण्डलं — मण्डल · कलसद्रव्यशुद्धिं — कलश और द्रव्य की शुद्धि · गन्धाष्टकादिकम् — अष्टगन्ध आदि · दीक्षानामप्रदानादि — दीक्षा, नाम-प्रदान आदि · ज्ञात्वा दीक्षां समाचरेत् — जानकर दीक्षा करे

नित्यं नैमित्तिकं काम्यं नियमं नाम वासनाम् ।

पूजाधारणयन्त्रादि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ २६ ॥

२६

नित्य, नैमित्तिक, काम्य, नियम, नाम, वासना, पूजा, धारण, यन्त्र आदि को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ नित्यं नैमित्तिकं काम्यं — नित्य, नैमित्तिक, काम्य · नियमं नाम वासनाम् — नियम, नाम, वासना · पूजाधारणयन्त्रादि — पूजा, धारण, यन्त्र आदि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

पूजागृहप्रवेशादिकुलपूजकलक्षणम् ।

कुलद्रव्यादिशुद्धिञ्च ज्ञात्वा पूजां समाचरेत् ॥ २७ ॥

२७

पूजागृह में प्रवेश आदि, कुलपूजक के लक्षण और कुलद्रव्य आदि की शुद्धि को जानकर पूजा करे।

पदपाठ पूजागृहप्रवेशादि — पूजागृह-प्रवेश आदि · कुलपूजकलक्षणम् — कुलपूजक के लक्षण · कुलद्रव्यादिशुद्धिञ्च — और कुलद्रव्य आदि की शुद्धि · ज्ञात्वा पूजां समाचरेत् — जानकर पूजा करे

अन्तर्यागं बहिर्यागं घटार्घ्यस्थापनादिकम् ।

पञ्चपुष्पाञ्जलिं देवि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ २८ ॥

२८

अन्तर्याग, बहिर्याग, घट और अर्घ्य की स्थापना आदि, पञ्च-पुष्पाञ्जलि को, हे देवि! जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ अन्तर्यागं बहिर्यागं — अन्तर्याग, बहिर्याग · घटार्घ्यस्थापनादिकम् — घट-अर्घ्य स्थापन आदि · पञ्चपुष्पाञ्जलिं देवि — पंच पुष्पांजलि, हे देवि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

पात्राधारालिपिशितं कलामुद्राध्वमेलनम् ।

वटुकादिबलिं देवि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ २९॥

२९

पात्र, आधार, मद्य, मांस, कला, मुद्रा, अध्व-मेलन और वटुक आदि की बलि को, हे देवि! जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ पात्राधारालिपिशितं — पात्र, आधार, मद्य, मांस · कलामुद्राध्वमेलनम् — कला, मुद्रा, अध्व-मेलन · वटुकादिबलिं देवि — वटुक आदि का बलि, हे देवि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

कुलाकुलाख्यसहजशक्तिभेदञ्च लक्षणम् ।

शुभलक्षणसंयुक्तं स्त्रीसंस्कारार्चनादिकम् ।

३०

देवि सम्भोगकालञ्च ज्ञात्वा शक्तिं परिग्रहेत् ॥ ३०॥

कुला, अकुला और सहजा नामक शक्तियों के भेद और लक्षण, शुभ लक्षणों से युक्त स्त्री के संस्कार, अर्चन आदि और सम्भोग-काल को, हे देवि! जानकर शक्ति का परिग्रह करे।

पदपाठ कुलाकुलाख्यसहजशक्तिभेदञ्च — कुल, अकुल, सहज नामक शक्ति-भेद · लक्षणम् — और लक्षण · शुभलक्षणसंयुक्तं — शुभ लक्षणों से युक्त · स्त्रीसंस्कारार्चनादिकम् — स्त्री-संस्कार, अर्चन आदि · देवि सम्भोगकालञ्च — और सम्भोग-काल, हे देवि · ज्ञात्वा शक्तिं परिग्रहेत् — जानकर शक्ति ग्रहण करे

पानभेदं फलोल्लासप्रमाणं स्थितिलक्षणम् ।

तत्त्वत्रयस्य स्वीकारं ज्ञात्वा कुलसुधां पिबेत् ॥ ३१॥

३१

पान के भेद, फल, उल्लास और प्रमाण, स्थिति के लक्षण और तत्त्वत्रय के स्वीकार को जानकर कुल-सुधा का पान करे।

पदपाठ पानभेदं — पान-भेद · फलोल्लासप्रमाणं — फल, उल्लास, प्रमाण · स्थितिलक्षणम् — स्थिति के लक्षण · तत्त्वत्रयस्य स्वीकारं — तत्त्वत्रय का स्वीकार · ज्ञात्वा कुलसुधां पिबेत् — जानकर कुल-सुधा पिए

चक्रप्रवेशं प्रणतिं स्थितिं निर्गमनं प्रिये ।

३२

योगिनीभोगचेष्टादि ज्ञात्वा भवति कौलिकः ॥ ३२ ॥

चक्र में प्रवेश, प्रणति, स्थिति और निर्गमन, हे प्रिये! योगिनियों के भोग और चेष्टा आदि को जानकर मनुष्य कौलिक होता है।

पदपाठ चक्रप्रवेशं — चक्र-प्रवेश · प्रणतिं स्थितिं निर्गमनं — प्रणाम, स्थिति, निर्गमन · प्रिये — हे प्रिये · योगिनीभोगचेष्टादि — योगिनियों के भोग, चेष्टा आदि · ज्ञात्वा भवति कौलिकः — जानकर कौलिक होता है

रत्युल्लासनकालञ्च कुलदीपनिवेदनम् ।

३३

शान्तिस्तवादिपठनं ज्ञात्वा स्यात् कुलदेशिकाः ॥ ३३ ॥

रति के उल्लासन का काल, कुलदीप का निवेदन और शान्तिस्तव आदि के पठन को जानकर वे कुलदेशिक होते हैं।

पदपाठ रत्युल्लासनकालञ्च — और रति-उल्लास का काल · कुलदीपनिवेदनम् — कुलदीप का निवेदन · शान्तिस्तवादिपठनं — शान्तिस्तव आदि का पठन · ज्ञात्वा स्यात् कुलदेशिकाः — जानकर कुलदेशिक होते हैं

मिथुनानुग्रहाष्टपुष्पिणीकन्यकार्चनाम् ।

३४

विशेषतिथिपूजाञ्च ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ ३४ ॥

मिथुन के अनुग्रह, आठ-आठ पुष्पिणी और कन्याओं के अर्चन और विशेष तिथियों की पूजा को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ मिथुनानुग्रहाष्टपुष्पिणीकन्यकार्चनाम् — मिथुन-अनुग्रह, चौंसठ पुष्पिणी और कन्याओं का अर्चन · विशेषतिथिपूजाञ्च — और विशेष तिथियों की पूजा · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

आम्नायभेदं सङ्केतं पुष्पसङ्कोचमेव च ।

ओजस्त्रयं सम्प्रदायं ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ ३५॥

३५

आम्नायों के भेद, सङ्केत, पुष्प-सङ्कोच, ओजस्त्रय और सम्प्रदाय को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ आम्नायभेदं सङ्केतं — आम्नाय-भेद, संकेत · पुष्पसङ्कोचमेव च — और पुष्प-संकोच · ओजस्त्रयं सम्प्रदायं — तीन ओज, सम्प्रदाय · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

श्रौतविद्याकुलाचारं मनुभेदञ्च पादुकाम् ।

चरणत्रितयं देवि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ ३६॥

३६

श्रौत विद्या और कुलाचार, मन्त्रों के भेद और पादुका, चरण-त्रितय को, हे देवि! जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ श्रौतविद्याकुलाचारं — श्रौत विद्या, कुलाचार · मनुभेदञ्च पादुकाम् — मन्त्र-भेद और पादुका · चरणत्रितयं देवि — तीन चरण, हे देवि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

स्वाधिकस्य समन्यूनकौलिकाराधनक्रमम् ।

सिद्धमुद्राधराचादि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ ३७॥

३७

अपने से अधिक, समान और न्यून कौलिकों की आराधना का क्रम, सिद्धमुद्राधारियों की अर्चा आदि को जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ स्वाधिकस्य समन्यूनकौलिकाराधनक्रमम् — अपने से अधिक, समान, न्यून कौलिकों की आराधना का क्रम · सिद्धमुद्राधराचादि — सिद्धमुद्रा-धारियों का अर्चन आदि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

गुर्वग्निप्रेतसंस्कारमन्त्येष्टिं दिग्बलिक्रमम् ।

मोक्षदीपविधानादि ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥ ३८ ॥

३८

गुरु, अग्नि और प्रेत के संस्कार, अन्त्येष्टि, दिग्बलि का क्रम, मोक्षदीप का विधान आदि जानकर कर्मों को सिद्ध करे।

पदपाठ गुर्वग्निप्रेतसंस्कारम् — गुरु, अग्नि, प्रेत के संस्कार · अन्त्येष्टिं दिग्बलिक्रमम् — अन्त्येष्टि, दिग्बलि का क्रम · मोक्षदीपविधानादि — मोक्षदीप का विधान आदि · ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् — जानकर कर्म साधे

इत्याद्याः कथिताः किञ्चिद्विशेषाः कुलनायिके ।

सर्वेषामेव मन्त्राणां विधिः साधारणक्रमः ॥ ३९ ॥

३९

हे कुलनायिके! ये आदि कुछ विशेष बातें कही गईं; सब मन्त्रों के लिए यह विधि साधारण क्रम है।

पदपाठ इत्याद्याः कथिताः — इत्यादि कहे गए · किञ्चिद्विशेषाः कुलनायिके — कुछ विशेष, हे कुलनायिके · सर्वेषामेव मन्त्राणां — सब मन्त्रों की · विधिः साधारणक्रमः — विधि साधारण क्रम है

मन्त्राः पुरुषदेवाः स्युर्विद्याः स्त्रीदेवताः प्रिये ।

मन्त्राः पुंसो हुंफडन्ताः प्राणे चरति दक्षिणे ।

४०

प्रबुध्यन्तेऽग्निजायान्ता विद्याः स्त्रीदेवताः प्रिये ॥ ४०॥

मन्त्रों के देवता पुरुष हैं, विद्याओं की देवता स्त्री हैं, हे प्रिये! पुरुष मन्त्र हुं-फट् से अन्त वाले हैं और दक्षिण स्वर में प्राण चलने पर जागते हैं; स्वाहा से अन्त वाली विद्याएँ स्त्री-देवता वाली हैं, हे प्रिये!

पदपाठ मन्त्राः पुरुषदेवाः — मन्त्र पुरुष-देवता वाले हैं · स्युर्विद्याः स्त्रीदेवताः प्रिये — विद्याएँ स्त्री-देवता वाली, हे प्रिये · मन्त्राः पुंसो हुंफडन्ताः — पुरुष मन्त्र हुं-फट् अन्त वाले · प्राणे चरति दक्षिणे — दाहिने में प्राण चलने पर · प्रबुध्यन्ते — जागते हैं · अग्निजायान्ता विद्याः — स्वाहा (अग्निजाया) अन्त वाली विद्याएँ · स्त्रीदेवताः प्रिये — स्त्री-देवता वाली, हे प्रिये

वामे प्राणे प्रबुध्यन्ते नमोऽन्ताः स्युर्नपुंसकाः ।

नाडीद्वयगते प्राणे सर्वे बोधं प्रयान्ति च ॥ ४१॥

४१

वे वाम स्वर में प्राण चलने पर जागती हैं। नमः से अन्त वाले नपुंसक हैं; दोनों नाड़ियों में प्राण चलने पर सब जागते हैं।

पदपाठ वामे प्राणे प्रबुध्यन्ते — बाएँ प्राण में जागती हैं · नमोऽन्ताः स्युर्नपुंसकाः — नमः अन्त वाले नपुंसक हैं · नाडीद्वयगते प्राणे — दोनों नाड़ियों में प्राण होने पर · सर्वे बोधं प्रयान्ति च — सब बोध पाते हैं

शान्तिके मनवः सौम्या भूयिष्ठेन्द्रमृताक्षराः ।

४२

स्वाहान्ताः स्युर्वियत्प्रायाश्चाग्नेयाः क्रूरकर्मसु ॥ ४२ ॥

शान्तिक में मन्त्र सौम्य, चन्द्र और अमृत अक्षरों से भरे, स्वाहा से अन्त वाले होते हैं; आकाश-प्राय और आग्नेय अक्षर वाले क्रूर कर्मों में होते हैं।

पदपाठ शान्तिके मनवः सौम्याः — शान्तिकर्म में मन्त्र सौम्य · भूयिष्ठेन्द्रमृताक्षराः — इन्दु और अमृत अक्षरों की बहुलता वाले · स्वाहान्ताः स्युः — स्वाहा अन्त वाले हों · वियत्प्रायाश्चाग्नेयाः — आकाश (ह) बहुल और आग्नेय · क्रूरकर्मसु — क्रूर कर्मों में

फट् च पुष्टौ वषट् वश्ये हुंफट् चैव तु मारणे ।

४३

स्तम्भने च नमः प्रोक्तं स्वाहा शान्तिकपौष्टिके ॥ ४३ ॥

पुष्टि में फट्, वश्य में वषट्, मारण में हुं फट्; स्तम्भन में नमः कहा गया है, शान्तिक और पौष्टिक में स्वाहा।

पदपाठ फट् च पुष्टौ — और फट् पुष्टि में · वषट् वश्ये — वषट् वश्य में · हुंफट् चैव तु मारणे — और हुं फट् मारण में · स्तम्भने च नमः प्रोक्तं — स्तम्भन में नमः कहा गया · स्वाहा शान्तिकपौष्टिके — स्वाहा शान्तिक और पौष्टिक में

होमतर्पणयोः स्वाहा न्यासपूजनयोर्नमः ।

४४

मन्त्रान्ते योजयेन्मन्त्री जपकाले यथास्थितम् ॥ ४४ ॥

होम और तर्पण में स्वाहा, न्यास और पूजन में नमः मन्त्री मन्त्र के अन्त में जोड़े; जप के समय मन्त्र जैसा है वैसा ही रहे।

पदपाठ होमतर्पणयोः स्वाहा — होम और तर्पण में स्वाहा · न्यासपूजनयोर्नमः — न्यास और पूजन में नमः · मन्त्रान्ते योजयेन्मन्त्री — मन्त्र के अन्त में मन्त्री जोड़े · जपकाले यथास्थितम् — जप-काल में यथास्थित

शान्तिके राजतं ताम्रं भूर्जपत्रन्तु वश्यके ।

४५

सर्वकार्येषु सौवर्णं क्रूरे स्यात् प्रेतकर्पटम् ॥ ४५॥

शान्तिक में चाँदी और ताँबा, वश्य में भूर्जपत्र, सब कार्यों में सोना; क्रूर कर्म में प्रेत का वस्त्र हो।

पदपाठ शान्तिके राजतं ताम्रं — शान्तिक में रजत और ताम्र · भूर्जपत्रन्तु वश्यके — वश्य में भूर्जपत्र · सर्वकार्येषु सौवर्णं — सब कार्यों में स्वर्ण · क्रूरे स्यात् प्रेतकर्पटम् — क्रूर में प्रेत-वस्त्र

त्रिगन्धं शान्तिके प्रोक्तं पञ्चगन्धञ्च वश्यके ।

४६

सर्वकार्येष्वष्टगन्धं क्रूरे चाष्टविषाणि च ॥ ४६॥

शान्तिक में त्रिगन्ध, वश्य में पञ्चगन्ध, सब कार्यों में अष्टगन्ध और क्रूर कर्म में आठ विष कहे गए हैं।

पदपाठ त्रिगन्धं शान्तिके प्रोक्तं — शान्तिक में त्रिगन्ध कहा गया · पञ्चगन्धञ्च वश्यके — और वश्य में पञ्चगन्ध · सर्वकार्येष्वष्टगन्धं — सब कार्यों में अष्टगन्ध · क्रूरे चाष्टविषाणि च — और क्रूर में आठ विष

शान्तिके लेखनी दूर्वा वश्यादौ शिखिपुच्छिका ।

४७

हेम्ना तु सर्वकार्याणि क्रूरे स्यात् काकपुच्छिका ॥ ४७॥

शान्तिक में लेखनी दूर्वा, वश्य आदि में मोर-पंख, सब कार्यों में सोने की, क्रूर कर्म में कौए का पंख हो।

पदपाठ शान्तिके लेखनी दूर्वा — शान्तिक में लेखनी दूर्वा · वश्यादौ शिखिपुच्छिका — वश्य आदि में मयूर-पंख · हेम्ना तु सर्वकार्याणि — स्वर्ण से सब कार्य · क्रूरे स्यात् काकपुच्छिका — क्रूर में काक-पंख

स्वगृहे शान्तिकर्म स्याद्वश्याद्यं चण्डिकालये ।

४८

सर्वकार्यं देवगृहे श्मशाने क्रूरकर्म च ॥ ४८ ॥

शान्तिकर्म अपने घर में, वश्य आदि चण्डिका के मन्दिर में, सब कार्य देवगृह में और क्रूर कर्म श्मशान में हो।

पदपाठ स्वगृहे शान्तिकर्म स्यात् — अपने घर में शान्तिकर्म हो · वश्याद्यं चण्डिकालये — वश्य आदि चण्डिका-मन्दिर में · सर्वकार्यं देवगृहे — सब कार्य देवगृह में · श्मशाने क्रूरकर्म च — और क्रूर कर्म श्मशान में

लक्षणान्येवमादीनि ज्ञात्वा गुरुमुखात् प्रिये ।

४९

सर्वकर्माणि कुर्वीत मन्त्री तत्तत्फलाप्तये ॥ ४९ ॥

हे प्रिये! इन आदि लक्षणों को गुरु के मुख से जानकर मन्त्री उन-उन फलों की प्राप्ति के लिए सब कर्म करे।

पदपाठ लक्षणान्येवमादीनि — इत्यादि लक्षण · ज्ञात्वा गुरुमुखात् प्रिये — गुरुमुख से जानकर, हे प्रिये · सर्वकर्माणि कुर्वीत — सब कर्म करे · मन्त्री तत्तत्फलाप्तये — मन्त्री, उन-उन फलों की प्राप्ति के लिए

मूले प्रासादबीजञ्च तरुणादित्यसन्निभम् ।

५०

उत्तमाङ्गे पराबीजं चन्द्रायुतसमप्रभम् ॥ ५० ॥

मूल में तरुण सूर्य के समान प्रासाद-बीज, मस्तक पर दस हजार चन्द्रमाओं के समान प्रभा वाला परा-बीज;

पदपाठ मूले प्रासादबीजञ्च — मूल में प्रासाद-बीज · तरुणादित्यसन्निभम् — तरुण सूर्य के समान · उत्तमाङ्गे पराबीजं — उत्तमांग (सिर) में परा-बीज · चन्द्रायुतसमप्रभम् — दस हजार चन्द्रों के समान प्रभा वाला

परस्परजनस्पर्शजनितानन्दनिर्भरः ।

मूलादिब्रह्मरन्धान्तं अनवच्छिन्नरूपिभिः ॥ ५१ ॥

५१

उन दोनों के परस्पर स्पर्श से उत्पन्न आनन्द से परिपूर्ण, मूल से ब्रह्मरन्ध्र तक अविच्छिन्न रूप वाली

पदपाठ परस्परजनस्पर्शजनितानन्दनिर्भरः — परस्पर स्पर्श से उत्पन्न आनन्द से पूर्ण · मूलादिब्रह्मरन्धान्तं — मूल से ब्रह्मरन्ध्र तक · अनवच्छिन्नरूपिभिः — अविच्छिन्न रूप वाली

परामृतरसासेकैः सिक्तमापादमस्तकम् ।

आत्मानं भावयेन्नित्यं स भवेदजरामरः ॥ ५२ ॥

५२

परामृत-रस की धाराओं से पैर से सिर तक सिञ्चित अपने आप का जो नित्य भावन करता है, वह अजर-अमर हो जाता है।

पदपाठ परामृतरसासेकैः — परामृत-रस की धाराओं से · सिक्तमापादमस्तकम् — पैर से सिर तक सिञ्चित · आत्मानं भावयेन्नित्यं — अपने को नित्य भावित करे · स भवेदजरामरः — वह अजर-अमर हो जाता है

एवं ध्यात्वा कुलेशानि सर्वकर्माणि साधयेत् ।

सिध्यन्ति तरसा देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ ५३ ॥

५३

हे कुलेशानि! इस प्रकार ध्यान करके सब कर्मों को सिद्ध करे; वे शीघ्र सिद्ध होते हैं, हे देवि! इसमें विचार नहीं करना चाहिए।

पदपाठ एवं ध्यात्वा कुलेशानि — इस प्रकार ध्यान कर, हे कुलेशानि · सर्वकर्माणि साधयेत् — सब कर्म साधे · सिध्यन्ति तरसा देवि — शीघ्र सिद्ध होते हैं, हे देवि · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं

ध्यानभेदं प्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धिकरं प्रिये ।

५४

ईप्सितं लभते येन पूजाहोमादिकं विना ॥ ५४ ॥

हे प्रिये! सर्वसिद्धि देने वाले ध्यान के भेद कहता हूँ, जिससे पूजा, होम आदि के बिना ही अभीष्ट प्राप्त होता है।

पदपाठ ध्यानभेदं प्रवक्ष्यामि — ध्यान-भेद कहता हूँ · सर्वसिद्धिकरं प्रिये — सब सिद्धियाँ देने वाला, हे प्रिये · ईप्सितं लभते येन — जिससे इच्छित पाता है · पूजाहोमादिकं विना — पूजा, होम आदि के बिना

स्थाने मनोहरे देवि साधकः स्थिरमानसः ।

५५

स्थितो मृद्वासने ध्यायेद् गुरुवन्दनपूर्वकम् ॥ ५५ ॥

हे देवि! मनोहर स्थान में स्थिर मन वाला साधक कोमल आसन पर बैठकर गुरु-वन्दना पूर्वक ध्यान करे —

पदपाठ स्थाने मनोहरे देवि — मनोहर स्थान में, हे देवि · साधकः स्थिरमानसः — स्थिर मन वाला साधक · स्थितो मृद्वासने — मृदु आसन पर स्थित · ध्यायेद् गुरुवन्दनपूर्वकम् — गुरु-वन्दन पूर्वक ध्यान करे

मस्तकस्थितसम्पूर्णचन्द्रमण्डलमध्यगम् ।

५६

श्रीप्रासादपराबीजं षोडशस्वरसंयुतम् ॥ ५६ ॥

मस्तक पर स्थित पूर्ण चन्द्रमण्डल के मध्य में सोलह स्वरों से युक्त श्रीप्रासाद-परा बीज को,

पदपाठ मस्तकस्थितसम्पूर्णचन्द्रमण्डलमध्यगम् — मस्तक में स्थित पूर्ण चन्द्रमण्डल के मध्य · श्रीप्रासादपराबीजं — श्रीप्रासाद-परा बीज · षोडशस्वरसंयुतम् — सोलह स्वरों से युक्त

शुद्धस्फटिककपूरकुन्देन्दुधवलं प्रिये ।

५७

सच्चन्द्रबिम्बसज्जातसुधाप्लावितविग्रहम् ॥ ५७ ॥

शुद्ध स्फटिक, कपूर, कुन्द और चन्द्रमा के समान श्वेत, हे प्रिये! उस चन्द्रबिम्ब से उत्पन्न सुधा से प्लावित अपने विग्रह को —

पदपाठ शुद्धस्फटिककपूरकुन्देन्दुधवलं प्रिये — शुद्ध स्फटिक, कपूर, कुन्द, चन्द्र-सा धवल, हे प्रिये · सच्चन्द्रबिम्बसज्जातसुधाप्लावितविग्रहम् — उस चन्द्रबिम्ब से उत्पन्न सुधा से प्लावित देह वाला

आत्मानं भावयेन्नित्यं निश्चलेनान्तरात्मना ।

५८

सर्वारिष्टं विलीयेत शुभश्रीपुष्टिकारकम् ॥ ५८ ॥

निश्चल अन्तरात्मा से अपने आप का नित्य भावन करे। सब अरिष्ट विलीन हो जाते हैं; यह शुभ, श्री और पुष्टि करने वाला है।

पदपाठ आत्मानं भावयेन्नित्यं — अपने को नित्य भावित करे · निश्चलेनान्तरात्मना — निश्चल अन्तरात्मा से · सर्वारिष्टं विलीयेत — सब अरिष्ट विलीन हो जाते हैं · शुभश्रीपुष्टिकारकम् — शुभ, श्री, पुष्टि करने वाला

श्रीप्रासादपरामन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ।

५९

तरुणोल्लाससहितो मण्डलं पूजयेत् प्रिये ॥ ५९ ॥

श्रीप्रासाद-परा मन्त्र का एक हजार आठ (जप करता हुआ), तरुण उल्लास सहित, एक मण्डल (चालीस दिन) तक पूजा करे, हे प्रिये!

पदपाठ श्रीप्रासादपरामन्त्रम् — श्रीप्रासाद-परा मन्त्र · अष्टोत्तरसहस्रकम् — एक हजार आठ बार · तरुणोल्लाससहितो — तरुण-उल्लास सहित · मण्डलं पूजयेत् प्रिये — एक मण्डल (चालीस दिन) पूजा करे, हे प्रिये

अपमृत्युमहारोगजरामरणजं भयम् ।

ग्रहापस्मारवेतालभूतोन्मादादिजं भयम् ॥ ६० ॥

६०

अपमृत्यु, महारोग, जरा और मरण से उत्पन्न भय, ग्रह, अपस्मार, वेताल, भूत, उन्माद आदि से उत्पन्न भय —

पदपाठ अपमृत्युमहारोगजरामरणजं भयम् — अपमृत्यु, महारोग, जरा, मरण से उत्पन्न

भय · ग्रहापस्मारवेतालभूतोन्मादादिजं भयम् — ग्रह, अपस्मार, वेताल, भूत, उन्माद आदि से उत्पन्न भय

जित्वाधिव्याधिरहितः पुत्रपौत्रसमन्वितः ।

जीवेद्वर्षशतं साग्रं पूजितः सर्वमानवः ॥ ६१ ॥

६१

इन्हें जीतकर आधि-व्याधि से रहित, पुत्र-पौत्रों से युक्त, सब मनुष्यों से पूजित होकर वह पूरे सौ वर्ष जीता है।

पदपाठ जित्वा — जीतकर · आधिव्याधिरहितः — आधि-व्याधि रहित · पुत्रपौत्रसमन्वितः — पुत्र-पौत्र

सहित · जीवेद्वर्षशतं साग्रं — पूरे सौ वर्ष जीता है · पूजितः सर्वमानवैः — सब मनुष्यों से पूजित

अश्रुतं बुध्यते शास्त्रं कविता निर्मला भवेत् ।

चिन्मयो जायते साक्षान्नात्र कार्या विचारणा ॥ ६२ ॥

६२

वह अश्रुत शास्त्र को समझ लेता है, उसकी कविता निर्मल होती है, वह साक्षात् चिन्मय हो जाता है — इसमें विचार नहीं करना चाहिए।

पदपाठ अश्रुतं बुध्यते शास्त्रं — अश्रुत शास्त्र समझता है · कविता निर्मला भवेत् — कविता निर्मल होती

है · चिन्मयो जायते साक्षात् — साक्षात् चिन्मय हो जाता है · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं

ज्वरोन्मादादिरोगेषु जपेच्छिरसि चिन्तयन् ।

शूलवातव्रणग्रन्थिमूत्रकृच्छ्रादिसम्भवे ।

६३

तत्तत्स्थानेषु देवेशि पूर्ववच्चिन्तयन् जपेत् ॥ ६३ ॥

ज्वर, उन्माद आदि रोगों में सिर में चिन्तन करते हुए जप करे; शूल, वात, व्रण, ग्रन्थि, मूत्रकृच्छ्र आदि होने पर, हे देवेशि! उन-उन स्थानों में पूर्ववत् चिन्तन करते हुए जप करे।

पदपाठ ज्वरोन्मादादिरोगेषु — ज्वर, उन्माद आदि रोगों में · जपेच्छिरसि चिन्तयन् — सिर में चिन्तन करते जपे · शूलवातव्रणग्रन्थिमूत्रकृच्छ्रादिसम्भवे — शूल, वात, व्रण, ग्रन्थि, मूत्रकृच्छ्र आदि होने पर · तत्तत्स्थानेषु देवेशि — उन-उन स्थानों में, हे देवेशि · पूर्ववच्चिन्तयन् जपेत् — पूर्ववत् चिन्तन करते जपे

महारोगेषु जातेषु सवङ्गिषु विचिन्तयेत् ।

६४

तत्क्षणाच्छान्तिमायान्ति रोगाः सर्वे न संशयः ॥ ६४ ॥

महारोग होने पर सब अङ्गों में चिन्तन करे; उसी क्षण सब रोग शान्त हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ महारोगेषु जातेषु — महारोग होने पर · सवङ्गिषु विचिन्तयेत् — सब अंगों में चिन्तन करे · तत्क्षणाच्छान्तिमायान्ति — उसी क्षण शान्त हो जाते हैं · रोगाः सर्वे न संशयः — सब रोग, सन्देह नहीं

दशेन्द्रियेषु यो ध्यायेल्लभेदिन्द्रियसौष्ठवम् ।

६५

यत्र बीजं स्मरेत्तत्र तत्फलं भवति ध्रुवम् ॥ ६५ ॥

जो दस इन्द्रियों में ध्यान करता है वह इन्द्रियों की सुन्दरता पाता है; जहाँ बीज का स्मरण करे, वहाँ उसका फल निश्चय होता है।

पदपाठ दशेन्द्रियेषु यो ध्यायेत् — दस इन्द्रियों में जो ध्यान करे · लभेदिन्द्रियसौष्ठवम् — इन्द्रियों की पूर्णता पाता है · यत्र बीजं स्मरेत् — जहाँ बीज का स्मरण करे · तत्र तत्फलं भवति ध्रुवम् — वहाँ उसका फल निश्चय होता है

सदा यश्चिन्तयेन्मूर्ध्नि स भवेदजरामरः ।

६६

सर्वरोगप्रहरणं विद्यारोग्यप्रदं प्रिये ॥ ६६ ॥

जो सदा मूर्धा में इसका चिन्तन करता है वह अजर-अमर होता है; यह सब रोगों का नाश करने वाला और विद्या तथा आरोग्य देने वाला है, हे प्रिये!

पदपाठ सदा यश्चिन्तयेन्मूर्ध्नि — जो सदा मूर्धा में चिन्तन करे · स भवेदजरामरः — वह अजर-अमर हो जाता है · सर्वरोगप्रहरणं — सब रोगों का हरण करने वाला · विद्यारोग्यप्रदं प्रिये — विद्या और आरोग्य देने वाला, हे प्रिये

अस्मात् परतरध्यानं नास्ति सत्यं न संशयः ।

६७

सात्त्विकध्यानजं देवि फलमेतदुदीरितम् ॥ ६७ ॥

इससे बढ़कर कोई ध्यान नहीं है — यह सत्य है, संशय नहीं। हे देवि! यह सात्त्विक ध्यान से उत्पन्न फल कहा गया।

पदपाठ अस्मात् परतरध्यानं — इससे बढ़कर ध्यान · नास्ति सत्यं न संशयः — नहीं है, सत्य, सन्देह नहीं · सात्त्विकध्यानजं देवि — सात्त्विक ध्यान से उत्पन्न, हे देवि · फलमेतदुदीरितम् — यह फल कहा गया

शान्तिकर्माणि सर्वाणि विधिनानेन कारयेत् ।
विधिनानेन देवेशि सौभाग्यमतुलं भवेत् ॥ ६८ ॥

६८

सब शान्ति-कर्म इस विधि से करे; हे देवेशि! इस विधि से अतुल सौभाग्य होता है।

पदपाठ शान्तिकर्माणि सर्वाणि — सब शान्तिकर्म · विधिनानेन कारयेत् — इस विधि से कराए · विधिनानेन देवेशि — इस विधि से, हे देवेशि · सौभाग्यमतुलं भवेत् — अतुल सौभाग्य होता है

द्वादशाधारपद्मेषु द्वादशस्वरसंयुतम् ।
बीजं सञ्चिन्तयेद् यस्तु स भवेदजरामरः ॥ ६९ ॥

६९

जो बारह आधार-पद्मों में बारह स्वरों से युक्त बीज का चिन्तन करता है, वह अजर-अमर हो जाता है।

पदपाठ द्वादशाधारपद्मेषु — बारह आधार-कमलों में · द्वादशस्वरसंयुतम् — बारह स्वरों से युक्त · बीजं सञ्चिन्तयेद् यस्तु — जो बीज का चिन्तन करे · स भवेदजरामरः — वह अजर-अमर हो जाता है

षडाधारेषु षड्दीर्घयुक्तं बीजं विचिन्तयेत् ।
षडाधारस्थदेवीभिः पूज्यते कुलनायिके ॥ ७० ॥

७०

छह आधारों में छह दीर्घ स्वरों से युक्त बीज का चिन्तन करे; हे कुलनायिके! वह षडाधार में स्थित देवियों से पूजित होता है।

पदपाठ षडाधारेषु — छह आधारों में · षड्दीर्घयुक्तं बीजं — छह दीर्घों से युक्त बीज · विचिन्तयेत् — चिन्तन करे · षडाधारस्थदेवीभिः — छह आधारों में स्थित देवियों द्वारा · पूज्यते कुलनायिके — पूजित होता है, हे कुलनायिके

हृत्पद्मकर्णिकामध्ये सूर्यमण्डलसंस्थितम् ।

७१

पराप्रासादबीजन्तु तरुणारुणसन्निभम् ॥ ७१ ॥

हृदय-कमल की कर्णिका के मध्य में सूर्यमण्डल में स्थित, तरुण अरुण के समान परा-प्रासाद बीज को,

पदपाठ हृत्पद्मकर्णिकामध्ये — हृदय-कमल की कर्णिका के मध्य · सूर्यमण्डलसंस्थितम् — सूर्यमण्डल में स्थित · पराप्रासादबीजन्तु — पराप्रासाद बीज · तरुणारुणसन्निभम् — तरुण अरुण (उदयकालीन सूर्य) के समान

जवाबन्धूकसिन्दूरपद्मरागप्रभोज्ज्वलम् ।

७२

पञ्चविंशतिभिः स्पर्शाक्षरैः संवीतमम्बिके ॥ ७२ ॥

जवा, बन्धूक, सिन्दूर और पद्मराग की प्रभा से उज्ज्वल, पच्चीस स्पर्श-अक्षरों से घिरे हुए, हे अम्बिके!

पदपाठ जवाबन्धूकसिन्दूरपद्मरागप्रभोज्ज्वलम् — जवा, बन्धूक, सिन्दूर, पद्मराग की प्रभा से उज्ज्वल · पञ्चविंशतिभिः स्पर्शाक्षरैः — पच्चीस स्पर्श-अक्षरों से · संवीतमम्बिके — घिरा हुआ, हे अम्बिके

तत्प्रभापटलच्छायाव्यक्तीकृतजगत्त्रयम् ।

७३

आत्मानञ्च स्मरेद्देवि निश्चलेनान्तरात्मना ॥ ७३ ॥

जिसकी प्रभा के समूह की छाया से तीनों लोक प्रकट हो रहे हैं — ऐसा (बीज) और अपने आप का, हे देवि! निश्चल अन्तरात्मा से स्मरण करे।

पदपाठ तत्प्रभापटलच्छायाव्यक्तीकृतजगत्त्रयम् — उसकी प्रभा-पटल की छाया से व्यक्त तीनों लोक · आत्मानञ्च स्मरेद्देवि — और अपने को स्मरण करे, हे देवि · निश्चलेनान्तरात्मना — निश्चल अन्तरात्मा से

पराप्रासादबीजन्तु तरुणोल्लाससंयुतः ।

७४

अष्टोत्तरसहस्रन्तु मण्डलं प्रजपेत् सुधीः ॥ ७४ ॥

सुधी तरुण उल्लास सहित परा-प्रासाद बीज का एक हजार आठ जप एक मण्डल तक करे।

पदपाठ पराप्रासादबीजन्तु — पराप्रासाद बीज · तरुणोल्लाससंयुतः — तरुण-उल्लास सहित · अष्टोत्तरसहस्रन्तु — एक हजार आठ · मण्डलं प्रजपेत् सुधीः — एक मण्डल सुधी जपे

देवदानवगन्धर्वसिद्धकिन्नरगुह्यकान् ।

७५

विद्याधरान्मुनीन् यक्षान् नागानप्सरसः स्त्रियः ॥ ७५ ॥

देव, दानव, गन्धर्व, सिद्ध, किन्नर, गुह्यक, विद्याधर, मुनि, यक्ष, नाग, अप्सराएँ, स्त्रियाँ,

पदपाठ देवदानवगन्धर्वसिद्धकिन्नरगुह्यकान् — देव, दानव, गन्धर्व, सिद्ध, किन्नर, गुह्यक · विद्याधरान्मुनीन् यक्षान् — विद्याधर, मुनि, यक्ष · नागानप्सरसः स्त्रियः — नाग, अप्सरा, स्त्रियाँ

सिंहव्याघ्रोरगेन्द्रादीनन्यान् दुष्टमृगानपि ।

७६

वश्यान् करोत्यसन्देहं किं पुनर्मानवादिकान् ॥ ७६ ॥

सिंह, व्याघ्र, नागराज आदि और अन्य दुष्ट पशुओं को भी वह निःसन्देह वश में करता है — मनुष्य आदि की तो बात ही क्या!

पदपाठ सिंहव्याघ्रोरगेन्द्रादीन् — सिंह, बाघ, नागेन्द्र आदि · अन्यान् दुष्टमृगानपि — अन्य दुष्ट पशु भी · वश्यान् करोत्यसन्देहं — वश में करता है, निःसन्देह · किं पुनर्मानवादिकान् — मनुष्य आदि की तो बात ही क्या

महदैश्वर्यमाप्नोति स्वर्गभोगादिकं प्रिये ।

७७

यस्य मूर्ध्नि स्मरन् जप्यात् स वश्यो जायते हठात् ॥ ७७ ॥

वह महान् ऐश्वर्य, स्वर्ग-भोग आदि प्राप्त करता है, हे प्रिये! जिसके सिर पर स्मरण करते हुए जप करे, वह बलात् वश में हो जाता है।

पदपाठ महदैश्वर्यमाप्नोति — महान् ऐश्वर्य पाता है · स्वर्गभोगादिकं प्रिये — स्वर्ग-भोग आदि, हे प्रिये · यस्य मूर्ध्नि स्मरन् जप्यात् — जिसके सिर में स्मरण करते जपे · स वश्यो जायते हठात् — वह हठात् वश में हो जाता है

राजसध्यानजं देवि फलमेतदुदीरितम् ।

७८

वश्यकर्माणि सर्वाणि विधिनानेन कारयेत् ॥ ७८ ॥

हे देवि! यह राजस ध्यान से उत्पन्न फल कहा गया; सब वश्य-कर्म इस विधि से करे।

पदपाठ राजसध्यानजं देवि — राजस ध्यान से उत्पन्न, हे देवि · फलमेतदुदीरितम् — यह फल कहा गया · वश्यकर्माणि सर्वाणि — सब वश्य-कर्म · विधिनानेन कारयेत् — इस विधि से कराए

सर्ववश्यकरं देवि सर्वैश्वर्यफलप्रदम् ।

७९

अस्मात् परतरं ध्यानं नास्ति सत्यं न संशयः ॥ ७९ ॥

हे देवि! यह सबको वश में करने वाला और सर्व ऐश्वर्य रूपी फल देने वाला है; इससे बढ़कर कोई ध्यान नहीं — यह सत्य है, संशय नहीं।

पदपाठ सर्ववश्यकरं देवि — सबको वश में करने वाला, हे देवि · सर्वैश्वर्यफलप्रदम् — सब ऐश्वर्य का फल देने वाला · अस्मात् परतरं ध्यानं — इससे बढ़कर ध्यान · नास्ति सत्यं न संशयः — नहीं है, सत्य, सन्देह नहीं

लिखेत्रिकोणं षट्कोणं अष्टारज्य महीपुरम् ।

मूलमन्त्रं लिखेन्मध्ये साध्यनामसमन्वितम् ॥ ८०॥

८०

त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल और भूपुर लिखे; मध्य में साध्य के नाम सहित मूलमन्त्र लिखे।

पदपाठ लिखेत्रिकोणं षट्कोणं — त्रिकोण, षट्कोण लिखे · अष्टारज्य महीपुरम् — अष्टदल और भूपुर · मूलमन्त्रं लिखेन्मध्ये — मध्य में मूलमन्त्र लिखे · साध्यनामसमन्वितम् — साध्य के नाम सहित

षट्कोणेषु षडङ्गानि विलिखेत् परमेश्वरि ।

केशरेषु स्वरानष्टौ वर्गान् पत्रेषु पार्वति ॥ ८१॥

८१

षट्कोणों में षडङ्ग लिखे, हे परमेश्वरि! केसरों में आठ स्वर और दलों पर वर्ग, हे पार्वति!

पदपाठ षट्कोणेषु षडङ्गानि — छह कोणों में छह अंग · विलिखेत् परमेश्वरि — लिखे, हे परमेश्वरि · केशरेषु स्वरानष्टौ — केसरों में आठ स्वर · वर्गान् पत्रेषु पार्वति — दलों में वर्ग, हे पार्वति

भूगृहस्य चतुष्कोणे विलिखेन्मूलमम्बिके ।

पञ्चवर्णरजोभिश्च शुभं दृष्टिमनोहरम् ॥ ८२॥

८२

भूपुर के चारों कोनों में मूल (मन्त्र) लिखे, हे अम्बिके! पाँच रंगों के चूर्णों से, शुभ और दृष्टि को मनोहर।

पदपाठ भूगृहस्य चतुष्कोणे — भूगृह के चार कोणों में · विलिखेन्मूलमम्बिके — मूल लिखे, हे अम्बिके · पञ्चवर्णरजोभिश्च — और पाँच रंगों की रज से · शुभं दृष्टिमनोहरम् — शुभ, देखने में मनोहर

एवं यन्त्रं समालिख्य विधिवन्मन्त्रवित्तमः ।

एकत्रिषड्वसुचतुःकलसान् स्थापयेत् प्रिये ॥ ८३ ॥

८३

इस प्रकार विधिपूर्वक यन्त्र लिखकर मन्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ एक, तीन, छह, आठ और चार कलश स्थापित करे, हे प्रिये!

पदपाठ एवं यन्त्रं समालिख्य — इस प्रकार यन्त्र लिखकर · विधिवन्मन्त्रवित्तमः — विधिवत् मन्त्रवित्तम · एकत्रिषड्वसुचतुःकलसान् — एक, तीन, छह, आठ, चार कलश · स्थापयेत् प्रिये — स्थापित करे, हे प्रिये

मध्यादिचतुरस्रान्तं द्वात्रिंशत् कलसान् प्रिये ।

अथवाष्टादशेशानि सप्त वा दश वा प्रिये ॥ ८४ ॥

८४

मध्य से चतुरस्र तक बत्तीस कलश, हे प्रिये! अथवा अठारह, हे ईशानि! या सात या दस, हे प्रिये!

पदपाठ मध्यादिचतुरस्रान्तं — मध्य से चतुरस्र तक · द्वात्रिंशत् कलसान् प्रिये — बत्तीस कलश, हे प्रिये · अथवाष्टादशेशानि — अथवा अठारह, हे ईशानि · सप्त वा दश वा प्रिये — या सात या दस, हे प्रिये

चतुरो वाप्यथैकं वा कुर्यात् साधकसत्तमः ।

अस्थिरक्तशिरातन्तुमृण्मांसं रुधिरं जलम् ॥ ८५ ॥

८५

या चार, या एक ही, साधक-श्रेष्ठ करे। अस्थि, रक्त, शिरा, तन्तु, मृत्तिका, मांस, रुधिर, जल,

पदपाठ चतुरो वाप्यथैकं वा — या चार या एक भी · कुर्यात् साधकसत्तमः — श्रेष्ठ साधक करे · अस्थिरक्तशिरातन्तुमृण्मांसं — अस्थि, रक्त, शिरा, तन्तु, मिट्टी, मांस · रुधिरं जलम् — रुधिर, जल

चर्मवस्त्रशिलाकूर्मनारिकेलफलं शिरः ।

मन्त्रप्राणसमायुक्तां यजेत् कलसदेवताम् ॥ ८६ ॥

८६

चर्म, वस्त्र, शिला, कूर्म, नारियल फल और शिर (कलश के अङ्ग हैं); मन्त्र और प्राण से युक्त कलश-देवता का यजन करे।

पदपाठ चर्मवस्त्रशिलाकूर्मनारिकेलफलं शिरः — चर्म, वस्त्र, शिला, कूर्म, नारियल फल, शिर · मन्त्रप्राणसमायुक्तां — मन्त्र और प्राण से युक्त · यजेत् कलसदेवताम् — कलश-देवता का यजन करे

सावित्रीनापराङ्गानि मातरो भैरवान्विताः ।

विदिक्षु गुरुविघ्नेशदुर्गाक्षेत्रपतीन् प्रिये ॥ ८७ ॥

८७

सावित्री और परा के अङ्ग, भैरवों सहित मातृकाएँ, विदिशाओं में गुरु, विघ्नेश, दुर्गा और क्षेत्रपति को, हे प्रिये!

पदपाठ सावित्रीनापराङ्गानि — सावित्री और परा के अंग · मातरो भैरवान्विताः — भैरव-सहित मातृकाएँ · विदिक्षु — विदिशाओं में · गुरुविघ्नेशदुर्गाक्षेत्रपतीन् प्रिये — गुरु, विघ्नेश, दुर्गा, क्षेत्रपति, हे प्रिये

कलसेषु समभ्यर्च्य विधिवन्मन्त्रवित्तमः ।

अभिषिञ्चेत् प्रियं शिष्यं सर्वपापप्रशान्तये ॥ ८८ ॥

८८

कलशों में विधिपूर्वक पूजा करके मन्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ प्रिय शिष्य का सब पापों की शान्ति के लिए अभिषेक करे।

पदपाठ कलसेषु समभ्यर्च्य — कलशों में पूजा कर · विधिवन्मन्त्रवित्तमः — विधिवत् मन्त्रवित्तम · अभिषिञ्चेत् प्रियं शिष्यं — प्रिय शिष्य का अभिषेक करे · सर्वपापप्रशान्तये — सब पापों की शान्ति के लिए

आयुः श्रीकान्तिसौभाग्यविद्यारोग्यादिकं भवेत् ।

राजाभिषिक्तो लभते चतुःसागरगां महीम् ॥ ८९ ॥

८९

आयु, श्री, कान्ति, सौभाग्य, विद्या, आरोग्य आदि होते हैं। अभिषिक्त राजा चारों समुद्रों तक की पृथ्वी को पाता है;

पदपाठ आयुःश्रीकान्तिसौभाग्यविद्यारोग्यादिकं भवेत् — आयु, श्री, कान्ति, सौभाग्य, विद्या, आरोग्य आदि होते हैं · राजाभिषिक्तो लभते — अभिषिक्त राजा पाता है · चतुःसागरगां महीम् — चार समुद्रों तक की पृथ्वी

अकिञ्चनोऽभिषिक्तश्च महदैश्वर्यमाप्नुयात् ।

वन्ध्याभिषिक्ता लभते पुत्रं सर्वगुणान्वितम् ॥ ९० ॥

९०

अभिषिक्त निर्धन महान् ऐश्वर्य पाता है; अभिषिक्त वन्ध्या सर्वगुण-सम्पन्न पुत्र पाती है।

पदपाठ अकिञ्चनोऽभिषिक्तश्च — और अभिषिक्त निर्धन · महदैश्वर्यमाप्नुयात् — महान् ऐश्वर्य पाता है · वन्ध्याभिषिक्ता लभते — अभिषिक्त वन्ध्या पाती है · पुत्रं सर्वगुणान्वितम् — सब गुणों से युक्त पुत्र

भूतापमृत्युरोगाद्या विनश्यन्ति न संशयः ।

त्रिलौहे वापि भूर्जे वा लिखित्वा यन्त्रमुत्तमम् ॥ ९१ ॥

९१

भूत, अपमृत्यु, रोग आदि नष्ट हो जाते हैं, संशय नहीं। त्रिलौह पर या भूर्जपत्र पर उत्तम यन्त्र लिखकर,

पदपाठ भूतापमृत्युरोगाद्याः — भूत, अपमृत्यु, रोग आदि · विनश्यन्ति न संशयः — नष्ट होते हैं, सन्देह नहीं · त्रिलौहे वापि भूर्जे वा — त्रिलोह पर या भूर्ज पर · लिखित्वा यन्त्रमुत्तमम् — उत्तम यन्त्र लिखकर

विधृतं बाहुना देवि सर्वरक्षाकरं भवेत् ।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं विद्यालाभं यशो जयम् ॥ ९२ ॥

९२

बाँह पर धारण किया हुआ, हे देवि! वह सर्व रक्षा करने वाला होता है; आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, विद्या-लाभ, यश, जय —

पदपाठ विधृतं बाहुना देवि — बाहु में धारण किया, हे देवि · सर्वरक्षाकरं भवेत् — सब रक्षा करने वाला होता है · आयुरारोग्यमैश्वर्यं — आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य · विद्यालाभं यशो जयम् — विद्या-लाभ, यश, जय

यद् यत् स्वमनसोऽभीष्टं तत्तदाप्रोत्यसंशयः ।

खड्गवश्यं वयःस्तम्भं यक्षिण्यञ्जनपादुकाम् ॥ ९३ ॥

९३

जो-जो उसके मन का अभीष्ट है वह-वह वह निःसन्देह पाता है: खड्ग-वश्य, वयः-स्तम्भन, यक्षिणी, अञ्जन, पादुका,

पदपाठ यद् यत् स्वमनसोऽभीष्टं — जो-जो अपने मन को इष्ट · तत्तदाप्रोत्यसंशयः — वह-वह पाता है, निःसन्देह · खड्गवश्यं वयःस्तम्भं — खड्ग-सिद्धि, वयःस्तम्भन · यक्षिण्यञ्जनपादुकाम् — यक्षिणी, अञ्जन, पादुका

अणिमाद्यष्टसिद्ध्यादि महारसरसायनम् ।

सञ्जीवयोगगुटिकाप्रमुखाखिलसिद्धयः ॥ ९४ ॥

९४

अणिमा आदि अष्ट सिद्धि आदि, महारस-रसायन, सञ्जीवन-योग और गुटिका आदि समस्त सिद्धियाँ

पदपाठ अणिमाद्यष्टसिद्ध्यादि — अणिमा आदि आठ सिद्धियाँ आदि · महारसरसायनम् — महारस, रसायन · सञ्जीवयोगगुटिकाप्रमुखाखिलसिद्धयः — सञ्जीवन-योग, गुटिका आदि समस्त सिद्धियाँ

पराप्रासादमन्त्रज्ञैर्दृश्यन्ते नात्र संशयः ।

षट् कर्माणि प्रयुज्जीत नान्यथा भवति प्रिये ॥ ९५॥

९५

परा-प्रासाद मन्त्र के ज्ञाताओं द्वारा देखी जाती हैं — इसमें संशय नहीं। (इससे) षट्कर्मों का प्रयोग करे; अन्यथा नहीं होता, हे प्रिये!

पदपाठ पराप्रासादमन्त्रज्ञैः — पराप्रासाद मन्त्रज्ञों द्वारा · दृश्यन्ते नात्र संशयः — देखी जाती हैं, इसमें सन्देह नहीं · षट् कर्माणि प्रयुज्जीत — छह कर्मों का प्रयोग करे · नान्यथा भवति प्रिये — अन्यथा नहीं होता, हे प्रिये

पीतद्रव्यैर्हरिद्राघैः समित्पत्रफलादिभिः ।

जुहुयात् पूर्ववन्मन्त्री देवताध्यानतत्परः ॥ ९६॥

९६

हल्दी आदि पीले द्रव्यों से, समिधा, पत्र, फल आदि से मन्त्री देवता के ध्यान में तत्पर होकर पूर्ववत् हवन करे।

पदपाठ पीतद्रव्यैर्हरिद्राघैः — पीत द्रव्यों, हल्दी आदि से · समित्पत्रफलादिभिः — समिधा, पत्र, फल आदि से · जुहुयात् पूर्ववन्मन्त्री — पूर्ववत् मन्त्री हवन करे · देवताध्यानतत्परः — देवता के ध्यान में तत्पर

वाक्श्रोत्रगतिदृक्सेनानदीग्रहरिपून् प्रिये ।

नानादुष्टमृगान् देवि स्तम्भयेन्नात्र संशयः ॥ ९७॥

९७

वाणी, श्रवण, गति, दृष्टि, सेना, नदी, ग्रह और शत्रुओं को, हे प्रिये! नाना दुष्ट पशुओं को, हे देवि! वह स्तम्भित कर देता है — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ वाक्श्रोत्रगतिदृक्सेनानदीग्रहरिपून् प्रिये — वाणी, श्रोत्र, गति, दृष्टि, सेना, नदी, ग्रह, शत्रु, हे प्रिये · नानादुष्टमृगान् देवि — नाना दुष्ट पशु, हे देवि · स्तम्भयेन्नात्र संशयः — स्तम्भित करे, इसमें सन्देह नहीं

ग्रहवेगादिदुष्टानां विनाशनकरं प्रिये ।

अस्मात् परतरं ध्यानं नास्ति सत्यं न संशयः ॥ ९८ ॥

९८

यह ग्रह-वेग आदि दुष्टों का विनाश करने वाला है, हे प्रिये! इससे बढ़कर कोई ध्यान नहीं — यह सत्य है, संशय नहीं।

पदपाठ ग्रहवेगादिदुष्टानां — ग्रह-वेग आदि दुष्टों का · विनाशनकरं प्रिये — विनाश करने वाला, हे प्रिये · अस्मात् परतरं ध्यानं — इससे बढ़कर ध्यान · नास्ति सत्यं न संशयः — नहीं है, सत्य, सन्देह नहीं

तामसध्यानजं देवि फलमेतदुदीरितम् ।

दुष्टमारणकर्माणि विधिनानेन साधयेत् ॥ ९९ ॥

९९

हे देवि! यह तामस ध्यान से उत्पन्न फल कहा गया; दुष्टों के मारण-कर्म इस विधि से सिद्ध करे।

पदपाठ तामसध्यानजं देवि — तामस ध्यान से उत्पन्न, हे देवि · फलमेतदुदीरितम् — यह फल कहा गया · दुष्टमारणकर्माणि — दुष्ट-मारण कर्म · विधिनानेन साधयेत् — इस विधि से साधे

इत्यादि ध्यानभेदेन ज्ञात्वा गुरुमुखात् प्रिये ।

षट् कर्माणि प्रयुज्जीत नान्यथा वीरवन्दिते ॥ १०० ॥

१००

हे प्रिये! इन आदि ध्यान-भेदों को गुरु के मुख से जानकर षट्कर्मों का प्रयोग करे; अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते!

पदपाठ इत्यादि ध्यानभेदेन — इत्यादि ध्यान-भेद से · ज्ञात्वा गुरुमुखात् प्रिये — गुरुमुख से जानकर, हे प्रिये · षट् कर्माणि प्रयुज्जीत — छह कर्मों का प्रयोग करे · नान्यथा वीरवन्दिते — अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते

खदिरश्वेतमन्दारसितभानुसमिद्धरैः ।

१०१

पलाशोडुम्बराश्वत्थप्लक्षापामार्गसत्त्वचैः ॥ १०१ ॥

खदिर, श्वेत मन्दार और श्वेत आक की श्रेष्ठ समिधाओं से, पलाश, उडुम्बर, अश्वत्थ, प्लक्ष और अपामार्ग की छाल सहित (समिधाओं) से,

पदपाठ खदिरश्वेतमन्दारसितभानुसमिद्धरैः — खदिर, श्वेत मन्दार, श्वेत अर्क की उत्तम समिधाओं से · पलाशोडुम्बराश्वत्थप्लक्षापामार्गसत्त्वचैः — पलाश, उडुम्बर, अश्वत्थ, प्लक्ष, अपामार्ग की छाल सहित

नन्द्यावर्तसिताम्भोजहयारिकुसुमादिभिः ।

१०२

सितैरन्यैः शुभैर्द्रव्यैः समित्पत्रफलान्तरैः ॥ १०२ ॥

नन्द्यावर्त, श्वेत कमल, हयारि (कनेर) आदि पुष्पों से, अन्य श्वेत शुभ द्रव्यों से, अन्य समिधा, पत्र और फलों से,

पदपाठ नन्द्यावर्तसिताम्भोजहयारिकुसुमादिभिः — नन्द्यावर्त, श्वेत कमल, हयारि (कनेर) आदि पुष्पों से · सितैरन्यैः शुभैर्द्रव्यैः — अन्य श्वेत शुभ द्रव्यों से · समित्पत्रफलान्तरैः — अन्य समिधा, पत्र, फलों से

भक्ष्यैश्च पायसैर्दूर्वासहितैस्तिलतण्डुलैः ।

१०३

मधुरत्रयसंयुक्तैर्मन्त्रवित् कुलनायिके ॥ १०३ ॥

भक्ष्यों और खीर से, दूर्वा सहित तिल और चावल से, मधुरत्रय (मधु, घृत, शर्करा) से युक्त — मन्त्रवेत्ता, हे कुलनायिके!

पदपाठ भक्ष्यैश्च पायसैः — और भक्ष्यों, पायस से · दूर्वासहितैस्तिलतण्डुलैः — दूर्वा सहित तिल और चावल से · मधुरत्रयसंयुक्तैः — मधुरत्रय से युक्त · मन्त्रवित् कुलनायिके — मन्त्रवेत्ता, हे कुलनायिके

एकेन वाथ सर्वैर्वा तत्कार्यगुरुलाघवम् ।

१०४

ज्ञात्वा देवि सहस्रन्तु जुहुयादथ पञ्च वा ॥ १०४ ॥

इनमें से एक से या सबसे, उस कार्य की गुरुता या लघुता को जानकर, हे देवि! एक हजार या पाँच (हजार) आहुति दे,

पदपाठ एकेन वाथ सर्वैर्वा — एक से या सबसे · तत्कार्यगुरुलाघवम् — उस कार्य का गुरुत्व-
लघुत्व · ज्ञात्वा देवि — जानकर, हे देवि · सहस्रन्तु जुहुयादथ पञ्च वा — हजार या पाँच (हजार) हवन करे

अयुतं नियुतं वापि प्रयुतं वा कुलेश्वरि ।

१०५

तत्तत्कर्मोदिते कुण्डे संस्कृते हव्यवाहने ॥ १०५ ॥

या दस हजार, लाख, या दस लाख, हे कुलेश्वरि! उस-उस कर्म के लिए कहे गए कुण्ड में, संस्कृत अग्नि में।

पदपाठ अयुतं नियुतं वापि — दस हजार या लाख · प्रयुतं वा कुलेश्वरि — या दस लाख, हे
कुलेश्वरि · तत्तत्कर्मोदिते कुण्डे — उस-उस कर्म के लिए कहे कुण्ड में · संस्कृते हव्यवाहने — संस्कृत
अग्नि में

आवाह्य देवतामस्मिन् ध्यात्वा सावरणां प्रिये ।

१०६

विधिवज्जुहुयाद्देवि तद्गतेनान्तरात्मना ॥ १०६ ॥

उस (अग्नि) में देवता का आवाहन करके, आवरण-देवताओं सहित उनका ध्यान करके, हे प्रिये! विधिपूर्वक, हे देवि! उनमें लीन अन्तरात्मा से हवन करे।

पदपाठ आवाह्य देवतामस्मिन् — उसमें देवता का आवाहन कर · ध्यात्वा सावरणां प्रिये — आवरण-सहित
ध्यान कर, हे प्रिये · विधिवज्जुहुयाद्देवि — विधिवत् हवन करे, हे देवि · तद्गतेनान्तरात्मना — उसमें लगी
अन्तरात्मा से

सर्वरोगव्रणोन्मादापस्मारोत्पातयक्ष्मजम् ।

१०७

सर्वदुःखप्रशमनं तत्क्षणान्नात्र संशयः ॥ १०७ ॥

सब रोग, व्रण, उन्माद, अपस्मार, उत्पात और यक्ष्मा से उत्पन्न सब दुःख उसी क्षण शान्त हो जाते हैं — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ सर्वरोगव्रणोन्मादापस्मारोत्पातयक्ष्मजम् — सब रोग, व्रण, उन्माद, अपस्मार, उत्पात, यक्ष्मा से उत्पन्न · सर्वदुःखप्रशमनं — सब दुःखों का शमन · तत्क्षणान्नात्र संशयः — उसी क्षण, इसमें सन्देह नहीं

अनेन सर्वशान्तिञ्च ज्ञानं विद्यां लभेत् प्रिये ।

१०८

कदम्बाशोकवकुलपुन्नागाम्रमधूकजैः ॥ १०८ ॥

इससे सर्व शान्ति, ज्ञान और विद्या प्राप्त होती है, हे प्रिये! कदम्ब, अशोक, बकुल, पुन्नाग, आम और महुए के (पुष्पों) से,

पदपाठ अनेन सर्वशान्तिञ्च — इससे सर्व शान्ति · ज्ञानं विद्यां लभेत् प्रिये — ज्ञान और विद्या पाता है, हे प्रिये · कदम्बाशोकवकुलपुन्नागाम्रमधूकजैः — कदम्ब, अशोक, बकुल, पुन्नाग, आम्र, महुए के (पुष्पों) से

चम्पकद्वयपालाशपाटलश्रीकपित्थकैः ।

१०९

मालतीमल्लिकाजातिबन्धूकारुणपङ्कजैः ॥ १०९ ॥

दोनों चम्पक, पलाश, पाटल, बिल्व और कैथ से, मालती, मल्लिका, जाती, बन्धूक और लाल कमल से,

पदपाठ चम्पकद्वयपालाशपाटलश्रीकपित्थकैः — दो चम्पक, पलाश, पाटल, बिल्व, कपित्थ से · मालतीमल्लिकाजातिबन्धूकारुणपङ्कजैः — मालती, मल्लिका, जाती, बन्धूक, अरुण कमल से

कल्हारारुणमन्दारयूथिकुन्दजवादिभिः ।

११०

सनारिकेलकदलीद्राक्षेक्षुपृथुकैरपि ॥ ११० ॥

कल्हार, लाल मन्दार, यूथिका, कुन्द, जवा आदि से, और नारियल, केला, द्राक्षा, ईख और चिउड़े से भी,

पदपाठ कल्हारारुणमन्दारयूथिकुन्दजवादिभिः — कल्हार, अरुण मन्दार, यूथिका, कुन्द, जवा आदि
से · सनारिकेलकदलीद्राक्षेक्षुपृथुकैरपि — नारियल, केला, द्राक्षा, ईख, चिउड़े से भी

चन्दनागुरुकपूररोचनाकुङ्कुमादिभिः ।

१११

रक्तैरन्यैः शुभद्रव्यैः समिद्धृतफलोद्भवैः ॥ १११ ॥

चन्दन, अगुरु, कपूर, गोरोचन, केसर आदि से, अन्य लाल शुभ द्रव्यों से, समिधा, घी और फलों से,

पदपाठ चन्दनागुरुकपूररोचनाकुङ्कुमादिभिः — चन्दन, अगुरु, कपूर, गोरोचन, कुंकुम आदि से · रक्तैरन्यैः
शुभद्रव्यैः — अन्य लाल शुभ द्रव्यों से · समिद्धृतफलोद्भवैः — समिधा, घी, फल से उत्पन्न

पूर्ववज्जुहुयाद्देवि विधिवन्मन्त्रवित्तमः ।

११२

महीपतींश्च पुरुषान् कान्ता यौवनगर्विताः ॥ ११२ ॥

मन्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ, हे देवि! पूर्ववत् विधिपूर्वक हवन करे। राजाओं और पुरुषों को, यौवन-गर्विता स्त्रियों को,

पदपाठ पूर्ववज्जुहुयाद्देवि — पूर्ववत् हवन करे, हे देवि · विधिवन्मन्त्रवित्तमः — विधिवत्
मन्त्रवित्तम · महीपतींश्च पुरुषान् — राजाओं और पुरुषों को · कान्ता यौवनगर्विताः — यौवन-गर्विता स्त्रियाँ

सिंहान् मत्तान् तथा व्याघ्रान् मृगान् दुष्टान् गजानपि ।

सिद्धदेवाप्सरोयक्षगन्धर्ववनितास्तथा ।

११३

देवानपि कुलेशानि वशयेन्नात्र संशयः ॥ ११३ ॥

सिंहों, मत्त (पशुओं), व्याघ्रों, दुष्ट पशुओं और हाथियों को भी, सिद्ध, देव, अप्सरा, यक्ष और गन्धर्वों की स्त्रियों को, और देवताओं को भी, हे कुलेशानि! वह वश में करता है — इसमें संशय नहीं।

पदपाठ सिंहान् मत्तान् तथा व्याघ्रान् — सिंह, मत्त (हाथी), वैसे बाघ · मृगान् दुष्टान् गजानपि — दुष्ट पशु, हाथी भी · सिद्धदेवाप्सरोयक्षगन्धर्ववनितास्तथा — और सिद्ध, देव, अप्सरा, यक्ष, गन्धर्व की स्त्रियाँ · देवानपि कुलेशानि — देवों को भी, हे कुलेशानि · वशयेन्नात्र संशयः — वश में करे, इसमें सन्देह नहीं

वाजीलवणहोमेन स्त्रियमाकर्षयेद् ध्रुवम् ।

विधिनानेन देवेशि सौभाग्यमुत्तमं लभेत् ॥ ११४ ॥

११४

वाजी और लवण के होम से वह निश्चय स्त्री को आकर्षित करता है; हे देवेशि! इस विधि से उत्तम सौभाग्य प्राप्त होता है।

पदपाठ वाजीलवणहोमेन — वाजी और लवण के होम से · स्त्रियमाकर्षयेद् ध्रुवम् — स्त्री को निश्चय आकर्षित करे · विधिनानेन देवेशि — इस विधि से, हे देवेशि · सौभाग्यमुत्तमं लभेत् — उत्तम सौभाग्य पाता है

बहुनात्र किमुक्तेन त्रिषु लोकेषु मन्त्रिणाम् ।
अनेन मन्त्रराजेन नासाध्यं विद्यते क्वचित् ॥ ११५॥

११५

यहाँ अधिक कहने से क्या? तीनों लोकों में मन्त्रियों के लिए इस मन्त्रराज से कहीं कुछ असाध्य नहीं है।

पदपाठ बहुनात्र किमुक्तेन — यहाँ अधिक कहने से क्या · त्रिषु लोकेषु मन्त्रिणाम् — तीनों लोकों में मन्त्रियों के लिए · अनेन मन्त्रराजेन — इस मन्त्रराज से · नासाध्यं विद्यते क्वचित् — कहीं कुछ असाध्य नहीं

ऊर्ध्वाग्नायैकनिष्ठातः पराप्रासादमन्त्रवित् ।
कुलार्णवार्थतत्त्वज्ञो जीवन्मुक्तः कुलेश्वरि ॥ ११६॥

११६

ऊर्ध्वाग्नाय में एकमात्र निष्ठात, परा-प्रासाद मन्त्र का ज्ञाता, कुलार्णव के अर्थ-तत्त्व को जानने वाला जीवन्मुक्त है, हे कुलेश्वरि!

पदपाठ ऊर्ध्वाग्नायैकनिष्ठातः — ऊर्ध्वाग्नाय में एकनिष्ठ · पराप्रासादमन्त्रवित् — पराप्रासाद मन्त्रवेत्ता · कुलार्णवार्थतत्त्वज्ञो — कुलार्णव के अर्थ का तत्त्वज्ञ · जीवन्मुक्तः कुलेश्वरि — जीवन्मुक्त है, हे कुलेश्वरि

सुतीर्थे वाप्यतीर्थे वा जलमध्येऽपि वा वसन् ।
पराप्रासादमन्त्रज्ञो मुक्त एव न संशयः ॥ ११७॥

११७

सुतीर्थ में या अतीर्थ में, या जल के बीच में भी रहता हुआ परा-प्रासाद मन्त्र का ज्ञाता मुक्त ही है, इसमें संशय नहीं।

पदपाठ सुतीर्थे वाप्यतीर्थे वा — सुतीर्थ में या अतीर्थ में · जलमध्येऽपि वा वसन् — या जल के मध्य में रहते भी · पराप्रासादमन्त्रज्ञो — पराप्रासाद मन्त्रज्ञ · मुक्त एव न संशयः — मुक्त ही है, सन्देह नहीं

दिक्पीठक्षेत्रमुद्रादिवृक्षवल्लीमठादिकाः ।

११८

पूरभैरवदेव्यश्च ऊर्ध्वाम्नायस्य पार्वति ॥ ११८ ॥

दिशाएँ, पीठ, क्षेत्र, मुद्रा आदि, वृक्ष, लता, मठ आदि, और पुर के भैरव और देवियाँ ऊर्ध्वाम्नाय के हैं, हे पार्वति!

पदपाठ दिक्पीठक्षेत्रमुद्रादिवृक्षवल्लीमठादिकाः — दिशा, पीठ, क्षेत्र, मुद्रा आदि, वृक्ष, लता, मठ आदि · पूरभैरवदेव्यश्च — और पुर के भैरव और देवियाँ · ऊर्ध्वाम्नायस्य पार्वति — ऊर्ध्वाम्नाय के हैं, हे पार्वति

निम्बकारस्करोन्मत्तकण्टकीविप्रदन्तिभिः ।

११९

अस्थिकण्टकवृक्षाद्यैर्द्रव्यैरशुभसाधनैः ॥ ११९ ॥

नीम, कारस्कर (कुचला), धतूरा, कण्टकी और विप्रदन्ती से, अस्थि, काँटेदार वृक्ष आदि से, अशुभ साधन द्रव्यों से,

पदपाठ निम्बकारस्करोन्मत्तकण्टकीविप्रदन्तिभिः — नीम, कारस्कर (कुचला), धतूरा, कण्टकी, विप्रदन्ती से · अस्थिकण्टकवृक्षाद्यैः — अस्थि, कण्टक-वृक्ष आदि से · द्रव्यैरशुभसाधनैः — अशुभ साधन द्रव्यों से

वटुकैः कृष्णवर्णैश्च समित्पत्रफलान्तरैः ।

१२०

गृहधूमचिताङ्गारत्रिकट्वम्लचिताञ्जनैः ॥ १२० ॥

काले वटुकों से, अन्य समिधा, पत्र और फलों से, घर के धुएँ (कालिख), चिता के अङ्गार, त्रिकटु, अम्ल और चिता के अञ्जन से,

पदपाठ वटुकैः कृष्णवर्णैश्च — और काले वटुकों से · समित्पत्रफलान्तरैः — अन्य समिधा, पत्र, फलों से · गृहधूमचिताङ्गारत्रिकट्वम्लचिताञ्जनैः — गृह-धूम, चिता-अंगार, त्रिकटु, अम्ल, चिता-अंजन से

उन्मत्तरससंसिक्तैः पिष्ट्वा सम्यक् प्रसेचितैः ।

१२१

साध्यपादरजोभिश्च चिताभस्मसमन्वितैः ॥ १२१ ॥

धतूरे के रस से सिञ्चित, पीसकर भली प्रकार प्रसेचित, साध्य के पैर की धूल से, चिता-भस्म से युक्त —

पदपाठ उन्मत्तरससंसिक्तैः — धतूरे के रस से सिञ्चित · पिष्ट्वा सम्यक् प्रसेचितैः — पीसकर भली प्रकार सींचे · साध्यपादरजोभिश्च — और साध्य के पैरों की धूल से · चिताभस्मसमन्वितैः — चिता-भस्म सहित

साध्यप्रतिकृतिं कुयदिकनक्षत्रवृक्षजाम् ।

१२२

सम्यक्प्रतिष्ठितप्राणां कुण्डस्योपरि लम्बयेत् ॥ १२२ ॥

साध्य के समान नक्षत्र वाले वृक्ष से साध्य की प्रतिकृति बनाए, उसमें भली प्रकार प्राण-प्रतिष्ठा करके कुण्ड के ऊपर लटकाए।

पदपाठ साध्यप्रतिकृतिं कुर्यात् — साध्य की प्रतिकृति बनाए · एकनक्षत्रवृक्षजाम् — एक नक्षत्र के वृक्ष से बनी · सम्यक्प्रतिष्ठितप्राणां — सम्यक् प्रतिष्ठित प्राण वाली · कुण्डस्योपरि लम्बयेत् — कुण्ड के ऊपर लटकाए

खनेत्तत्प्रतिमां मन्त्री कुण्डस्याधो यथाविधि ।

१२३

मलीमसेन मनसा चोग्रदृष्टिरमर्षणः ॥ १२३ ॥

मन्त्री उस प्रतिमा को विधिपूर्वक कुण्ड के नीचे गाड़े, मलिन मन से, उग्र दृष्टि वाला और अमर्षी होकर।

पदपाठ खनेत्तत्प्रतिमां मन्त्री — मन्त्री उस प्रतिमा को गाड़े · कुण्डस्याधो यथाविधि — कुण्ड के नीचे यथाविधि · मलीमसेन मनसा — मलिन मन से · चोग्रदृष्टिरमर्षणः — उग्र दृष्टि, अमर्षी

चितानले विषतरु सप्तकाष्ठसमेधिते ।

१२४

तद्द्रव्यैर्जुहुयाद्देवि विधिवन्मन्त्रवित्तमः ॥ १२४ ॥

चिता की अग्नि में, विष-वृक्ष की सात लकड़ियों से प्रज्वलित, उन द्रव्यों से, हे देवि! मन्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ विधिपूर्वक हवन करे।

पदपाठ चितानले — चिता की अग्नि में · विषतरुसप्तकाष्ठसमेधिते — विषवृक्ष की सात लकड़ियों से प्रदीप्त · तद्द्रव्यैर्जुहुयाद्देवि — उन द्रव्यों से हवन करे, हे देवि · विधिवन्मन्त्रवित्तमः — विधिवत् मन्त्रवित्तम

कुर्याद्विद्वेषणोच्चाटमारणानि न संशयः ।

१२५

शान्तिके सात्त्विकं देवि श्वेतवर्णं विचिन्तयेत् ॥ १२५ ॥

वह विद्वेषण, उच्चाटन और मारण करता है, संशय नहीं। शान्तिक में, हे देवि! सात्त्विक (रूप) को श्वेत वर्ण का चिन्तन करे;

पदपाठ कुर्याद्विद्वेषणोच्चाटमारणानि — विद्वेषण, उच्चाटन, मारण करे · न संशयः — सन्देह नहीं · शान्तिके सात्त्विकं देवि — शान्तिक में सात्त्विक, हे देवि · श्वेतवर्णं विचिन्तयेत् — श्वेत वर्ण का चिन्तन करे

वश्ये तु राजसं देवि रक्तवर्णं विचिन्तयेत् ।

१२६

तामसं क्रूरकार्येषु कृष्णवर्णं विचिन्तयेत् ॥ १२६ ॥

वश्य में, हे देवि! राजस को रक्त वर्ण का चिन्तन करे; क्रूर कार्यों में तामस को कृष्ण वर्ण का चिन्तन करे।

पदपाठ वश्ये तु राजसं देवि — वश्य में राजस, हे देवि · रक्तवर्णं विचिन्तयेत् — लाल वर्ण का चिन्तन करे · तामसं क्रूरकार्येषु — तामस क्रूर कार्यों में · कृष्णवर्णं विचिन्तयेत् — काले वर्ण का चिन्तन करे

आत्मरक्षां पुरा कृत्वा पश्चात् कर्माणि साधयेत् ।
योऽन्यथा कुरुते मोहात् स भवेद्देवतापशुः ॥ १२७ ॥

१२७

पहले आत्मरक्षा करके पीछे कर्मों को सिद्ध करे; जो मोह से अन्यथा करता है वह देवता का पशु हो जाता है।

पदपाठ आत्मरक्षां पुरा कृत्वा — पहले आत्मरक्षा करके · पश्चात् कर्माणि साधयेत् — बाद में कर्म साधे · योऽन्यथा कुरुते मोहात् — जो मोह से अन्यथा करे · स भवेद्देवतापशुः — वह देवता का पशु हो जाता है

तस्माद्देवि महाषोढान्यासं पूजां बलिं सुधीः ।
कृत्वा कर्माणि कुर्वीत नान्यथा वीरवन्दिते ॥ १२८ ॥

१२८

इसलिए, हे देवि! सुधी महाषोढा-न्यास, पूजा और बलि करके कर्म करे; अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते!

पदपाठ तस्माद्देवि — इसलिए, हे देवि · महाषोढान्यासं पूजां बलिं — महाषोढा न्यास, पूजा, बलि · सुधीः कृत्वा — सुधी करके · कर्माणि कुर्वीत — कर्म करे · नान्यथा वीरवन्दिते — अन्यथा नहीं, हे वीरवन्दिते

मूलाधारसरोजान्तर्वह्निमध्यगतं प्रिये ।
पराप्रासादबीजं तत् कल्पान्ताग्निसमप्रभम् ॥ १२९ ॥

१२९

मूलाधार-कमल के भीतर अग्नि के मध्य में स्थित, हे प्रिये! कल्पान्त की अग्नि के समान प्रभा वाले उस परा-प्रासाद बीज को,

पदपाठ मूलाधारसरोजान्तः — मूलाधार-कमल के भीतर · वह्निमध्यगतं प्रिये — अग्नि के मध्य स्थित, हे प्रिये · पराप्रासादबीजं तत् — वह पराप्रासाद बीज · कल्पान्ताग्निसमप्रभम् — कल्पान्त की अग्नि के समान प्रभा वाला

प्रतिलोमसु संवीतं दशभिव्यापकाक्षरैः ।

१३०

स्वयं कालानलसमः सर्वभूतभयङ्करः ॥ १३० ॥

उल्टे क्रम में दस व्यापक अक्षरों (य से क्ष) से घिरा हुआ — स्वयं कालाग्नि के समान, सब प्राणियों को भयङ्कर,

पदपाठ प्रतिलोमसु संवीतं — प्रतिलोम में घिरा · दशभिव्यापकाक्षरैः — दस व्यापक अक्षरों से · स्वयं कालानलसमः — स्वयं कालाग्नि के समान · सर्वभूतभयङ्करः — सब प्राणियों को भयंकर

दक्षिणाशामुखो भूत्वात्युग्रदृष्टिमलीमसः ।

१३१

यौवनोल्लाससहितः पराप्रासादसंज्ञकम् ॥ १३१ ॥

दक्षिण दिशा की ओर मुख करके, अत्यन्त उग्र दृष्टि और मलिन (मन) वाला, यौवन उल्लास सहित, परा-प्रासाद नामक मन्त्र का

पदपाठ दक्षिणाशामुखो भूत्वा — दक्षिण दिशा की ओर मुख किए · अत्युग्रदृष्टिमलीमसः — अति उग्र दृष्टि, मलिन (मन) · यौवनोल्लाससहितः — यौवन-उल्लास सहित · पराप्रासादसंज्ञकम् — पराप्रासाद नामक

मन्त्रं मण्डलकं जप्यादष्टोत्तरसहस्रकम् ।

१३२

अनिष्टकारिणः सत्त्वान् कलहायासकारिणः ॥ १३२ ॥

एक हजार आठ जप एक मण्डल तक करे। अनिष्ट करने वाले, कलह और क्लेश करने वाले प्राणियों को,

पदपाठ मन्त्रं मण्डलकं जप्यात् — मन्त्र एक मण्डल जपे · अष्टोत्तरसहस्रकम् — एक हजार आठ बार · अनिष्टकारिणः सत्त्वान् — अनिष्ट करने वाले प्राणी · कलहायासकारिणः — कलह और श्रम देने वाले

वृथा द्वेषकरान् क्रूरान् सपर्याविघ्नकारिणः ।
भूतोपग्रहवेतालान् पिशाचान् यक्षराक्षसान् ॥ १३३ ॥

१३३

व्यर्थ द्वेष करने वाले क्रूरों को, पूजा में विघ्न करने वालों को, भूत, उपग्रह, वेताल, पिशाच, यक्ष और राक्षसों को,

पदपाठ वृथा द्वेषकरान् क्रूरान् — व्यर्थ द्वेष करने वाले क्रूर · सपर्याविघ्नकारिणः — पूजा में विघ्न करने वाले · भूतोपग्रहवेतालान् — भूत, उपग्रह, वेताल · पिशाचान् यक्षराक्षसान् — पिशाच, यक्ष, राक्षस

इत्यादिदुष्टजन्तुंश्च सदा क्लेशकरान् परान् ।
तद्बहिमध्यपतितान्निर्दग्धांश्च चिन्तयेत् ।
क्षणेन नाशमायान्ति शलभा इव पावके ॥ १३४ ॥

१३४

इन आदि दुष्ट जन्तुओं और सदा क्लेश देने वाले अन्यो को उस अग्नि के मध्य में गिरे हुए और जलकर भस्म हुए चिन्तन करे; वे क्षण भर में अग्नि में पतझों की तरह नष्ट हो जाते हैं।

पदपाठ इत्यादिदुष्टजन्तुंश्च — इत्यादि दुष्ट जन्तु · सदा क्लेशकरान् परान् — और सदा क्लेश देने वाले अन्य · तद्बहिमध्यपतितान् — उस अग्नि के मध्य गिरे · निर्दग्धांश्च चिन्तयेत् — और जले हुए चिन्तन करे · क्षणेन नाशमायान्ति — क्षण में नष्ट हो जाते हैं · शलभा इव पावके — जैसे पतंगे आग में

यस्य मूर्ध्नि स्मरेद्बीजं स मृत्युमधिगच्छति ।
ध्यानेनानेन देवेशि कालादीनपि नाशयेत् ॥ १३५ ॥

१३५

जिसके सिर पर वह बीज का स्मरण करता है वह मृत्यु को प्राप्त होता है; हे देवेशि! इस ध्यान से वह काल आदि का भी नाश कर सकता है।

पदपाठ यस्य मूर्ध्नि स्मरेद्बीजं — जिसके सिर में बीज का स्मरण करे · स मृत्युमधिगच्छति — वह मृत्यु को जाता है · ध्यानेनानेन देवेशि — इस ध्यान से, हे देवेशि · कालादीनपि नाशयेत् — काल आदि को भी नष्ट करे

इति ते कथितः किञ्चित् काम्यकर्मविधिः प्रिये ।
समासेन कुलेशानि किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १३६ ॥

१३६

हे प्रिये! इस प्रकार काम्यकर्म की विधि तुम्हें संक्षेप में कही गई, हे कुलेशानि! और क्या सुनना चाहती हो?

पदपाठ इति ते कथितः किञ्चित् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · काम्यकर्मविधिः प्रिये — काम्य कर्म की विधि, हे प्रिये · समासेन कुलेशानि — संक्षेप में, हे कुलेशानि · किं भूयः श्रोतुमिच्छसि — और क्या सुनना चाहती हो?



इति श्रीकुलार्णवि निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे काम्यकर्मविधानं नाम षोडश उल्लासः ॥ १६ ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
काम्यकर्मविधान नामक षोडश उल्लास समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ सप्तदशोल्लासः

सप्तदश उल्लास — गुरु आदि कुल-पदार्थों का निर्वचन



अन्तिम उल्लास। गुरु को नमस्कार के बाद ईश्वर कुल के पदार्थों का एक-एक करके निर्वचन (नाम की वासना) बताते हैं — गुरु, आचार्य, देशिक, स्वामी, योगी, अवधूत, वीर, कौलिक, साधक, शिष्य, योगिनी, शक्ति, पादुका, जप, स्तोत्र, ध्यान, वेद, पुराण, शास्त्र, आगम, दीक्षा, अभिषेक, मन्त्र, न्यास, मुद्रा, मण्डल, मद्य, मांस, पूजा, उपचार आदि — फिर पूजा-विधि के पारिभाषिक शब्द (आवाहन, स्थापन, सकलीकृति, अर्घ्य, मधुपर्क), और अन्त में कुलार्णव को गुप्त रखने के नियम तथा श्रीचक्र के समीप ऊर्ध्वान्नाय के श्रवण का फल।

— श्रीदेव्युवाच —

कुलेश श्रोतुमिच्छामि गुरुनामादिवासनाम् ।

१

तत्त्वं कुलपदार्थानां वद मे परमेश्वर ॥ १ ॥

हे कुलेश! मैं गुरु आदि नामों की वासना (अन्तर्निहित अर्थ) — कुल के पदार्थों का तत्त्व — सुनना चाहती हूँ; हे परमेश्वर! मुझे बताइए।

पदपाठ कुलेश श्रोतुमिच्छामि — हे कुलेश! मैं सुनना चाहती हूँ · गुरुनामादिवासनाम् — "गुरु" आदि नामों की वासना (गूढ़ अर्थ) · तत्त्वं कुलपदार्थानां — कुल-पदार्थों का तत्त्व · वद मे परमेश्वर — मुझे बताइए, हे परमेश्वर

— ईश्वर उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।

तस्य श्रवणमात्रेण कुलज्ञानं प्रकाशते ॥ २ ॥

२

सुनो देवि! जो तुम मुझसे पूछती हो वह मैं कहता हूँ; उसके श्रवण मात्र से कुलज्ञान प्रकाशित हो जाता है।

पदपाठ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि — सुनो देवि, मैं कहता हूँ · यन्मां त्वं परिपृच्छसि — जो तुम मुझसे पूछती हो · तस्य श्रवणमात्रेण — उसके श्रवण मात्र से · कुलज्ञानं प्रकाशते — कुलज्ञान प्रकाशित होता है

नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरुरूपिणे ।

विद्यावतारसंसिद्धयै स्वीकृतानेकविग्रह ॥ ३ ॥

३

हे नाथ! हे भगवन्! गुरुरूपधारी शिव को नमस्कार — जिन्होंने विद्या के अवतार की सिद्धि के लिए अनेक विग्रह स्वीकार किये हैं;

पदपाठ नमस्ते नाथ भगवन् — आपको नमस्कार, हे नाथ, हे भगवन् · शिवाय गुरुरूपिणे — गुरुरूपी शिव को · विद्यावतारसंसिद्धयै — विद्या के अवतार की संसिद्धि के लिए · स्वीकृतानेकविग्रह — हे अनेक विग्रह धारण करने वाले

नारायणस्वरूपाय परमात्मस्वरूपिणे ।

सर्वाज्ञानतमोभेदभानवे चिद्धनाय च ॥ ४ ॥

४

नारायणस्वरूप, परमात्मस्वरूप, समस्त अज्ञान-अन्धकार को भेदने वाले सूर्य, और चिद्धन (उन गुरु) को;

पदपाठ नारायणस्वरूपाय — नारायण-स्वरूप को · परमात्मस्वरूपिणे — परमात्म-स्वरूप को · सर्वाज्ञानतमोभेदभानवे — सब अज्ञान-अन्धकार को भेदने वाले सूर्य को · चिद्धनाय च — और चिद्धन को

सर्वज्ञाय दयाकृप्तविग्रहाय शिवात्मने ।

परत्रेह च भक्तानां भव्यानां भावदायिने ॥ ५॥

५

सर्वज्ञ, दयामय विग्रह वाले, शिवस्वरूप, और इस लोक तथा परलोक में भव्य भक्तों को भाव देने वाले (उन गुरु) को।

पदपाठ सर्वज्ञाय — सर्वज्ञ को · दयाकृप्तविग्रहाय — दया से बने विग्रह वाले को · शिवात्मने — शिवात्मा को · परत्रेह च — परलोक और इस लोक में · भक्तानां भव्यानां — भव्य (योग्य) भक्तों को · भावदायिने — भाव देने वाले को

पुरस्तात् पार्श्वयोः पृष्ठे नमः कुर्यामुपर्यधः ।

सदा सच्चित्तरूपेण विधेहि तव दासताम् ॥ ६॥

६

आगे, दोनों पार्श्वों में, पीछे, ऊपर और नीचे मैं नमस्कार करता हूँ; सदा सच्चित्तरूप से मुझे अपनी दासता प्रदान कीजिए।

पदपाठ पुरस्तात् पार्श्वयोः पृष्ठे — आगे, दोनों पार्श्व में, पीछे · नमः कुर्याम् — मैं नमस्कार करूँ · उपर्यधः — ऊपर और नीचे · सदा सच्चित्तरूपेण — सदा सच्चित् रूप से · विधेहि तव दासताम् — मुझे अपनी दासता प्रदान करो

गुशब्दस्त्वन्धकारः स्यात् रुशब्दस्तन्निरोधकः ।

अन्धकारनिरोधत्वात् गुरुरित्यभिधीयते ॥ ७॥

७

"गु" शब्द अन्धकार है और "रु" शब्द उसका निरोधक है; अन्धकार का निरोध करने से वह गुरु कहलाता है।

पदपाठ गुशब्दस्तु — "गु" शब्द · अन्धकारः स्यात् — अन्धकार है · रुशब्दस्तन्निरोधकः — "रु" शब्द उसका निरोधक · अन्धकारनिरोधत्वात् — अन्धकार का निरोध करने से · गुरुरित्यभिधीयते — गुरु कहलाता है

गकारः सिद्धिदः प्रोक्तो रेफः पापस्य दाहकः ।

उकारो विष्णुरित्युक्तस्त्रितयात्मा गुरुः परः ॥ ८॥

८

"ग" अक्षर सिद्धि देने वाला कहा गया है, रेफ पाप को जलाने वाला, "उ" अक्षर विष्णु कहा गया है; परम गुरु इन तीनों का आत्मा है।

पदपाठ गकारः सिद्धिदः प्रोक्तः — गकार सिद्धि देने वाला कहा गया · रेफः पापस्य दाहकः — रेफ पाप का दाहक · उकारो विष्णुरित्युक्तः — उकार विष्णु कहा गया · त्रितयात्मा गुरुः परः — तीनों का आत्मा परम गुरु है

गकारो ज्ञानसम्पत्ती रेफस्तत्र प्रकाशकः ।

उकारः शिवतादात्म्यं गुरुरित्यभिधीयते ॥ ९॥

९

"ग" अक्षर ज्ञान-सम्पत्ति है, रेफ उसका प्रकाशक है, "उ" अक्षर शिव के साथ तादात्म्य है — इसलिए वह गुरु कहलाता है।

पदपाठ गकारो ज्ञानसम्पत्ती — गकार ज्ञान-सम्पत्ति · रेफस्तत्र प्रकाशकः — रेफ वहाँ प्रकाशक · उकारः शिवतादात्म्यं — उकार शिव-तादात्म्य · गुरुरित्यभिधीयते — (इसलिए) गुरु कहलाता है

गुह्यागमात्मतत्त्वान्धनद्धानां बोधनादपि ।

रुद्रादिदेवरूपत्वाद् गुरुरित्यभिधीयते ॥ १०॥

१०

गुह्य आगम और आत्मतत्त्व के विषय में अन्धे और बँधे हुए जनों को बोध कराने से, तथा रुद्र आदि देवों का रूप होने से वह गुरु कहलाता है।

पदपाठ गुह्यागमात्मतत्त्वान्ध- — गुह्य आगम और आत्मतत्त्व में अन्धे · नद्धानां बोधनादपि — और बद्धों को बोध देने से भी · रुद्रादिदेवरूपत्वाद् — रुद्र आदि देव-रूप होने से · गुरुरित्यभिधीयते — गुरु कहलाता है

स्वयमाचरते शिष्यानाचारे स्थापयत्यपि ।

आचिनोतीह शास्त्रार्थानाचार्यस्तेन कथ्यते ॥ ११ ॥

११

वह स्वयं आचरण करता है, शिष्यों को भी आचार में स्थापित करता है, और शास्त्रों के अर्थों का संचय करता है — इसलिए वह आचार्य कहलाता है।

पदपाठ स्वयमाचरते — स्वयं आचरण करता है · शिष्यानाचारे स्थापयत्यपि — शिष्यों को भी आचार में स्थापित करता है · आचिनोतीह शास्त्रार्थान् — यहाँ शास्त्रार्थों का संचय करता है · आचार्यस्तेन कथ्यते — इसलिए आचार्य कहलाता है

चराचरसमासन्नमध्यापयति यः स्वयम् ।

यमादियोगसिद्धत्वादाचार्य इति कथ्यते ॥ १२ ॥

१२

जो स्वयं चराचर समीपस्थ जनों को पढ़ाता है, और यम आदि योग में सिद्ध है, वह आचार्य कहलाता है।

पदपाठ चराचरसमासन्नम् — समीप स्थित चराचर को · अध्यापयति यः स्वयम् — जो स्वयं पढ़ाता है · यमादियोगसिद्धत्वात् — यम आदि योग में सिद्ध होने से · आचार्य इति कथ्यते — आचार्य कहलाता है

आत्मभावप्रदानात्तु रागद्वेषादिवर्जनात् ।

ध्यानैकनिष्ठचित्तत्वादाराध्य इति कथ्यते ॥ १३ ॥

१३

आत्मभाव प्रदान करने से, राग-द्वेष आदि के त्याग से, और चित्त के ध्यान में ही एकनिष्ठ होने से वह आराध्य कहलाता है।

पदपाठ आत्मभावप्रदानात्तु — आत्मभाव प्रदान करने से · रागद्वेषादिवर्जनात् — राग-द्वेष आदि त्यागने से · ध्यानैकनिष्ठचित्तत्वात् — ध्यान में एकनिष्ठ चित्त होने से · आराध्य इति कथ्यते — आराध्य कहलाता है

देवतारूपधारित्वाच्छिष्यानुग्रहकारणात् ।

करुणामयमूर्तित्वाद्देशिकः कथितः प्रिये ॥ १४ ॥

१४

देवता का रूप धारण करने से, शिष्यों पर अनुग्रह का कारण होने से, और करुणामय मूर्ति होने से, हे प्रिये! वह देशिक कहलाता है।

पदपाठ देवतारूपधारित्वात् — देवता-रूप धारण करने से · शिष्यानुग्रहकारणात् — शिष्यों पर अनुग्रह के कारण से · करुणामयमूर्तित्वात् — करुणामय मूर्ति होने से · देशिकः कथितः प्रिये — देशिक कहा गया, हे प्रिये

स्वान्तःशान्तिसमुन्मीलत्परतत्त्वार्थचिन्तनात् ।

मिथ्याज्ञानविहीनत्वात् स्वामीति कथितः प्रिये ॥ १५ ॥

१५

अपने अन्तःकरण की शान्ति से उन्मीलित होने वाले परतत्त्व के अर्थ का चिन्तन करने से, और मिथ्याज्ञान से रहित होने से, हे प्रिये! वह स्वामी कहलाता है।

पदपाठ स्वान्तःशान्तिसमुन्मीलत् — अपने अन्तःकरण की शान्ति से उन्मीलित · परतत्त्वार्थचिन्तनात् — परतत्त्व के अर्थ का चिन्तन करने से · मिथ्याज्ञानविहीनत्वात् — मिथ्या ज्ञान से रहित होने से · स्वामीति कथितः प्रिये — स्वामी कहा गया, हे प्रिये

मनोदोषादिदूरत्वाद्धेतुवादादिवर्जनात् ।

श्वादिप्राणिषु सादृश्याद् रम्यत्वाच्च महेश्वरः ॥ १६ ॥

१६

मन के दोष आदि से दूर होने से, हेतुवाद आदि के त्याग से, कुत्ते आदि प्राणियों में समदृष्टि होने से, और रम्य होने से वह महेश्वर है।

पदपाठ मनोदोषादिदूरत्वात् — मनोदोष आदि से दूर होने से · हेतुवादादिवर्जनात् — हेतुवाद आदि त्यागने से · श्वादिप्राणिषु सादृश्यात् — कुत्ते आदि प्राणियों में समदृष्टि से · रम्यत्वाच्च महेश्वरः — और रम्य होने से महेश्वर

श्रीमोक्षज्ञानदातृत्वान्नादब्रह्मात्मबोधनात् ।

स्थगिताज्ञानचिह्नत्वात् श्रीनाथः कथितः प्रिये ॥ १७ ॥

१७

श्री और मोक्ष का ज्ञान देने से, नादब्रह्म-आत्मा का बोध कराने से, और अज्ञान के चिह्नों को ढक देने से, हे प्रिये! वह श्रीनाथ कहलाता है।

पदपाठ श्रीमोक्षज्ञानदातृत्वात् — श्री और मोक्ष का ज्ञान देने से · नादब्रह्मात्मबोधनात् — नादब्रह्म-आत्मा का बोध कराने से · स्थगिताज्ञानचिह्नत्वात् — अज्ञान के चिह्नों को ढँक देने से · श्रीनाथः कथितः प्रिये — श्रीनाथ कहा गया, हे प्रिये

देशकालाविरोधेन वर्तमानात् कुलागमे ।

वशीकृतजगज्जीवादेव इत्यभिधीयते ॥ १८ ॥

१८

देश और काल के अविरोध से कुलागम में वर्तमान रहने से, और जगत् के जीवों को वश में कर लेने से वह देव कहलाता है।

पदपाठ देशकालाविरोधेन — देश-काल के अविरोध से · वर्तमानात् कुलागमे — कुलागम में वर्तमान होने से · वशीकृतजगज्जीवात् — जगत् के जीवों को वश में करने से · देव इत्यभिधीयते — देव कहलाता है

भवपाशप्रशमनात् टङ्कारेन्दुकशेखरात् ।

रक्षणात् कमनीयत्वात् भट्टारक इतीरितः ॥ १९ ॥

१९

भव के पाशों को शान्त करने से, टङ्कार (धनुष) और चन्द्रमा को शिखर पर धारण करने से, रक्षा करने से और कमनीय होने से वह भट्टारक कहा गया है।

पदपाठ भवपाशप्रशमनात् — भव-पाश के शमन से · टङ्कारेन्दुकशेखरात् — टंकार (धनुष) और इन्दु के शेखर से · रक्षणात् कमनीयत्वात् — रक्षण से, कमनीय होने से · भट्टारक इतीरितः — भट्टारक कहा गया

प्रगुप्तागमवेदान्तरहस्यार्थविभावनात् ।

भुक्तिमुक्तिप्रदानाच्च प्रभुरित्यभिधीयते ॥ २० ॥

२०

अत्यन्त गुप्त आगम और वेदान्त के रहस्यार्थ को प्रकट करने से, और भुक्ति तथा मुक्ति प्रदान करने से वह प्रभु कहलाता है।

पदपाठ प्रगुप्तागमवेदान्त- सुगुप्त आगम और वेदान्त के रहस्यार्थविभावनात् — रहस्यार्थ को प्रकट करने से भुक्तिमुक्तिप्रदानाच्च — और भुक्ति-मुक्ति देने से प्रभुरित्यभिधीयते — प्रभु कहलाता है

योनिमुद्रानुसन्धानात् प्रस्फुरन्मन्त्रवैभवात् ।

गीर्वाणगणपूज्यत्वाद् योगीति कथितः प्रिये ॥ २१ ॥

२१

योनिमुद्रा के अनुसन्धान से, मन्त्र के वैभव के स्फुरण से, और देवगणों द्वारा पूज्य होने से, हे प्रिये! वह योगी कहलाता है।

पदपाठ योनिमुद्रानुसन्धानात् — योनिमुद्रा के अनुसन्धान से प्रस्फुरन्मन्त्रवैभवात् — स्फुरित मन्त्र-वैभव से गीर्वाणगणपूज्यत्वात् — देवगणों से पूज्य होने से योगीति कथितः प्रिये — योगी कहा गया, हे प्रिये

सङ्गदुःखपरित्यागात् यत्र कुत्राश्रमाश्रयात् ।

मिथ आत्मनिबन्धत्वात् संयमीत्यभिधीयते ॥ २२ ॥

२२

सङ्ग और दुःख के परित्याग से, जहाँ-कहीं भी आश्रम में आश्रय लेने से, और अन्तर में आत्मा से बँधे रहने से वह संयमी कहलाता है।

पदपाठ सङ्गदुःखपरित्यागात् — संग और दुःख के त्याग से यत्र कुत्राश्रमाश्रयात् — जहाँ-कहीं आश्रम के आश्रय से मिथ आत्मनिबन्धत्वात् — भीतर आत्मा में बद्ध होने से संयमीत्यभिधीयते — संयमी कहलाता है

तत्त्वस्वरूपमननात् परिवादादिवर्जितात् ।

स्वीकारात् शुभकार्याणां तपस्वीत्यभिधीयते ॥ २३ ॥

२३

तत्त्व के स्वरूप का मनन करने से, परिवाद आदि से रहित होने से, और शुभ कार्यों को स्वीकार करने से वह तपस्वी कहलाता है।

पदपाठ तत्त्वस्वरूपमननात् — तत्त्व-स्वरूप के मनन से · परिवादादिवर्जितात् — परिवाद (निन्दा) आदि से रहित · स्वीकारात् शुभकार्याणां — शुभ कार्यों के स्वीकार से · तपस्वीत्यभिधीयते — तपस्वी कहलाता है

अक्षरत्वाद्वरेण्यत्वाद्भूतसंसारबन्धनात् ।

तत्त्वमस्यर्थसिद्धत्वात् अवधूतोऽभिधीयते ॥ २४ ॥

२४

अक्षर होने से, वरेण्य होने से, संसार-बन्धन को झाड़ देने से, और "तत्त्वमसि" के अर्थ को सिद्ध कर लेने से वह अवधूत कहलाता है।

पदपाठ अक्षरत्वात् — अक्षर (अविनाशी) होने से · वरेण्यत्वात् — वरेण्य होने से · भूतसंसारबन्धनात् — संसार-बन्धन को झटक देने से · तत्त्वमस्यर्थसिद्धत्वात् — "तत्त्वमसि" का अर्थ सिद्ध होने से · अवधूतोऽभिधीयते — अवधूत कहलाता है

वीतरागमदक्लेशकोपमात्सर्यमोहतः ।

रजस्तमोविदूरत्वाद्वीर इत्यभिधीयते ॥ २५ ॥

२५

राग, मद, क्लेश, कोप, मात्सर्य और मोह से रहित होने से, और रजस् तथा तमस् से अत्यन्त दूर होने से वह वीर कहलाता है।

पदपाठ वीतरागमदक्लेशकोपमात्सर्यमोहतः — राग, मद, क्लेश, कोप, मात्सर्य, मोह के दूर होने से · रजस्तमोविदूरत्वात् — रजस्-तमस् से दूर होने से · वीर इत्यभिधीयते — वीर कहलाता है

कुलं गोत्रं समाख्यातं तच्च शक्तिशिवोद्भवम् ।
येन मोक्ष इति ज्ञानं कौलिकः सोऽभिधीयते ॥ २६ ॥

२६

कुल गोत्र कहा गया है, और वह शक्ति और शिव से उत्पन्न है; जिसे यह ज्ञान है कि उसके द्वारा मोक्ष होता है, वह कौलिक कहलाता है।

पदपाठ कुलं गोत्रं समाख्यातं — कुल गोत्र कहा गया · तच्च शक्तिशिवोद्भवम् — और वह शक्ति-शिव से उत्पन्न · येन मोक्ष इति ज्ञानं — जिसे ज्ञान है कि उससे मोक्ष है · कौलिकः सोऽभिधीयते — वह कौलिक कहलाता है

अकुलं शिव इत्युक्तं कुलं शक्तिः प्रकीर्तिता ।
कुलाकुलानुसन्धानान्निपुणाः कौलिकाः प्रिये ॥ २७ ॥

२७

अकुल शिव कहा गया है और कुल शक्ति कही गई है; कुल और अकुल के अनुसन्धान में निपुण जन, हे प्रिये! कौलिक हैं।

पदपाठ अकुलं शिव इत्युक्तं — अकुल शिव कहा गया · कुलं शक्तिः प्रकीर्तिता — कुल शक्ति कही गई · कुलाकुलानुसन्धानात् — कुल-अकुल के अनुसन्धान से · निपुणाः कौलिकाः प्रिये — निपुण कौलिक हैं, हे प्रिये

सारसंग्रहणाच्चैव धर्ममार्गप्रवर्तनात् ।
करणग्रामनियमात् साधकः सोऽभिधीयते ॥ २८ ॥

२८

सार का संग्रह करने से, धर्ममार्ग का प्रवर्तन करने से, और इन्द्रिय-समूह के नियमन से वह साधक कहलाता है।

पदपाठ सारसंग्रहणाच्चैव — सार के संग्रहण से · धर्ममार्गप्रवर्तनात् — धर्म-मार्ग की प्रवृत्ति से · करणग्रामनियमात् — इन्द्रिय-समूह के नियम से · साधकः सोऽभिधीयते — वह साधक कहलाता है

भजनात् परया भक्त्या मनोवाक्कायकर्मभिः ।

तरत्यखिलदुःखानि तस्माद्भक्त इतीरितः ॥ २९॥

२९

मन, वाणी और शरीर के कर्मों से परम भक्ति के साथ भजन करने से वह समस्त दुःखों को तर जाता है; इसलिए वह भक्त कहा गया है।

पदपाठ भजनात् परया भक्त्या — परा भक्ति से भजन से · मनोवाक्कायकर्मभिः — मन, वाणी, काया के कर्मों से · तरत्यखिलदुःखानि — समस्त दुःखों को तरता है · तस्माद्भक्त इतीरितः — इसलिए भक्त कहा गया

शरीरमर्थ प्राणांश्च सद्गुरुभ्यो निवेद्य यः ।

गुरुभ्यः शिक्षते योगं शिष्य इत्यभिधीयते ॥ ३०॥

३०

जो शरीर, धन और प्राणों को सद्गुरुओं को निवेदित करके गुरुओं से योग सीखता है, वह शिष्य कहलाता है।

पदपाठ शरीरमर्थ प्राणांश्च — शरीर, धन और प्राण · सद्गुरुभ्यो निवेद्य यः — जो सद्गुरुओं को निवेदन कर · गुरुभ्यः शिक्षते योगं — गुरुओं से योग सीखता है · शिष्य इत्यभिधीयते — शिष्य कहलाता है

योनिमुद्रानुसन्धानात् गिरिजापादसेवनात् ।

निर्लीनोपाधिविभवाद् योगिनीत्यभिधीयते ॥ ३१॥

३१

योनिमुद्रा के अनुसन्धान से, गिरिजा के चरणों की सेवा से, और उपाधियों के वैभव के विलीन हो जाने से वह योगिनी कहलाती है।

पदपाठ योनिमुद्रानुसन्धानात् — योनिमुद्रा के अनुसन्धान से · गिरिजापादसेवनात् — गिरिजा के चरणों की सेवा से · निर्लीनोपाधिविभवाद् — उपाधि-वैभव के विलीन होने से · योगिनीत्यभिधीयते — योगिनी कहलाती है

शतकोटिमहादिव्ययोगिनीप्रीतिकारणात् ।
तीव्रमुक्तिप्रदानाच्च शक्तिरित्यभिधीयते ॥ ३२ ॥

३२

सौ करोड़ महादिव्य योगिनियों की प्रीति का कारण होने से, और तीव्र मुक्ति प्रदान करने से वह शक्ति कहलाती है।

पदपाठ शतकोटिमहादिव्य- — सौ करोड़ महादिव्य · योगिनीप्रीतिकारणात् — योगिनियों की प्रीति का कारण होने से · तीव्रमुक्तिप्रदानाच्च — और तीव्र मुक्ति देने से · शक्तिरित्यभिधीयते — शक्ति कहलाती है

पालनादुरितच्छेदात् कामितार्थस्य वर्द्धनात् ।
पादुकेति समाख्याता मम तत्त्वं तव प्रिये ॥ ३३ ॥

३३

पालन करने से, दुरित (पाप) का छेदन करने से, और कामित अर्थ की वृद्धि करने से वे पादुका कही गई हैं; हे प्रिये! यह तुम्हारे लिए मेरा तत्त्व है।

पदपाठ पालनात् — पालन से (पा-) · दुरितच्छेदात् — दुरित के छेदन से (दु-) · कामितार्थस्य वर्द्धनात् — कामित अर्थ के वर्धन से (क-) · पादुकेति समाख्याता — पादुका कही गई · मम तत्त्वं तव प्रिये — यह मेरा तत्त्व तुम्हारे लिए, हे प्रिये

जन्मान्तरसहस्रेषु कृतपापप्रणाशनात् ।
परदेवप्रकाशाच्च जप इत्यभिधीयते ॥ ३४ ॥

३४

सहस्रों अन्य जन्मों में किये गये पापों का नाश करने से, और परम देव को प्रकाशित करने से वह जप कहलाता है।

पदपाठ जन्मान्तरसहस्रेषु — हजारों अन्य जन्मों में · कृतपापप्रणाशनात् — किए पापों के नाश से (ज-) · परदेवप्रकाशाच्च — और परदेव के प्रकाश से (प-) · जप इत्यभिधीयते — जप कहलाता है

स्तोकस्तोकेन मनसः परमप्रीतिकारणात् ।

३५

स्तोतृसन्तारणाद्देवि स्तोत्रमित्यभिधीयते ॥ ३५॥

थोड़ा-थोड़ा करके मन की परम प्रीति का कारण होने से, और स्तोता को संसार से तार देने से, हे देवि! वह स्तोत्र कहलाता है।

पदपाठ स्तोकस्तोकेन — थोड़ा-थोड़ा · मनसः परमप्रीतिकारणात् — मन को परम प्रीति देने से (स्तो-) · स्तोतृसन्तारणाद्देवि — स्तोता को तारने से, हे देवि (-त्र) · स्तोत्रमित्यभिधीयते — स्तोत्र कहलाता है

यावदिन्द्रियसन्तापं मनसा संनियम्य च ।

३६

स्वान्तेनाभीष्टदेवस्य चिन्तनं ध्यानमुच्यते ॥ ३६॥

इन्द्रियों के समस्त सन्ताप को मन से संयमित करके, अपने अन्तःकरण से अभीष्ट देव का चिन्तन ध्यान कहलाता है।

पदपाठ यावदिन्द्रियसन्तापं — इन्द्रियों के सन्ताप को · मनसा संनियम्य च — मन से संयमित कर · स्वान्तेनाभीष्टदेवस्य — अपने अन्तःकरण से इष्टदेव का · चिन्तनं ध्यानमुच्यते — चिन्तन ध्यान कहलाता है

चरितार्थविकाशाच्च रक्षणादपि पार्वति ।

३७

नरनारीस्वरूपाच्च चरणं कथितं प्रिये ॥ ३७॥

चरितार्थ को विकसित करने से, रक्षा करने से, हे पार्वति! और नर-नारी स्वरूप होने से, हे प्रिये! वह चरण कहा गया है।

पदपाठ चरितार्थविकाशाच्च — चरितार्थ के विकास से (चरि-) · रक्षणादपि पार्वति — और रक्षण से, हे पार्वति · नरनारीस्वरूपाच्च — और नर-नारी स्वरूप से · चरणं कथितं प्रिये — चरण कहा गया, हे प्रिये

वेदिताऽखिलशास्त्रार्थसद्धर्मार्थनिरूपणात् ।
दर्शनानां प्रमाणत्वाद्देद इत्यभिधीयते ॥ ३८ ॥

३८

समस्त शास्त्रों के अर्थों से ज्ञात होकर सद्धर्म के अर्थ का निरूपण करने से, और दर्शनों का प्रमाण होने से वह वेद कहलाता है।

पदपाठ वेदिताऽखिलशास्त्रार्थ- — समस्त शास्त्रार्थों से विदित · सद्धर्मार्थनिरूपणात् — सद्धर्म के अर्थ के निरूपण से · दर्शनानां प्रमाणत्वात् — दर्शनों का प्रमाण होने से · वेद इत्यभिधीयते — वेद कहलाता है

पुण्यपापादिकथनाद्राक्षसादिनिवारणात् ।
नवभक्त्यादिजननात् पुराण इति कथ्यते ॥ ३९ ॥

३९

पुण्य-पाप आदि का कथन करने से, राक्षस आदि का निवारण करने से, और नवधा भक्ति आदि को उत्पन्न करने से वह पुराण कहलाता है।

पदपाठ पुण्यपापादिकथनात् — पुण्य-पाप आदि के कथन से (पु-) · राक्षसादिनिवारणात् — राक्षस आदि के निवारण से (रा-) · नवभक्त्यादिजननात् — नव भक्ति आदि के जनन से (न-) · पुराण इति कथ्यते — पुराण कहलाता है

शासनादनिशं देवि वर्णाश्रमनिवासिनाम् ।
तारणात् सर्वपापेभ्यः शास्त्रमित्यभिधीयते ॥ ४० ॥

४०

हे देवि! वर्ण और आश्रम में रहने वालों पर निरन्तर शासन करने से, और समस्त पापों से तारने से वह शास्त्र कहलाता है।

पदपाठ शासनादनिशं देवि — निरन्तर शासन से, हे देवि (शास्-) · वर्णाश्रमनिवासिनाम् — वर्ण-आश्रम में रहने वालों को · तारणात् सर्वपापेभ्यः — सब पापों से तारने से (-त्र) · शास्त्रमित्यभिधीयते — शास्त्र कहलाता है

स्मरणोत्सुकनिष्ठानां धर्माधर्मनिरूपणात् ।
तिमिरोत्पाटनाद्देवि स्मृतिरित्यभिधीयते ॥ ४१ ॥

४१

स्मरण में उत्सुक और निष्ठावान् जनों के लिए धर्म-अधर्म का निरूपण करने से, और अन्धकार को उखाड़ देने से, हे देवि! वह स्मृति कहलाती है।

पदपाठ स्मरणोत्सुकनिष्ठानां — स्मरण में उत्सुक निष्ठा वालों के लिए · धर्माधर्मनिरूपणात् — धर्म-अधर्म के निरूपण से · तिमिरोत्पाटनाद्देवि — तिमिर के उत्पादन से, हे देवि · स्मृतिरित्यभिधीयते — स्मृति कहलाती है

इष्टधर्मादिकथनात्तिमिराज्ञानभञ्जनात् ।
हरणात् सर्वदुःखानां इतिहास इति स्मृतः ॥ ४२ ॥

४२

इष्ट धर्म आदि का कथन करने से, अज्ञान-अन्धकार का भञ्जन करने से, और समस्त दुःखों का हरण करने से वह इतिहास कहलाता है।

पदपाठ इष्टधर्मादिकथनात् — इष्ट धर्म आदि के कथन से (इ-) · तिमिराज्ञानभञ्जनात् — तिमिर-अज्ञान के भञ्जन से (ति-) · हरणात् सर्वदुःखानां — सब दुःखों के हरण से (हा-) · इतिहास इति स्मृतः — इतिहास माना गया

आचारकथनादिव्यगतिप्राप्तिनिदानतः ।
महात्मतत्त्वकथनादागमः कथितः प्रिये ॥ ४३ ॥

४३

आचार का कथन करने से, दिव्य गति की प्राप्ति का कारण होने से, और महात्म-तत्त्व का कथन करने से, हे प्रिये! वह आगम कहा गया है।

पदपाठ आचारकथनात् — आचार के कथन से (आ-) · दिव्यगतिप्राप्तिनिदानतः — दिव्य गति की प्राप्ति का कारण होने से (ग-) · महात्मतत्त्वकथनात् — महात्म-तत्त्व के कथन से (म-) · आगमः कथितः प्रिये — आगम कहा गया, हे प्रिये

शाकिनीगणपूज्यत्वान्तरणाद्भववारिधे ।

४४

परादिशक्तिसान्निध्याच्छाक्त इत्यभिधीयते ॥ ४४ ॥

शाकिनी-गणों द्वारा पूज्य होने से, भव-सागर से तारने से, और परा आदि शक्तियों के सान्निध्य से वह शाक्त कहलाता है।

पदपाठ शाकिनीगणपूज्यत्वात् — शाकिनी-गणों से पूज्य होने से (शा-) · तारणाद्भववारिधे: — भव-सागर से तारने से · परादिशक्तिसान्निध्यात् — परा आदि शक्तियों के सान्निध्य से · शाक्त इत्यभिधीयते — शाक्त कहलाता है

कौमारादिनिरोधत्वात् लयजन्मादिभञ्जनात् ।

४५

अशेषकुलसम्बन्धात् कौल इत्यभिधीयते ॥ ४५ ॥

कौमार आदि अवस्थाओं का निरोध करने से, लय-जन्म आदि का भञ्जन करने से, और अशेष कुल से सम्बन्ध रखने से वह कौल कहलाता है।

पदपाठ कौमारादिनिरोधत्वात् — कौमार आदि (अवस्थाओं) के निरोध से (कौ-) · लयजन्मादिभञ्जनात् — लय, जन्म आदि के भञ्जन से (ल-) · अशेषकुलसम्बन्धात् — समस्त कुल के सम्बन्ध से · कौल इत्यभिधीयते — कौल कहलाता है

पाशच्छेदकराद्देवि रञ्जनात् परतेजसः ।

४६

यतिभिश्चिन्त्यमानत्वात् पारम्पर्यमितीरितम् ॥ ४६ ॥

पाशों का छेदन करने से, हे देवि! परम तेज से रञ्जित करने से, और यतियों द्वारा चिन्तन किये जाने से वह पारम्पर्य कहा गया है।

पदपाठ पाशच्छेदकराद्देवि — पाश का छेदन करने से, हे देवि (पा-) · रञ्जनात् परतेजसः — पर-तेज से रञ्जित करने से (र-) · यतिभिश्चिन्त्यमानत्वात् — यतियों द्वारा चिन्तित होने से · पारम्पर्यमितीरितम् — पारम्पर्य कहा गया

संसारसारभूतत्वात् प्रकाशानन्ददानतः ।

४७

यशः सौभाग्यकरणात् सम्प्रदाय इतीरितः ॥ ४७ ॥

संसार का सार होने से, प्रकाश का आनन्द देने से, और यश तथा सौभाग्य उत्पन्न करने से वह सम्प्रदाय कहा गया है।

पदपाठ संसारसारभूतत्वात् — संसार का सार होने से (सं-) · प्रकाशानन्ददानतः — प्रकाश-आनन्द देने से (प्र-) · यशः सौभाग्यकरणात् — यश और सौभाग्य करने से · सम्प्रदाय इतीरितः — सम्प्रदाय कहा गया

आदित्वात् सर्वमार्गाणां मनोल्लासप्रवर्द्धनात् ।

४८

यज्ञादिधर्महेतुत्वादाम्नाय इति कीर्तितः ॥ ४८ ॥

समस्त मार्गों का आदि होने से, मन के उल्लास को बढ़ाने से, और यज्ञ आदि धर्म का हेतु होने से वह आम्नाय कहा गया है।

पदपाठ आदित्वात् सर्वमार्गाणां — सब मार्गों का आदि होने से (आ-) · मनोल्लासप्रवर्द्धनात् — मन के उल्लास को बढ़ाने से (म्ना-) · यज्ञादिधर्महेतुत्वात् — यज्ञ आदि धर्म का हेतु होने से (य-) · आम्नाय इति कीर्तितः — आम्नाय कहा गया

श्रुतानेकमहामन्त्रयन्त्रतन्त्रादिदैवतात् ।

४९

श्रुतौ यदनविच्छिन्नाच्छ्रौत इत्यभिधीयते ॥ ४९ ॥

सुने गये अनेक महामन्त्र, यन्त्र, तन्त्र आदि के देवता होने से, और श्रुति में अविच्छिन्न होने से वह श्रौत कहलाता है।

पदपाठ श्रुतानेकमहामन्त्र- — सुने गए अनेक महामन्त्रों के · यन्त्रतन्त्रादिदैवतात् — यन्त्र, तन्त्र आदि के देवता से · श्रुतौ यदनविच्छिन्नात् — श्रुति में अविच्छिन्न होने से · श्रौत इत्यभिधीयते — श्रौत कहलाता है

आम्नायतत्त्वरूपत्वाच्चातुर्यार्थनिरूपणात् ।

५०

रागद्वेषादिशमनादाचार इति कीर्त्यते ॥ ५० ॥

आम्नाय के तत्त्व का रूप होने से, चातुर्य के अर्थ का निरूपण करने से, और राग-द्वेष आदि को शान्त करने से वह आचार कहलाता है।

पदपाठ आम्नायतत्त्वरूपत्वात् — आम्नाय-तत्त्व रूप होने से (आ-) · चातुर्यार्थनिरूपणात् — चातुर्य के अर्थ के निरूपण से (चा-) · रागद्वेषादिशमनात् — राग-द्वेष आदि के शमन से (र-) · आचार इति कीर्त्यते — आचार कहलाता है

दिव्यभावप्रदानाच्च क्षालनात् कल्मषस्य च ।

५१

दीक्षेति कथिता सद्भिर्भवबन्धविमोचनात् ॥ ५१ ॥

दिव्य भाव प्रदान करने से, कल्मष का क्षालन करने से, और भव-बन्धन से छुड़ाने से सज्जनों ने उसे दीक्षा कहा है।

पदपाठ दिव्यभावप्रदानाच्च — दिव्य भाव देने से (दी-) · क्षालनात् कल्मषस्य च — और कल्मष के क्षालन से (क्षा-) · दीक्षेति कथिता सद्भिः — सज्जनों द्वारा दीक्षा कही गई · भवबन्धविमोचनात् — भव-बन्धन से मुक्त करने से

अहम्भावहराद्भीतिमथनात् सेचनादपि ।

५२

कम्पानन्दादिजननादभिषेक इति स्मृतः ॥ ५२ ॥

अहम्भाव का हरण करने से, भय का मथन करने से, सेचन करने से, और कम्प, आनन्द आदि को उत्पन्न करने से वह अभिषेक कहलाता है।

पदपाठ अहम्भावहरात् — अहंभाव हरने से (अ-) · भीतिमथनात् — भीति के मथन से (भी-) · सेचनादपि — सेचन से भी (षे-) · कम्पानन्दादिजननात् — कम्प, आनन्द आदि के जनन से (क-) · अभिषेक इति स्मृतः — अभिषेक माना गया

उल्बणत्वात् परत्वाच्च देवताप्रीतिदानतः ।
शक्तिपातनिमित्तादप्युपदेश इति स्मृतः ॥ ५३ ॥

५३

उल्बण (प्रबल) होने से, पर होने से, देवता को प्रीति देने से, और शक्तिपात का निमित्त होने से वह उपदेश कहलाता है।

पदपाठ उल्बणत्वात् परत्वाच्च — उल्बण (तीव्र) होने से (उ-) और पर होने से (प-) · देवताप्रीतिदानतः — देवता को प्रीति देने से (दे-) · शक्तिपातनिमित्तादपि — शक्तिपात का निमित्त होने से भी (श-) · उपदेश इति स्मृतः — उपदेश माना गया

मननात्तत्त्वरूपस्य देवस्यामिततेजसः ।
त्रायते सर्वभयतस्तस्मान्मन्त्र इतीरितः ॥ ५४ ॥

५४

तत्त्वरूप, अमित तेज वाले देव के मनन से वह सब भयों से त्राण करता है; इसलिए वह मन्त्र कहा गया है।

पदपाठ मननात्तत्त्वरूपस्य — तत्त्वरूप के मनन से · देवस्यामिततेजसः — अमित तेज वाले देव के · त्रायते सर्वभयतः — सब भय से त्राण करता है (त्रा-) · तस्मान्मन्त्र इतीरितः — इसलिए मन्त्र कहा गया

देहमास्थाय भक्तानां वरदानाच्च पार्वति ।
तापत्रयादिशमनाद्देवता परिकीर्तिता ॥ ५५ ॥

५५

देह धारण करके भक्तों को वर देने से, हे पार्वति! और तापत्रय आदि को शान्त करने से वह देवता कही गई है।

पदपाठ देहमास्थाय — देह धारण कर (दे-) · भक्तानां वरदानाच्च पार्वति — भक्तों को वर देने से, हे पार्वति (व-) · तापत्रयादिशमनात् — त्रिताप आदि के शमन से (ता-) · देवता परिकीर्तिता — देवता कही गई

न्यायोपार्जितवित्तानामङ्गेषु विनिवेशनात् ।

सर्वरक्षाकरादेवि न्यास इत्यभिधीयते ॥ ५६ ॥

५६

न्यायपूर्वक अर्जित वित्त (मन्त्र-सम्पत्ति) को अङ्गों में स्थापित करने से, और सब प्रकार की रक्षा करने से, हे देवि! वह न्यास कहलाता है।

पदपाठ न्यायोपार्जितवित्तानाम् — न्याय से अर्जित वित्त (मन्त्र) का (न्या-) · अङ्गेषु विनिवेशनात् — अंगों में विनिवेश से · सर्वरक्षाकरादेवि — सब रक्षा करने से, हे देवि · न्यास इत्यभिधीयते — न्यास कहलाता है

मुदं कुर्वन्ति देवानां मनांसि द्रावयन्ति च ।

तस्मान्मुद्रा इति ख्याता दर्शितव्याः कुलेश्वरि ॥ ५७ ॥

५७

वे देवों को मुद (हर्ष) देती हैं और उनके मनों को द्रवित करती हैं; इसलिए वे मुद्रा कहलाती हैं, हे कुलेश्वरि! उन्हें दिखाना चाहिए।

पदपाठ मुदं कुर्वन्ति देवानां — देवों को मुद (हर्ष) देती हैं · मनांसि द्रावयन्ति च — और मनों को द्रवित (द्रा-) करती हैं · तस्मान्मुद्रा इति ख्याता — इसलिए मुद्रा नाम से ख्यात · दर्शितव्याः कुलेश्वरि — दिखानी चाहिए, हे कुलेश्वरि

अनन्तफलदानाच्च क्षपिताशेषकल्मषात् ।

मातृकात्मतया लाभकरणादक्षमालिका ॥ ५८ ॥

५८

अनन्त फल देने से, अशेष कल्मष का क्षय करने से, मातृका-स्वरूप होने से, और लाभ कराने से वह अक्षमालिका (कहलाती है)।

पदपाठ अनन्तफलदानाच्च — अनन्त फल देने से (अ-) · क्षपिताशेषकल्मषात् — समस्त कल्मष के क्षय से (क्ष-) · मातृकात्मतया — मातृका-स्वरूप होने से (मा-) · लाभकरणात् — लाभ करने से (ला-) · अक्षमालिका — अक्षमालिका (कहलाती है)

मङ्गलत्वाच्च डाकिन्या योगिनीगणसंश्रयात् ।
ललितत्वाच्च देवेशि मण्डलं परिकीर्तितम् ॥ ५९ ॥

५९

मङ्गलमय होने से, डाकिनी और योगिनी-गण का आश्रय होने से, और ललित होने से, हे देवेशि! वह मण्डल कहा गया है।

पदपाठ मङ्गलत्वाच्च — मङ्गलत्व से (मं-) · डाकिन्या योगिनीगणसंश्रयात् — डाकिनी और योगिनी-गण के संश्रय से (ड-) · ललितत्वाच्च देवेशि — और ललित होने से, हे देवेशि (ल-) · मण्डलं परिकीर्तितम् — मण्डल कहा गया

कमलासनरूपत्वान्नलघुतत्त्वादिनाशनात् ।
शमितापारपापाच्च कलशः परिकीर्तितः ॥ ६० ॥

६०

कमलासन का रूप होने से, लघु तत्त्व आदि का नाश करने से, और अपार पाप को शान्त करने से वह कलश कहा गया है।

पदपाठ कमलासनरूपत्वात् — कमलासन रूप होने से (क-) · लघुतत्त्वादिनाशनात् — लघु तत्त्व आदि के नाश से (ल-) · शमितापारपापाच्च — और अपार पाप के शमन से (श-) · कलशः परिकीर्तितः — कलश कहा गया

यमभूतादिसर्वेभ्यो भयेभ्योऽपि कुलेश्वरि ।
त्रायते सततज्यैव तस्माद् यन्त्रमितीरितम् ॥ ६१ ॥

६१

यम, भूत आदि सबसे और सब भयों से भी, हे कुलेश्वरि! वह सतत रक्षा करता है; इसलिए वह यन्त्र कहा गया है।

पदपाठ यमभूतादिसर्वेभ्यो — यम, भूत आदि सबसे · भयेभ्योऽपि कुलेश्वरि — भयों से भी, हे कुलेश्वरि · त्रायते सततज्यैव — सतत त्राण करता है (त्रा-) · तस्माद् यन्त्रमितीरितम् — इसलिए यन्त्र कहा गया

**आत्मसिद्धिप्रदानाच्च सर्वरोगनिवारणात् ।
नवसिद्धिप्रदानाच्च आसनं कथितं प्रिये ॥ ६२॥**

६२

आत्मसिद्धि प्रदान करने से, समस्त रोगों का निवारण करने से, और नव सिद्धियाँ देने से, हे प्रिये! वह आसन कहा गया है।

पदपाठ आत्मसिद्धिप्रदानाच्च — आत्मसिद्धि देने से (आ-) · सर्वरोगनिवारणात् — सब रोगों के निवारण से · नवसिद्धिप्रदानाच्च — और नौ सिद्धियाँ देने से · आसनं कथितं प्रिये — आसन कहा गया, हे प्रिये

**मायाजालादिशमनान्मोक्षमार्गनिरूपणात् ।
अष्टदुःखादिविरहान् मद्यमित्यभिधीयते ॥ ६३॥**

६३

माया-जाल आदि को शान्त करने से, मोक्ष-मार्ग का निरूपण करने से, और आठ दुःखों आदि से रहित करने से वह मद्य कहलाता है।

पदपाठ मायाजालादिशमनात् — माया-जाल आदि के शमन से (मा-) · मोक्षमार्गनिरूपणात् — मोक्ष-मार्ग के निरूपण से · अष्टदुःखादिविरहात् — आठ दुःख आदि के विरह से · मद्यमित्यभिधीयते — मद्य कहलाता है

**महादानार्थरूपत्वाद् यागभूम्येककारणात् ।
मद्भावजननादेवि मद्यमित्यभिधीयते ॥ ६४॥**

६४

महादान के अर्थ का रूप होने से, याग-भूमि का एकमात्र कारण होने से, और मेरे भाव को उत्पन्न करने से, हे देवि! वह मद्य कहलाता है।

पदपाठ महादानार्थरूपत्वात् — महादान के अर्थ का रूप होने से (म-) · यागभूम्येककारणात् — याग-भूमि का एक कारण होने से (य-) · मद्भावजननादेवि — मेरा भाव उत्पन्न करने से, हे देवि · मद्यमित्यभिधीयते — मद्य कहलाता है

सुमनसः सेवितत्वाद् राज्यदत्वात् सदा प्रिये ।

६५

सुराकारप्रदानत्वात् सुरेति परिकीर्तिता ॥ ६५॥

सुमन (देवों/सज्जनों) द्वारा सेवित होने से, सदा राज्य देने से, हे प्रिये! और सुर (देव) का आकार प्रदान करने से वह सुरा कही गई है।

पदपाठ सुमनसः सेवितत्वात् — सुमनस् (सज्जनों) से सेवित होने से (सु-) · राज्यदत्वात् सदा प्रिये — सदा राज्य देने से, हे प्रिये (रा-) · सुराकारप्रदानत्वात् — सुर (देव) का आकार देने से · सुरेति परिकीर्तिता — सुरा कही गई

अमृतांशुस्वरूपत्वान्मृत्युभीतिनिवारणात् ।

६६

तत्त्वप्रकाशहेतुत्वादमृतं कथितं प्रिये ॥ ६६॥

अमृतांशु (चन्द्रमा) का स्वरूप होने से, मृत्यु-भय का निवारण करने से, और तत्त्व-प्रकाश का हेतु होने से, हे प्रिये! वह अमृत कहा गया है।

पदपाठ अमृतांशुस्वरूपत्वात् — अमृतांशु (चन्द्र) स्वरूप होने से (अ-) · मृत्युभीतिनिवारणात् — मृत्यु-भीति के निवारण से (मृ-) · तत्त्वप्रकाशहेतुत्वात् — तत्त्व-प्रकाश का हेतु होने से (त-) · अमृतं कथितं प्रिये — अमृत कहा गया, हे प्रिये

पानाङ्गविश्वरूपत्वात्त्रिचतुष्ककलाश्रयात् ।

६७

पतितत्राणनादेवि पात्रमित्यभिधीयते ॥ ६७॥

पान के अङ्गों का विश्वरूप होने से, तीन और चार कलाओं का आश्रय होने से, और पतितों का त्राण करने से, हे देवि! वह पात्र कहलाता है।

पदपाठ पानाङ्गविश्वरूपत्वात् — पान के अङ्गों का विश्वरूप होने से (पा-) · त्रिचतुष्ककलाश्रयात् — तीन और चार कलाओं का आश्रय होने से (त्र-) · पतितत्राणनादेवि — पतितों के त्राण से, हे देवि · पात्रमित्यभिधीयते — पात्र कहलाता है

आशुशुक्षणिरूपत्वाद्घातृदेवप्रियादपि ।

६८

रक्षणादपि चाधेयस्याधारं तु विदुर्बुधाः ॥ ६८ ॥

आशुशुक्षणि (अग्नि) का रूप होने से, धातृ देव को प्रिय होने से, और आधेय की रक्षा करने से बुधजन उसे आधार जानते हैं।

पदपाठ आशुशुक्षणिरूपत्वात् — आशुशुक्षणि (अग्नि) रूप होने से (आ-) · धातृदेवप्रियादपि — धाता देव को प्रिय होने से भी (धा-) · रक्षणादपि चाधेयस्य — और आधेय की रक्षा से (र-) · आधारं तु विदुर्बुधाः — बुधजन उसे आधार जानते हैं

माङ्गल्यजननाद्देवि संविदानन्ददानतः ।

६९

सर्वदेवप्रियत्वाच्च मांस इत्यभिधीयते ॥ ६९ ॥

माङ्गल्य उत्पन्न करने से, हे देवि! संविद् का आनन्द देने से, और सब देवों को प्रिय होने से वह मांस कहलाता है।

पदपाठ माङ्गल्यजननाद्देवि — माङ्गल्य के जनन से, हे देवि (मां-) · संविदानन्ददानतः — संवित्-आनन्द देने से (सं-) · सर्वदेवप्रियत्वाच्च — और सब देवों को प्रिय होने से · मांस इत्यभिधीयते — मांस कहलाता है

पूर्वजन्मानुशमनाज्जन्ममृत्युनिवारणात् ।

७०

सम्पूर्णफलदानाच्च पूजेति कथिता प्रिये ॥ ७० ॥

पूर्व जन्मों को शान्त करने से, जन्म-मृत्यु का निवारण करने से, और सम्पूर्ण फल देने से, हे प्रिये! वह पूजा कही गई है।

पदपाठ पूर्वजन्मानुशमनात् — पूर्वजन्मों के शमन से (पू-) · जन्ममृत्युनिवारणात् — जन्म-मृत्यु के निवारण से (जा-) · सम्पूर्णफलदानाच्च — और सम्पूर्ण फल देने से · पूजेति कथिता प्रिये — पूजा कही गई, हे प्रिये

अभीष्टफलदानाच्च चतुर्वर्गफलाश्रयात् ।

७१

नन्दनात् सर्वदेवानामर्चनं समुदाहृतम् ॥ ७१ ॥

अभीष्ट फल देने से, चतुर्वर्ग के फलों का आश्रय होने से, और सब देवों को आनन्दित करने से वह अर्चन कहा गया है।

पदपाठ अभीष्टफलदानाच्च — अभीष्ट फल देने से (अ-) · चतुर्वर्गफलाश्रयात् — चतुर्वर्ग फल का आश्रय होने से (च-) · नन्दनात् सर्वदेवानाम् — सब देवों को आनन्दित करने से (न-) · अर्चनं समुदाहृतम् — अर्चन कहा गया

तत्त्वात्मकस्य देवस्य परिवारवृत्तस्य च ।

७२

नवानन्दप्रजननात्तर्पणं समुदाहृतम् ॥ ७२ ॥

तत्त्वात्मक और परिवार से घिरे हुए देव के लिए नव आनन्द उत्पन्न करने से वह तर्पण कहा गया है।

पदपाठ तत्त्वात्मकस्य देवस्य — तत्त्वात्मक देव का (त-) · परिवारवृत्तस्य च — और परिवार से घिरे का (प-) · नवानन्दप्रजननात् — नव आनन्द के जनन से (न-) · तर्पणं समुदाहृतम् — तर्पण कहा गया

गम्भीरापारदौर्भाग्यक्लेशनाशनकारणात् ।

७३

धर्मज्ञानप्रदानाच्च गन्ध इत्यभिधीयते ॥ ७३ ॥

गम्भीर और अपार दौर्भाग्य के क्लेश के नाश का कारण होने से, और धर्म तथा ज्ञान प्रदान करने से वह गन्ध कहलाता है।

पदपाठ गम्भीरापारदौर्भाग्य- — गम्भीर, अपार दुर्भाग्य के · क्लेशनाशनकारणात् — क्लेश के नाश का कारण होने से (ग-) · धर्मज्ञानप्रदानाच्च — और धर्म-ज्ञान देने से (ध-) · गन्ध इत्यभिधीयते — गन्ध कहलाता है

आघ्राणनप्रजननान् मोक्षमार्गप्रदर्शनात् ।

७४

दग्धदुःखादिदमनादामोद इति कथ्यते ॥ ७४ ॥

आघ्राण उत्पन्न करने से, मोक्ष-मार्ग दिखाने से, और दुःख आदि को जलाकर दमन करने से वह आमोद कहलाता है।

पदपाठ आघ्राणनप्रजननात् — आघ्राण (सूँघने) के जनन से (आ-) · मोक्षमार्गप्रदर्शनात् — मोक्ष-मार्ग के प्रदर्शन से (मो-) · दग्धदुःखादिदमनात् — दग्ध दुःख आदि के दमन से (द-) · आमोद इति कथ्यते — आमोद कहलाता है

अन्नदानात् कुलेशानि क्षपिताशेषकल्मषात् ।

७५

तादात्म्यकरणाद्देवि अक्षताः परिकीर्तिताः ॥ ७५ ॥

अन्न देने से, हे कुलेशानि! अशेष कल्मष का क्षय करने से, और तादात्म्य कराने से, हे देवि! वे अक्षत कहे गये हैं।

पदपाठ अन्नदानात् कुलेशानि — अन्न देने से, हे कुलेशानि (अ-) · क्षपिताशेषकल्मषात् — समस्त कल्मष के क्षय से (क्ष-) · तादात्म्यकरणाद्देवि — तादात्म्य करने से, हे देवि (ता-) · अक्षताः परिकीर्तिताः — अक्षत कहे गए

पुण्यसंवर्द्धनाच्चापि पापौघपरिहारतः ।

७६

पुष्कलार्थप्रदानाच्च पुष्पमित्यभिधीयते ॥ ७६ ॥

पुण्य की वृद्धि करने से, पाप-समूह का परिहार करने से, और पुष्कल अर्थ प्रदान करने से वह पुष्प कहलाता है।

पदपाठ पुण्यसंवर्द्धनाच्चापि — पुण्य के संवर्धन से भी (पु-) · पापौघपरिहारतः — पाप-समूह के परिहार से (प-) · पुष्कलार्थप्रदानाच्च — और पुष्कल अर्थ देने से (पुष्-) · पुष्पमित्यभिधीयते — पुष्प कहलाता है

धूताशेषमहादोषपूतिगन्धप्रभावतः ।

७७

परमानन्दजननाद्भूप इत्यभिधीयते ॥ ७७ ॥

अपने प्रभाव से समस्त महादोषों और दुर्गन्ध को दूर करने से, और परमानन्द उत्पन्न करने से वह धूप कहलाता है।

पदपाठ धूताशेषमहादोष- — समस्त महादोषों को झटक देने से (धू-) · पूतिगन्धप्रभावतः — पूति (दुर्गन्ध) पर प्रभाव से (पू-) · परमानन्दजननात् — परमानन्द के जनन से (प-) · धूप इत्यभिधीयते — धूप कहलाता है

दीर्घाज्ञानमहाध्वान्ताहङ्कारपरिवर्जनात् ।

७८

परतत्त्वप्रकाशाच्च दीप इत्यभिधीयते ॥ ७८ ॥

दीर्घ अज्ञान के महान्धकार और अहङ्कार को दूर करने से, और परतत्त्व को प्रकाशित करने से वह दीप कहलाता है।

पदपाठ दीर्घाज्ञानमहाध्वान्ता- — दीर्घ अज्ञान के महान्धकार के (दी-) · हङ्कारपरिवर्जनात् — अहंकार के परित्याग से (-प) · परतत्त्वप्रकाशाच्च — और परतत्त्व के प्रकाश से · दीप इत्यभिधीयते — दीप कहलाता है

मोहध्वान्तप्रशमनात् क्षयार्तिविनिवारणात् ।

दिव्यरूपप्रदानाच्च परतत्त्वप्रकाशनात् ।

७९

ख्यातो मोक्षो दीप इति मोक्षमार्गैकसाधनः ॥ ७९ ॥

मोह के अन्धकार को शान्त करने से, क्षय और पीड़ा का निवारण करने से, दिव्य रूप प्रदान करने से, और परतत्त्व को प्रकाशित करने से वह "मोक्ष-दीप" कहलाता है — मोक्ष-मार्ग का एकमात्र साधन।

पदपाठ मोहध्वान्तप्रशमनात् — मोह-अन्धकार के प्रशमन से · क्षयार्तिविनिवारणात् — क्षय और पीड़ा के निवारण से · दिव्यरूपप्रदानाच्च — दिव्य रूप देने से · परतत्त्वप्रकाशनात् — परतत्त्व के प्रकाशन से · ख्यातो मोक्षो दीप इति — "मोक्षदीप" नाम से ख्यात · मोक्षमार्गैकसाधनः — मोक्ष-मार्ग का एकमात्र साधन

चतुर्विधं कुलेशानि द्रव्यञ्च षड्रसान्वितम् ।

निवेदनाद्भवेत्तृप्तिर्नैवेद्यं समुदाहृतम् ॥ ८० ॥

८०

हे कुलेशानि! चार प्रकार का और षड्रस से युक्त द्रव्य — उसके निवेदन से तृप्ति होती है, इसलिए वह नैवेद्य कहा गया है।

पदपाठ चतुर्विधं कुलेशानि — चार प्रकार का, हे कुलेशानि · द्रव्यञ्च षड्रसान्वितम् — और षड्रस से युक्त द्रव्य · निवेदनाद्भवेत्तृप्तिः — निवेदन से तृप्ति होती है · नैवेद्यं समुदाहृतम् — नैवेद्य कहा गया

बहुप्रकारविचरद् भूतौघप्रीतिकारणात् ।

लिप्तपापप्रशमनाद् बलिरित्यभिधीयते ॥ ८१ ॥

८१

अनेक प्रकार से विचरने वाले भूत-समूह की प्रीति का कारण होने से, और लिप्त पाप को शान्त करने से वह बलि कहलाता है।

पदपाठ बहुप्रकारविचरद् — बहुत प्रकार से विचरने वाले · भूतौघप्रीतिकारणात् — भूत-समूह की प्रीति का कारण होने से · लिप्तपापप्रशमनात् — लिप्त पाप के प्रशमन से (लि-) · बलिरित्यभिधीयते — बलि कहलाता है

तत्त्वत्रयविशुद्धिः स्यात्त्वत्सेवामात्रतः प्रिये ।

तत्त्वप्रकाशहेतुत्वात्तत्त्वत्रयमितीरितम् ॥ ८२ ॥

८२

हे प्रिये! तुम्हारी सेवा मात्र से तत्त्वत्रय की विशुद्धि हो जाती है; तत्त्व-प्रकाश का हेतु होने से वह तत्त्वत्रय कहा गया है।

पदपाठ तत्त्वत्रयविशुद्धिः स्यात् — तत्त्वत्रय की विशुद्धि होती है · त्वत्सेवामात्रतः प्रिये — तुम्हारी सेवा मात्र से, हे प्रिये · तत्त्वप्रकाशहेतुत्वात् — तत्त्व-प्रकाश का हेतु होने से · तत्त्वत्रयमितीरितम् — तत्त्वत्रय कहा गया

चतुर्वर्गफलावापात् लुण्ठिताज्ञानबन्धनात् ।

कल्याणधर्ममूलत्वाच्चलुकं कथितं प्रिये ॥ ८३ ॥

८३

चतुर्वर्ग के फल देने से, अज्ञान के बन्धनों को लूट लेने से, और कल्याणकारी धर्म का मूल होने से, हे प्रिये! वह चलुक कहा गया है।

पदपाठ चतुर्वर्गफलावापात् — चतुर्वर्ग फल की प्राप्ति से (च-) · लुण्ठिताज्ञानबन्धनात् — अज्ञान-बन्धन को लूट लेने से (लु-) · कल्याणधर्ममूलत्वात् — कल्याण-धर्म का मूल होने से (क-) · चलुकं कथितं प्रिये — चलुक (चुल्लू) कहा गया, हे प्रिये

प्रकाशानन्दजननात् सामरस्यप्रदानतः ।

८४

दर्शनात् परतत्त्वस्य प्रसाद इति कथ्यते ॥ ८४ ॥

प्रकाश का आनन्द उत्पन्न करने से, सामरस्य प्रदान करने से, और परतत्त्व का दर्शन कराने से वह प्रसाद कहलाता है।

पदपाठ प्रकाशानन्दजननात् — प्रकाश-आनन्द के जनन से (प्र-) · सामरस्यप्रदानतः — सामरस्य देने से (सा-) · दर्शनात् परतत्त्वस्य — परतत्त्व के दर्शन से (द-) · प्रसाद इति कथ्यते — प्रसाद कहलाता है

पाशसञ्छेदनादेवि नरकस्य निवारणात् ।

८५

पावनात् परमेशानि पानमित्यभिधीयते ॥ ८५ ॥

पाशों का छेदन करने से, हे देवि! नरक का निवारण करने से, और पावन करने से, हे परमेशानि! वह पान कहलाता है।

पदपाठ पाशसञ्छेदनादेवि — पाश के संछेदन से, हे देवि (पा-) · नरकस्य निवारणात् — नरक के निवारण से (न-) · पावनात् परमेशानि — पावन करने से, हे परमेशानि · पानमित्यभिधीयते — पान कहलाता है

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा ।

८६

समीपसेवा विधिवत् उपास्तिरिति कथ्यते ॥ ८६ ॥

कर्म, मन और वाणी से, सब अवस्थाओं में, सदा विधिपूर्वक समीप रहकर की गई सेवा उपास्ति कहलाती है।

पदपाठ कर्मणा मनसा वाचा — कर्म, मन, वाणी से · सर्वावस्थासु सर्वदा — सब अवस्थाओं में, सदा · समीपसेवा विधिवत् — समीप में विधिवत् सेवा (उप-) · उपास्तिरिति कथ्यते — उपास्ति कहलाती है

पञ्चाङ्गोपासनेनेष्टदेवता प्रीतिदानतः ।

८७

पुरश्चरति भक्तस्य तत् पुरश्चरणं प्रिये ॥ ८७ ॥

पञ्चाङ्ग उपासना से इष्ट देवता को प्रीति देने से जो भक्त के आगे-आगे चलता है, हे प्रिये! वह पुरश्चरण है।

पदपाठ पञ्चाङ्गोपासनेन — पंचांग उपासना से · इष्टदेवता प्रीतिदानतः — इष्टदेवता को प्रीति देने से · पुरश्चरति भक्तस्य — भक्त के आगे चलता है · तत् पुरश्चरणं प्रिये — वह पुरश्चरण है, हे प्रिये

आवाहनादिकर्माणि षोडश द्वादशावधि ।

८८

विधिनाचरणं प्रोक्तं उपहारमिति स्मृतम् ॥ ८८ ॥

आवाहन आदि सोलह, अथवा बारह तक के कर्मों का विधिपूर्वक आचरण उपहार कहा गया है।

पदपाठ आवाहनादिकर्माणि — आवाहन आदि कर्म · षोडश द्वादशावधि — सोलह, बारह तक · विधिनाचरणं प्रोक्तं — विधि से उनका आचरण · उपहारमिति स्मृतम् — उपहार माना गया

सम्पूज्य सावृतिं देवं षोडशैरुपचारकैः ।

८९

स्वस्थानप्रेषणं प्रोक्तं मृद्वासनमिति प्रिये ॥ ८९ ॥

आवरण-सहित देव को सोलह उपचारों से पूजकर उन्हें अपने स्थान को भेजना, हे प्रिये! मृद्वासन (विसर्जन) कहा गया है।

पदपाठ सम्पूज्य सावृतिं देवं — आवरण (आवृति) सहित देव की पूजा कर · षोडशैरुपचारकैः — सोलह उपचारों से · स्वस्थानप्रेषणं प्रोक्तं — अपने स्थान को भेजना कहा गया · मृद्वासनमिति प्रिये — मृद्वासन, हे प्रिये

देवं पूजार्थमाह्वानमावाहनमिति स्मृतम् ।

आसने सन्निवेशः स्यात् स्थापनं कुलनायिके ॥ ९० ॥

९०

पूजा के लिए देव का आह्वान आवाहन कहलाता है; आसन पर उनका सन्निवेश, हे कुलनायिके! स्थापन है।

पदपाठ देवं पूजार्थमाह्वानम् — पूजा के लिए देव का आह्वान · आवाहनमिति स्मृतम् — आवाहन माना गया · आसने सन्निवेशः स्यात् — आसन पर सन्निवेश · स्थापनं कुलनायिके — स्थापन है, हे कुलनायिके

अन्योन्यसम्मुखाकारः सन्निधापनमीरितम् ।

यत्र कुत्राप्यचलनं सन्निरोधनमीरितम् ॥ ९१ ॥

९१

परस्पर सम्मुख होना सन्निधापन कहा गया है; कहीं भी न चलना सन्निरोधन कहा गया है।

पदपाठ अन्योन्यसम्मुखाकारः — परस्पर सम्मुख आकार · सन्निधापनमीरितम् — सन्निधापन कहा गया · यत्र कुत्राप्यचलनं — जहाँ-कहीं भी न चलना · सन्निरोधनमीरितम् — सन्निरोधन कहा गया

देवताङ्गे षडङ्गानां न्यासः स्यात् सकलीकृतिः ।

आच्छादनं समुद्दिष्टमवगुण्ठनमीरितम् ॥ ९२ ॥

९२

देवता के अङ्ग में षडङ्गों का न्यास सकलीकृति है; आच्छादन अवगुण्ठन कहा गया है।

पदपाठ देवताङ्गे षडङ्गानां — देवता के अंग में छह अंगों का · न्यासः स्यात् सकलीकृतिः — न्यास सकलीकृति है · आच्छादनं समुद्दिष्टम् — आच्छादन कहा गया · अवगुण्ठनमीरितम् — अवगुण्ठन कहलाता है

दर्शनं धेनुमुद्राया अमृतीकरणं प्रिये ।

क्षमस्वेत्यञ्जलिर्देवि परमीकरणं प्रिये ।

९३

स्वागतं कुशलप्रश्नं निगदेद्देवताग्रतः ॥ ९३ ॥

धेनुमुद्रा का प्रदर्शन अमृतीकरण है, हे प्रिये! "क्षमा करो" कहकर अञ्जलि, हे देवि! परमीकरण है, हे प्रिये! स्वागत और कुशल-प्रश्न देवता के सामने कहना चाहिए।

पदपाठ दर्शनं धेनुमुद्रायाः — धेनुमुद्रा का दर्शन · अमृतीकरणं प्रिये — अमृतीकरण है, हे प्रिये · क्षमस्वेत्यञ्जलिर्देवि — "क्षमस्व" कहते अञ्जलि, हे देवि · परमीकरणं प्रिये — परमीकरण है, हे प्रिये · स्वागतं कुशलप्रश्नं — स्वागत और कुशल-प्रश्न · निगदेद्देवताग्रतः — देवता के आगे कहे

पाद्यं श्यामाकदूर्वाब्जविष्णुक्रान्ताभिरुच्यते ।

९४

जातालवङ्गककलैरुक्तमाचमनीयकम् ॥ ९४ ॥

श्यामाक, दूर्वा, कमल और विष्णुक्रान्ता से पाद्य कहा गया है; जायफल, लौंग और ककलै से आचमनीय कहा गया है।

पदपाठ पाद्यं — पाद्य · श्यामाकदूर्वाब्जविष्णुक्रान्ताभिः — श्यामाक, दूर्वा, कमल, विष्णुक्रान्ता से · उच्यते — कहा जाता है · जातालवङ्गककलैः — जायफल, लवंग, ककलै से · उक्तमाचमनीयकम् — आचमनीय कहा गया

अखिलाघप्रशमनार्द्धनपुत्रविवर्द्धनात् ।

९५

अनर्घफलदानाच्च अर्घ्यमित्यभिधीयते ॥ ९५ ॥

समस्त पापों को शान्त करने से, धन और पुत्रों की वृद्धि करने से, और अनर्घ फल देने से वह अर्घ्य कहलाता है।

पदपाठ अखिलाघप्रशमनात् — समस्त पाप के प्रशमन से (अ-) · अर्द्धनपुत्रविवर्द्धनात् — धन और पुत्र के वर्धन से (-र्घ) · अनर्घफलदानाच्च — और अनर्घ (अमूल्य) फल देने से · अर्घ्यमित्यभिधीयते — अर्घ्य कहलाता है

सिद्धार्थमक्षतञ्चैव कुशाग्रं तिलमेव च ।

यवं गन्धः फलं पुष्पमष्टाङ्गार्घ्यं प्रकीर्तितम् ॥ ९६ ॥

९६

सफेद सरसों, अक्षत, कुशाग्र, तिल, जौ, गन्ध, फल और पुष्प — यह अष्टाङ्ग अर्घ्य कहा गया है।

पदपाठ सिद्धार्थमक्षतञ्चैव — सिद्धार्थ (श्वेत सरसों) और अक्षत · कुशाग्रं तिलमेव च — कुशाग्र और तिल · यवं गन्धः फलं पुष्पम् — जौ, गन्ध, फल, पुष्प · अष्टाङ्गार्घ्यं प्रकीर्तितम् — अष्टांग अर्घ्य कहा गया

मध्वाज्यदधिभिः प्रोक्तो मधुपर्कः कुलेश्वरि ।

देहप्रक्षालनं स्नानं सुगन्धिसलिलैः सह ॥ ९७ ॥

९७

हे कुलेश्वरि! मधु, घी और दही से मधुपर्क कहा गया है; सुगन्धित जल से देह का प्रक्षालन स्नान है।

पदपाठ मध्वाज्यदधिभिः प्रोक्तः — मधु, घी, दही से कहा गया · मधुपर्कः कुलेश्वरि — मधुपर्क, हे कुलेश्वरि · देहप्रक्षालनं स्नानं — देह का प्रक्षालन स्नान है · सुगन्धिसलिलैः सह — सुगन्धित जलों सहित

चन्द्रचन्दनकस्तूरीकालागुरुभिरुच्यते ।

अष्टाङ्गप्रणिपातन्तु कथितं वन्दनं प्रिये ॥ ९८ ॥

९८

कपूर, चन्दन, कस्तूरी और कालागुरु से (अनुलेपन) कहा गया है; अष्टाङ्ग प्रणिपात, हे प्रिये! वन्दन कहा गया है।

पदपाठ चन्द्रचन्दनकस्तूरीकालागुरुभिः — कपूर, चन्दन, कस्तूरी, कालागुरु से · उच्यते — (अनुलेपन) कहा जाता है · अष्टाङ्गप्रणिपातन्तु — अष्टांग प्रणिपात · कथितं वन्दनं प्रिये — वन्दन कहा गया, हे प्रिये

एतच्चराचरं सर्वं क्षेत्रमित्यभिधीयते ।

९९

तत् क्षेत्रं पालितं येन क्षेत्रपालः स उच्यते ॥ ९९ ॥

यह समस्त चराचर क्षेत्र कहलाता है; जिसके द्वारा वह क्षेत्र पालित है, वह क्षेत्रपाल कहलाता है।

पदपाठ एतच्चराचरं सर्वं — यह सब चराचर · क्षेत्रमित्यभिधीयते — क्षेत्र कहलाता है · तत् क्षेत्रं पालितं येन — जिसने उस क्षेत्र का पालन किया · क्षेत्रपालः स उच्यते — वह क्षेत्रपाल कहलाता है

इति ते कथिता किञ्चिद् गुरुनामादिवासना ।

१००

समासेन महेशानि यो जानाति स पूजकः ॥ १०० ॥

इस प्रकार गुरु आदि नामों की वासना (अर्थ) तुम्हें कुछ संक्षेप में कही गई, हे महेशानि! जो इसे जानता है वही पूजक है।

पदपाठ इति ते कथिता किञ्चिद् — इस प्रकार तुम्हें कुछ कहा गया · गुरुनामादिवासना — "गुरु" आदि नामों की वासना · समासेन महेशानि — संक्षेप में, हे महेशानि · यो जानाति स पूजकः — जो जानता है वह पूजक है

रहस्यातिरहस्यानां रहस्योऽयं महेश्वरि ।

१०१

ऊर्ध्वाम्नायोऽयमाख्यातः समासेन न विस्तरात् ॥ १०१ ॥

हे महेश्वरि! रहस्यों और अतिरहस्यों का यह रहस्य है; यह ऊर्ध्वाम्नाय संक्षेप में कहा गया, विस्तार से नहीं।

पदपाठ रहस्यातिरहस्यानां — रहस्यों से भी अति रहस्यों का · रहस्योऽयं महेश्वरि — यह रहस्य है, हे महेश्वरि · ऊर्ध्वाम्नायोऽयमाख्यातः — यह ऊर्ध्वाम्नाय कहा गया · समासेन न विस्तरात् — संक्षेप में, विस्तार से नहीं

कुलार्णवमिदं शास्त्रं योगिनीनां हृदि स्थितम् ।

१०२

प्रकाशितं मया चाद्य गोपनीयं प्रयत्नतः ॥ १०२ ॥

योगिनियों के हृदय में स्थित यह कुलार्णव शास्त्र आज मैंने प्रकाशित किया है; इसे प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए।

पदपाठ कुलार्णवमिदं शास्त्रं — यह कुलार्णव शास्त्र · योगिनीनां हृदि स्थितम् — योगिनियों के हृदय में स्थित · प्रकाशितं मया चाद्य — आज मैंने प्रकाशित किया · गोपनीयं प्रयत्नतः — यत्न से गोपनीय है

पुस्तकञ्च महेशानि पशुगेहे न निक्षिपेत् ।

१०३

न दद्यात् पशुहस्ते च न पठेत् पशुसन्निधौ ।

न पठेदासवोल्लासं ग्रन्थं भूमौ न निक्षिपेत् ॥ १०३ ॥

हे महेशानि! पुस्तक को पशु के घर में न रखे, पशु के हाथ में न दे, पशु के समीप न पढ़े; आसव के उल्लास (मद) में न पढ़े, और ग्रन्थ को भूमि पर न रखे।

पदपाठ पुस्तकञ्च महेशानि — और पुस्तक, हे महेशानि · पशुगेहे न निक्षिपेत् — पशु के घर में न रखे · न दद्यात् पशुहस्ते च — और पशु के हाथ में न दे · न पठेत् पशुसन्निधौ — पशु के सन्निधान में न पढ़े · न पठेदासवोल्लासं — आसव के उल्लास में न पढ़े · ग्रन्थं भूमौ न निक्षिपेत् — ग्रन्थ को भूमि पर न रखे

नित्यं सम्पूजयेद्भक्त्या जानीयाद् गुरुवक्त्रतः ।

१०४

नापुत्राय प्रवक्तव्यं नाशिष्याय कदाचन ॥ १०४ ॥

नित्य भक्ति से इसकी पूजा करे और गुरु के मुख से इसे जाने; जो पुत्र नहीं है उसे, और जो शिष्य नहीं है उसे कभी न कहे।

पदपाठ नित्यं सम्पूजयेद्भक्त्या — नित्य भक्ति से पूजा करे · जानीयाद् गुरुवक्त्रतः — गुरु के मुख से जाने · नापुत्राय प्रवक्तव्यं — अपुत्र को नहीं कहना चाहिए · नाशिष्याय कदाचन — अशिष्य को कभी नहीं

स्नेहाल्लोभाद्भयादुक्त्वा सोऽचिरान्नश्यति ध्रुवम् ।

१०५

देवि यद्विद्यते प्राज्ञे तत्तत् किञ्चिन्मयोदितम् ॥ १०५ ॥

स्नेह, लोभ या भय से इसे कह देने पर वह निश्चय ही शीघ्र नष्ट हो जाता है। हे देवि! प्राज्ञ में जो कुछ विद्यमान है, उसमें से कुछ मैंने कहा है।

पदपाठ स्नेहाल्लोभाद्भयादुक्त्वा — स्नेह, लोभ, भय से कहकर · सोऽचिरान्नश्यति ध्रुवम् — वह शीघ्र निश्चय नष्ट होता है · देवि यद्विद्यते प्राज्ञे — हे देवि, जो प्राज्ञ में विद्यमान है · तत्तत् किञ्चिन्मयोदितम् — उसमें से कुछ मैंने कहा

साधकानां हितार्थाय भुक्तिमुक्तिफलेषिणाम् ।

१०६

यश्चोर्ध्वाम्नायमाहात्म्यं पठेत् श्रीचक्रसन्निधौ ॥ १०६ ॥

भुक्ति और मुक्ति के फल चाहने वाले साधकों के हित के लिए — जो श्रीचक्र के समीप ऊर्ध्वाम्नाय के माहात्म्य का पाठ करता है,

पदपाठ साधकानां हितार्थाय — साधकों के हित के लिए · भुक्तिमुक्तिफलेषिणाम् — भुक्ति-मुक्ति फल चाहने वालों के · यश्चोर्ध्वाम्नायमाहात्म्यं — और जो ऊर्ध्वाम्नाय का माहात्म्य · पठेत् श्रीचक्रसन्निधौ — श्रीचक्र के सन्निधान में पढ़े

भक्त्या परमया देवि यः शृणोति स कौलिकः ।

१०७

व्रतं स्नानं तपस्तीर्थं यज्ञदेवार्चनादिषु ॥ १०७ ॥

और जो परम भक्ति से इसे सुनता है, हे देवि! वह कौलिक है। व्रत, स्नान, तप, तीर्थ, यज्ञ, देवार्चना आदि में —

पदपाठ भक्त्या परमया देवि — परम भक्ति से, हे देवि · यः शृणोति स कौलिकः — जो सुनता है वह कौलिक है · व्रतं स्नानं तपस्तीर्थं — व्रत, स्नान, तप, तीर्थ · यज्ञदेवार्चनादिषु — यज्ञ, देवार्चना आदि में

तत् फलं कोटिगुणितं लभते नात्र संशयः ।
त्वत्सन्निधौ सन्निवसेन्नात्र कार्या विचारणा ॥ १०८ ॥

१०८

उसका फल वह करोड़ गुना पाता है; इसमें संशय नहीं। वह तुम्हारे सान्निध्य में निवास करता है; इसमें विचार नहीं करना चाहिए।

पदपाठ तत् फलं कोटिगुणितं — वह फल करोड़ गुना · लभते नात्र संशयः — पाता है, इसमें सन्देह नहीं · त्वत्सन्निधौ सन्निवसेत् — तुम्हारे सन्निधान में रहता है · नात्र कार्या विचारणा — इसमें विचार की आवश्यकता नहीं



इति श्रीकुलार्णवे निर्वाणमोक्षद्वारे महारहस्ये सर्वागमोत्तमोत्तमे सपादलक्षग्रन्थे
पञ्चमखण्डे ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रे सप्तदश उल्लासः ॥

इस प्रकार निर्वाण-मोक्ष के द्वार, महारहस्य, सर्वागमों में उत्तमोत्तम, सवा
लाख श्लोकों के ग्रन्थ श्रीकुलार्णव के पञ्चम खण्ड ऊर्ध्वाम्नायतन्त्र में
सप्तदश उल्लास समाप्त।